भूमिका ॥

विदित हो कि इस असार संसार में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पदार्थ सार हैं इसलिये सब मनुष्य निज २ रुचि के अनुसार इनके प्राप्त होनेके लिये यत्न करते हैं परन्तु इन्होंमें सर्वोत्तम व प्रधान धर्म है कि जिसके सेवन करनेसे और तीनों सुलभ होते हैं तिस धर्म की प्राप्ति अपने २ वर्ण व आश्रमों के लिये वेदकथित अनुष्ठान से सदा होती रही इसीलिये पूर्व-काल में तीनों वर्ण के मनुष्य परिश्रमपूर्वक वेदाभ्यास कर व तदुक्त अनुष्ठान में तत्पर हो बड़ी सुलभता से निज २ अभीष्ट फल पाकर कृतार्थ होते थे परन्तु कलियुग के मनुष्य अल्पायुष् और मन्दमति होनेसे सारे जन्ममें भी अत्यन्त परिश्रम करने से भी संपूर्ण वेद न पढ़सकेंगे यह पूर्वापर विचार परम कारु-णिक श्रीव्यास मुनि ने वेद के ऋग्, यजुष्, साम, अथर्व नाम से चार भाग किये जब इससे भी मनुष्यों की बुद्धि पारजाती न देखी तो वेदों के मुख्य २ आशय को लेकर कलियुगीजीवों के उपकार के लिये अठारहपुराण और महाभारतनाम इतिहास रचा कि थोड़े परिश्रम से जिसको पठन व श्रवणकर भावी आर्य-जन अपने २ वर्णाश्रम के धर्ममें टिकि उत्तम फल प्राप्त होनेसे इस भारतखण्ड पवित्र कर्मभूमि में जन्म लेनेका फल पावेंगे सो वह प्रबन्ध कई कालतक चलाआया अब थोड़ेदिनों से कलियुग महाराज की सम्पत्ति आलस्य और दुर्गुण के परि-शीलन से संस्कृतविद्या का अभ्यास छूट गया इसीकारण

पुराणपरिशीलन नहीं हो सक्ता तो वर्णाश्रमधर्मज्ञान किस भांति जानिसकेंगे और धर्म के आचरण विना आयुष्, बल, बुद्धि, ऐश्वर्य, तेज, विद्या, धन, पौरुष और संतानआदि किस भांति सुलभ होगा यह अपने आर्यजनों की सबभांति हानि और दुर्द्दशा देखि निजचित्त में विचारि सब पुरुषार्थप्राप्ति का मूल ज्ञानपूर्वक धर्माचरण और धर्म का मूल पुराणआदि का परिशीलन समुझ और आर्यजनों को संस्कृत भाषामें अनभिज्ञ देखि विज्ञातिविज्ञ भारतवर्ष के परमहितैषी आर्यजनों के कल्याणमें अहोरात्र तत्पर भार्गववंशावतंस अवधसमाचारपत्र-सम्पादक श्रीयुत मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., साहब नें यह इच्छा की कि यदि सब पुराण संस्कृत से आर्यभाषा में अनुवाद होकर मुद्रित होजायँ तो सब आर्यजन उनका तात्पर्य सुगमता से जानसकेंगे और यथार्थधर्म का स्वरूप जानि दुराचरणों से बचि सत्कर्म में प्रवृत्त हो सबप्रकार के क्लेश से छूटि ईश्वर के अनुग्रह से अपरिमित आनन्दभागी होयँ यह मनमें निश्चय कर मुंशीसाहब ने सत्कारपूर्वक इस कार्य में हमको प्रवृत्त किया सो हमने उनकी इच्छानुसार श्रीवाराहपुराण को संस्कृत से आर्यभाषा में अति सावधान हो स्वेच्छतापूर्वक अनुवाद किया॥

इति॥

श्रीवाराहपुराण भाषा पूर्वार्द्धका सूचीपत्र॥

इति श्रीवाराहपुराणभाषापूर्वार्द्धस्य सूचीपत्रं समाप्तम्॥

—*—

इति वाराहपुराणभाषोत्तरार्द्धस्य सूचीपत्रं समाप्तम्॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीवाराहपुराण भाषा ॥

सोरठा ॥

सिद्धि बुद्धि के धाम, हरण अमङ्गल विघ्न के।
वारम्वार प्रणाम, गणनायक शुभसदन के॥ १ ॥
श्रीनारायणहि प्रणाम, सुरसेवित नरवर सहित।
चतुर्वर्ग के धाम, असुर निकन्दन देव हित॥ २ ॥
श्रीशारदहि प्रणाम, हंसवाहिनी जो सदा।
बसै सो मम उरधाम, निर्मल मतिहि प्रकाशिनी॥ ३ ॥

श्लोक ॥

नमस्तस्मै वराहाय लीलयोद्धरतोमहीम्। खुरमध्यगतो यस्य मेरुःखणखणायते ॥ १ ॥ दंष्ट्राग्रेणोद्धृता गौरुदधिपरिवृता पर्वतैर्निम्नगाभिस्साकं मृत्पिण्डवत्प्रागुरुतरवपुषानन्तरूपेणयेन। सोऽयं कंसासुरारिर्मधुनरकदशास्यान्तकृत्सर्वसंस्थः कृष्णोविष्णुस्सुरेशस्तुदतु मम रिपूनादिदेवोवराहः ॥ २ ॥ यस्संसारार्णवे नौरिव मरणजराव्याधिनक्रोर्म्मिभीमे भक्तानां भीतिहर्त्तासुरनरकहिरण्याक्षहल्लोकरूपी। विष्णुस्सर्वेश्वरोऽयं यमिहकृतधियोलीलया प्राप्नुवन्ति व्यक्त्यात्मानोनुपायं प्रभवतु नुदितारातिपक्षः क्षितीशः ॥ ३ ॥

अथ कथा प्रारम्भ॥

प्रथम अध्याय॥

एक समय नैमिषारण्यवासी ऋषियों ने श्रीसूतजी के मुखारविन्द से परमपावन श्रीविष्णुजी का नानावतारचरित्र सुन परम प्रेम में मग्न हो श्रीवाराहावतार की कथा सुननेकी वाञ्छा से अतिहर्षित हो श्रीशौनकजी सूतजी से प्रश्न करते भये कि हे सूतजी! हम संपूर्ण अहोभागी हैं जो आपके मुखारविन्दसे परमपावनी हरिकथा दिन दिन प्रति नानावतारचरित सुनते हैं और आपभी धन्यहो जो श्रीपरमेश्वरके परमपावन गुणानुवादरूपी अमृतसे अनेक जन्मकी तृष्णा हमारी दूर करतेहो हे सूत जी! साधुसंग का फल मोक्ष से भी अधिक है इस लिये आप श्रीमहाराज परमेश्वर ने जो वराहावतार धारण किये हैं उनका चरित्र वर्णन करो यह अवतार किस निमित्त भयाहै और क्या क्या लीलाचरित्र किया है? सो संपूर्ण आदि से अन्त तक यथावत् वर्णनकरो जिसको सुनके हम सब कृतार्थहो जन्मलेनेका फलपाय संसारसमुद्रसे पार होयँ ऐसी विनययुत वाणी ऋषियों की सुनि श्रीसूतजी कहनेलगे हे ऋषीश्वरो! हम धन्य हैं जो आप बारम्बार श्रीपरमेश्वरका गुणानुवाद स्मरण कराते हो अब प्रीतिपूर्वक जो श्रीपरमेश्वरने वराहरूप धारण करि जो जो लीला करी हैं सो सावधान होके सुनो हम वर्णन करते हैं जिस समय में श्रीब्रह्माजी ने प्रथम सृष्टि रचने का प्रारम्भ किया तब मानस पुत्र सनकादिकोंको उत्पन्नकर फिर वशिष्ठादि दशऋषियों को उत्पन्न किया जब सृष्टि की वृद्धि होती न देखी तो निज शरीर को परमेश्वर की माया से दो भाग करि वामभाग से स्त्री जिसका नाम सत्यरूपा है दक्षिणभाग से पुरुष जिसका नाम मनु है सो उत्पन्न किया फिर ब्रह्माजी बोले कि; हे पुत्र! तुम दोनों

तप करके स्त्री पुरुष संयोगधर्म से सृष्टि को उत्पन्न करो तब श्री ब्रह्माजी की आज्ञा मानि दोनों यथाविधि तपकर श्रीपरमेश्वर को प्रसन्न कर नाना प्रकार निज मनोभिलषित वर पाय सृष्टि करने का विचार करनेलगे उस समय एकार्णव अर्थात् समुद्र ही समुद्र देखि श्रीब्रह्माजी के समीप आय प्रणाम कर विनय-पूर्वक निज वृत्तान्त निवेदन किया कि हे स्वामिन्! आपकी आज्ञा पाय तप करि श्रीपरमेश्वर को रिझाय मनोवाञ्छित वर पाय सृष्टि करने को उद्यत भये परन्तु निराधार जलमें सृष्टि कैसे होसक्ती है? इस लिये आप आधार का विचार कीजिये ऐसी श्रीमनुजी महाराज की विनयवाणी सुन श्रीब्रह्माजी मनमें शोच विचार करनेलगे कि जो आधार सब चराचर जीवों का पृथिवी सो रसातल में मग्न होरही है किस उपायसे पृथ्वी जलके ऊपर आवे ऐसा जब विचारते २ कोई उपाय न सूझा तब निज मनो-वृत्ति से सावधान होके सर्वान्तर्यामी श्रीनारायण को स्मरण करनेलगे कि हे विभो! आपने मुझे जिस लिये उत्पन्न कियाहै उसी आज्ञामें मैं यथासामर्थ्य प्रवृत्त हुआ परन्तु निराधार में मेरी सामर्थ्य कुण्ठित होगई इस लिये आप मेरी वाञ्छा को स-फल कीजिये जिसमें आपकी आज्ञा सफल होय ऐसा शोच वि-चार श्रीब्रह्माजी कररहे थे कि अकस्मात् एक जीव शुक्लवर्ण शूकर का आकार श्रीब्रह्माजीकी नासिकासे प्रकट भया उसे देख श्रीब्रह्माजी तर्क करनेलगे कि यह क्या चरित्रहै? ऐसेही देखते देखते श्रीब्रह्माजीके श्रीभगवान् यज्ञवराह नारायण निज शरीर से क्षणमात्रही में पर्वताकाररूप हो श्रीब्रह्माजी को सब प्रकार आश्वासनकर जलमें प्रवेश कर रसातलमें जाय हिरण्यकशिपु दैत्य को मारि निजदन्त से पृथ्वी को उठाय जलके ऊपर को चले उस समय पृथ्वीने श्रीवराह नारायण से प्रश्न किया कि; हे स्वामिन्! कल्प २ में वराहमूर्ति धारके इसी प्रकार मेरा उद्धार

करते हो मैं अज्ञानहूं आपकी सनातन मूर्तिको मैं नहीं जानती कि आप कैसे हो क्योंकि हमने ऐसा सुना है कि आपने मत्स्यावतार धारके नष्ट हुये वेद रसातल से लाय ब्रह्माजी को दिये फिर देवासुरों के साथ समुद्रमथनसमय कूर्मरूप हो निज पृष्ठ पै मन्दराचल धारणकर चौदह रत्न समुद्रसे प्रकट किये फिर वराहरूप धारणकर रसातलमें हिरण्याक्ष को मार हमको उद्धार किया हे भगवन्! फिर नृसिंहरूप हो हिरण्यकशिपु नाम दैत्य ब्रह्मवरदान से अतिगर्व को प्राप्त तिसको मार निजभक्त प्रह्लाद की रक्षा की पुनः अदितिके गर्भ में कश्यपसे जन्म ले वामनरूप हो राजा बलि से याच्ञाकर त्रैलोक्य इन्द्रको दे बलिको बन्धन दिया पुनः भृगुवंशमें जन्म ले हैहयकुलकल्मषके व्याजसे इक्कीस बार म्लेच्छरूप ब्रह्मद्रोही क्षत्रियों का संहार कर हमारे भार को दूरकिया फिर सूर्यवंश में राजा दशरथसे जन्म ले चौदहवर्ष वन गमनरूप पिता की आज्ञा मान अतिदुष्कर कर्म जो देवासुरोंसे न हो सो करके समुद्र में सेतु बांधि ऋक्षमर्कटों को साथ ले रावणादि राक्षसों को बध किये पुनः हे भगवन्! यदुवंशमें शूर-पुत्र वसुदेव से जन्म ले वासुदेवनाम पाय नन्दके गोष्ठ में आय पूतना से लेके कंस पर्यन्त को नाशकर हमारे भारको दूर किया पुनः बुद्धावतार धारणकर वेदके विरुद्ध धर्म भाषणकर लोक को मोहित किया सो हे महाराज, देवदेव! ऐसे २ जो आपके नाना-विध चरित्र हैं उनको मन्दबुद्धि कौन जानकर पार होसक्ता है श्रीमहाराज! अपूर्व २ जो आप लीलारूप धारते हैं इस कारण को कौन जान सक्ताहै सो हे भगवन्! आप कृपा करके मेरे संशय को दूर कीजिये सृष्टिकी आदि कैसे होतीहै और सृष्टिका अन्त कैसे होताहै युग क्या पदार्थहै किस प्रकार चारयुग होतेहैं युगोंमें क्या क्या विशेषताहै और क्या क्या व्यवस्थाहै और युगों २ में यज्ञकर्ता कौन भयेहैं और किस सिद्धको कौन प्राप्त भयेहैं ये मेरे

प्रश्न आप यथायोग्य वर्णन कर मेरे संशय को निवृत्त करें ऐसी पृथ्वीकी वाणी सुनि श्रीवराहनारायण अतिप्रसन्न हो मुसक्याय उच्चस्वर से हँसते भये उसी समय हँसते ही श्रीपरमेश्वर के मुखारविन्दमध्य पृथ्वी ने त्रैलोक्य की सामग्री यथावकाश भरी हुई देखी जैसे ग्यारह रुद्र, आठ वसु, सिद्ध, साध्य, महर्षि, चन्द्र, सूर्यादि ग्रह, सप्तलोक, लोकपाल, चराचर संपूर्ण देख कर पृथ्वी भय से अतिकम्पित रोमाञ्चित हो नेत्रोंको मीलित कर चुप होगई तब तो श्रीपरमेश्वर निज मुखारविन्द को मूंद सौम्यरूप होगये फिर पृथ्वी जो नेत्र खोलती है तो क्या देखती है कि एक चतुर्भुज पुरुष समुद्र में हजार फणों के सर्पशय्या पर शयन कररहा है जिसकी नाभि से एक अतिस्थूल सुन्दर कमल उत्पन्न जल के बाहर विकसित होरहा है तिस कमल के मध्य में एक चतुर्मुख पुरुष अतिशोभायमान विराजमान हो रहा है तिसको देखकर पृथ्वी अञ्जली बांधि स्तुति करनेलगी (धरण्युवाच) नमःकमलपत्राक्ष नमस्ते पीतवाससे। नमःसुरारिविध्वंसकारिणे परमात्मने १ शेषपर्यङ्कशायिने धृतवक्षस्स्थलश्रिये। नमस्ते देवदेवेश नमस्ते मोक्षकारण २ नमश्शार्ङ्गासिचक्राय जन्ममृत्युविवर्जित। नमोनाभ्युत्थितमहत्कमलासनजन्मने३ नमोविद्रुमरक्तौष्ठपाणिपल्लवशोभिने। शरण्यं त्वां प्रपन्नास्मि त्राहि नारीमनोगमम् ४ पूर्णनीलाञ्जनाकारंवाराहं त्वां जनार्दनम्। दृष्ट्वा भीतास्मि भूयोऽपि जगत्त्वद्देहगोचरम् ५ इदानीं कुरु मे नाथ दयां त्राहि महाप्रभो। केशवःपातु मे पादौजङ्घेनारायणो मम ६ माधवो मे कटिं पातु गोविन्दोगुह्यमेव च। नाभिं विष्णुस्तु मे पातु उदरम्मधुसूदनः ७ उरस्त्रिविक्रमः पातु हृदयं पातु वामनः। श्रीधरःपातु मे कण्ठं हृषीकेशो मुखं मम ८ पद्मनाभस्तु नयने शिरोदामोदरोऽवतु ९ एवं न्यस्य हरेर्नाम स्वाङ्गेषु जगती तदा। नमस्तेभगवन्विष्णो इत्युक्त्वा विरराम ह ॥ १० ॥ इति ॥

रजोगुण विशेष होने से निजकार्य का प्रारम्भ सफल माने
हे पृथ्वि! ये मनुष्य जो हैं सो तमोगुण रजोगुण अधिक होनेसे
बारम्बार दुःखभागी होते हैं इस प्रकार से छः तरह की सृष्टिका
भेद होताहै प्रथम महत्सर्ग, द्वितीय तन्मात्रासर्ग, तृतीय वैका-
रिकसर्ग ये तीनों वैकारिक ऐन्द्रियक सर्ग कहाते हैं चौथा मुख्य
सर्ग स्थावर अर्थात् वृक्ष, लता, औषधि, त्वक्सार, वीरुध्, द्रुम
इन छः भेदों से इन्हों की तिर्यक्स्रोतस संज्ञा है पञ्चम सर्ग म-
नुष्यों का है छठासर्ग पशुओं का है इन्होंकी वैकृतिकसर्ग संज्ञा
है प्राकृतिकसर्ग कुमारों का अर्थात् सनकादिकों का है ये सब
मिलके हे पृथ्वि! संसार के वृद्धि होने का मूल होते हैं इसप्र-
कार सृष्टि का वर्णन किया हे पृथ्वी! अब क्या सुना चाहतीहो?
ऐसे श्रीवराह नारायणजी के वचन सुनि फिर पृथ्वी बोली
हे स्वामिन्! संपूर्ण सृष्टि जब ब्रह्माजीने रची तब सृष्टिकी वृद्धि
किस प्रकार भई सो आप विस्तार से वर्णन करें पृथ्वी के वचन
सुनि वराहजी बोले हे धरणि! सुनो प्रथम ही श्रीब्रह्माजी ने
श्रीरुद्र को उत्पन्न किया फिर सनकादिकोंको फिर मरीच, अत्रि,
अङ्गिरा, पुलह, क्रतु, पुलस्त्य, प्रचेता, भृगु, नारद, वशिष्ठ ये
दश ऋषि भये तिनमें सनकादिक निवृत्तिमार्ग में अर्थात् मोक्ष
मार्ग में प्रवृत्त भये और नारदजी भी निवृत्तही में रतभये और
ऋषि नव मरीच्यादिक प्रवृत्तिमार्ग में अर्थात् संसार के व्यव-
हार में प्रवृत्त भये तिन्हों में जो ब्रह्माजी के दक्षनाम पुत्र थे तिन
के वंशसे चराचर जगत् पूर्ण होताभया देवता, दानव, गन्धर्व,
सर्प, पक्षी, पशुआदि जीवमात्र दक्षकी कन्याओं से उत्पन्न भये
और हे पृथ्वि! जो रुद्रनाम ब्रह्माजी के क्रोध करने से ललाटसे
उत्पन्न भयेथे वो अर्धनारी नर होनेसे अर्धनारीश्वर कहाये तिन
को ब्रह्माजी ने आज्ञा दी कि निजदेह को विभाग करो अर्थात्
स्त्री पुरुष जुदे जुदे होके रहो ऐसी आज्ञा देकर ब्रह्माजी अन्तर्धान

भये श्रीरुद्रजी ने दो भाग होतेही निजशरीर को ग्यारहरूप से देखा सो एकादश रुद्र कहाये जिनका नाम अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य, पिनाकी, प्रमथाधिप, उग्र, कपर्दी, अपराजित, रुद्र, पितृरूप, त्र्यम्बक, वृषाकपि इस प्रकार ये ग्यारह रुद्र हैं इन्हीं को रुद्रसर्ग कहते हैं अब हे पृथिवि! हम युगमाहात्म्य कहते हैं सो सुनो सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग ये चार युग हैं इन्हीं युगोंमें बड़े २ राजा और देवता असुर नाना प्रकारके तप, यज्ञ, दक्षिणादि धर्म करके उत्तम २ ऐश्वर्य भोगि निजवाञ्छित गति को प्राप्त भये तिन्हों में सबसे पहला सत्ययुग में राजा मनु होता भया तिस मनुके बड़े पराक्रमी अतिप्रबल देवेन्द्र तुल्य दो पुत्र भये जिनमें एकका नाम प्रियव्रत दूसरा उत्तानपाद तिसमें प्रियव्रतनामक जो राजा भया सो अश्वमेधादि संपूर्ण यज्ञ और उग्र तप किया और बहुतसी दक्षिणा ब्राह्मणों को दिया सातद्वीप की पृथ्वीका महाराज भया और जिनके वंशमें भरतादिक राजा भये जिसके नाम से भारतखण्ड पृथ्वीका भाग कहाया सो प्रियव्रत राजा बदरिकाश्रम में जायके बड़ा तप किया उसी तप करते समय नारदजी आये श्रीनारदजी को देखिके अतिप्रसन्न होके अभ्युत्थानादि पाद्यार्घ से राजाने ऋषिकी पूजाकरी और मधुर वाणी से स्तुतिकर नारदजीको प्रसन्न करके राजा बोले हे ऋषे! इस सत्ययुग में कोई आश्चर्य आपने देखा हो सो वर्णन करें जिसे हम सुनके कृतार्थ होवें तब नारदजी बोले हे राजन्! एक आश्चर्य हमने देखाहै सो सुनो वर्णन करते हैं आज के पहले दिन हम श्वेतद्वीप गयेरहे वहां अति विमलजल से परिपूर्ण प्रफुल्लित कमलों से सुशोभित एक सरोवर देखा उसके किनारे एक अति रूपवती भूषण वस्त्रों करके भूषित मनोनयन के आनन्द देनेवाली कन्या खड़ी हमने देखी उस कन्या देवरूपिणी को देखि अतिप्रसन्नता से हमने पूछा हे कन्ये! तुम कौनहो और किसकी

कन्या हो किस प्रयोजन यहां आईहो क्या करनेको विचार रही हो? सो संपूर्ण यथोचित हमसे कहो ऐसे हमारे वचन सुनि वह कन्या मुसक्यायके चुपरही उसकी मुसक्यान देख हे राजन्! हमारा संपूर्ण ज्ञान और वेदशास्त्र, योगशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, स्मृतिशास्त्र सब भूलगया तबतो हमको निजज्ञान और बहुत परिश्रम करके जो पढ़ी हुई शास्त्रकला विद्या थी उस समय विस्मरण होनेसे अत्यन्त विस्मय और आश्चर्य और शोक सब एकही बार भया तब कुछ देर तो हम चुप होके विचारने लगे विचार में यही निश्चय हुआ कि, इसी कन्या की माया यह है इससे इसीके शरण होनेसे कल्याण होगा ऐसा निश्चयकर हाथ जोड़ माथ नाय त्राहि त्राहि शब्द उच्चारणकर उसके शरण गये श्रीमहाराज! तबतो हम क्या देखते हैं कि वही कन्या एक निर्मल अतिसुन्दर प्रकाशमान पुरुष होगई उस पुरुष के हृदय में एक और पुरुष जिसमें बारह सूर्य का प्रकाश अद्भुत बैठा है ऐसा देखतेही हमको और आश्चर्य भया फिर जबतक हम कुछ बोला चहें तबतक उस पुरुष के हृदय में और पुरुष दीखा फिर वे तीनों पुरुष तो अन्तर्धान भये पूर्वकन्या ज्यों की त्यों वर्तमान रही हे राजन्! तबतो अतिविनय से कन्या से हम हाथ जोड़ पूछा कि आप कृपा करके कहें कि यह हमारी क्या दशा भई जो संपूर्ण योगशास्त्र भूलके मूर्ख से व्याकुल होरहे हैं ऐसी हमारी दुःखितवाणी सुनके कन्या बोली हे नारदजी! हम वेदोंकी माता हैं और तुमने वेदपढ़के हमको न पहिचाना इस लिये हमने तुम्हारा वेद हरलिया यह कन्या की वाणी सुनके पूछा कि ये तुम्हारे देह में पुरुष जो हमने देखे सो कौनहैं? तब कन्या बोली हे नारदजी! हमारे हृदय में जो पुरुष प्रकाशमान तुमने देखे हैं सो ऋग्वेदनाम वेद नारायण पुरुष हैं जो उच्चार करनेवाले पुरुष के पापको अग्निरूपहोके भस्म करते हैं उसके हृदय में

जो पुरुष तुमने देखा है सो यजुर्वेदरूप महाबली ब्रह्माजी हैं उनके हृदय में जो पुरुष तुमने देखाहै सो शुक्लवर्ण सामवेदरूप रुद्र हैं ये सूर्य के तुल्य स्मरण करनेवाले का पापरूप महान्धकार नाश करते हैं ये तीनों वेद ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र मूर्तिहैं और अकार, उकार, मकार रूप हैं यह संपूर्ण भलीभांति हे नारदजी! हमने वर्णन किया और ये वेदशास्त्रयोगादि जो हमने हरण किये सो संपूर्ण लो यह जो महासर कमलों से सुशोभित है इसमें स्नान करो यह वेदमयी जलसे भराहै जिसमें स्नान करने से अनेक पातकों से निवृत्त होके सिद्धि को प्राप्त हुआ २ नाना जन्मोंका स्मरण होता है नारदजी बोले हे राजन्! यह कहके कन्या तो अन्तर्धान भई और हम स्नान करके सर्व सिद्धिको प्राप्त हो तुम को देखने को यहां आये॥

तीसरा अध्याय॥

राजा प्रियव्रत बोले हे नारदजी! आपकी मधुरवाणी सुनके हमको अत्यन्त हर्ष हुआ अब हम सुना चाहते हैं आप त्रिकालज्ञ हो औरे जन्मों में जो २ आपने चरित्र देखे हैं सुख दुःख किये हैं सो कहो नारदजी बोले श्रीमहाराज! सावित्रीके वचन सुनके उस वेदसर में जब हमने स्नान किया उसीसमय अनेक जन्मोंका स्मरण हुआ तबसे हम अनेक जन्मोंका वृत्तान्त देखि ऐसे आनन्दहैं जिस आनन्द का पारावार नहीं अब आप सावधान हो जन्मान्तर का वृत्तान्त सुनिये हे राजन्! पूर्वजन्म में हम अवन्तीनाम पुरी में अर्थात् उज्जयनी में ब्राह्मणके पुत्रभये सारस्वत हमारा नामभया वेद वेदाङ्ग करके युक्त बहुत धनाढ्य रूपवान् होके कुछ काल घर में कुलोचित धर्म पालन करते २ कालक्षेप किया किसी समय एकान्तमें बैठे शोचते २ ऐसी बुद्धि उत्पन्न भई कि संसार असत्य है और देह क्षणभंगुर है तब तो

श्रीमहाराज ! हमको वैराग्य होगया उसी समय घर का व्यवहार पुत्रको दे घर से बाहर तपस्या की कामनासे सारस्वतनाम तीर्थ को जाय वहां श्राद्धादि कर्मों से पितरों को प्रसन्नकर दान से ब्राह्मणोंको तृप्तकर यज्ञ से देवताओं को सन्तुष्ट कर कर्मयोग से श्रीकेशव भगवान् की आराधना करके कालक्षेप करते भये सो हे महाराज ! सारस्वततीर्थ अर्थात् जो लोक में पुष्कर नाम करके विख्यात है तिसमें नारायण अष्टाक्षरमन्त्र जपते और वेदवाक्यों से स्तुति करते ब्रह्मपारमय स्तोत्र पाठ करते बहुत काल तप करने से श्रीनारायण प्रसन्न होके कृपा करते भये ऐसे नारद के वचन सुनि राजा बोले हे नारदजी ! ब्रह्मपारमय जो आपने जपा और परमेश्वर प्रसन्नभये सो क्या पदार्थ हैं ? हमको सुनाइये प्रसन्न होके तब नारद बहुत खुशी होके बोले हे राजन् ! सुनो) अथ ब्रह्मपारमयस्तुतिः ॥ परं पराणाममृतं पुराणं परात्परं विष्णुमनन्तवीर्यम् । नमामि नित्यं पुरुषं पुराणं परायणं त्वां प्रणतां पराणाम् १ पुरातनं त्वाप्रतिमं पुराणं परात्परं पारगमुग्रतेजसम् । गम्भीरगम्भीरधियां प्रधानं नतोऽस्मि देवं हरिमीशितारम् २ परापरं वा परमं प्रधानं परास्पदं शुद्धपदं विशालम् । परात्परेशं पुरुषं पुराणं नारायणं स्तौमि विशुद्धभावः ३ पुरापुरं शून्यमिदं ससर्ज तदा स्थितत्वात्पुरुषः प्रधानः । जने प्रसिद्धश्शरणम्ममास्तु नारायणो वीतमलः पुराणः ४ पारं परं विष्णुमपाररूपं पुरातनं नीतिमतां प्रधानम् । धृतक्षमं शान्तिधरं क्षितीशं शुभं सदा स्तौमि महानुभावम् ५ सहस्रमूर्धानमनन्तपादमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् । क्षराक्षरं क्षीरसमुद्रनिद्रं नारायणं स्तौम्यमृतं परेशम् ६ त्रिवेदगम्यं त्रिनवैकमूर्तिं त्रिशुक्लसंस्थं त्रिहुताशमीड्यम् । त्रितत्त्वलक्ष्यं त्रियुगं त्रिनेत्रं नमामि नारायणमप्रमेयम् ७ कृते सितं रक्ततनुं तथा च त्रेतायुगे पीततनुं पुराणम् । तथा हरिं द्वापरके कलौ च कृष्णं कृतात्मानमथो नमामि ८ ससर्ज

चास्यात्कृत एव विप्रान् भुजान्तरात्क्षत्रमथोरुयुग्मात्। विशः पदाग्राच्च तथैव शूद्रान् नमामि तं विश्वतनुं पुराणम् ९ ब्रह्मणो युगसाहस्रमेवं तस्मात्समुद्भवः। भविता ते तदा नाम दास्यमेतत् प्रयोजनम् १०) हे राजन्! श्रीनारायणजी स्तुति करने से प्रसन्न होके बोले हे ब्राह्मण! नारसंज्ञा जलकीहै सो तुमने पितृ-रूप जो हम हैं तिनको दियाहै और हमारी उग्र तपस्या करके स्तुति की है इस निमित्त तुम्हारा नारद नाम होगा युग युगमें ऐसे श्रीविष्णु भगवान्के वचनको सुनके प्रसन्नहोके निज बहुत वृद्ध और तपश्चर्यासे अतिजीर्ण शरीर पुष्करक्षेत्रमें छोड़ ब्रह्म लोकको प्राप्त भये श्रीब्रह्माजीके समीपवासी भये जब ब्रह्माजीने सृष्टि रचने का विचार किया तब हमको उत्पन्नकर नारद नाम रक्खा हमारे जन्म के अनन्तर और देव, दानव, पशु, वृक्ष, मनुष्य ब्रह्माजी ने रचे सो हे राजन्! चराचर सृष्टि के कारण ब्रह्माजी हैं उनका कारण नारायणहैं सब चराचर के गुरु इस लिये तुम भी मन वचन और कर्म से नारायण को भजो जिसमें नारायण के प्यारे रहो॥

चौथा अध्याय॥

श्रीनारायणके मुखारविन्दसे नारद प्रियव्रत का संवाद सुनि पृथ्वी बहुत प्रसन्न होके पूछतीभई हे स्वामिन्! आपके अमृत वचनों को सुनते २ तृप्ति नहीं होती हे भगवन्! श्रीनारायणदेव परमात्मा जो हैं तिनकी मूर्तियों को वर्णन करो जिसमें कल्याण हो तब तो पृथ्वी की प्रार्थना सुनि श्रीवाराहजी बोले नारायण की अनन्त मूर्तियां हैं इसीसे अनन्त कहाते हैं तिन में जीवों के कल्याण करनेवाली दश मूर्तियां हैं मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, श्रीरामचन्द्र, बलराम, बुद्ध, कल्की ये दश मूर्तियां लोककल्याण के मूल हैं वैकुण्ठ परमधाम जानेवालों

को सीढ़ीसी हैं इसी आधारसे जीव भवसागर पार होते हैं और जो श्रीनारायण का सर्वोत्तम रूपहै उसको देवता भी नहीं जान सके मनुष्यों की क्या सामर्थ्य है पूर्वोक्त मूर्तियों को निज शुभ चाहनेवाले पूजते हैं ये मूर्ति राजस तामस गुणों करके युक्त हैं इसीसे राजस तामस गुणों से उत्पन्न जो मनुष्य हैं उनके तप, ध्यान, यज्ञ, पूजनसे उनको सुलभहोताहै हे पृथ्वि! इन्हीं मूर्तियों से विश्वकी उत्पत्ति, पालन और संहार और भजन करनेवाले का नानाविधका कल्याण होताहै नारायण की आदि मूर्ति माया से न्यारी है इससे माया के उत्पन्न जीवों को दुर्लभ है दूसरी मूर्ति वैकुण्ठनिवासी और श्रीनारायण की मूर्ति संसारके कल्याण हेतु पांच हैं जिनमें पहली मूर्ति पृथ्वीमयी, दूसरी मूर्ति जलमयी, तीसरी अग्निमयी, चौथी वायुमयी, पाँचवीं आकाशमयी इस प्रकार आठमूर्तियों से भगवान् विश्व में विहार करते नानाविध जीवों का कल्याण करते हैं यह कथा तुमसे वर्णन की अब क्या सुना चाहती हो पृथ्वी बोली हे महाराज! नारदजी के वचन सुनि राजा प्रियव्रत फिर क्या करते भये सो सुनाइये? यह पृथ्वी की वाणी सुनि श्रीवराहजी बोले सुनो हे पृथ्वि! तुम को सात भाग करके यथोचित पुत्रों को दे बड़े हर्ष से नारद के वचन में बड़ी श्रद्धा कर तप करने को नर नारायण स्थान में जा अति उग्र तप करके परमधाम सिधारे हे पृथ्वि! अब दूसरी कथा परमपावनी सुनो जो ब्रह्माजीने निजमुखसे मुनियों को सुनाई राजा अश्वशिरा नाम बड़े धर्मात्मा होते भये सो ब्राह्मणों करके युक्त परमेश्वरके प्रसन्न करने को अश्वमेधयज्ञ करनेलगे उसी यज्ञ में जैगीषव्यनामक मुनि और कपिल नारायण प्राप्त भये राजाने दोनों को देखि अतिहर्षित हो उठके आसन पाद्य अर्घ्यसे पूजन कर क्षेमकुशल की वार्ता पूछि प्रसन्न किया ऋषि राजाके आदर सत्कार को अङ्गीकार आदरसे करके प्रसन्न होते

भये तब राजा दोनों को प्रसन्न देखि बोले कि महाराज! आप महात्मा और योगीश्वर सर्वज्ञ सिद्ध पुरुष हो सो कृपा करके हमारे संदेह को दूर करो कैसे नारायण की सेवा करनी चाहिये जिस सेवा से प्रसन्न होते हैं उसी समय सभा के ब्राह्मण बोले कि हमारे यजमानने बहुत अच्छा प्रश्न कियाहै आप कृपा करके कहें आप दोनों साक्षात् नारायण हो निज कृपा से प्रत्यक्ष होके हमारे इस यज्ञ को कृतार्थ कियाहै तब तो जैगीषव्य मुनि बोले हे राजन्! सत्यहै हमीं नारायण हैं तुमको दर्शन देने को आये हैं तब राजा बोला आप सिद्ध तपस्वी हो नारायण देव किस प्रकार होसक्के हो नारायण चतुर्भुज शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी पीताम्बर करके शोभित गरुड़ासन कौस्तुक वनमालाधारी हैं आपको हम कैसे विष्णु कहसक्के हैं? तबतो कपिल और जैगीषव्य दोनों हँसके कपिल तो विष्णु का रूप होगये और जैगीषव्य गरुड़ होगये उसी समय सभा के संपूर्ण जो ब्राह्मण और क्षत्रिय और राजा अश्वशिरा जयजय शब्द करते हुये नारायण की मूर्ति देखि बड़े हर्षसे हाथ जोड़ बोले श्रीमहाराज! आप तो विष्णुकी मूर्ति होगये हौ परन्तु ठीक नारायण नहीं हो किस करके कि विष्णु तो शेषशायी हैं और उनकी नाभिसे कमल तिससे ब्रह्माचतुर्मुख तिससे रुद्रहैं उसे हम विष्णुनारायण जानते हैं राजाके वचन सुनि नारायण मुसक्यायके निज योगमायाको स्मरण करि कपिल तो पद्मनाभ होगये जैगीषव्य ब्रह्मा होगये ब्रह्मासे प्रकाशमान रुद्र होतेभये यह रूप राजा देखि हँसके बोला कि महाराज! इस प्रकार नारायण नहीं हैं आप योगी हैं योगियोंकी माया सब रूप बना सक्की है हम उसे नारायण जानतेहैं जो नानारूपहैं तब तो राजाकी वाणी सुनि उसी समय सभा में नानारूप सबको दीखा मच्छर, खटमल, बालोंका जू और पृथ्वी में जो नानाभांति के कृमि, पशु, पक्षी, घोड़ा, गऊ, हाथी, सिंह,

चीता, हिरण और जो जल स्थल के जीव हैं सब एकहीवार दिखाई दिये तिनको देखि राजा विस्मित हो हाथ जोड़ बोले हे महाराज! आपने यह क्या तमाशा दिखाया तब कपिल जैगीषव्य बोले राजा तुमने पूछा भक्तिसे कि कैसे विष्णु भगवान्की पूजा करनी चाहिये जिस पूजन से प्रसन्न होके लोकमें अभीष्ट फल परलोक में निजपद देते हैं सो हे राजन्! नारायण सर्वज्ञ हैं और सर्वमय हैं कामरूपी हैं तुमने जो २ रूप देखने की वाञ्छा की सोई रूप देखा इससे नारायण सर्वत्र हैं और कहीं नहीं हैं उनकी आराधना सर्वत्र करनी चाहिये जिससे सर्व देह में वही हैं हैं तो चराचरमें सर्वत्र परन्तु खोजनेसे अपने निज शरीरमें मिलते हैं हे राजन्! हमको तुम वहुत प्रिय हो इस लिये चराचर में हमने अपना रूप तुम्हारे विश्वास के निमित्त दिखाया हे राजन्! सर्वत्र हमको देख जान किसी का अनादर न करो यही हमारे प्रसन्न होने का कारण और पूजाहै हमीं सब जीवोंके उत्पन्न करनेहारे और सबको पालन और कालरूप होके संहार करनेहारे हैं यह जानि बुद्धि का मोह छोड़ ज्ञानमें निष्ठा करके प्रीति से नानाविध पूजन की सामग्री से हमारा पूजन करो अग्नि, ब्राह्मण, गऊ और अभ्यागतमें होम, भोजन, दक्षिणा, तृण सत्कारसे हमको पूजो इस रीतिसे सर्व कल्याण होगा॥

पांचवां अध्याय॥

राजा अश्वशिरा जैगीषव्य और कपिलसे प्रश्न करते हैं कि महाराज! आप कृपा करके हमारे संदेहको निवृत्त कीजिये जिस में संसार भ्रम छोड़ परमगति को प्राप्त होवें श्रीवराहजी कहते हैं हे धरणि! राजा के वचन सुनि कपिलजी बोले हे धर्मात्मन्! आपको कौनसी संदेह है सो पूछिये निस्संदेह वर्णन करेंगे राजा बोले श्रीमहाराज! संसार के मनुष्य कर्म करके वा ज्ञान करके

मोक्ष को प्राप्त होते हैं सो कृपा करके कहो यह प्रश्न सुनि कपिलजी बोले हे राजन्! यही प्रश्न बृहस्पतिजी से रैभ्यनाम ऋषि और वसुमना राजा ने पूछा सो श्रवण कीजिये चाक्षुष मन्वन्तर में परमविद्वान् धर्मात्मा वसुमना नाम राजा थे सो एक समय श्रीब्रह्माजी के दर्शन को ब्रह्मलोक गये ब्रह्माजीकी सभामें गन्धर्व चित्ररथ नामक गान कर रहा था और देवगण बैठे थे ब्रह्माजी रहे नहीं राजा बैठके अवसर विचारनेलगा कि गन्धर्व विश्राम करे तो यहां की व्यवस्था मालूम हो थोड़ी देरमें गन्धर्व ने विश्राम किया तो राजा वसुमना चित्ररथ से पूछा कि ब्रह्मा जी और हमारे परमप्रिय रैभ्यमुनि जो हम से प्रथम आये हैं वह कहां हैं राजा के वचन सुनि गन्धर्व बोला महाराज! दोनों अन्तःपुर में एकत्र हैं यह कहतेही रैभ्यमुनि आके राजाको दर्शन दिये राजा यथाविधि मुनि की पूजाकर अति हर्ष से हाथ जोड़ बोला कि, महाराज! आप कहां रहे ऋषि बोले राजन्! हम देवगुरु बृहस्पति के समीप से आते हैं कुछ संदेह निवृत्त करने को वहां गये थे इसी समयमें ब्रह्माजीके सभावाले उठके निज२ स्थान को चलेजाते भये और वहांहीं से रैभ्य वसुमना राजाको लेके बृहस्पति के स्थान जाय उनको प्रणाम कर आज्ञा पाय आसनपर बैठते भये बृहस्पतिजी बोले हे ब्रह्मऋषे! हे राजऋषे! किस निमित्त आप दोनों यहां पधारे हो सो कहो संपूर्ण कार्य हम तुम्हारा सफल करेंगे ऐसी वाणी देवराज गुरु की सुन के रैभ्यऋषि हाथजोड़ बड़े हर्ष से बोले हे त्रिभुवन देवगुरो! मोक्ष जो पदार्थ है सो ज्ञानसे वा कर्म से प्राप्त होताहै यह आप कृपा करके वर्णन कीजिये यह प्रश्न सुन बृहस्पतिजी बोले हे ऋषे! संसार में जन्म लेके पुरुष जो जो कर्म करते हैं शुभ वा अशुभ सो संपूर्ण नारायणको अर्पण करदेने से किया हुआ कर्म उस पुरुष को भोगना नहीं पड़ता इसमें एक लुब्धक और

ब्राह्मण का संवाद कहते हैं सो सावधान होके सुनो आत्रेगोत्र में एक ब्राह्मण वेदपारंगम शान्त तपोमूर्ति त्रिकालस्नानशील जिसका संयमननाम सो किसी समय संयमनऋषि धर्मारण्य में जाय वहां के तीर्थ में स्नानकर श्रीभागीरथी में आये तहां क्या देखते हैं कि हरिणों का यूथ चला आता है तिसके पीछे धन्वा में बाण खैंचेहुये दूसरा यमराज का स्वरूप निष्ठुरकनाम लुब्धक वेग से चला आता है इसे देखि संयमनऋषि निषेध किया कि हे व्याध ! हिंसा जीवों की करना शरीर पालनके वास्ते अनुचित है और परलोक में हिंसक दण्ड पाताहै इसलिये ऐसा अनर्थ करना अयोग्य है ऋषि की वाणी सुनि मुसक्यायके लुब्धक बोला महाराज ! मैं हिंसक नहीं हूं हिंसक वह होता है जो जीवों की हिंसा करे हे ऋषे ! यह ब्रह्म परमात्मा पञ्चभूतोंके साथ क्रीड़ा करता है इसके रोंकनेवाला कौन है जैसे मट्टी के खिलौने बनाके बालक खेलते हैं जो मुमुक्षु हैं उनको अहंभाव नहीं होता अहंभाव संसारका मूलहै इसलिये तुम अपना भ्रम छोड़ दो ऐसी लुब्धककी क्रूरवाणी सुनके विस्मय में प्राप्त होके ऋषि कुछ देर चुप होरहे फिर लुब्धककी गम्भीरवाणी ज्ञानसे भरीहुई सुनि ऋषिने प्रश्न करने का विचार किया उसी समय लुब्धक सूखे काष्ठ एकत्रकर उसके ऊपर लोहकी जाल ओढ़ाय ब्राह्मण से बोला कि इसके नीचे अग्नि दे दीजिये तबतो ऋषि उस काष्ठ में मुख से प्रज्वलित कर अग्नि देके चुप होरहे जब अग्निज्वाला प्रचण्डभई तब लोहजालके छिद्रोंसे अनेक ज्वाला कदम्बके पुष्प सदृश निकलीं उस हजारों ज्वालाको देखि लुब्धक ऋषिसे बोला कि इसमें एक ज्वाला पकड़लो इसी प्रकार एक एक पकड़ने से संपूर्ण ज्वाला पकड़ ली जायँगी तब तो ऋषिने जलका कलश लेके बड़ी जल्दी उसी अग्नि में छोड़दिया अग्नि शान्ति होने के वास्ते फिर व्याध ब्राह्मण से बोला जो अग्नि की ज्वाला

तुमने लिया है सो दो हम मृगमांस भनिकै खायँ क्षुधा से दुःखी हैं तबतो ब्राह्मण जालउठाके देखता है तो अग्नि संपूर्ण बुझि गई देखि ब्राह्मण चुप होगया व्याधने अग्नि समूल नाश देखि बोला हे ब्राह्मण! बहुते ज्वालाओंसे अग्नि जलतीरही मूलनाश होनेसे सब ज्वालाओं सहित अग्नि बुझिगई इसी प्रकार मूल कारण नाश होने से उसकी शाखा का नाश खुद होजाता है संपूर्ण जगत् इसी प्रकार विकारवान् है राजधर्म के तुल्य प्रजाको राखके दण्डलेना उचितहै बेदण्ड प्रजा अन्योन्य कलह से क्षय होजाती है ऐसे वचन कहतेही व्याध के ऊपर आकाश से देवताओंने फूल बर्षिके जय २ शब्दकरते भये और अनेक विमानों पर विराजमान देवता प्रकट होके दर्शन दिये यह चरित्र देख ब्राह्मण ज्ञान को कर्म से अधिक जान व्याधको निजज्ञानोपदेष्टा गुरु मानि ज्ञाननिष्ठ हो निजमनकी भ्रान्ति छोड़ बड़े आनन्द से अपने आश्रम को व्याध से बिदा हो चलागया बृहस्पति कहते हैं हे रैभ्य! हे वसुमना! इसी प्रकार ज्ञाननिष्ठ होके जो पुरुष निज कुलोचित कर्म करताहै उसे कर्म नहीं दुःख देते और कर्मों से बचके अन्त में मुक्तिभागी होता है रैभ्यऋषि और राजा वसुमना दोनों बृहस्पतिजी की संशय दूर करनेहारी वाणी सुनि संशय छोड़ ज्ञाननिष्ठहो अति आनन्द से निज निज आश्रमको गये यह कथा सुनाय जैगीषव्य और कपिलजी अश्वशिरा राजा से बिदा हो अन्तर्धान भये राजा अपूर्व इतिहास सुनि भ्रम को छोड़ परमेश्वरमें मन लगाय स्थूलशिरा नाम पुत्रको राज्याभिषेक करि राज्यभार दे नारायणके भजनहेतु नैमिषारण्य नाम वनको चलेगये वहां जाय उत्तम तपस्याकर और वेदगर्भित मनोहरवाणी से स्तुति करके नारायणको प्रसन्न करतेभये श्रीवाराहजीकी वाणी सुनि पृथ्वी बोली कि, महाराज! जिस स्तुति से नारायण प्रसन्न भये सो स्तुति हमको सुनावें वाराहजी बोले हे धरणि! सुनो॥

अथ स्तुतिः ॥

वाराह उवाच । नमामि नित्यं त्रिदशाधिपस्य भवस्य सूर्यस्य हुताशनस्य । सोमस्य राज्ञोमरुतामनेकरूपं हरेर्यज्ञतनुं नमस्ये १ सुभीमदंष्ट्रं शशिसूर्यनेत्रं संवत्सराद्धायनयुग्मकुक्षिम् । दर्भाङ्गशेमाणमथोऽधिशक्तिं सनातनं यज्ञतनुं नमामि २ द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं शरीरेण दिशश्च सर्वाः । तमीशमीड्यं जगतां प्रतिष्ठितं जनार्दनं तं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ३ सुरासुराणामजयो जयाय युगे युगे यः स्वशरीरमाद्यम् । सृजत्यनादिः परमेश्वरोयस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ४ दधारमायामयमुग्रतेजा जयाय चक्रं समरेषु शुभ्रम् । गदासिशार्ङ्गाढ्यचतुर्भुजोयस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ५ क्वचित्सहस्रं शिरसां दधानःक्वचिन्महापर्वततुल्यकायः । क्वचिद्भवेद्यस्त्रसरेणुतुल्यो यस्ते सदा यज्ञतनुं नमस्ये ६ चतुर्मुखो यः सृजते जगच्च रथाङ्गपाणिः परिपालनाय । क्षयाय कालानलसन्निभोयस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोस्मि नित्यम् ७ संसारचक्रक्रमणक्रियार्थे य ईज्यते सर्वगतः पुराणः । यो योगिभिर्ध्यायतेचाप्रमेयस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ८ तमोमयस्थापितवाहनस्तु दृशं दृशा ते स्वतनौ तनुस्ते । न चान्यदस्तीति मतिस्थिरां मे यतस्ततो याति विशुद्धभावः ९ इतीरितस्तस्य हुताशनार्चिः प्रेक्षंस्तु तेजः पुरुतो बभूव । तस्मिन्स राजाप्तविशुद्धभावस्ततो भृशं प्रीतमना हरिश्च ॥ १० ॥

वाराह नारायण कहते हैं हे पृथ्वि! श्रीनारायण अश्वशिरा राजा की स्तुति सुनके अतिप्रसन्नतासे राजाको सायुज्य मोक्ष दे अन्तर्धान भये ॥

छठा अध्याय ॥

धरणी वाराहजीसों पूछती है हे भगवन् ! काश्मीराधिपति राजा वसुमना और रैभ्यमुनि दोनों बृहस्पति से ज्ञानोपदेश पाय

फिर क्या करते भये सो वर्णन करो? वाराहजी बोले हे धरणि! राजावसुमना जाय धर्मसे प्रजापालनकर अनेक यज्ञ बड़े दक्षिणा के साथ कर कर्मकाण्ड से श्रीनारायणको प्रसन्न करते भये राजा की अभेदबुद्धि और भक्ति देख नारायण प्रसन्न होके भक्ति देते भये उस भक्ति के होतेही राजा ने शतपुत्रों में जो सबों से पहला विवस्वान् नामक पुत्र है उसको विधिपूर्वक ब्राह्मणों से राज्याभिषेक कराय राज्यभार दे आप संसारसुख की विषयवासना से निवृत्त होके श्रीपुष्करनाम महातीर्थ में आय श्रीनारायण के प्रसन्न होने को उग्र तप करताहुआ स्तुति करके श्रीभगवान्जी को प्रसन्न किया यह कथा सुनि धरणी बोली हे महाराज! वह स्तुति कौन है जिससे नारायण प्रसन्न भये सो कहो वाराहजी कहते हैं हे धरणि! स्तुति कहते हैं सुनो (ॐ नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते मधुसूदन। नमस्ते सर्वलोकेश नमस्ते तिग्मचक्रिणे। विश्वमूर्तिं महाबाहुं सर्वचित्तात्मकं प्रभुम्। नमस्ये पुण्डरीकाक्षं विद्याविद्यात्मकं मुनिम्। आदिदेवं महादेवं वेदवेदाङ्गपारगम्। गम्भीरं सर्वदेवानां नमस्ये पद्मलोचनम्। विश्वमूर्तिं महामूर्तिं विद्यामूर्तिं त्रिमूर्तिकम्। कवचं सर्व देवानां नमस्ये वारिजेक्षणम्। सहस्रशिरसं देवं सहस्राक्षं महाप्रभुम्। जगत्संव्याप्य तिष्ठन्तं नमस्ये परमेश्वरम्। शरण्यं शरणं देवं विष्णुं जिष्णुं जनार्दनम्। नीलमेघप्रतीकाशं नमस्ये शार्ङ्गपाणिनम्। शुद्धं सर्वगतं नित्यं व्योमरूपं सनातनम्। भावाभावविनिर्मुक्तं नमस्ये सर्वगं हरिम्। नचात्र किंचित्पश्यामि व्यतिरिक्तं तवाच्युत। त्वन्मयं च प्रपश्यामि सर्वमेतच्चराचरम्। त्वया विभूतिभिर्भाव्यं देवदेवं पराव्ययम्) इति॥

ऐसी राजा ने स्तुति की तबतो राजा के देह से निकल एक पुरुष नीलमेघ समानवर्ण अतिभयंकर वामनरूप धार राजा से हाथ जोड़ बोला हे राजन्! क्या आज्ञा देते हो? सो हम करें

यह आश्चर्य देखि विस्मित हो राजा बोला आप कौन हो क्या किया चाहतेहो कहां से आयेहो हमको व्याध से दीखते हो यह राजा का वचन सुनि व्याध बोला हे राजन् ! पूर्वजन्म में तुम जनस्थाननाम देश के चन्द्रवंशी राजा के पुत्र सब गुणकी खानि भये सो किसीसमय शिकार खेलने को कुत्तों को साथ ले वनको जाय मृगरूप धारण किये हुये मुनि को साधारण मृग जानके दो बाण से दूरसे मारा इसी बाण के प्रहार होतेही मुनि तो मृत होगया आपने मृग मरा जान बड़ेहर्ष से मृगके समीप आय जो देखते हौ तौ मृग न देखा किन्तु ब्राह्मण देख अत्यन्त व्याकुल होके पश्चात्ताप अर्थात् घोरचिन्ता से व्यथित हो दुःख में डूबे हुये घर गये घरमें जाय मृगरूप ब्राह्मणबध की ब्रह्महत्यासे भयभीत यही दिनरात विचार आपने रक्खा कि कौनसी पुण्य वा उत्तमकर्म बने जिससे यह हमारा घोर महापातक दूरहो यह शोच विचार दृढ़ मन में मान श्रीनारायण का ध्यानकर शुक्लपक्ष की द्वादशीव्रत का आपने नियम किया मन में यही कामना की नारायण मेरे खोटेकर्म से जो अनर्थ हुआहै वो प्रसन्न होके दूर करें सो आपका नियम द्वादशीव्रत का पूर्णभया अन्तमें हवनदान विधिसहित नाना प्रकारके गौवोंका दानदेके ब्राह्मण भोजन प्रीति से कराय आप पारण करबेका विचार कररहे थे कि आकस्मात् आपके उदर में शूलपीड़ा अति कठिन भई उस वेदना से पारण न करसके तुम्हारा शरीर मृत्युवश होगया उस समय में तुम्हारी प्राणप्रिया रानी जिसका नाम नारायणी था उसने तुम्हारी अन्त दशा देखके ऊँचे स्वरसे कानके समीप बोली महाराज ! मैं नारायणी हौं मेरी तरफ़ देखके उत्तर दीजिये यह शब्द सुनतेही तुम तो कालवश होगये नारायण शब्द के सुनतेही विष्णुदूत शीघ्र आके तुमको वैकुण्ठ धाम लेचले तब तो साथही हम भी चले जब वैकुण्ठ द्वारपर पहुँचे वहां तुमको भीतर लेजानेलगे

तब हम भी चले द्वारपालों ने हमको देखि एक ऐसा मुशल का प्रहार दिया कि वहांहीं हम मूर्च्छित होके गिरगये तुम चले गये फिर वैकुण्ठ के बाहर अपने तेजसे बहुतकाल इधर उधर घूमते२ यही शोचतेरहे कि जब आप यहां से बाहर निकलें तब हम मिलें ऐसेही विचारते २ कल्पान्त हुआ पुनः नई सृष्टि जब भई तब तो आप काश्मीरदेश के महाराज वसुमना के पुत्र होके जन्म लिया हमभी साथही तुम्हारी देह में विराजमान रहे आपने अनेक यज्ञ किया अनेक दान दिया ब्राह्मणों की सेवा किया परन्तु हम साथही रहे अब सर्वराज्य त्यागके यहां आय श्रीविष्णु की स्तुति और तप किया उसके प्रभाव से हम नहीं रहसकते अब तुम हम से छूटे हो मोक्ष को प्राप्त होगे यह चरित्र देख राजा ने व्याध से कहा हे व्याध! तुमने हमको जन्मान्तर का स्मरण कराया इस लिये तुम धर्म व्याध होगे और यह हमारा तुम्हारा संवाद और जो हमारी स्तुतिको कोई मनुष्य पाठ अथवा स्मरण करेगा उसको पुष्कर स्नान सफल होगा और अनेक पापों से छूटि विष्णुलोक को जायगा यह कथा वाराहजी धरणीसे सुनाय बोले कि, राजा तो व्याध को आशीर्वाद देके आप विमान चढ़ि विष्णुलोक को सिधारे ॥

सातवां अध्याय ॥

पृथ्वी यह कथा सुनि वाराहजी से पूछती है कि राजावसुमना जब वैकुण्ठधाम सिधारा फिर यह वृत्तान्त जान रैभ्यमुनि क्या करतेभये सो कहिये वाराहजी बोले हे धरणि! रैभ्यजी ने जब राजा वसुमना की सिद्धि सुनी तब गयानाम पितृक्षेत्र में आय पितरन को पिण्डदान तर्पण करि प्रसन्न हो तप करनेलगे उसी समय एक योगीराज तेज में सूर्य के समान प्रकाशमान विमान पर रैभ्यजी के समीप आतेभये उनको देख रैभ्यजी

विस्मित हो हाथजोड़ विनयसे प्रणामकर बोले आपने अतिकृपा करके हमको दर्शन दे यह जन्म सफल किया आपके तेज से हम विस्मित होके पूछते हैं आप कौन हो ? यह रैभ्य की वाणी सुनि विमानसे वह पुरुष बोला कि, हे ऋषे ! हमको रुद्रसे छोटे ब्रह्माजी के मानस पुत्रों में सनत्कुमारको जानो जनलोक में हमारा निवास है तुम्हारा उत्तम तप देखि बहुत चित्त प्रसन्न भया यहां आये आप धन्य हो ब्राह्मणों के कुलभूषण हो तुम्हारे दर्शन से हम बहुत आनन्द भये यह वचन सुनि रैभ्यऋषि बोले हे योगीश्वर ! आपको मैं प्रणाम करताहूं साक्षात् ज्ञान वैराग्य व योग की मूर्ति हो आज आपके दर्शनसे हम धन्य भये हमारी तपश्चर्या सफल भई अब आप कृपा करके कहिये सत्त्व क्या पदार्थ है रैभ्य के प्रश्न को सुन सनत्कुमारजी बोले, हे ऋषे ! तुम धन्य हो ब्राह्मणों में मुख्य हो जो वेद पढ़िके वेद के कहे कर्मोंको करते पितरोंको तृप्त करके व्रत होम जप पिण्डदानादि सत्कर्मों से परमेश्वर को प्रसन्न कररहे हो हे रैभ्यजी ! हम एक कथा कहते हैं सो सुनो विशाला नाम पुरी में एक राजा तपस्वी धर्मशील विवेकी सब गुण प्रतापसम्पन्न होतेभये परन्तु सन्तान के न होनेसे रात्रिदिन चिन्ता में मग्न एक दिन उत्तम २ ब्राह्मणों की सभाकर सभामें हाथ जोड़ प्रार्थना किया हे ब्राह्मणो ! आप भूदेव हो त्रिकालज्ञानी हो तपोमय हो इसलिये कृपा करके कहो हम कौनसा उपाय करें जिस करके सन्तान सुख के भागी होयँ यह राजा की विनयवाणी सुनि ब्राह्मण बोले हे राजन् ! आप गयानाम जो पितरों का क्षेत्र है वहां जाय पितृयज्ञ अर्थात् पिण्डदान करो तो आपका मनोरथ सिद्ध होय यह सुनि राजा प्रेमश्रद्धा से यात्रा कर गया में आय गयाशिरक्षेत्र में जाय पिण्डदान तर्पणकर पितरोंको तृप्त करता भया उसी समय तीन पुरुष तीन प्रकारके प्रकट हुये देखि विस्मित होके राजाने पूछा

आप कौनहो और शुक्ल, रक्त, कृष्ण तीन वर्ण तुम्हारे क्यों हैं हमसे कहो? राजा का वचन सुन शुक्लवर्ण का पुरुष बोला हे राजन्! हम तुम्हारे पिता हैं यह जो रक्तवर्ण का पुरुषहै सो हमारा पिता है और यह जो कृष्णवर्ण पुरुष है सो हमारा पितामह है हे पुत्र! ये दोनों रक्त और कृष्ण पुरुष अर्थात् हमारे पिता पितामह अपने समय में अनेक ऋषियों का और पुण्यजीवों का वध करनेसे अवीचिनाम नरकको शरीर छोड़के प्राप्त भये और हम अपने उत्तम कर्मोंसे देवलोक में जाय नानासुख को प्राप्त भये जो तुमने मन्त्रपूर्वक शुद्धचित्त से इस गयाक्षेत्र में पिण्डदान और तर्पण किया तिस पुण्यसे ये दोनों नरकदुःख से छूटके यहां आये और हम स्वर्गसे आये हमारा सबका मेल भया हे पुत्र! आज प्रसन्न होके सब दुःखों से छूटि तुम्हारे सत्कर्मसे पितृलोक को जाते हैं इस गयातीर्थ का यही प्रभाव है देखो तुम्हारे प्रत्यक्ष पितामह वृद्धप्रपितामह दोनों नरकदुःखसे छूटि पितृलोक को जाते हैं इस लिये हम इन दोनों को साथले तुमको आशीर्वाद दे बिदा होते हैं यह कथा रैभ्यमुनि को सुनाय सनत्कुमार बोले हे रैभ्य! जो कोई एकबार गया जाय पिण्डदान करता है वह धन्य है और तुम तो दिन दिन नित्य पिण्डदान पितृतर्पण कररहे हो यह कथा कहि रैभ्य से बिदा हो सनत्कुमार जी जनलोक को चलेजाते भये। वाराहजी कहते हैं हे धरणि! रैभ्यजी सनत्कुमार ऋषि से गयामाहात्म्य और गदाधर नारायण का माहात्म्य सुनि कृतकृत्य हो गदाधरजी की स्तुति करते भये (अथ स्तोत्रम्) (रैभ्य उवाच। गदाधरं विबुधजनैरभिष्टुतं धृतक्षमं क्षुधितजनार्तिनाशनम्। महाविशालासुरसैन्यमर्दनं नमाम्यहं हृतसकलाशुभं हरिम्। पुराणपूर्वं पुरुषं पुरुष्टुतं पुरातनं विमलमलं नृणां गतिम्। त्रिविक्रमं हृतधरणिं बलेहि गदाधरं रहसि नमामि केशवम्। विशुद्धभावैर्विबुधैरुपावृतं श्रियावृतं विगतमलं

विचक्षणम्। क्षितीश्वरैरपगतकिल्बिषैस्स्तुतं गदाधरं प्रणमति यः सुखं वसेत्। सुरासुरैरर्चितपादपङ्कजं केयूरहाराङ्गदमौलिधारिणम्। अब्धौ शयानं च रथाङ्गपाणिनं गदाधरं प्रणमति यः सुखं वसेत्। सितं कृते त्रैतयुगेऽरुणं विभुं पीतं तृतीये परमं प्रधानम्। कलौयुगे कृष्णतमं महेश्वरं गदाधरं प्रणमति यः सुखं वसेत्। बीजोद्भवो यः सृजते चतुर्मुखस्तथैव नारायणरूपतो जगत्। प्रपालयेद्रुद्रवपुस्तथान्तकृद्गदाधरो जयति षडर्धमूर्तिमान्। सत्त्वं रजश्चैव तमोगुणास्त्रयस्त्वेतेषु विश्वस्य समुद्भवः किल। स चैव एकस्त्रिविधो गदाधरो दधातु धैर्यं मम धर्ममोक्षयोः। संसारतोयार्णवदुःखजन्तुभिर्वियोगनक्रक्रमणैस्सुभीषणैः। मज्जन्तमुच्चैस्सुतरां महाप्लवो गदाधरो मामुदधौ सुपारदः। स्वयं त्रिमूर्तिः स्वमिवात्मनात्मनि स्वशक्तितश्चाण्डमिदं ससर्ज ह। तस्मिञ्जगद्भूतमयं ससर्ज यस्तमेव देवं प्रणतोऽस्मि भूधरम्। मत्स्यादिनामानि जगत्सिसृक्षतस्सुरादिसंरक्षणतो वृषाकपिः। मत्स्यस्वरूपेण समन्ततो विभुर्गदाधरो मे विदधातु सद्गतिम्) इति॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! रैभ्यजी की यह स्तुति सुनके अति प्रसन्न हो श्रीभगवान् गदाधर चतुर्भुज शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये गरुड़ासन पर आकाशमें दर्शन दे मेघगम्भीर वाणी से बोलतेभये हे रैभ्य! हम तुम्हारी तपस्या, स्तुति और भक्ति से प्रसन्न हैं जो मनोवाञ्छित फल चाहते हो सो मांगो ऐसी श्रीनारायण की कृपायुक्त मनोहरवाणी सुन के रैभ्यऋषि बोले हे भगवन्! इस अपूर्वदया के पात्र जो हमभये तो कौनसी बात अलभ्य है तथापि आपकी आज्ञा से मांगते हैं हे भगवन्! आप वह गति दीजिये जिससे सनकादि ऋषियों के समीप हमारा वास हो यह रैभ्य की प्रार्थना सुनि श्रीभगवान् "एवमस्तु" अर्थात् ऐसेही होगा यह कह अन्तर्धानहुये रैभ्यमुनि भगवान् का वचन सुनतेही त्रिकालज्ञ सर्वज्ञानसंपन्न हो सनकादि

सिद्धों के लोकमें जाय विहरतेभये वाराहजी कहते हैं हे धरणि! रैभ्यजीका किया स्तोत्र जे नित्य पाठ करें उनके पितरों को जो गयापिण्डदान से गति होती है सो नारायण गति देते हैं और उनको मुक्ति देते हैं ॥

आठवां अध्याय ॥

श्रीवाराहजी बोले हे धरणि! प्रथम कथा में जो राजा काश्मीराधिपति वसु के तप सिद्ध होने पर शरीर से व्याध उत्पन्न भया अब उसका वृत्तान्त सुनो व्याध ने उसी शरीर से चार हज़ार वर्ष तप किया अन्तमें निज शरीर छोड़ जनकपुर में व्याधपुत्र होके जन्म लिया वहां कुटुम्बपोषण के निमित्त नानाविध के मृगआदि जीवों को मार घर ल्याय सबविधि होम, अतिथिपूजन, पितृश्राद्ध कर यथाभाग कुटुम्ब में दे आप भोजन करता भया इसी प्रकार वहुत काल बीतने पर एकपुत्र और कन्या भई जिसका नाम अर्जुनक भया सो पुत्र मुनिकी तुल्य अतिविवेकी सत्कर्मरत होता भया और कन्या का अर्जुनकी नाम रक्खा जब कन्या वर के योग्य भई तब किसीको देनेके विचार में कन्याको साथ लेचला घूमते २ गयाक्षेत्र में आय मतङ्गनाम ऋषि के आश्रममें आय वहां ऋषिका पुत्र प्रसन्ननामक देख बहुत प्रसन्न हो कन्यायोग्य वर मानि मतङ्गजी से प्रार्थना की हे महाराज! यह मेरी वाञ्छा है जो कन्यारत्न मेरी धर्मभार्या से उत्पन्न भई है और सर्वसद्गुणसंपन्न है इसलिये आपके पुत्र को मैं दिया चाहता हूं सो कृपा करके मेरी प्रार्थना अङ्गीकार कीजिये अर्जुनकी नाम कन्या को आपकी आज्ञा से प्रसन्नऋषि स्वीकार करें इनके योग्य है यह व्याध का विनय वचन सुनि मतङ्गजी बोले हमारा पुत्र यह प्रसन्न सर्वगुणयुक्त महान् पण्डित है सो हमारी आज्ञा से तुम्हारी कन्या का पाणिग्रहण यथाविधि करे

यह ऋषि की वाणी सुनि बड़े हर्ष से व्याध ने निजकन्या को वेदविधि से मतङ्गपुत्र प्रसन्नऋषि को दे ऋषि सों बिदा हो अपने घर आया व्याध की कन्या अर्जुनकी अपने श्वशुर सास की सेवा तथा निजपति की सेवा भली प्रकार करती भई किसी समय उसकी सास अर्जुनकी से बोली तू व्याध जीवहिंसक की कन्या तेरे को ऋषियों की सेवा, तप, पतिधर्म क्या मालूम है मूर्खसी दिखाती है यह निरपराध सास के मुख से निज धिक्कार सुन के रोती २ निज पिता के समीपजाय आदि से वृत्तान्त सुनाय खड़ी चूप होरही धर्मव्याध कन्या का दुःख देखि दुःखी हो क्रोधकरि मतङ्ग के आश्रम आया मतङ्गऋषि निजसम्बन्धी को देख बड़े आदर से उठ पाद्य अर्घ दे आसन पर बैठाय कुशल प्रश्न पूछि आगमन का कारण पूछते भये व्याध ऋषि का सत्कार स्वीकार कर बोला कि हमको क्षुधा दुःख देरही है इस लिये शीघ्र भोजन दो यह सुनि मतङ्गजी बोले हे तपोधन! हमारे घर में गेहूं यव की रोटी और उत्तम भात मूंग माष की दाल और अनेक विध के भोजन तैयार हैं इच्छापूर्वक भोजन करो तब तो व्याध बोला कि तुम्हारे जो गेहूं यव धान ये तैयार सिद्ध हैं ये तो जीवमय दिखाते हैं इसलिये हम भोजन नहीं करते यह कहि व्याध वहां से उठि चला। वाराहजी कहते हैं हे धरणि! निज सम्बन्धी को जाते देख मतङ्गमुनि बोले हे सम्बन्धिन्! अपनी इच्छा से भोजन मांग के और तैयार भोजन छोड़ हमसे बे बिदा भये आपका उठके जाना यह क्या उचित है और भोजन क्यों नहीं करते? यह मतङ्गऋषि का वचन सुनि व्याध बोला। आप हज़ारों करोड़ों जीव नित्य हिंसा करते हो ऐसे महापापी का अन्न कौन खासक्ताहै? जो चैतन्यहीन अन्नहो सो दीजिये हम प्रीति से खायँगे विचारो कि हम वनसे एकजीव नित्य मार के घर लाय विधि से संस्कार कर अग्नि में होम और

पितृश्राद्ध और अतिथिसेवाकर जो शेष रहता है उसको सारे कुटुम्बको यथाभाग बांटि सबके पश्चात् हम भोजन करतेहैं आप घरमें कोटिहू जीव नित्य बधकर सब कुटुम्ब मिलि खाजाते हो यह अधर्म देखि तुम्हारा अन्न अभक्ष्य मान हम जाते हैं और यह विचारो शास्त्रमें लिखाहै ब्रह्माजीने ओषधी और संपूर्ण वृक्ष और मृगादि संपूर्ण यज्ञ निमित्त उत्पन्न किये हैं यज्ञ पांच प्रकार की है दैव सोम पैत्र मानुष ब्राह्म इन यज्ञों को कर यज्ञशेष जो भोजन करते हैं वो शुद्धगति को जाते हैं अन्यथा एक २ अन्न पक्षी पशुके तुल्य है यह महामांस दाता भोक्ता दोनों को अधोगति देतीहै और हे मतङ्गजी! हमने अपनी कन्या तुम्हारे पुत्र को दिया सो तुम्हारी स्त्री बारम्बार हमारी कन्या को जीवघाती की कन्या कहती है इस लिये हम तुम्हारे धर्म, आचार और पितृदेव अतिथि पूजा देखने को आये सो कुछ देखा नहीं हमारा श्राद्ध का समय और अतिथिपूजन का अवसर है इसनिमित्त हम जाते हैं वहां जाय निज नित्यकर्म समाप्त करके पश्चात् भोजन करेंगे यह कह फिर व्याध बोला हम व्याध जीवघाती आप पुण्यात्मा हमारी कन्या आपके पुत्र को व्याही गई सो तुम प्रायश्चित्त करके शुद्ध हो यह कह शाप देताभया कि आज से पुत्रवधू अपनी सासु का विश्वास और सासु पुत्रवधू का विश्वास कभी न करेगी परस्पर कौटिल्यसे रहेंगी यह कहि व्याध निजघर जाय नित्यकर्म देव पितर अतिथि पूजनकर भोजन करता भया इसी प्रकार बहुत काल घर में रहि अन्तमें अर्जुन नाम पुत्रको राज्य दे विषयवासना छोंड़ पुरुषोत्तम क्षेत्रमें जाय नारायण को तप करके स्तोत्रपाठ से प्रसन्न करता भया (स्तोत्रम्) (नमामि विष्णुं त्रिदशारिनाशं विशालवक्षस्स्थलसंश्रितश्रियम्। सुशासनं नीतिमतांपरायणं त्रिविक्रमं मन्दरधारिणं भजे। दामोदरं निर्जितभूतलं धिया यशोंशुशुभ्रं भ्रमराङ्गसुप्र-

भम्। भवे भवे देवरिपुप्रणाशनं नमामि विष्णुं परमं जनार्दनम्। त्रिधास्थितं तिग्मरथाङ्गपाणिनं नयस्थितं युक्तमनुत्तमैर्गुणैः। निश्श्रेयसाख्यं क्षपितेतरं गुरुं नमामि विष्णुं पुरुषोत्तमं सदा। महावराहो हविषांभुजो जनो जनार्दनो मेहितकृच्चितीमुखः। क्षितीश्वरो मामुदधिप्लवो महान्स पातु विष्णुश्शरणार्थिनं तु माम्। मायामयं येन जगत्त्रयं कृतं यथाग्निनैकेन ततं चराचरम्। चराचरस्य स्वयमेव सर्वतः स मेऽस्तु विष्णुश्शरणं जगत्पतिः। भवे भवे यश्च ससर्जकं ततो जगत्प्रसूतं सचराचरं त्विदम्। ततश्च रुद्रात्मवति प्रलीयते ततो हरिर्विश्वहरस्तथोच्यते। रवीन्दुपृथ्वी पवनादि भास्करा जलं च यस्य प्रभवन्ति मूर्तयः। स सर्वदा मे भगवन्सनातनो ददातु शं विष्णुरचिन्त्यरूपधृक्) इति स्तुतिः॥ ऐसी व्याधकी स्तुति सुन विष्णुनारायण प्रकट हो दर्शन दे बोले हे व्याध! हम तेरी स्तुति से प्रसन्न हैं जो इच्छा हो सो वर मांगो यह विष्णु भगवान् का वचन सुनि व्याध बोला हे महाराज! मैं यह चाहता हूं कि मेरी संतति पुत्रपौत्र आदि जो हो सो सत् क्रिया करके आपका भजनकरे अन्त में ज्ञान प्राप्तिहोके आपके चरणमें लीनहो यह वर दीजिये व्याधके वचन सुनि परमेश्वर 'तथास्तु' कह बोले हे व्याध! तेरे कुलमें यह दुर्लभ वरदान हुआ तुम हमारी गतिको प्राप्त हो यह कहि नारायण अन्तर्धान भये और व्याध आनन्द में मग्न हुआ २ नारायण के परम धामको जाताभया वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस स्तोत्र को जो मनुष्य पढ़े या सुने उपवास व्रत करके नारायणकी पूजाकर एकादशी व्रत रहिके इस स्तोत्र को जो ब्राह्मण के मुखसे पढ़े या सुने सो नारायण समीप रहनेवाले सेवकों में उत्तम सेवक हो अनेक मन्वन्तर वैकुण्ठधाम में बसै॥

नवां अध्याय॥

धरणी पूछती है हे वाराहजी! प्रथम सत्ययुग में श्रीभगवान् विश्वमूर्ति प्रथमही क्या करतेभये सो वर्णनकरो हम संपूर्ण यथार्थ सुना चाहती हैं यह सुनि वाराहजी बोले, हे धरणि! सृष्टि के आदि में एक नारायण रहे और सब शून्य रहा उस समय नारायण दूसरेकी इच्छा की तब ओंकार शब्द होताभया तिस ओंकारके पांचभाग भये अकार, उकार, मकार, नाद, विन्दु इन भागों से क्रम करके भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, जनलोक, तपलोक उत्पन्न होते भये इस ओंकार में ये लोक ग्रथित हैं जैसे सूत्र में मणिगण गूथे हों इस लिये सब पदार्थों का बीज ओंकार है शंकरमूर्तिने इसी ओंकार से इन लोकों को उत्पन्नकर शून्य देखि निज मनमें क्षोभ ल्याय स्वर १६ और हल् अर्थात् व्यञ्जन ३५ उत्पन्न किया उन्हीं स्वर व्यञ्जनों से वेदशास्त्र उत्पन्न किया फिर चिन्ता करने लगे कि इस सृष्टि की वृद्धि कैसे हो इसीविचार में नारायण के नेत्र से तेज उत्पन्न भया दाहिने नेत्र से जो तेज भया सो अग्नि पुञ्जसमान वह सूर्य कहाया और वामनेत्र से जो तेज भया अति शीतल वह चन्द्रमा कहाया फिर नारायण के प्राण से वायु उत्पन्न भया जो वायु भगवान् अद्यापि सबजीवों के हृदयमें विराजमान हैं उस वायु से अग्नि भया जो अग्नि ब्रह्मतेज करके विख्यात है फिर निजमुख से ब्राह्मण उत्पन्न किया और भुजासे क्षत्रिय ऊरू से वैश्य, पैर से शूद्र इन चार वर्णों को उत्पन्न कर चार वर्णों से भूर्लोक पूर्ण किया पीछे यक्ष तथा राक्षस को उत्पन्न कर भुवर्लोक पूर्ण किया देवताओंको उत्पन्नकर स्वर्लोक में निवासदिया सनकादि ऋषियों को महर्लोक वैराजसृष्टि से जनलोक तपस्वियों करके तपलोक तेजोमय सृष्टि करके सत्यलोक इस प्रकार सर्वलोक पूर्णकर कल्प रचना करते भये जिस कल्प

में नारायण निद्रावश होके इनलोकों को संहार कर शयन करते हैं फिर कल्परात्रि व्यतीत होने पर निद्रा त्याग जब नारायण उठे तौ फिर वेद का और वेदमाता गायत्री का स्मरण किया निद्रावश मोहमें प्राप्त भये नारायण को वेद का पता न लगा तब तो विचारते २ निजरूप हो जल में लीन हुआ दीखा तब मत्स्य-रूप धारण कर नारायण जल में प्रवेश करते देख प्रलयकाल का जो समुद्र है सो रूपवान् हो नारायण की स्तुति करताभया (स्तुतिः) (नमोऽस्तु वेदान्तरगाप्रतर्क्य नमोस्तु नारायणमत्स्य-रूप। नमोऽस्तु ते भास्वर विश्वमूर्ते नमोऽस्तु विद्याद्वयरूपधा-रिणे। नमोऽस्तु चन्द्रार्कविशालनेत्र जलान्तविश्वस्थितचारु-नेत्र। नमोऽस्तु विष्णोश्शरणं व्रजामः प्रयाहि नो मत्स्यतनुं विहाय। त्वया ततं विश्वमनन्तमूर्ते पृथङ् न ते किञ्चिदिहास्ति देव। भवान्नचास्वव्यातिरिक्तमूर्तिस्ततो वयं ते शरणं प्रपन्नाः। स्वात्मेन्दुवह्निश्च मनस्स्वरूपं पुराणमूर्तेस्तव चाब्जनेत्र। क्षमस्व शंभो यदि भक्तिहीनं त्वया जगद्भासति देवदेव। विरोधमेतत्तव देवरूपं सुभीषणं सुस्वनमद्रितुल्यम्। पुराणदेवेश जगन्निवास शमं प्रयाह्यच्युततीव्रभानो। नमामि सर्वे शरणं प्रपन्ना भीताश्च ते रूपमिदं प्रपश्य। लोके समस्तं भविता विनाद्य न विद्यते देहगतं पुराणम्) इति॥ वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस प्रकार समुद्र की स्तुति सुनके जलके मध्यसे वेदशास्त्र ल्याय पुनः पूर्व-तुल्य सृष्टि यथास्थानमें यथायोग्य स्थापितकर अन्तर्धान भये॥

दशवां अध्याय॥

वाराहनारायण कहते हैं हे धरणि! इस प्रकार नारायणने सृष्टि को रच जब विश्राम लिया तब तो नारायण की इच्छा से सृष्टि बहुत बढ़ी और सृष्टि के मनुष्य नारायण के उत्पन्न किये हुये पदार्थों से नगर २ द्वीप २ में परम तप, योग, यज्ञ, दान

भोजन से नारायण को प्रसन्न करते भये प्रजाकी इस उत्तमवृत्ति को देखि २ परमेश्वर प्रसन्न ह्वै निजदैवीरूप प्रकट कर इन्द्रादि देवताओं को दर्शन देतेभये और बोले हे देवताओ ! हम प्रसन्न हैं जो इच्छा हो सो वर मांगो यह नारायण की वाणी सुनि देवता बोले हे भगवन् ! हम सब आपके शरणहैं हमको लोक में पूज्य कीजिये यह देवताओं का वचन सुन सबों को वरदान दे अन्तर्धान भये देवगण वाञ्छित वर पाय नारायण को अन्तर्धान देख निज २ स्थान को गये वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस प्रकार नारायण देवताओं को वरदे निजमूर्ति को तीन भाग करके लोककल्याण हेतु तीन व्यवहार किये सत्त्वगुण से वेदपाठ मुनियों का रूप धरके करनेलगे और रजोगुण से देवता होके वेदोक्तकर्मों से पूजा पाय लोक के अनेक मनोरथ सिद्ध करते निज तामसीमूर्ति जिसका नाम शूलपाणि है उसको पूजते भये तामसमूर्ति से असुरों में स्थितहोके असुरकर्म कर असुर कहाये इस प्रकार श्रीविष्णुभगवान् नानामूर्ति धारणकर लोकव्यवहार करते हैं सोई नारायण सत्ययुग में निजमूर्ति से रहे त्रेता में रुद्र-रूप द्वापरमें यज्ञरूप कलियुग में नानारूप होके देवकार्य करते हैं तिस आदि नारायणका चरित्र सुनो जिसके तेज और रूप का कोई पार नहीं जासक्ता इस प्रकार वाराहजी धरणी से कह कथा कहने का प्रारम्भ किया हे पृथिवि ! सत्ययुग में सुप्रतीक नाम धर्मात्मा बलवान् प्रतापी राजा होता भया तिस राजाके परम सुन्दरी दो रानी होती भईं तिसमें एक का नाम विद्युत्प्रभा दूसरी का नाम कान्तिमती सो राजा दोनों स्त्री में पुत्र न होनेसे बन्ध्या देखि मन में बहुत विकलहो चित्रकूट पर्वत में जाय वहां मैत्रेय मुनिको मिलि कुछकाल भली भांति से मुनिकी सेवा करताभया मैत्रेयऋषि सुप्रतीक राजा की सेवा देखि अतिप्रसन्न हो वाञ्छा को जानि वरदान देनेको विचार किया उसी समय देवताओंकी

सेना साथ लिये देवराज इन्द्र आये तिससमय देवराज को देखि ऋषि ने कोपसे पीड़ित हो शाप दिया हे इन्द्र! इस अवसर में जो तुम राजा के वरदान में भङ्गकिया इसलिये कुछ काल निज राज्य से भ्रष्ट हो इतस्ततः लोकभ्रमण करो यह इन्द्र को शाप दे राजा सुप्रतीक को वर देते भये हे राजन्! तुम्हारी वाञ्छा संतान के निमित्त है सो संतान तुम्हारे बड़ा पराक्रमी इन्द्रतुल्य पुत्र होगा लोक में निज प्रताप से विख्यात और विद्यावान् होगा और स्वभाव से क्रूर होगा जिसका दुर्जयनाम सब कहेंगे यह वरदानदे मुनि राजाको बिदा किया राजा घर आया आते ही जो सब रानियों में ज्येठी विद्युत्प्रभा नाम रानी रही उसने गर्भ धारण किया समय पाय पुत्र उत्पन्न भया राजा ने सांवत्सरिक अर्थात् ज्योतिषियों को बुलाय जातकर्मादि संस्कार कराय मुनिकी आज्ञासे दुर्जय नाम रक्खा सो दुर्जयनाम राजपुत्र थोड़े ही काल में वृद्धिको प्राप्त हो यज्ञोपवीतादि संस्कार पाय गुरुकी सेवाकर संपूर्ण विद्याका पारगामी होताभया और वेद, वेदाङ्ग, धर्मशास्त्र में निपुण हो धर्ममार्ग में प्रीति से प्रवृत्त हो राजा का अतिप्रिय होता भया हे धरणि! राजा की जो दूसरी रानी रही तिसके भी पुत्र उत्पन्न भया उसका नाम राजा ने सुद्युम्न रक्खा यह भी पुत्र बहुत बुद्धिमान् सर्वविद्याओं में निपुण भया इस प्रकार सुप्रतीक राजा पुत्रों को गुणवान् राज्यभार सँभारने के योग्य और निज शरीर वृद्ध देखि दुर्जयनाम जो बड़ी रानी का पुत्र है उसको राज्य दे आप विषय वासना से निवृत्त हो परमेश्वरके भजन करने को चित्रकूट पर्वतको गया दुर्जयने जब काशी का राज्य पाया तब दिग्विजय करने की इच्छा से चतुरङ्गिणीसेना अर्थात् रथ, हाथी, घोड़े, पैदर साथ ले उत्तरदिशा को जाय सब राजाओं को जीति निज आधीन कर फिर किंपुरुषखण्डके स्वामी को वशकर दण्ड ले हरिवर्ष में जाय वहां के

स्वामी को जीति इसी प्रकार रम्यक, ऐरावत, कुरुभद्राश्व,इला-वृत जीति मेरुपर्वत में जाय वहां देवगणों को स्वाधीनकर स्वर्ग जीतने के विचार से देव, दानव, गन्धर्व, गुह्यक, किन्नर इन्हों को जीतते स्वर्ग को चला इस वृत्तान्तको नारद मुनि देखि देवराज से विदित किया यह वृत्तान्त इन्द्र सुनके देवलोक त्यागि मनुष्य लोक को साथ देवों को लेके चलेगये जब दुर्जय स्वर्गको गया वहां शून्यदेख निज जय मानि वहांसे लौटि गन्धमादन पर्वत पर स्कन्धावार में निवास किया तब दो तपस्वी आय दुर्जयसे बोले हे राजन्! तुमने लोकपालों को निवृत्त किया स्थान शून्य है विना लोकपाल लोक का निर्वाह किस प्रकार होसक्ता है इस लिये यह इन्द्र पद हमको दो आपकी सहायता से हम राज्यकरें यह सुन दुर्जय बोला कि आप कौन हो अपना वृत्तान्त कहो यह राजा का वचन सुन तपस्वी बोले हे महाराज! हम असुर हैं विद्युत् सुविद्युत् हमारा दोनों का नाम है बहुत तप किया है आपके बाहुबल से हम दोनों स्वर्ग सुख भोगा चाहते हैं यह असुरों की वाणी सुनि राजा ने आज्ञा दी कि खुशीसे देवराज्य करो हम बहुत प्रसन्नहैं इस प्रकार राजा दुर्जय विद्युत्–सुविद्युत् को स्वर्ग का राज्य दे आप जाय कुबेरजी के चैत्ररथनाम जो नन्दन वन के तुल्य है तिस वन में विहरता भया उसी समय क्या देखता है कि एक अद्भुत स्वर्णका वृक्ष बड़ा छायादार उसके नीचे दो कन्या खेल रही हैं उनको दूर से देख समीप आय कन्याओं की अद्भुत सुन्दरताई देखि बड़े विस्मय को प्राप्त हो पूछनेका विचारकर जबतक पूछा चाहे तबतक क्या देखताहै कि दो तपस्वी निज तेज से प्रकाशमान मध्याह्न सूर्यके तुल्य कन्यों के समीप बैठे हैं यह देखि राजा दुर्जय हाथी से उतर हाथजोड़ ऋषियों को प्रणाम कर नम्र हो खड़ारहा ऋषियों ने राजा को खड़ा देख आसन दे सत्कारपूर्वक बैठाय पूछा हे राजन्! आप

कौनहो किसके पुत्रहो अकेले यहां किस निमित्त घूमिरहेरहो यह ऋषियों का वचन सुन राजा बोला हे तपोधनो! पृथिवीमें जो काशीनाम शिवक्षेत्र है तिसका राजा सुप्रतीक तिसके हम ज्येष्ठ पुत्र हैं पिता हमको राज्य दे वनको गये हम दिग्विजय करनेको निकल पृथिवी के सब राजाओं को जीति व देव, दानव, गन्धर्वों को जीतके आये हैं यहां कुबेरजी का यह वन मनोहर देखि विहार करने को निकले दैवयोग आपका दर्शन भया सो आप कृपा करके अपना नाम कुलगोत्र बताइये जिसमें हमारा संशय दूर हो यह राजा का वचन सुनि ऋषि बोले हे राजन्! हमदोनों हेति प्रहेति नाम स्वायंभुव मनु के पुत्र हैं यहां देवताओं के जीतबे को हम बड़ी सेना के साथ आये संग्राम कर बहुतों को जीति जो शेष देव रहे हमसे पराजित हो क्षीरसागर के समीप जाय नारायण की स्तुति कर निजकार्य को निवेदन करते भये परमेश्वर देवताओं की पीड़ा देखि उनकी प्रार्थना सुनि बोले हे देवताओ! हम तुम्हारे क्लेश को जाना जो हेति प्रहेति नाम क्षत्रियों करके तुम पराजित भये हौ सो जाय फिरि युद्ध करो हम तुम्हारी सेना में निज माया से प्रवेश करके सब शत्रुओं का संहार करेंगे डरोमत यह नारायण की वाणी सुनके मनमें प्रसन्न हो फिरि संग्राम को निकले वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जिस समय संग्रामभूमि में देवता खड़े भये व नारायण का स्मरण किया उसी समय नारायण निज वचन सफल करने को आय देवसेना में प्रवेश कर लक्षों कोटियों देवगण हो नानाविधि अस्त्र धारण किये घोरयुद्ध करनेलगे हेति प्रहेति राजा दुर्जय से कहते हैं कि हे राजन्! महाप्रबल पहले की जीती हुई हमारी सेना संपूर्ण क्षणमात्र में विध्वंस होगई उस चतुरङ्गिणी में केवल हम दो भाई को शेषरहे देखि नारायण देवताओं को जय दे अन्तर्धान भये हम यह चरित्र श्रीभगवान् का देखि विस्मित हो

विचारा कि अब तो नारायण का भजन योग्य है यह विचार नारायण की शरण में जाय तप करनेका प्रारम्भ किया तब से यहां तप कर रहे हैं हे राजन्, दुर्जय! तुम्हारे पिता सप्रतीक हमारे अतिप्रिय मित्र हैं तुम उनके पुत्र हो इसलिये हमको बहुत प्यारे हो सो हे दुर्जय! ये दोनों हमारी कन्या हैं इनका सुकेशी मिश्रकेशी नाम है इन कन्याओं को धर्मपत्नी करके अङ्गीकार करो यह हेति प्रहेति का वचन सुनि राजा दुर्जय कन्याओंको अङ्गीकार कर बड़े आनन्द से निज राजधानी को आय राज्य करनेलगा कुछ काल के बीते सुकेशी के प्रभवनाम पुत्र व मिश्रकेशीके सुदर्शननाम पुत्र उत्पन्न भया पुत्रों को देखि राजा दुर्जय बहुत प्रसन्न हो अनेक दानों से याचकों को तृप्तकर जातकर्मादि संस्कार कराय अपने को धन्य मानता भया सो दोनों पुत्र थोड़े दिनों में यज्ञोपवीत संस्कार को पाय यथाविधि ब्रह्मचर्य से यथाधिकार वेदशास्त्र नीति पढ़ निपुण होतेभये तिन पुत्रों को राज्याधिकार योग्य देखि राज्यभार दे राजा दुर्जय वन को जाता भया परन्तु साथ में पांच अक्षौहिणी लिये जाय गौरमुखनाम ऋषि के आश्रम में पहुँचा ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

वाराहजी कहते हैं, हे धरणि! गौरमुखऋषि राजा दुर्जयको देखि बड़े आदर से पाद्य, अर्घ्य, आचमन, आसन, स्वागत, कुशल प्रश्न से सत्कारकर भोजन का निमन्त्रण देता भया राजा ने ऋषिकी सेवा को अङ्गीकारकर निजसेना को आज्ञा दी कि यहां यथास्थान में निवास करो तब तो सेना के अधिकारी वन में सावकाश से जहां तहां वृक्षों के मनोहर कुञ्जों में टिके फिर राजा मन में विचारने लगा कि यह ऋषि कन्दमूल फल के आहार करनेवाला हमारी सेना सहित का निमन्त्रण किया किस

प्रकार क्या भोजन देगा और ऋषि ने विचारा कि मैंने राजा की आतिथ्य सेना सहित की है सो इनका सत्कार किस प्रकार बने यह विचार श्रीगङ्गाजी में जाय ध्यान लगाय श्रीनारायण का स्मरण करता भया इतनी कथा सुन धरणी बोली हे वाराहजी! आप कहें किस स्तुति से गौरमुखऋषि से नारायण प्रसन्न हो वाञ्छा सिद्धि दी वाराहजी कहते हैं हे धरणि! सुनो गौरमुख ऋषि जाय गङ्गाजीमें स्नानकर संध्या तर्पण से निवृत्त हो जल के भीतर ध्यान लगाय नारायण की स्तुति करने लगा॥ अथ स्तुतिः॥ (नमोस्तु विष्णवे नित्यं नमस्ते पीतवाससे। नमस्ते चारुरूपाय नमस्ते जलरूपिणे। त्वं देवस्सर्वभूतानां प्रभुस्त्वमसि हृच्छयः। नमस्ते सर्वसंस्थाय नमस्ते जलशायिने। नमस्ते क्षितिरूपाय नमस्ते तेजसात्मने। नमस्ते वायुरूपाय नमस्ते व्योमरूपिणे। त्वमोंकारो वषट्कारः सर्वत्रैव च संश्रयः। त्वमादिस्सर्वदेवानां तव चादिर्न विद्यते। त्वं भूःस्वं च भुवो देव त्वं जनस्त्वं महस्स्मृतः। त्वं तपस्त्वं च सत्यं च त्वयि देवचराचरम्। त्वत्तो भूतमिदं विश्वं त्वदुद्भूता ऋगादयः। त्वत्तश्शास्त्राणि जातानि त्वत्तो यज्ञाः प्रतिष्ठिताः। त्वत्तो वृक्षा वीरुधश्च त्वत्तः सर्ववनौषधीः। पशवः पक्षिणस्सर्पास्त्वत्तएवजनार्दन। नमामि देवदेवेश राजादुर्जयसंज्ञकः। आगतोभ्यागतस्तस्य आतिथ्यं कर्त्तुमुत्सहे। तस्य मे निर्धनस्याद्य देवदेव जगत्पते। भक्तिनम्रस्य देवेश कुरुष्वान्नादिसंचयम्। यं यं स्पृशामि पादेन यं यं पश्यामि चक्षुषा। फलं वा तृणकन्दं वा तत्तदन्नं चतुर्विधम्। त्वन्यत्तथा समं वापि यद्ध्यातं मनसा मया। तत्सर्वं सिद्ध्यतां मह्यं नमस्ते परमेश्वर॥ इति) वाराहजी कहते हैं हे धरणि! यह गौरमुख ऋषिकी स्तुति तथा निज कार्य की प्रार्थना सुनि श्रीभगवान् प्रसन्न हो निजरूप से प्रकट हो दर्शन दे "वरंब्रूहि" ऐसी मधुर वाणी से बोलते भये तब श्रीनारायणकी वाणी सुनि ऋषि ध्यान

छोड़ नेत्रों को उघाड़ जो देखा तौ निज सन्मुख चतुर्भुज शंख चक्र गदा पद्म धारण किये सहस्रसूर्यके तुल्य प्रकाशमान विश्वरूप नारायण वरदान देरहे हैं ऐसा मूर्ति देखि ऋषि बड़े हर्षसे हाथ जोड़ नम्र हो बोले कि, हे भगवन्! आपने मेरे ऊपर बड़ी कृपा किया जो देवताओं को दुर्लभ है सो आज दर्शन दे यह जन्म सफल किया श्रीपरमेश्वर मेरी प्रार्थना यही है जो सहित सेना के राजा दुर्जय मेरे आश्रम में आया व मैं निमन्त्रण देचुका हूं सो आपकी कृपा से इस राजा की आतिथ्य सेवा मैं करूं आज हमारी सेवासे प्रसन्न हो यहां निवासकरे फिर प्रातःकाल निजदेशको जाय यह वरदान चाहिये यह गौरमुख ऋषि की प्रार्थना सुनि चित्तसिद्धि तथा चिन्तामणि नामक मणि देके परमेश्वर अन्तर्द्धान भये गौरमुखजी निज आश्रम को आय श्रीनारायण वरके प्रभाव से उसी वन में तरह २ के दिव्य २ स्थान राजा के तथा सामन्त, पुरोहित, मन्त्री, सेना के योग्य यथासुख निवास करनेको अकस्मात् बनगये मानों आकाशको स्पर्श कररहे हैं निज स्वच्छता से चन्द्रमा की छवि मलीन कर रहे हैं ऐसे लक्षों कोटियों महल तैयार देखि श्रीविष्णु की कृपा का प्रभाव देखि नानाविध राजाओं को विहार स्थान पुष्पवाटिका नानाविध वृक्षोंसे अनेक २ मधुर स्वर बोलनेवाले पक्षियों से विराजित देखि हाथी की शाला घोड़े की शाला गोगृह और दास दासी के रहने का स्थान सभा पाकशाला अस्त्रशाला और जो अनेकविध पदार्थ राजाओंको चाहिये सो संपूर्ण यथायोग्य यथास्थान में बने देख प्रसन्न हो गौरमुख ऋषि राजा से बोले हे राजन्, दुर्जय! आप निजसेना सहित सुखपूर्वक इस महल में निवास कीजिये तब तौ राजाने निज सेनाधिप को यथास्थान में निवास करनेको आज्ञा दे आप राजस्थान को देखि विस्मित हो निवास किया उसीसमय नारायण की दीहुई मणि ले गौर-

मुखने राजाके समीप आय राजाको सुखसे बैठा देखि वह मणि राजा के देखतेही एकान्त में धरदिया उसी समय सोलह २ वर्ष की अनेक स्त्रियां नाना भूषणोंसे भूषित जिनके अङ्गोंसे मृगमद की गन्ध निकल रहीहै सो मधुरशब्दों से हाथ जोड़ स्नान केशमार्जन अभ्यङ्ग दन्तधावन ठंढाजल गरमजल सुगन्धितजल वस्त्र पादुका छत्र मणिपीठ और नानाविध जो महाराजोंके उपभोग की सामग्रियां हैं सो निज २ हाथ में लिये राजसेवा में तत्पर भईं यह चरित्र देखि राजा दुर्जय मनमें अतिविस्मित हो विचारने लगा कि यह प्रभाव ऋषिके तपका है अथवा इस मणि का इसी विचार में राजा बड़ी खुशी से स्नान कर वस्त्र पहिन चन्दनादि लेप शृंगारकर भांति २ के व्यञ्जन भोजनकर ऋषि करके पूजित ताम्बूल बीड़ीखाय आनन्दपूर्वक निजशय्यामें मनोहर स्त्रियों के साथ विलास करताभया उसीसमय सूर्य भगवान् अस्ताचल को प्राप्त भये चन्द्रमा निज किरणों से सारा वन और मायापुर प्रकाश करते उदय को प्राप्तभये तब तौ राजा ने दिव्य मनोहर स्त्रियों के साथ अतिप्रिय चन्द्रमाका प्रकाश देखि नानाविध वारुणी व चतुर्विध अन्न को भोजनकर नानाविध क्रीड़ाविलास से रात्रिको बिताया प्रातःकालके होतेही नारायण की माया अन्तर्धान होगई केवल वन व वनके जीव ऋषि की पर्णकुटी शेषरही यह चरित्र राजाने देखि व्याकुलहो देशचलने का विचार किया परन्तु राजाके मनमें यह दुर्विचार उत्पन्न भया कि यह मणि हमारे योग्य है सो यदि ऋषि मांगने से देदेय तो अच्छा है नहीं तो इससे जबरदस्ती लेना योग्यहै यह विचारि आपतो ऋषि से बिदा हो सेना साथले निजनगर की राह ली कुछ दूर जाय विरोचननाम निजमन्त्रीको आज्ञा दी हे विरोचन! ऋषि के समीप जाय कहो कि आप ऋषिहो तपस्वियोंको मणि से क्या प्रयोजन है यदि तुमको धनका लोभ होय तो जो धन

चाहो सो हम देंगे यह मणि राजाको दो क्योंकि सब रत्नों का स्वामी राजा होता है यह कहने से देदे तो उत्तम है न देय तो निज बलसे तिरस्कार करके लेलेना यह आज्ञा दे राजा निजपुर को चलाआया व विरोचनमन्त्री राजाकी आज्ञासे बहुत सेनाले अतिअहंकारसे ऋषिके समीप पहुँचा वहां जाय राजाकी आज्ञा सुनाई कि; महाराज ! आप तपस्वी हैं यह मणि महाराज के योग्य है सो आप खुशीसे देदीजिये अन्यथा राजाकी आज्ञा जो होगी सो कियाजायगा यह गौरमुख से कहि विरोचन चुप हो रहा ऐसी विरुद्धवाणी विरोचनकी सुनि ऋषि बड़े कोपयुक्त हो बोले हे विरोचन ! तुम्हारा राजा बड़ा मूर्ख है जो दानी बनिके क्षत्रियों के कुल में जन्म लेके याचक बनता है व ब्राह्मणों के पदार्थ पर लोभ करता है ऐसी बुद्धि को धिक्कार है यह ऋषिका वचन सुन विरोचन ने लौट वृत्तान्त राजा से निवेदन किया व ऋषिजी वन में कुश, कण्डी, पुष्प फल लेने को चले गये परन्तु मणि जो कुटी में रही उसकी चिन्ता में चित्त सावधान न रहा। वहां विरोचनकी वाणी सुनि राजा अति क्रोधकर बोला कि शीघ्र जावो जिस प्रकार से बने मणि ल्यावो यह राजा की आज्ञा ले विरोचन ने ऋषि के स्थान में आय अग्निशाला में मणि को देख रथ से उतर मणि लेने का विचार किया ज्यों मणि के समीप गया तैसेही मणि से पन्द्रह वीर बड़े पुष्ट बलवान् अस्त्र धारण कियेहुये उत्पन्न हो निषेध करतेभये वाराहजी कहते हैं हे पृथ्वि ! अब उन पन्द्रह के नाम सुनो सुप्रभ, दीप्ततेजा, सुरश्मि, शुभदर्शन, सुकीर्ति, सुन्दर, सुन्द, सुद्युम्न, सुमना, शुभ, सुशील, सुखद, शम्भु, सुदान्त, सोम ये पन्द्रह वीर सेनापति हैं इनके साथ चतुरङ्गिणीसेना अतिबल प्रकट भई इस सेना को देखि विरोचन ने क्रोध करके निज वीरों को युद्ध की आज्ञा दी तब दोनों सेना मिलि परस्पर नाना शस्त्रोंसे घोर युद्ध करनेलगे रथी

रथी से गजी गजी से घोड़े के वीर घोड़ेसे पैदल पैदलसे मिल के ईर्षायुक्त परस्पर जीतबे के निमित्त युद्ध करतेभये इस द्वंद्व-युद्ध में रक्त करके अनेक प्रवाहों से नदी बही इस संकुल युद्ध में अतिप्रचण्ड वीरों की क्षय देखने को देवता विमानों पर साथ अप्सराओं के गण और सिद्ध गन्धर्वगणों के आकाश में आये इसी प्रकार युद्धहोते २ मणिके वीर राजा दुर्जयकी सेनाको जीति यमलोक को पठाय विरोचन का भी शिर काट मृत्युपुर को भेज जयशब्द पुकार मणि के समीप आय खड़ेभये जो कुछ राजाकी सेना में भाजिबचे उन्होंने जाय राजासे वृत्तान्त निवेदन किया सो वृत्तान्त सुनि बड़े क्रोध से राजा दुर्जय निज मुख्यसेना को साथ ले अतिशीघ्र ऋषि के स्थान में पहुँचा और यह वृत्तान्त सुनि राजा के श्वशुर जो हेति प्रहेति नामक थे वे निज जामाता की सहाय करने को असुरों की पन्द्रह सेना लिये वहां आये जिन सेनापतियों का नाम प्रघस, विघस, संघस, अशनिप्रभ, विद्युत्प्रभ, सुघोष, उन्मत्ताक्ष, भयंकर, अग्निदत्त, अग्नितेजा, अग्निबाहु, शक्रप्रतर्दन, विरोधी, भीमकर्मा, विप्रचित्ति ये पन्द्रह वीर महाप्रबल निज २ सेना को लिये दुर्जय राजा की सहाय देबे को आये सब एकत्र हो मणिज वीरों के साथ नाना प्रहार करके युद्ध करते भये और विघसनाम वीर को सुतेजाने तीनबाण मार व्यथितकिया सुरश्मि ने संघसनाम वीर को दश बाण से मारा और शुभदर्शन ने अशनिप्रभ को पन्द्रह बाण से मारगिराया इसीप्रकार विद्युत्प्रभ को सुकान्तिवीर ने बाणों से व्यथितकिया सुन्दरनाम वीर ने सुघोषको मारगिराया सुन्दने उन्मत्ताक्ष को मूर्च्छित किया और सुमनाने निजबाणों से अग्नि-दंष्ट्र के धन्वा को काटि अग्नितेज को मूर्च्छित किया सुनलवीर ने शक्रप्रतर्दन को विकल किया इसी प्रकार निज २ हस्त ला-घवकर परस्पर घोरयुद्ध करते भये मणिजवीरों ने असुरों को

व्याकुलकर उनकी सेना को संहार किया ऐसे घोरयुद्ध में निज औ परका ज्ञान न रहा राजा दुर्जय ने जाय मणि के समीप पहुंच मणि हरण करने का विचार किया उसी समय गौरमुख ऋषिने घोर उत्पात देखि व्याकुल हो श्रीनारायण का स्मरण किया श्रीनारायण उसी समय स्मरणकरतेही निजस्वरूप धरि गरुड़ पर सवार हो पीताम्बर धारे चतुर्भुज शंख, चक्र, गदा, पद्म धारे ऋषिसों बोले हे ऋषे! किस प्रयोजन से तुमने हमारा स्मरण किया है यह परमेश्वरकी वाणी सुनि ऋषिजी बोले हे स्वामिन्! यह दुर्जयनाम पापात्मा सेना को लिये आपकी दी मणि को लोभ से लियाचाहता है इस दुष्ट को दण्डदीजिये इस वाणीको सुनि नारायण ने निजकरकमलसे कोटिसूर्य से अधिक प्रकाशी जो सुदर्शनचक्र तिसको छोड़ आज्ञादी कि इन दुष्टों को शीघ्र संहार करो यह सुदर्शन आज्ञा पाय देखतेही क्षणमात्र में सारी असुरोंकी सेना सहित राजसेना को संहारकर फिर श्री नारायण के पास आया यह वृत्तान्त देखि नारायण ऋषि से बोले हे ऋषे! जो हमारे चक्रने निमिषमात्र में दुष्टों का संहार इस वनमें कर आपको तथा और ऋषियों को सुखी किया इस निमित्त इस वनका नैमिषारण्य नाम होगा और ये जो पन्द्रह वीर मणि से उत्पन्न भये हैं सो सत्ययुग में बड़े प्रतापी चक्रवर्ती राजा होंगे यह कहि नारायण तो अन्तर्धान भये व गौरमुख ऋषि सुखसे निज आश्रम में बैठ तप करने लगे॥

बारहवां अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! दुर्जय राजा निज सेना को चक्राग्नि में भस्म हुई देखि बड़े दुःख से व्याकुल हो शोचने लगा कि ईश्वर की माया प्रबल है जिन वीरों से मनुष्य, देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष आदि सबको जीता वे क्षणही में विध्वंस

होगये इसी शोच विचार में राजा को यह बुद्धि उत्पन्न भई कि अब नारायण के प्रसन्नार्थ तप करनाचाहिये जिसमें उनका कोप शान्त हो और मेरा कल्याण हो यह निश्चयकरि चित्रकूट नाम जो पुण्यपर्वत है तिसमें जाय तप करता हुआ पुण्यस्तुति करने लगा (अथ स्तुतिः॥ दुर्जयउवाच। नमामि रामं नरनाथमच्युतं कविं पुराणं त्रिदशारिनाशनम्। शिवस्वरूपं प्रभवं महेश्वरं सदा प्रपन्नार्तिहरं धृतश्रियम्। भवान् सदा देवसमस्ततेजसां करोषि तेजांसि समस्तरूपधृक्। क्षितौ भवान्पञ्चगुणस्तदा जले चतुःप्रकारस्त्रिविधोऽथ तेजसि। द्विधाथ वायौ वियति प्रतिष्ठितो भवान्हरिश्शब्दचरः पुमानसि। भवान् शशिः सूर्यहुताशनोऽसि त्वयि प्रलीनं जगदेकउच्यते। भवान्प्रतिष्ठंरमतेजगद्यतस्ततोऽसि रामेति जगत्प्रतिष्ठितः। भवार्णवे दुःखतरोर्मिसंकुले तथा च मीनग्रहनक्रभीषणे। न मज्जति त्वत्स्मरणप्लवोनरः स्मृतोऽसि ज्ञातोऽसि मया तपोवने। वेदेषु नष्टेषु भवाँस्तथा हरे करोषि मत्स्यं वपुरात्मनस्सदा। युगक्षये रञ्जितसर्वदिङ्मुखो भवाँस्तथाग्निर्बहुरूपधृग्विभो। कौर्मं तथा स्वं वपुरास्थितस्सदा युगेयुगे माधव सिन्धुमन्थने। भवान्यदस्तीति भवान्समं क्वचिज्जनार्दनाद्यत्सबभूव चोत्तमम्। त्वया ततं विश्वमिदं महात्मन् स्वकाखिलान्वेददिशश्च सर्वाः। कथं त्वयाद्यं परमं तु धाम विहाय चान्यं शरणं व्रजामि। भवानेकःपूर्वमासीत्ततश्च महानहंसलिलंवह्निरुच्चैः। वायुस्तथा खं च मनोऽपि बुद्धिस्त्वत्तो गुणास्तत्प्रभवं च सर्वम्। त्वया ततं विश्वमिदं समस्तं सनातनस्त्वं पुरुषोमतो मे। समस्तविश्वेश्वर विश्वमूर्ते सहस्रबाहो जय देवदेव। नमोऽस्तु रामाय महानुभाव इति स्तुतो देववरः प्रसन्नः॥ इति) वाराहजी कहते हैं, हे धरणि! इस प्रकार राजा दुर्जय की स्तुति सुनि श्रीरामचन्द्र प्रसन्न हो दुर्जय के आगे प्रत्यक्ष हो सुप्रतीक जो राजाका पिता है तिसको आगेकर बोले हे दुर्जय! हम प्रसन्नहैं जो

इच्छा हो सो वर मांगो यह देखि अतिहर्ष से राजा श्रीरामचन्द्र को साष्टाङ्ग प्रणामकर हाथ जोड़ बोला हे भगवन्! यदि आप मेरे को वरदिया चाहते हो तो मैं आपके इसी कल्याण करनेहारी मूर्ति में लयहों यह राजाकी दुर्लभ प्रार्थना सुनि प्रसन्न हो श्रीरामचन्द्रने निजमूर्ति में लीन करलिया वाराहजी कहते हैं हे धरणि! यह मनोहर कथा पुराणकी हमनें वर्णन किया कोई पुरुष कई जन्मों में समुद्र की रेणु वा आकाश के तारे चाहे गिनि ले परन्तु नारायण के जो अनन्तरूप हैं उसके गुणों की गणना करबे में कौन समर्थ है इस लिये कपट छोड़ शुद्धहृदय हो जो नारायण को भजते हैं वह इसी प्रकार कल्याण को प्राप्त होते हैं जैसे राजा दुर्जय और हे धरणि! जो पुरुष इस पवित्रकथा को सुने अथवा पढ़े वह अहोभागी हो इस लोक में नानासुख भोगि अन्तमें परमेश्वरके परमधाम को सिधारे अब क्या सुना चाहती हो सो वर्णनकरें॥

तेरहवां अध्याय॥

वाराहजी का वचन सुन धरणी कहती है हे स्वामिन्! यह कथा सुनके परम आश्चर्य भया कि मणि से नानाविध राज भोग औ वीरों की उत्पत्ति सुनी अब आप यह वर्णन करें कि गौरमुखमुनि कौन हैं जिनके तपोव्रत से श्रीनारायण ने प्रथम प्रसन्नहो मणिदिया फिर सहायकर राजाकी सेना को मारा यह वर्णन कीजिये तब वराहजी बोले हे धरणि! जब नारायणजीनें निमिषमात्र में सेनाको नाश किया यह गौरमुनि देख आनन्दमग्नहो प्रभासनामक जो क्षेत्र है वहां जाय श्रीभगवान्‌जी का आराधन करनेलगा इस गौरमुख के तपको देखि श्रीमार्कण्डेय जी जो चिरंजीवि योगीराजहैं सो वहां आतेभये दूरसे मार्कण्डेय जी को आते देखि गौरमुख अतिहर्ष से अर्घ पाद्य से ऋषिका

आदर करके आसन दे पूजनपूर्वक कुशल वार्त्ता पूछ हाथजोड़ यह पूछते भये हे मुनिसिंह! हम आपके दर्शन से आज अहो-भागी भये सो आप कृपा करके हमको शिक्षा दें जिससे हमारा कल्याण होय आप ज्ञानतपवयोवृद्ध हैं यह गौरमुख की वाणी सुन मार्कण्डेयजी बोले हे गौरमुख! सबके आदि नारायण जगद्गुरु हैं जिनसे ब्रह्माकी उत्पत्ति है ब्रह्माजी ने सात मुनियों को उत्पन्न किया फिरि मुनियों से बोले कि तुम सब हमको पूजो यह कह निजपूजा प्रथमही ब्रह्माजी ने करी यह भी देख जब मुनियों ने ब्रह्माजी की पूजा न करी तब ब्रह्माजी ने शाप दिया कि तुम्हारा ज्ञान भ्रष्टहो जब वंशको उत्पन्नकरोगे तब तुमको स्वर्ग होगा यह कहि ब्रह्माजी अन्तर्द्धान भये ऋषिलोग ब्रह्माजी का कठोर शाप सुनके विचारकरि कुलीन ब्राह्मणों की कन्या स्वी-कारकर वंशोत्पन्न करके ब्रह्माजी के शाप से छूटकर स्वर्ग को प्राप्तभये इस प्रकार ऋषियों के स्वर्गवास होने के बाद तिनके जो पुत्र हैं सो श्राद्ध तर्पण आदि सत्कर्म निज २ पितरों की तृप्ति के निमित्त करनेलगे उस समय से पितृयज्ञ प्रवृत्त भया इतनी कथा सुनि गौरमुखऋषि मार्कण्डेयजी से पूछते हैं हे योगीश्वर! वे पितर कौन हैं औ उन्होंका क्या नामहै व किस लोक में निवास करते हैं सो आप वर्णनकरें यह गौरमुखजी का प्रश्न सुन प्रसन्नहो मुनि कहनेलगे हे ऋषे! सुनो जिनका पितर नाम है वे देवताओं के सोमवर्द्धन करनेहारे मरीच्यादि ऋषि हैं इन ऋषियों की संख्या सात है तिनमें चार मूर्तिमान् हैं औ तीनि अमूर्ति हैं तिनके रहने का लोक व तिनकी सृष्टि हम कहते हैं संतानकनाम जो लोक अतिप्रकाशवान् है वहां देवताओं के पितर निवास करते हैं इन पितरों का यही लोक सनातन से है इसीसे ब्रह्मवादी जो हैं सो पुण्यसमयों में तर्पण पिण्डदान दे निज २ पितरों को तृप्तकर आशीर्वाद लेते हैं मार्कण्डेयजी

कहते हैं हे गौरमुखजी! पृथ्वी के रहनेवालोंके पूज्य स्वर्गवासी हैं औ स्वर्गवासियों के पूज्य ब्रह्मपुत्र मरीचि आदिक हैं मरीच्यादिकों के पूज्य सनकादिक हैं सनकादिकों के पूज्य अग्निष्वात्तादि वैराजगण हैं व वशिष्ठादिकों के पूज्य पितरों की सुकालेयगण संज्ञा है ये पितर इन ऋषियोंके गोत्र में जो वर्णत्रय अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य हैं उन करके पूज्य हैं शूद्रों करके यमादिक पूज्य हैं और पितरों को पिण्डदान औ तर्पण देनेसे देनेवालों के जो पितृ पितामहादि पितृकुल मातृकुल हैं उनको पितृलोक प्राप्त होता है वस्वादिकों के पूज्य कश्यपादि हैं व कश्यपादिकों के पूज्य इन्द्रादि हैं हे गौरमुखजी! यह पितृसर्ग हमने वर्णन किया अब सावधान हो श्राद्ध का काल कहते हैं सो सुनो श्राद्ध के योग्य जो ब्राह्मण मिले तो व्यतीपात में व सूर्य जिस दिन उत्तरायण व दक्षिणायन होयँ व विषुव संक्रान्ति में अर्थात् तुला औ मेष के सूर्य में व सूर्यचन्द्रग्रहण में अथवा सब संक्रान्तियों में व जिस नक्षत्र में ग्रह युद्ध होय अथवा दुस्स्वप्न में वा नवीन अन्नके उत्पन्न समय में श्राद्धकाल होता है और जिस अमावास्या में अनुराधा, विशाखा, स्वाती इन नक्षत्रों का योग हो उसमें अवश्य श्राद्ध करना योग्य है इन समयों में श्राद्ध करने से पितर आठ वर्ष की तृप्ति पाते हैं व जब अमावास्या को पुष्य वा आर्द्रा वा पुनर्वसु होय तिसमें पिण्डदानसे पितरों की बारह वर्षकी तृप्ति होती है और यदि अमावास्या में धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा अथवा शतभिषा का योग हो तो पितरों को अनन्ततृप्ति होती है ये काल पितरोंके यज्ञार्थ देवताओं को दुर्लभ हैं इस लिये इन नवो नक्षत्रों में अवश्य श्राद्ध करना चाहिये पितरों की तृप्ति व निजवंशकी वृद्धि चाहे इन समयों में पिण्डदान करने से पुण्य की संख्या नहीं हो सकती असंख्य पुण्य का काल है हे गौरमुखजी! अब और भी

पितरों के तृप्ति होनेका काल कहतेहैं सो सुनो इन समयों का श्रद्धारहस्य नाम है वैशाखमास की शुक्ल तृतीया व भाद्र व कार्त्तिक की शुक्लनवमी, श्रावणी, कृष्णा त्रयोदशी, माघीपूर्णिमा व चन्द्रसूर्यग्रहण व चार अष्टका इन समयों में जो तिल मिला हुआ जल मात्र पितरोंको देते हैं उनके पितरों को अनन्तकाल की तृप्ति होती है और यदि पिण्डदान बने तो उस पुण्य व पितरों के तृप्तिकाल का प्रमाण नहीं होसक्ता हे गौरमुखजी! माघमासकी अमावास्याको यदि श्रवणनक्षत्र होय तो अत्यन्त पुण्यकाल पितरों का है बड़े पुण्य से ये काल मिलते हैं और माघ की अमावास्या को जो धनिष्ठा हो उस दिन जल अन्न जो पुत्र पौत्रादि पितरों को देते हैं तो दशहज़ार वर्ष की तृप्ति पितर पाते हैं व तिसी अमावास्या को यदि पूर्वाभाद्रपद हो तौ पिण्डदान तर्पण करने से एक युग की तृप्ति पितर पाते हैं और इन्हीं पूर्वोक्त समयों में जो श्रीगङ्गामें वा शतद्रूनाम नदी में वा विपाशा में वा सरस्वती में नैमिषारण्य में गोमतीमें जाय तर्पण व पिण्डदान करते हैं उनके पितर अनेक दुःखों से छूटि पितृलोक में निवास पाते हैं व प्रसन्न होके निज पुत्र पौत्र जो पिण्डदान करनेवाले हैं उनको अनेकाशीर्वाद देते हैं व हे गौरमुख जी! आश्विनमास की कृष्णात्रयोदशी को यदि मघा नक्षत्र हो तो उसको देखि पितर नृत्य करते हैं कि इस समय हमारे गोत्र में कोई भाग्यवान् हो जो हमको तिलसहित जल से तर्पण करे व पिण्डदानकरे तौ उसकी बुद्धि की वृद्धि हो औ चित्त शुद्ध हो धन की वृद्धि हो यशोभागी हो वंशकी वृद्धि हो और परमेश्वर में भक्ति हो यह पितर परस्पर पुण्यसमय देखि कहते हैं इस लिये मनुष्यों को उचितहै कि अपने अनेक तरह कल्याण के हेतु पुण्यकाल में निज २ पितरों के निमित्त तर्पण अवश्य करना चाहिये मार्कण्डेयजी कहतेहैं हे गौरमुखजी! पितर निज२

वंश जिस दिशामें बसते हैं उस तरफ़ मुख करके बारम्बार यह कहते हैं कि कोई सुपुत्र हमारे वंश में हो जो हमको वित्तशाठ्य अर्थात् धन की कृपणता छोड़ इन समयों में पिण्डदान करके हमारे निमित्त नाना प्रकार के रत्न तथा वस्त्र यान अर्थात् हाथी घोड़े पालकी इत्यादि नाना प्रकार के जलपात्र भोजनके पात्र जो यथासामर्थ्य देवे तिनको कोई प्रकार की हानि न हो यदि ये पदार्थ देने में असमर्थ होवें तो अन्नमात्र का पिण्डदे तथा यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन दे ऐसा भी न करसके तो भक्ति से कन्द मूल आदि जो आप आहार करें उसी का पिण्डदान करें तब हमारी अनन्ततृप्ति होती है और श्राद्ध में ब्राह्मण को भोजन कराय किंचित् दक्षिणा भी देना योग्यहै विना दक्षिणाके श्राद्ध निष्फल होता है येभी न करसके बहुत निष्किञ्चन हो व श्राद्ध काल आवे उस समय कालेतिल लेके किसी सुपात्र ब्राह्मण के हाथ में हमारा स्मरण करके देदेय तब भी हम तृप्त होते हैं मार्कण्डेयजी कहते हैं हे गौरमुखजी! पितर निजमुख से कहते हैं यदि कुछ भी न करसके तो श्राद्ध समय में वन में जाय वा नदी के किनारे खड़ा हो सूर्य की तरफ़ देख दोनों हाथ जोड़के ऊंचे स्वर से यह पढ़ै (अथ मन्त्रः॥ ॐन मेऽस्ति वित्तं न धनं न धान्यं श्राद्धस्य योग्यं स्वपितॄन्नतोस्मि। तृप्यन्तु भक्त्या पितरो मयैतौ भुजौ ततौ वर्त्मनि मारुतस्य) यह मन्त्र पढ़ पितरों का स्मरण करके जो कुछ आहार मिले सो करे निराहार न रहे श्राद्धके दिन हे गौरमुखजी! इस प्रकार जो पुण्य दिनोंमें श्राद्ध करते हैं वे पितरों की कृपा से पुत्र पौत्र धन धान्य शरीरारोग्य और यश करके युक्त होते हैं॥

चौदहवां अध्याय॥

मार्कण्डेयजी कहते हैं हे गौरमुखजी! यह श्राद्धरहस्य हम

को सनन्दन ऋषि ने उपदेश किया है अब श्राद्ध के जो अधि-कारी व अनधिकारी हैं उनको हम कहते हैं सुनो। श्राद्ध में भगिनी का पुत्र वा कन्या का पुत्र वा श्वशुर वा जामाता और मामा ये योग्य हैं अथवा तपस्वी ब्राह्मण पञ्चाग्निसेवन करने-वाला अथवा शिष्य वा सम्बन्धी इन्हींको योग्य देखि श्राद्ध में बुलावे और अयोग्य को श्राद्ध में नहीं बुलावे अयोग्य वह पु-रुषहै जो मित्रद्रोही, कुनखी, काले दांतवाले ब्राह्मण विना और जाति कन्या के साथ जिसे कलङ्क हुआ हो ग्रामदाह करनेवाले सोम बेचनेहारे निर्लज्ज चोर पिशुन अर्थात् परायेपर मिथ्या अपराध देनेवाले ग्रामयाचक जो अन्न ले नौकरी करके निर्वाह करतेहैं जो विद्या को पढ़ाकर जीविका रखते हैं सूतकान्न खाने वाले जिनके माता पिताका ठिकाना नहीं है वे और माता पिताके दुःख देनेवाले व शूद्रीपति व व्रत करनेवाले तथा देवताकी पूजा करनेवाले इन ब्राह्मणों का श्राद्ध में अधिकार नहीं है इन्हों को निमन्त्रण देनेसे श्राद्ध भ्रष्ट होजाता है इस प्रकार विचारके पि-तरों के निमित्त श्राद्ध के प्रथम दिन ब्राह्मण का निमन्त्रण करे विषम ब्राह्मण देवताओं को सम निमन्त्रण करे श्राद्ध के दिन श्रद्धा से बुलाय भोजन कराय दक्षिणा दे विदा करे तिन ब्राह्मणों में कुछ ब्राह्मणों को आसन पर बैठाय दो भाग करे एक भाग पितरों का दूसरा भाग देवताओं का कर श्राद्ध में भोजन दे और पिता पितामह प्रपितामह इसी प्रकार मातामह प्रमातामह वृद्ध-प्रमातामह और इनकी स्त्रियोंको भी पिण्ड देवे पूर्वमुख ब्राह्मणों को भोजन दे अथवा उत्तरमुख भोजन करावे वा कोई ऋषि कहतेहैं कि देवब्राह्मण पूर्वमुख और पितृब्राह्मण उदङ्मुख भो-जन देना चाहिये और श्राद्ध चाहे पितृपक्ष व मातृपक्ष एकही में करे अथवा जुदे जुदे करे और पिण्डके आसन में कुशादेना चाहिये व अर्घ के विधान से अर्घ दे आवाहन कर देवताओं

को अर्घ देकर चन्दन, धूप, दीप से पूजनकर हाथजोड़ ध्यान करे और पितरों को अपसव्य देवताओं को सव्य सब पूजन करना चाहिये (सव्य वामभाग के यज्ञोपवीत को कहते हैं) (अपसव्य दक्षिणभाग के यज्ञोपवीत को) औ आज्ञा लेके कुश के दो भाग करे सव्य से देवावाहन अपसव्य से पितरों को अर्घादि दे और उससमय में जो अतिथि आजाय तो ब्राह्मणों की आज्ञा ले यथोचित सत्कारकर भोजन दे अतिथि उस कहते हैं जो आकस्मिक आवे व जिसके तिथिका नियम नहीं मार्कण्डेयजी कहते हैं हे गौरमुखजी! योगीश्वर महात्मा अनेक रूप धरके ज्ञान से परिपूर्ण श्राद्ध के संपन्न करनेको गृहस्थों के घर में आते हैं उनके पूजन से श्राद्ध साङ्ग होता है और निरादर से निष्फल होता है इसलिये अवश्य पूजना चाहिये इस प्रकार ब्राह्मणों को आगे भोजन दे तिनकी आज्ञा होम करनेकी ले होम करे यह होम उस अन्न से होना चाहिये जिसमें लवण न होय व कटु तीक्ष्ण पदार्थ न होयँ केवल परमान्नहो इस प्रकार ब्राह्मणों की आज्ञा ले पितरों का ध्यानकर अग्नि को पवित्र काष्ठ से प्रज्वलित कर आहुति दे (अथ मन्त्राः) ॐ अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा इससे प्रथम आहुति फिरि ॐ सोमाय पितृमते स्वाहा। इससे दूसरी आहुति फिरि ॐ वैवस्वताय स्वाहा इस मन्त्र से तीसरी आहुति दे जो किंचित् शेष रहे सो ब्राह्मणों के पात्र में छोड़ दे और ब्राह्मणों को नानारसों करके युक्त व्यञ्जन दे भोजनकी आज्ञा दे यह वाक्य बोले (भो ब्राह्मणाअमृतमिच्छातो जुषध्वम्) यह मधुर वाणी से ब्राह्मणों को भोजन की आज्ञा देकर यह भी कहे हे ब्राह्मणो! मौन से प्रसन्नपूर्वक धीरे २ भोजन कीजिये व जब ब्राह्मण भोजन करने लगें तब इन रक्षोघ्न मन्त्रों को पढ़ि भूमिमें तिल बिखेरे औ पितरोंका ध्यानकरे और भोजन करतेहुये ब्राह्मणों को पितररूप चिन्तन करे (मन्त्राश्च ॥ पिता

पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः । मम तृप्तिं प्रयान्त्वद्य होमाप्यायितमूर्तयः । पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः । मम तृप्तिं प्रयान्त्वद्य विप्रदेहेषु संस्थिताः । पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः । तृप्तिं प्रयान्तु मे भक्त्या यन्मयैतदुदाहृतम् । मातामहस्तृप्तिमुपैतु तस्य तथा पिता तृप्तिमुपैतु योन्यः । विश्वेऽथ देवाः परमां प्रयान्तु तृप्तिं प्रणश्यन्तु च यातुधानाः । यज्ञेश्वरो यज्ञसमस्तनेता भोक्ताऽव्ययात्मा हरिरीश्वरोत्र । तत्सन्निधानादपयान्तु सद्यो रक्षांस्यशेषाण्यसुराश्च सर्वे । इति) यह पढ़िके जब ब्राह्मण भोजन करि तृप्त हों किंचित् अन्न पृथ्वीपर बिखेरके ब्राह्मणों को मीठे ठंढे जलदे हाथ शुद्ध कराय तृप्तमान पितृतीर्थ से पिण्ड ले साथ जल के पिता इत्यादि के नाम से तथा मातामहादि के नाम से दक्षिण को अग्र है जिसका ऐसे कुश विष्टर पर पिण्डदान करे प्रथम निज पिता को दे पुनः पितामह को दे फिर वृद्धप्रपितामह को दे कुशमूल से हाथ को पोंछके पिण्ड के ऊपर लेपभागभुज को दे फिर मातामह को तथा प्रमातामह को तथा वृद्धप्रमातामह को पिण्ड दे पूर्ववत् कुशमूल से हाथ को पोंछि लेपभाग को दे स्नान, चन्दन, पुष्प, तुलसीदल, माला, धूप, दीप, नैवेद्य से प्रत्येक पिण्डों की पूजाकर पितरों का ध्यान करता हुआ ब्राह्मणोंसे स्वस्त्ययन तथा वैश्वदेव सूक्त सुनै तथा यह बोले कि हमारे पितर तृप्तहों विश्वेदेव तृप्तहों यह कह ब्राह्मणों को यथासामर्थ्य दक्षिणा दे उनसे आशीर्वाद ले प्रथम विश्वेदेव ब्राह्मणों को विसर्जन करे फिर पितृब्राह्मणों को पश्चात् मातामहादि ब्राह्मणों को विसर्जन करे । पीछे ब्राह्मणों के साथ निजद्वार तक जाय मीठी वाणी से प्रसन्नकर घर आय वैश्वदेव क्रियाकर और आश्रित आगन्तुकों को भोजन कराय आप कुटुम्ब के साथ भोजन करे इस प्रकार जो श्राद्ध पुण्य समय में करते हैं वे पुरुष पितरों के प्रसाद से धन धान्य संतान करके

मुक्त होते हैं व उनके पितर प्रसन्न होके संपूर्ण कामना सिद्ध करते हैं मार्कण्डेयजी कहते हैं हे गौरमुखजी ! श्राद्ध में तीन पदार्थ पवित्र हैं सो अवश्य चाहिये प्रथम दौहित्र अर्थात् कन्या-पुत्र दूसरा कुतप अर्थात् नैपालदेश का कम्बल औ तीसरा बन का तिल ये तीनों श्राद्धके पूर्ण करनेहारे हैं व श्राद्ध करनेवालेको क्रोध व रास्ते का चलना व श्राद्धके पूर्व भोजन ये तीनों वर्जित हैं और हे गौरमुखजी ! जो श्राद्ध को पर्वों में आलस व कृपणता छोड़के करते हैं उनकी सहित कुटुम्ब विश्वेदेव व पितर व माता-महादिक सदा रक्षा करते हैं व सर्व सुख देते हैं और हे गौर-मुखजी ! श्राद्ध करनेहारा पुरुष पितरों के आशीर्वाद से इस लोकमें संपूर्ण सुख भोगके अन्तमें स्वर्गवास पाता है वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! जो ऋषिगण हैं सो इन्हीं कर्मों से मोक्ष पाये हैं इसी से मार्कण्डेयजी कहते हैं हे गौरमुख ! तुमभी श्राद्धमें तत्पर हो हरिका ध्यान करि परम पदको प्राप्त हो जो हमसे तुम अपना कल्याण पूछते हो तो इसी मार्ग में तत्पर हो इससे परे कोई पदार्थ शुभ देनेहारा नहीं है ॥

पंद्रहवां अध्याय ॥

वाराहजीसे मार्कण्डेय औ गौरमुखके संवादमें श्राद्धविधि सुन के फिरि धरणी पूछती है हे भगवन् ! जब मार्कण्डेयजी श्राद्ध कहचुके फिर गौरमुखने क्या किया सो आप वर्णनकरें और गौर-मुख कौनहै पूर्वजन्ममें क्या पुण्य कियाहै जिस करके नारायण जीका ध्यान करतेही मणि पाया जिस मणि के प्रभावसे दुर्जय राजा की सेनाको जीता यह प्रश्न सुन वाराहजी कहते हैं हे ध-रणि ! यह गौरमुख पूर्वजन्म में भृगुऋषि के वंश का ऋषि है व ब्रह्माजी का शाप जो पूर्वही कहआये हैं सो ऋषियों पर रही इस लिये मार्कण्डेयजीने गौरमुख को उपदेश किया व गौरमुख इस

उपदेश को अङ्गीकारकरि बारहमास तक श्राद्धमें निरतहो पितरों को पिण्डदान तर्पणादि कर्मोंसे प्रसन्नकर उनसे बरदानले प्रभासक्षेत्र में तप करताहुआ नारायण जो अनादिदेव हैं तिन की स्तुति करताभया सो स्तुति सुनो (अथ स्तुतिः॥ गौरमुख उवाच। स्तोष्ये महेन्द्रं रिपुदर्पहं शिवं नारायणं ब्रह्मविदां वरिष्ठम्। आदित्यचन्द्राग्नियुगस्थमाद्यं पुरातनं दैत्यहरं तथा हरिम्। चकार मात्स्यं वपुरात्मनो यः पुरातनो वेदविनाशकाले। महामहीभृद्वपुरुग्रपुच्छच्छटाभवार्चिःसुरशत्रुहा यः। तथाहि मन्थानकृतोगिरीन्द्रं दधार यः कौर्मवपुः पुराणः। हितेच्छया यः पुरुषः पुराणः स पातु मां दैत्यहरः सुरेशः। महावराहस्सततं पृथिव्यातलातलं प्राविशद्यो महात्मा। यज्ञाङ्गसंज्ञस्सुरसिद्धिसंघैःस पातु मां दैत्यहरःपुराणः। नृसिंहरूपी च बभूव योऽसौ युगे युगे योगिवरोग्रभीमः। करालवक्त्रः कनकाग्रवर्चा स पातु देवो नरकान्तको माम्। बलेर्मखध्वंसकृदप्रमेयो योगात्मको योगवपुः स्ववेद्यः। स दण्डछत्राजिनलक्षणःपुनःक्षितिं य आक्रान्तवपुः पुनातु। त्रिस्सप्तकृत्वो जगतां जिगाय पुनर्ददौ कश्यपाय प्रचण्डः। स जामदग्न्योऽभिजनस्य गोप्ता हिरण्यगर्भा सुरहा प्रपातु। चतुःप्रकारं च वपुर्य आद्यो हैरण्यगर्भःप्रतिमानलक्ष्यम्। रामादिरूपैर्बहुरूपभेदैश्चचार सोऽस्मानसुरान्तकोऽव्यात्। चाणूर कंसासुरदर्पभीतेर्भीतामराणामभयाय देवः। युगे युगे वासुदेवो बभूव कल्पे भवेदद्भुतरूपकारी। युगे युगे कल्किनाम्ना महात्मा वर्णस्थितिं कर्तुमनेकरूपः। सनातनो ब्रह्ममयःपुरातनो न यस्य रूपं सुरसिद्धदैत्याः। पश्यन्ति विज्ञानगतिं विहाय ह्यतोयमेनापि समर्चयन्ति। मत्स्यादिरूपाणि चराणि सोऽव्यान्नमो नमस्ते पुरुषोत्तमाय। पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते नयस्व मां मुक्तिपदे नमस्ते॥ इति) इस प्रकार बारम्बार नमस्कार कर स्तुति जो कररहे हैं हे गौरमुखजी! तिन के संमुख चतुर्भुज शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये गरुड़पर सवार

प्रकटहो नारायणने दर्शनदिये यह नारायण का दर्शन पाय अतिहर्षसों ऋषिजी उसी नारायण के रूपमें लीन होगये ॥

सोलहवां अध्याय ॥

श्रीवाराहजीसे धरणी प्रश्न करतीहै हे भगवन्! दुर्जय राजा का पिता सुप्रतीक जब संतानार्थ ऋषि की सेवा को गया व उस की सेवासे प्रसन्न हो ऋषिने जब वर देने का विचार किया उसी समय इन्द्र देवगणों को लेके आया तब ऋषिने शाप दिया कि हे इन्द्र! तुम देवलोक से भ्रष्ट होके मनुष्यलोक में मनुष्यों की तुल्य रहो यह कहके राजा सुप्रतीक को वर दिया जिस वर से दुर्जयनाम पुत्र पाया सो आप पूर्वही कह आये हैं अब यह कहें कि दुर्वासाजीके शापसे इन्द्र देवलोकसे भ्रष्ट होकर पृथ्वी पर किस प्रकार कालक्षेप किया व दुर्जयराजा निज दिग्विजयमें विद्युत् सुविद्युत्नाम दैत्यों को देवताओं का राज्य दिया तब उन्हों ने किस प्रकार का राज्य किया सो आप वर्णन करें यह धरणी का वचन सुनि वाराहजी कहते हैं हे धरणि! यह कथा बड़ी अपूर्व है मन देके सुनो जिस समय सुप्रतीक का पुत्र दुर्जय स्वर्ग को युद्ध करने गया तो इन्द्र इसके प्रतापसे व्याकुल ह्वै भाजिके पृथ्वी में चलेआय भारतखण्ड भूमिमें श्रीकाशीनाम शिवक्षेत्र के पूर्वदिशा में निजगणों सहित निवासले कालक्षेप करनेलगे व राजा दुर्जय देवताओं को जीति वहां का राज्य विद्युत् सुविद्युत्को देदिया वह स्वर्ग का राज्य करनेलगे बहुतकाल बीतने पर देवताओंने जब दुर्जय की मृत्यु सुनी तब तो बड़े हर्षसे सब देवता इकट्ठेहो सेनाकी सामान ले हिमाचल पर्वतपर जाय युद्ध करने का विचार करनेलगे उस समय देवराज से बृहस्पतिजी बोले कि बहुत काल से तुम राज्य से भ्रष्टहो इस लिये प्रथम गोमेधनाम यज्ञ करो जिस पुण्य से स्वर्ग का अखण्डराज्य होय

सो यज्ञ बहुत शीघ्र करो देर करना योग्य नहीं है यह देवगुरु का वचन सुनि बोले कि; महाराज! हमने प्रथमही गौवों को चरनेके निमित्त वनमें छोड़दियाहै व उनकी रक्षा को सरमानाम कुतिया को करदियाहै व सरमाके साथ कुछ मरुतभी गुप्तमें हैं सो चरके गौ आवें तब यज्ञ कीजाय और जब गौ वनमें चरने को सरमा के साथ गईं तब उन गौवों को देखि शुक्रजी निजशिष्य दैत्यों से बोले हे दैत्यो! ये गौ देवताओं की चरने आई हैं इनकी र-क्षक सरमा है सो ऐसा करो कि किसी प्रकार गौवोंको शीघ्र चोरि लेव व सरमा को पकरिलेव नहीं तो जब गौ निज स्थान को जायँगी उसी समय देवता गोमेध करेंगे जब उनकी यज्ञ पूर्ण भई फिर तुम्हारा पराजय होगा इस लिये इस कार्य में देरी करना ठीक नहीं है यह शुक्र का वचन सुनि दैत्य वैसेही करते भये पीछे सरमा ने जब गौवों को न देखा तब खोजती २ आगे चली तो दैत्यों के साथ गौवें भगी चलीजाती हैं व दैत्योंने सरमा को देखि पकड़ लिया व बहुत विनयसे हाथ जोड़ बोले हे सरमे! इन गौवों का वृत्तान्त तुम इन्द्र से नहीं कहना हम गौवों का दूध तुमको पीने के लिये देंगे यह कह किसी पात्रमें गौका दुग्ध निचोड़ सरमा को देदिया सरमा ने बड़े हर्ष से तृप्त होकर दूध पीकर यह बोली हम नहीं कहेंगी तुम डरो मत परन्तु दूध हम को नित्य दिया करना जिस दिन दूध न दोगे तब हम कहिदेंगी यह सुनि दैत्यों ने स्वीकारकर सरमा को छोड़ दिया वहां दैत्यों से छूटिके सरमा कांपती चली इन्द्रके पास आई इन्द्र को प्रणाम कर बैठी और जो इन्द्र के किये हुये देवता गुप्त रक्षा के वास्ते सरमा के साथ रहे वो सब सरमा का अनर्थ देखि व देवताभी प्रकटहो इन्द्रको प्रणाम कर बैठे तब सरमा को देखि इन्द्रजी बोले कि हे सरमे! तू इकली क्यों आई गौवें कहां हैं यह सुन सरमा बोली कि हम नहीं जानतीं पर्वत में चरती २ गौवें कहां

गई तब इन्द्र जी ने कोप करके पूछा कि हे दुष्टे! यज्ञार्थ ये गौ हैं व इसी निमित्त तेरेको रक्षाकी आज्ञा दी तेरे विना जाने गौ कहां को गईं और तू कहां रही जो गौवों को नहीं जानती यह सरमासे कह मरुतोंसे पूछा कि तुम बताओ गौवें कहां हैं तब तो हाथ जोड़के मरुत सारा वृत्तान्त जो सरमा ने किया था सो कह सुनाया सब वृत्तान्त आदि से इन्द्रने सुनि व सरमा का अपराध देखि उठके सरमा को पादप्रहार से मारा व कहा हे मूढ़े! दूध तैंने पिया औ गौवों को दैत्योंको दे आई हमसे मिथ्या बोलती है कि हम नहीं जानतीं यह कह फिर पादप्रहार अति क्रोध करके मारा इन्द्रके पैर मारतेही सरमा के मुख से दूध गिरपड़ा यह चरित्र देख इन्द्रने देवताओं को आज्ञा दी कि शीघ्र दैत्योंको मारगौवें लावो इन्द्रकी आज्ञा पाय देवताओं के गण जाय दैत्यों को मारनेलगे दैत्य गौवों को छोड़ भाजिगये देवता गौवों को साथ ले इन्द्रको दिया इन्द्र गौवों को पाय गोमेधआदि यज्ञकर बृहस्पतिजी से आज्ञा ले देवताओं से कहा कि शीघ्र युद्धकी तैयारीकरो यह सुनतेही देवता कवचादि धारणकर निज २ शस्त्रों को ले संग्राम को चले वहां जाय इन्द्रने दैत्यों से घोर संग्राम कर जीति स्वर्ग का राज्य लेलिया दैत्य देवताओं से पराजित हो समुद्र में कुछ डूबे कुछ पाताल को चलेगये वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसप्रकार इन्द्रने फिर स्वर्ग का राज्य पाया और इस कथा को जो प्रीति से नित्य सुने सो गोमेधयज्ञ का फल पावे और जिसकी राज्य छूट गई होय सो इस कथा के श्रवण से निज राज्य पावे॥

सत्रहवां अध्याय॥

धरणी यह कथा वाराहजी के मुखारविन्द से सुनि फिर पूछती है हे भगवन्! गौरमुख मुनि को जो मणि श्रीनारायणजी

ने दिया उससे दुर्जयकी सेना जीतिवे को जो वीर उत्पन्न भये उन वीरों को नारायणजीने वर दिया कि तुम सत्ययुग में राजा होगे यह कथा आप प्रथम कहचुके हैं अब हम इन मणिज राजाओं की उत्पत्ति सुना चाहती हैं सो आप वर्णन करें यह धरणी का वचन सुनि वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! अब साव-धानहो मणिज वीरों की उत्पत्ति सुनो पूर्व सत्ययुगमें एक राजा बड़ा प्रतापी श्रुतबाहुनामक भया तिस राजा का पुत्र सुप्रभनाम मणिज वीर उत्पन्न भया जिसका श्रुतवाहु राजाने प्रजापाल ऐसा नाम रक्खा सो राजा प्रजापाल एक समय वनविहार करने की यात्रा की वनमें जाय क्या देखता है कि एक तपस्वी का आश्रम तपोमूर्ति ऋषियों करके शोभित होरहा है व वन की शोभा चारों तरफ़ कैसी होरही है कि नीप, कदम्ब, तमाल, अर्जुन, इंगुदी, बहेड़ा, नारकेल, पूग, खजूर, ताल, हिंताल, हिंगु आदि जो वन में अनेक वृक्ष हैं तिन वृक्षों में भांति २ के पुष्पों करके सुशोभित अनेक लता कैसी लिपटि रही हैं जैसे पतिव्रता स्त्री सम्पूर्ण शृंगारों करके भूषित एकान्त में निज प्राण-प्यारे पतिसों लिपटै और उन लताओं के पुष्पों पर भ्रमरों की पंक्तियां मत्त हुई २ गुञ्जार कररही हैं व तिन वृक्षों की शाखाओं पर पक्षियोंके जोड़ भांति २ के शब्द कररहे हैं व कहीं वृक्षों की सघन कुञ्जों में मृग, व्याघ्र, ऋक्ष, वाराह, सिंह, गैंड़ा, वराह, नीलगाय, हाथी, वृक, शृगाल आदि नानाविध जीव निज २ स्त्रियों के साथ परस्पर जातिविरोध छोड़ विहर रहे हैं यह आ-नन्द देखि देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर आदि निज २ कामिनियों के साथ शृङ्गाररस में डूबे उस वनकी मनोहर भूमि में अपने २ मनोरथ सफल कररहे हैं और कहीं वनमें होम होरहा है कहीं वेदपाठ होरहाहै यह वनकी शोभा देखते २ राजाने क्या देखा कि उस वनके मध्यमें अनेक तपस्वियों की मण्डली बैठी है उसके

मध्य में कुशासन के ऊपर पद्मासन किये ब्रह्मको चिन्तन करते भये परमधर्मात्मा जिनका नाम महातपाहै सो ऋषि विराजमान होरहे हैं तिन ऋषि को देख दूरसे दण्डवत्कर हाथ जोड़ राजा खड़ा होरहा महातपा ऋषि ने राजा को देख प्रसन्न हो सत्कार-पूर्वक आसन दे कुशल प्रश्न पूछा वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस प्रकार राजा प्रजापाल का सत्कार जब महातपा ऋषि ने किया तब राजा ऋषि के आदर को अङ्गीकारकर हाथ जोड़ नम्र हो यह पूछनेलगा कि हे स्वामिन्! जो मनुष्य अनेक दुष्कर्मों करके संसारसागर में डूबरहे हैं उनका कल्याण जिस प्रकार से हो सो आप वर्णन करें यह राजा प्रजापाल का वचन सुनि हर्ष हो महातपा ऋषि बोले हे राजन्! इस संसार से जो पारजाने का विचार करे सो पूजन, होम, दान, व्रत, तीर्थ आदि कर्मोंसे नारायण को प्रसन्नकर उनके चरणों की नौका बनाय सुखसे संसारसागर तरे और हे राजन्! जो मनुष्य भक्ति से नारायणके चरणकमलों का ध्यान करके प्रणाम करते हैं वे सुख से भवसागर पार होके श्रीविष्णु के परमपद को प्राप्त होते हैं यह महातपा ऋषि की वाणी सुनि राजा बोला हे भगवन्! आप कृपा करके यह वर्णन करें कि मोक्ष की वाञ्छावाले जो पुरुष हैं तिन्हों करके नारायणजी किस प्रकार सेवा करनेसे मोक्ष देते हैं यह राजा का प्रश्न सुनि ऋषि कहते हैं कि हे राजन्! तुम धन्य हो जिनकी ऐसी निर्मल बुद्धिहै आप सावधान होके श्रवणकरें जिस प्रकार विष्णुभगवान् सर्व योगीश्वर स्त्रियों पर तथा पुरुषों पर प्रसन्न होते हैं हे राजन्! संपूर्ण देवता ब्रह्मा से लेकर जो ब्रह्माण्ड में हैं सो सब नारायण से उत्पन्न हैं यह वेदवाक्य है अग्नि, अश्विनीकुमार, गौरी, गणेश, सर्प, स्वामिकार्त्तिक, सूर्य, मातृगण सहित दुर्गा, दिशा, कुबेर, विष्णु, यम, रुद्र, चन्द्र और पितर ये संपूर्ण देवता क्रम से नारायण की देहसे

उत्पन्न होके हे राजन्! न्यारे २ सब देवता निज २ मनमें गर्व करके परस्पर विवाद करने लगे कि हम योग्य हैं व हम पूज्य हैं इस परस्पर विवाद में बड़ा शब्द प्रलयसागरके समान हो तिनमें सब देवताओं के मध्य से उठके अग्नि बोले कि; सबसे हम ज्येष्ठ हैं हमारी पूजा करो विना हमारे सब शरीर निष्फल है जो हम न हों तो संसार नष्ट होजाय यह कह अग्नि शरीर से न्यारे होगये यह सुनि अश्विनीकुमार प्राण अपान वायुका रूप धारके बोले कि हमारे विना सब जगत् शून्य है इसलिये हमीं प्रधान हैं यह कहके शरीर छोड़ न्यारे होगये यह सुनि गौरीजी बोलीं कि सब में प्रधान हम हैं हमारे विना शरीर नहीं रहसकता यह कहि शरीर छोड़ अलग होगईं तिन विना वचन शक्ति न रही फिर आकाशरूप गणेशजी बोले कि मेरे विना शरीर निष्फल है तीनि काल में नहीं रहसकता यह कहि शरीर से गणेशजी न्यारे भये फिर सर्प बोले कि शरीर के स्वामी हम हैं छिद्रों में बैठ वायुपान करते हैं तो शरीर सुखी रहताहै यह कहि सर्प भी न्यारे भये यह देखि स्कन्दजी बोले कि शरीरके स्वामी अहंकाररूप हम हैं हमारे विना शरीर नहीं रहसकता यह कह शरीर से न्यारे होगये तिन विना देह मूक होगई तब कोपकरके सूर्यजी बोले मेरे विना यह शरीर क्षणमात्रभी नहीं रहसकता यह कहि निज प्रकाश को लेके जुदे होगये तब तो शरीर निस्तेज होगया फिर कोपकरके मातृगणों को साथ ले दुर्गा बोलीं कि मेरे विना यह शरीर नहीं रहेगा यह कहि निज शक्ति हरके न्यारी होगईं तब दिशा क्रोध करके बोलीं कि हमारे विना किसप्रकार शरीर रहसकताहै अवकाश दाता शब्दोंकी हम हैं यह कहि शब्दोंको ले शरीर से न्यारी होगईं तब तो क्रोध करके कुबेरजी बोले कि वायु अंश हमहैं हमारे विना यह शरीर नहीं रहसकता यह कहि निज अंश लेके अन्तर्द्धान भये तब विष्णुजी बोले कि, हमारे विना यह

शरीर नहीं रहसकता यह कहि निज अंश ले विष्णु अन्तर्धान भये तब धर्मजी बोले यह शरीर हमारे पालन से टिका है हमारे विना न रहेगा यह कहि धर्म निज धर्मांश ले अन्तर्धान भये यह देख पितर बोले कि, इस शरीर के राखनेहारे हम हैं हमारे विना नहीं रहसकता यह कहि निज अंश ले पितर अन्तर्धान भये तबहूं शरीर ज्यों का त्यों रहा फिरि इसी प्रकार सोमजी कहिके जुदे भये फिर शरीर अग्नि व प्राणापान वायु व आकाश व बुद्धि व धातु, अहंकार, सूर्य, काम, दिशा, वायु, विष्णु, धर्म, शंभु, पितर और चन्द्रमा इन देवताओं के क्रम से जुदे होने से भी चैतन्य के साथ चलता फिरता अनेक चेष्टा करता रहा शरीर में कोई विघ्न जब अग्नि आदि देवताओं ने न देखा तबतो निज २ अहंकार छोड़ अपने को अनीश मानि क्षेत्रज्ञ पुरुष की स्तुति लज्जित होके निज २ स्थानों में बैठि करनेलगे हे भगवन्! आपही अग्नि हैं तथा प्राणापान व सरस्वती व आकाश व नानाविध धातु ये सब आपही हैं और सूर्य, पृथिवी, दिशा, वायु, विष्णु, धर्म, शंभु, पितर, चन्द्रमा सब आपही हैं आप परमेश्वर हैं बड़ी कृपा भई जो हमारा अज्ञान निवृत्त भया देखो हे भगवन्! मोह से हम सब अपने मन में निज २ को ईश्वर मान शरीर त्याग दिया तथापि आपकी सत्यता से और न त्यागने से शरीर का कुछ व्यतिक्रम अर्थात् विकार नहीं हुआ सो इस शरीर के पालन करनेहारे तुम्हीं हो हम सब तो केवल निमित्तमात्र आप के सिर्जे हैं यह सब देवताओं की विनययुक्त वाणी सुनि क्षेत्रज्ञ नारायण हँसके बोले कि हे देवताओ! डरो मत यह सब हमारी इच्छा से भया है हम तुम सबको क्रीड़ा के निमित्त उत्पन्न किया है तुम्हारी नानाविध जो चेष्टा है सोई हमारी क्रीड़ा है इतना कहि अग्नि से नारायण बोले कि; हे अग्ने! तुम दो रूप होके संसार के कार्य करो एक रूप तो मूर्तिमान्

होके देवलोक में निवास करो व दूसरे व्यापकरूप से लोक में वर्तमान रहो और स्वरूप के भेद से तुम्हारी मूर्ति के अनेक नाम होंगे जिसका लोकमें अग्नि वैश्वानर वीतिहोत्र आदि कहे जायँगे और अश्विनीकुमार प्राणापान वायु नाम से व गौरीजी हिमाचल की कन्या के अनेक नाम रूप होंगे व पृथिवी आदि जो गुण हैं तिनके रूप गणेश होवेंगे व शरीर के नानाविध जो धातु हैं व पञ्चमहाभूत अहंकार इन्हों का रूप कार्त्तिकेयजी होंगे व माया नाम जो पदार्थ है जिसकी प्रेरणा से संसार का अनेक व्यवहार चले है सो दुर्गा होगी व दश जो दिशा हैं इन्हों की दश कन्या होंगी व वरुणजी से सम्बन्ध करेंगी और ये जो वायु व कुबेर हैं सो संसार के कारण होंगे और जो विष्णु हैं सो मनरूप होके प्रति शरीर में वास करेंगे और धर्म जो है सो यम का रूप होके शुभाशुभ कर्म साक्षी होके रहे और महादेवजी जो हैं सो महत्तत्त्व होके संसार में टिकें और जो पितर हैं सो इन्द्रियों के प्रवृत्ति होके लोकमें निवास करें और जो सोम हैं सो नारायणांश हैं जिनसे सब देवता प्रसन्न रहें ये अमृतमय ओषधी पतिलोक के आह्लादक होंगे व हे देवताओ! प्रमाद छोड़ निज२ स्थान में निवास करो इतना कहि नारायण अन्तर्धान भये महातपा ऋषि कहते हैं हे राजन्! श्रीनारायण का यह प्रताप हमने वर्णन किया अब क्या सुना चाहते हो॥

अठारहवां अध्याय॥

प्रजापाल राजा ऋषिजीसे प्रश्न करते हैं हे महातपाजी! किस प्रकार से अग्नि, अश्विनीकुमार, गौरी, गणेश, नाग, स्वामिकार्त्तिक, सूर्य, मातृगण, दुर्गा, दिशा, कुबेर, विष्णु, शिव, चन्द्र और पितर ये सब देवता देह में निवास करते हैं व रूपवान् किस प्रकार से हैं व क्या क्या पदार्थ इन्होंका भोजनहै व किस

तिथिके कौन स्वामी हैं कि जिस तिथिमें पूजा करनेसे ये अभीष्ट फल देते हैं यह आप वर्णन करें यह राजा का प्रश्न सुनि महातपाऋषि कहतेहैं हे राजन्, प्रजापाल! जो आपने पूछाहै सो अतिगुप्त है व कल्याण देनेहारा है तथापि तुम प्रीतिमान् हो इस लिये कहते हैं सो सुनो जो नारायण योगमार्ग से जाना जाता है उसने अपने को अकेला देखि क्रीड़ा करने के विचार से अनेक होने की इच्छा की तब क्रोध उत्पन्न होताभया उस क्रोधसे महाज्वाला कराल अति भयंकर घोर शब्द करताहुआ अग्नि उत्पन्न हुआ उस अग्नि से नारायण की प्रेरणा से वायु उत्पन्न भया उस वायु से आकाश होता भया और अग्निसे जल होता भया सो जल को अग्नि ने निज तेज से सोखके आकाश में वायु के साथ लीन होकर सब मिलके एक पिण्ड होगया वो पिण्ड कठिन होने से पृथिवी कहाया इस हेतु पृथिवी में जल, अग्नि, वायु, आकाश इन चारों का अंश है व इसी पृथिवी से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति है व उस ब्रह्माण्ड में नारायण ने निज अंशों से क्रीड़ा के निमित्त निवास किया जिनकी चार मूर्ति हैं व चार भुजा हैं सो नारायण निज प्रजापतिरूप से सृष्टि रचने की इच्छा की तब प्रचण्ड क्रोध उत्पन्न भया सो क्रोध अग्नि ज्वाला होके ब्रह्माजी को भस्म करनेलगा तब ब्रह्माजी उस क्रोधाग्निसे बोले कि,तुम हव्य कव्यको ग्रहण करो इसीसे अग्निका हव्यवाह नाम भया तब वह क्रोधाग्नि मूर्तिमान् होके ब्रह्माजी से बोला कि; हे भगवन्! हम क्षुधासे पीड़ित होरहे हैं सो क्षुधा शान्ति होने की आज्ञा दीजिये तब ब्रह्माजी अग्निसे बोले कि तुम्हारी क्षुधा तीन प्रकारसे शान्त होगी प्रथम तौ देवयज्ञ होने के अनन्तर जब ब्राह्मण दक्षिणा पावेंगे तब तुम्हारी क्षुधाशान्ति होगी औ तुम्हारा दक्षिणाग्नि नाम होगा दूसरे हे अग्ने! जो मन्त्र से विधिपूर्वक तुम्हारे में आहुति देंगे तब तुम्हारी तृप्ति

होगी व हव्यवाह नाम से पुकारे जावोगे हे अग्ने ! शरीरसंज्ञा गृहकी है तिसमें निवास करके नित्यकर्म सफल करोगे इसलिये तुम्हारा गार्हपत्य नाम होगा और भी तुम्हारे कई नाम होंगे कि जो तुम विश्व के मनुष्यों को आहुति देनेसे सद्गति देवोगे इस लिये वैश्वानर करके तुम लोक में विख्यात होगे और द्रविण संज्ञा धन की है सो देनेसे तुम्हारा द्रविणद नाम होगा और तुम्हारे दर्शन व सेवन जो करेंगे उनका पाप निवृत्त होने से सुतेजा नाम होगा ब्रह्माजी कहते हैं हे अग्ने ! तुम्हारे तेज को देखि अन्धकार निवृत्त होने से तेजोवर्त्मा नाम होगा व तुमको मनुष्य व देवता सब निज २ कल्याणार्थ सेवन करेंगे इस लिये कल्याणवर्त्मा नाम होगा और तुम्हारे मुख से देवता व पितर संतुष्ट होके जगत् का कल्याण करेंगे ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

महातपा ऋषि कहतेहैं हे राजन्,प्रजापाल ! यह नारायणकी विभूतियों का हमने प्रसंग करके वर्णन किया अब तिथियों का माहात्म्य क्रम से कहते हैं सोसुनो इस प्रकार अग्नि ब्रह्माजी से वर पायके यह कहनेलगे हे प्रभो ! हमको कोई तिथि दो जिसमें हम निवास करके लोकमें ख्याति पावें यह अग्निका वचन सुनि ब्रह्माजी कहनेलगे हे पुत्र ! तुम देवता, यक्ष, गन्धर्व सबोंसे प्रथम उत्पन्नहो व सब सृष्टि तुम्हारे पीछेसे भई इसलिये तुम प्रतिपदा के स्वामी होगे हे अग्ने ! इस प्रतिपदा में जो व्रत करके देवताओंके निमित्त वा पितरों के निमित्त होम करेंगे उनके पितर व देवता प्रसन्न होके सब अभीष्ट पूर्ण करेंगे और जो प्रतिपदा को निष्काम तुम्हारी सेवा करेंगे उनसों संसार के चारविध जीव अर्थात् जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज ये सब जीव प्रसन्न होंगे व हे पुत्र ! प्रतिपदा को क्षीर आहार करके वा कन्दमूल

फल सेवन करके जो व्रत करेंगे सो छत्तीस चौयुगी तक स्वर्ग-लोक में वास पावेंगे व इस लोकमें सब दुःखों से छूट धन धान्य संतान करके युक्त दीर्घायुर्बल पावेंगे यह ब्रह्माजी का वरदान सुनि अग्नि प्रसन्न हो ब्रह्माजी के बताये स्थान में जाय निवास करते भये वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस कथा को जो पुरुष वा स्त्री प्रातःकाल उठके सुने वह सब पापों से छूटि सुख संपत्ति को भोगि अन्त में स्वर्गवास पावे॥

बीसवां अध्याय॥

इतनी कथा को सुनि राजा प्रजापाल पूछते हैं कि हे ऋषिजी! इस प्रकार अग्नि का जन्म ब्रह्माजी से व वरदान सब आपने कथन किया अब कृपा करके आप यह कहें कि प्राणापान अश्विनी-कुमार किसप्रकार से भये यह राजा का प्रश्न सुनि महातपा ऋषि कहनेलगे हे राजन्! ब्रह्माजी के मरीचि आदि चौदह पुत्र भये तिन्हों में सबसे बड़े सर्वगुणसम्पन्न मरीचि के कश्यपनाम पुत्र भये तिन कश्यप से देवता संपूर्ण भये व बारह सूर्य भी भये तिन में आदित्यनाम पुत्र को त्वष्टा ने संज्ञानाम निजकन्या दी तिस कन्या से दो संतान उत्पन्न भये प्रथम यमनाम पुत्र व यमुना नाम कन्या इन दोनों को उत्पन्न करके सूर्य के तेजको न सँभार-सकी तो अपनी छाया को निज स्थान में रखके घोड़ी का रूप धार उत्तर कुरुको तप करने चलीगई हे राजन्! संज्ञा चलेजाने बाद सूर्यजी ने उस छायाको संज्ञा मानि दो संतान फिर उत्पन्न किया एक शनैश्चर नामक पुत्र व तपती नाम कन्या जब छाया निज पुत्रों से व संज्ञा के पुत्रों में भेद देखनेलगी तब सूर्यजी ने यह जानि शिक्षा दिया कि हे कल्याणि! ये चारों संतान तेरेही हैं कम ज्यादा क्यों इनको मानती है यह करना तेरेको योग्य नहीं है जैसे ये पुत्र कन्या अर्थात् शनैश्चर व तपती वैसेही यम

व यमुना इन्हींको तुल्य पालन करना उचित है यह कहके सूर्य जी चुप होगये फिर यम दुःखी होके पिता से बोले हे महाराज! यह हमारी माता नहीं है यदि माता होती तो शत्रुता हमारे से क्यों रखती यह तो हमारी माता की सपत्नी अर्थात् सवतिसी मालूम देती है यह यमका वचन सुनके छायाने शाप दिया कि जो तुम हमारा दोष निज पिता से कहेहौ इस पाप से तुम प्रेतराज होवो यह माता के मुखसे दारुण शाप पुत्रके ऊपर सुनके सूर्य भगवान् बोले हे पुत्र! डरो मत तुम पाप पुण्यके निर्धार करने वाले लोकपाल होगे व तुम्हारा नाम धर्मराज होगा इतना यम से कहके शनैश्चर को शाप देतेभये हे शनैश्चर! तेरी माता दुष्टिनी है हमारे बड़े पुत्र को शाप दिया इसलिये तू माता के दोष से क्रूरदृष्टिहो यह कहि सूर्यनारायण ध्यान करके जो देखा तौ छाया है संज्ञा नाम जो निज स्त्री है सो है नहीं तब तौ उत्तरकुरु को चलेगये जहां संज्ञा घोड़ी का रूप धारे तप करती रही सूर्य जी उसका तैसा रूप देखि आप घोड़ा का रूप धारण कर संज्ञा से संग किया उस समय में सूर्यभगवान् के वीर्य ने दो भाग होके उस घोड़ीरूप संज्ञा के गर्भ में प्रवेश किया तिस दो भाग में प्राण वायु व अपानवायु ये दोनों ब्रह्माजी के वरदान से संज्ञा में सूर्य भगवान् के वीर्य से जन्म ले मूर्तिमान् हो अश्विनी में जन्मलेने से अश्विनीकुमार कहाये इस प्रकार जब दो पुत्र अश्विनी से उत्पन्न भये तब पिताजी से हाथ जोड़के बोले कि आप जिस निमित्त हमको उत्पन्न किया है सो आज्ञा दें उसको हम अङ्गीकार करें यह पुत्रों की विनयवाणी सुनि मार्तण्डजी बोले हे पुत्रो! धर्मसे नारायण का आराधन करो वो प्रसन्न होके तुमको वर देंगे यह पिता का वचन सुनके परम दुष्कर तीव्र तप करनेलगे और दोनों एकचित्त होके ब्रह्मपारमय नाम स्तोत्र का जप करने लगे इस तप को देखि कुछ काल में ब्रह्माजी प्रसन्न हो वर देते

भये यह कथा सुनि प्रजापाल राजा कहते हैं हे ऋषीश्वर! जिस स्तोत्र से अश्विनीकुमार देवसिद्ध भये औ ब्रह्माजीने वर दिया वह स्तोत्र आप कथन करें हमारे सुननेकी इच्छा है यह सुनि महातपाजी बोले हे राजन्! सावधान हो स्तोत्र सुनो (ॐनमस्ते निष्क्रिय निष्प्रपञ्चनिराश्रय निरपेक्षनिरालम्ब निर्गुणनिरालोक निराधार निर्ममनिरालम्ब ब्रह्ममहाब्रह्मब्राह्मणप्रिय पुरुषमहापुरुषपुरुषोत्तम देवमहादेवदेवोत्तम स्थाणोस्थितस्थापक भूतमहाभूतभूताधिपते यक्षमहायक्षयक्षाधिपते। गुह्यमहागुह्यगुह्याधिपते सौम्यमहासौम्यसौम्याधिपते पक्षिमहापक्षिपक्ष्याधिपते दैत्य महादैत्यदैत्याधिपते रुद्रमहारुद्ररुद्राधिपते विष्णुमहाविष्णु विष्णुपते। परमेश्वरनारायण प्रजापतये नमः) इस प्रकार दोनों अश्विनीकुमार की स्तुति सुनि प्रजापति भगवान् संतुष्ट होय बोलतेभये हे देवतो! जो वर अभीष्ट होय सो मांगो जिस वरदान से तीन लोक में सुखपूर्वक निवास करो यह प्रजापति की वाणी को सुनि अश्विनीकुमार बोले हे भगवन्! हम दोनों आप की कृपा से देवताओं में निजभाग व तिनके साथ यज्ञ में सोमपान पावें निरन्तर देवगणों में हम गिनेजायँ यह अश्विनीकुमार का वचन सुनि ब्रह्माजी बोले हे देवो! तुम दोनों देवताओं में रूपक्रान्ति से अनुपम होगे और देवताओं के वैद्य होगे व कुछ काल में देवताओं के साथ सोम का भाग भी लाभ होगा महातपा ऋषि कहते हैं हे राजन्! इतना वरदान दे ब्रह्मा अन्तर्धान भये व द्वितीयातिथिके दिन अश्विनीकुमारजी के वरपाने से वोही उनकी तिथि भई हे राजन्! जो पुरुषरूप कामना से इस तिथि को पुष्पआहार करके एक वर्ष व्रतको नियम से करते हैं वह पुरुष अवश्य अश्विनीकुमार की कृपा से रूप व सुख सौभाग्य पाते हैं औ हे राजन्! इस कथा को जो प्रीति से सुने सो अश्विनीकुमारजी की कृपा से सब दुःखों से मुक्त हो धनवान्

पुत्रवान् हो यह पुण्य कथा से हमने अश्विनीकुमार का जन्म वर्णन किया अब क्या सुनाचाहते हो॥

इक्कीसवां अध्याय॥

राजा प्रजापाल महातपा ऋषि से पूछते हैं हे स्वामिन्! गौरी देवी किस प्रकार तृतीया तिथि की मालिक भई उसने क्या तप किया सो आप हमसे वर्णन करें यह राजा का प्रश्न सुनके महातपा ऋषि कहते हैं हे राजन्! यह विचित्रकथा आप सावधान हो सुनें जिस समय ब्रह्माजी ने सृष्टिरचने का विचार किया परन्तु कोई विचार ठीक न भया तब ब्रह्माजी ने कोप किया उस कोपसे एक बालक बड़ा तेजस्वी उत्पन्न हुआ वह प्रतापी बालक उत्पन्न होतेही रुदन करनेलगा इससे ब्रह्माजीने उसका रुद्र नाम रक्खा तिस रुद्रको ब्रह्माजी ने मूर्ति की कन्या जिसका गौरी नाम है सो विवाह दिया तिस सती नाम कन्या को रुद्रजी पाय बड़े हर्ष से स्वीकार कर ब्रह्माजी से हाथ जोड़ बोले कि जो आप आज्ञा देवें सो हम करें यह सुनि ब्रह्माजीने सृष्टि रचने की आज्ञा दी वह आज्ञा सुनि रुद्रजी अपने को सृष्टि रचने में असमर्थ देखि तप करने के विचार से जल में डूबिके गुप्त होगये यह वृत्तान्त ब्रह्माजीने देखि गौरीजीको निज देहमें लीन करके निज मन से मानसी सृष्टि सनकादिकोंकी रची फिर देह से दक्षजी को उत्पन्न किया व वशिष्ठादिकोंको उत्पन्न किया तिसमें मरीचि नाम ऋषि से कश्यपजी उत्पन्न भये सो दक्ष की कन्यों का विवाह किया तिस कन्याओं से कश्यपजी ने इन्द्रादि देवता, वसु, रुद्र, आदित्य, मरुत, यक्ष, किन्नर, असुर और नानाविध सृष्टि उत्पन्न किया और जो गौरीनाम रुद्रपत्नी को रुद्रके तप करने के समय में ब्रह्माजीने निज अङ्गमें लीन कर लियारहा सो गौरी ब्रह्माजी की इच्छासे दक्षजी की स्त्री में जन्म

ले फिर अब रुद्रजी तप से सिद्धभये तब विवाही गई सो किसी समयमें दक्षजी ने यज्ञकरने का विचार किया तब मरीचिआदि ऋषि उस यज्ञ कराने को इकट्ठे भये तिस यज्ञ में ऋत्विक्कर्म मरीचिऋषि करनेलगे और ब्रह्माजी अध्वर्यु भये व अत्रि ऋषि अग्नीध्र भये पुलस्त्य ऋषि होता भये व उद्गाता पुलहजी भये व क्रतुऋषि तिस यज्ञ में प्रस्तोता भये प्रचेता उसके प्रतिहर्ता भये व वशिष्ठजी सुब्रह्मण्य भये व सनकादि सभासद् होते भये तिसके याज्य स्वयं ब्रह्माजी भये उस यज्ञ में दक्षजी के दौहित्र व रुद्र अङ्गिरा इत्यादि पूज्य भये तिस यज्ञ में निज २ भाग लेनेको विश्वेदेवा, पितर, गन्धर्व, मरुतों के गण ये सब प्रकट आय के यज्ञभाग को यज्ञसमाप्त पर्यन्त लेतेरहे व तिसी समय जो पहले से जल में तप करतेरहे सो रुद्र सर्वज्ञानमय सर्वदेव-मय निर्मल चराचर को देखनेवाले प्रकाशमय प्रकट भये महा-तपा ऋषि कहते हैं हे राजन्! उस समय में केवल पांचप्रकार से सृष्टि उत्पन्न हुई थी दिव्य सृष्टि पृथिवीसृष्टि व चारप्रकार के मनुष्यों की सृष्टि अब होनेवाली जो रुद्रसृष्टि है तिसको आप श्रवण करें रुद्रजी जल में दशहज़ार वर्ष तप करके सिद्ध हो जब बाहर निकले तब क्या देखतेहैं कि पृथ्वी अन्नसे धान्योंसे वृक्षों से नानाविध मनुष्यों से व पशुओं से पक्षियों से सुशोभित हो रही है और फिर क्या देखते हैं कि दक्षजी की यज्ञ में सब ऋ-षियों के गण व देवताओं के गण एकत्र हो निज २ भाग को पाय के आनन्द से यज्ञ कराय रहे हैं यह देखि बड़ेक्रोध से युक्त हो रुद्रजी बोले कि ब्रह्माजी ने हमको प्रथम उत्पन्न करके सृष्टि करने की आज्ञा दी सो हम सृष्टि के निमित्त तप करने लगे यह सृष्टि हमारे विना किसने की यह कहिके अति कोप से गर्जने लगे उस गर्जने से रुद्रजी के करणों से अग्नि की ज्वाला प्रकट भई उस अग्नि से भूतों के गण व बेताल, कूष्माण्ड, पूतना

और नानाविध ऐसेही गण अनेक उत्पन्न भये उन गणों को प्रकट हुआ देखि रुद्रजी निजमाया से एक विद्यामय रथ उत्पन्न किया जिस रथ में ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद ये तीन वेणु हैं तीन प्रकार से बँधा है व तीनही बैठने के स्थान हैं जिस रथ का अक्ष धर्म है वायु जिसमें शब्द होके टिका है व रात्रि दिन दो जिसमें पताका हैं व धर्म अधर्म जिसमें दो दण्डे लगे हैं व जिस रथ का चलानेवाला सारथी स्वयं ब्रह्माजी भये और गायत्री देवी धनुष भई ॐकार उस धनुष का प्रत्यंचा अर्थात् रोदा भया षड्ज आदि सातो स्वर बाण होते भये महातपाजी कहते हैं हे राजन्! यह सामग्री बनाय इस रथपर रुद्रजी सवारहो दक्षके यज्ञस्थान को चले उसी समय में तीनप्रकार के उत्पात होनेलगे आकाश में तथा भूमि में व अन्तरिक्ष में यह उत्पात देखि देवता व्याकुल हो परस्पर बोले कि बड़े भय का समय देखाताहै सो सावधान होके निज निज शस्त्रों को धारण करो कोई बड़ा प्रबल दानव वा असुर यज्ञ भाग लेने को आता है इतना कहि फिर देवता दक्षजी से बोले हे महाराज! यह क्या उपद्रव होरहा है और इसमें क्या करना उचितहै यह देवताओं की वाणी सुनि दक्षजी बोले हे देवताओ! शीघ्र अपने २ शस्त्रों को लेकर सावधान हो क्या जाने क्या उत्पात आया है व युद्ध करके हटादो इतना कहतेही रुद्रजी विलक्षण रथपर सवार अनेकविध भूत वेतालों को साथ लिये आय पहुँचे देखतेही आपस में एक तरफ़ देवता व दक्ष और दूसरी तरफ़ रुद्र निज गणोंके साथ युद्ध करनेलगे उस घोर युद्ध में लोकपालों के साथ वेताल भूत कूष्माण्ड पूतना ये युद्ध करतेभये अनेकप्रकार से नानाशस्त्रों करके परस्पर घोर युद्ध होनेलगा उस समय रुद्रजी एक बाण से भग नाम देवता के नेत्र को फोड़के गर्जने लगे उसको देखि पूषा नाम देवता रुद्रजी से क्रोध करके बाणों से युद्ध करनेलगा तब तो

रुद्र ने कोपकरके पूषाके दाँतों को तोड़दिया यह देखि एकादश रुद्र जो यज्ञ में रहे वो संग्राम से विमुख होके भागिचले तिनको देखि विष्णुजी बोले हे रुद्रो! तुमको बलवान् होके भागना अनुचित है यह अयश पृथिवी में बहुत दिनोंतक रहेगा व कुलीन तेजस्वी प्रतापी वीर जो संग्राम छोड़ेंगे तौ वीरधर्म ही वृथा होगा यह कहि गरुड़पर सवारहो पीताम्बर धारण किये चक्र, शङ्ख, गदा, पद्म हाथों में लेकर विष्णुभगवान् रुद्रजी से युद्ध करनेलगे महातपाजी कहते हैं हे राजन्! विष्णु और रुद्र दोनों ने मिलि परस्पर घोरयुद्ध प्रारम्भ किया उस समय रुद्रजी ने विष्णुजी को पाशुपत नाम अस्त्र से मारा व विष्णुजी ने रुद्र जी को नारायणास्त्र से मारा ये दोनों अस्त्र परस्पर क्रोध करके आकाश में इकट्ठेहो लड़नेलगे इस विष्णुजी का व रुद्रजी का दिव्यअस्त्रों का युद्ध देख सब देवता व्याकुल होरहे हैं और इस समय दोनों में परस्पर कैसी शोभा होरही है जो एक तो मुकुट धारे एक जटाजूट एक शङ्ख शब्द को कररहे हैं दूसरे डमरू वादन करते हैं एकके हाथ में खड्ग दूसरे के हाथ में दण्ड और एक कौस्तुभ धारण किये दूसरे विभूति व सर्प व एक गदा को भ्रामण कररहे हैं दूसरे दण्ड को घुमाय रहे हैं एक कण्ठ में मणि से शोभित हैं दूसरे विष से शोभित हैं एक पीताम्बरधारे दूसरे दिगम्बर इसप्रकार की शोभा द्वन्द्वयुद्ध में देखि ब्रह्माजी बोले हे विष्णुजी! हे रुद्रजी! दोनों तुम अपने अपने अस्त्रों को संहारकरो यह ब्रह्माजीका वचन सुनि अस्त्र को दोनोंने संहार करलिया तब तौ ब्रह्माजी दोनों को शान्त देख यह कहने लगे कि हे देवो! तुम दोनों विश्वविख्यातकीर्ति होगे व लोक में हरिहर करके पुकारे जाओगे और हे रुद्र! तुम्हारे करके यह यज्ञ विध्वंसभई सो इस यज्ञ का तुम उद्धार करो औ तुम्हारा दक्षयज्ञविध्वंसन नाम लोकमें प्रसिद्धहोगा और ब्रह्माजी बोले

हे देवताओ! सब यज्ञों में प्रथमभाग रुद्रजी का होनाचाहिये और तुम सब मिलके रुद्रकी स्तुति करो यह ब्रह्माजी का वचन सुनि ब्रह्माजी को प्रणामकर सब देवता हाथजोड़ शिवजी की स्तुति करनेलगे (अथ स्तुतिः ॥ ॐनमो विषमनेत्राय नमस्ते त्र्यम्बकाय च। नमस्सहस्रनेत्राय नमस्ते शूलपाणिने । नमः खट्वाङ्गहस्ताय नमस्ते दण्डधारिणे । त्वं देवहुतभुक्ज्वाला-कोटिभानुसमप्रभः । अदर्शनेन यं देव मूढविज्ञानतोऽधुना । नमस्त्रिनेत्रार्तिहराथ शम्भो त्रिशूलपाणे विकृतास्यरूप। समस्त-देवेश्वरशुद्धभाव प्रसीद रुद्राच्युतसर्वभाव। पूष्णोऽस्य दन्तान्त-कविश्वरूप प्रलम्बभोगीन्द्रलुलन्तकण्ठ। विशालदेहाच्युतनील-कण्ठ प्रसीद विश्वेश्वर विश्वमूर्त्ते । भगाक्षिसंस्फोटनदक्षकर्म गृहाण भागं मखतःप्रधान। प्रसीद देवेश्वर नीलकण्ठ प्रपाहि नः सर्वभवेषु चैव । उमापते पुष्करनालजन्मा पश्याम ते देहगता-न्सुरेश। सर्गादयोवेदवरानन्नन्ते साङ्गां सविद्यां सपदक्रमांश्च । सर्वोऽस्ति लीनस्त्वयि देवदेव त्वमेव सर्वं प्रकटीकरोषि। भव शर्व महादेव पिनाकिन् रुद्र ते हर। नताःस्म सर्वे विश्वेश त्राहि नः परमेश्वर। इति) महातपाऋषि कहते हैं हे राजन्! सब देव-ताओंकी स्तुति सुनि प्रसन्न हो रुद्रजी बोले हे देवताओ! भग का नेत्र पूर्ववत् फिर होजाय व पूषा का दांत टूटा हुआ फिर होय व दक्ष का यज्ञ पूर्णहोय और हमारे दर्शनसे तुम्हारा सब का पशुभाव निवृत्त होय इतना देवताओं से रुद्रजी कहि फिर बोले हे देवताओ! तुम्हारे सबके पशुत्व दूर करने से हमारा लोकमें पशुपति नाम प्रसिद्ध होगा जो पुरुष हमारी भक्ति पाशु-पतीदीक्षा से करेंगे उनके ऊपर हम शीघ्र प्रसन्न होके उनको समस्त वाञ्छित फल व सद्गति देंगे इतना कहके रुद्रजी चुप हो गये तब रुद्रजी से ब्रह्माजी मन्द हँसके प्रीति से बोले हे देवदेव! लोक में तुम्हारा नाम पशुपति करके अवश्य होगा और तुम

समस्तलोकों में पूज्य व सब के अभीष्टदाता होगे इतना कहि ब्रह्माजी दक्षसे बोले कि तुम गौरी को रुद्रजी के अर्पण करो यह ब्रह्माजीका वचन सुनि गौरीनाम निज कन्या को दक्षजीने रुद्रजी के अर्पण किया उस परमसुन्दरी गौरी नाम कन्या को प्रीति से रुद्रजी अङ्गीकार कर ब्रह्माजी को साथ ले कैलास पर्वत को चले गये और यह व्यवस्था देखि विष्णुजी प्रसन्न हो वैकुण्ठको गये और देवता सब निजनिज स्थान को गये ॥

बाईसवां अध्याय ॥

महातपाऋषि राजा प्रजापाल से कहते हैं हे राजन्! इस प्रकार जब शिवजी गौरीको लेके कैलास पहुँचे वहां जाय गौरी यह चिन्तना करनेलगी कि देखो शिवजीने क्रोधसे हमारे पिता को त्रास दिया व यज्ञ विध्वंस किया अब हम पिता के शत्रु के पास इस देह से किस प्रकार रहें ऐसा विचारतेही क्रोध से व्याकुल हो शरीरत्याग करने का निश्चयकर शिवजी के समीप से हिमाचल पर्वतपर जाय तप करके शरीर को सुखाय थोड़े दिनों में देह से अग्नि उत्पन्नकर भस्म होगई फिर हिमाचलकी स्त्री मैना में जाय दूसरा शरीर धारणकर उमा ऐसा नाम पाय पूर्वजन्म के पति त्रैलोक्यनाथ शिवजी को स्मरणकर हिमाचल के किसी शिखर में श्रीगङ्गाजी के तट एकान्त में जाय मन में यह संकल्प करि कि पूर्वजन्म के भर्ता मेरे शिवजी अनेक अपराधों को क्षमाकर कृपाकरि मेरा पाणिग्रहण करें इस संकल्प से तप करनेलगी कुछकाल तप करते भये कि शिवजी ने पार्वतीजी के मन का संकल्प जानि वृद्धब्राह्मण का रूप धार जैसे तैसे गिरते पड़ते जहां गौरीजी तप कररही हैं वहां पहुँचे पहुँचिके सावधान हो गौरीजी से बोले हे कन्ये! हम ब्राह्मण बहुत वृद्ध व रास्ते के थके व शिथिल भूख से व्याकुल होरहे हैं जो तुम से बने तो

हमारी क्षुधा दूर होनेका उपाय शीघ्र करो जिसमें हमारे प्राण न निकलें यह गौरी ने वृद्धब्राह्मण का आतुर क्षुधा से पीड़ित वचन सुनि हाथ जोड़ बोली कि हे महाराज! आपने बड़ी कृपा किया जो अतिथि हो दर्शन दे हमको सफल किया अब आप घबड़ायँ न जो इस समयमें हमारे समीप वन्य पदार्थ हैं अर्थात् कन्द मूल फल सो हाज़िरहैं आप प्रसन्न हो श्रीगङ्गाजी में शीघ्र स्नानकर तृप्तिपूर्वक भोजन करें यह सुनि वृद्धब्राह्मण प्रसन्न हो श्रीगङ्गाजी में स्नान करने को प्रवेश किया तब तो एक ग्राह जल के भीतर से निकल वृद्ध को पकड़ डुबानेलगा उसे डूबते समय ब्राह्मण ऊंचे स्वर से पुकारने लगा कि हमको ग्राह लिये जाता है इस समय कोई ब्राह्मण का भक्त हो सो हमारी रक्षा करे यह ब्राह्मण की पुकार सुनि गौरीजी गङ्गाजी के किनारे आय देखती हैं तो ब्राह्मण को ग्राह खैंचिरहा है और ब्राह्मण व्याकुल हो इधर उधर देखि पुकार रहा है उसी समय कन्या को देखि बोला कि हे कन्ये! जबतक यह ग्राह मेरेको डुबावे नहीं तबतक हमारी रक्षा कर इतना कहि कन्या की तरफ़ हाथ को उठाया तब कन्या विचारनेलगी कि अब इस समय क्या करना योग्य है कि इस हाथ को जन्मान्तर में शिवजीने स्त्रीभावसे पकड़ा कन्या जानिके हमारे पिता हिमाचलने पकड़ा और ऐसा सुना है कि जिस पुरुष का हाथ कन्यासे पकड़ा जाय वही उसका पति होताहै और यदि इस काम को नहीं करतीं तो ब्रह्महत्या होती है इस धर्मसंकट में ब्राह्मणको क्लेशसे छुड़ानाही योग्यहै यह विचारि गौरीजी ने अपने हाथोंसे ब्राह्मणका हाथ पकड़ बाहरको खैंचा तो क्या देखती है कि जिसके निमित्त आप तप कररही है सोई सदाशिव सुविशाल मुण्डमाल चन्द्रभाल त्रिनेत्र सर्पोंसे अङ्गअङ्ग में विभूषित जटा मुकुट से शोभित भस्म से उज्ज्वल हाथ से लटकरहे हैं तिन सदाशिवको गौरीजी देखि पूर्वजन्म के त्यागरूप अपराध

स्मरणकर लज्जित हो चुप होरही तब शिवजी गौरीजी को मौन देखि हँसके बोले कि हे भद्रे! हमारा हाथ पकड़के अब क्या छोड़ने का विचार करती है अब हमारा हाथ न छोड़ो इसका पकड़ना तुम सफल कर हमारी भार्या हो यह सुनि गौरीजी लज्जित होके धीरेसे बोलीं हे देवदेव, त्रिलोकीनाथ, महेश्वर! आप हमारे जन्मान्तर के पति हैं और मैं यही चाहती हूं कि जन्म जन्म में आपही मेरे स्वामी हों मैं आपकी सेवा करूं हे स्वामिन्! इस समय तप करने का मेरा यही प्रयोजन है जो आप मेरे जन्मान्तरों के अपराधोंको क्षमा कर मेरे को स्वीकार करें और ऐसी अनुग्रह करें जिसमें हम आपसे वियोग न पावें और आपने जो आज्ञा दी है उसमें यह कारण है कि हम हिमाचलजी की कन्या हैं उनके हम आधीन हैं और कन्या को भी यही उचित है कि जो निज माता पिता जिसको देय उसके पास रहे इस लिये आप कृपाकरें मैं जायके पिताजी को जनाती हूं उनकी इच्छा से सब होगा यह कहि पार्वती जा हिमाचलजी को प्रणाम कर सब वृत्तान्त आदि से कह सुनाया और कहा कि हे पिता! ये हमारे जन्मान्तर के पति हैं और हमारे क्या तीन लोक के पति हैं सो हमारे संकल्प को जान वृद्धब्राह्मण हो आय भोजन की याचना की तब हमने कहा आप स्नान करके प्रीति से भोजनकरें जब वह स्नानको गये वहां जलमें दैवयोग से नक्र खैंच लेचला तब उन्हों ने पुकार किया उस समय वहां जाय तैसी उनकी दशा देखि ब्राह्मण की हत्या से डरके हम हाथ पकड़ बाहर करनेका विचार किया तो क्या देखा कि साक्षात्स्वयं शिवजी निजरूप धारे हमारे हाथों को पकड़े हैं और निजसेवा की आज्ञा देरहे हैं यह देखि व सुनि आपके पास आई हूं जो आज्ञा होय सो करूं यह पार्वतीजी का वचन सुनि हिमाचलजी बड़े प्रसन्न हो पार्वतीजी से बोले कि हे पुत्रि! आज तुम्हारे

जन्म लेने से हम धन्य भये तुमने तीनोंलोकों के मस्तक पर हमको बैठाया जिससे हमारे जामाता साक्षात् त्रैलोक्यनाथ शिवजी भये हम इस बातमें बहुत प्रसन्न हैं अब विलम्ब करना योग्य नहीं है थोड़ीसी देरमें हम आते हैं तुम यहांहीं रहो यह कह हिमाचलजी ने जाय ब्रह्माजी के समीप हाथ जोड़ प्रणाम कर निज वृत्तान्त सुनाया कि हे देवदेव! हम निजकन्या को शिवजी के साथ व्याहि देनेका विचार करते हैं इसमें जो आप आज्ञा दें सो कीजाय यह हिमाचल का वचन ब्रह्माजी सुनके हर्ष से बोले हे हिमाचल! इसमें देरी करना योग्य नहीं है शीघ्र कीजिये यह काम हमको बहुत प्रसन्नहै यह ब्रह्माजी की आज्ञा ले हिमाचलजी निज स्थान में जाय विवाह के सामान करनेका विचार कर सेवकों को आज्ञा दी कि तुम जाय नारदजी को व तुम्बुरु को व हाहाहूहू को व किन्नर, असुर, यक्ष, राक्षस व संपूर्ण पर्वत व नदियां व सब वृक्ष ओषधी इनसबों को हमारा संदेश दो कि हमारी कन्या उमा का विवाह देखने को निज २ स्वरूप धारण करके आवें यह कहि दूतों को बिदाकर पृथिवी वेदीस्थान में रख सातोंसमुद्रों को कलश स्थान में स्थापितकर सूर्यजी को दीपस्थान में रख मन्दरगिरि को बुलाय शिवजी के पास विवाह करनेके लिये बुलानेको भेजा वहां मन्दरगिरि जाय शिवजी को प्रणामकर हिमाचल का संदेश सुनाया सो सुनि शिवजी प्रसन्न हो निजगणों के साथ हिमाचलके घर आय विधिपूर्वक उमाजीका विवाहकर बिदा हो शिवजी तो कैलास आये और ब्रह्माजी निजलोक को गये और जो २ विवाह देखने को आये सो सो निज २ स्थानको गये वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस कथाको महातपा ऋषि राजा प्रजापालसे कहते हैं हे राजन्! यह पार्वती शिव का विवाह तृतीया को भया है इसलिये यह तृतीया गौरीजी को बड़ी प्यारी है इस तृतीया को जे अलोना

व्रत करके गौरीका पूजन करते हैं उनके सबकार्य सिद्ध होते हैं और जे स्त्री लवणको त्यागि तृतीयाका व्रत करती हैं ते सौभाग्य और संतानफल को पाती हैं इस तृतीया की कथा जो नियमसे स्त्री वा पुरुष सुने वह आरोग्य, पुष्टि, कान्ति, लक्ष्मी और यश को पावे अन्तमें पार्वतीके लोकको जावे॥

तेईसवां अध्याय॥

महातपा ऋषि से राजा प्रजापाल पूछते हैं कि, हे भगवन्! गणेशजी का जन्म आप वर्णनकरें और जिसप्रकार गणेशजी चतुर्थी तिथि के स्वामी भये सोभी आप वर्णनकरें यह राजाका वचन सुनि ऋषि कहनेलगे हे राजन्! अब हम गणेशजी का जन्म वर्णनकरते हैं सो सावधान होके श्रवण कीजिये प्रथमहीं देवता व ऋषियोंके गण जो कोई कार्य नवीन करने का विचार करतेथे उसीमें विघ्न हुआ करता था इसीप्रकार सर्व कार्यों में विघ्न देखि परस्पर मिलिकै विचार करनेलगे कि क्या उपाय बनें जिसमें सबकार्य निर्विघ्न सिद्धहों यह विचारि सबदेवता व ऋषि मिलिके कैलासपर्वत में जहां शिवजी पार्वती के साथ विराज-मानहैं वहां जाय शिवजीको साष्टाङ्ग प्रणामकर हाथ जोड़ निज प्रयोजन निवेदन किया तब देवता व ऋषियों की वाणी सुनि शिवजी निर्निमेष दृष्टिसे पार्वतीजीके तरफ़ चिरकालतक देखते रहे उस समय शिवजी की पञ्चभूत मूर्तियां मनमें विचार करने लगीं कि किस निमित्त इनकी अविचलदृष्टि होरहीहै और शिव जी देखते हैं कि हमारी पञ्चभूत मूर्तियोंमें पृथिवी, जल, अग्नि और वायु इनचारों की मूर्तियां देखाती हैं आकाशमूर्ति क्यों नहीं दिखाती यह शोच ऊंचेस्वरसे शिवजी हँसनेलगे उससमय शिवके हँसतेही पञ्चतत्त्व एकत्र होके एक विलक्षण बालक अति प्रकाशमान निज तेज से दशों दिशा प्रकाश करताहुआ उत्पन्न

हुआ मानो तेजसे दूसरा रुद्र ही है तब तो उस तेजस्वी सुन्दर बालक को उमाजी कृपाकटाक्ष से बारम्बार देखनेलगीं तिसको देखि शिवजी कोप करके कहनेलगे कि देखो स्त्री चञ्चल होती है कि किसी सुन्दर पुरुष को देख विचार छोड़ मोहित होजाती है ऐसा पार्वतीजी की तरफ़ देखि व कठोरवाणी बोलि बालक से क्रोध करके शिवजी कहनेलगे कि हे बालक! आजसे तुम्हारा यह मनोहर स्वरूप न रहेगा मुख तुम्हारा हाथीकासा होजायगा व उदर लम्बा व बड़ा होगा व सर्पों का यज्ञोपवीत व अङ्गभूषण तुमको प्राप्त होगा यह कठोरवाणी से शाप दे कोप करके निज शरीर कँपातेहुये शिवजी उठखड़ेभये उस समय जिस २ तरह शिवजी देह कँपातेरहे तैसेही २ जलके बिन्दु बाहर निकल २ पड़तेरहे उन्हीं जलके बिन्दुवों से अनेक विनायक गण जिनके हाथी केसे मुख व हाथ में त्रिशूल लिये उत्पन्नभये तिनको देखि सबदेवता व ऋषिसहित पार्वतीजी विस्मितहो विचार करने लगीं कि यह क्या तमाशा होरहाहै और वे विनायक गण इतने उत्पन्न भये कि जिन्हों से सारी पृथिवी पूर्ण होगई उसीसमय निज विमानपर चढ़ ब्रह्माजी वहां आय सब देवताओंसे कहने लगे कि हे देवताओ! तुम्हारे कार्यों के विघ्न निवृत्त होने को शिवजी ने कृपा करके इन विघ्नगणों को उत्पन्न किया है यह देवताओं व ऋषियोंसे कह जो विघ्नगणहैं उनसे ब्रह्माजी बोले हे विघ्नगणो! जो प्रथम शिव मुख से उत्पन्न भये हैं वे तुम्हारे स्वामी हैं और उनके तुम सेवक हो यह कहि शिवजी से बोले कि हे शिवजी! जो तुम्हारे मुख से यह वीर उत्पन्न भया है सो इन गणों का स्वामी होगा और विनायक नाम होगा और ये सब इनके गण हैं इन्हों में मुख्य करके सब तत्त्वों से आकाश तत्त्व अधिक होने से इस तत्त्व के स्वामी होंगे अब आप इन्हों पर प्रसन्न हो अस्त्र दीजिये जिस अस्त्र के तेज से देवताओं का

और ऋषियों का विघ्न निवृत्त करें जिस निमित्त इनका जन्म है इतना कहि ब्रह्माजी अन्तर्धान भये और शिवजी खुशी हो ब्रह्माजी की आज्ञा मानि निजमुख से जो उत्पन्न वीर है उससे बोले कि हे वीर! तुम्हारा नाम विनायक, विघ्नकर, गजास्य और गणेश करके प्रसिद्ध होगा व हे पुत्र! इनगणों के साथ तुम गणनायक होके सब कार्यों में प्रथम पूजा को ले उन कार्यों के विघ्नों को दूर करो व जिस कार्य के प्रारम्भ में कोई तुम्हारा पूजन न करे उसके कार्य में विघ्नकरो यह कहि सब देवताओं से शिवजी बोले हे देवताओ! सुवर्ण के कलशों में तीर्थ जल, कुशा और यज्ञवृक्ष के पल्लव ल्यावो यह सुनके सब पदार्थ देवताओंने इकट्ठे किये तब ऋषियों ने वेदमन्त्र से गणेशजी का अभिषेक कर साथ देवताओं के गणेशजी की स्तुति करनेलगे (अथ स्तुतिः॥ नमस्ते गजवक्त्राय नमस्ते गणनायक। विनायक नमस्ते तु नमस्ते चण्डविक्रम। नमोऽस्तु ते विघ्नकर्त्रे नमस्ते सर्पमेखल। नमस्ते रुद्रवक्त्रोत्थप्रलम्बजठराश्रित। सर्वदेव-नमस्कारादविघ्नं कुरु सर्वदा। इति) इस प्रकार सब देवताओं की नम्रवाणी से स्तुति सुनके प्रसन्न हो देवताओं की प्रार्थना को स्वीकार कर गणेशजी अन्तर्धान होते भये महातपाजी क-हते हैं हे राजन्! यह गणेशजी की शिवजीसे उत्पत्ति औ अभि-षेक चतुर्थी के दिन भया है इसलिये चतुर्थी गणेशजी को अ-त्यन्त प्यारी है इसलिये जो चतुर्थी को तिल भोजन करके व्रत करते हैं और गणेशजी का पूजन करते हैं वे गणेश की कृपा से सबदुःखोंसे छूट सुख पाते हैं और जो इस गणेशजीकी स्तुति को पढ़े तिसके सब विघ्न दूर होयँ और गणेशजी की कृपा से उस का संपूर्ण कार्य सफल होय और कोई दुःख न होय॥

चौबीसवां अध्याय॥

यह कथा सुनि धरणी वाराहजी से पूछती है कि, हे वाराहजी! सर्प जो हैं सो पञ्चमी के स्वामी किस प्रकार भये सो आप वर्णन करें यह धरणी का वचन सुनि वाराहजी कहते हैं हे धरणि! महातपाऋषि के मुखसे राजा ने गणेशजी का जन्म सुनि हर्षित हो कहने लगे हे महाराज! आपने बड़ा अपूर्व इतिहास वर्णन किया अब आप कृपा करके सर्पों का जन्म व जिस प्रकार सर्प पञ्चमी के स्वामी भये सो सब वर्णन करें यह सुनि महातपाजी बोले हे राजन्! सावधान हो सुनो प्रथमही जब ब्रह्माजी ने सृष्टि रची तब ब्रह्माजी के पुत्रों में मरीचिनाम ऋषि से कश्यपनाम ऋषि उत्पन्न भये उनको दक्षप्रजापति की तेरह कन्या विवाही गईं तिनमें जो कद्रूनाम कश्यप की स्त्री है उससे नागों के गण उत्पन्न भये जिनका नाम अनन्त, वासुकी, कम्बल, महाबल, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंख, कुलिक और अपराजित आदि अनेक नाम हैं इन्हींकी संततियों से सारा जगत् पूर्ण होरहा है और ये कैसे हैं कि महाविषधर जिसको दृष्टि से देखें सो भस्म होजाय व स्पर्श करने से कौन प्राण रखसक्ता है ऋषिजी कहते हैं हे राजन्! इन सर्पों से पृथ्वी के जीव सब व्याकुलहो ब्रह्माजी की शरण में जाय पुकार करनेलगे हे ब्रह्माजी! आप हमारे स्वामी हैं हम आप से उत्पन्न हैं इसीलिये आपकी शरण में आये हमारी सर्पों की त्रास से रक्षा कीजिये जो कश्यपजी से कद्रू ने उत्पन्न किये हैं वे सर्प हम सब जो हैं उनको निज विषों करके भस्म किये देते हैं सो जबतक हमारा सबका क्षय न हो तब तक आप हमारी रक्षा के लिये यत्नकरें यह प्रजाओं का वचन सुनि व सर्पों की दुष्टता देखि ब्रह्माजी बोले हे प्रजाओ! डरो न निज २ स्थान को जाव हम तुम्हारे क्लेशको व सर्पों की दुष्टता

को भलीप्रकार जाना अब कोई क्लेश और भय सर्पोंसे न होगा सब तरह से तुम्हारी रक्षा करेंगे यह ब्रह्माजी की वाणी सुनि निर्भय हो प्रजा सब निज २ स्थान को गई और ब्रह्माजी क्रोध करके वासुकी आदि सर्पों को शाप दिया कि हे सर्पो! जो हमारी उत्पन्न कीहुई प्रजा को क्षय करते हो इस पाप से स्वायंभुव मन्वन्तर में माता के शाप से तुम्हारा सबका क्षय होय यह ब्रह्माजी का शाप जब सर्पों ने सुना तब घबड़ायके डरेहुये ब्रह्माजी के चरणों में आय गिरे और हाथ जोड़ ब्रह्माजी से कहनेलगे कि हे भगवन्! आपने हम सब को क्रोधयोनि में जन्म दिया है और कुटिल स्वभाव व विषधर हमारी जाति रचा है सो जातिस्वभाव किस प्रकार छूट सक्ता है इसलिये आप दया करके निज उत्पन्न किया जानके क्षमाकरें जैसी आप आज्ञा देवें सो हम करें जिस में हम प्रसन्न रहें यह सर्पों का वचन ब्रह्माजी सुनि बोले कि हे दुष्टो! यदि हम तुमको दुष्टयोनि में जन्म दिया तो मनुष्यों को भक्षण करने को हमने कब आज्ञा दिया जो तुम भय छोड़ संसार की प्रजा को नाश कर रहेहो यह सुनि भयभीत हो सर्प बोले कि महाराज हमको आप रहने का स्थाननियम करें जिस स्थान में जिस मर्यादा से हम रहें जिसमें किसी जीव को दुःख न हो यह सुनि ब्रह्माजी सर्पों से प्रसन्न हो बोले हे सर्पो! हमारी आज्ञा से वितल, सुतल और पाताल इन तीनों में जाय निवास करो अनेकभांति के सुख कुटुम्बों के साथ भोगो और बहुतकाल आनन्द से रहो फिर वैवस्वतमन्वन्तर में कश्यप से जन्म लेकर निज माता के शाप से गरुड़ के भोजन होगे और तुम सब जो अष्टकुल के महानाग हो उनको छोड़ और जो तुच्छ सर्प हैं तिन को गरुड़ भक्षण करेंगे औ उन्हीं छोटे कुलवालों से अपराध भी अनेक होगा और जिसकी मृत्यु समीप हो उन्हीं को दंशन करना और मणि, मन्त्र, ओषधी जो जाने अथवा जहां

होय तहां से और तिन से डरते रहना इस हमारे वचन को मानोगे तो सुखी रहोगे अन्यथा तुम्हारा नाश होगा यह ब्रह्माजीका वचन सुनि सर्प पाताल आदि स्थानों को चलेगये महातपाऋषि राजा प्रजापाल से कहते हैं हे राजन्! ब्रह्माजी का यह शापानुग्रह पञ्चमी तिथि को भया है इसलिये नागों को यह तिथि बड़ी प्यारी है और इसमें जो पृथ्वी में चन्दन से वा गोमय से अथवा और किसी रङ्ग से सर्पों की मूर्ति वनाय दुग्ध से स्नान कराय चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य से नागों की पूजाकर व अन्न त्यागि व्रत करते हैं सो नागों की कृपा से अनेक सुख करके युक्त होते हैं व सर्पों के प्रीतिपात्र होते हैं व उनको वा उनके कुल में सर्पबाधा नहीं होती और जो इस कथा को प्रीति से सुनते हैं उनको भी सर्प से भय नहीं होती॥

पचीसवां अध्याय॥

इन सर्पोंकी कथा सुनि राजा प्रजापाल प्रश्न करते हैं हे महातपाजी! अब आप यह वर्णन करें कि स्वामिकार्त्तिकजी अहंकार से किस प्रकार जन्म पाया यह राजा का वचन सुनि ऋषिजी बोले हे राजन्! सब तत्त्वों से परे जो पुरुष है उससे राजस तामस सात्त्विक इन तीन गुणों की सृष्टि है उस सृष्टि की व्यक्त संज्ञा है औ आदिपुरुष की अव्यक्त संज्ञा है और व्यक्त अव्यक्त के मध्य में जो पदार्थ है उसकी महत्तत्त्व संज्ञा है उसी महत्तत्त्व का दूसरा नाम उपाधि भेद से अहंकार है और पुरुष संज्ञा शिवकी अथवा विष्णु की है और अव्यक्तसंज्ञा लक्ष्मी की व उमा की है और इन्हीं का नामान्तर प्रकृति भी है उसी प्रकृति और पुरुष के संयोग से अहंकार की उत्पत्ति है सोई अहंकार सेनापति कार्त्तिकेयजी हैं अब इनकी उत्पत्ति हे राजन्! हम कहते हैं सो सुनो सब से आदि श्रीनारायण तिनसे ब्रह्माजी ब्रह्माजी से मरीच्यादि

ऋषि तिन ऋषियों से देवता, दैत्य, गन्धर्व, किन्नर, मनुष्य, पशु, पक्षी और अनेक विध जीवों की उत्पत्ति भई इस प्रकार जब सृष्टि का विस्तार हुआ तब बड़े २ पराक्रमी देव और दानव परस्पर जीतने के लिये घोरसंग्राम करने लगे तिस समय दैत्यों में हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु, विप्रचित्ति, विचित्र, भीमाक्ष और क्रौंच आदि बड़े २ प्रबल वीरों ने देवताओं की सेना जीति जय का डङ्का देते जाय स्वर्ग लेलिया और देवता दैत्यों से पराजित हो निज दुःख को बृहस्पतिजी से निवेदन किया सो देवताओं का क्लेश देख बृहस्पतिजी बोले हे देवताओ! अकेले इन्द्र से सेना की रक्षा नहीं होती इसलिये सेनापति का विचार करना उचित है जबतक प्रबल सेनापति न होगा तबतक दैत्यों से जय पाना कठिन है इसलिये सब मिलके ब्रह्माजी से अपना दुःख निवेदन करो जो उनकी आज्ञा हो सो कीजावे यह विचार इन्द्रादि देवतागण गुरुजी को साथले ब्रह्मलोक में जाय निजक्लेश ब्रह्माजी से निवेदन किया सो सुनि निज मन में चिरकाल तक विचारनेलगे विचारते २ जब कोई उपाय न सूझा तब ब्रह्माजी सब देवताओं को साथ ले कैलास में शिव के समीप जाय शिव की स्तुति करने लगे (अथ स्तुतिः ॥ नमाम शंभो शरणार्थिनो वयं महेश्वरं त्र्यम्बकभूतभावनम् । उमापते विश्वपते मरुत्पते जगत्पते शंकर पाहि नस्स्वयम् । जटाकलापाग्रशशाङ्कदीधिति-प्रकाशिताशेषजगत्त्रयामल । त्रिशूलपाणे पुरुषोत्तमाच्युत प्रपाहि नो दैत्यभयादुपस्थितात् । त्वमादिदेवः पुरुषोत्तमोहरिर्भवो महेशस्त्रिपुरान्तकोविभुः । भगाक्षिहा दैत्यरिपुःपुरातनो वृषध्वजः पाहि सुरोत्तमोत्तम । गिरीशजानाथगिरिप्रियाप्रिय प्रभो समस्तामरलोकपूजित । गणेशभूतेशशिवाक्षयाव्यय प्रपाहि नो दैत्यवरान्तकाच्युत । पृथ्व्यादितत्त्वेषु भवान्प्रतिष्ठितो ध्वनिस्वरूपोगगने विशेषतः । लीनोद्विधातेजसि सन्त्रिधा जले चतुःक्षितौ पञ्चगुण-

प्रधानः। अग्निस्वरूपोऽसितरौतथोपलेशैलस्वरूपोसि तथावः निष्वपि। जलस्वरूपोभगवान्महेश्वरःप्रपाहि नो दैत्यगणादिंतान्हर। नासीद्यदाकाण्डमिदं त्रिलोचन प्रभाकरेन्द्रेन्दुविनापि वा कुतः।तदा भवानेव विरूपलोचनप्रमाणबाधादिविवर्जितःस्थितः। कपालमालिन् शशिखण्डशेखर श्मशानवासिन् सतुभस्मगुण्ठन्। फणीन्द्रसंवीततनोन्तकान्तक प्रपाहि नो दक्षधिया सुरेश्वर। भवान्पुमान् शक्तिरियं गिरेस्सुता सर्वाङ्गरूपा भगवंस्तथा त्वयि। त्रिशूलरूपेण जगत्त्रयं करे स्थितं त्रिनेत्रेषु मखाग्नयस्त्रयः।जटास्वरूपेण समस्तसागराः कुलाचलाः सिन्धुवहाश्च सर्वशः। शरीरजं ज्ञानमिदं तव स्थितं तदेव पश्यन्तु कुदृष्टयोजनाः। नारायणस्त्वंजगतां समुद्भवस्तथा भवानेव चतुर्मुखोमहान्। सत्त्वादिभेदेन तथाग्निभेदतो युगादिभेदेन च संस्थितस्त्रिधा। भवन्तमेते सुरनायकाः प्रभो भवार्थिनोन्यस्य वदन्ति तोषयन्। यतो यतो नो भव भूतिभूषण प्रपाहि विश्वेश्वर रुद्र ते नमः। इति) महातपा ऋषि कहते हैं हे प्रजापाल ! इस प्रकार देवताओं ने जब शिवजी की स्तुति की सो सुनि प्रसन्न होके देवताओं से शिवजी बोले हे देवताओ ! क्या चाहते हौ सो कहौ हम देंगे यह सुनि सब देवता शिवजी से हाथ जोड़के बोले हे स्वामिन् ! प्रबल दैत्यों के बध करने में समर्थ सेनापति दीजिये जिसके बल से दैत्यों को जीति निज राज्य पावें शिवजी देवताओं की प्रार्थना सुनि कहनेलगे हे देवताओ ! अब दैत्यों की भय छोड़ निर्भय हो हम सेनापति तुम्हारे लिये देंगे इतना कहि शिवजी सेना पति के निमित्त निज शक्ति को क्षोभ दिया उस शिवजी के क्षोभ देने से शक्ति ने अहंकार जो पदार्थ है तिसको शिवजी के शरीर से खैंचि पुत्ररूप निर्माणकर प्रकट किया उस बालक को उत्पन्न देखि ब्रह्मादिक देवता आनन्द में मग्न हो शिवजी की पूजा करनेलगे उस समय वह बालक शिवजी से बोला कि हे पिता !

हमको कोई पदार्थ खेलने को दो और हम किसके साथ खेलैं सो भी आप विचार करो यह बालक का वचन सुनि शिवजी प्रसन्न हो कुक्कुट क्रीड़ाकरनेको दिया और शाख विशाख ये दो बालक साथ के लिये दे फिर बोले हे कुमार! तुम भूत, ग्रह, पूतना और कूष्माण्डों के स्वामी हो औ इन्द्र आदि देवताओंके सेनापति हो यह कह शिवजी चुप होरहे औ सब देवता हाथ जोड़ कुमारजी की स्तुति करनेलगे (स्तुतिः॥ भवस्व देवसेनानी महेश्वरसुत प्रभो। षण्मुख स्कन्द विश्वेश कुक्कुटध्वज पावक। कम्पितारेकुमारेशस्कन्दबालग्रहानुग। जितारेक्रौंचविध्वंस कृत्तिकाजशिवात्मज। भूतग्रहपतिश्रेष्ठ पावके प्रियदर्शन। महाभूतपतेः पुत्र त्रिलोचन नमोऽस्तुते। इति) इस प्रकार देवताओं की स्तुति सुनि कुमारजी निज शरीर से बढ़के पर्वताकार होगये और तेज से ऐसे प्रकाशमान दीखे जैसे द्वादश सूर्य इकट्ठे हों ग्रीष्मऋतु के मध्याह्नमें दीखैं उस तेजसे तीनों लोक में प्रकाश सा होगया इस कथाको सुनि प्रजापाल कहते हैं कि; महाराज! आपने इनकी विलक्षण उत्पत्ति वर्णनकी इनका कार्त्तिकेय क्यों कर नाम हुआ सो आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुनि ऋषि कहनेलगे कि हे राजन्! यह कुमारजी की उत्पत्ति हम ने प्रथमकल्प की वर्णन की कुमारजी की माता किसी कारण से कृत्तिका, मातृगण और पार्वती ये तीनों तुल्यही हैं और शिव जी तथा अग्नि ये पिता तुल्य हैं सो हे राजन्! यह स्कन्दजी की उत्पत्ति अहंकार से अतिगुप्त है सो हमने तुम्हारे से कहा और स्कन्दजी का जन्म षष्ठीतिथि को भया है इस लिये षष्ठी तिथि बहुत प्रिय है इस तिथि को जो फलाहार होके स्कन्दजी की पूजा करते हैं उनको स्कन्द की कृपा से धन, पुत्र, यश और आरोग्य सब प्राप्त होता है और जो चाहैं सो सब स्कन्दजीकी सेवासे प्राप्त होसक्ता है कोई पदार्थ मिलना दुर्लभ नहीं है और

जो यह कुमारजीकी कथा व स्तुतिको पढ़ै या सुनै तिसके घरमें पुत्र पौत्र सम्पत्ति आरोग्य सदा रहै और बालग्रह व अग्नि, चौर और महामारी इनकी पीड़ाभी कभी न होय॥

छब्बीसवां अध्याय॥

राजाप्रजापाल महातपाजी से पूछते हैं हे ऋषिजी! सूर्य भगवान् सप्तमी तिथि के स्वामी किस प्रकार भये सो आप वर्णन करें यह राजाका प्रश्न सुनि महातपाजी कहते हैं हे राजन्! जो सर्वान्तर्यामी भगवान्हैं वह अपनेको एक देखि अनेक होने का विचारकरनेलगा उसी समय एक तेज का समूह उस परमात्मा की देहसे निकला उस तेजको महात्मा जनोंने सूर्य ऐसा नाम व सर्वलोक प्रकाश करने से भास्कर नाम व जिसके तेज से अधिक दूसरा तेज न देखा तिस करके रविनाम व अन्धकार-मय जगत्को निज तेज से प्रकट होके प्रकाशकरने से दिनकर नाम व सर्व तेजवानोंके आदि होने से आदित्यनाम सब देवता व ऋषियों ने रक्खा इस भांति सूर्यजी के जन्म होतेही चराचर प्रकाश हुआ देखि सब देवता सूर्यजीकी स्तुति करनेलगे (अथ स्तुतिः॥ भवान्प्रसूतिर्जगतःपुराणः प्रपासि विश्वं प्रलये च हंसि। समुच्छ्रितस्त्वं सततं प्रयासि विश्वं सदा त्वां प्रणतोस्मि नित्यम्। त्वया ततं सर्वत एष तेजः प्रतापिता सूर्ययज्ञप्रवृत्तौ। सप्ताश्व-युक्ते च रथेस्थितस्त्वं कालाख्यमन्वन्तरवेगयुक्ते। प्रभाकरस्त्वं रविरादिदेव आत्मा समस्तस्य चराचरस्य। पितामहस्त्वं वरुणो यमश्च भूतं भविष्यच्च वदन्ति सिद्धाः। तेजोरिविध्वंसिन् वेदमूर्त्ते प्रपाहि चास्मान्शरणागतान्सदा। वेदान्तवेद्योऽसि मखेषु देव त्वंहूयसे विष्णुरिति प्रसन्नः। संस्तूयसे देववरैर्महात्मन्प्रपाहि स-र्वान्शरणागतान्नः। इति) इस प्रकार देवताओं की स्तुति सुनि सूर्यभगवान् सौम्यमूर्ति धारणकर देवताओंसे बोले हे देवताओ!

जो इच्छा हो सो मांगो यह सूर्य भगवान् की वाणी सुनि देवता बोले हे भगवन्! आपने निज तेजसे जगत् का अन्धकार दूर कर हमारे नेत्रों में प्रकाश दे हमको सफल किया अब यही वर चाहिये कि हमारी भक्ति आपके चरणों में बनी रहै यह सुनि सूर्यनारायण "तथास्तु" कह अन्तर्धान भये ऋषिजी कहते हैं हे राजन्! सूर्यभगवान् संसारहित करनेको सप्तमी तिथि को प्रकटभये इस लिये जो पुरुष वा स्त्री सप्तमी का व्रत करके सूर्य भगवान् की पूजाकरें सो सब दुःखोंसे छूटि अनेकसुख को प्राप्त हों और अन्तमें विमानपर बैठ सूर्य भगवान् के लोकको जायँ कल्प पर्यन्त सुख भोगैं॥

सत्ताईसवां अध्याय॥

प्रजापाल राजा ऋषिजीसे पूछते हैं हे महातपाजी! मातृगणों की उत्पत्ति आप वर्णनकरें किस प्रकार मातृगण अष्टमी तिथि की स्वामिनी भई यह राजा का प्रश्न सुनि महातपाजी कहने लगे हे राजन्! पूर्वहीं महाबलवान् अन्धकनाम दैत्य हुआ सो ब्रह्माजी के वरदान से गर्वित हो सब देवताओंको जीति स्वर्ग ले लिया तबतो अन्धक के डरसे सब देवता निज २ राज्यसे भ्रष्ट हो सुमेरुपर्वत छोड़ ब्रह्माजीके समीप जाय निज दुःखको निवेदन किया कि हे भगवन्! हम सब अन्धककी भयसे आपके शरण में आये हैं हमारी रक्षाका उपाय चिन्तन कीजिये यह देवताओं की दीनवाणी सुनि ब्रह्माजी दयासे देवताओं को देखि बोले हे देवताओ! अन्धक को हम दण्ड नहीं देसक्ते इस लिये हमारे साथ शिवजी के समीप कैलास को चलो यह कह देवताओं को साथ ले ब्रह्माजी कैलास पर्वत में पहुँचे तब ब्रह्माजी को देखि शिवजी उठ आसन दे पाद्य अर्घ से पूजनकर कहनेलगे हे ब्रह्माजी! आपके साथ देवता किस कार्यको आये हैं सो आप शीघ्र आज्ञा

देंं सो हम करें यह शिवजीकी वाणी सुनि जबतक ब्रह्मा कुछ कहने का विचार किया चाहें उसी समय वहांही दैत्यों की असंख्य सेना साथ लिये अन्धक भी आय पहुँचा और शिवजी को मारनेको व पार्वतीजी को हरण करने को विचार किया तिस अन्धक को सेना के साथ आया देखि सब देवता निज २ शस्त्रों को धारणकर शिवजीके समीप युद्धकरने को खड़ेभये यह देखि रुद्रजी ने वासुकि तक्षक धनंजय आदि सर्पों को स्मरण किया उसी समय सब सर्प आय हाज़िर भये तिन्होंको देखि शिवजी कटिसूत्र ब्रह्मसूत्र कङ्कण हार आदि अनेक भूषण अङ्गोंमें धारि त्रिशूल ले युद्ध को उद्यतभये उसी समय नीलनामा दैत्य गज का रूप धारि अतिशीघ्र शिवजी के मारने को आया तिसको देखि नन्दीजी वीरभद्र को संज्ञा दी उसी समय वीरभद्रजी सिंह का उग्ररूप धारणकर बड़ेवेग से गजरूप नीलदैत्यके ऊपरचढ़ क्रोध करके निज तीक्ष्णनखों से शीघ्र उस गजासुर को विदारण कर तिसका चर्म ले शिवजी के अर्पण किया उसीसमय शिवजी ने उस चर्म को निज ओढ़ने का वस्त्र बनाया तबसे लेकर रुद्रजी गज चर्मधारी भये फिर शिव नाग भूषणों करके भूषित गजचर्म धारण किये त्रिशूल हाथ में ले अन्धकासुर के साथ युद्धकरने को प्रवृत्त भये तबतो देवता और दैत्य मिल घोरयुद्ध करनेलगे इधर देवताओं के सेनापति स्कन्दजी और दैत्योंका सेनापति अन्धक इस संग्राम को देखि नारदजी नारायणजी के समीप जाय सब वृत्तान्त निवेदन किया सो सुनि विष्णु भगवान् गरुड़जी पर सवार हो हाथों में शंख, चक्र, गदा, खड्ग धारण कर कैलास पर्वत पर जहां शिवजी का व अन्धक का युद्ध होरहा था वहां पहुंचि दैत्यों से युद्ध करनेलगे इस घोरयुद्ध को देखि घबड़ाय व्याकुल हो देवता भागचले तिन देवताओंको भगे जाते देखि शिवजी स्वयं अन्धक के साथ युद्ध करनेको गये उस समय

शिवजी के साथ अन्धक ने घोरयुद्ध किया कि जिसको देखि रोमाञ्च हो। तब शिवजी ने त्रिशूल से अन्धक को प्रहारकर छेद लिया उस प्रहार के लगतेही अन्धककी देह से रुधिर की जो धारा बही उसी धारासे अन्धकासुरके तुल्य स्वरूप धारण किये अनेक दैत्य उत्पन्न भये उस असंख्य अन्धक के गणों को देखि शिवजी आश्चर्य में हो त्रिशूलही में अनेकों अन्धकोंको छेदते व नृत्य करते संग्राम में शोभित हो रहे और जो अन्धकके गण हैं तिनको विष्णु भगवान् चक्र से संहार करनेलगे तिस चक्र से जो अन्धक के गण कट २ के पृथ्वी में गिरे उनके देह का रुधिर पृथ्वी में स्पर्श करतेही अनेक अन्धक होके तैसेही पराक्रम के साथ अनेक शस्त्रोंसे देवताओं से युद्ध करने में प्रवृत्त भये इस चरित्र को देखि शिवजी निजत्रिशूल से अनेकों अन्धकों को छेद क्रोध से अट्टाट्टहास शब्द करनेलगे उस शब्द के करते ही शिवजी के मुखारविन्द से अनेक अग्नि की ज्वाला उत्पन्न हुईं वही ज्वाला देखते २ स्त्रियोंके रूपगण होगये यह देखि कई देवियों के गण विष्णु भगवान् ने उत्पन्न किये तैसेही ब्रह्माजीने भी और स्वामिकार्त्तिकजी ने और इन्द्र ने और यम, वरुण, वायु, कुबेर, वराह इत्यादि देवताओं ने निज २ शक्तियों के गण को उत्पन्न किया महातपाऋषि कहते हैं हे राजन् ! जो शक्तियां जिस अंश से उत्पन्न भईं अब उन अंशों को वर्णन करते हैं सो आप श्रवणकरें योगीश्वरी देवी कामांशसे उत्पन्न भई क्रोधांशसे माहेश्वरी व लोभसे वैष्णवी व मद से ब्रह्माणी व मोह से कौमारी व मत्सर से इन्द्राणी व पैशुन्यसे शिवदूती व असूयासे वाराही ये देवियों के गणरूप हो देवताओं के शरीर से कामादि प्रकट हो युद्ध करने में प्रवृत्त सब देवताओं को युद्ध करते देखि व रुधिर से अन्धक के गण उत्पन्नहोते देखि मातृगणोंने अन्धक का रुधिर पृथ्वी में गिरने के प्रथमही पानकरना निज २

मुखों से प्रारम्भ किया तब तो सब अन्धक की माया देखते २ क्षणही में नष्ट होगई केवल अन्धक शेष रहा तिसको देखि प्रसन्नहो शिवजी ने निजगण करलिया महातपाजी कहते हैं हे राजन्! यह कथा जे प्रीति से श्रवणकरें उनसे मातृगण प्रसन्न हो दिन २ उनकी रक्षाकरते हैं व उनके सब वाञ्छितफल सिद्ध होते हैं अन्तको शिवलोक में जाय अनेक सुखभागी होते हैं व हे राजन्! इन मातृगणों की उत्पत्ति अष्टमी तिथिको भई इस लिये यह तिथि मातृगणोंको बड़ी प्यारी है इस तिथि में इनकी अवश्य पूजा करनी चाहिये॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

राजा प्रजापाल ऋषिजी से प्रश्न करते हैं हे महातपाजी! दुर्गाजी का जन्म आप कहें किस कारण से दुर्गा नवमी तिथिकी स्वामिनी भई यह सुनि ऋषि कहते हैं हे राजन्! पूर्व में एक बड़ा प्रतापी राजा कामरूप देश में भया जिसका नाम सिन्धुद्वीप रहा सो राजा मनमें इन्द्रविजयी पुत्र लाभ होनेके संकल्प से वन में जाय उग्रतप करनेलगा इस कथा को सुनि राजा संदेहकर पूछनेलगे कि महाराज इन्द्रजी ने क्या अपराध सिन्धुद्वीप राजा का कियाथा कि जिस निमित्त यह घोर संकल्पकर राजा तप करने को गया सो आप कहें तब ऋषिजी बोले हे राजन्! इस जन्मका वैर नहीं है सो राजा पूर्वजन्म में त्वष्टा का पुत्र वृत्रासुर नाम था जिसको इन्द्र ने छल से मैत्री करके जल के फेन से बध किया उस वैर को स्मरण करके ऐसा संकल्पकर व्रत करके तप करने लगा इसी प्रकार तप करते २ बहुतकाल व्यतीत होने से देह सूखके प्राणमात्र शेष रहजाने से ब्रह्माजी इस प्रकार उग्रतप को देखि जहां राजा सिन्धुद्वीप तप कररहा था वहां आय कृपासहित राजासे बोले हे राजन्! उठो तुम्हारा

तप सिद्ध भया जिस प्रकार का पुत्र तुम चाहते हो सो शीघ्र प्राप्त होगा इतना कह ब्रह्माजी तो अन्तर्धानभये राजा सिन्धुद्वीप ब्रह्माजी के अमृतरूप वचन को सुनि बड़े आनन्द से नेत्रखोल देखनेलगा जब वहां ब्रह्माजीको न देखा तो निजकार्य सिद्धमान जिस दिशामें वरदान ब्रह्माजीने दिया था उस दिशाको प्रणाम कर तप से निवृत्त हो निजस्थान जानेका विचार किया उसी समय मनुष्यरूप धारण किये सब शृङ्गारों करके भूषित षोड़श वर्ष की मनोहररूप धारण किये एक स्त्री आय काम से पीड़ित हो राजा के समीप खड़ी भई तिसको देखि राजा भी काम से पीड़ित हो पूछनेलगा कि हे सुन्दरि! तुम कौन हो व कहां से किस प्रयोजन को आई हो सो यथार्थ हमसे कहो यह राजा सिन्धुद्वीप का वचन सुनि स्त्री बोली हे राजन्! हम वरुण की स्त्री वेत्रवती नाम नदी हैं आप वरुणजीके अंशावतार हैं जिस दिन से आप निजलोक त्यागके राजपुत्र भये हैं उसी दिनसे आपके वियोग से रात्रिदिन हम दुःखी रहती हैं सो इस समय कोई जन्मान्तरके भाग्यसे आपका दर्शन हुआ सो आप कृपा करके कामाग्नि से हमारी रक्षाकर निजशरीर के स्पर्शरूप अमृत से सींच हमको प्राणदान देवें जिसमें आपका धर्म रहे व हम इस अग्नि के दाह से बचैं पुरुषों के लिये सनातन का यही धर्म है जो आतुर की रक्षा करना तथापि स्त्री की रक्षा अवश्यही योग्य है तिसमें भी कामबाणों से मृत्युके तुल्य होरहीहूं यदि आप धर्म विचार के मेरा संतोष न करेंगे तो मेरे मरजाने से स्त्रीहत्या के भागी होंगे और धर्मशास्त्र में भी सुनाहै कि स्त्री कामपीड़ित हो जिस पुरुष के समीप आवे और उसका जो अनादर करे वह पापीपुरुष कहाता है व ब्रह्महत्याका भागी होता है ऐसी स्त्रीकी धर्मयुक्त वाणी सुनि राजा शोच विचार भावी दैवइच्छा मानि उस स्त्री की इच्छा पूरी करके परमेश्वर का स्मरण करने लगा

उसी समय उस वेत्रवती नाम स्त्री के गर्भसे बारहों सूर्य का तेज धारण किये अत्यन्त प्रकाशमान पुत्र उत्पन्नभया उस पुत्र को देखि राजा प्रसन्न हो वैत्रासुर नाम रक्खा व उसपुत्र को साथ ले निज पुर को आया और वेत्रवती वहांही अन्तर्धान होगई निज पुर में आय राजा ब्राह्मणों को बुलाय यथोचित संस्कार कराय विद्या पढ़ने की आज्ञा दी थोड़ेही काल में वह पुत्र सर्व विद्याओं का पारगामी हो अस्त्रशस्त्रका भी अभ्यास कर उसमें भी परिपूर्ण भया राजा ने निज पुत्र को सबप्रकार समर्थ देखि राज्याभिषेक कर राज्यसिंहासन दे आप परमेश्वर के भजन करनेको वनमें जाता भया तिसके पीछे वैत्रासुर राज्य पाय दिग्विजय करने के विचार से चतुरङ्गिणी सेनाओं का समूह ले पृथ्वी को समुद्र पर्यन्त जीति सब राजाओं से दण्ड ले सातोंद्वीप में अखण्ड आज्ञा स्थापितकर स्वर्ग में जाय इन्द्रको जीतके फिरि अग्नि को जीति इसीप्रकार यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर और ईशान आदि लोकपालोंको जीति स्वाधीन करलिया और इस पीड़ा से व्याकुल हो इन्द्रादि सबदेवता निज २ स्थान से भ्रष्ट हो कैलासपर्वत में शिवजी के समीप प्राप्त हो हाथ जोड़ प्रणामकर निज २ व्यथाको निवेदन किया शिवजीने देवताओं की क्लेशयुक्त वाणी को सुनि वैत्रासुर को अवध्यमान सब देवताओं को साथ ले ब्रह्मलोकमें पहुँचे वहां क्या देखते हैं कि ब्रह्माजी श्रीगङ्गाजी के भीतर डूबी लगाय बैठे गायत्रीमन्त्र का जपकर रहे हैं यह देखि ऊंचेस्वर से देवतों ने पुकार किया कि हे भगवन्! असुरोंकी पीड़ासे स्थानच्युत होके आपके शरण में आये शीघ्र उस भयसे हमारी रक्षा कीजिये इस प्रकार दीनवाणी बारम्बार देवता कह २ पुकाररहेथे सो सुनि ब्रह्माजी ध्यान छोड़ विचारने लगे कि इस समय क्या करना उचित है इस विचार करतेही ब्रह्माजी के आगे अयोनिजा गायत्रीशक्ति कन्यारूप

धारण कर शुक्लवस्त्र भूषणोंसे भूषित किरीट करके शोभित अष्टभुजा हो आठों भुजाओं में शंख, चक्र, गदा, पाश, खड्ग, घण्टा, धनुर्बाण और पीठ पीछे कन्धे से दो तरकस लगे ऐसा विलक्षण रूप से सिंह पै बैठी जल के बाहर आय देवताओं को दर्शन दे बोली हे देवताओ! भय मत करो हम तुम्हारे शत्रुओं को विध्वंस करके तुमको राज्य देंगे यह देवताओं से कह दैत्यों से युद्ध करने लगी उस युद्ध में कन्यादेवी ने निज शरीर से अनेक शक्तियों को उत्पन्नकर दिव्यसहस्र वर्ष युद्ध करके दैत्यों को मार वैत्रासुर को मारा यह वृत्तान्त देखि देवता आनन्द हो हाथ जोड़ देवीजी की स्तुति करनेलगे (अथ स्तुतिः। जयस्व देवि गायत्रि महामाये महाप्रभे। महादेवि महाभागे महासत्त्वे महोत्सवे। दिव्यगन्धानुलिप्ताङ्गि दिव्यस्रग्दामभूषिते। देवमातर्नमस्तुभ्यमक्षरस्थे महेश्वरि। त्रिलोकस्थात्रितत्त्वस्थे त्रिवह्निस्थे त्रिशूलिनि। त्रिनेत्रे भीमवक्त्रे च भीमनेत्रे भयानके। कमलासनजे देवि सरस्वति नमोस्तु ते। नमः कमलपत्राक्षि नमो महामृतश्रवे। सर्वगे सर्वभूतेशि स्वाहाकारे स्वधेऽम्बिके। संपूर्णे पूर्णचन्द्राभे भास्वराङ्गि भवोद्भवे। महाविद्ये महावेद्ये महादैत्यविनाशिनि। महाबुद्ध्युद्भवे देवि वीतशोके किरातिनि। त्वं नीतिस्त्वं महाभागे त्वं गीस्त्वं गौस्त्वमक्षरम्। त्वं ह्रीस्त्वं श्रीस्त्वमोंकारस्तत्त्वे चापि परिस्थिता। सर्वसत्त्वहिते देवि नमस्ते परमेश्वरि। इति) इसप्रकार सबदेवता शिवजी के साथ भगवतीकी स्तुति करचुके कि ब्रह्माजी गङ्गाजी के जल से बाहर निकल देवीजी को सिंहपर बैठी शत्रुओं को नाशकर शिवादि देवताओं की स्तुति सुनि रही हैं ऐसी देखि प्रसन्न हो देवताओं का कार्य सिद्ध मान भविष्य कार्य को स्मरण कर ब्रह्माजी बोले हे देवताओ! तुम सब भय छोड़ निज२ स्थान को जाय सुखपूर्वक राज्य करो और यह देवी हिमाचल में जाय निवास करे इसका पूजन तुम सब नवमी तिथि को प्रति

मास में भक्तिपूर्वक नियम से करना तब तुम्हारे क्लेशको यह दूर करेगी और जे कोई नवमी तिथि को भक्ति से भगवती का पूजन करेंगे वे सर्वसंकटों से मुक्त हो देवीजी की कृपा से अनेक सुखभोग अन्त में शिवसमीप वास पावेंगे और जो नवमी का व्रत करके पिष्ट का भोजन करेंगे उनसे देवी प्रसन्न हो अनेक विघ्नों को दूर कर अभीष्ट वाञ्छितफल देगी ब्रह्माजी कहते हैं हे शिवजी! यह तुम्हारा किया हुआ स्तोत्र सायंकाल प्रातःकाल जो पढ़े उससे सदा भगवती प्रसन्न हो संकट दूर करती है ब्रह्माजी इतना शिवजी से कह देवीजी से कहने लगे हे देवि! भावी हमारा कार्य जो है महिषासुर आदिकोंका बध सोभी ऐसे ही कृपा करके करना यह कह भगवती को हिमाचल पर्वत में स्थापन कर ब्रह्माजी अन्तर्धान भये व सब देवताभी निज २ स्थान में जाय सुखसे राज्य करनेलगे महातपा ऋषि प्रजापाल से कहते हैं हे राजन्! इसप्रकार नवमी तिथि को देवताओं के दुःख दूर करनेको भगवती ने जन्म लिया इसी से नवमी तिथि देवी को प्यारी भई व हे राजन्! इस पवित्र कथा को जो प्रीति से सुने वह सब दुःखों से छूट अनेक सुख पावे व सब पापों से मुक्त हो अन्त में मोक्ष का भागी हो॥

उन्तीसवां अध्याय॥

ऋषिजी कहते हैं हे राजन्! अब सावधान हो दिशाओंकी उत्पत्ति सुनो जब प्रथमही ब्रह्माजीने सृष्टि रचनेका विचार किया तब मन में यह विचार करनेलगे कि हमारी रची हुई सृष्टि कौन धारण करेगा व धारण किये विना किस प्रकार स्थिर रहेगी इस प्रकार ब्रह्माजी विचार कररहेथे कि क्या देखते हैं कि निजकर्णों से दशकन्या सुन्दर रूप धारण किये उत्पन्न भईं सो उत्पन्न होते ही हाथ जोड़ ब्रह्माजी से बोलीं कि हे भगवन्! हमको रहने

का स्थान और पति हमारे योग्य विचार करके दो कि जिन पतियों के साथ हम सब सुखपूर्वक निज २ स्थान में निवास करें व हमारा नामकरण करो जिस नाम से हम लोक में प्रसिद्ध हों यह सुनि ब्रह्माजी बोले हे कुमारियो! तुम सबमें जो प्रथम भई है उसका पूर्वानाम है तिसके पीछे जो भई है तिसका नाम आग्नेयी इसी प्रकार तिसके पीछे दक्षिणा फिर नैर्ऋती व वारुणी व वायवी व कौवेरी व ईशानी व ऊर्ध्वा अधरा यह तुम्हारा क्रमसे नाम होगा व हे कुमारि! जो शतकोटि योजन पृथिवी हम ने रची है तिसमें इच्छापूर्वक पतियों के साथ सुखसे निवासकरो अब हम तुमको तुम्हारे योग्य पति देते हैं सो लो यह कह ब्रह्माजी ने दश लोकपालों को निज २ शक्ति से उत्पन्न कर क्रमही से एक २ देदिया अब उनका नाम कहते हैं प्राची तो इन्द्र को दी इसी प्रकार आग्नेयी अग्नि को दक्षिणा यम को नैर्ऋती निर्ऋति को पश्चिमा वरुण को वायवी वायु को उत्तरा कुबेरको ईशानी शिव को ऊर्ध्वा ब्रह्माजी अपनेको अधरा अनन्त को देके यह कहनेलगे हे कन्यो! तुम लोकमें मनुष्यों करके दशमी तिथि को पूजी जावोगी व दधि भात तुमको प्रिय भोजन होगा और दशमी का व्रत करके जो मनुष्य प्रीति से तुम्हारा पूजन कर दही भात का नैवेद्य देंगे उनके सर्वकाम सिद्ध होंगे व अन्त में शरीर छोड़ विमान में बैठि ब्रह्मलोक को प्राप्त होंगे इतना कह ब्रह्माजी सृष्टि रचने का प्रारम्भ किया महातपा ऋषि कहते हैं हे राजन्! इस प्रकार इन दिशाओं की उत्पत्ति दशमी को भई इस लिये इनको अतिप्रिया है व इसी में पूजने से मनुष्यों को अनेक फल देती हैं॥

तीसवां अध्याय॥

महातपाऋषि राजा से कहते हैं हे प्रजापाल! अब हम कुबेर

जीकी उत्पत्ति वर्णन करते हैं सो श्रवणकरो। पूर्वहीं ब्रह्माजी ने जब सृष्टि रचने का विचार किया तब ब्रह्माजी के मुख से प्रबल वायु उत्पन्नभया सो उत्पन्न होतेही अति प्रचण्ड हो पृथिवी के रेणु व तृणको सहाय ले घोरशब्द करता हुआ लोक को व्याकुल करनेलगा यह वायु का वेग और संसार को घबराया हुआ व्याकुल देखि ब्रह्माजी कहने लगे हे वायो! यह उत्पात छोड़ मूर्तिमान् हो संसार का कल्याण करो तब वायु ने ब्रह्माजी का वचन मान सुन्दर स्वरूप धारणकर अभीष्टधन देवताओं को देनेलगा यह देखि ब्रह्माजी ने मूर्तिमान् वायु का धनद नाम रक्खा व ब्रह्माजी यह कहने लगे कि हे धनद! तुम्हारी उत्पत्ति एकादशी तिथि को भई है इसलिये जो स्त्री वा पुरुष फलाहार व्रत को कर भक्ति से तुम्हारा पूजनकरे तिसके संपूर्ण मनोरथ सिद्ध हों और यह तुम्हारी मूर्ति सर्वपापों के नाश करनेहारी हो इतना कह ब्रह्माजी अन्तर्धान भये ऋषिजी कहते हैं हे राजन्, प्रजापाल! इस कथा को जो एकादशी का व्रत फलाहार करके सुने सो इस लोक में सर्वसुख भोगि अन्त में उत्तम विमान पर बैठि देवताओं के तुल्य स्वरूप धारण कर अप्सराओं करके पूजित स्वर्गलोक में जाय कल्पों तक निवास करै॥

इकतीसवां अध्याय॥

महातपाजी कहते हैं, हे राजन्! अब द्वादशी तिथिके स्वामी स्वयं विष्णुजी भगवान् जिसप्रकार भये सो हम कथन करते हैं प्रीतिसे सुनो जो युग २ में मनुनाम करके पृथ्वीकी रक्षाके लिये अवतार धारण करते हैं सो स्वयंविष्णु भगवान्ही हैं हे राजन्! सोई सर्वसे परात्पर नारायण आदि पुरुष हैं सो आपको इकल्ला देखि अनेक होने की इच्छा से यह विचार करनेलगे कि सृष्टि तो होना कुछ मुश्किल नहीं है परन्तु हमारे विना रक्षा करने-

वाला कौन है इस प्रकार का विचार करतेही एक पुरुष सब अङ्ग अङ्ग से सुरूपवान् उत्पन्न भया उसको देखि नारायण निज अंशोंसे उसके शरीर में प्रवेशकर उसी पुरुष के देहमें निज माया-बल से त्रैलोक्य देखि जन्मान्तर में निज दिया हुआ वरदान स्मरण कर यह कहनेलगे कि हे पुरुष! तुम सर्वज्ञ व सर्वकर्ता सर्व लोकों करके स्तुति को प्राप्त त्रैलोक्यपालन करने में समर्थ व देवों के देव सर्व कार्य करनेमें समर्थ विष्णु ऐसे नामसे लोकों में प्रसिद्ध होगे श्रीनारायणजी विष्णु भगवान् से इतना कह अन्तर्धान भये विष्णु भगवान् बुद्धिपूर्वक विचार करनेलगे कि अब हमको क्या करना उचित है? इसी विचार में योगनिद्रा-वश हो शयन करनेलगे शयन करतेही विष्णुभगवान् के उदर से कमल उत्पन्न भया उसी कमलके नालमें सप्तद्वीपवती पृथिवी सहित वनों के व सातों समुद्रों के उत्पन्न भई व कमलके मध्य में मेरुपर्वत तिसके मध्यमें ब्रह्माजी इन सबों को देखि विष्णु भगवान्ने निद्रा छोड़ सावधान हो हाथों में निजअस्त्रों को धा-रण किया ऋषिजी कहते हैं हे राजन्! विष्णु भगवान्के शस्त्रों का प्रभाव व जिस प्रयोजन के लिये जो शस्त्र हैं औ जिसके रूप हैं सो आप श्रवण करें अविद्या दूर करने की सामर्थ्य जिस शब्द में है सो शंख जलतत्त्व व अज्ञान निवृत्त करनेहारा खड्ग पृथ्वीतत्त्व व कालचक्रादि महाभय विध्वंस करनेहारा जिसका नाम सुदर्शन सो चक्र तेजास्तत्त्व अधर्म नाश करने में समर्थ गदा वायु तत्त्व निज योगमाया का स्वरूप वनमाला व राजस तामस सात्त्विक इनतीन गुणोंके स्वरूप यज्ञोपवीत व ज्ञानस्वरूप पीताम्बर व चन्द्रमा सूर्य इन दोनोंके छलसे श्रीवत्स व कौस्तुभ वायुके वेगको धारण किये गरुड़जी औ त्रैलोक्य रक्षा करनेवाली लक्ष्मी वामभाग में हे राजन्! इन शस्त्रों व भूषणों करके शोभित साथ लक्ष्मी लिये संसार के पालन करने को द्वादशी तिथि को

प्रकट भये इसलिये द्वादशीतिथि विष्णु भगवान् को बहुत प्यारी हैं इस तिथिको जो घृत पीके व्रत करते हैं उनको विष्णु भगवान् प्रसन्न होके इसलोक में अनेकप्रकार के संसारसुख देते हैं और वे अन्त में स्वर्गआदि लोकों में जो अनेकप्रकार का सुखहै सो भोगके अन्तमें विष्णुभगवान् निज समीप मुख्य सेवकोंमें रखते हैं महातपाजी कहते हैं हे राजन्, प्रजापाल! इस प्रकार विष्णु भगवान् की उत्पत्ति हमने वर्णनकिया इस अपूर्व कथा को जो प्रीति से द्वादशी को वा और किसी पुण्य तिथिमें सुनावे व भक्ति से सुने सो सब संसारके दुःखों से छूट नानासुख भोग विष्णु भगवान् के चरण में लीन होय॥

बत्तीसवां अध्याय॥

महातपाऋषि कहते हैं, हे राजन्! अब हम धर्मकी उत्पत्ति वर्णन करते हैं सो आप श्रवण करें प्रथमहीं प्रजापतिजीने जब सृष्टि रचने का विचार किया उस समय ब्रह्माजी के दक्षिण अंग से एक पुरुष सर्वलक्षण संपन्न कानों में कुण्डल धारण किये सफ़ेदवस्त्र व सफ़ेदही पुष्पों की माला से शोभित उत्पन्न भया उसे देखि ब्रह्माजी प्रसन्न हो कहनेलगे हे पुत्र! तुम हमारे पुत्रोंमें ज्येष्ठ हो इसलिये जगत् का पालन करो इतना कह ब्रह्माजी चुप होगये तब ब्रह्माजी का वचन सुनि वह पुरुष वृषभ का रूप धारणकर ब्रह्माजी के समीप आय खड़ा हुआ तिसको देखि ब्रह्माजी कहने लगे हे पुत्र! तुम्हारा स्वरूप सत्ययुग में चार चरण से रहा सोई तुम त्रेतामें अधर्म की वृद्धि होने से तीनहीं चरण रहे फिर अधिक अधर्मकी वृद्धि से द्वापर में तुम्हारे दोई चरण शेष रहे और कलियुगमें प्रचण्ड अधर्म से तीन चरण क्षीण हो एकही चरण से प्रजा का पालन किया व सोई तुमने छःभेद से अर्थात् यजन, याजन, अध्ययन, अध्यापन, दान, प्रतिग्रहसे ब्राह्मणों

में निवास लिया व तीनि भेद से क्षत्रियों में व दो भेद से वैश्यों में और एक भेद से शूद्रों में टिकके पालन किया हे पुत्र! तुम्हारे पालन करने से स्वर्ग, मर्त्य, पाताल ये तीनों लोक निज २ मार्ग में कल्याण पाते हैं व तुम्हारे पाद चारोंगुण द्रव्य क्रिया जाति के स्वरूप हैं व तुम्हारा नाम वेद करके त्रिशृङ्ग अर्थात् संहिता पदक्रम कहाजाता है व ओंकार तुम्हाराही स्वरूप है व उदात्त अनुदात्त स्वरित ये तुम्हारेही भेद हैं तुम्हारा धर्मनाम प्रसिद्ध है हे पुत्र! सोई तीनलोक के प्राण तुमने चन्द्रमा से क्लेश पाय वनमें जाय निवास किया कि जिस समय बृहस्पतिकी स्त्री तारा को चन्द्रमा ने कामवश हो रखलिया व तुम्हारा अनादर किया तब तुमने देवलोक से उदास हो वन में जाय निवास किया तुम्हारी वनयात्रा के पीछे धर्महीन देवताओंको देखि दैत्य सब इकट्ठे हो संग्राम करनेलगे उस संग्राम को देखि नारदजीने आय हमारे से वृत्तान्त निवेदन किया वह सुन हमने आय दोनों को धिक्कारकर चन्द्रमा को समझाय तारा को फिर बृहस्पति को दे संग्राम वारणकिया औ चन्द्रमा से कहा कि देखो! तुम्हारे अधर्म से देवतों की पराजय औ दैत्यों की प्रबलता भई सो ऐसा करना तुमको उचित न था परन्तु जो किया सो हमने क्षमा किया अब ऐसा अयोग्य कर्म कभी नहीं करना इतना कह चन्द्रमा को व सब देवताओं को साथ ले जिस वन में धर्म वृषभरूप धारण किये तप करते थे वहां जाय ब्रह्माजी धर्मको देखि सब देवताओं से बोले हे देवताओ! ये हमारे प्रथम पुत्र हैं सो चन्द्रमा के अधर्म से पीड़ित हो यहां आय तप करते हैं इस लिये तुम सब इनकी स्तुति करो जिसमें तुम्हारा कल्याण हो महातपाजी कहते हैं हे राजन्! देवता सब ब्रह्माजी की वाणी सुनि हाथजोड़ धर्म जी की स्तुति करने लगे (अथ स्तुतिः॥ नमोस्तु शशिसंकाश नमस्ते जगतीपते। नमोस्तु ते देववर्य स्वर्गमार्गप्रदर्शक। कर्म-

मार्गस्वरूपाय सर्वगाय नमोनमः। त्वयैव पाल्यते पृथ्वी त्रैलोक्यं च त्वयैव हि। जनस्तपस्तथा सत्यं त्वया सर्वं तु पाल्यते। न त्वया रहितं किञ्चिज्जगत्स्थावरजङ्गमम्। विद्यते त्वद्विहीनं तु सद्यो नश्यति वै जगत्। त्वमात्मा सर्वभूतानां त्वं हि नः परमा गतिः। इति) इस भांति देवताओं की स्तुति सुनि प्रसन्न हो क्रोध छोड़ि कृपादृष्टि से देखि धर्मजी बोले हे देवताओ! हमने प्रसन्न हो तुम्हारा अपराध क्षमा किया यह धर्म की वाणी सुनते ही देवता सावधान व प्रसन्नचित्त हो धर्म को प्रणामकर बोले हे धर्मजी! आज से हमारे ऊपर कृपा करके हमारे सबके हृदय में निवासकरो यह सुनि ब्रह्माजी बोले हे धर्म! तुम्हारी कृपा से देव, असुर, मनुष्य सबकी वृद्धिहै इसलिये तुम्हारी तिथि त्रयोदशी है त्रयोदशी को जो व्रत करके भक्ति से तुम्हारा पूजन करेंगे वे सब पापों से मुक्तहो अनेक सुख भोग करके देहान्तमें विमान पर बैठि दिव्यरूप धारि स्वर्ग को जायँगे हे पुत्र! इस वन में तुमने तप किया है इसलिये इसका धर्मारण्य नाम होगा औ इस वनमें जो तप करेंगे उनको शीघ्र सिद्धि मिलेगी हे पुत्र! तुम्हारा रहने का स्थान तीनि लोक में है इसमें सम दृष्टि से निवास करके प्रजा पालन करो यह कह ब्रह्माजी अन्तर्धान भये और सब देवताभी निज २ स्थान को गये महातपाजी कहते हैं हे राजन्! इस उत्तम कथा को जो प्रीति से सुनावे व सुने वे दोनों सब पापों से छूट स्वर्ग लोक में जायँ॥

तैंतीसवां अध्याय॥

महातपाऋषि राजा प्रजापाल से कहते हैं हे राजन्! अब हम रुद्रकी उत्पत्ति वर्णन करते हैं जिस प्रकार चतुर्दशी तिथिके स्वामी रुद्र भये सो सुनो जिस समय ब्रह्माजीने सृष्टि रचने का विचार किया तो सबसे प्रथम रुद्रजी को उत्पन्न किया जिससे

उत्पन्न होतेही ऊंचे स्वरसे रोदन करना प्रारम्भ किया इससे रुद्र नाम हुआ तिस रुद्र से ब्रह्माजीने कहा कि हे रुद्र ! तुम सर्व प्रकार समर्थ हो सृष्टि को उत्पन्न करो यह सुनि रुद्रजी जल में प्रवेश कर तप करने लगे हे राजन् ! तिसके पीछे ब्रह्माजी ने सृष्टि रची तिसमें प्रथम दक्ष प्रजापति व मरीच्यादि ऋषियोंको उत्पन्न कर सृष्टि वृद्धि करने की आज्ञादी तब ऋषियों ने निज २ तपोबल से देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, नर, नाग, पशु, पक्षी, वृक्ष, लता आदि नानाविध जीवों को ब्रह्माजी की आज्ञा मानि उत्पन्न किया तिस पीछे प्रजा के कल्याणार्थ वेदभगवान् की आज्ञा से दक्षजीने यज्ञ करने का प्रारम्भ किया उस यज्ञमें सब देवताओं का भाग कल्पना किया परन्तु भावीवश रुद्रभाग न रक्खा जब यज्ञ होनेलगा तब अपना अनादर जानके रुद्रजी तप छोड़ जलसे बाहर हो क्रोध करके भूत, वेताल आदि निज गणों को उत्पन्न कर साथ ले दक्षजी की यज्ञ में पहुंचे वहां जाय यज्ञ का विध्वंस करना प्रारम्भ किया उस समय जो देवता यज्ञरक्षा करने को प्राप्त भये उनको मार भगाया व पूषादेव का दांत तोड़ा व भग का नेत्र फोड़ा तिसी समय क्रतुके दोनों वृषण काट लिये और सब देवताओं को शाप दिया कि तुम सब निज २ ज्ञान को भूलके पशुधर्म को प्राप्तहो ऋषिजी कहते हैं हे राजन् ! उस समयसे देवता सब ज्ञान भूल पशुके तुल्य होगये इस देवताओं का क्लेश व दक्षजी का यज्ञ विध्वंस होना देखि ब्रह्माजी आये उनको देखि हाथ जोड़ प्रणामकर देवताओं ने आदि से सब वृत्तान्त निवेदन किया उसको सुनि ब्रह्माजी देवताओं से बोले, हे पुत्रो ! बड़ा अनर्थ तुमने किया जो हमारे ज्येष्ठपुत्र व सबसे प्रबल तपस्वी तिनको भाग न दिया अब शीघ्र रुद्रजीके समीप चल हाथजोड़ स्तुति करके उनके क्रोध को शान्त करावो जिसमें तुम्हारा अपराध क्षमा करें यह ब्रह्माजी का बचन सुनि देवता

सब शिवजी के समीप जाय स्तुति करने लगे (अथ स्तुतिः ॥ नमो देवातिदेवाय त्रिनेत्राय महात्मने। रक्तपिङ्गलनेत्राय जटामुकुटधारिणे। भूतवेतालजुष्टाय महाभोग्युपवीतिने। भीमाट्टहासवक्त्राय कपर्द्दिन्स्थाणवे नमः। पूष्णोदन्तविनाशाय भगनेत्रहराय च। भविष्यवृषचिह्नाय महाभूतपते नमः। भविष्यत्रिपुरान्ताय तथान्धकविनाशिने। कैलासवरवासाय करिकृत्तिविधारिणे। विकरालोर्ध्वकेशाय भैरवाय नमोनमः। अग्निज्वालाकरालाय शशिमौलिकृते नमः। भविष्यकृतकापालिव्रताय परमेष्ठिने। तथा दारुवनध्वंसकारिणे तिग्मशूलिने। नमो वेदान्तवेद्याय यज्ञमूर्ते नमोनमः। दक्षयज्ञविनाशाय जगद्भयकराय च। विश्वेश्वराय देवाय शिवशम्भोभवाय च। कपर्दिने करालाय महादेवाय ते नमः) इस प्रकार देवताओं की स्तुति सुनि प्रसन्न हो शिवजी बोले हे देवताओ! हम प्रसन्न हैं जो वाञ्छा हो सो मांगो यह मधुरवाणी सुनि देवता बोले कि हे भगवन्! आपकी कृपा से हमारी बुद्धि व विद्या सब जो अस्त होगई है सो पूर्व तुल्य फिर हो यह सुनि महादेवजी बोले हे देवताओ! तुम सब पशु होके हम से प्रार्थना करो तो हम तुम्हारा पशुत्व दूर करें तब तुम्हारी बुद्धि निर्मल होय यह शिवजीकी वाणी सुनि देवता अङ्गीकारकर पशुरूप धार शिवजीके शरणगये उन्होंको देखि शिवजीने मुसक्याय अपनी माया देवताओं से खींचलिया उसी समय सब देवता निर्मलचित्त हो वेदशास्त्रविज्ञान व तपरहस्य करके युक्तभये यह देखि शिवजी से ब्रह्माजी बोले कि हे महादेव! आज से तुम्हारा पशुपतिनाम वेद में व लोक में प्रसिद्ध होगा व चतुर्दशी तिथि तुम्हारी प्रिया होगी इस तिथि को जो व्रत करके तुम्हारा पूजन भक्ति से करेंगे उन के सब मनोरथ सिद्ध होंगे और जो चतुर्दशी को वेदविद् ब्राह्मण को बुलाय तुम्हारी प्रीतिनिमित्त गोधूमान्न भोजन करावेंगे वे सदा तुमको प्रिय होंगे व तुम्हारे समीप बास पावेंगे इस

प्रकार शिवजी ब्रह्मा की वाणी सुनि प्रसन्नहो सब देवताओंको वर दे औ जिनके अङ्गभङ्ग होगये युद्ध में उनको भी सर्वाङ्गसुन्दर करके अन्तर्धान भये व ब्रह्माजी भी निजलोकको सिधारे महातपाजी कहते हैं हे राजन्! प्रजापाल उस समय से चतुर्दशी शिवजी की तिथि कहाई इस प्रकार परम पवित्र कथा हमने वर्णन किया इसको जो श्रवण करावै व चतुर्दशी को भक्ति से श्रवण करे वे दोनों सबपापों से मुक्त हो शिवलोक पावें॥

चौंतीसवां अध्याय॥

महातपा ऋषि राजा प्रजापाल से कहते हैं हे राजन्! अब हम पितरों की उत्पत्ति वर्णन करते हैं सो आप सावधान होके सुनें जिससमय ब्रह्माजीने प्रजा के उत्पन्न करनेको विचार किया तो एकचित्तहो ध्यान करनेलगे तब उस समय ब्रह्माजी के देह से कई पुरुष धूमकेसे वर्ण जिनके सो निकले व उत्पन्न होतेही सबके सब पुकारनेलगे कि हमको सोमपान दो हम सोम पीवैंगे यह कहि २ ऊर्ध्वमुख करके आकाश में जानेका विचार करते देखि ब्रह्माजी बोले हे पुत्रो! तुम सब पितरनाम से गृहस्थियों के पूज्य होगे और नान्दीमुख संज्ञा होगी इतना कह ब्रह्माजी ने सूर्य भगवान् का दक्षिणायनमार्ग पितरों को दिया तब ब्रह्माजी से सब पितर बोले कि हे भगवन्! हमारे निमित्त कोई वृत्ति दो जिसमें हम सुखी रहैं इस वचनको सुनि ब्रह्माजी बोले हे पितरो! तुम अमावास्या तिथि के स्वामी हो उस तिथि को जो श्रद्धा से पिण्डदान व कालेतिलके साथ जलसे तर्पण करेंगे उससे तुम्हारी तृप्ति होगी व भक्ति से जो अमावास्या का व्रत करके पिण्डदान पूर्वक तर्पण अथवा केवल तर्पण कालेतिलों के साथ जलसे करें तिनसे प्रसन्न हो शीघ्र वाञ्छा पूरी करना यह कह ब्रह्माजी अन्तर्धान भये और पितर निजलोक को सिधारे॥

पैंतीसवां अध्याय॥

महातपाजी राजा प्रजापाल से वर्णन करते हैं कि हे राजन्! अब हम सोम की उत्पत्ति वर्णन करते हैं सो आप श्रवण करें ब्रह्माजी के मानस पुत्रों में जो अत्रिऋषिथे उनसे सोमनाम पुत्र उत्पन्न भया तिस सोम को दक्षप्रजापतिजी ने सत्ताईस कन्या अपनी ब्याहिदीं वे सब कन्या सोमके समीप सेवा में रहने लगीं उन सत्ताईसों में रोहिणी नाम जो दक्ष की कन्या है उस में सोम आसक्त हो औरों से उदास होगया इस व्यवस्था को सबोंने देखि निज २ निरादर होनेसे जाय अपना दुःख निज पिता दक्षजी से निवेदन किया सो अनुचित सुनि दक्षप्रजापति क्रोध के वश हो चन्द्रमाजी के समीप आय कहने लगे कि हे सोम! तुमको हमने सत्ताईस कन्या दी हैं वे सब तुम्हारी स्त्री हैं उनमें न्यूनाधिक प्रीति करना तुमको अनुचित है यह सुनि चन्द्रमा रोहिणी के वश हुआ दक्षजी के बचन को अङ्गीकार न किया तब दक्षजीने चन्द्रमा का बिषम स्वभाव देखि शाप दिया कि हे चन्द्र! जो तुमने किसी अभिमान से हमारी आज्ञा को न माना इस लिये शीघ्र क्षयरोग को प्राप्त हो यह कहि दक्षजी तो निज स्थान को चले गये व चन्द्रमा दक्ष के शाप से क्षीण होगये तब चन्द्रमाजी के क्षीण होने से देवता, मनुष्य, पशु, वृक्ष, ओषधियां ये सब नष्ट होनेलगे तब सब इकट्ठे हो व्याकुल चित्त विष्णु भगवान् के शरण में जाय हाथ जोड़ प्रणामकर पुकारनेलगे तब इनसबों का दीन वचन सुनि विष्णु भगवान् बोले कि क्या क्लेशहै सो कहो जिससे दुःखी होरहे हो यह विष्णु भगवान् की वाणी सब देवता आदिकोंने सुनि सारावृत्तान्त दक्ष का शाप व चन्द्र के क्षय होने से अपना सबका नष्ट होना कह सुनाया सो सुनि विष्णुभगवान् चुप हो शिवजी का व ब्रह्माजी

का ध्यान करनेलगे उसी समय शिवजी व ब्रह्माजी दोनों आय प्रकटभये तब वासुकी सर्प का ध्यान किया वहभी आये यह देखि सब देवताओं को साथ ले मन्दराचल को मथानी बनाय समुद्र को मथनेलगे तब समुद्र से फिर सोमकी उत्पत्ति भई सो देखि सब चराचर निज २ प्राण पाय प्रसन्न भये व वृक्ष, ओषधी, पशुआदि सब मूर्च्छा छोड़ चैतन्य हो निज २ व्यवहार में लगे व उसी समय से शिवजीने चन्द्रमाको निज मस्तक में धारणकिया तब ब्रह्माजी ने चन्द्रमा को पूर्णिमा तिथि का स्वामी बनाया व यह कहा कि हे चन्द्रमाजी! जो भक्ति से पूर्णिमा तिथि का व्रत करके तुम्हारा पूजन जिस काम के लिये करेगा उसका वाञ्छित शीघ्र सिद्ध होगा और जो पूर्णिमा का व्रत निष्काम करेंगे वे कान्ति औ पुष्टि, धन, धान्यसे युक्त हो अनेकप्रकार का संसार सुख भोगि अन्त में स्वर्गवास पावेंगे महातपाऋषि कहते हैं हे राजन्, प्रजापाल! इस कथा को जे पूर्णमासी के दिन व्रत करके श्रवण करें वे सब क्लेशों से मुक्तहो स्वर्गवास पावें व इस लोक में उनको सब प्रकार का सुख प्राप्त होय॥

छत्तीसवां अध्याय॥

महातपा ऋषि राजा से कहते हैं कि हे राजन्, प्रजापाल! जो प्रथमही हमने त्रेतायुगमें गौरमुख ऋषि के कथाप्रसंग में मणिज वीरों की कथा वर्णन की है सो फिर वर्णन करते हैं आप साव-धानहो श्रवणकरें हे राजन्! मणिजवीरों में सुप्रभनाम जो था सो आपही हैं और शेष जो चतुर्दश वीर हैं सो महाबली त्रेता-युगमें जन्मलेंगे सो भविष्य मणिजवीरों का नाम सुनो हे राजन्! सुरश्मिनाम जो मणिजवीर है सो शशकर्ण नाम राजपुत्र महा-बली होगा व शुभदर्शन नाम जो वीर है सो पांचालनामसे वि-ख्यात होगा व सुशान्तिनाम जो है सो अङ्गराजा के वंशमें जन्म

लेगा व सुन्दरनाम जो है सो अर्थगनाम प्रसिद्ध होगा और सुन्दनाम वीर मुचुकुन्दनाम से विख्यात होगा सुमना वीर सोमदत्तनाम से प्रसिद्ध होगा व शुभनाम वीरकी संवरण नाम से ख्याति होगी सुशीलनाम वीर सुदाननाम से व सुखदनाम वीर सुपत्ति नाम से प्रसिद्ध होगा शम्भुनाम वीर सेनापति नाम से व कान्तनाम मणिजवीर दशरथ नामसे प्रसिद्ध होगा औ सोमनाम वीर जनक नामसे विख्यात होगा ये सब राजा त्रेतायुगमें महाबलवान् हो धर्म से प्रजापालनकर औ बड़े २ दक्षिणा का अनेक यज्ञकर अन्तमें सब त्याग उत्तम तीर्थमें जाय तप करके फिर निज २ लोकको प्राप्त होंगे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति महातपा ऋषि के मुखकमल से राजा प्रजापाल विचित्रकथा सुनि बड़ेहर्ष को प्राप्त हो संसार की विषयवासना छोड़ राज्याधिकार पुत्र को दे वृन्दावन में जाय तप करने लगा व महातपाऋषि परमेश्वर में चित्त लगाय समाधि योग से शरीर त्याग नारायण के स्वरूप में लीन होगये व राजाप्रजापाल वृन्दावन में तप करते श्रीगोविन्द भगवान् को स्तुतिसे प्रसन्न करता भया सो स्तुति हम वर्णन करते हैं हे धरणि! श्रवणकरो (नमामि देवं जगताञ्च मूर्तिं गोपेन्द्रमिन्द्रानुजमप्रमेयम्। संसारचक्रक्रमणैकदक्षं पृथ्वीधरं देववरं नमामि। भवोदधौ दुःखशतोर्मिभीमे जरावृते कृष्णपातालमूले। तदन्तएको ददते सुखं यो नमोऽस्तु ते गोपतये शिवाय। व्याध्यादियुक्तः पुरुषो ग्रहैश्च संघट्टमानः पुनरेव देव। नमोऽस्तु ते युद्धरते महात्मन् जनार्दनोपेन्द्रसमस्तबन्धो। त्वमुत्तमस्सर्वविदां सुरेश त्वया ततं विश्वमिदं समस्तम्। गोपेन्द्र मां पाहि भवे पतन्तं संसारचक्रक्रमणे गभीरे। आविर्भवत्यच्युत देहिनां यत्परापरं देवगुरो नमस्ते। त्वन्मायया मोहितानां सुरेश कस्ते मायान्तरते द्वन्द्वधर्मा। अगात्रमस्पर्शमरूपगन्धमनाममनिर्देशमजं वरेण्यम्। गोपेन्द्र त्वा-

मुपासन्ति धीरास्ते मुक्तिभाजो भवबन्धमुक्ताः। शब्दातिगं व्योमरूपं विमूर्तिं विकर्मिणं सुखबोधं वरेण्यम्। चक्राब्जपाणिं तु तथोपचारादुक्तं पुराणे सततं नमामि। त्रिविक्रमं क्रान्तजगत्त्रयं च चतुर्मूर्तिं विश्वगतं क्षितीशम्। शंभुं विभुं भूतपतिं सुरेशं नमाम्यहं विष्णुमनन्तमूर्तिम्। त्वं देव सर्वाणि चराचराणि सृजस्यथो संहरसे त्वमेव। मां मुक्तिकामं नय देव शीघ्रं यस्मिन्गता योगिनो नोपयान्ति। जयस्व गोविन्द महानुभाव जयस्व विष्णो जय पद्मनाभ। जयस्व सर्वज्ञ जयाप्रमेय जयस्व विश्वेश्वर विश्वमूर्ते। इति) वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस प्रकार विष्णुभगवान् की स्तुतिकर राजा प्रजापाल शरीर छोड़ सनातन नारायण के चरण में लीन भये॥

सैंतीसवां अध्याय॥

इस प्रकार श्रीवाराह भगवान् के मुख से यह उत्तम कथा सुनि धरणी प्रश्न करती है हे भगवन् ! आपकी भक्ति स्त्री वा पुरुष किस प्रकार से करें जिसके करने से शीघ्र इस लोक में संसारसुख व अन्त में उत्तम गति को प्राप्तहों सो आप कृपाकरके यथार्थ वर्णन करें यह धरणी की प्रार्थना सुनि वाराहजी बोले हे धरणि ! हम भाव से प्रसन्न होते हैं जिस प्रसन्नता से लोक परलोक के पदार्थ सब सुलभ हैं और भाव विना धन से वा यज्ञ से वा योग से व्रत से तप से तीर्थ से अथवा और अनेक काय क्लेश से हमारा मिलना व कृपा होना दुर्लभ है इस लिये हमारे प्रसन्न होने का मुख्य कारण भक्ति है सो हे धरणि ! जो पुरुष अथवा स्त्री मन वचन कर्म करके हमारे भक्त हैं उनके हितके वास्ते अब व्रत कहते हैं सो सुनो व्रत करनेवाले को अहिंसा अर्थात् जीव न मारना, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, झूठा न बोलना, कोई पदार्थ किसी का उसकी आज्ञा विना न लेना व आठप्रकार के

भोगों से बचना यह व्रत करनेवालों का साधारण धर्म है इस धर्म से जो सदा रहते हैं हे पृथिवि! उनका व्रत सफल होताहै और चार प्रकार का व्रत होता है एकभक्त नक्त प्रायश्चित उपवास ये चारों प्रकार के व्रत कामनावालों की शीघ्र वाञ्छा पूर्ण करतेहैं इस विषय में अब एक इतिहास वर्णन करते हैं हे धरणि! सो सुनो पूर्वही ब्रह्माजी के पुत्र उग्र तप करनेवाले अरुणिनाम ऋषि देविकानाम नदी के तट समीप उत्तम वन देखि तप करने लगे सो अरुणिऋषि किसी समय देविकाजी में स्नान करने के निमित्त जाय किनारेपर मृगचर्म व कमण्डलु धर नदी में हलके स्नानकरि गायत्री मन्त्रका जप करनेलगे उसीसमय धन्वा बाण हाथ में लिये क्रूररूप धारण किये महाभयंकर एक व्याध मृगचर्म व कमण्डलु हरने के विचार वहां आय पहुँचा उसको देखि ऋषिजी भय से व्याकुल हो नारायण का ध्यान करनेलगे व व्याध ने ऋषिजी के मारने के विचार से बाण को धन्वासे खैंचि दृढ़ लक्षकर ऋषि के तरफ़ देखि छोड़ने का विचार किया उसी समय ऋषिजी के देखतेही नारायण की माया से भयभीत हो बाण न छोड़सका परन्तु धन्वा बाण दोनों हाथ से भूमि में पटक हाथ जोड़ व्याध कहनेलगा हे ब्रह्मन्! मैं आपके मारने को क्रूरचित्तसे यहां आया सो आपके देखतेही वह मेरी दुर्बुद्धि कहां गई और मेरे विचार यह कहां से आया कि मैंने इसी शरीर से एक हज़ार ऋषियों का बध व दश हज़ार स्त्रियों का बध किया इस प्रकार का मैं अधम पापात्माहूं हे ब्राह्मणोत्तम! मेरी परलोक में क्या गति होगी कई कल्पोंतक मेरा नरकभोग से उद्धार न होगा इसलिये अबतक जो अनर्थ हुआ सो हुआ अब आपके दर्शन से मेरा आत्मा शुद्ध हुआ आपके समीप आपकी आज्ञा से मैं तप किया चाहताहूं सो उत्तममार्ग कृपाकरके आप मुझे उपदेश करें जिसके करने से घोरपापों से छूट उत्तम गति

पाऊं यह व्याध का वचन सुन पापात्मा ब्रह्मघात करनेवाला जान ऋषिजी ने कुछ उत्तर न दिया तथापि वह व्याध वहांहीं ऋषिजी के समीप देविका नदी में स्नानकर व्रतपूर्वक तप करने लगा व ऋषिजी स्नान करके जिस वृक्ष के नीचे रहते थे वहां जाय ध्यानकर जप करनेलगे इसीप्रकार कई दिनों के अनन्तर किसी समय फिरि देविकाजीमें स्नान करनेको ऋषिजी गये जब स्नान करनेलगे उसी समय एक व्याघ्र आय नदी के किनारे खड़ा हुआ व ऋषिजीको जलके भीतर देखि क्षुधा से व्याकुल हो मारने का विचार किया और ऋषिजी ने भी जाना कि इस दुष्ट से आज बचना दुर्लभ है यह विचार ऊंचेस्वर से नारायण का नाम ले जल के भीतर छिपरहे इस तमाशा को देखि व्याध ने अपने आसन से हाथ में धन्वा ले ऐसे शीघ्र से बाण मारा कि एकही बाण में व्याघ्र उसी जगह गिरके प्राण छोंड़ उत्तम पुरुष का स्वरूपधार ऊंचेस्वर से पुकार करनेलगा कि हे ऋषे! आपकी कृपा से हम अधमयोनि के क्लेश को छोंड़ श्रीविष्णु भगवान् के समीप जाते हैं इसवाणी को सुनि भय छोंड़ ऋषिजी जल से बाहर हो क्या देखते हैं कि व्याघ्र तौ व्याध के बाण से मरा पड़ा है व उसी के समीप एक उत्तमपुरुष उत्तमभूषण औ वस्त्र से शोभित खड़ा है उसको देखि ऋषिजीने पूछा कि आप कौन हैं तबतो ऋषिजी से वह पुरुष कहनेलगा हे भगवन्! आप मेरा पूर्वजन्मका वृत्तान्त श्रवणकरें मैं क्षत्रियकुलमें उत्पन्न दीर्घबाहुनामक राजाहूं सो मैं चारों वेद व वेदांग शास्त्र संपूर्ण पढ़ि महाअभिमान के समुद्र में डूबि ब्राह्मणों का अपमान करने लगा व यही मेरे विचार में आया कि ब्राह्मणों से अधिक मेरे को ज्ञान है इसलिये ब्राह्मणों को किसी कर्म में क्यों बुलाना यह मेरे विचार को ब्राह्मणों ने जानि मुझे शाप दिया कि रे दुष्ट, कुपात्र! तू जाय निर्जनवन में व्याघ्र हो और ब्राह्मणों के अप-

मान से पशुबुद्धि होके शास्त्र पढ़ेहुये तेरे विस्मृत होजायँ व छठे छठे दिन जो तेरे समीप जीव दीखैं सोई तेरा आधार होगा हे ऋषीश्वर ! ब्राह्मणोंका इसप्रकार का घोरशाप सुनि व्याकुल हो मैंने हाथ जोड़ उन्होंसे बहुत प्रार्थना किया कि हे ब्राह्मणो ! मेरी क्रूरतासे आप सबों ने कृपाकरके शापदे मेरा पाप दूर किया अब कृपा करके शाप मोक्ष कीजिये यह मेरी प्रार्थना सुनि ब्राह्मण बोले हे राजन् ! कुछ काल तो यही होगा कि जो जीव तेरे सम्मुख छः दिन के अनन्तर मिलेगा उसी से क्षुधा शान्ति होगी और जब एक बाण लगने से तेरे प्राण कण्ठगत होंगे उस समय ब्राह्मण के मुख से नारायण यह शब्द जब सुनेगा तब तेरी स्वर्गगति होगी यह कहि ब्राह्मण तो चलेगये व हम उसी समय से सब शास्त्र व वेद भूल क्रूरस्वभाव हो व्याघ्र भये और छठे छठे दिन जो सम्मुख जीव मिलता उसी से प्राणपोषण करते सो आज छठा दिनहै क्षुधा से पीड़ित भावीवश आप मिले सो जबतक आपको हम माराचाहैं उसीसमय हमारा शापान्त समय प्राप्त हुआ कि बाणभी लगा व आपके मुखारविन्द से नारायण का नामभी सुना अब हम विष्णुभगवान् के समीप जाते हैं इतना कह दोनों हाथ ऊंचा उठाय ऊंचे स्वरसे पुकारने लगा कि भाई ! जिसको निजकल्याण की वाञ्छाहो सो मेरे वृत्तान्त को देखि मेरे वचन को प्रीति से सुनि निश्चय करे देखो हम ब्राह्मणों के शाप से नरकरूप व्याघ्रयोनि में पर अनेक ब्राह्मणवध गोवध करनेवाले सो भी बाण से मृत्युके समय दूसरे के मुखसे नारायण का नाम श्रवण किया उस पुण्यसे हम पापयोनि से मुक्त हो नारायण के धाम को जाते हैं जो कोई ब्राह्मण की पूजा करके उसकी कृपा से नारायण का नाम श्रवण करके प्रीति से जप करते हैं वे जीवन्मुक्त होते हैं औ अन्तमें नारायण स्वरूप होते हैं यह निस्संशय जानो सत्य है यह तीन बार कह

फिर कहनेलगा हे संसार के मनुष्यो! ब्राह्मण जङ्गममूर्ति दूसरा नारायण है इसी के कृपासे पुरुष कूटस्थ अर्थात् चराचर व्यापी नारायण को प्राप्त होता है इतना कह उत्तम विमान पर बैठ अप्सराओं करके सेवा को प्राप्त स्वर्ग को गया इस चरित्र को देखि ऋषिजी व्याध से कहनेलगे हे व्याध! तुमने हमको व्याघ्र से रक्षा किया इस लिये हम तुमसे बहुत प्रसन्न भये जो इच्छा हो सो वर मांगो व्याध इस कृपायुक्त ऋषिजी की वाणी को सुन कहने लगा कि हे विप्रेन्द्र! इस आपके कृपायुक्त वचन कहने से हम अहोभागी भये क्योंकि इससे अधिक वर क्या होगा जो आप मेरे साथ भाषण करते हैं यह सुन ऋषिजी बोले हे व्याध! तुमने पूर्वही घोर पापसे व्याकुल हमसे तप करने का उपदेश पूछा उस समय पापस्वरूप तुम्हारा देखके हम चुपरहे अब इस तीर्थ के सेवन से देविकाजी के पुण्यजल के स्नानपान से व हमारे दर्शन से विष्णुनाम श्रवण से तुम्हारा संपूर्ण पाप नष्ट हुआ अब निष्पाप हो व वरके योग्य हो इस लिये जो इच्छा हो सो एक वर मांगो यह अरुणिऋषि की करुणामयी वाणी सुनि व्याध बोला हे महाराज! यही वर मैं चाहताहूं कि नारायणजी जिस प्रकार से प्राप्त होते हों सो आप मुझे उपदेश करें यह व्याधकी वाणी सुनि ऋषिजी बोले हे व्याध! जो पुरुष नारायण के प्रीति करने को व्रत करते हैं नियम व भक्तिसे वह पुरुष अवश्य नारायण को प्राप्त होते हैं इस लिये हे पुत्र! तुम भी नियम से व्रत करो व व्रत में झूठा वचन नहीं बोलना व देवल का अन्न नहीं भोजन करना इस नियम से इसी स्थानमें इच्छापूर्वक तप करो तुम्हारी वाञ्छा सिद्ध होगी॥

अरतीसवां अध्याय॥

श्रीवाराहजी धरणी से कहते हैं कि हे धरणि! उसी पवित्र

स्थान में अरुणिऋषि को गुरु मानि उनके उपदेश में दृढ़ हो ऋषिजी का स्मरण करताहुआ सूखे गिरेहुये वृक्षों के पत्ते खाय के तप करनेलगा सो व्याध किसी समय क्षुधा से व्याकुल हो वृक्ष से गिरते पत्ते देख खाने के विचार से हाथ में लिया उसी समय आकाशवाणी हुई कि हे व्याध! इसे मत खा यह पत्ता नहीं है सकट है यह सुनि हाथसे पत्ता पृथ्वी में त्याग दूसरे वृक्ष का लिया तब भी वोही वाणी सुनी उसे भी छोड़ तीसरे का लिया फिर वोही वाणी भई कि यह पत्र नहीं है सकटहै इसीप्रकार जिस पत्ते को खाने को उठाता है उसी को आकाशवाणी द्वारा निषेध सुनि त्याग देता है इस प्रकार सब पत्तों को सकट मान कई दिनों तक जल पी करके तप करतारहा इसी तरह निराहार व्रत करके तप करतेही उस स्थान में दुर्वासाऋषि आय पहुँचे प्राणमात्र शेष व तपश्चर्या के तेज से प्रचण्ड अग्नि के तुल्य प्रकाशमान व्याध को देखि दुर्वासाजी दया करके कहने लगे कि हे तपोमूर्ते! हम क्षुधा से पीड़ित हैं सो अन्न दो यह ऋषिकी वाणी सुनि हाथ जोड़ प्रणामकर बोला हे ऋषे! आपके दर्शनसे हम कृतार्थ भये व हमारा जन्म सफल भया यह कहि कहनेलगा हे ऋषीश्वर! इस समय श्राद्धकाल है सो बड़ी भाग्य से आप प्राप्त भये हैं आज हमारे पितर आपके भोजन से अनन्त तृप्ति को प्राप्त होंगे सो आप वृक्षों के स्वयं झड़े हुये पत्ते वर्तमान हैं सो प्रीति से भोजन कीजिये यह सुनि दुर्वासाजी शुद्धभाव से प्रसन्न हो परीक्षाके लिये व्याध से कहनेलगे हे व्याध! हमको क्षुधा सताती है सो जव, गोधूम, चावल, मूंग, उड़द इत्यादि उत्तम अन्नों के विविधभांति का भोजन इच्छापूर्वक किया चाहते हैं किस प्रकार पत्तोंसे तृप्ति होगी इस प्रकार ऋषिजी की वाणी को सुनि व्याध चिन्ता से दुःखी हो विचार करने लगा कि ऋषिजी का संतोष किस प्रकार हो जिसमें हमारा धर्म रहे क्योंकि जो ऋषिजी

चाहते हैं उन पदार्थों में एक भी नहीं प्राप्त होसक्ता अब केवल इनके कोपाग्निमें भस्महीं होनाहै वाराहजी कहते हैं हे धरणि! ऐसा व्याकुल हो व्याध चित्तमें विचार रहाथा कि परमेश्वर की कृपा से सर्व पदार्थों से परिपूर्ण सुवर्ण का एक पात्र आकाश से अकस्मात् आता दीखा उस पात्र को देखि व्याधने दोनों हाथों से प्रणामकर ले दुर्वासाजी के समीप जाय बोला हे ऋषे! आप इच्छापूर्वक भोजन करें इस पात्र में सब पदार्थ आपके लिये ईश्वर ने दिये हैं व जबतक आपकी इच्छा हो तबतक यहां खुशी से निवास करें और हम भिक्षा करने को इस वन से थोड़ी दूर बस्ती है उसमें जाते हैं शीघ्र आवेंगे यह कहि व्याध भिक्षा को चला तो उसी वनके वृक्षों ने अनेक प्रकार का व्यंजन छः रसों करके युक्त भांति २ के पात्रों में रख पुरुष का रूप धार औ ले ले खड़े भये उन सबों को ले लौटि ऋषिजी के समीप आय विविध अन्न और रसों से पूर्णपात्र आगे धर प्रणामकर हाथ जोड़ खड़ा हो यह कहने लगा कि हे ऋषिसत्तम! अब आप कृपा करके हस्त पाद प्रक्षालन करें औ उत्तम आसनपर बैठ इच्छापूर्वक भोजन करें यह व्याध का वचन सुनि ऋषिजी कहनेलगे कि हे व्याध! हमारे पास जलपात्र है नहीं औ नदी जाने की सामर्थ्य नहीं किस तरह हस्तपाद प्रक्षालन करें तब तो ऋषिजी की इस प्रकार की वाणी सुनि व्याध ने विचारा कि ऋषिजी मेरी परीक्षा लेते हैं यह जानि श्रीगुरु को और नारायण को ध्यान कर देविका नदी के समीप जाय हाथ जोड़ सावधान हो स्तुति करने लगा कि हे माता मैं व्याध हूं नीच योनि पापात्मा ब्रह्मघाती तथापि आप की शरण में आया हूं शरणागत की रक्षाकरना समर्थ को उचित है हे देविके! मेरे को शास्त्र का ज्ञान व महात्माओं का संग है नहीं इस लिये मैं देवताओं को नहीं जानता व कोई मन्त्र भी नहीं जानता केवल तेरी शरण

में श्रीगुरु का ध्यान करता निज क्षेम का चिन्तवन कररहा हूं हे देविके! नदियों में आप उत्तम हैं यह मेरा वृत्तान्त जानिके निमन्त्रित दुर्वासाऋषि के समीप चल निज अमृतरूप स्वच्छ जल से उनकी इच्छा पूर्णकर मेरे को ऋषिजी के शाप से रक्षा कर यह विनय वाणी व्याध की सुनि देविकाजी प्रसन्न हो अपनी लहरियों की झकोर से वनकी भूमि पवित्र करती ऋषिजी के समीप पहुँची यह आश्चर्य देखि व्याध की तपश्चर्या सफल मानि प्रसन्न हो देविकाजी के पुण्य जलसे हाथ पैर धोय आचमन कर शुद्ध हो इच्छापूर्वक भोजन करनेलगे सो तृप्ति से भोजन कर हाथ मुख धोय पवित्र हो हँसके व्याध से बोले हे तपस्विन्! आजसे लोकमें सत्यतपा नाम करके प्रसिद्ध होगे इतना कहि फिर बोले कि हमारे आशीर्वाद से साङ्गवेद सहित रहस्य पद व क्रमके साथ ब्रह्मविद्या और पुराण प्रत्यक्ष हो तुमको प्राप्त होय यह ऋषिजी की करुणामय वाणी सुनि व्याध बोला कि हे भगवन्! नीचकुल में मेरा जन्म तथापि कर्महीन व्याध विद्या की धारणा किस प्रकार होगी यह व्याध का वचन सुनि ऋषिजी बोले कि हे सत्यतपा! अब वो तुम्हारा पूर्व शरीर दूर होगया यह तपोमय दूसरा शरीर भया इस शरीर से वेद शास्त्र के पात्र भये सो संपूर्ण वेद शास्त्र और पुराण आदि से संपन्न हो ज्ञान विज्ञान करके युक्त होगे यह हम सत्य कहते हैं इस ऋषिकी वाणी को सुनि प्रसन्न हो सत्यतपा बोले कि तथास्तु॥

उन्तालीसवां अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! सत्यतपा ऋषि दुर्वासाजी की मनोहर वाणी को सुन अपने को कृतकृत्य मानि नम्र हो हाथ जोड़ विनय से कहनेलगे कि भगवन्! आपने कृपा करके दो प्रकार के शरीर वर्णन किये सो वे दोनों कौन २ हैं सो आप

खुलासा कथनकरें जिसमें हमारा संदेह निवृत्त होय यह सुनि ऋषि कहने लगे हे सत्यतपाजी ! शरीर सुख दुःखों के भोग का पात्र है सो इसकी कई अवस्था जन्म से होती हैं विचार करो कि प्रथम अवस्था जन्म होते ही ज्ञानरहित सर्व प्रकार असमर्थ होती है फिर वोही है शरीर उस अवस्था के निवृत्त होनेपर युवावस्था में काम, क्रोध, मद, मत्सरता, लोभ, मोह करके युक्त अथवा दयाधर्म शील संतोष करके युक्त यथा संग वश होती है सोई वृद्धावस्था में सब अङ्गों से शिथिल पूर्व अवस्था के किये शुभ अशुभ कर्मों का शोचपात्र होती है सो हे सत्यतपा ! पूर्व अवस्था में तुमने अनेक पाप किये कि जिसका ठिकाना नहीं तिस करके तुम ऐसे मलीन भये कि देखने योग्य भी नहीं रहे औ संभाषण करने की कौन कथा सोई तुम उत्तम संग अरुणजी का प्राप्त होनेसे सत्कर्मके फल करके सब पापोंसे छूट अब हमारे कृपापात्र हो वेद शास्त्र पुराण आदि के अधिकारी भये हे सत्यतपाजी ! शरीर का अवस्था भेद आठ २ वर्ष के अनन्तर बदलता है इस प्रकार मुनियों का मत हमने वर्णन किया परन्तु इसमें बीच कुछ नहींहै जैसे मृत्तिका व घट उपाधि वश होने से रूपान्तर होजाता है ऐसे पुरुष संग दोषकाल मायांश संयोग से अनेक अवस्था को प्राप्त होता है इसमें बुद्धिपूर्वक विचार करने से संदेह का स्थान नहीं है और वेद में उत्तम पुरुषों के लिये चारपदार्थ वर्णन किये हैं अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष तिसमें त्रिवर्ग का साधन तो सबसे होसक्ताहै इस लिये वो साधारण है वो मोक्ष अत्यन्त क्लेश से प्राप्त होता है यह जान वेद पढ़ि ब्राह्मण कठिन तप करके मोक्ष साधन में तत्पर होते हैं यह सुनि सत्यतपाजी बोले हे भगवन् ! परब्रह्म जो पदार्थ है सो नामरूप से रहित होने से ऋषियों को भी दुर्लभ है फिर उसका ज्ञान किस प्रकारसे हो सो आप वर्णनकरें हे गुरो ! जिसमें

हम समझें यह सत्यतपा का वचन सुनि दुर्वासाजी कहनेलगे कि ऋषीश्वर! जिस पदार्थ को वेद शास्त्र निर्गुण ब्रह्म कथन करता है सोई नारायण है इसमें किंचित् भी भेद नहीं है सो नारायण अनेक प्रकारके दान और नानाविध यज्ञ आदि पुण्य-कर्मों से जाना जाता है और प्राप्त होता है यह सुनि सत्यतपा बोले कि हे गुरो! पुण्यशील ऋषि मुनि आदि धर्मात्माओं करके परमेश्वर का प्राप्त होना तो ठीकही है परन्तु जे अज्ञान अधम धनहीन हैं उनके लिये आप कृपा करके नारायणके प्राप्त होने का उपाय कथनकरें कि जिसमें वो भी जन्मलेने का फल पावें तबतो ऋषिजी बोले कि हे सत्यतपा! अब हम परमगुप्त पदार्थ वेदों करके कहाहुआ कथन करते हैं जिसके श्रवण से तुम्हारा संदेह दूर हो जिसको धरणी ने किया है जिस समय रसातल में जल में मग्न होनेलगी तब निराधार हो श्रीविष्णु भगवान् का आराधन उपवास व्रत नियम करके श्रद्धाभक्ति से करनेलगी तब व्रत करने से कुछ कालमें श्रीनारायण प्रसन्न हो वाराहरूप धारणकर जल से पृथ्वी को उठाय अपनी सत्ता से जल के ऊपर स्थापन किया यह सुनि सत्यतपाजी ऋषि दुर्वासा जी से बोले कि; हे गुरो! कौनसा व्रत पृथ्वीने किया और किस नियमसे सो आप वर्णनकरें तब दुर्वासाजी कहनेलगे कि; हे सत्य-तपा! विष्णु भगवान्के प्रसन्न करने का व्रत विधान हम कहते हैं सो सावधानहो सुनो प्रथम मार्गशीर्ष मास में दशमीको पवित्र हो नित्यकर्म समाप्तकर हवनकरे और शुक्लवस्त्र धारण कर उस दिन गोके दूध में चावल अथवा यव पक्वकरके दिन के चौथे प्रहरमें भोजनकर शुद्ध हो पाँच कदम चलि फिर पाद प्रक्षालन कर क्षीरवृक्ष का काष्ठ आठ अंगुल का ले दन्तधावन आचमन कर पवित्र हो शुद्धभूमि में कुशासनपर बैठ नारायण का ध्यान करें कि जिसके हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म विराजमान हैं

व प्रसन्नमूर्त्ति पीताम्बर धारण किये सबलक्षणों करके शोभित होरहेहैं ऐसा ध्यानकर भक्ति से दोनों हाथसे अञ्जली बांध व पवित्र जल ले यह मन्त्र पढ़ता हुआ अर्घ्य देय (मन्त्रः। एकादश्यां निराहारस्स्थित्वा चैवापरेऽहनि। भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत) यह मन्त्र पढ़ अर्घ्य दे परमेश्वर के समीप नारायण का अष्टाक्षरमन्त्र जप करता उस रात्रि में शयनकरे दूसरे दिन प्रातःकाल उठि शौच से निवृत्त हो समुद्रगामिनी नदी में जाय अथवा तड़ाग में वा कूप के समीप और कुछ न प्राप्त हो तो निजस्थानही में पवित्र मृत्तिका एकतोला लेके इन मन्त्रों से अभिमन्त्रण करे (मन्त्राः। ॐधारणं पोषणं त्वत्तो भूतानां देवि सर्वदा। तेन सत्येन मे पापं यावन्मोचय सुव्रते। ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि त्वया स्पृष्टानि देवते। तेनेमां मृत्तिकां त्वत्तो गृह्य स्नास्येऽद्य मेदिनि। त्वयि सर्वे रसा नित्यास्स्थितावरुण सर्वदा। तैरिमां मृत्तिकां प्लाव्य पूजां कुर्वे हरेस्त्वहम्) इन मन्त्रों को पढ़ मृत्तिका जल के साथ देह में लेपि स्नानकरे स्नानकर पवित्र शुक्लवस्त्र धारणकर तीर्थ से जलकुम्भ ले नारायण को स्मरण करता पूजा के स्थान में जाय पवित्र स्थानमें कुम्भस्थापनकर पग धोय नारायण के मन्दिर में जाय मूर्ति सम्मुख शुद्ध आसनपर बैठि इष्टदेव का ध्यानकर निज अङ्गोंमें इन नामों से न्यासकर इन्हींनामोंसे नारायणके अङ्ग २ में पूजनकरे सो मन्त्र कथन करते हैं "केशवाय नमः" इस मन्त्र से दोनों पादों में। और "दामोदराय नमः" इससे कटिमें। "नृसिंहाय नमः" ऊरु में। "श्रीवत्सधारिणे नमः" इससे उदर में। "कौस्तुभधारिणे नमः" इस मन्त्र से छातीमें "श्रीपतये नमः" इस मन्त्रसे नाभी में। "त्रैलोक्यविजयाय नमः" इस मन्त्र से बाहु में। और "सर्वात्मने नमः" इस मन्त्र से शिर में। न्यासकर और नारायण की मूर्ति में इसी २ स्थानों में इन्हीं नामों से पूजाकर विष्णु

भगवान् के चारों हाथों में चारों अस्त्रों का पूजनकरे। चक्र को "चक्राङ्गधारिणे नमः" इस मन्त्र से शङ्ख को "शंकराय नमः" इससे व गदा को "गम्भीरायै नमः" इस मन्त्र से और कमल को "शान्तिमूर्तये नमः" इस मन्त्र से स्नान, चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि यथालाभोपचार से पूजाकर मूर्ति के आगे चारकोण की बराबर वेदी बनाय उसपर विधि से चार कलश यथालाभ स्वर्ण का चांदी का ताँबा का वा पित्तल अथवा मृत्तिका का तीर्थजल से पूर्णकर वेदी के चारों दिशा में स्थापनकरे तिसमें चारोंसमुद्रों का ध्यान मन्त्रोंसे करे औ वेदी के मध्य में एक उत्तम पीठ नवीन कोमल वस्त्र से ढांप स्थापित करे सो पीठ स्वर्ण, चांदी, ताम्र, पित्तल अथवा काष्ठ का होना चाहिये सर्वपीठ के अभाव में पलाश का पत्र रख उत्तम वस्त्र बिछाय उस पै नारायण को स्थापनकर सुवर्ण की मत्स्य सब अङ्गोंकरके सुन्दर बनवाय पञ्चगव्य पञ्चामृत में नहवाय उस मध्य पीठ पर स्थापनकर गन्ध, पुष्प, माला, धूप, दीप, नैवेद्य नानाप्रकार के फल और भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पेय आदि अनेकपदार्थ भक्ति से निवेदनकर हाथ जोड़ इस मन्त्र से प्रार्थना करे (मन्त्रः। रसातलगता वेदा यथा देव त्वया हृताः। मत्स्यरूपेण तद्वन्मां भवादुद्धर केशव) यह प्रार्थनाकर औ भगवज्जनों के साथ मन्त्रजप, स्तोत्रपाठ, गुणकीर्तन, नृत्य, वाद्य, गान आदि उत्सवयुक्त उसी स्थान में रात्रिभर जागरणकरे प्रातःकाल शौच स्नानआदि देवपूजन अन्त में नित्यकर्मों से सावधान हो क्रम से चारों घटों को तथा मत्स्य नारायण को षोड़शोपचारसे पूजि विसर्जनकर वेदी के पूर्वदिशा का घट बह्वृच ब्राह्मण को देय और छन्दोग ब्राह्मण को दक्षिण का घट और यजुर्वेदी ब्राह्मण को पश्चिमका तथा उत्तरका घट जिस ब्राह्मणको इच्छा होय उसको देय औ देने समय क्रम से यह मन्त्र पढ़े। पूर्व घट

में "ऋग्वेदः प्रीयताम्"। दक्षिण के घटमें "सामवेदः प्रीयताम्"। और पश्चिम के घट में "यजुर्वेदः प्रीयताम्"। उत्तर के घट में "अथर्ववेदः प्रीयताम्"। यह पढ़ चारों घट ब्राह्मण को दे मध्यवेदी में जो मत्स्यमूर्ति भगवान् की है उसे सहित नम्रता के आचार्य को दे और इस व्रतमें वोही आचार्य है जो व्रतका उपदेश करे उसी ब्राह्मण की पूजा कर मूर्ति दानदेना योग्य है दुर्वासाजी कहते हैं हे महातपाजी! जो विद्यमान गुरुको त्यागि मोह से और किसी को दे उसका व्रतभङ्ग होताहै औ वो पुरुष नरकभागी होताहै इसप्रकार मूर्तिका दानकर द्वादशीको ब्राह्मणों को भोजन कराय यथाशक्ति दक्षिणा दे कलश के ऊपर का पात्र तिलसे पूर्ण दक्षिणा के साथ किसी कुटुम्बी ब्राह्मण को दे यथाशक्ति भोजन कराय दक्षिणा देके तिस पीछे सकुटुम्ब आप भोजन करे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस विधान से जे व्रत करें उनके पुण्य को जिसके सहस्रमुख होयँ औ ब्रह्माजी की सी आयुर्बल होय तब भी संपूर्ण नहीं कहने में समर्थ होता इसप्रकार दुर्वासाजी सत्यतपा ऋषि से कहते हैं हे ब्रह्मन्! इस व्रत के फलको हम थोड़ा सा वर्णन करते हैं सो सुनो चार करोड़ इक्कासी हज़ार सातसौ दश इतने वर्षों का युग होय इसीप्रकार चारों युग एकहत्तर बार बीतने से मन्वन्तर और चौदह मन्वन्तर का ब्रह्माजी का दिन और इसी प्रमाण की रात्रिहो इन्हीं रात्रि दिनों करके तीस दिन का मास तिस बारह मासका वर्ष और ऐसेही वर्षों से शत वर्ष की ब्रह्माजी की आयुर्बल तुल्य इस व्रत करनेवाले को ब्रह्मलोक में वास हो वहां ब्रह्मलोक का सुख भोगि अन्त में ब्रह्माजीके साथ नारायणके स्वरूपमें लीन होय और हे सत्यतपाजी! व्रत करनेवाला पुरुष इसलोक में अनेक ब्रह्महत्यादि पापों से मुक्तहो नानाविध सुखभागी होय और इस व्रत के प्रभाव से दरिद्र धनाढ्य होय और जिसका

राज्य हरगया होय सो राज्य पावे और वन्ध्यास्त्री व्रत करने से गुणविद्या संपन्न दीर्घजीवी पुत्र पावे और जो अनेक प्रकार के पाप हैं अगम्यागमन अभक्ष्य भोजन और पांचप्रकार के महापातक के करनेवाले नियम करके इस व्रत के करने से सब पापों से छूट निर्मल होतेहैं इस लिये हे धरणि! इस व्रत का उपदेश अदीक्षित को तथा नास्तिक को और ब्रह्मद्रोही, वेदद्रोही, कृतघ्न, शठ, गुरुद्रोह करनेवाले को न देना और आस्तिक्य बुद्धिवाले को गुरु भक्त को देने से फलीभूत होता है हे धरणि! जो इस द्वादशी विधि की कथा को भक्ति से सुने वा सुनावे वे दोनों सबपापों से छूट स्वर्ग को प्राप्त होयँ॥

चालीसवां अध्याय॥

दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! इसी भांति पौषमास में कूर्मनारायणकी मूर्त्ति बनाय इसीविधिसे व्रतकरे और नारायण जो समुद्र मथन के समय पौषमहीने में कूर्मावतार धारणकिया है इस लिये पौष की एकादशी कूर्म भगवान् को प्रिय है सो हे सत्यतपाजी! संकल्प स्नानक्रिया पूर्व तुल्य करके न्यास मन्त्र इस विधि से करो नारायण का ध्यान कर "ॐकूर्माय नमः" इस से पादों में न्यासकरे व "ॐनारायणाय नमः" इस मन्त्र से कटिमें न्यास "ॐसंकर्षणाय नमः" इससे उदर में न्यास और "ॐविशोकाय नमः" इस मन्त्र से कण्ठ में न्यास "ॐसुबाहवे नमः" इससे भुजों को स्पर्शकरे "ॐविशालाय नमः" इस मन्त्र से शिर में न्यासकर षोडशोपचार से भक्तिपूर्वक कूर्मभगवान् की मूर्ति को पूर्वतुल्य पीठपर मन्दराचल के साथ पूजाकर चारों घट में घृत पूर्णकर उसके मुखपर ताम्र के पात्र में तिल पूर्णकर पूर्वतुल्य समुद्रों का आवाहन देवपूजन रात्रिजागरण आदि उत्साहकर द्वादशी को पूर्ववत् घट का ब्राह्मणों को दान व व्रतके

उपदेशक आचार्य को मूर्तिदान ब्राह्मण भोजन व यथाशक्ति दक्षिणा यह सब पूर्वतुल्य करके सकुटुम्ब भोजनकर व्रत समाप्त करने से पुरुष समस्त पापों से मुक्तहो नानाविध संसारसुखको भोगि अन्त में नारायण के चरणों में लीन होताहै श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस पुण्य कथाके श्रवण करनेसे व सुनाने से भी भगवान् उसके अनेक जन्मोंका पातक निवृत्त कर उत्तम संसारसुख और निजसमीप वास देतेहैं॥

इकतालीसवां अध्याय॥

दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी ! इसी प्रकार माघमास में वाराह नारायण का पूजनकर व्रत करना चाहिये तिसमें पूर्व विधान से संकल्प स्नान आदि संपूर्ण कर नारायण की पूजा पूर्वतुल्य कर पूर्वतुल्य वेदीके चारों दिशा में यथालाभ जलपूर्ण घट स्थापन कर समुद्रों का आवाहन पूजन कर वाराहजी की मूर्ति सुन्दर व दांत के ऊपर पृथिवी करके युक्त सुवर्ण आदि यथालाभ से बनवाय सुन्दर पीठपर स्थापितकर निज अङ्गों में न्यास करे पादों में "ॐवाराहाय नमः" कटि में "ॐमाधवाय नमः" उदर में "ॐक्षेत्रज्ञाय नमः" जंघा में "ॐविश्वरूपाय नमः" कण्ठ में "ॐसर्वज्ञाय नमः" शिरमें "ॐप्रजापतये नमः" भुजों में "ॐप्रद्युम्नाय नमः" दक्षिणहस्त में "ॐदिव्यास्त्राय सुदर्शनाय नमः" वामहस्त में "अमृतोद्भवाय शंखाय नमः" इस प्रकार इन मन्त्रोंको पढ़ि २ इन अङ्गोंका स्पर्श करे फिर वाराह नारायण का पूजनकर पीठपर सुवर्ण आदि पात्र को यथाशक्ति अनेक धान्यों से पूर्णकर उत्तम वस्त्र से ढांप उस पर वाराहजी की मूर्ति स्थापनकर यथाशक्ति सुवर्ण, दक्षिणा सब पूजाके अन्त में नारायण के अर्पणकर शुक्ल दो वस्त्र रेशम के अथवा सूत्र के निवेदनकर पुष्पोंकरके मूर्तिको ढांप उत्तम जनोंके साथ भगवान्

का स्मरण करता हुआ रात्रि को जागरणकरे और उत्तम ब्रा-
ह्मण के मुख से वाराहनारायण की कथा श्रवण करे इस प्रकार
जागरणकर प्रातःकाल द्वादशी को नित्य नियम से निवृत्त हो
वाराहजीकी मूर्तिकी भक्तिसे पूजाकर विसर्जनकर पूर्ववत् वेदविद्
ब्राह्मणको घटदान व आचार्यको सहित पीठ व पात्र मूर्ति दान
कर ब्राह्मणोंको भोजन कराय दक्षिणा दे आप सकुटुम्ब भोजन
करे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस व्रतके करनेसे इसजन्म में
सौभाग्य, लक्ष्मी, कान्ति, तुष्टि इत्यादि अनेक फल प्राप्त होते हैं
व दरिद्री इस व्रतके करने से धन पाता है व अपुत्रको पुत्र लाभ
होता है व अनेक रोगों से निवृत्त हो देह में पुष्टता व शोभा
होती है और परलोक में इस व्रत करनेवाले को जो लाभ होता
है उसका एक इतिहास वर्णन करते हैं सो प्रेम से सावधान हो
श्रवण करो प्रतिष्ठान नामक पुर में वीरधन्वानाम राजा हुआ
सो राजा शिकार खेलने को वन में गया वहां जाय मृगोंके समूह
को वधकरते करते गम्भीर वन में जाय मृगरूप पांच सहोदर
भाई संवर्तकमुनि के पुत्र तप कर रहेथे उन्हींको साधारण मृग
जान एकहीबार पांचों को बाण से मारदिया वाराहजी कहते हैं
हे धरणि! इतनी कथा सुनि सत्यतपा दुर्वासाजी से पूछनेलगा कि
हे ऋषिजी! वे पांचो संवर्तक मुनिके पुत्र किस प्रयोजन मृगरूप
धारण करतेभये जिनको वीरधन्वाने मृग जान बध किया सो
आप वर्णनकरें यह सुनि दुर्वासाजी कहनेलगे हे सत्यतपाजी!
किसी समय में संवर्तकऋषि के पांचों पुत्र वन को गये वहां जाय
क्या देखते हैं कि पांच मृग के छोटे २ बच्चे इकल्ले घूमिरहे हैं
औ उन्हों के साथ मृगी है नहीं सो देख कौतुक मान ऋषिकु-
मारों ने दैववश बालक स्वभाव से पांचों बच्चों को एक एक ने
पकड़लिया थोड़ी देरके पकड़नेसे पांचों बच्चे घबड़ाय के मृतक
होगये उन्हों को मरे देख मुनिकुमार दुःखी हो निज स्थान में

आये संपूर्ण वृत्तान्त अपने पिता संवर्तकजी से निवेदन किया सो सुनि पुत्रों का अपराध देखि क्रोधवश हो संवर्तकजी कहने लगे हे पुत्रो! तुमने बड़ा अपराध किया इस लिये इसका प्रायश्चित्त यही है जो वन में जाय मृगरूप धारणकर मृगोंके साथ पांच वर्षतक तृण भोजन करके तप करो तो इस पाप से मुक्त होगे यह पिता का वचन सुनि मुनिपुत्रों ने वन में जाय मृगरूप धारणकर तप करने लगे उन्हीं को मृगरूप देख राजा ने शिकारजान मारदिया जब वीरधन्वा उन मृगों के समीप गया तो क्या देखता है कि मृग नहीं हैं तेज से प्रकाशमान मुनि के कुमार हैं सो देखि भयभीत हो कम्पित हुआ व देवरातनाम ऋषि के आश्रम में जाय हाथ जोड़ प्रणामकर आदि से सारा वृत्तान्त ब्रह्महत्या का कहि व उसीभय से व्याकुल धैर्य छोड़ रोदन करनेलगा तिसको रोदन करते देवरातऋषि देखि दयासे युक्त हो बोले कि हे राजन्, वीरधन्वा! अनर्थ तो तेरे से बड़ा हुआ परन्तु अज्ञान से हुआ फिर अपराध करने के पश्चात् तुमने पश्चात्ताप किया और सारा वृत्तान्त सत्य २ कह सुनाया इसलिये अब शोच मतकरो हम तुम्हारे अपराध को निवृत्त करेंगे हे राजन्! जिस व्रतको पृथिवी ने श्रीवाराहजी के उठाने के समय किया सो व्रत नियमसे करो जिससे विष्णुभगवान् प्रसन्न हो तुम्हारे अपराधको क्षमाकर सद्गति देवें इतना कहि व्रतों का संपूर्ण विधान आदिसे कहि सुनाया सो सुनि राजा वीरधन्वा अङ्गीकार करनेलगा दुर्वासाजी कहते हैं हे महातपा! सो राजा व्रत के प्रभाव करके ब्रह्महत्या से छूट व धर्म से राज्यकर अन्तमें विष्णुभगवान् के भेजे विमान पर बैठि विष्णुदूतों करके सत्कार को प्राप्त विष्णुलोकको चला तिसको विमान पर विष्णुभगवान्के लोक जाते लोकपालों ने देखा बड़ी प्रीति से धन्य व पूजनीय अर्थात् पूजनयोग्य मान इन्द्रादि देवता पाद्य अर्घ्य ले खड़ेभये

सो देखि विष्णुजी के गणोंने कहा कि इस उत्तम पुरुष के दर्शन योग्य तुम सब नहीं हो हे इन्द्रादिको ! जो इस महात्मा ने पुण्य कर्म किया है कि जिसके प्रभाव से वैकुण्ठधाम को जाता है सो पुण्य तुम सबको दुर्लभ है इतना कहि वैकुण्ठधाम में ले विष्णु भगवान् के समीप पहुँचाय दुर्वासाजी कहते हैं सो राजा वीर-धन्वा इस एकादशी व्रत के प्रभाव से अजर अमर हो कई कल्पों से वैकुण्ठधाम में विराजमान हो रहाहै इस लिये हे महा-तपा ! जो प्रीतिसे नियम से विष्णुभगवान् का व्रत करते हैं सो इसलोक में अनेक सुख भोग अन्त में उत्तम गति को प्राप्त होते हैं और विष्णुभगवान् के प्रसन्न होनेसे कौनसा पदार्थ दुर्लभहै जो नहीं मिलता जिसकी कृपासे मुक्तिही सुलभहै तिसको छोड़ दूसरेका भजन करना पामरोंका कामहै हे महातपा ! देखो विष्णु भगवान् की करुणा का वैभवसंसार के कल्याण हेतु वेदों के उ-द्धार के लिये मत्स्य अवतार धारण किया सो भगवान् वाराह रूप धारि पृथिवीको रसातलसे ले आये और कूर्म्मरूपहो समुद्र के मथनसमय में मन्दराचल धारण किया ऐसे विष्णुभगवान् के गुणानुवाद को जे स्मरण करते हैं ते पुरुष मुक्तिभागी होते हैं ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

दुर्वासाऋषि कहते हैं हे सत्यतपाजी ! अब हम फाल्गुन मास की शुक्लाएकादशी का व्रतविधान वर्णन करते हैं सो आप श्रवण करें फाल्गुन महीने की शुक्लएकादशी को नियम से व्रत कर नृसिंहजी का पूजन करना चाहिये तिसमें और सब तो पूर्वतुल्य करके इस प्रकार निज अङ्गों में न्यास करे। पैरों में "ॐनृसिंहाय नमः" ऊरू में "ॐगोविन्दाय नमः" कटिमें "ॐवि-श्वसृजे नमः" छातीमें "ॐ अनिरुद्धाय नमः" कण्ठमें "ॐशिति-कण्ठाय नमः" शिर में "ॐ पिंगकेशाय नमः" मुख में "ॐ अ-

सुरध्वंसनाय नमः" इस प्रकार अङ्गों में न्यासकर पूर्वतुल्य वेदी बनाय घटों को शुक्ल वस्त्र से आच्छादितकर मध्य में उत्तम पीठ पर सुवर्ण आदि से बनीहुई नृसिंहजी की प्रतिमा स्थापित कर गन्ध, पुष्पमाला, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा आदि यथालाभ उपचार से पूजनकर पूर्ववत् जागरणकर प्रातःकाल स्नानादिकों से निवृत्त हो श्रीनृसिंहजी का विधि से पूजन कर विसर्जनकर वेदविद् ब्राह्मण को सहितपीठ मूर्तिदान करदे व यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराय दक्षिणा दे आप सकुटुम्ब भोजन करे दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! इसभांति फाल्गुन की एकादशी व्रत करने से जो फल प्राप्त होता है सो हम वर्णन करते हैं श्रवण करो कि पुरुषखण्ड में धर्ममूर्ति भारतनाम राजा होता भया तिस भारत के वत्सनाम पुत्र उत्पन्न भया सो किसी समय शत्रुओं से संग्राम में पराजय पाय अकेला वन में जाय सहित स्त्री वशिष्ठजी के आश्रम में निवास करनेलगा तिस वत्स राजा को सहित स्त्री वन में देखि किसी समय वशिष्ठजी पूछने लगे कि हे राजन्! प्रजा का पालन छोंड़ रानी के साथ इकल्ले इस आश्रम में क्यों निवास करते हो सो कहो यह सुनि राजा वत्स बोला कि हे वशिष्ठजी, महाराज! हम शत्रुओं करके पीड़ित राज्य से भ्रष्ट हो शोक करके युक्त आपकी शरण में प्राप्त हैं इस विपत्ति से आप कृपा करके हमारी रक्षा करें कोई ऐसा उपदेश दें कि मेरा क्लेश निवृत्त हो यह राजा वत्स की दीन वाणी सुनि वशिष्ठजी कहनेलगे कि हे राजन्! श्रद्धा से विधिपूर्वक फाल्गुन की द्वादशी का व्रत करो जिस में समस्त शत्रुओं के विध्वंस करनहारे नृसिंह प्रसन्न हो तुम्हारे क्लेश दूर करें इतना कहि द्वादशी का विधान राजा से वशिष्ठजी ने वर्णन किया उसको सुनि उसी रीति से राजा व्रत करने का प्रारम्भ किया थोरेही काल में विष्णु भगवान् उस व्रतसे प्रसन्न हो प्रकट होके

राजाको सुदर्शनचक्र दे बोले हे चक्र! इस राजा के साथ जाय इसका सहाय करो इतना कहि विष्णु भगवान् अन्तर्धान भये व सुदर्शनचक्र राजावत्स के साथ हो तिसकी राजधानी में जाय सर्वशत्रुओं को विध्वंसकर वत्सको निष्कण्टक राज्यदे सुदर्शन चक्र विष्णु भगवान् के समीप आया और राजा निज राज्यको पाय धर्म से प्रजा का पालन करता एक सहस्र अश्वमेध कर संपूर्ण राजसुख भोगि अन्तमें उत्तम विमान में बैठि वैकुण्ठधाम में जाय विष्णुभगवान् का समीपवर्ती सेवक हुआ दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! इस भांति नृसिंहजी की प्यारी सब पापों की हरनेहारी फाल्गुन की एकादशी का व्रत वर्णन किया इसको जो प्रीति से सुने या सुनावे वो दोनों इसलोक में सब प्रकार के सुख भोगि अन्त में विष्णुभगवान् के समीपवर्ती होयँ॥

तैंतालीसवां अध्याय॥

दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! इसी प्रकार चैत्रमासकी एकादशी को वामन भगवान् का पूजन करने से संपूर्ण मनोरथ सिद्ध होते हैं और परलोक में उत्तमगति प्राप्ति होरही है हे सत्यतपाजी! उसका विधान यह है कि सर्व विधान पूर्वतुल्य करके वेदीपर कलशों के मध्य उत्तम पीठपर वामनजी की मूर्ति विधान से स्थापनकरे तिसमूर्ति के समीप कुम्भ, छत्र, पादुका, रुद्राक्षमाला, दण्ड और कुशासन ये सम्पूर्ण यथालाभ सोनेका वा चांदी का बनवाय स्थापनकर निज अङ्गों में न्यास करे पादों में "ॐवामनाय नमः" कटि में "ॐ विष्णवे नमः" उदर में "ॐ वासुदेवाय नमः" ऊरू में "ॐ संकर्षणाय नमः" कण्ठमें "ॐ विश्वभृते नमः" शिरमें "ॐ व्योमरूपिणे नमः" बाहू में "ॐ विश्वजिते नमः" करमें "ॐ शंखाय पांचजन्याय नमः" "ॐ सुदर्शनचक्राय नमः" इस प्रकार से अंगों में न्यासकर

षोडशोपचार से वामनजी का पूजनकर जागरण विधानसे रात्रि का उत्सव कर प्रातःकाल विसर्जन कर सब पदार्थों के साथ मूर्ति को वेदपाठी ब्राह्मण को दे ब्राह्मण भोजन कराय दक्षिणा यथाशक्तिदे ब्राह्मणोंको यह मन्त्र पढ़िके विसर्जनकरे "फाल्गुनै-कादशीव्रतेनवामनः प्रीयताम्" इसमन्त्र से विसर्जनकर सकुटुम्ब भोजन करे दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपा! इस प्रकार व्रत करने से करनेवालों का सर्वाभीष्ट सिद्ध होता है और हमने वृद्धों से प्रथम यह सुनाथा सो आप श्रवण करें किसी समयमें हर्यश्व नाम राजा संतानके अभावसे परमेश्वर प्रीत्यर्थ पुत्रेष्टि यज्ञ करने लगा उस यज्ञ में प्रसन्न हो विष्णु भगवान् सहितसभा राजा हर्यश्व को दर्शन दिया उस समय नारायणको देखि अर्घ्यपाद्य ले राजा ने विष्णु भगवान् की पूजा करी उस पूजा को ग्रहण कर विष्णु भगवान् बोले हे राजन्! हम इस यज्ञ करनेसे बहुत प्रसन्नहैं जो इच्छाहो सो वर मांगो यह सुनि राजा विष्णुभगवान् को हाथ जोड़ अपना कार्य निवेदन किया सो सुनि विष्णुजी फा-ल्गुन की एकादशी का उपदेश कर आप अन्तर्धान भये राजा हर्यश्व बड़ी प्रीति से इस व्रतको किया और इसी व्रतके प्रभाव से उत्तम गुणों करके युक्त कुवलयाश्व नाम चक्रवर्ती पुत्र राजा के उत्पन्न भया तिसको राज्य दे राजा वन को गया वहां एक दरिद्री गर्गनाम ब्राह्मण को दुःखी देखि व्रत का उपदेश किया उस ब्राह्मण ने इस व्रत के प्रभाव से धन धान्य पाया हे सत्य-तपाजी! इस व्रत के प्रभाव से अपुत्र को पुत्रलाभ होताहै और निर्धनी को धन प्राप्त होता है और जो छूटे हुये राज्य प्राप्तहोने के लिये करे उसका राज्य मिले और इस व्रत का करनेहारा पु-रुष सर्व दुःखोंसे मुक्तहो संसारके सब सुख भोगि अन्तमें उत्तम विमानपर बैठि विष्णु भगवान् के लोक में जाय विष्णु का गण होता है॥

चवालीसवां अध्याय॥

दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! अब हम वैशाखमास की एकादशी का व्रत वर्णन करतेहैं सो सावधान हो आप श्रवण करें चैत्रमास की एकादशीको जो पुरुष पूर्वविधानसे स्नान आदि कर्म करके वेदीपर पूर्ववत् कलश स्थापन कर कलशों के मध्य सुवर्ण आदि पीठ ऊपर परशुरामजी की मूर्ति उत्तम वस्त्रों से ओढ़ाय स्थापन कर निज अङ्गोंमें मन्त्रोंसे न्यासकरे। पादोंमें "ॐजामदग्न्याय नमः" उदरमें "ॐसर्वधारिणे नमः" कटिमें "ॐमधुसूदनाय नमः" ऊरू में "ॐश्रीवत्सधारिणे नमः" इस प्रकार इन मन्त्रों से अङ्गों में न्यास कर विधि करके सोलह प्रकार के उपचारोंसे पूजनकर रात्रिको जागरण करे प्रातःकाल उठ स्नानकर नित्यकृत्य से निवृत्त हो मूर्ति का पूजनकर विसर्जन करे व उस मूर्तिको सहित कलशों के दरिद्री ब्राह्मणको देय और ब्राह्मणभोजन कराय आप भोजन करे जो इस विधान से व्रत करें हे सत्यतपाजी! उन पुरुषों के सब कार्य सिद्ध हों अब इस व्रत का माहात्म्य हम वर्णन करते हैं सो सुनो वीरसेननाम राजा किसी समय अति बलवान् हुआ सो पुत्र की कामना से उग्रतप करने लगा उस राजा के तप को देखि याज्ञवल्क्य नाम मुनीश्वर आये तब राजा वीरसेन ने ऋषिजी को देखि हाथ जोड़ खड़ाहो पाद्य अर्घ्य से पूजनकर आसन दे स्वागत किया ऋषिजी ने राजा की पूजा को अङ्गीकार कर कहने लगे कि हे राजन्! राज्य छोड़ किसलिये उग्रतप कररहे हो सो अपना वृत्तान्त कथन करो यह याज्ञवल्क्यजीका वचन सुनि प्रसन्न हो हाथ जोड़ राजा बोला हे भगवन्! आप त्रिकालज्ञहैं कौनसी बात आप नहीं जानते तथापि आपकी आज्ञासे मैं कथन करता हूं महाराज! मैं संतान से हीन हूं इसलिये शरीर को दुःख दे

परमेश्वरका स्मरण करताहूं जिसमें नारायणकी कृपासे संतान-भागी होऊं यह राजाका वचन सुनि ऋषिजी बोले हे राजन्! इसभांति क्लेश करना उचित नहीं है इसलिये हम सहज उपाय संतान लाभ होनेका कहते हैं उससे अवश्य संतान होगा यह सुनि राजा वीरसेन बोला कि; हे ऋषीश्वर! कौनसा उपाय सरलहै कि जिसके करनेसे शीघ्र पुत्रलाभ होताहै सो आप मुझे उपदेश करें मैं आपका शिष्य होकर शरणमेंहूं दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! इसप्रकार राजा वीरसेनकी विनयवाणी सुनि याज्ञवल्क्यजीने कहा हे राजन्! वैशाखमासकी एकादशी इस विधानसे करो जामदग्न्यजीकी कृपासे अवश्य संतान होगा इतना कहि सारा विधान उपदेश कर अन्तर्धान भये व राजा ऋषिजीकी अन्तर्धान देखि उनके उपदेशको प्रीतिसे अङ्गीकार कर व्रत करनेलगे उस व्रतके प्रतापसे राजा वीरसेन बड़ा प्रतापी व संपूर्ण गुणोंका निधान पुत्र पाया हे सत्यतपाजी! जो कोई इस व्रतको करे सो इस लोकमें पुत्र व धन करके युक्त हो अन्तमें एक कल्प ब्रह्मलोकमें निवास कर व उस लोकके अनेक विध सुखोंको भोग कल्पान्तमें चक्रवर्त्ती राजा हो तीसहजार वर्ष अखण्ड राज्यकर अन्तमें स्वर्गवास पावे और इस कथा को जो सुनावे व सुने वे दोनों उत्तम गति को पावें ॥

पैंतालीसवां अध्याय ॥

दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! अब हम ज्येष्ठ महीनेकी एकादशीका विधान कहते हैं, सो आप श्रवण करें इस एकादशीमें स्नान आदि कलश स्थापन पर्यन्त पहली रीतिसे कर मध्यपीठमें उत्तम वस्त्रके ऊपर राम और लक्ष्मणजीकी मूर्ति बैठाय निज अङ्गोंमें इन मन्त्रोंसे न्यास करे। पादोंमें "ॐरामाय नमः" कटिमें "ॐत्रिविक्रमाय नमः" छातीमें "ॐसंवत्सराय

नमः" कण्ठमें "ॐसंवर्त्तकाय नमः" बाहुमें "ॐसर्वास्त्रधारिणे नमः" शिरमें "ॐसहस्रशिरसे नमः" इसप्रकार न्यासकर सुन्दर उत्तम २ पुष्पोंकी माला बनाय पञ्चामृत स्नान, चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणाआदिसे भक्ति-पूर्वक पूजन व जागरण उत्सवकर प्रातःकाल स्नानकर मूर्तिकी पूजा व हवनकर विसर्जनकर वेदविद् ब्राह्मणको पीठ सहित मूर्ति व कलशोंको दे यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराय आप सकुटुम्ब भोजनकरे तो इसलोक व परलोकके सब मनोरथ पूर्ण होते हैं दुर्वासाजी कहते हैं, हे सत्यतपाजी! इसी व्रतके करने से अयोध्याके राजा दशरथने चारपुत्र राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न नामके पाया और जो कोई इस व्रतको करे सो सर्व सुखभोगि अन्त में स्वर्गवास पावे व स्वर्गसे च्युतहो अर्थात् इस लोकमें जन्म पाय राजाहो अखण्ड राज्यकर अन्तमें उत्तम गतिको पावे॥

छियालीसवां अध्याय॥

दुर्वासाजी सत्यतपा ऋषिसे कहते हैं, हे ऋषीश्वर! अब इसी प्रकार आषाढ़की एकादशीका विधान श्रवण करो आषाढ़ मास में भी सर्वविधान स्नानसे ले कलशस्थापन पर्यन्त पहली रीति से करके वेदी के मध्य उत्तम पीठपर वासुदेवकी मूर्ति स्थापनकर निज अङ्गोंमें इन मन्त्रोंसे न्यासकरे पादोंमें "ॐवासुदेवाय नमः" कटिमें "ॐसंकर्षणाय नमः" उदरमें "ॐप्रद्युम्नाय नमः" छाती में "ॐअनिरुद्धाय नमः" कण्ठमें "ॐभूपतये नमः" भुजोंमें "ॐचक्रपाणये नमः" शिरमें "ॐवेदपुरुषाय नमः" इन मन्त्रों से न्यासकर षोडशोपचारसे भक्तिपूर्वक मूर्तिका पूजनकर व रात्रि जागरणकर प्रातःकाल द्वादशीके दिन स्नानादि कर्मोंसे सावधानहो विधि से मूर्तिकी पूजाकर विसर्जनकर वेदपाठी ब्राह्मणको सब उपस्कर सहित दानकरे व यथाशक्ति ब्राह्मणों

को भोजन कराय आप सकुटुम्ब भोजनकर व्रत समाप्तकरे हे सत्यतपाजी! इस व्रतके करनेसे जो फल होताहै सो हम वर्णन करते हैं द्वापरके अन्तमें मथुरानाम पुरी विषे यदुवंशी राजा सूर का पुत्र वसुदेव नाम हुआ उस वसुदेवके बहुतसे सन्तान भये तिन्होंको कंसनाम उग्रसेनराजाका पुत्र मारता भया तब तो वसुदेवजी इस शोकसे दुःखी हो रोदन करनेलगे उस समय नारदजी आय कहनेलगे हे वसुदेव! इस रोदन करनेसे क्या होताहै इसलिये तुम विधानसे आषाढ़महीनेकी एकादशीका व्रत करो जिसके करनेसे भगवान् प्रसन्न हो तुम्हारा संपूर्ण क्लेश दूर करें यह व्रतका सारा विधान कहि अन्तर्धानभये सो सुनि वसुदेव उसी विधानसे व्रत करनेलगे उस व्रतके समाप्त होतेही श्रीविष्णु भगवान् प्रकटहो बोले हे वसुदेवजी! आज पृथिवी भारसे पीड़ित हो देवताओंके साथ हमारे समीप आय कहने लगी कि; हे महाराज! हम असुरोंके भारसे बहुत पीड़ितहैं इस लिये हमारा भार निवृत्त कीजिये पृथिवीकी इस दीनवाणीको सुनि आश्वासनकर यहां आयेहैं सो जो आषाढ़की एकादशी स्त्री पुरुष नियम करके करे उसके गर्भमें हम जन्मलेंगे यह विचार तुम्हारे समीप आयेहैं तुमने नियमसे इस व्रतको कियाहै इस लिये तुम्हारे घरमें जन्म लेंगे अब तुम शोच न करो सब पृथिवी के दुष्टोंका संहारकर तुम्हारा सब क्लेश दूर करेंगे इतना कह विष्णु भगवान् अन्तर्धान भये दुर्वासा ऋषि कहते हैं हे सत्यतपा जी! इस एकादशीके व्रतको संतानकामनावाला अवश्य करे व इस कथा को जो सुने व सुनावे उसकोभी संतान लाभ होय॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

दुर्वासा ऋषि कहतेहैं हे सत्यतपाजी! इसी प्रकार श्रावण मासकी एकादशीको करना चाहिये और सब पूजा स्नान कलश

स्थापन पूर्वहीके तुल्यहै व उसकी पीठपर दामोदरजीकी मूर्ति स्थापन कर निज अङ्गोंमें न्यास करे पादोंमें "ॐ दामोदराय नमः" कटिमें "ॐहृषीकेशाय नमः" उदरमें "ॐसनातनाय नमः" छातीमें "ॐश्रीवत्सधारिणे नमः" भुजोंमें "ॐचक्रपाणये नमः" कण्ठमें "ॐहरये नमः" शिरमें "ॐमुञ्जकेशाय नमः" शिखामें "ॐभद्राय नमः" इस प्रकार निज अङ्गों में न्यासकर श्रीदामोदरजीकी मूर्तिका विधानसे षोडशोपचार पूजनकर पूर्व के तुल्य रात्रिको जागरणकर प्रातःकाल फिर पूजा कर विसर्जनकर वेदपाठी ब्राह्मणको सहित कलशों के दानकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय दक्षिणा दे बिदाकरे फिर आप सकुटुम्ब पारणकर व्रत समाप्त करे हे सत्यतपाजी! इसका विधान हमने वर्णन किया अब इस व्रतका प्रभाव वर्णन करते हैं सो आप श्रवणकरें इतना कहि दुर्वासा ऋषि कहनेलगे कि पूर्वहीं सत्ययुगमें नृगनाम बड़ा प्रतापी राजाथा सो किसी समय शिकार खेलनेको वनमें गया जाते २ आप इकल्ला तो घोड़ेपर सवार गहरे वनमें जापहुँचा व उस राजाकी सेना सब पीछे वनके किसी देशमें छूटगई तब तो राजा उस निर्जन वनकी शोभा क्या देखताहै कि वनमें कहीं सर्प बड़े बड़े फणधर विहररहे हैं व कहीं २ हाथी मदसे मत्त व कहीं सिंह शब्द कररहे हैं यह देखते २ सायंकाल हुआ तब तो राजा किसी वृक्षके डालमें घोड़ेको बांध आप उसके नीचे निद्रावश शयन करनेलगा कि उसी समय कई हजार म्लेच्छ डाकू घूमते २ जहां राजा सोरहाहै वहां आय पहुँचे व राजाका घोड़ा उत्तम औ अनेक मणियोंकरके युक्त राजा के सब अंगोंका भूषण देखि हर्षितहो जा अपने स्वामीसे वृत्तान्त सुनाया यह वृत्तान्त सुनि सेनाधिपने आज्ञा दिया कि जावो जो पुरुष सोरहाहै उसको मार व सब भूषण ले व अश्वको ले आवो अथवा जीवतेही उसको पकड़ सर्वस्व लूटलो इस प्रकार म्लेच्छों

ने स्वामीकी आज्ञा पाय राजाके समीप आय खड्गको उठाय शिर काटनेका विचार किया कि उसी समय राजाके मुखसे निकल एक स्त्री सफ़ेद वस्त्र व सफ़ेदही माला आदि अनेक भूषणोंसे भूषित व हाथमें चक्र ले म्लेच्छोंका संहार करनेलगी सो थोड़ेही देरमें सबको नाश करके फिरि राजाके मुखमें प्रवेश करगई उस के प्रवेश करतेही राजाकी निद्रा खुल गई तो राजाको वह स्त्री न देखपड़ी व राजाने अनेकों वीरोंको कटे गिरे मरे देखि विस्मित हो घोड़ेपर सवारहो वनके बाहर आय वामदेव ऋषिके समीप हाथ जोड़ प्रणामकर नम्र होके पूछनेलगे कि हे महाराज! यह आश्चर्य देखि मैं आपके समीप आयाहूं सो आप सुनके मेरा भ्रम दूर करें इतना कहि वनके आगमनका वृत्तान्त सुनाय यह कहने लगा कि महाराज! जो मेरे मुखमें स्त्री शुक्लवस्त्र भूषणवाली घुसगईहै सो कौनहै और वे वीर कौनहैं जो वनमें सब कटेपड़ेहैं व किसने उनको मारा यह कौनसी मायाहै जो मेरे निद्रा करनेके प्रथम न थी व अब देखपड़ी सो आप वर्णन करें यह सुनि ऋषि जी कहने लगे कि हे राजन्! पूर्वजन्ममें तुम्हारी शूद्रजातिथी तब तुमने ब्राह्मणोंके मुखसे श्रावणकी एकादशीका विधान व फल सुना सो सुनके श्रद्धासे तुमने विधिपूर्वक व्रत किया उस व्रतके प्रभावसे इस जन्ममें तुम राजा भये सो वही एकादशी तुमको सब विपत्तियोंसे रक्षा करतीहै सो इस समय तुम्हारे शयन करते इकल्ला देखि म्लेच्छोंने मारनेका विचार कियाथा सो देवीरूप धारणकर हाथमें चक्र ले तुम्हारे शत्रुओंका संहार कर तुम्हारे शरीरमें मुखके मार्ग करके प्रवेश किया व तुम्हारी रक्षा की सो सुनि मनमें हर्षितहो वामदेव ऋषिको प्रणामकर अपनेको धन्य मान बिदाहो निज नगरकी रास्ता ली दुर्वासाजी कहतेहैं हे सत्य-तपाजी! इस प्रकारका प्रभाव श्रावणकी एक एकादशी व्रत क-रनेका हमने वर्णन किया जो श्रद्धासे सब महीनोंकी एकादशी

करते हैं उनका भाग्य हम नहीं कहसक्ते कि जिसके पुण्यसे इन्द्रादिकोंका पद मिलना बहुत सुलभहै॥

अड़तालीसवां अध्याय॥

दुर्वासाजी कहते हैं, हे सत्यतपाजी! इसी प्रकार भाद्रपद की एकादशीको करना चाहिये इसमें प्रथम तुल्य सब नियमसे कर वेदी मध्यमें पीठपर श्रीकल्की भगवान्‌की सुवर्णकी मूर्ति बनाय पञ्चामृतसे स्नान कराय स्थापनकर निज अङ्गोंमें इन मन्त्रोंसे न्यास करे पादोंमें "ॐकल्किने नमः" कटिमें "ॐहृषीकेशाय नमः" उदरमें "ॐम्लेच्छविध्वंसनाय नमः" छाती में "ॐजगन्मूर्तये नमः" कण्ठमें "ॐशितिकण्ठाय नमः" भुजोंमें "ॐ खड्गपाणये नमः" हाथोंमें "ॐ विश्वमूर्तये नमः" शिरमें "ॐ ब्रह्मणे नमः" इस प्रकार निज अङ्गोंमें न्यासकर श्रीकल्की भगवान्‌की विधिसे पूजाकर और नियम पूर्व तुल्यकर व्रत समाप्तकरे दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! इस व्रतके करनेसे जो फल होताहै व जिसने कियाहै अब वर्णन करते हैं सो श्रवण करो किसी समय काशीजीमें विशाल नाम राजा बलवान् व प्रतापी उत्पन्न भया सो राजा किसी समय शत्रुओंसे पराजितहो बदरिकाश्रममें जाय गन्धमादन पर्वतकी कन्दरा विषे विष्णु भगवान्‌के प्रसन्न करनेके लिये तप करनेलगा। तप करते करते किसी समय भगवान् नरनारायण दोनों तपस्वीका रूप धारणकर जिस कन्दरामें राजा विशाल तप कररहाथा वहां आय व राजा को नारायणका ध्यान करता देखि बोले हे राजन्! जो तुम्हारे मन का संकल्पहै सो वर मांगो हम देंगे यह सुनि नेत्र खोल हाथजोड़ प्रणामकर राजा बोला कि हे महाराज! आप कौनहैं व बिनजाने हम किससे वर मांगें व हमारा वर लेनेका संकल्प विष्णु भगवान् से है उन्हें बिना हम दूसरेका वर न लेंगे यह सुनि श्रीनारायण

भगवान् हँसके बोले कि हे राजन्! हम दोनों विष्णु भगवान्की आज्ञासे वर देने आये हैं हमको नरनारायण नाम करके जानो यह सुनि राजा प्रसन्न हो हाथ जोड़ माथ नवाय विनय करके मांगनेलगा कि हे भगवन्! आप कृपा करके यह वर देवें कि मैं यज्ञेश्वरभगवान्को विधानपूर्वक अनेक यज्ञोंकरके तृप्त करूं यह सामर्थ्य मैं चाहताहूं यह कह राजा विशाल मौन होगया सो देखि श्रीभगवान् नरनारायण बोले हे राजन्! जो तू चाहताहै सोई होगा इतना कहि कहने लगे हे राजन्! जिन भगवान् विष्णुजी ने जीवोंके कल्याण निमित्त पूर्वसमयमें मत्स्य व वराह, नृसिंह, कूर्म, वामन, परशुराम, रामचन्द्र आदि अनेक अवतार धारण कर नाना विधि क्लेश संसारका दूर कर सबको सुख दिया सोई विष्णु भगवान् धर्मसे जन्मले पृथिवीके क्षेम करनेको नरनारायण रूपसे इस पर्वतमें तप कररहे हैं सोई कलियुगके अन्तमें कल्की रूप धार म्लेच्छोंका संहारकर फिर सत्ययुगकी प्रवृत्ति करेंगे हे राजन्, विशाल! तुम्हारा उग्र तप देखि वरदेनेको आये व आजसे इस स्थानका नाम विशाला करके लोकमें प्रसिद्ध होगा इतना कह भाद्रकी एकादशीका विधान सुनाय नरनारायण भगवान् अन्तर्धान भये दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! नारायणका वचन सुन राजा प्रीतिसे विधानपूर्वक द्वादशीका व्रत करता भया उस व्रतके प्रभावसे सब शत्रुओंको जीति निज राज्यपाय अनेक यज्ञ बड़े बड़े दक्षिणाकी कर व धर्मसे प्रजा पालनकर अन्तमें वैकुण्ठवास पाया॥

उनचासवां अध्याय॥

दुर्वासाजी कहतेहैं, हे सत्यतपाजी! इसी प्रकार आश्विन मासकी एकादशीका व्रत करना चाहिये तिसमें पूर्वतुल्य स्नान आदि कलश स्थापन पर्यन्त कर्म करके वेदीमध्य पीठमें पद्मनाभ

भगवान्की मूर्ति स्वर्णकी बनाय स्थापनकर निज अङ्गोंमें इन मन्त्रोंसे न्यास करे पादों में " ॐ पद्मनाभाय नमः " कटिमें "ॐपद्मयोनये नमः" उदरमें " ॐ सर्वदेवायः नमः " छाती में " ॐ पुष्कराक्षाय नमः " हाथोंमें " ॐ अव्याय नमः " शिरमें " ॐ प्रभवाय नमः " व अस्त्रोंका पहली रीतिसे पूजनकर विधि से श्रीपद्मनाभजी भगवान्का चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप नानाभांति नैवेद्यसे पूजाकर रात्रिको जागरण करे और द्वादशी के दिन फिर मूर्तिका पूजनकर विसर्जनकर वेदपाठी ब्राह्मणको सब सामग्रीसाथ दानकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय आप सकुटुम्ब भोजनकर व्रत समाप्तकरे हे सत्यतपाजी! इस व्रतके करनेकी महिमा हम वर्णन करतेहैं सो आप श्रवणकरें पूर्व सत्य-युगमें भद्राश्वनामक राजा बड़ा प्रतापी होता भया जिसके नाम से भद्राश्ववर्ष पृथिवीका एक भाग कहाया तिस राजाके स्थानमें किसी समय भगवान् अगस्त्यजी आये तब राजाने ऋषिजीको आते देखि बड़े हर्षसे उठ पाद्य अर्घ्यदे आदरसे आसनपर बै-ठाया तब राजाकी श्रद्धा देखि पूजा अङ्गीकार कर ऋषिजी बोले हे राजन्! तुम्हारे स्थानमें हम रहनेके विचारसे आयेहैं सो सातदिन रहेंगे यह अगस्त्यजीका वचन सुनि बड़े हर्षसे राजा अङ्गीकार कर कहनेलगा हे भगवन्! अहो भाग्य मेरेहैं जो आप सरीखे महात्मा गृहस्थोंके स्थानमें घटिकामात्र नहीं रहते सो अपनी इच्छासे सातदिनकी आज्ञा दी आप सुखपूर्वक निवासकर मेरी सकुटुम्बकी सेवा अङ्गीकार कर मेरा जन्म सफल करें यह राजाका वचन सुनि ऋषिजीने प्रसन्न हो निवास किया तब राजा पांचसौ रानियोंमें मुख्य रानी कान्तिमतीके साथ ऋषिजीकी सेवा करने लगे किसी समय सेवामें कान्तिमती रानीको देखि अगस्त्यजी हर्षसे बोले हे महारानी! तू धन्यहै २ इतना कह चुप होरहे दूसरे दिन फिर रानीको देखि बोले कि देखो आश्चर्य इस

रानीने चराचर जगत्को चोरायलिया फिर तीसरे दिन रानीको देखि ऋषिजी बोले बड़ा आश्चर्यहै जो संसारके मूढ़ मनुष्य परमेश्वरको भूल जाते हैं जो परमेश्वर एकही दिनमें प्रसन्नहो राज्य देताहै फिर चौथे दिन रानीको देखि ऋषिजी दोनों हाथ उठाय बोले हे जगन्नाथ! तुम धन्यहो २ हे स्त्रियो! हे शूद्रो! हे ब्राह्मणो! हे क्षत्रियो! हे वैश्यो औ हे अगस्त्य! तुम सब धन्यहो २ इतना कहि आसनसे उठ अगस्त्यजी नृत्य करनेलगे इस चरित्रको देखि राजा भद्राश्व व रानी कान्तिमती ये दोनों आश्चर्यमें हो हाथ जोड़ नम्रहो पूछने लगे कि हे मुनीश्वर! इस अवसरमें कोई हर्षका कारण नहीं दीखता किसलिये आप खुशीहुये २ दोनों हाथ उठाये सबको तथा अपनेको धन्यवाद देते नृत्य कररहे हो यदि मेरे श्रवणयोग्य होय तो आप इस वृत्तान्तको कथनकर मेरा संदेह निवृत्तकरें यह राजाकी वाणी सुनि ऋषिजी हँसके कहनेलगे कि हे राजन्! तू व तेरी सभा सहित पुरोहित ये सब मूर्ख हैं जो हमारे अन्तःकरणकी बात नहीं जानते यह सुनि राजा बोला भगवन्! आप योगीश्वर हैं हम सब मोहान्धकारसे मूढ़ होरहे हैं आपही कृपा करके वर्णन करें तब अगस्त्यजी कहनेलगे हे राजन्, भद्राश्व! यह तेरी रानी कान्तिमती इससे पहले जन्ममें किसी नगरमें हरदत्त नाम वैश्यके घरमें सेवकीथी व तुमभी इसीके पतिथे तब उस जन्ममें शूद्र हो तुम दोनों हरदत्त वैश्यकी सेवा करतेथे किसी समय वैश्यने आश्विन मासकी एकादशीका व्रत नियमसे करने का प्रारम्भ किया उस व्रतमें विष्णु भगवान्के मन्दिरमें दीप जलाय तुम दोनोंको दीपके रक्षा करनेकी आज्ञा दी हे राजन्! वैश्य तो आज्ञा दे अपने घर चलागया तुम दोनों सारी रात्रि दीपकी रक्षामें तत्परहो निद्रा छोड़ सूर्यभगवान्के उदय पर्यन्त बैठेरहे फिर वैश्यके घरमें आय वैश्यकी आज्ञानुसार कार्य करने

लगे फिर जब तुम दोनों कालवश भये तब उस दीपकी रक्षाकी पुण्यसे इस जन्ममें राजा भये व वही स्त्री उत्तम रूप व गुण करके युक्त सब रानियोंमें प्रिया तुम्हारी रानी भई विचारकरो हे राजन्! दूसरेकी आज्ञासे विष्णुमन्दिरमें तुमने दीपरक्षा किया एकरात्रि उस पुण्यसे विष्णुभगवान्ने तुम दोनोंको राजा व रानी बनाया और जो अपना धन खर्चकर दिन २ विष्णुमन्दिरमें दीपजलाते हैं उनका पुण्य हम नहीं कहसक्के कि उनकेलिये विष्णु भगवान् क्या फल देइँ इसलिये हमने विष्णुजीको धन्यवाद दिया औ हे राजन्! सत्ययुगमें जो विष्णुभगवान् भक्ति करके एक वर्षमें प्रसन्न होतेथे सोई त्रेतामें छः मासमें व द्वापरमें तीनि मास में सो प्रसन्नता कलियुगमें नारायण इस नामके उच्चारणहीमें होतीहै इसलिये जगत्को धन्यवाद दिया कि अपने जन्मके युग अनुसार चारोंवर्ण भक्तिसे भगवान्की सेवाकर अपने २ वाञ्छा फलको प्राप्तहों हे राजन्! दूसरेकी आज्ञासे विष्णुमन्दिरमें दीप जलानेसे और रक्षाकरनेसे तुमको राज्य प्राप्ति देखि हम आनन्दितहो सब छोड़ विष्णुपूजासे अधिक दूसरा नहीं देखते इस लिये हमने अपने आपको धन्यवाद दिया और हे राजन्! स्त्री अथवा शूद्र वही धन्यहै जो अपने पतिकी तथा स्वामीकी सेवा कपट छोड़ करतेहैं व उससे जो धन लाभहो उस धनसे विष्णु भगवान्की पूजा करते हैं इसलिये उनको धन्यवादहै व प्रह्लादजी को इसलिये धन्यवादहै व असुरकुलमें जन्म ले द्रोहको छोड़ नारायणके नामबिना दूसरा कुछ नहीं जाना व ध्रुवजीको इस लिये धन्यवादहै जो महाराजोंके घरमें जन्म ले बालअवस्थामें संसारका सुख छोड़ वनमें जाय हरिको रिझाय ध्रुवगतिको प्राप्त भये इतना कह राजा भद्राश्वसे अगस्त्यजी कार्तिकी पूर्णिमाके स्नानके लिये पुष्करको जातभये व राजाभद्राश्व ऋषिजीके मुखारविन्दसे निज पूर्वजन्मकी कथा सुनि सहितरानी आश्चर्य

से आनन्दमें मग्नहो विष्णुभगवान्‌की भक्तिमें तत्पर होतेभये दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! इस प्रकार आश्विनमासकी एकादशीका माहात्म्य हमने वर्णनकिया इसको जो श्रवण व कथन करें वे दोनों इस लोकमें विष्णुभगवान्‌की कृपासे सुख, सम्पत्ति और पुत्र पौत्र युक्तहो अन्तमें विष्णुके धामको जाय वास करेंगे॥

पचासवां अध्याय॥

दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्यतपाजी! अगस्त्यमुनि राजा भद्राश्वसे बिदाहो पुष्करराज्यमें जाय कार्त्तिकी पूर्णिमाका पर्वकर कुछ दिन वहां निवासकर फिर राजाभद्राश्वके समीप आये तब ऋषिजीको आतेदेख प्रसन्नहो राजा हाथजोड़ खड़ाहो आसन दे अर्घ पाद्यसे पूजनकर ऋषिजीसे बोला हे भगवन्! आपने प्रथम आश्विनमासके एकादशीका विधान मुझे उपदेश किया सो तो मैंने यथाविधि समाप्त किया अब आप कार्त्तिकमासकी एकादशीका विधान मेरेसे वर्णनकरें जिसरीतिसे मैं इस व्रतको कर नारायणका कृपापात्र होऊं इसभांति राजाभद्राश्वकी प्रार्थना सुनि ऋषि कहनेलगे हे राजन्! कार्त्तिक मासके शुक्लपक्षकी एकादशीका व्रत जिस विधानसे करना चाहिये सो हम वर्णन करते हैं और इस व्रत करनेसे जो फल प्राप्त होताहै सो संपूर्ण वर्णन करते हैं आप सावधानहो श्रवणकरें इतना कह ऋषिजी कहनेलगे हे राजन्! पूर्वविधान करके स्नानआदि क्रियासे सावधानहो पहलीरीतिसे वेदी बनाय जलपूर्ण चार घट स्थापन कर घटोंमें चारोंसमुद्रका मंत्रोंसे आवाहन करे और वेदीमध्य स्वर्ण आदि उत्तम पीठपर श्रीनारायणजीकी मूर्ति चतुर्भुज सुन्दर बनवाय पञ्चामृत पञ्चगव्यसे स्नानकराय वस्त्रभूषणसे भूषितकर स्थापनकरे आप उस मूर्तिके सम्मुख बैठ निज अङ्गोंमें इन मन्त्रोंसे न्यासकरे। शिरमें "ॐसहस्र शिरसे नमः" भुजोंमें

" ॐपुरुषाय नमः " कण्ठमें " ॐविश्वरूपिणे नमः " छातीमें "ॐ श्रीवत्साय नमः" उदरमें " ॐजगद्विष्णवे नमः" कटिमें "ॐदिव्यमूर्तये नमः " पादोंमें " ॐ सहस्रपदे नमः" इन मन्त्रों से न्यासकर व इन्हीं मन्त्रोंसे नारायणके अङ्गोंमें षोडशोपचार से पूजाकर हाथजोड़ भक्तिसे नम्र हो मूर्तिसे प्रार्थनाकर मन्त्र जपकर हवनकरे व रात्रिके समय सहित कुटुम्ब सज्जनोंके साथ जागरणकरे इसप्रकार पूजाकर प्रातःकाल विसर्जन करे व चारों कलश क्रमसे चारों वेदके पाठी ब्राह्मणोंको दे व मूर्तिको सहित दक्षिणा व पीठ गुरुको देय व वर्तमान समय गुरु न होय तो और किसी उत्तम ब्राह्मणको देय जो गुरु साक्षातहो तो उनको छोड़ और किसीके देनेमें व्रत निष्फल होताहै व देवकोपभी होताहै इस प्रकार मूर्तिका दानकर यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराय दक्षिणा दे आप सकुटुम्ब भोजनकरे। दुर्वासाजी कहते हैं हे सत्य-तपाजी ! इसीप्रकार धरणी ने रसातल में इस व्रतको कियाहै तो नारायण सन्तुष्ट हो वाराहरूप धार धरणीको जलके ऊपर लाय स्थापन किया व इस व्रतके करनेसे ब्रह्माजी प्रजापति कहाये व हैहयवंशका राजा कृतवीर्य इस व्रतके करनेसे दिग्विजयी बड़ाबली कार्त्तवीयार्जुननाम पुत्रको पाया व शकुन्तलाभी इस व्रतके प्रभावसे भरतनाम चक्रवर्ती पुत्रको उत्पन्न किया और हे सत्यतपाजी ! जिस २ ने जिस २ कामनाके लिये इस व्रतको किया उसका २ सब मनोरथ सिद्ध हुआ इस व्रतको प्रथम धरणी के करनेसे धरणीव्रत नामहै सो हमने वर्णन किया जो पुरुष भक्तिसे इस कथाको सुनै या सुनावै सो सब पापोंसे मुक्तहो विष्णु भगवान्के समीप वास पावे इसप्रकार अगस्त्यजी राजाभद्राश्व को उपदेशकर आप अन्तर्धानभये व राजाभी ऋषिजीके वचन में दृढ़हो विधानसे एकादशीका व्रतकर इसलोकमें अनेक सुख भोग अन्तमें वैकुण्ठधाम गया ॥

इक्यावनवां अध्याय ॥

वाराहजी कहतेहैं हे धरणि ! इस प्रकार सत्यतपाजी दुर्वासा ऋषिका वचन सुनि निस्संदेहहो हिमाचल पर्वतके समीप जाय पुष्पभद्रा नदीके तट चित्रशिलापर आश्रम बनाय भद्रवटके समीप तप करनेलगे व दुर्वासाजी इतना सुनाय अन्तर्धानभये इस कथाको वाराहजीके मुखसे सुनि धरणी कहनेलगी हे भगवन्! बहुत कल्पके व्रत करनेसे अब आपकी कृपासे मैं जातिस्मर भई व मेरेको अनेक जन्मोंका स्मरण हुआ व मेरा शोक दूर भया अब फिर अगस्त्यमुनि व राजाभद्राश्वका वृत्तान्त सुना चाहतीहूं कि इस विलक्षण कथा सुननेसे मेरी तृप्ति नहीं होती सो आप कृपा करके फिर वर्णनकरें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि ! किसीसमय राजाभद्राश्वके समीप अगस्त्यजी फिर आये तब राजा ऋषिको देखि पाद्यार्घसे पूजनकर आसनदे प्रणाम कर कुशलप्रश्न पूछि राजा भद्राश्व पूछने लगा कि हे महाराज ! मनुष्य किस कर्मके करनेसे संसारबन्धनमें पड़ नानाजन्म ले सुख दुःख भोगताहै व किस कर्मके करनेसे संसारबन्धनसे मुक्त होता है सो आप वर्णनकरें यह राजाका प्रश्न सुनि अगस्त्यजी कहने लगे हे भद्राश्व ! इस विषयमें हम एक बड़ी दिव्य कथा वर्णन करतेहैं सो आप सावधानहो श्रवणकरें हे राजन् ! जिसके ज्ञान से भवफन्द छोड़ मनुष्य मुक्त होताहै सो पदार्थ दृश्य व अदृश्य दोनोंहैं कि ज्ञानसे दृश्य अर्थात् दीखताहै व तिस ज्ञान विना अदृश्य अर्थात् नहीं दीखता व हे राजन् ! जिसको ज्ञान कहते हैं सो पदार्थ निर्विकार तीनों कालमें अर्थात् भूत, भविष्य, वर्तमान कालमें समरसहै न कम न ज़्यादह एकही रूपसे रहताहै उस में न दिनहै न रात्रिहै तो सूर्य व चन्द्रमा किसप्रकार होसकतेहैं जो सूर्य चन्द्रमा नहीं तो दिशा, विदिशा, समुद्र, पर्वत कुछभी

नहीं हैं उस अवस्थामें केवल विज्ञानरूप परमात्मा निजरूपसे निज प्रकृतियोंके साथ किसप्रकार क्रीड़ा करताहै जैसे पशुपाल पशुओंको दण्ड ले स्वाधीन क्रीड़ाकरे हे राजन्! सो परमेश्वर अपने खेल करनेके लिये आपतो जीवरूप इस देहमें विराजमानहै व इन्द्रियां पशुरूपहैं असमर्थ व पराधीन होनेसे पशुरूप वर्णन कियेगये व पशुओंका विहार वनमें होताहै यहां अनेक प्रकारकी वासनाही वनहै वनमें अनेक भांतिके तृण होतेहैं यहां सुख दुःख यही तृणहैं व वनमें जल होताहै इसमें तृष्णाही जल है व वनमें अजगर आदि सर्प होतेहैं यहां मोह, निद्रा, प्रमाद, मद, मत्सरता, क्रोध, लोभ आदि छोटे बड़े यही सर्प हैं व वनमें ठग लुटेरे होतेहैं यहां स्त्री पुत्रादि कुटुम्ब येही ठगहैं अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्, भद्राश्व! इसप्रकारके वनमें परमेश्वरने पशुओं के साथ क्रीड़ा करने को प्रारम्भ किया उस समय क्रीड़ा करते २ जब गहरे वनमें जापहुंचा तब एक विलक्षण स्त्री कि जिसके देह से हजार सूर्यका तेज प्रकाश होरहाहै उस स्त्रीको देखि राजाने प्रसन्न व मोहित होकर ज्यों बातचीत करनेका विचार किया त्योंहीं राजा व पशुओंको अनेक विषधर सर्प चारोंओरसे लिपटगये उन सर्पोंको निजदेहमें लिपटे देखि व्याकुल हो राजा शोचनेलगा कि इन दुष्टोंसे किस प्रकार करके पीछा छूटे व कहांसे यह विपत्ति आय मेरे पीछे पड़ी इसी विचारको राजा कर रहाथा कि आगे एक पुरुष तीन रङ्गका आय खड़ाहुआ उस पुरुषका मुख शुक्ल वर्ण व कण्ठके नीचे कटि तक रक्तवर्ण व कटिके नीचे पैरोंतक कृष्णवर्ण ऐसे विलक्षण पुरुषको देखि राजा आश्चर्यमें हो विचार करनेलगा कि उसी समय उस विचित्र पुरुषकी देहसे एक भयंकर पुरुष निकल यह बोला कि हे राजन्! कहां जाताहै हमारे साथ युद्धकर इतना कह आगे रोकके खड़ा हुआ तिसको देखि राजाको अधिक आश्चर्य हुआ कि उसी समय स्त्री बोली

हे राजन्! इस पुरुषको तू न डर मैं तेरी रक्षा करूंगी इतना सुनि और एक पुरुष राजाकी देहमें क्रोधकर लिपिट गया व उसको राजाकी देहमें लिपटा देखि पांच पुरुष और लपटगये इस प्रकार कइयोंको अपनी देहमें लिपटा देखि राजा विचारने लगा कि क्या आश्चर्यहै व किस भांति इन्होंसे प्राण बचे इस प्रकार राजाको दुःखी देखि विचित्र तीन वर्णका पुरुष बोला हे राजन्! हम तेरे पुत्रहैं जो आज्ञाहो सो करें यह सुनि राजा बोला जो तुम हमारे पुत्र हो तो इस विपत्तिसे हमको बचाओ यह राजाकी आज्ञा सुनि वह विचित्र पुरुष सब मायाको अपने अङ्गोंमें लीन करके बोला हे राजन्! अब निर्भय हो हमारे विस्मरणसे तुमको यह क्लेश हुआ अब ऐसे दुःखमें नहीं पड़ोगे इस प्रकार उस विचित्र पुरुषकी वाणी सुनि व उन दुष्टोंको निवृत्त देखि राजा सावधान होकर प्रसन्न भया॥

बावनवां अध्याय॥

अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्, भद्राश्व! जो तीन वर्णका पुरुष हमने वर्णन कियाहै उससे अहंनाम पुत्र उत्पन्न भया व अब बोधानाम कन्या उत्पन्न भई उस बोधा कन्याके विज्ञाननाम पुत्र उत्पन्न भया उस विज्ञानके पञ्चसर्परूप पांच पुत्र उत्पन्न भये सो पांचों अक्षनाम कहाये इन्हीं सबने मिलके राजाको वश किया हे राजन्, भद्राश्व! ये केवल नाममात्रहैं इनके स्वरूप नहींहैं परन्तु इनका समुदाय नवद्वार देहमें रात्रिदिन निवास करताहै व जिसमें नवद्वारहैं वो एकही स्तम्भ है व चतुष्पथमें अर्थात् चौराहेमें टिकाहै फिर वो देहस्तम्भ कैसाहै कि जिसमें हज़ारों नदियां बहरहीहैं इस प्रकारके पुरमें प्रवेश करतेही पुरुष संज्ञा होतीहै औ उसीकी पशुपालसंज्ञा भीहै हे राजन्, भद्राश्व! परमेश्वर निज कहीहुई वेदरूपवाणीके सफल करनेको इस शरीर

स्तम्भमें निवासकर अपने आप पशु क्या अज्ञान हो व्रत, नियम, दान, यज्ञ आदि अनेक भांतिके सत्कर्मोंको करताहै उस समयके कार्योंमें उत्तरोत्तर रुचि होना सोई सहस्र सूर्यके समान प्रकाशमान स्त्री जो कहआये हैं सो है व तीनि रङ्गका जो पुरुष वर्णन कियाहै सो तीनगुणहैं सात्त्विक, राजस, तामस पुरुषसे उत्पन्न होनेसे पुत्ररूप रूपहै व जो लिपटजानेवाले सर्प हैं सो प्राणहैं जो पुरुषमें नित्य लिपटे रहतेहैं और जो भयानक पुरुष लिपटा हुआ हमने वर्णन कियाहै सो अहंकारहै जो रात्रि दिन अपने वशमें कर रक्खाहै और जो रक्षा करनेवाली स्त्रीहै सो बुद्धिहै और नवद्वार वो हैं कि मुख १ कर्ण २ नासिका २ नेत्र २ गुदा १ लिङ्ग १ इनकी द्वारसंज्ञाहै सो इन्हीं मार्गोंसे पुरुष शरीरके बाहर होताहै अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! जब उस प्रकाशमान स्त्रीसे ज्ञाननामक पुत्र उत्पन्न होताहै तो वेदोक्तमार्गमें रुचि होतीहै उस रुचि होनेसे अनेक भांतिके सत्कर्म अर्थात् व्रत, तीर्थ, दान, यज्ञ, योग, तपआदि करके विज्ञानको प्राप्तहोय पशुपालधर्मको छोड़ सम्पूर्ण भयसे निवृत्तहो निज सनातन स्वरूपको प्राप्तहो जीवन्मुक्त होजाताहै अन्यथा ज्ञानहीन काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, मत्सरता ये छह अविद्या से उत्पन्नहैं इसीसे इनकी पशुसंज्ञाहै व इन्हींके वश होके रात्रि दिन इन्हींके व्यापारमें रहनेसे जीवात्मा पशुपाल कहाताहै हे राजन्! जीवात्मा सर्वोपरि अर्थात् इन्द्रियादिकोंके प्रकाश करनेसे राजासंज्ञा पाई इसलिये राजाको यही उचितहै कि प्रजा को कुमार्गके दुराचरणोंसे बचावे व अपने स्वाधीन रक्खे तभी राजाका राज्य सुशोभित होताहै व राजाको प्रजाके आधीन होनेसे राज्य भ्रष्ट होजातीहै व शत्रुओंके वश होना पड़ताहै इस लिये राजा अविद्याको छोड़ मन्त्रीके सम्मतिसे विद्याका परिशीलनकर राग द्वेष अर्थात् वैर प्रीति छोड़ पुत्र, मित्र, शत्रु

आदिमें समदर्शीहो धर्मसे अखण्ड राज्यभोगि अन्तमें उत्तम गतिको प्राप्त होय ॥

तिरपनवां अध्याय ॥

राजा भद्राश्व अगस्त्यजीके मुखारविन्दसे ज्ञानोपदेशको सुनि बोला कि हे भगवन्! आपने कृपा करके मुझे ज्ञानोपदेश तो दिया परन्तु अब कृपाकर आप यह वर्णन करें कि किस आराधनसे ज्ञानोत्पत्ति होतीहै इस प्रकार राजाका प्रश्न सुनि ऋषि जी कहनेलगे कि हे राजन्! विष्णुभगवान्के अराधनसे भोग व मोक्ष ये दोनों फल सुलभ होते हैं इसलिये विष्णुभगवान्के आराधन करनेकी रीति वर्णन करते हैं सो आप सावधानहो श्रवण करें हे राजन्! चारोंवेद व अङ्गोंसहित छवोंशास्त्र व पुराणों की भी यही आज्ञाहै जो क्या देवता क्या मनुष्य अपना कल्याण चाहे तो शुद्धभावसे नारायणको भजे इस विषयमें एक पुरातन इतिहास वर्णन करते हैं सो आप सावधानहो श्रवण करें किसी समय नारद मुनि देवलोकमें जाय इन्द्रजीके नन्दनवनकी शोभा देखने लगे वहां बहुत अप्सराओंके समूह इच्छापूर्वक उस वनमें विहार कररहेथे सो नारदजीको देखि निजरूपके गर्वसे माती हुई आय ऋषिजीके चारोंओर खड़ीहो कहनेलगीं हे नारदजी! आप महात्माहैं कोई ऐसा उपाय उपदेश करें जिसमें नारायण हमारे पतिहों यह अप्सराओंका वचन सुनि नारदजी बोले हे अप्सराओ! तुम सबोंने निज२ रूप व युवाअवस्थाके गर्वसे हमारे प्रणाम नहीं किया व नम्रता नहीं दिखाई परन्तु हमने नारायणका नाम सुनतेही सब तुम्हारा अपराध क्षमा किया व तुमसे प्रसन्नहो यह व्रत कहतेहैं सो सावधानहो सुनो अवश्य तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होगा यह कहि कहने लगे कि हे स्त्रियो! वैशाखमासके शुक्लपक्षमें द्वादशीका व्रत करनेसे कौनसा पदार्थ

दुर्लभहै जो नहीं प्राप्त होता उस द्वादशीका व्रत कर रात्रिके समय भक्तिसे नृत्य व राग भगवान्के समीप करे व अनेक प्रकारकी पूजाकर नानाभांतिकी नैवेद्य अर्पण करे इसभांति पूजा समाप्त कर प्रातःकाल वेदविद् ब्राह्मणको बुलाय विधिसे नारायणप्रीत्यर्थ हवन कराय उत्तम गऊ बछरेके साथ दान करे व यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय दक्षिणा दे व्रत समाप्त कर आप कुटुम्ब के साथ भोजन करे हे स्त्रियो! इस प्रकार व्रत करनेसे अवश्य नारायण तुम्हारे स्वामी होंगे व तुम उनकी स्त्री होगी परन्तु निज रूपके गर्वसे जो तुमने हमारे प्रणाम नहीं किया इस पाप से अष्टावक्र मुनिको देखि तुम उनका हास्य करोगी और वे तुमको शाप देंगे उस शापसे अन्तमें नारायणका व तुम्हारा वियोग होगा व गोपाल तुम्हारा हरण करेंगे इतना कह नारदजी अन्तर्धान भये व अप्सराओंने प्रीतिसे उस व्रतके करनेका प्रारम्भ किया इस प्रकार अगस्त्यजी राजा भद्राश्वसे कथन करते हैं कि हे राजन्! यह उत्तम पति प्राप्त होनेका व्रत हमनें वर्णन किया अब क्या सुना चाहतेहो सो कथन करें?॥

चौवनवां अध्याय॥

राजाभद्राश्व अगस्त्यजी से प्रश्न करते हैं हे भगवन्! अब आप औरभी व्रत वर्णन करें जिसके करनेसे नारायण प्रसन्न हो हमारे अनेक कल्याण करें यह राजाका प्रश्न सुनि अगस्त्यजी कहने लगे हे राजन्! व्रतोंमें परम उत्तम व्रत हम कहते हैं सो आप श्रवणकरें कार्त्तिकमाससे तीन मास तक प्रत्येक महीनोंमें दशमी को एक भक्तकर एकादशीका व्रत करे व द्वादशी में पारण करें हेराजन्! इस व्रत करनेकी यह रीतिहै कि संकल्प कर व्रतको धारण करे व मासके नामसे नारायणका विधिपूर्वक पूजनकर निराहार व्रत करे व नारायणके समीप सुवर्णकी गौ व सुमेरुपर्वत व

भूमि इनकी मूर्ति बनाय स्थापन करे तिस भूमिपर अनेक भांति के अन्नको स्थापनकर दो शुक्ल वस्त्रसे गौ व पृथ्वी व पर्वत इन्हों को आच्छादन करे अर्थात् ढांप लेय व नारायणको पञ्चरत्न अर्पण करे व रात्रिमें जागरण करे प्रातःकाल द्वादशीको नारायण की पूजाकर चौबीस ब्राह्मण उत्तम वेदपाठीको निमन्त्रण दे छवों रससहित भांति भांतिके व्यञ्जन भोजन कराय एक २ ब्राह्मण को धोतीका जोड़ा, साफा, अंगुलीयक, यज्ञोपवीत, कुण्डल, कड़े, छत्र, पादुका, जलपात्र और शीतनिवृत्त होनेका उत्तम ऊर्णा-वस्त्र व सवत्सा गौ व ग्राम एक २ ब्राह्मणको नम्रहो प्रीतिपूर्वक दे हे राजन्! बहुतसी सामग्री न हो तो पादुका, छत्र, जलपात्र, धोतीका जोड़ा और गौ तो अवश्यही दे ये सब दान दे ब्राह्मणों से हाथ जोड़ नारायणका ध्यानकर यह कहै कि इस दान व ब्राह्मण भोजनसे श्रीभगवान् कृष्ण दामोदर प्रसन्न हों हे राजन्! इस प्रकार ब्राह्मणोंको भोजन कराय दक्षिणा दे विदाकर आप सकुटुम्ब पारणकर व्रत समाप्त करे इस विधिसे जो एकबार व्रत करे उसकी पुण्य कहनेमें नहीं आती असंख्य पुण्य होती है अब एक कथा वर्णन करते हैं सो आप श्रवण करें हे राजन्! पूर्व सत्ययुगमें मर्षणनाम राजा हुआ सो किसी समय ब्रह्मलोकमें जाय सन्तानकी वाञ्छासे ब्रह्माजीको मिलि प्रणामकर विनयसे पूछने लगा कि हे भगवन्! आप कृपा करके कोई उपाय मुझे उपदेश करें जिसके करनेसे मैं सन्तानका सुख देखूं यह राजा मर्षणका वचन सुनि ब्रह्माजी ने इसी व्रतका उपदेश किया अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! जो हम प्रथमकह आये हैं सो राजा मर्षण ब्रह्माजीके उपदेशको अङ्गीकार कर व्रत करने लगा तब व्रत समाप्त होतेही नारायण प्रसन्न हो प्रकट भये व राजासे बोले हे मर्षण! तेरे व्रतसे हम प्रसन्नहैं जो इच्छाहो सो वर मांग यह सुनि राजा मर्षण हाथ जोड़ नम्रतासे यह बोला

हे भगवन्! आप कृपा करके यह वर देवें जो उत्तम गुणों करके संपन्न बहुत काल जीवनेवाला राजर्षियोंके अर्थात् बड़े २ वृद्ध राजाओंकी रीतिमें चलनेवाला व इस वंशका प्रकाशक अनेक उत्तम २ यज्ञोंसे आपका तृप्ति करनेहारा पुत्र दीजिये व मेरेको उस स्थानमें प्राप्तकरें कि जिसको प्राप्तहो माहात्मा जन सब शोक छोड़ सुखी होते हैं इतनी वाणी राजाकी सुनि विष्णुभगवान् प्रसन्नहो 'एवमस्तु' अर्थात् ऐसाही होगा यह कह अन्तर्धान भये व विष्णुभगवान्‌की कृपावरसे राजामर्षणको तैसाही पुत्र प्राप्त भया जिसका नाम जगत् विख्यात वत्सश्री हुआ सो राजपुत्रने वेदवेदाङ्गको पढ़ पारगामीहो अपनी कीर्तिरूप सुगन्धसे पृथ्वीको सुवासित किया इस प्रकार अनन्त भगवान्‌का दिया तैसाही अनन्तगुणसम्पन्न पुत्र देखि राजा मर्षण अपनेको धन्य मान राज्यभार पुत्रको दे आप विषयोंसे निवृत्तहो साधुओंका वेषधर वनमें जाय इन्द्रियोंको जीत सावधानहो तप करता विष्णु भगवान्‌को प्रसन्न करने लगा इतनी कथा सुनि राजा भद्राश्व ऋषिजीसे प्रश्न करते हैं कि हे अगस्त्यजी! कौनसी स्तुति राजा मर्षणने परमेश्वरकी करी जिससे विष्णुभगवान् प्रसन्न भये सो आप वर्णन करें यह सुनि दुर्वासाजी बोले हे राजन्! राजामर्षण हिमवान् पर्वतमें जाय आमवृक्षकी छायामें बैठ तद्गत अर्थात् सब चिन्ता छोड़ विष्णुभगवान्‌का ध्यान करता स्तुति करने लगा सो आप श्रवण करें (अथ स्तुतिः। क्षराक्षरं क्षीरसमुद्रशायिनं पृथ्वीधरं मूर्तिमतां परंपदम्। अतीन्द्रियं विश्वभुजां पुराकृतं निराकृतिं स्तौमि जनार्दनं प्रभुम्। त्वमादिदेवः परमार्थरूपी विभुः पुराणः पुरुषोत्तमश्च। अतीन्द्रियो वेदविदां प्रधानः प्रपातु मां शंखगदाब्जपाणिः। कृत्यं त्वया देवसुरासुराणां संकीर्त्यमानेन अनन्तमूर्ते। सूक्ष्मार्थमेतत्तव देव विष्णोस्संकीर्त्तितं कूटगतं च मत्स्यम्। तथापि कूर्मत्वमृगत्वमुख्यैस्त्वया कृतं रूपमनेकरूप।

सर्वेऽज्ञभावादसकृञ्चजन्म संकीर्त्यसेऽच्युतजनैश्च त्वमेव नाथ।
नृसिंहवामन नमो जमदग्निजात दशास्यगोत्रान्तक वासुदेव।
नमोस्तुते बुद्ध कल्किन्सुरेश शम्भो नमस्ते विबुधारिनाशन।
नमोऽस्तु नारायण पद्मनाभ नमोनमस्ते पुरुषोत्तमाय। नमस्सम-
स्तामरसद्मपूज्य नमोऽस्तु ते सर्वविदां प्रधान। नमः करालास्य
नृसिंहमूर्ते नमो विशालाद्रिसमानकूर्म। नमस्समुद्रप्रतिमानम-
त्स्य नमामि त्वां क्रोडरूपिन्ननन्त। सृष्ट्यर्थमेतत्तव तद्विचेष्टितं
न मुख्यपक्षे तव मूर्तिता विभो। अजानताध्यानमिदं प्रकाशितं न
लक्ष्यसे त्वं पुरुषः पुराणः। आद्यो मखस्त्वं स्वयमेव विष्णो म-
खाङ्गभूतोऽसि हविस्त्वमेव। पशुर्भवानृत्विगाज्यं त्वमेव त्वां देव-
संघा मुनयो यजन्ति। चलाचलं जगदेतच्च यस्मिन् सुरादिका-
लानलसंस्थमुत्तमम्। न त्वं विभक्तोऽसि जनार्दनेश प्रयासि
सिद्धिं हृदये मनांसि मे। नमः कमलपत्राक्ष मूर्तामूर्त नमो हरे।
शरणं त्वां प्रपन्नोऽस्मि संसारान्मांसमुद्धर) इस प्रकार मर्षण
राजा विष्णुभगवान्‌की स्तुति कररहाथा कि श्रीभगवान् सुन
कुब्जरूप धारणकर आये राजाके समीप खड़ेभये उसी समय
जिस आम्रवृक्ष के नीचे राजा तप कररहाथा सो आम्रवृक्षभी
विष्णुभगवान्‌के आतेही कुब्ज होगया सो देखि राजामर्षण आ-
श्चर्यमेंहो विचारनेलगा कि यह वृक्ष आम्रका इस समय तक
सीधी शाखाओंसे सुशोभितथा अब कुब्जसा क्यों होगया इसी
विचारमें राजामर्षण कुब्ज ब्राह्मणको सन्मुख खड़ा देखि मनमें
यह निश्चय किया कि इसी कुब्ज ब्राह्मणके आगमनसे इसकी
कुब्जता होनेसे हो न हो इसीकी माया दिखातीहै इसलिये शा-
यद येही श्रीभगवान् पुरुषोत्तम न हो यह विचारतेही श्रीविष्णु
भगवान् उसी क्षण कुब्ज ब्राह्मणका रूप छोड़ निज पुरुषोत्तम
रूपसे शंख, चक्र, गदा, पद्मसे भूषित प्रकटहो मधुर वाणीसे
राजाको मोह करते बोले हे राजन्! हम तुम्हारे परम तपश्चर्या

से बहुत प्रसन्न भये अब जो तुम्हारा विचारहो सो वर मांगो हमारे प्रसन्न होनेसे त्रैलोक्यमें कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है इस प्रकार विष्णुभगवान्‌का वचन सुनि आनन्दसमुद्रमें मग्न हुआ२ राजा मर्षण हाथ जोड़ प्रणामकर कहनेलगा कि हे भगवन्! आपकी कृपा से संसारसुख में सब भोगकर चुका हूं अब किसी पदार्थकी वाञ्छा मुझे नहीं है केवल मुक्ति दीजिये कृपा करके जिसमें अपार संसारसागरसे पारहो सब मायाके दुःखों से छूट ब्रह्मानन्द सुखका भागी होऊं यह राजा मर्षणकी प्रार्थना सुनि श्रीभगवान् दयानिधान बोले कि हे राजन्! हमारे दर्शन से व निष्काम भक्तिसे तुमको मोक्ष प्राप्त होगी और यहां हमारे आतेही आम्रवृक्ष जो कुब्ज हुआ इसलिये इस भूमिका नाम लोकमें कुब्जाम्र करके महापुण्य तीर्थ प्रसिद्ध होगा और इस तीर्थमें कोई मनुष्य अथवा पशु पक्षी आदि स्नान वा जल स्पर्श करेंगे वे सर्व पापोंसे मुक्तहो पांचसौ विमानवासियों करके सेवा को प्राप्त उत्तम विमानपर बैठि देवलोकको प्राप्त होंगे इतना कह श्रीविष्णुभगवान् निजकरकमलसे पाञ्चजन्य शंख ले राजा मर्षणके अङ्गमें स्पर्शकर अन्तर्धान भये औ शंखके स्पर्श होते ही राजा शरीर छोड़ संसारबन्धनसे मुक्तहो निर्वाणपद अर्थात् मोक्षको प्राप्त होताभया अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! तुमभी श्रीनारायणकी शरणमें प्राप्तहो जिस करके फिर शोच कभी न हो व जो इस उत्तम इतिहासको सुने वा सुनावे वह संसारसुखको भोग अन्तमें मुक्तिभागीहो और हे राजन्! यह शुभ व्रत जो प्रीतिसे करे सो सब प्रकारके मनोरथको प्राप्तहो अन्तमें विष्णुभगवान्‌के चरणमें लीन होय॥

पचपनवां अध्याय॥

अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! अब धन्यव्रत वर्णन

करतेहैं सो आप सावधानहो श्रवण करें जिस व्रतके करनेसे अ-भागी पुरुषभी परमेश्वरकी कृपासे धन्य होता है मार्गशीर्ष मास में शुक्लपक्षकी प्रतिपदा तिथिको नक्तव्रत विधानसे अग्निस्थापनकर विष्णुभगवान्‌की पूजा करे वेदी बनायके अथवा कुण्डही में अग्निको वेदविधिसे स्थापनकर व अग्निमें विष्णुभगवान् का स्वरूप ध्यानकर विधिसे पूजनकर इन मन्त्रों से हवनकरे ॐवैश्वानरायस्वाहा। ॐअग्नये स्वाहा। ॐहविर्भुजाय स्वाहा। ॐद्रविणादाय स्वाहा। ॐसंवर्त्ताय स्वाहा। ॐज्वलनाय स्वाहा। ॐदेवमुखाय स्वाहा। इन मन्त्रोंसे हविष्य अर्थात् खीरका व घृत का शर्करा मिलाय आहुति दे जो शेष रहे उसे भोजन करे और इसी प्रकार कृष्णपक्षमें भी करे चार मास व चैत्र महीनेसे चार मास यवका चावल दुग्धमें पककर घृतको मिलाय इसी भांति होमकर भोजन करे व श्रावण आदि चार मासोंमें यवका सत्तू घृत मिलायके हवनकर वोही भोजन करे कार्त्तिक मासमें व्रत समाप्तकरे व्रतके समाप्तसमयमें स्वर्णकी अग्निमूर्ति बनाय पञ्चगव्य पञ्चामृतसे स्नान कराय रक्तरेशमकी दो धोती ले ताम्रका कलश स्थापन कर उसके ऊपर एक वस्त्र नीचे बिछाय मूर्तिको स्थापनकर पञ्चोपचारसे पूजनकर दूसरे रक्ताम्बरसे मूर्तिको ढांप हवन पूर्वमन्त्रों से कर उत्तम सुशील वेदपाठी ब्राह्मण बुलाय मधुर भोजन कराय दक्षिणा दे कलश सहित मूर्ति उसी ब्राह्मण को दान दे इसमन्त्रसे हाथ जोड़ प्रार्थनाकरे (ॐधन्योऽस्मि धन्य कर्मास्मि धन्यचेष्टोऽस्मि धन्यवान्। धन्येनानेनचीर्णेन व्रतेन स्यात्सदासुखी) इस प्रकार प्रार्थनाकर ब्राह्मणको बिदाकर आप सकुटुम्ब पारणाकर व्रतको समाप्त करे अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्, भद्राश्व! इस व्रतके करनेसे अग्निरूपी विष्णुभगवान् प्रसन्नहो अनेक जन्मके पातकराशि को भस्मकर उस पुरुषको धन्यकर नानाभांतिके सुखको देते हैं व अन्तमें मोक्ष देते हैं

अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! इस उत्तम कथाको जो पुण्य पर्वमें सुने वा सुनावे वे दोनों धन्यताको प्राप्तहों और इस व्रतको पूर्वजन्ममें श्रीकुबेरजीने कियाहै व इसी प्रतापसे शूद्रयोनि को त्याग ब्राह्मणका पुत्रहो निधीश व लोकपालताको प्राप्तभये॥

छप्पनवां अध्याय॥

अगस्त्यजी कहतेहैं, हे राजन्, भद्राश्व! अब हम कान्ति-व्रत कहतेहैं सो श्रवण कीजिये जिस व्रतके करनेसे चन्द्रमा दक्ष प्रजापतिके शापरूप क्षयरोगसे छूट फिर कान्तिको प्राप्तभये सो व्रत हे राजन्! कार्त्तिककी शुक्लद्वितीयासे प्रारम्भ करना चाहिये और चार चार महीनेका नियम होताहै इस प्रकार तीन नियम से वर्षपर्यन्त व्रत करना चाहिये सो हम वर्णन करतेहैं दिनभर व्रत कर सायंकालमें वेदी बनाय ताम्रकलश स्थापनकर उसके आगे उत्तम पीठपर श्रीकृष्ण व बलभद्रजीकी मूर्ति स्वर्ण आदि से बनाय पञ्चामृतसे स्नान कराय पीत व नील वस्त्रसे भूषितकर पुष्प व मालासे शृङ्गारकर केसर, चन्दन, धूप, दीप और नैवेद्य से भक्तिपूर्वक भलीभांति पूजनकर चन्द्रोदय समयमें ताम्रपात्र में जल ले सफ़ेद चन्दन अक्षत व सफ़ेद पुष्प मिलाय अर्घ्य दे यवान्न दुग्धमें पकाकर भोजन करे इस प्रकार माघतक समाप्तकर फाल्गुनसे ज्येष्ठमासतक क्षीरमें चावलको पकाकर खीर बनाय इसीभांति श्रीकृष्णजीकी तथा बलभद्रजीकी पूजाकर अर्घ्य दे व्रत समाप्तकर फिर आषाढ़माससे आश्विन मासतक तिल व गुड़की नैवेद्य लगावे और पूर्ववत् पूजा व अर्घ्य दे आप तिल व गुड़का भोजनकर अन्त में चांदीकी मूर्ति व सुवर्णकी मूर्ति सफ़ेद रेशमी धोतीका जोड़ा साथ ब्राह्मणको दान देवे और इस व्रतके प्रभावसे पुरुष कान्ति करके सब मनुष्यों को प्रिय होता है अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! इस व्रतके करनेसे

चन्द्रमाजी क्षयरोगसे मुक्तहो श्रीविष्णुभगवान्की कृपासे अमृता नाम कलाको प्राप्तहो वृद्धिको प्राप्त भये और हे राजन् ! मनुष्य इस व्रतके प्रभावसे जो जो पदार्थ वाञ्छा करे कैसाही दुर्लभहो सब विष्णुभगवान् प्रसन्न होकर सुलभ करदेते हैं ॥

सत्तावनवां अध्याय ॥

अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व ! अब आप सावधानहो सौभाग्य व्रत श्रवण करें जिस व्रतके करनेसे स्त्रीहो वा पुरुष कैसहू भाग्यहीन होय परन्तु भाग्यवान् होजाताहै हे राजन् ! सो व्रत फाल्गुनमासकी शुक्लतृतीयासे प्रारम्भ करना चाहिये और इस व्रतका करनेहारा मनुष्य पवित्र व सत्य करके युक्तहो लक्ष्मीनारायणका वा गौरीशंकरका पूजन करे हे राजन् ! लक्ष्मी व पार्वती नारायण व शिवजी इनमें कुछ भेद नहींहै वेद और शास्त्रका यही निश्चयहै कि ये परस्पर एकही हैं केवल नाममात्र भिन्नहै और हे महाराज ! शिव विष्णुमें अथवा गौरीलक्ष्मी में जे भेद बुद्धि करें वे धूर्त्त और नास्तिकहैं सब धर्मोंसे बाह्य उन्हें जानना चाहिये इसलिये शिवके पूजन करने से विष्णु भगवान् प्रसन्न होते हैं व उन्हींके पूजनसे शिवजी प्रसन्न होते हैं यह जानि इस सौभाग्यव्रतमें उत्तम पीठपर चांदीकी वा स्वर्ण की मूर्ति सस्त्रीक शिव वा विष्णुकी बनवाय पञ्चगव्य व पञ्चामृतसे स्नान कराय उत्तम वस्त्रसे वेष्टित कर चन्दन, पुष्प, माला, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूलसे पूजनकर मूर्तिके अङ्गोंमें इन मन्त्रोंसे पुष्पाञ्जलि दे पूजन करे पादोंमें "ॐगंभीराय नमः" कटिमें "ॐसुभगाय नमः" उदरमें "ॐदेवदेवाय नमः" मुखमें "ॐत्रिनेत्राय नमः" शिरमें "ॐवाचस्पतये नमः" सर्वाङ्गमें "ॐरुद्राय नमः" इस प्रकार पुष्पाञ्जलि व पूजन कर मूर्तिके आगे यथाविधि अग्निको स्थापनकर मधु व घृत तिल करके "ॐसौभाग्यपतये

नमः" इस मन्त्रसे हवन करे रात्रिको जागरणकर नृत्य, गीत, स्तुति से परमेश्वरको प्रसन्नकर प्रातःकाल पूजा समाप्तकर केवल गोधूम भोजन करे इसी भांति दोनों पक्षकी तृतीया का व्रतकर्त्ता तीन मास पूराकर आषाढ़माससे तीन मासतक इसीभांति पूजा कर जब अन्नका पारण करे और कार्त्तिक माससे श्यामाक अन्न अर्थात् सँवाँका पारणकर माघमासके शुक्लपक्षकी तृतीयाको पहली भांति पूजनकर सहितसामग्री व मूर्ति किसी दरिद्री वेदपाठी आचारवान् ब्राह्मणको बुलाय दानकर दानकी साङ्गतामें छः पात्रोंमें मधु, घी, तिल, गुड़, लोन और गोदुग्ध इन पदार्थोंको भर दान करे हे राजन्! इस व्रतके प्रभावसे मनुष्य धन, धान्य, पुत्र व पौत्र करके युक्त आरोग्य होकर विष्णुभगवान्के लोकको प्राप्त होताहै ॥

अट्ठावनवां अध्याय ॥

अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्, भद्राश्व! अब विघ्नहर नाम व्रत कहतेहैं सो आप सुनें जिस व्रतके करनेसे अनेक विघ्न निवृत्त होतेहैं फाल्गुनमासके शुक्लपक्ष वा कृष्णपक्षमें प्रारम्भ करे और श्रीगणेशजीका पूजनकर रात्रिके समय तिलान्न भोजन करे और तिल चावलका होम करे इस प्रकार चार मास व्रतकर अन्त में सुवर्णकी मूर्ति श्रीगणेशजीकी बनाय पञ्चगव्य व पञ्चामृत से स्नान कराय षोड़शोपचार वा पञ्चोपचारसे पूजन करे व पांच कांस्यके पात्रमें खीर भरके नैवेद्य करे व इन मन्त्रोंसे श्रीगणेशजी को भक्तिसे प्रणामकरे ॐशूराय नमः। ॐवीराय नमः। ॐगजाननाय नमः। ॐलम्बोदराय नमः। ॐएकदंष्ट्राय नमः। इस प्रकार हाथ जोड़ भक्तिसे प्रणाम कर सब सामग्रीके साथ मूर्तिको दान करे हे राजन्! इस व्रतके करनेसे इन्द्र निर्विघ्न शत अश्वमेध यज्ञ कर देवराज भये व रुद्रजी इसी व्रतके प्रभावसे त्रिपुरा-

सुरको जीता व विष्णुभगवान् इसी व्रतके प्रभावसे बलिको जीता और हमने इसी व्रतके प्रतापसे समुद्र शोषण किया और जो जो देवासुर मनुष्योंने इस व्रतको किया उनके सब कार्य श्रीगणेशजीने सिद्ध किये इसलिये अवश्य बड़े बड़े कार्योंके प्रारम्भ में इस व्रतको करना चाहिये ॥

उनसठवां अध्याय ॥

श्रीअगस्त्यजी महाराज राजाभद्राश्वसे वर्णन करते हैं हे राजन्! आप शान्तिनाम व्रत श्रवण करें जिस व्रतके करनेसे गृहस्थियोंके अनेक प्रकारके क्लेश शान्त होते हैं जिस व्रतका प्रारम्भ कार्त्तिक मासमें शुक्लपञ्चमीसे होताहै और एक वर्ष पर्यन्त होना चाहिये हे राजन्, भद्राश्व! दिनमें व्रतकर रात्रिको विष्णु भगवान्का पूजन करे और शेषके ऊपर नारायणका ध्यानकर इन मन्त्रोंसे पञ्चोपचार पूजन कहे भये नारायणके अङ्गोंमें करे पादोंमें "ॐअनन्ताय नमः। कटिमें ॐवासुकिने नमः। जठरमें ॐतक्षकाय नमः। वक्षस्स्थलमें ॐकर्कोटकाय नमः। कण्ठमें ॐपद्माय नमः। पादों में ॐमहापद्माय नमः। मुखमें ॐशङ्खपालाय नमः। शिरमें ॐकुटिलाय नमः।" इन मन्त्रोंको पढ़ शेषशायी विष्णुभगवान्को गोदुग्धसे स्नान कराय गन्ध, पुष्प, माला, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल व दक्षिणासे भक्तिपूर्वक पूजनकर दुग्ध व तिलसे होम करे इसप्रकार कार्त्तिकशुक्लसे बारहों महीनेकी शुक्लपञ्चमीको पूजनकर अन्तमें ब्राह्मण भोजन यथाशक्ति कराय सुवर्णकी मूर्ति शेषभगवान्की ब्राह्मणको निवेदन करे अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! इस व्रतको जे भक्तिकरके करते हैं उनके अनेक उपद्रव शान्त होते हैं और नागोंसे भय नहीं होती॥

साठवां अध्याय ॥

अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्, भद्राश्व! अब कामव्रत वर्णन

करतेहैं सो आप श्रवण करें जिस व्रतके करनेसे संपूर्ण काम सिद्ध होते हैं इस व्रतका प्रारम्भ पौषमासके शुक्लपक्षमें षष्ठीसे करना चाहिये हे राजन्! पञ्चमीको एकभुक्त करे व षष्ठीको स्नानकर नित्यकर्मसे सावधानहो स्वामिकार्त्तिक भगवान्की मूर्ति सुवर्ण अथवा चांदीसे बनवाय विधिपूर्वक पूजन करे इन मन्त्रों से "ॐषड्वक्त्राय नमः। ॐकार्त्तिकेयाय नमः। ॐसेनान्यै नमः। ॐकृत्तिकासुताय नमः। ॐकुमाराय नमः। ॐस्कन्दाय नमः।" इन नाम मन्त्रोंसे भक्तिपूर्वक पूजनकर जिस समय जो फलहो उसकी नैवेद्य दे व उसीका हवन करे व आपभी फलहीका भोजन कर रात्रिमें जागरणकर उत्साहपूर्वक बितावे और प्रातःकाल सप्तमीको पारण करे इस प्रकार एक वर्ष करके व्रत समाप्तकर यथाशक्ति ब्राह्मणको भोजन कराय वेदविद्ब्राह्मणको यह मन्त्र पढ़ मूर्तिका दान करे (मन्त्रः। सर्वे कामा समृद्ध्यन्तां मम देव कुमारक। त्वत्प्रसादादिमं भक्त्या गृह्यतां विप्र माचिरम्) इस मन्त्र को पढ़ दो वस्त्रसे वेष्टितकर ब्राह्मणको दे आप सकुटुम्ब भोजन करे हे राजन्! इस व्रतके करनेसे मनुष्यके संपूर्ण कार्य सिद्ध होतेहैं व पुत्रहीनको पुत्र, निर्धनको धन और भ्रष्टराज्यको राज्य प्राप्त होताहै हे राजन्! पूर्वहीं इस व्रतको निषधदेशके राजा नलने ऋतुपर्ण राजाके स्थानमें किया फिर निज राज्यको पाया और जिस २ ने जिस २ निमित्त किया तिस २ का सब मनोरथ सिद्ध हुआ इसलिये हे राजन्, भद्राश्व! मनुष्यको क्लेश निवृत्त करनेको अवश्य कामव्रत करना चाहिये॥

इकसठवां अध्याय॥

अगस्त्यजी राजाभद्राश्वसे कहतेहैं कि हे राजन्! अब हम आरोग्यव्रत कथन करते हैं सो आप श्रवण करें इस व्रतके करनेसे अनेक प्रकारके रोग निवृत्त होते हैं व अनन्त पुण्य होती है और

संपूर्ण पाप निवृत्त होतेहैं हे राजन्! इस आरोग्यव्रतको एक वर्ष पर्यन्त करना चाहिये व किसी महीनेमें प्रारम्भ करे इसकी यह विधिहै जो षष्ठीको एकाहार करे व सप्तमीका व्रत करके श्रीसूर्य भगवान्‌की सात नामोंसे पूजा करे और अष्टमीको भोजन करे व सुवर्णकी मूर्ति बनाय उत्तम पीठपर बैठाय षोड़शोपचारसे पूजन करे और इन्हीं मन्त्रों से हवन करे " ॐआदित्याय नमः। ॐभास्कराय नमः। ॐरवये नमः। ॐभानवे नमः। ॐसूर्याय नमः। ॐदिवाकराय नमः। ॐप्रभाकराय नमः " इन मन्त्रोंसे पूजा व हवनकर व्रत समाप्त करे और वर्षके अन्तमें यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय मूर्तिपूजनकर रक्तवस्त्रसे वेष्टितकर ब्राह्मणको दान दे आप सकुटुम्ब भोजन करे इस प्रकार हे राजन्! जो मनुष्य व्रतको करे वह अनेक असाध्यरोगोंसे मुक्तहो धन, धान्य, संतति और कीर्तिकरके युक्त होताहै और अन्तमें दिव्य विमानमें बैठि अप्सराओं करके सेवाको प्राप्त हुआ सत्यलोकमें अनेक कल्प पर्यन्त वास करे इतना कह अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्! इसी व्रतके प्रभाव से पुरातनसमय राजा अनरण्य बड़े रोगसे मुक्त भये इतनी कथा सुनि राजाभद्राश्व कहनेलगे हे अगस्त्यजी, महाराज! राजा अनरण्य कौन रोगसे मुक्त हुआ व किस निमित्त राजाको रोग हुआ सो आप वर्णन करें इतना सुनि अगस्त्यजी कहनेलगे हे राजन्! आप श्रवण करें किसी समय राजाधिराज अनरण्य बड़ा तेजस्वी व महाबली मानससरको विहार करते २ जा पहुँचा वहां क्या देखताहै कि मानससरके मध्यमें एक बहुत बड़ा व शोभायमान कमल विकस रहाहै उस कमलके मध्य एक पुरुष अंगुष्ठमात्र दो भुजावाला रक्तवस्त्र धारण किये ऐसा तेज-पुञ्ज मानो दूसरा सूर्यहीहै सो विराजमान होरहाहै तिस विलक्षण पुरुषयुक्त कमलको देखि राजाअनरण्यने बड़े आश्चर्यमें होकर निज मन्त्रीको आज्ञा दिया कि इस कमलको शीघ्र ल्यावो हम

निज शिरोभूषण करेंगे जिसमें हमारी शोभा पृथ्वीमण्डलके सब राजाओंमेंसे अधिकहो यह सुनि मन्त्री ने शीघ्रही जाय कमल लेनेके विचार सरमें हल ज्योंहीं कमलका स्पर्श किया त्योंहीं एक ऐसा हुंकार शब्द हुआ कि जिसके सुनतेही मन्त्री मूर्च्छित होकर भूमिपर गिरगया व उसी क्षणमें उसकी मृत्यु होगई इस आश्चर्यको देखि डरकर राजा जो अपनी तरफ़ देखताहै तो सब अङ्ग तेजोहीन महामलीन कुष्ठरोगसे युक्त होरहाहै इस चरित्र को देखि राजा अनरण्य बहुत दुःखसे व्याकुल व उसी स्थान में बड़ी ग्लानिसे पीड़ित होकर विचारता भया कि क्या करूं कहां जाऊं ? इस घोर दुःखसागरसे किस प्रकार पार होऊं और क्या दशा लेकर राज्यमें जाऊं व कौन अपराध किसका मैंने किया जिससे यह दुर्दशा प्राप्त भई इस प्रकार शोच विचार कररहाथा कि उसी स्थान में अकस्मात् श्रीब्रह्माजीके पुत्र वशिष्ठजी आय प्राप्तहो राजासे पूछने लगे कि महाराज ! आप राज्य छोड़के यहां क्यों आये व यह आपकी क्या दशा भई इतनी वशिष्ठजीकी वाणी सुनि राजा अनरण्यने उठ हाथ जोड़ प्रणाम कर वहां आनेका व कमल लेनेका मन्त्रीके मृत्युका और अपने शरीरमें कुष्ठ होने का सारा वृत्तान्त कह सुनाया सो सुनि वशिष्ठजी कहने लगे कि हे राजन् ! तुमने बहुतही अयोग्य काम किया इसीसे यह तुम्हारी दशा भई इतना सुनि राजा हाथ जोड़ व कम्पित होकर कहने लगा हे भगवन् ! मेरेसें किसका क्या अपराध बनपड़ा जिस करके इस दण्डको मैं प्राप्त हुआ व यह पद्म किसकाहै इस में जो अंगुष्ठप्रमाण पुरुषहै वह कौनहै सो कृपा करके आप वर्णन करें इतना सुनि वशिष्ठजी कहने लगे हे राजन् ! यह कमल ब्रह्माजीका जन्मस्थानहै इसके दर्शन करनेसे संपूर्ण देवताओंके दर्शनका फल होताहै व इस कमलको देखि जो इस सरके जल का स्पर्श करे वह सर्व पापोंसे मुक्त होकर मोक्षको प्राप्त होताहै

और कमलमध्यमें जो अंगुष्ठमात्र पुरुष दीखाहै सो साक्षात् ब्रह्माजी हैं इन्हींको देखि हे राजन्! तुम्हारा मन्त्री जलमें मग्न हुआ और तुमने पापबुद्धिसे कमल तोड़नेका विचार किया इस से कुष्ठरोग तुमको प्राप्त हुआ इसलिये हे राजन्! सावधानहो इसी स्थानमें कमल व कमलमध्य पुरुषका ध्यानकर श्रीसूर्य भगवान्का आराधन करो जिससे इस रोगसे मुक्तहो आनन्दको प्राप्तहो इतना कह श्रीवशिष्ठ भगवान् अन्तर्धान भये और राजा अनरण्य उसी प्रकारसे सूर्यनारायणकी भक्ति करके कुष्ठरोगसे मुक्तहो फिर अपने पुरमें आय राज्य करनेलगा॥

बासठवां अध्याय॥

अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्, भद्राश्व! अब पुत्रप्राप्तिव्रत कथन करतेहैं सो आप श्रवण करें हे राजन्! भाद्रपदमासमें कृष्णाष्टमी तिथिका व्रत करनेसे अवश्य पुत्रलाभ होताहै इस व्रत का यह विधानहै कि सप्तमी तिथिको संकल्पकर एकभक्त करे व अष्टमीका व्रतकर रात्रिसमयमें श्रीकृष्णभगवान्का ध्यान बालकरूप देवकीजीकी गोदमें करे और यव, तिल, चावल, घृत और शर्कराका हवन करे इस प्रकार रात्रिमें जागरणकर व्रत समाप्त कर प्रातःकाल नवमीको यथाशक्ति ब्राह्मणको भोजन कराय दक्षिणा दे आपभी सकुटुम्ब भोजन करे इसी प्रकार बारहों महीने की अष्टमीका व्रत करे हे राजन्, भद्राश्व! इस व्रतके करनेसे अवश्य अपुत्रको पुत्रलाभ होताहै वर्षके अन्तमें व्रतका उद्यापन करे और दो गऊ, वस्त्र, जलपात्र और पादुका ब्राह्मणको देकर समाप्त करे हे राजन्! इस व्रतके करनेसे बड़े प्रतापी राजा सूरसेनने वसुदेवनाम पुत्रको पाया और जिस जिसने किया सो इस लोकमें धन धान्य पुत्र व पौत्र करके युक्त भया और अन्तमें विष्णुभगवान्के धामको प्राप्त भया॥

तिरसठवां अध्याय ॥

अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्! अब आप शौर्यव्रत श्रवण करें जिस व्रतके करनेसे कैसहू भीरु मनुष्यहो शूरताको प्राप्त होता है आश्विनमासके शुक्लपक्षकी नवमी का व्रतकर दुर्गाभगवती का सिंहके ऊपर स्थित ध्यानकर षोड़शोपचारसे पूजनकर हवन करे और दशमीको यथाशक्ति नव कन्याओंको वस्त्र भूषण से भूषित कर उत्तम भोजन कराय दक्षिणा दे हाथजोड़ नम्र होकर यह कहे कि (देवि मे प्रीयताम्) फिर विसर्जनकर आप सकुटुम्ब भोजन करे हे राजन्! इस प्रकार व्रत करनेसे जिसका राज्य छूट गया हो सो राज्य पावे और जो मूर्ख करे तो उसे विद्या लाभ होती है व जो किसी प्रकारके भयसे पीड़ितहो उसका भय जातारहे और वह सुखी होताहै ॥

चौंसठवां अध्याय ॥

अगस्यजी कहतेहैं हे राजन्, भद्राश्व! अब हम सार्वभौम नाम व्रत वर्णन करतेहैं सो आप श्रवण करें जिस व्रतके करनेसे मनुष्य समुद्रान्त पृथ्वीका महाराज होताहै सो व्रत कार्त्तिकशुक्ल दशमीसे प्रारम्भ होताहै और पन्द्रह वर्ष पर्यन्त करना चाहिये कार्त्तिकशुक्लदशमीके दिन दिनभर व्रतकर रात्रिके समय उत्तम२ भोजन व चन्दन पुष्पमालासे दिशाओंका पूजनकर इस मन्त्रसे अन्नकी बलि देवे (सर्वा भवत्यः सिध्यन्तु मम जन्मनि जन्मनि) इससे बलि दे आप दहीभातका भोजन करे इस प्रकार बारहों महीनेकी दशमीको व्रतकर एकादशीको ब्राह्मण भोजन कराय दक्षिणा दे आप सकुटुम्ब भोजन करे व पंद्रहवें वर्ष व्रतका उद्यापन करे गोदान, शय्यादान, स्वर्ण, चांदी, वृक्ष, छत्र, पादुका, जूता और चमर आदि सब पदार्थोंको उत्तम सिंहासन सहित उत्तम वस्त्रोंसे ढांपि अनेक रसोंके साथ दरिद्री ब्राह्मणको दे व्रत समाप्त

करे हे राजन्! इस व्रतके करनेसे राजा दिग्विजयमें जय पाय भूमण्डलका स्वामी होताहै और अन्तमें उत्तम गतिको प्राप्त होताहै व हे राजन्! मार्गमाससे लेकर जो निराहारहो एक वर्ष पर्यन्त एकादशी व्रत करे वे कुबेरके प्यारेहों व कुबेरजीकी कृपा से बहुत धनवान् होते हैं व जो एकादशीको निराहारकर द्वादशीमें पारण करते हैं उनके अनेक जन्मका पातक निवृत्त होता है और विष्णुभगवान्के प्यारे होते हैं व हे राजन्! जो त्रयोदशीको नक्तव्रत करते हैं वे कामदेवके प्यारेहो अनेक संसारसुख भोगते हैं जो फाल्गुनशुक्ल चतुर्दशीसे प्रारम्भ कर एक वर्ष चतुर्दशीका व्रत करतेहैं उनके ऊपर रुद्रभगवान् तुष्टहो अनेक सुख देतेहैं और हे राजन्! जो सर्वकालमें अमावास्याका व्रत करते हैं वे पितरोंके प्रीतिपात्रहो संसारमें सुख सन्तान करके युक्त होते हैं व अन्तमें विमान पर बैठि पितरलोकमें जाय कईकल्प अनन्तसुख भोगते हैं व हे राजन्! जो पूर्णिमाका व्रत करतेहैं वे चन्द्रमाजीके प्यारे हो बल, कान्ति, आरोग्यता, धन और संतान करके युक्त होते हैं और देहान्तमें उत्तम विमानमें बैठ चन्द्रलोक में जाय अनन्त सुख करके पीछेसे पृथ्वी में सार्वभौम राजा होते हैं हे राजन्! इस प्रकार जो विधिपूर्वक तिथियोंका व्रत करते उनके अनेक ब्रह्महत्यादिक पाप, अगम्यागमन, भक्ष्याभक्ष्य आदि अनेक पापोंसे मुक्त हो अपने अभीष्ट फलको प्राप्तहो अन्तमें उत्तमलोकको प्राप्त होते हैं॥

पैंसठवां अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस प्रकार अगस्त्यजीके मुखारविन्दसे इतनी कथा सुनि राजा भद्राश्व कहनेलगा कि हे महाराज! आपने बहुत उत्तम कथा वर्णनकी अब हम यह सुना चाहते हैं कि जो कुछ आपने इस शरीरसे आश्चर्य देखा वा सुना

हो वह वर्णन करें जिसके श्रवणसे हमारेभी अनेक संदेह निवृत्त हों यह सुनि अगस्त्यजी कहनेलगे हे राजन्! सावधानहो आप श्रवण करें सब आश्चर्योंके मूल विष्णुभगवान्हैं तिनके दर्शन होनेसे संपूर्ण आश्चर्य देखातेहैं हे राजन्! किसी समय नारद जी महीमण्डलमें भ्रमण करते २ श्वेतद्वीपमें जा पहुँचे वहां क्या देखतेहैं कि जो २ दृष्टिमें आतेहैं वे सभी कृष्णरूप पीताम्बर-धारी शंख चक्र गदा पद्म धारे तेजसे प्रकाशमान इन्होंको देखि नारदजी एक २ के समीप बड़े हर्षसे जा पूछतेहैं कि आपही विष्णुभगवान्हैं इसभांति नारदजीका वचन सुनि मुसक्यायके वे चुप होजाते हैं यह जिसीसे पूछते हैं सोई कुछ उत्तर नहीं देता तब तो नारदजी बहुतोंसे पूछ घबड़ाय व्याकुलहो एकान्तमें बैठ विष्णुभगवान्में चित्त लगाय ध्यानमें स्थितहो तप करने लगे इस प्रकार तप करते २ जब दिव्य सहस्रवर्ष व्यतीत हुये तब श्रीविष्णुभगवान् प्रसन्न होकर प्रकट होते हुये यह बोले कि हे नारदजी! तुम्हारे तप करनेसे हम बहुत प्रसन्नभये जो वाञ्छा हो सो वर मांगो यह विष्णुभगवान्का वचन सुनि बड़े हर्षसे नारदजी बोले हे भगवन्! आपने बड़ी कृपा की मुझपै जो दिव्य सहस्र वर्षमें आप प्रसन्नहो प्रत्यक्ष भये अब आप कृपा करके यही वर मुझे दें कि जिस उपायसे आप थोड़े परिश्रम करनेसे मनुष्यों पर कृपाकरें व शीघ्र दर्शन देवें ऐसा कोई सुगम उपाय उपदेश करें जिससे मेरा मनोरथ सफलहो यह नारदकी विनय सुनि विष्णुभगवान् कहनेलगे हे नारदजी! जो मनुष्य पुरुष-सूक्तसे अथवा संहितापाठसे हमारा ध्यान पूजन करेंगे उनसे हम शीघ्र प्रसन्नहो अभीष्ट पूर्ण करेंगे और जिसे संहिताका ज्ञान न होवे वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य पञ्चरात्रके मार्गसे हमारा भजन करें तो अवश्य शीघ्रही हम प्रसन्नहो संपूर्ण अभीष्ट सिद्धकर अन्तमें मुक्ति देंगे हे नारदजी! शूद्र आदि जो अपना क्षेम

हमारेसे चाहें तो तीर्थ क्षेत्रोंकी यात्राकर अपना पातक निवृत्त करें व हमारा भजन करें शूद्रोंके लिये तीर्थयात्राही परमतपहै इसीसे उनके सब कार्य सिद्ध होंगे व हे नारदजी ! हज़ारों त्रैवर्णिक अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्योंमें किसी भाग्यवान्का चित्त रजोगुण तमोगुणको त्याग सत्त्वगुणमें निरत होताहै और वही हमारा कृपापात्रहै व सोई पञ्चरात्रका अधिकारी है जो राजस-तामस-स्वभावयुक्तहैं वे पञ्चरात्रके अधिकारी नहीं होसक्ते और न उनके किसी कर्मोंसे हम प्रसन्न होते हैं और वे हमारी प्रसन्नता के लिये नानायोनियोंमें जन्म ले अनेक दुःखोंसे मुक्त नहीं होते व हे नारदजी ! सत्ययुग, त्रेता, द्वापर इन युगोंके मनुष्य प्रायः सात्त्विकी होते हैं और वेही हमारे प्राप्त होनेका उपाय करके हम को प्राप्त होते हैं और कलियुगके मनुष्य केवल राजस तामस गुणोंमें मग्न हमको नहीं प्राप्त होसक्ते हे नारदजी ! औरभी वर देते हैं कि जो वेदमार्गमें अथवा पञ्चरात्र जो मेरा स्वरूपहै उस मार्गमें निरत होकर हमारा भजन करेंगे वे शीघ्र सिद्धताको प्राप्त होंगे और जो इस मार्गसे विमुख होंगे वे कोटिहू कल्प तकभी मायाके जालसे व जन्म मरणसे छूट अभीष्टको न पावेंगे फिर मुक्तिकी कौनसी कथाहै इतना कह विष्णुभगवान् अन्तर्धान भये और नारदजी स्वर्गको चलेगये ॥

छियासठवां अध्याय ॥

अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन् ! जो आश्चर्य आपने पूछा सो हमने वर्णन किया अब आप क्या सुना चाहते हैं ? सो हम वर्णन करें यह अगस्त्यजीका वचन सुनि राजा भद्राश्व कहने लगा कि हे महाराज ! आप यह कथन करें कि जगत्में वह पदार्थ क्या है जो एक शुक्ल है व दूसरा कृष्ण है और वे दो स्त्रियां कौनहैं जिनमें एक कृष्णवर्णा और दूसरी शुक्लवर्णा है व हे ब्रह्मन् ! यह

पुरुष कौनहै जो एकसे सात प्रकारका हुआ और हे भगवन्! वह पुरुष कौनहै जिसके दो प्रकारके देहमें बारह भेदहैं व छः शिरहैं और वे दाम्पत्य अर्थात् स्त्री पुरुष कौनहैं जो सूर्योदय व सूर्यास्त में कथन किये जातेहैं और किस करके यह जगत् विस्तारपूर्वक विराजमान होरहाहै यह राजा भद्राश्वका प्रश्न सुनि अगस्त्य जी कहने लगे हे राजन्! आप प्रश्नोंका उत्तर यथाक्रमसे सावधानहो श्रवण करें शुक्ल व कृष्ण दो प्रकारकी जो स्त्रियांहैं सो परस्पर भगिनी हैं व सत्या, असत्या इन्होंकी संज्ञाहै ये दोनों अँधेरे उजेरे पक्षकी रात्रिहैं व हे राजन्! जो पुरुष एक होकर सात प्रकारका हुआ उसे समुद्र कहना चाहिये और जो दो देहसे व छः शिरसे बारह प्रकारका विराजताहै वह संवत्सर नाम पुरुषहै उसके ये दो भेदहैं एक दक्षिणायन दूसरा उत्तरायण और छः शिर सोई छः ऋतुहैं और बारह भेद बारहों मासहैं और जो दाम्पत्य आपने पूछाहै सो दिन रात्रिहै पुरुष स्त्री होके चन्द्र सूर्यके निमित्त स्वरूप धारते हैं और हे राजन्! जिससे यह जगत् उत्पन्नहो उत्तरोत्तर विस्तारको प्राप्तहो विराजमानहै वे सर्वव्यापी सबके कर्ता विष्णुभगवान् हैं उन विष्णुभगवान्को वेदक्रियाहीन पुरुष नहीं जान सक्के ॥

सरसठवां अध्याय ॥

अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्! जो परमेश्वर सर्वगतहै उसे वेदमार्गसे ब्राह्मण आदि तीन वर्ण यजन करतेहैं यह वेदमार्ग सत्ययुगसे द्वापरान्त राजायुधिष्ठिरके समयतक वर्तमान रहा सोई मार्ग कलियुग प्राप्त होतेही रजोगुण व तमोगुणकी वृद्धि होनेसे निवृत्त होगया इसी हेतु स्वर्गसे भ्रष्टहो सब जीव नाना योनिमें जन्म ले शोकसागरमें मग्नहो शौचाचारहीन सत्कर्मके शत्रु अनेक क्लेश भोगि रहेहैं इतनी कथा सुनि राजा भद्राश्व

कहतेहैं कि हे भगवन्! ब्राह्मणआदि चारों वर्ण अगम्या स्त्री का गमन करतेहैं वे किस प्रायश्चित्त करनेसे शुद्धहों सो आप वर्णन करें व जिसे अगम्या स्त्री कहतेहैं वे कौनहैं? इस प्रश्नको सुनि अगस्त्यजी कहनेलगे हे राजन्, भद्राश्व! ब्राह्मणको चारोंवर्ण की स्त्रियोंका स्वीकारकरना अधिकारहै व क्षत्रियको तीन वर्णकी कन्याका व वैश्यको दो वर्णकी कन्याका और शूद्रको केवल शूद्र हीकी कन्याका स्वीकार करना उचितहै व हे राजन्! ब्राह्मण की कन्या क्षत्रियको अगम्यहै वैश्यको क्षत्रिया अगम्यहै और वैश्या शूद्रको अयोग्यहै नीच वर्णको उत्तम वर्णकी कन्या मनु जीने सर्वदा अगम्य कहीहै व चारों वर्णोंके वास्ते जो स्त्री सदा अगम्य हैं सो हम कहतेहैं आप श्रवण करें माता, माताकी भगिनी, सासु, भाईकी स्त्री, पुत्रकी स्त्री, कन्या, मित्रकी स्त्री, कन्याकी कन्या, पिताकी भगिनी और राजपत्नी ये अगम्या कहाती हैं हे राजन्! इन स्त्रियोंका संग किसी अवस्थामें करना योग्य नहीं है ये माताके तुल्यहैं व गम्या स्त्रियोंमें भी रजस्वला स्त्री अगम्या कहातीहै और रजकीका स्पर्शही अयोग्यहै इन्हीं के गमन करनेसे पुरुष पापभागी होताहै और हे राजन्! ब्राह्मण जो अगम्यागमन करे तो शत प्राणायाम करके शुद्ध होताहै व बहुत कालसे अनेक पापों करके पीड़ित ब्राह्मण दश प्रणवयुक्त गायत्रीके तीनसौ प्राणायाम करनेसे शुद्ध होताहै और हे राजन्! जो ब्राह्मण वेदाध्ययन नित्य करते हैं वे सदाही पवित्र रहते चाहे उनसे कोई पापभी बनपड़े तो वे सदाही निष्पापहैं व जो ब्राह्मण वेदपाठ, विष्णुपूजा और गायत्रीजपनिष्ठहैं वे और को शुद्ध करते हैं आप तो साक्षाद्वेदभगवान्की मूर्तिही हैं और जो तीन वर्णोंसे पाप होजाय तो अपने २ यथाधिकार चान्द्रायण प्राजापत्य और तीर्थसेवा आदि उत्तम कर्म करनेसे अपने २ पापों से मुक्तहो उत्तम गतिको प्राप्त होतेहैं हे राजन्! जो

आपने पूछा सो हमने वर्णन किया अब क्या सुना चाहते हो॥

अरसठवां अध्याय॥

राजाभद्राश्व अगस्त्यजीसे पूछतेहैं कि हे भगवन्! आप चिरंजीवि तुल्यहैं जो कुछ वृत्तान्त आपने निज शरीरसे देखा वा सुनाहो सो वर्णन करें यह राजाका प्रश्न सुनि अगस्त्यजी कहनेलगे कि हे राजन्, भद्राश्व! यह मेरा शरीर अनेक आश्चर्योंको देखचुकाहै व अनेकों कल्पसे वेदभगवान्की कृपासे वर्तमानहै काल समीप नहीं आता सो कुछ पुरातन वृत्तान्त वर्णन करतेहैं सो आप श्रवण करें हे राजन्! किसी समय पृथ्वी के भ्रमण करनेकी रुचि उत्पन्न भई तव घूमते २ सुमेरु पर्वत के समीप इलावृत नाम खण्ड में जा पहुँचे वहां जातेही एक बहुत उत्तम सरोवर कमल, जल व पक्षियों करके सुशोभित देखा उसके निकट एक तपस्वीकी कुटी बनरहीहै सो देखि हम कुटीके समीप जा पहुँचे वहां क्या देखतेहैं कि उस कुटीमें एक तपस्वी जिसकी देहमें केवल अस्थि व चर्ममात्रही शेष व वल्कल धारण किये तप कररहाहै यह देखि हम उसके समीप जा हाथ जोड़ प्रणाम कर कहने लगे कि हे ऋषीश्वर! हम तुम्हारे आश्रममें आयेहैं इसलिये आप हमारा आतिथ्य करें यह सुनि वह तपस्वी बोला कि हे द्विजोत्तम! आपने बड़ी कृपा किया जो इस आश्रममें आये हम आपके आगमनसे बहुत प्रसन्न भये आप कृपाकरके बैठजाइये हम आपके योग्य आतिथ्य करेंगे इतना उस तपस्वीका वचन सुनि हमने उस कुटीमें प्रवेश किया तो उसका स्वरूप तपोमय कैसा प्रकाशमान होरहाहै कि अग्निकी ज्वाला अथवा मध्याह्नका सूर्य कि जिसकी तरफ़ देखनेसे नेत्र झपजाते हैं हे राजन्! वहां जाय भूमिमें बैठगये तब तो उस तपस्वीने हमको भूमिमें बैठा देखि जोरसे हुंकार शब्द

किया उस शब्दके करतेही भूमिको भेदनकर पातालसे पांच कन्या उत्पन्न भईं उन कन्याओंमेंसे एकके हाथ स्वर्णका पीठ सो ल्याय हमारे आगे धर बहुत नम्रता व मधुरवाणीसे बोली कि आप इस पीठपर बैठिये जब उस पीठपर हम बैठे तब दूसरी कन्या स्वच्छ सुगन्ध जल सुवर्णपात्रमें ले मेरे पैरोंको धोनेलगी और दो कन्या हमारे वाम और दक्षिणभागमें खड़ी हो हाथमें व्यजन ले वायु धीरे २ करनेलगीं उस समय उसी महात्माने फिर हुंकार किया तब हे राजन्! अकस्मात् एक योजनका विस्तार सुवर्णद्रोणी उत्पन्न भई द्रोणी पात्रविशेषको कहते हैं तब उसी द्रोणीसे सैकड़ों कन्या जिनके हाथोंमें अनेक पदार्थ सो प्रकट भईं उन्होंको देखि वह महात्मा हमसे कहने लगे कि हे ब्रह्मन्! ये द्रोणी हमने तुम्हारे स्नाननिमित्त उत्पन्न किया है सो आप आनन्दपूर्वक इसमें स्नान कीजिये तब यह वचन सुनि उस द्रोणीमें स्नानकरनेको हमने प्रवेश किया कि उसीसमय वह द्रोणी सहित कन्याओंके उसी सरमें मग्न होगई उसीके साथ हम व कुटी सहित महात्मा सभी मग्न भये हे राजन्! मग्न होतेही क्या देखते हैं कि सुमेरु पर्वतके शिखरपर विराजमान होरहे हैं व उसी स्थानसे सातों समुद्र व सातों कुल पर्वतोंके साथ सातों द्वीप देखे वहांसे जा ब्रह्माजीके समीप प्राप्तभये हे राजन्! इस वृत्तान्तको आजतक स्मरण करते हैं इस प्रकारका आश्चर्य हमने वर्णन किया अब आप क्या सुना चाहते हैं?॥

उनहत्तरवां अध्याय॥

राजाभद्राश्व अगस्त्यजीसे प्रश्न करते हैं कि; हे महाराज! आपने लोकमें शरीर धारण करके क्या २ धर्म, व्रत और यज्ञ कियाहै सो आप वर्णन करें यह प्रश्न सुनि अगस्त्यजी कहनेलगे कि हे राजन्, भद्राश्व! संसारमें जन्म लेकर जिसने परमेश्वरको

न भजा उसका जन्म लेनाही निष्फलहै क्योंकर कि वे परमेश्वर को भजे सब मनोरथ निष्फल होते हैं और जिसने भजाहै तिसके संपूर्ण पदार्थ हस्त ऊपर मानो धरेही हैं हे राजन्! यह विचार कर हमने विष्णुभगवान्का सैकड़ों वर्ष आराधन किया व बड़े २ दक्षिणाओं करके युक्त यज्ञ किया किसी समय यज्ञके अवसरसे हमने देवताओंका आवाहन किया तो इन्द्रादि सब देवतागण आय २ निज २ स्थानमें बैठे उसीसमय रुद्र भगवान् भी आ प्राप्तभये जिसको वेद महादेव, विरूपाक्ष, त्र्यम्बक, नीललोहित करके कथन करते हैं सो आयके निज स्थानमें बैठे व सूर्यके तुल्य विमानमें विराजमान सनत्कुमारजी ब्रह्माके पुत्र सब ऋषियोंके साथ आयके शिवजीको प्रणामकर निज आसनपर बैठगये और अनेक देवता, ऋषि, गन्धर्व, विद्याधर, किन्नर और सर्प आदि उस समयमें सब आय २ निज निज स्थानमें उत्तम २ आसनपर बैठे तिस समय नारदादि ऋषियों सहित सनत्कुमारजी व रुद्र आदिको देखि हम ये बोले कि आप सबसे हमारा यह प्रश्नहै कि हम सबोंमें श्रेष्ठ व पूज्य किसको जानें आप कृपा करके यह हमारा संदेह निवृत्त करें इस प्रश्नको सुनि सब देवताओंके मध्य में रुद्रभगवान् बोले कि हे देवताओ! व हे ऋषीश्वरो! हे ब्रह्म-ऋषियो! हमारा वाक्य सब सावधान हो श्रवण करो जो परमेश्वर सब यज्ञों करके पूजित होताहै व जिसकरके संपूर्ण जगत् व्याप्त है व चराचर सृष्टि समयमें जिससे उत्पन्न होती है व प्रलयमें जिस में लीन होती है वो सबसे परे विष्णुभगवान् जिसे वेद नारायण शब्दकरके कहता है सो परमेश्वर अपने आत्माको विलास के निमित्त तीनभाग करके देखताहै राजस, तामस, सात्त्विक ये तीन भाग हैं जिनके सत्त्वभागसे विष्णुभगवान् हैं व रजोभागसे ब्रह्माजी व तमोभागसे हमारी उत्पत्तिहै हे देवताओ! सत्त्वके सेवनसे मनुष्य मुक्त होते हैं व सत्त्व नारायणका स्वरूपहै रजसे

सृष्टि होतीहै सो रजोगुण ब्रह्माजीका स्वरूपहै व सत्त्वगुणसे वेद भगवान्की उत्पत्तिहै वेदबाह्य जो है उसे शास्त्र कहतेहैं उसकी रौद्रसंज्ञाहै व जो राजस वा तामस कर्म हैं सो सर्वथा निन्द्यहैं क्योंकि जिसके परिशीलनसे इस लोकमें अपवाद होताहै व पर-लोकमें दुर्गति होतीहै और सत्त्वसेवनसे मुक्ति होतीहै जिसकरके सत्त्व नारायणांश है सोई नारायण यज्ञरूपी कथन किये जातेहैं सत्ययुगमें नारायणकी उपासना ध्यानयोग से होती है व त्रेतामें यज्ञरूपसे द्वापरमें पञ्चरात्र मार्गसे और कलियुगमें शिवजी कहते हैं कि हमारे कहे मार्गसे नारायणकी उपासना होतीहै उस नारायणसे परे कोई देवता न हुआहै न होगा जो विष्णुहै सोई ब्रह्माहैं व जो ब्रह्मा सोई हमहैं हे अगस्त्यजी! जो हम तीनोंमें भेद कथन करताहै सो सर्वदा मूढ़है और उसे ज्ञान व मोक्ष कभी नहीं प्राप्तहोता और उस पापात्माका रौरवादिकसे किसी कल्पमें उद्धार नहीं होता हे अगस्त्यजी! जो मनुष्य भूलोकमें निजधर्म में स्थितहो विष्णु भगवान्का भजन करते हैं उन्हें उनकी वासना-नुसार उत्तमलोक व मुक्तिभी प्राप्त होती है इस प्रकार शिवजी कहरहे थे उसी समय विष्णुभगवान् सभामें आय प्राप्तभये तिनको देखि संपूर्ण सभा उठ हाथ जोड़कर प्रणाम करतीभई और अगस्त्यजीसे प्रणामकर आसन, पाद्य, अर्घ दे भक्तिपूर्वक पूजनकर श्रीनारायणकी आज्ञा पाय निज आसन पर बैठे उस समय श्रीविष्णु भगवान्जी सारी सभाकी ओर देखि कहनेलगे कि हे ऋषीश्वरो व हे देवताओ! किस कार्यको विचार रहे हो सो कथन करो ऐसी विष्णुभगवान्की वाणी सुनि सारी सभा हाथ जोड़के बोली कि हे भगवन्! संपूर्ण ऋषिगण मुक्तिमार्ग में प्रवृत्त होरहे हैं इन्होंके ऊपर कृपा करके मोक्ष दीजिये व सृष्टि के मनुष्य किस प्रकार मोक्षके भागी होवें और नरकमें किसका वास होताहै? यह संपूर्ण सभासदोंका वचन सुनि विष्णुभगवान्

कहनेलगे कि हे सभासदो! तीन युगके अर्थात् सत्ययुग, त्रेता, द्वापरके मनुष्य तो बहुते थोड़ेही परिश्रमसे हमको प्राप्त भये और कलियुगके मनुष्य तो बड़े परिश्रमसे भी नहीं प्राप्त हो-सकते हे ऋषीश्वरो! हमने मोहको उत्पन्न कियाहै उसीसे सब मोहित होके सन्मार्गसे च्युतहो संसारमें भ्रमरहेहैं व हे रुद्रजी! तुम मोहशास्त्रको उत्पन्न करो थोड़े परिश्रमसे सिद्धि देखाके मनुष्योंको मोहित करो इतना कह विष्णुभगवान् माया करके निज रूपको गुप्तकर अहंकारको प्रकट किया तब शिवजीने मोहशास्त्र को रचा उस समयसे लेकर सब मनुष्य उसी शास्त्रमें प्रवृत्त भये शिवजी कहतेहैं हे अगस्त्यजी! जो मनुष्य वेदको नारायणकी आज्ञा मानके उसके अनुसार विष्णुको भजतेहैं वे अवश्य मुक्ति-भागी होते हैं और शिवजी कहतेहैं कि मेरेको व विष्णुको ब्रह्मा को जो भेदबुद्धिसे न्यारे जान भजते हैं उन पापियोंको निश्चय नरकवास होताहै और अभीष्टसिद्धि होना तो अतिही दुर्लभहै जो वेदमार्ग से भ्रष्टहैं उन्हींके लिये हमने मोहशास्त्र निर्माण कियाहै कि जिसके अनुकूल चल अवश्य सन्मार्गसे भ्रष्ट होंगे औ पशुओंके तुल्य पाशमें बँधे रहेंगे मोक्ष दुर्लभ होगी हे ऋषी-श्वरो! हमारा वेदमूर्तिहै इसीसे हम उसी मार्गमें प्रसन्न होतेहैं हे ऋषीश्वरो! तीन वेद, तीन युग, तीन वर्ण, तीन देवता, तीन गुण, तीन अग्नि, तीन लोक, तीन सन्ध्या और तीन सवन इस प्रकार तीन भेदमें सारा विश्व पूर्णहै इसलिये जो बुद्धिमान् सब से प्रथम विष्णुभगवान्को फिर ब्रह्माजीको फिर हमको जानता है व भक्तिसे सेवन करताहै वह अवश्य मुक्तिभागी होताहै॥

सत्तरवां अध्याय॥

अगस्त्यजी कहतेहैं हे राजन्, भद्राश्व! इस प्रकार शिवजी देवताओं व ऋषियोंसे कहकर चुप होगये उस समय हे राजन्!

हम बड़ी नम्रतासे प्रणामकर शिवजीसे कुछ प्रश्न करनेका विचार किया तो क्या देखते हैं कि शिवजीकी देहमें ब्रह्माजी कमलासन पर विराजमान होरहे हैं व विष्णुभगवान् भी इसी भांति तेजसे प्रकाशमान उसी देहमें स्थित होरहे हैं इस प्रकार का आश्चर्य कि तीनों देव एकही देहमें विराजमान सारी सभा व हम देखके अतिविस्मित जय २ शब्द करनेलगे कोई वेदसूक्तोंसे स्तुति करनेलगे अनेक भांति स्तुतिकर देवता बोले कि हे भगवन्! यह बड़ा आश्चर्य आपने कृपा करके देखाया जो तीनों देव निज २ शरीरसे एकत्रही दर्शन दिये यह देवताओं का वाक्य सुनकर रुद्रजी कहनेलगे कि हे देवताओ! अगस्त्य जीने इस यज्ञमें अभेदबुद्धिसे हमको हव्यभाग निवेदन किया है इसलिये हम तीनोंने एकहो उस भागको ग्रहणकर यज्ञ पूर्ण किया हे ऋषीश्वरो! जो अभेदबुद्धिसे हमको भजते हैं उन्हें हम तीनों ग्रहण करते हैं और जो भेदबुद्धिसे भजते उन्हें सर्वदा हम अनेकही हैं अगस्त्यजी कहते हैं हे राजन्! इसप्रकार शिवजी का वचन सुनि ऋषियोंने प्रश्न किया कि हे भगवन्! आपने जो मोहशास्त्र रचाहै उसका प्रयोजन सुना चाहते हैं सो कृपा करके कथन करें जिससे हमारा संदेह निवृत्त हो यह सुनि शिवजी कहनेलगे हे ऋषीश्वरो! जो तुमने प्रश्न कियाहै सो सावधान हो श्रवण करो इस भारतखण्ड में दण्डक नाम वनहै तिस वनमें गौतमनाम ऋषिने अतिघोर तप किया उस उग्र तप करनेसे ब्रह्माजी प्रसन्न व प्रत्यक्ष हो बोले कि हे गौतमजी! इस तुम्हारे उग्र तपश्चर्यासे हम अत्यन्त संतुष्ट भये अब आप जो इच्छा हो सो वर मांगिये यह ब्रह्माजी की कृपायुक्त वाणी सुनकर गौतमजी हाथ जोड़ माथ नवाय नम्रहो बोले हे भगवन्! यदि आप कृपाकर हमको वर देते हैं तो यह वर दीजिये कि हमारे यहां उत्तम २ अन्न कभी न्यून न हो सर्वदा सब अन्नों

का व अनेक भक्ष्य पदार्थोंकी परिपूर्णता षट्रसों सहित बनी रहे यह गौतमऋषिका वचन सुनकर ब्रह्माजीने कहा कि ऐसा ही होगा यह कह आप अन्तर्धान भये व गौतमजी शतशृङ्ग नामक पर्वतके शिखरमें उत्तम वर पाय आश्रम बनाय साव-धान हो परमेश्वरका भजन करनेलगे व अनेकप्रकारके उत्तम २ व्यञ्जन ब्राह्मणोंके हाथ पकाय २ जो अभ्यागत आवें उन्हें प्रीतिसे भोजन करावें इसी प्रकार बहुत दिनोंतक व्यतीत हुआ किसी समय बारह वर्षका अवर्षण हुआ उस अनावृष्टिसे वन-वासी संपूर्ण ऋषि व मुनि क्षुधासे पीड़ितहो गौतमजीके आ-श्रममें आ प्राप्तभये उन्होंको देखकर गौतमजी बड़ी प्रसन्नता से अभ्युत्थान प्रणाम आदिसे सबोंका सत्कार कर यथायोग्य स्थानोंमें बड़ी खातिरसे निवास दिया इस भांति बड़े सुखसे उस अनावृष्टिके दारुण समयमें इच्छा भोजन करते व्यतीत किया जब फिर वृष्टि भई व पृथ्वीमें सब प्रकारका अन्न शाक आदि उत्पन्न भये तब तो ऋषियोंने तीर्थयात्राके मिष गौतमजी के शिष्य शाण्डिल्यजीसे आज्ञा मांगी कि हे शाण्डिल्य ! अब निज २ आश्रममें जानेका विचार व तीर्थयात्रा किया चाहते हैं यह सुनकर शाण्डिल्यजी बोले कि हम गुरुजी की आज्ञा विना किस प्रकार कहसक्के हैं यह सुनकर मरीचिऋषि हँसकर क्रोध के साथ कहनेलगे कि क्या हम सबोंने भोजनके ऊपर देहको बेंचदियाहै हमारी जहां इच्छा होगी वहां जायँगे इतना कह सब ऋषियोंने मायासे एक गौ प्रकटकर गौतमजीकी अन्नशालामें छोड़ दिया वह गौ इधर उधर भ्रमण करनेलगी तब तो उस गौ को गौतमजीने देखकर हाथमें जल ले गौके तरफ़ छिट्टा दे यह बोले कि इधरसे हटजा उस जलबिन्दुके स्पर्श होतेही गौ गिरी व तड़फड़ायके मृत होगई इस प्रकार का चरित्र कि गौकी बे निमित्त मृत्यु व ऋषियोंकी यात्रा देखि गौतमजी कहनेलगे कि

हे महाशयो! आप लोगोंने किधर जानेका विचार कियाहै सो सत्य सत्य कथन करें हम आपके भक्तहैं व आप सबकी भक्तिसे नम्र हो सेवाकीहै इसलिये हमसे कथन करना योग्यहै इतना सुन कर ऋषियोंने यह कहा कि तुमसे गोवध होगयाहै इसलिये यावत्काल यह हत्या नहीं निवृत्त हो तावत्काल आपका अन्न नहीं भोजन करेंगे यह सुनकर गौतमजी बोले कि आप सब इस पातक का प्रायश्चित्त बतावें जिसके करनेसे यह पातक निवृत्त हो यह सुनकर ऋषियोंने कहा हे गौतमजी! यह गौ मृत नहीं हुई किंतु मूर्च्छितहै इसलिये और तो प्रायश्चित्त करना क्या योग्यहै इस का श्रीगङ्गाजीके जलसे स्नान कराइये यह मूर्च्छा को छोंड़ सजीव होगी यह कह ऋषियोंने यात्रा करदी इसप्रकार ऋषियों की वाणी सुनि गौतमजी हिमालयपर्वत पर जाय श्रीगङ्गाजी के प्राप्त होनेको हमारा आराधन करनेलगे शिवजी कहते हैं हे अगस्त्यजी! उस उग्र आराधन करते २ शत वर्ष व्यतीत हुआ तब प्रसन्न हो हम गौतमजीसे बोले कि हे ऋषे! अब तुम्हारी तपश्चर्या पूर्ण भई जो इच्छा हो सो वर मांगो यह सुनि गौतम जी बोले कि हे भगवन्! यदि आप वर देते हैं तो निज जटासे श्रीगङ्गाजी को दीजिये यह गङ्गा हमारे साथ २ जहां हम जावें वहां चले इसप्रकार गौतमजी की प्रार्थना सुनकर हमने जटा का एक खण्ड दिया उसको ले गौतमजी मृत गौके समीप जाय प्राप्त भये वहां जाय गङ्गाजलसे ज्यों छिड़का दिया त्योंहीं वह मायामयी गौ उठके तृण खानेलगी व उसी जलबिन्दुसे उसी स्थान में नदी बही उसका नाम गोदावरी भया इस चरित्रको देखकर सप्तऋषि विमानपर विराजमान वहांहीं आय प्राप्तभये व गौतम जी को धन्यवाद देनेलगे कि हे गौतमजी! तुम धन्यहो जिसने श्रीगङ्गाजीको ल्याय इस दण्डकारण्यको पवित्र किया इस प्रकार ऋषियोंका वचन सुनकर गौतमजी कहनेलगे कि हे भगवन्!

आपकी कृपासे इस गोवध्या करके मुक्त भये इतना कहतेही गौतमजीको ऋषियोंके छलका ज्ञान हुआ तिसे जान क्रोधमें युक्त हो कहनेलगे कि हे धूर्तो! हमने भक्तिसे अवर्षणमें तुम्हारी यथायोग्य महात्मा जानके सेवा की व प्राणरक्षा की उसका परिणाम तुम सबोंने हमारे साथ ऐसा छल किया जिससे हमको गोवध्या प्राप्त भई इसलिये तुम सब वेदबाह्य हो जटाभस्म धारणकर मिथ्या व्रतमें युक्तहो पाशुपतीय दीक्षाको धारण करो इसप्रकार गौतमका शाप ऋषियों प्रति श्रवणकर सप्तर्षि बोले कि हे गौतम जी! आप क्रोध न करें आपका शाप अवश्य सफल होगा परन्तु थोड़ेकाल रहेगा किन्तु हे गौतमजी! ये सब तुम्हारे वचनके अग्नि से दग्धहो संपूर्ण ऋषि कलियुग में जन्म ले वेदबाह्य होंगे व पाशुपतव्रत धारणकर जटाभस्म धारण करेंगे व भक्ष्याभक्ष्यका भी विचार न करेंगे मद्यमांसमें निरतहो परस्त्रीलोलुप होंगे व हे गौतमजी! ऋषियोंको बहुत दण्ड हुआ अब आप क्षमा कीजिये इतना कहकर सप्तऋषि तो निजस्थानको गये शिवजी कहतेहैं कि हे अगस्त्यजी! उस समय गौतमजीके स्थानमें हम जाय पहुँचे हमको देखकर गौतमजी पाद्यार्घ से हमारा पूजन किया तब हमने गौतमजीसे कहा हे ऋषे! अब आप क्रोध त्यागदेवें जैसी भावी होतीहै वैसीही बुद्धि उत्पन्न होतीहै इसलिये न आप का दोषहै न ऋषियोंका केवल कालही कारणहै व इस व्यवस्था को जानके हमने मोहशास्त्र निर्माण किया जिसे आपके शापित सब ब्राह्मण उसी शास्त्रमें रतहो कल्पांतक असद्गतिसे मुक्त न होंगे व जीवते इस लोकमें वेदभ्रष्ट क्रियाहीन पिशाच तुल्य होंगे व हे गौतमजी! जो तुमने इस दण्डकारण्यमें श्रीगङ्गाजीको ल्याय इस मायामयी गौको सजीव किया इसलिये इस गङ्गाजीका नाम गोदावरी करके लोकमें अतिपवित्र तीर्थ होगा इस गोदावरीमें जो स्नान करके गोदान अथवा यथाशक्ति और कुछ दान करेंगे

वे पुरुष सर्वपापोंसे मुक्तहो अन्तमें उत्तम विमानमें बैठ स्वर्गमें जाय नन्दनवनमें देवताओंके साथ उत्तम भोग भोगेंगे और हे गौतमजी! जो इस गोदावरीनाम महापुण्य नदीमें स्नानकर पितरोंको पिण्डदान व तर्पण करेंगे उनके पितर नरकरूप घोर यमयातनासे मुक्तहो अक्षय स्वर्गवास पावेंगे और यदि स्वर्गही में पितरहों तो कई कल्पोंतक उनका पुण्य क्षीण न होगा और हे गौतमजी! आजसे तुम्हारी ख्याति लोकमें प्रसिद्ध होगी व अन्तमें तुम्हारा हमारे समीप कैलासमें वास होगा शिवजी कहते हैं कि हे अगस्त्यजी! इतना कह हमतो कैलासको चलेगये व उसी दण्डकारण्यमें गौतमजी तप करनेलगे इस प्रकार अगस्त्य जीको वृत्तान्त सुनाय शिवजी कहनेलगे हे अगस्त्यजी! व ऋषी-श्वरो! इसलिये हमने मोहशास्त्रका निर्माण किया जिसका नाम निश्श्वास शास्त्रहै व देवकार्यार्थ किसी समय हमने भैरवरूप धार ताण्डवनृत्य कियाहै उस समय हमारे नेत्रसे अनेक अश्रुबिन्दु भूमिमें गिरे वेही अश्रुबिन्दु अनेक रुद्रोंका गण हुआ जिसका नाम उच्छुष्म रुद्रहै सोई रुद्रोंका मन्त्र विधान उस मोहशास्त्रमें हमने वर्णन कियाहै व मद्य मांस परस्त्री का अनेक प्रकारसे प्र-शंसा वर्णन कियाहै सो गौतमजीके शापाग्निसे दग्ध हुये २ कलि-युगमें वे ऋषि ब्राह्मणोंके कुलोंमें जन्म ले उस मार्गमें प्रवृत्तहो अधोगतिको प्राप्त होंगे इतना कह कहनेलगे हे ब्राह्मणो! जो तुमने प्रश्न किया सो हमने वर्णन किया अब आप क्या सुना चाहतेहो?॥

इकहत्तरवां अध्याय॥

वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इस कथाको शिवजीके मुखार-विन्दसे सुनके अगस्त्यजी प्रणामकर अतिनम्रतासे पूछनेलगे कि हे भगवन्! आप सर्वज्ञ हैं व सनातनहैं इसलिये अब आप

यह वर्णन करें कि आप व ब्रह्माजी व विष्णु भगवान् इनकी त्रयी संज्ञाहै व सर्वशास्त्रोंने इन्हींका यश वर्णन कियाहै इस लिये हम यह जानना चाहतेहैं कि किस समयमें आपकी प्रधानता है व किस समयमें ब्रह्माजीकी व किस समयमें विष्णुभगवान्की सो आप वर्णन करें इतना सुनकर शिवजी कहनेलगे हे अगस्त्य जी! परब्रह्म जिसको वेद कथन करताहै वेही विष्णुहैं उन्हींमें तीन भेद कार्यवश करके होते हैं यह वेदका सिद्धान्तहै इसे न जाननेसे मोहमें नष्ट होते हैं और विष्णु शब्दका शास्त्रों ने यह निरुक्ति अर्थात् अक्षरार्थ किया है कि "विष्लृ व्याप्तौ" धातुसे "विषेः किच्च" सूत्रसे नुप्रत्यय आनेसे विष्णु शब्द सनातन परमात्मा सिद्ध होताहै यह व्याकरण शास्त्रमें प्रसिद्धहै हे अगस्त्य जी! प्रलयमें चराचर नष्ट होके जिसमें लीन हो व सृष्टिके आदि में वोही चराचर जिससे प्रकटहो सोई विष्णु शब्दका अर्थ है सो विष्णु भगवान् एकहैं व अनेकरूपसे संसारके अनेक कार्य करनेके लिये अनेकही होरहेहैं कहीं सूर्य कहीं चन्द्रमा कहीं जल कहीं अग्नि कहीं वायु कहीं पृथ्वी और हे अगस्त्यजी! सोई विष्णुभगवान् मनुष्योंके कार्यार्थ नाना योनियोंमें अवतार धारणकर हमारी स्तुति करते हैं व उन्हींको देखि युग युगमें ब्रह्मादिक देवताभी हमारी स्तुति करतेहैं व हम श्वेतद्वीपवासी विष्णु भगवान्की स्तुति करते हैं व सृष्टिकालमें ब्रह्माजी की स्तुति करते हैं और सृष्टिके अनन्तर सत्ययुगमें विष्णुभगवान् हमारी स्तुति करते हैं तब हम लिङ्गरूप धारणकर भुक्ति मुक्तिको देते हैं और हे अगस्त्यजी! मुक्तिके इच्छावाले महात्मा ज्ञानयज्ञसे नारायणका भजन सेवनकर मुक्तिको प्राप्त होते हैं और जो ब्रह्मा को भजते हैं वा हमारा भजन करते हैं वे नारायणहीका भजन करते हैं जिससे हम तीनों एकही हैं और वेदाविदों करके कियेहुये कर्मसे हम तीनों तृप्त होते हैं इसलिये बुद्धिमान् हम तीनों को

एकही समझै जो किसी पक्षपातसे हम तीनोंमें भेदबुद्धि देखते हैं वे अवश्य नरकभागी होते हैं हे ब्राह्मणो! हम व ब्रह्माजी व विष्णु भगवान् और ऋग्-यजुः-साम ये तीनों वेद इन्हों में कदाचित् अन्तर न समझना चाहिये॥

बहत्तरवां अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि हे धरणि! पूर्ववृत्तान्त कह मुनियों से रुद्रजी फिर कहनेलगे कि हे ऋषीश्वरो! और भी एक बड़े आश्चर्यका वृत्तान्त आप सब श्रवण करें कि जिस समय हम ब्रह्माजीसे प्रकट भये तब ब्रह्माजीने हमको सृष्टि करनेकी आज्ञा दी उस वाक्यको सुनि व अपनेको असमर्थ मानि तप करनेके विचारसे जलमें मग्न होगये उस जलमें ध्यान लगाय परमात्मा जो अंगुष्ठमात्र पुरुषहै उसका ध्यान करनेलगे उस समय हम क्या देखते हैं कि ग्यारह पुरुष निजप्रकाशसे जलको तप्त करते प्रकाशमान हमारे आगे होकर चलेजाते हैं उन्हें देखि हम पूछने लगे कि आप कौनहैं व कहांको जाते हैं व किस कारण जलको तप्तकर रहे हैं यह हमारा प्रश्न सुनके वे ग्यारहों पुरुष मौनहो चले गये फिर हे ऋषीश्वरो! उन्होंके पीछे एक शोभायमान उत्तम वस्त्र भूषणों करके युक्त नेत्र व मनको आनन्द देनेहारा और एक पुरुष उसी जलसे निकला उसे देखि हम फिर पूछने लगे कि हे कमलनेत्र! आप कृपा करके यह कहें कि आप कौनहैं व कहां को जाते हैं जो आपके प्रथम ग्यारह पुरुष अतितेजस्वी वे कौनहैं व कहां को गये यह सुनि उस मनोहर पुरुषने यह कहा कि हे रुद्रजी! जो अतितेजस्वी व प्रकाशको प्राप्त ग्यारह पुरुष तुमने देखे हैं वे आदित्यनामक देवताहैं उन्होंको ब्रह्माजीने स्मरण कियाहै इसलिये शीघ्र जाते हैं और हम नारायणहैं निज सृष्टि पालनके लिये ब्रह्माजीने हमारा स्मरण कियाहै सो जलशयन छोड़

वहां जातेहैं इतना कह विष्णु भगवान् बोले हे रुद्र ! हम दिव्य दृष्टि देते हैं अब हमारे स्वरूपको आप देखें यह कहतेही रुद्रजी कहते हैं कि हमने क्या देखा कि सूर्यके तुल्य तेजसे प्रकाशमान अंगुष्ठमात्र एक पुरुष शुक्लवर्ण सहस्रफणके सर्पशय्या पर विराजमान होरहाहै व उसीकी नाभिसे कमलहै उस कमलपर चतुर्मुख ब्रह्माजी व उन्हींके समीप हमभीहैं यह देखि बड़े आनन्द में मग्नहो उस समय हे ऋषीश्वरो ! हम विष्णु भगवान्की स्तुति करनेलगे (अथ स्तुतिः।ॐनमोस्त्वनन्ताय विशुद्धचेतसे सुरूपरूपाय सहस्रबाहवे। सहस्ररश्मिप्रवराय वेधसे विशालदेहाय विशुद्धमूर्तये। समस्तविश्वार्तिहराय शम्भवे सहस्रसूर्यानिलतिग्मतेजसे। समस्तविद्याविहिताय चक्रिणे समस्तगीर्वाणनुते सदा नमः। अनादिदेवाच्युतशेषशेखर प्रभो विभो भूतपते महेश्वर। मरुत्पते सर्वपते जगत्पते भुवःपते भूपतये सदा नमः। जलेश नारायण विश्वशंकर क्षितीश विश्वेश्वर विश्वलोचन। शशाङ्कसूर्याच्युतवीर विश्वप्रतर्क्यमूर्तेऽमृतमूर्तिरव्यय। ज्वलद्धुताशार्चिविरुद्धमण्डल प्रपाहि नारायण विश्वतोमुख। नमोऽस्तु देवार्तिहरामृताव्यय प्रपाहि मां त्वं शरणागतं सदा। वक्त्राण्यनेकानि विभो तवाहं पश्यामि मध्यस्थगतं पुराणम्। ब्रह्माणमीशं जगतां प्रसूतिं नमोऽस्तु मह्यं तु पितामहाय। संसारचक्रभ्रमणैरनेकैः क्वचिद्भवान्देववराधिदेव। सन्मार्ग्यभिज्ञानविशुद्धसत्त्वैरुपास्यसे किं प्रणमाम्यहं त्वाम्। एकं भवन्तं प्रकृतेः परस्ताद्यो वेत्ति सः सर्वविदादिदेव। गुणा न तेषु प्रसभं विभेद्यां विशालमूर्तिं च विसूक्ष्मरूपम्। अवागयोनिर्विगतेन्द्रियोऽसि विकर्मभावाद्विगतैककर्मा। संसारवांस्त्वं हि न तादृशोऽसि परं वपुर्देवविशुद्धभावः। संसारविच्छित्तिकरैर्यजद्भिरतोऽवसीयेत चतुर्भुजस्त्वम्। परं न जानाति यतो वपुस्ते देवादयोप्यद्भुतकारणं तत्। अतोऽवतारोक्ततनुं पुराणमाधारमीयुः कमलासनाद्याः। न ते वपुर्विश्वसृगब्जयोनि-

रेकान्ततोवेद महानुभावः। परं त्वहं वेद्मि कविं पुराणं भवन्त-
माद्यं तपसा विशुद्धः। पद्मासनो मे जगतः प्रसिद्धः श्वेतप्रसूताव-
सकृत्पुराणैः। स बुध्यते नाथ न मद्विधोऽपि विदुर्भवन्तं तपसा
विहीनाः। ब्रह्मादिभिस्तत्प्रवरैरबोध्यं त्वां देवमूर्तिं च सनातनं च।
प्रबोधमिच्छन्ति न तेषु बुद्धिरुदारकीर्तिष्वपि वेदहीनाः। जन्मा-
न्तरैर्वेदविदां विवेकैर्बुद्धिर्भवेन्नाथ तव प्रसादात्। त्वल्लब्धलाभस्य
न मानुषत्वं न देवगन्धर्वगतिः शिवं स्यात्। त्वं विश्वरूपोऽसि
भवान्सुसूक्ष्मः स्थूलोऽसि चेदं कृतकृत्यताद्य। स्थूलःसुसूक्ष्मःसु-
लभोऽसि देव त्वद्बाह्यचित्ता नरके पतन्ति। किमुच्यते वा भवति
स्थितेऽस्मिन्नाथे तु वस्वर्कमरुन्महीभिः। सत्त्वैः सतोयैः समरूप-
धारिण्यात्मस्वरूपे विततस्वभावे। चतुर्मुखो यो यदि कोटिवक्त्रो भ-
वेन्नरःकोपि विशुद्धचेताः। स ते गुणानामयुतैरनेकैर्वदेत्तदा देववर
प्रसीद। स मे विमुक्तस्य विशुद्धभाव त्वद्भावभावैकमनोनुगस्य।
सदा हृदिस्थोऽसि भवान्नमस्ते न सर्वगस्यापि पृथग्व्यवस्था।
इति प्रकाशं कृतमेतदीशस्तवोमया सर्वगतं विबुद्धा। संसारचक्र-
क्रममाणयुक्त्या भीतं पुनीह्यच्युत केवलं त्वम्। इति स्तुति-
र्मे भगवाननन्त जुषस्व भक्तस्य विशेषतश्च। सृष्टिं सृजस्वेति
तवोदितस्य सर्वज्ञतां देहि नमोस्तु विष्णो) इस प्रकार रुद्रजी
की स्तुति सुनि विष्णुभगवान् प्रसन्नहो मेघतुल्य गम्भीर वाणी
से बोले हे रुद्रजी! इस अपूर्व स्तुतिसे हम बहुत प्रसन्नभये आप
की जो इच्छाहो सो वर मांगिये रुद्रजी कहतेहैं हे अगस्त्यजी!
इस प्रकार विष्णुभगवान्की वाणी सुनि हाथ जोड़ हम बोले कि
हे प्रभो! ब्रह्माजीने हमको सृष्टि करनेकी आज्ञादी उस विषयमें
आपकी कृपासे हमको पूर्णज्ञान हो इस हमारी प्रार्थनाको सुनि
विष्णु भगवान् कहनेलगे कि हे रुद्रजी! आप सर्वज्ञहैं व सना-
तन अखण्ड ज्ञानराशि हैं इसलिये सब देवताओंके आप सदा
पूज्य होंगे इस प्रकार विष्णु भगवान्का वचन सुनि फिर हम बोले

कि हे प्रभो! और भी वर आप मुझे देवें जिससे भावि संसारका कल्याणहो और आपभी मूर्ति धारणकर हमारा पूजन आराधन करें व भक्तिसे हमको प्रसन्नकर अनेक वर लेवें जिस करके सब देवताओंमें व चराचरमें पूज्योंके पूज्यहो शिवजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इस भांति हमारा वचन सुनि विष्णुभगवान् बोले हे रुद्रजी! जो आपने वर मांगाहै इस कारण हम देवकार्यार्थ मनुष्यावतार आदि कई अवतार धारण करेंगे उस समय हम अवश्य आपका आराधन करेंगे व आपसे वर लेवेंगे और जो आपने यह वर मांगा कि हमको धारण करो सो मेघरूपहो सैकड़ों वर्ष आपको धारण करेंगे इतना कह विष्णुभगवान् मेघरूप धारणकर शिवजीको जलसे उठाय आकाशमें जा यह बोले हे रुद्रजी! जो आपने ग्यारहपुरुष प्रकाशमान दीखे हैं वह आदित्यहैं और बारहवां हम सूर्यरूप धारणकर आपके आराधनकर्ता द्वादशादित्य नामसे लोककी रक्षा करेंगे इतना कह विष्णु भगवान् मेघ व आदित्यको धारणकर शब्दरूपहो अन्तर्धान होगये रुद्रजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इस प्रकार पूर्व समयमें विष्णुभगवान्ने कृपा करके हमको वर दिया इसलिये नारायण से परे और देवता नहीं तुल्यताको प्राप्त होता यह गुप्त वृत्तान्त वेद व पुराणों करके सम्मत हमने वर्णन किया इस निमित्त सब में प्रधान व पूजनीय विष्णुभगवान् ही हैं॥

तिहत्तरवां अध्याय॥

श्रीवराहजी कहतेहैं हे धरणि! इस प्रकार रुद्रजीका वचन सुनि ऋषियोंने प्रश्न किया कि हे रुद्रजी! आप सनातन पुराण पुरुष अव्यय विश्वरूप संसारके कल्याण करनेवालेहैं हे उमापते! आप जगदीश्वर व त्रिकालज्ञहैं व सब देवताओंके आदि हैं इसलिये हम सब आपके मुखारविन्दसे पृथिवीका प्रमाण व

वन पर्वत नदी समुद्र यथायोग्य सुना चाहतेहैं सो कृपा करके आप वर्णन करें जिसमें हमारे अनेक संदेह निवृत्तहों यह सुनि रुद्र भगवान् कहनेलगे कि हे ऋषीश्वरो ! जो आपने प्रश्न किया सो सावधानहो श्रवण कीजिये सब पुराणोंमें भूलोंककी व्यवस्था भलीभांति वर्णितहै इसलिये पृथिवीका वृत्तान्त हम वर्णन करते हैं जो परमेश्वर ज्ञानरूप सनातन विद्यामय परमात्मा निष्पाप सकललोकव्यापी नारायण सूक्ष्मोंसे सूक्ष्म स्थूलोंसे स्थूल सो निज इच्छावशहो संसार उत्पन्न करनेके लिये सत्त्वरजस्तमो-गुणस्वरूप जलको उत्पन्न किया उसी जलमें योगनिद्रा वश हो शयन करनेलगे तिस समय विष्णु भगवान्की नाभिसे कमल उत्पन्नहो जलके बाहर प्रकट हुआ उस कमलसे ब्रह्माजी उत्पन्न भये जिनका नाम वेदमें प्रजापति करके प्रसिद्धहै तब प्रजापतिजी ने ज्ञानमूर्ति सनकादिकोंको उत्पन्न किया जिन्हें सनक सनन्दन सनातन सनत्कुमार कहतेहैं इन्होंको ज्ञाननिष्ठ देखि स्वायम्भुव मनुको तथा मरीच्यादि दश ऋषियोंको उत्पन्न किया हे ऋषी-श्वरो ! स्वायम्भुवमनुसे सृष्टिका प्रारम्भ भया रुद्रजी कहते हैं हे मुनीश्वरो ! सो आप श्रवणकरें स्वायम्भुवमनुके प्रियव्रत व उत्तानपाद ये दो पुत्र उत्पन्न भये प्रियव्रतके दश पुत्र उत्पन्न भये जिनका नाम अग्नीध्र, नाभि, किंपुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, रम्यक, हिरण्मय, कुरु, भद्राश्व, केतुमाल ये दश पुत्रहैं इन्होंके नामसे पृथिवीके जुदे २ खण्ड कहाये और ये सब आयुर्बल व संततियोंसे पूर्ण भये जिन्होंके वर्णनमें बहुत कालकी सावधानी चाहिये हे ऋषीश्वरो ! अब हम इन राजाओंमें दूसरा राजा जिसका नाम नाभि है उसके सन्तानका कथन करते हैं सो आप श्रवण करें राजानाभिने मेरुदेवीनाम रानीसे ऋषभ नाम पुत्र उत्पन्न किया तिस ऋषभके सौ पुत्र उत्पन्न भये जिन्होंमें सबों से ज्येष्ठ व श्रेष्ठ भरतनाम जिसके नामसे इस पृथिवीके भागका

भारतखण्ड नाम विख्यात हुआ सो योगीश्वर भरतराजाधिराज संज्ञाको प्राप्तभया तिससे छोटे कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलयकेतु, भद्रसेन, इन्द्रस्पृक्, विदर्भ, कीकट ये नौ देशाधिप भये व इन्हींके नामोंसे देश विख्यात हुआ और नौ योगीश्वर भये जिन्होंका नाम कवि, हरि, अन्तरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस, करभाजन हे ऋषीश्वरो! ऋषभजी के पुत्रों में शेष जो इकासी रहे वो क्रियाकाण्ड में निरतहो ब्राह्मण होगये व भरतजीके सुमतिनाम पुत्र भया तिस पुत्रको योग्य देखि राज्यभार दे आप बनमें तप करनेको चलागया सुमति भरतखण्डकी राज्य करनेलगा सुमतिके तैजस नाम पुत्र उत्पन्नभया तैजसके इन्द्रद्युम्न नाम पुत्र भया इन्द्रद्युम्नके परमेष्ठी व परमेष्ठीके प्रतिहर्ता तिसके निखात निखातके उन्नेता उन्नेता के अभिभाव अभिभावके उद्गाता उद्गाताके प्रस्तोता प्रस्तोताके विभु विभु के पृथु पृथु के अनन्त अनन्तके गय गयके विराट विराटके सुधीमान् सुधीमान्के शतपुत्र उत्पन्न भये जिन्हों करके संपूर्ण भरतखण्ड व्याप्त होरहाहै औरभी सातोंद्वीप जिसके सन्तानसे पूर्ण हैं और हे ऋषीश्वरो! सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग इन चारोंयुगोंके इकहत्तर बार भोगनेसे एक मन्वन्तर होता है और चौदह मन्वन्तरमें एक इन्द्रका भोग होताहै ॥

चौहत्तरवां अध्याय ॥

रुद्र भगवान् कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! अब जम्बूद्वीपका प्रमाण लक्षण व समुद्रोंकी संख्या द्वीपोंका विस्तार और द्वीपोंके जितने खण्डहैं और जो २ नदियांहैं व महाभूतोंका प्रमाण सूर्य और चन्द्रमाकी गति व हजारों द्वीपोंके भेद वर्णन करते हैं सो आप सावधान हो श्रवण करें हे ऋषीश्वरो! नारायणकी महिमा अनन्तहै इसलिये अनन्तकी रची हुई सृष्टि क्यों न अनन्तहो जो

बात कथनमें नहीं आती सो तर्कसे विचार किये निश्चयमें आती है अब जम्बूद्वीपका वृत्तान्त आप श्रवण करें जिसका चारोंओर से लक्षयोजनका विस्तारहै और सिद्ध, चारण, गन्धर्व करके शोभित व अनेक चित्र विचित्र धातुओंसे पूर्ण पर्वतोंसे विराजमान व अनेक नदियोंसे शोभायमान आठों दिशाओंमें आठ द्वीपों करके युक्त विराजमान होरहाहै व जिसके चारोंतरफ़ लवणाकर समुद्र वेष्टितकर द्वीपकी शोभाको दे रहाहै तिस जम्बूद्वीप के विस्तार समान चारोंतरफ़ छःपर्वत विराजमानहैं तिनमें जो हिमालयनाम पर्वत बरफ़से पूर्ण व हेमकूट नाम पर्वत स्वर्णमय जिसे सुमेरु कहते हैं व सुमुख पर्वत औ निषध पर्वत चतुर्वर्ण पर्वत सौवर्ण ये छहों निज २ व्यासके प्रमाण ऊंचे व पृथ्वीमें प्रविष्ट व अनेक धातुओंसे युक्तहैं इन पर्वतोंमें जो मध्यका पर्वत है उसे ब्रह्मलोक कहतेहैं तिसके पूर्वदिशामें जो पर्वतहै उसका उज्ज्वल वर्ण होने से उसकी ब्राह्मण जातिहै व दक्षिणका पर्वत पीतवर्ण होनेसे उसकी वैश्यजाति है पश्चिमदिशाके पर्वत का वर्ण श्याम होनेसे शूद्रवर्णहै और उत्तरदिशाके पर्वतका रक्तवर्ण है इसलिये उसे क्षत्रियवर्ण कहते हैं व हे ऋषीश्वरो! नीलपर्वत वैदूर्यमय व श्वेतपर्वत रजतमय व बर्हिनाम पर्वत मोरके पंख तुल्य नानाधातुओं करके युक्त इन पर्वतोंमें गन्धर्व सिद्ध व चारणआदि निवास करते हैं इन्होंमें एक २ का विष्कुम्भ नौ २ सहस्र योजनका है व सबके मध्यमें जो है उसे इलावृत कहते हैं इसका भी विस्तार नौ सहस्र योजनका है इसके मध्यमें मेरु पर्वत निजप्रकाशसे सबोंको प्रकाशित कररहाहै तिस मेरुपर्वत के दक्षिण व उत्तर दो भाग करके दो खण्ड कहाते हैं इन खण्डों का प्रमाण दो २ सहस्र योजनहै जिसके दो सौ भागमें नील व निषध ये दो पर्वतहैं व इसी प्रकार श्वेतपर्वत व हेमकूट, हिमवान् और शृङ्गवान् ये चारों पर्वत जम्बूद्वीपके चारों दिशाकी

मर्यादा को शोभा देरहे हैं व निषध पर्वतसे द्वादशांश न्यून हेम-कूट है व हेमकूटके मानसे विंशांश न्यून हिमाचल हैं रुद्रजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इन पर्वतोंके अन्तराल भूमि में मनुष्य निवास करते हैं उन्हीं स्थानों की खण्डसंज्ञा है उन खण्डोंमें छोटे २ पर्वत व नदियां अनेक हैं जिससे वो परस्पर अगम्य हैं और हेमकूटके प्रान्तभूमिको किंपुरुष खण्ड कहते हैं व निषध के प्रान्तभूमिको हरिवर्ष कहते हैं व हेमपार्श्वके प्रान्तको इला-वृतखण्ड कहते हैं व नीलपर्वतके प्रान्तभूमि को रम्यक नाम वर्ष कहते हैं व श्वेत पर्वतके प्रान्त को हिरण्मय खण्ड कहते हैं व शृङ्गवान् पर्वत के प्रान्त की कुरुसंज्ञाहै हे ऋषीश्वरो! इलावृतखण्ड का विस्तार तीस सहस्र योजन का है जिसके प-श्चिमभागमें गन्धमादन नाम पर्वतहै उस गन्धमादनका आ-याम विस्तार माल्यवान् पर्वतके तुल्यहै जिस गन्धमादनमें विष्णु भगवान् धर्म से रूप धारणकर चराचर लोकपूज्य महायोगी देवताओं करके स्तुति को प्राप्त विराजमान होरहे हैं जिनका नाम लोकविख्यात नरनारायणहै जिनका देह साधारण मनुष्यों के तुल्य नहींहै केवल अस्थिमांस रुधिरमय किन्तु इच्छारूप योगमय शरीरहै शिवजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! जिस गन्ध-मादनमें नारायणकी सेवानिमित्त अनेक देवताओं का गण व गन्धर्व, सर्प, राक्षस, यक्ष, किन्नर आदि विहाररहेहैं व जिसमें अनेक औषधियां अनेक धातु अनेक रत्न चारोंतरफ़ परिपूर्ण होरहे हैं और हे ऋषीश्वरो! सुमेरुपर्वतके चारों ओर भद्राश्व, भारत, केतुमाल और कुरु ये चार देश विराजमान होरहे हैं जिस सुमेरु पर्वतके ऊपर मणि व रत्न करके रचित सुवर्णमय सहस्र योजनकी दिव्य ब्रह्मसभा है जिसका मनोवती नाम है जिसमें अनेक ब्रह्मर्षि विराजमान होरहे हैं जिसमें ईशान नाम शिव सहस्रसूर्यतुल्य प्रकाशमान विमानमें विराजमान होरहेहैं

और इन्द्रादि देवताओं के गण अनेक पूजाकी सामग्री निज २ हाथों में लियेहुये ब्रह्माजीकी पूजाकर स्तुति कररहे हैं व कहीं २ जिसमें अनेक तपस्वी भक्ति से वेदवाणी से नम्र हो स्तुति कथा कररहेहैं और जिन्होंने पूर्वजन्ममें यम नियम प्राणायाम आदि कर्मों करके निजकल्मष को भस्मकर व दान व्रत आदि शुद्धाचरणसे जिनके पाप निवृत्त होगयेहैं तिन्हों करके ब्रह्मसभा पूर्ण होरहीहै वह ब्रह्माजी का स्थानहै जिसमें नदी ऊर्ध्ववाहिनी है अर्थात् जिसकी धारा ऊपर को वहिरही है जिसमें ब्रह्मर्षि आदि त्रिकाल संध्याकर सूर्य भगवान् का उपस्थान व गायत्री का जपकर ब्रह्ममय होरहे हैं॥

पचहत्तरवां अध्याय॥

रुद्रजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! सुमेरु पर्वत के पूर्वदिशामें अमरावती नाम इन्द्रकी पुरी जिसके चारों ओर सुवर्णका शहर-पनाह और खांवां तिसके भीतर विश्वकर्माके गुणोंको प्रकाश करती अनेक वापी जिनकी सिढ़ियां विद्रुमकी और जिनमें भांति २ के कमल लगरहेहैं कि जिनमें जलपक्षी अनेक भांति शब्द करते बिचररहेहैं और जिनके चारों तरफ़ अनेक भांति २ के विमान तिन्होंपर निज २ स्त्रियोंके साथ देवगण विलासको करते निज २ मनोरथको सफल कररहेहैं और कहीं ध्वजा विराजमानहैं व कहीं पताका तिस अमरावतीके मध्यमें सुधर्मानाम देवराजकी सभा सुशोभित होरही है तिसके चारों तरफ़ नन्दन नाम वन कि जिसमें छहोंऋतु अपनी २ शोभाको देरही हैं जिस सभामें व वनमें इन्द्रजी इन्द्राणीजीके साथ इच्छा विहार करते हैं हे ऋषीश्वरो! अमरावतीपुरीके अग्निकोणमें अग्निभगवान्की तेजोवती पुरी तेजसे विराजमानहै तिसी प्रकार गुणवती नाम अतिरमणीया दक्षिणदिशामें यमराजकी पुरी है जिसका लोकमें

संयमनीनाम विख्यातहै औ मेरुपर्वतके निर्ऋति भागमें निर्ऋति महाराजकी पुरी जिसका कृष्णावती नामहै तिसी प्रकार मेरुके पश्चिमभागमें शुद्धवतीनाम वरुण महाराजकी पुरीहै तिसी प्रकार सुमेरुके वायुकोणमें गन्धवती नाम वायु भगवान्की पुरीहै तिसी प्रकार उत्तरदिशामें महोदयानाम कुवेरजीकी पुरी विराजमानहै तिसी भांति मेरुके ईशानभागमें अनेक भूतों करके संकुल मनोहरा नाम ईशान भगवान्की पुरी है हे ऋषीश्वरो ! इसप्रकार सुमेरुके आठों दिशाओं में आठों लोकपालोंकी पुरियां विराजमान हो रहीहैं ॥

छिहत्तरवां अध्याय ॥

वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! रुद्रजी अगस्त्य आदि ऋषीश्वरों से वर्णन करतेहैं कि हे ऋषीश्वरो! सुमेरुपर्वतके चारों दिशाओंमें चार मर्यादागिरि हैं जिन पर्वतों में स्वर्ण, चांदी, तांबा, सीसा, लोहा, हरताल, मनशिला, सुरमा इन धातुओंकी खानिहैं व अनेक सिद्ध अप्सरा आदिके मनोहर २ जिसमें विहार वन व कन्दरा आदि विचित्र स्थान बने हैं और चारों पर्वतोंमें पूर्वदिशा में मन्दराचल दक्षिणमें गन्धमादन पश्चिममें विपुल उत्तर में सुपार्श्व सुमेरु की शोभाको देरहे हैं इन चारों पर्वतोंके शिखर पर पताकाके तुल्य चार वृक्ष विराजमान हैं और देव दैत्य की नारियों करके शोभितहैं हे ऋषीश्वरो ! मन्दराचलके शिखरमें कदम्ब नाम वृक्षहै जिसकी शाखा ऐसी बड़ी हैं मानो आकाश को भेदन किया चाहतीहैं व पुष्प बड़े २ घटके तुल्य निज सुगन्ध करके दिशाको सुवासित कररहे हैं जिसके समीपवर्ती मनुष्यों को भूषण वस्त्र शय्या भोजन अनेक भांतिके और षड्रसों करके अनेक पदार्थ दुर्लभ नहीं हैं और वहांके निवासी देवतुल्य आयुष् व बल पराक्रम करके युक्त होते हैं और उन मनुष्यों

को सर्वदा भद्र अर्थात् कल्याण समान होताहै इसलिये उस खण्डका भद्राश्ववर्ष नामहै हे ऋषीश्वरो! मेरुके दक्षिण जो पर्वतहै उसके शिखर पर जम्बूनाम वृक्षहै जो सदा फल, पुष्प, शाखा, पल्लवों करके सुशोभित रहताहै व जिसके फल अति मनोहर सुगन्ध करके युक्त अमृत तुल्य रस करके परिपूर्ण पर्वत के शिखरसे नीचेको गिरते हैं जिस रससे जम्बूनाम नदी बहती है कि जिस नदीके दोनों कूलकी मृत्तिका सूर्य व वायुके संयोग से व जम्बूरसके संयोगसे जाम्बूनदनामा सुवर्ण होताहै जिसे देवता, यक्ष, गन्धर्व निज २ अंगोंमें भूषण बनाके धारण करतेहैं और जिसके नामसे वहांकी पृथ्वीको जम्बूद्वीप कहतेहैं और हे ऋषीश्वरो! विपुलपर्वतके दक्षिण ज्योतिश्शृङ्गनाम पर्वतहै जिसके शिखरमें अश्वत्थका बड़ा ऊंचा व छाया करके युक्त वृक्षहै जिस में घड़ेके मुवाफ़िक़ फल होतेहैं जिसका स्वादु ऐसा मधुर व पुष्ट कि जिसको देवता व गन्धर्व सदा सेवन करतेहैं और जिस का नाम केतुमाल पर्वतहै उसकी यह व्यवस्थाहै कि जिस समयमें देवताओंने समुद्रका मथन किया तब इन्द्रजीने निजकण्ठ से मालाको उतारके उस पर्वत पर रक्खा इसलिये केतुमाल कहाया व उसी पर्वतके नामसे उस भूमिकी केतुमालखण्ड संज्ञा भई व हे ऋषीश्वरो! सुपार्श्वपर्वतके उत्तर शिखरमें वट नाम बड़ा ऊंचा वृक्षहै जिसकी शाखा बहुत सघन चारोंओर तीन २ योजन तक छाया करती हैं जिसके चारोंओर सिद्ध व गन्धर्वोंके समूह सेवन कररहे हैं व जिसके फल स्वर्णके सदृश कुम्भके तुल्य झड़ २ के भूमिमें बिथर रहेहैं जिनके प्रकाशसे उस भूमिका अन्धकार दूर होरहाहै व जिस वटकी छायामें सनकादि ब्रह्माके पुत्र सदा निवास करतेहैं और अनेक भांतिके पक्षियों करके शोभित मन्द, सुगन्ध, शीतल वायुके सुखको देखि निज २ स्त्रियों के साथ गन्धर्व व किन्नर जहां विहार करतेहैं और उसीके पूर्व

दिशामें चैत्ररथ नाम गन्धर्वका निवासभूमिहै जिसके दक्षिण गन्धमादन नाम पर्वतहै जिस गन्धमादनमें भांति २ के वृक्षोंका वन और उसी वनमें देवताओंकी स्त्रियां निज २ पतियोंके साथ आनन्दसे क्रीड़ा कररहीहैं व जिसमें अनेक तीर्थ व अनेक ऋषि मुनि निवास करतेहैं और हे ऋषीश्वरो! इन चारों पर्वतोंसे चार नदियां चारों दिशाओंको बहतीहैं पूर्वमें अरुणोदा नाम नदी दक्षिणमें मानसगङ्गा पश्चिममें असितोदा और उत्तरमें महाभद्रा इन नदियोंमें क्रम करके श्वेत, कपिल, पीत, नील कमल विराजमान होरहेहैं अब अरुणोदाके समीप जो २ पर्वतहैं उनको आप श्रवण करें जो मानसके पूर्वहैं विकङ्क, मणिशृङ्ग, सुपात्र, चपल, महानील, कुम्भ, शुचि और विमर्दन ये मानसके पूर्व भागके पर्वत हैं और जो मानसके दक्षिणभागमें पर्वतहैं उनका नाम आप श्रवण करें त्रिशिखर, शिशिर, कपि, शतमख, क्षुण, ताम्रांह, विष, श्वेतोदन, सरल, केतु, रत्नकेतु, एकमूल, महाशृङ्ग, गजमूल और पिशाच ये पर्वत दक्षिणभागकेहैं और मानसके पश्चिम जो पर्वतहैं उन्हें आप श्रवण करें पञ्चशैल, कैलास और हिमवान् अब मानसके उत्तर जो पर्वतहैं उन्हें सुनिये कपिल, पिङ्गल, भद्र, सरस, कुमुद, मधुमान, गर्जन, मर्कट, कृष्णपाण्डव, सहस्रशिरा, पारियात्र और शृङ्गवान् रुद्रजी कहतेहैं कि हे ऋषीश्वरो ! महाभद्रसरके उत्तर जो पर्वतहैं उन्हें आप श्रवण करें हंसकूट, वृषहंस, कपिञ्जल, इन्द्रशैल, नील, कनकशृङ्ग, शतशृङ्ग, पुष्कर, मेघशैल, विरज और जारुचि अब पर्वतोंमें जो उत्तम २ स्थान और कन्दराहैं व पुण्यतीर्थ उन्होंका आप श्रवण करें जिन्होंको देवता और सिद्ध सदा सेवन करतेहैं ॥

सतहत्तरवां अध्याय ॥

रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो ! महाचक्र व कुमुद इन दोनों

पर्वतोंकी जो मध्यभूमिहै सो अतिरमणीय तीनसौ योजन की लम्बी व शतयोजन की चौड़ी सुगन्धयुक्त मधुर जलसे पूर्ण व द्रोणमात्र प्रमाण जिन पुष्पोंके ऐसे फूले भये पुण्डरीक सहस्रपक्ष आदि कमलके अनेक जातियों करके युक्त व जिसके मध्यमें सहस्रपक्ष कमल उस कमलवनकी शोभा देरहाहै और जिसके चारों तरफ़से देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, गुह्यक और सर्प घेरके सेवन कररहेहैं जिसको पुराणवेत्ता श्रीसर कहतेहैं जिसकी शोभा देखनेवालोंके मनको हरनेहारीहै तिस सहस्रपत्र कमल वनके मध्यमें मध्याह्नके सूर्यतुल्य प्रकाशमान कोटिपत्रका कमल मनोहर गन्ध व भ्रमरके समूहों करके विराजमान तिसके मध्य में श्रीमहालक्ष्मी भगवती मूर्ति धारण किये निवास कररही हैं हे ऋषीश्वरो! जिस सरोवरके चारोंओर बिल्ववृक्ष सघन वन लगरहाहै वह वन शतयोजनका बड़ा और दो योजनका विस्तार कि जिसमें सिद्ध व मुनि सूक्त करके लक्ष्मीजी महारानी की स्तुति करतेहैं और फिर जिस वनमें अमृतके तुल्य बिल्वफल सुगन्ध करके युक्त चारों तरफ़ भूमिमें गिरेहैं व कोई वृक्षमें लगेहैं जिनके खानेसे क्षुधा तृषा आदि और जरा पलित अर्थात् बालोंका सफ़ेद होना बूढ़ापन नहीं होता खातेही खाते दिव्य देह होजातीहै और जिसका नाम श्रीवनहै हे ऋषीश्वरो! तिस वनमें सदा लक्ष्मीदेवी रूपवती होकर निवास करती हैं तिस वन के अनन्तर दशयोजन तक कदम्बवनहै जिसकी शाखा आधे २ योजनकी ऊंची व चार २ योजनका विस्तार जिन वृक्षोंका जिस के नीचेकी भूमि मानो मनशिल नाम धातुसे रँगीहुईहै व जिस के पुष्पोंकी मनोहर गन्ध पायके भ्रमरोंकी पंक्तियां नन्दनवन छोड़ २ मत्त हो उसी वनमें निवास कररही हैं व तिस वनमें निज २ स्त्रियोंके साथ देव, दानव, दैत्य, राक्षस, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, सर्प नानारूप धारण किये जहां तहां विहार कररहेहैं और

उसी वनमें कश्यपजी महाराजके तप करनेका स्थानहै और अनेक सिद्धोंका स्थानहै तिस वनके कई योजन पूर्वमें ककुभ नाम पर्वतहै जिस पर्वतसे सुखानामा नदी निकल उत्तरके समुद्रमें जाय मिलीहै जिस नदीके किनारे पचास योजनका लम्बा व तीस योजनके विस्तारका तालवनहै जिसके फल अतिमीठे व सुगन्ध करके युक्त मनोहर कि जिन्होंके खानेसे मनुष्य देवतुल्य आयुर्बल और पराक्रम करके युक्त होतेहैं तिसके आगे ऐरावत नाम पर्वतहै जिसका आयाम एक सहस्र योजन और विस्तार शतयोजनका इस पर्वतकी भूमि एकही शिलाकीहै इसीलिये उसमें कोई वृक्ष अथवा तृण नहीं उत्पन्न होते रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! इसप्रकार मेरु पर्वतके प्रान्त भूमिका हमने वर्णनकिया॥

अठहत्तरवां अध्याय॥

रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! अब सुमेरु पर्वतके दक्षिण दिशाकी व्यवस्था आप श्रवण करें जो सुमेरु पर्वतके दक्षिण शिशिर और पतङ्गनाम दो पर्वतहैं तिन्होंके मध्यमें शुक्लवर्णकी पृथिवीहै जिसमें उदुम्बर वृक्षका वन अतिरमणीय व मधुर फलों से युक्तहै जिसके फल कूर्मके तुल्य बड़े व चिपटे होतेहैं जिन फलकी रक्षा सदा देवगण करतेहैं व उसी उदुम्बरवनमें कर्दम नाम ऋषिका निवासस्थानहै और अनेक मुनियों करके युक्त शतयोजनका बड़ा वह स्थानहै जिस वनमें सौगन्धिक नाम सरोवर जिसमें नीलकमलका वन कि जिस वनमें मधुकर हंस आदि और अनेक जलपक्षी मनोहर शब्द करते विहार कररहेहैं तिसके समीप महाशिखर नाम पर्वत शत योजन का आयाम तीस योजन का विस्तार व अनेक रत्न और धातुओं करके शोभित तिसके शिखरमें रत्नों करके जटित स्वर्णप्राकारके मध्य पुलोमा नाम विद्याधरकी नगरी बसतीहै जिसमें विद्याधरके कुटुम्ब और

सेवक अनेक लक्ष सुखपूर्वक निवास करतेहैं और इसी महा-
शिखर पर्वतका नामान्तर विशाखाचल भी कहते हैं इस पर्वतके
और श्वेतपर्वतकी मध्य भूमिमें आम्रका बहुत विशाल व फल
पुष्पों करके युक्त वनहै जिसमें आम्रके फल बड़े कुम्भके तुल्य
विद्रुम वर्ण बहुतसे लगे हैं जो अति ऊँचे गिरनेसे फटकरके भूमि
में गिरतेहैं निज रसकी सुगन्धसे दूर २ तक सुवासित करते हैं
और जिसकी गुह्यकोंके गण अर्थात् समूह रक्षा करतेहैं और हे
ऋषीश्वरो! उसीके समीप जो रत्नधारनाम पर्वतहै तिसके प्रान्त
की भूमिमें बहुत सुगन्ध करके युक्त सर्वकालमें पुष्पोंसे भूषित
बीस योजन विस्तार शतयोजनका आयाम किंशुकनाम वृक्षका
वनहै जिसकी सुगन्धसे सौ सौ योजनतक सुवासित होताहै
और उस स्थानमें सिद्ध निवास करते हैं जिस स्थानमें उत्तम
मीठा व स्वाद करके युक्त जलहै उसी भूमिमें सूर्य भगवान् का
निवासस्थानहै जिस भूमिकी शोभा मनोहर देखि सूर्य भगवान्
प्रतिमासमें वहां आय विश्राम करते हैं और उसी समय सूर्य
भगवान्की सेवा स्तुति करनेको ब्रह्मादिक देवता आते हैं रुद्रजी
कहते हैं हे ऋषीश्वरो ! इस भूमिके थोड़ी दूर पर पञ्चकूटनाम
पर्वत और कैलासनाम पर्वतहै तिन दोनों पर्वतोंके मध्य पञ्चसहस्र
योजनका आयाम और शतयोजनका विस्तार विलक्षण भूमिहै
कि जिसमें पशु पक्षी कोई नहीं जासक्ते शुक्लवर्ण हिम करके ऐसी
शोभित होती हैं मानो स्वर्ग जानेके लिये सीढ़ियां बन रही हैं
उस स्थानसे पश्चिम अनेक पर्वतोंके गुफा बनरहेहैं और सुपार्श्व
शिखर पर्वतके मध्यमें चारोंतरफ़ सौ सौ योजनका एकभौम नाम
शिलातलहै जो सदा तप्त रहताहै और उसे कोई स्पर्श नहीं
करसक्ता तिस शिलाके मध्यमें भगवान् अग्निज्वाला रूप धारण
कर तीस २ योजनके आयाम विस्तारमें चारोंओरसे प्रचण्ड
होरहेहैं और हे ऋषीश्वरो! कुमुद और अञ्जननाम दोनों पर्वतों

के मध्यमें शतयोजनकी विस्तीर्ण मातुलुङ्ग नाम वृक्षकी स्थली है और उत्तम २ पके २ पीत वर्णके फलों करके युक्त व संपूर्ण जीवों करके अगम्यहै तिस स्थानमें पुण्यनाम ह्रद सिद्धों करके सेवित सुशोभित होरहाहै जिसे बृहस्पतिवन कहतेहैं इसीप्रकार पिञ्जर और गौरपर्वतके मध्यमें अनेकों सर व द्रोणी सौ सौ योजनके विस्तारकी हैं जिन सरोंमें अनेक भांति के कमल प्रफुल्लित हो स्थानकी शोभाको देरहे हैं और जिस स्थानमें विष्णुभगवान्का मनोहर अतिरमणीय निवास स्थानहै तिसी प्रकार शुक्ल व पाण्डुर पर्वतके मध्यभूमिमें तीस योजन आयाम नब्बेयोजन विस्तीर्ण वृक्ष व तृणों करके वर्जित एक शिलाहै उसके समीप निष्कम्पानाम वापी जिसमें नानाभांतिके कमलोंकी शोभा होरहीहै तिस निष्कम्पा वापीके मध्यमें पांच योजनका विस्तीर्ण वटवृक्षहै तिस वृक्षके निकट चन्द्रशेखर शूलपाणि उमापति भगवान् निवास करते हैं जिनकी सेवामें चारोंओर कुबेर आदि यक्षोंके गण सदा युक्त रहते हैं और हे ऋषीश्वरो ! सहस्र शिखर व कुमुदपर्वतके मध्य पचास योजन आयाम बीसयोजन का विस्तार इक्षुका क्षेत्र और उत्तम उत्तम व मीठे मीठे फलोंके वृक्ष का वन जिसमें अनेकभांतिके पक्षी व नानाविधिके जीव विराजमान होरहेहैं तिस स्थानमें इन्द्र महाराजका निवासस्थानहै तिसी भांति शंखकूट और ऋषभ दोनों पर्वतोंके मध्यमें अनेक योजन आयाम विस्तार करके युक्त अतिरमणीय पुरुष स्थली नाम भूमि अनेक गुणोंकरके युक्त विराजमानहै जिसमें अतिसुगन्ध कक्कोल के फल बिल्वके प्रमाण चारोंओर लटकरहे हैं जिस फलकी सेवा और रक्षाके लिये नाभागनाम पुरुष उस वनमें निवास करताहै तिसी भांति कपिञ्जल और नागपर्वतके मध्यमें दोसौ योजनका विस्तार सौ योजनका आयाम अनेक जीवों करके शोभित द्राक्षा और खर्जूर वृक्षोंका वन उत्तम २ पुष्पफलयुक्त लताओं करके

शोभायमान सुस्थली नाम भूमिहै तिसी भांति पुष्कर और मेघ पर्वतके अन्तरमें साठि योजनका विस्तार और शतयोजनका आयाम समभूमि महतीनाम स्थलीहै जिस स्थलीमें वृक्ष लता और तृणआदि कुछभी नहींहैं तिस स्थलीके चारोंओर अनेक २ योजनके बड़े चार वन और चारही सरहैं और तिसीके समीप अड़तीस योजनका आयाम बाईस योजनका विस्तीर्ण घोरा नाम स्थलीहै ॥

उनासी का अध्याय ॥

रुद्रजी भगवान् कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! अब जिन २ पर्वतों में देवताओंका निवासहै सो वर्णन करतेहैं शान्तनाम जो पर्वतहै तिसके ऊपर महेन्द्रजी का क्रीड़ास्थानहै और वहांहीं देवराजके केलि करनेका पारिजातनाम वृक्षका वनहै तिसके पूर्वदिशामें कुञ्जरनाम पर्वतहै तिस पर्वतके ऊपर दानवोंके आठ पुर आठो दिशाओंमें बसतेहैं तिसी भांति वज्रकनाम पर्वतमें राक्षसोंके अनेकों पुर विहारके लिये बनरहेहैं जिन्होंके नाम नीलक करके कथन कियेजातेहैं और इच्छारूपी स्वतन्त्र विहरतेहैं इसी भांति नीलनाम पर्वतमें किन्नरोंके पञ्चदश सहस्र पुरहैं जिन्होंमें देवदत्त और चन्द्रआदि पञ्चदश किन्नरोंके महाराज बड़े बड़े अभिमानी निवास करतेहैं और वो किन्नरोंके नगर अतिशोभायमान सुवर्णसे रचितहैं रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! चन्द्रोदय नाम पर्वतमें नागोंका निवासस्थानहै सो नाग बड़े बड़े बिलोंमें गरुड़जी महाराजसे छिपकरके भयभीत निज निज कुटुम्बों करके युक्त निवास करतेहैं और अनुरागनाम पर्वतमें दानवेन्द्रोंका निवासस्थानहै और वेणुमान्नाम पर्वतमें विद्याधरोंके महाराज उलूक रोमश महावेत्रआदि नाम जिन्होंका सो निवास करतेहैं और वसुधारनाम पर्वतमें वसुनाम देवताओंका निवासहै और वसुधार

रत्नधार इन दोनों पर्वतोंके शिखरमें आठ पुर आठों वसुओंके और सात पुर सप्तऋषियोंके हैं और एकशृङ्ग नाम पर्वतके मस्तक पर प्रजापति जीका स्थानहै जिन्हें जगत् के गुरु चतुर्मुख ब्रह्मा करके कहते हैं और गजनाम पर्वत में श्रीमहामाया का निवास स्थानहै और वसुधारनाम जो श्रेष्ठ पर्वतहै तिसमें मुनि, सिद्ध, विद्याधरोंका स्थानहै और चौरासी पुरियां कि जिन्होंमें बड़े बड़े ऊंचे प्राकार सो बसी हैं तिन पुरियों में युद्धशालिनाम गन्धर्वोंके गण निवास करते हैं जिन्होंमें सबके महाराज एकपिङ्गल नाम विराजितहैं और पञ्चकूटनाम पर्वतमें दानवोंका निवासस्थानहै हे ऋषीश्वरो! शतशृङ्गनाम पर्वतमें यक्षोंके सैकड़ों निवासस्थान हैंऔर प्रभेदक नाम पर्वतमें देव दानव सिद्धोंके पुरहैं और उसी पर्वतके शिखरमें एक अत्यन्तविशाल वहुत बड़ी शिलाहै जिसमें पर्व पर्वमें चन्द्रमा आय उसके ऊपर निवास करताहै तिसके उत्तर थोड़ीसी दूरपर त्रिकूट नाम पर्वतहै जहां साक्षात् ब्रह्माजी निवास करतेहैं और उसी पर्वतके समीप अग्नि भगवान् मूर्ति धारणकर देवताओं करके सेवित निवास करते हैं और उसी त्रिकूटाचलके उत्तर शृङ्गमें देवताओंका निवासस्थानहै और पूर्वदिशामें श्री नारायणका स्थानहै मध्यमें ब्रह्माजीका और पश्चिममें शिवजी का और उसीमें कई एक यक्षोंके भी निवासस्थान हैं और हे ऋषीश्वरो! त्रिकूटाचलके उत्तरभागमें जातुक्षनाम पर्वत तीस योजनका लम्बा चौड़ा और रमणीयहै जिसमें नन्दजलनाम सरोवर पर्वतकी शोभाको देरहाहै जिस सरोवरमें नन्दनाम नागराज निवास करतेहैं हे ऋषीश्वरो! ये आठ पर्वतोंकी देवपर्वत संज्ञाहै और इन पर्वतोंका स्वरूप शुक्ल, पीत, हरित, कृष्ण, रक्त, स्वर्ण, हरताल, मनःशिला इन्हों का वर्णहै रुद्रजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इस गोलाकार पृथिवीमें अनेक आश्चर्य हैं जिनमें हमने कुछ कुछ वर्णन कियाहै॥

अस्सी का अध्याय ॥

रुद्रजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! अब हम जो जो नदियां हैं उन्होंका वर्णन करतेहैं सो सावधानहो श्रवण करो जो आकाश-रूपी समुद्रहै तिससे आकाशगङ्गा निकलतीहै सो आकाशगङ्गा वायुमण्डलसे क्षोभको प्राप्तहो चौरासी सहस्र योजन नीचे आय सुमेरु पर्वतके मस्तक पर गिरतीहै सो मेरुशिखरमें आयके चार धारा होनेसे चारही नाम श्रीगङ्गाजीने धारण किये सीता, अलकनन्दा, चक्षु, भद्रा इन चारों नामोंसे विख्यात भई तिन्होंमें सीता नाम गङ्गा हज़ारों पर्वतोंको भेदन करती आय पृथ्वीमें प्राप्तभई जिसे गङ्गानाम लोक कथन करतेहैं अब हे ऋषीश्वरो! अमरगण्डिकाका वर्णन करतेहैं सो इकतीस योजन आयाम और चारसौ योजनका विस्तार जिसे केतुमालभी कहतेहैं जिस स्थानके निवास करनेवाले मनुष्य कृष्णवर्ण महाबलवान् तो पुरुषहैं और स्त्रियां अत्यन्त सुन्दरी कमलके मध्यकासा वर्ण होतीहैं उस स्थानमें पनस अर्थात् जिसे कटहर कहतेहैं उसके वृक्षोंके फल पुष्पोंसे शोभित बहुतहैं और उसी स्थानसे ब्रह्मपुत्रनाम नदीकी उत्पत्तिहै जिसके जल पीनेसे मनुष्य आरोग्य दीर्घायुष बड़े बड़े बलवान् होतेहैं और हे ऋषीश्वरो! माल्यवान् पर्वतके पूर्व दिशामें पूर्वगण्डिका नाम स्थानहै जिसका आयाम विस्तार एक हज़ार योजनका और जिस भूमिके निवास करनेवालेका भद्राश्वनाम संज्ञाहै और वहांहीं शालनाम वृक्षका वनभी है और आम्रके वृक्षभी बहुतहैं जिस स्थानके पुरुष बहुत सुशील रूपवान् और बली जिनका शुक्लवर्णहै और स्त्रियोंका कुमुदवर्ण और जिनकी आयुष् दशसहस्र वर्षकी होतीहै वहांहीं पांच पर्वत औरभीहैं जिनका नाम शैलवर्ण, माल, कोरज, त्रिपर्ण और नीलहै इन पर्वतोंसे जो २ नदियां निकलीहैं वो २ जिस पर्वत

से निकलीहैं उसी पर्वतके नामसे कहीजातीहैं हे ऋषीश्वरो! औरभी नदियां उस स्थानमें अनेकहैं तिन्होंमें जो २ प्रधानहैं उनके नाम आप श्रवण करें सीता, सुवाहिनी, हंसवती, कासा, महाचक्रा, चन्द्रावती, कावेरी, सुरसा, रववती, इन्द्रवती, अङ्गारवाहिनी, हरितोया, सोमावर्त्ता, शतह्रदा, वनमाला, वसुमती, हंसा, सुपर्णा, पञ्चगङ्गा, धनुष्मती, मणिवसा, ब्रह्मभागा, विलासिनी, कृष्णतोया, पुण्योदा, नागवती, शिवा, शैवालिनी, मणितटा, क्षारोदा, वरुणावती, विष्णुपदी, महानदी हे ऋषीश्वरो! ये पुण्य नदियांहैं जो इन्होंके जलको पान करतेहैं वे दशसहस्र वर्षकी आयुष् करके युक्त महाबलवान् होतेहैं॥

इक्यासी का अध्याय॥

रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! यह भद्राश्वखण्डका वृत्तान्त हमने वर्णन किया अब केतुमाल और नैषधपर्वतके मध्यमें जो देशहैं सो आप श्रवण करें विशाख, कम्बल, जयन्त, कृष्ण, हरित, अशोक, वर्धमान ये सात कुलपर्वतहैं और इन्हीं पर्वतोंसे निकली जो नदियांहैं वे अनन्तहैं जिन्होंके आश्रयमें ये देश बसतेहैं सौर, ग्रामसात, अयष्कृत, सुराश्रवण, कम्बल, माहेय, अचलकूट, वासमूल, तपक्रौंच, कृष्णाङ्ग, मणिपङ्कज, चूड़मल, सोमीय, समुद्रान्तक, कुरकुञ्च, सुवर्णतट, ककुह, श्वेताङ्ग, कृष्णपाद, विद, कपिल, कर्णिक, महिष, कुब्ज, करनाट, महोत्कट, शुक, भास, गज, भूमक, कुरञ्जन, मनाहक, किंसपर्णा, भौमक, चोरक, वधूजम, यमजन्म, अङ्गारज, जीवल, लौकिल, वाचांसह, अङ्ग, मधुर, पशुकच्च, श्रवणमत्त, कासिक, गोदा, वामकुल, पञ्जावर्ह, मोदश और कालक इन देशोंके मनुष्य हे ऋषीश्वरो! पर्वती नदियोंके जलको पानकर बड़े बुद्धिमान्, साहसी, दीर्घायुष् और बल आदि करके युक्त होतेहैं अब

उन नदियोंका वर्णन करते हैं जिन्होंके आश्रयमें ये देश बसते हैं प्रख्या, महाकदम्बा, मानसी, श्यामा, सुमेधा, बकुला, विवर्णा, पुंखा, माला, दर्भवती, भद्रा, पल्लवा, भीमा, प्रभञ्जना, काम्बा, कुशावती, दक्षा, काशवती, तुङ्गा, वेशा, अल्पोदा, मुशलावती, पद्मावती, विशाला, महामायी, दण्डा, नवनदी, सरघा व महाकाया और इन पूर्वोक्तदेशोंमें छोटी २ नदियां अनेकहैं॥

बयासी का अध्याय॥

रुद्रजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! उत्तरखण्डके जो निवास करनेवाले हैं वे दक्षिणखण्डवालोंके वशवर्ती रहते हैं अब और २ पर्वतोंके जो निवासी हैं उनका वर्णन करते हैं सो आप श्रवण करें निषधपर्वतके दक्षिण और नीलपर्वतके उत्तरभूमिमें जो निवास करते हैं उन मनुष्योंकी वायव्यसंज्ञाहै मैथुनधर्ममें अतिप्रबल होते हैं और जरा ग्लानि करके रहित सदा हृष्ट पुष्ट रहते हैं हे ऋषीश्वरो! उन मनुष्योंके हित व निर्वाहके लिये उस भूमिमें परमेश्वर ने एक वटवृक्ष आरोपित कियाहै कि जिसके फलका रस सेवन करनेसे देवरूप मनुष्य दशहज़ार वर्ष जीवतेहैं और प्रवेतके उत्तर त्रिशृङ्ग पर्वतके दक्षिण हिरण्मय नाम वर्ष है जिस खण्डमें हैरण्वती नाम नदी है जिसके जलसेवन करनेवाले इच्छारूपी और बलवान् होते हैं और दशसहस्र वर्षका आयुर्बल होताहै और उस देशमें कटहरका वृक्षहै जिसके फल खानेसे नित्य नवीन अवस्था व आरोग्य सदा बना रहताहै इसी प्रकार हे ऋषीश्वरो! त्रिशृङ्ग और मणिकाञ्चन नाम पर्वतके मध्यमें उत्तरकुरु नाम देश निवास करताहै जिस भूमिके वृक्ष मधुस्राव होताहै अर्थात् वृक्षोंसे मधु बहताहै और वस्त्र, भूषण, शय्या औ नाना भांतिके सुगन्ध द्रव्य, छवो रस उन्हीं वृक्षोंसे निकलते हैं जिस स्थानमें स्वर्गच्युत जन्म लेते हैं अर्थात् निज सुकृतसे स्वर्गसुख

भोग करके पुण्यक्षीण होनेपर उस भूमिमें जन्म ले दश हज़ार वर्ष विहारपूर्वक जीवतेहैं व वहांके स्त्री पुरुष एकही अवस्थाके व परस्पर प्रेम करके युक्त एकतुल्य सुन्दर होतेहैं हे ऋषीश्वरो! चन्द्रकान्त और योतनाम पर्वतके मध्यमें चन्द्रमसी नाम नदी बहतीहै अनेकों फलों करके युक्तहै और इस कुरुवर्षके उत्तर समुद्रमाल नाम पांच हज़ार योजनका द्वीपहै जिस द्वीपमें चन्द्रवती नाम नदी बहती है और वहांहीं चन्द्रमाजीका निवासस्थान है और वहांके मनुष्य सब चन्द्रमाके तुल्य होते हैं दश सहस्र वर्षका आयुष् होताहै व हे ऋषीश्वरो! उस द्वीपके पश्चिम चार हज़ार योजन दूर सहस्र योजनका लम्बा चौंड़ा भद्रंकर नाम द्वीपहै वहांके मनुष्य वायुभगवान्के उपासक पञ्चसहस्र वर्ष जिनके आयुष् बड़े बलवान् सब सुख करके युक्त निवास करते हैं॥

तिरासी का अध्याय॥

अब हे ऋषीश्वरो! भारतनाम जो खण्डहै उसका वर्णन करतेहैं सो आप श्रवणकरें इस भारत नाम वर्षमें सात कुलपर्वतहैं जिनका नाम महेन्द्र, मलय, सह्य, वेणुमान्, ऋक्ष, विन्ध्य, पारियात्र और भी छोटे छोटे अनेक पर्वतहैं जिन्होंका नाम मन्दर, सार, दर्दुल, कैलास, मैनाक, घृत, पाण्डुर, कृष्णप्रस्थ, गुरुतुङ्ग, रैवतक, ऋष्यमूक, गोमन्त, कूटशैल आदि और अनेकहैं इन्हों की क्षुद्रसंज्ञाहै और इस खण्डमें मनुष्य निवास करतेहैं जिनकी संज्ञा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र करके कही जातीहै और इस खण्डमें नदियां अनेकहैं जिन्होंके नाम गङ्गा, सिन्धु, सरस्वती, शतद्रू, विपाशा, चन्द्रभागा, सरयू, यमुना, ऐरावती, देविका, कुहू, गौतमी, धूतपापा, बहूदा, दृषद्वती, कौशिकी, निरवीरा, गण्डकी, चक्षुष्मती और लोहिता ये नदियां हिमाचल पर्वतसे निकलती हैं और वेदस्मृती, वेदवती, सिन्धुपर्णा, चन्द्रनासा,

सदाचारा, रोही, चर्मण्वती, विदिशा, वेदत्रयी, बयली इतनी नदियां पारियात्र नाम पर्वतसे निकलती हैं और शोणा, ज्योतीरथा, नर्मदा, सुरसा, मन्दाकिनी, दशार्णा, चित्रकूटा, तमसा, पिप्पला, करतोया, पिशाचिका, चित्रोत्पला, विशाला, वञ्जुका, वालुवाहिनी, शुक्तिमती, विरजा, पङ्क्तिनी इतनी नदियां ऋक्षपर्वत की कन्याहैं मणिजाला, शुभा, तापी, पयोष्णी, शीघ्रोदा, विपाशा, वैतरणी, वेदिपाला, कुमुद्वती, तोया, दुर्गा, अन्त्या, आंगिरसी इन नदियोंका जन्म विन्ध्य पर्वतसेहै और हे ऋषीश्वरो! गोदावरी, भीमरथी, कृष्णा, वेणा, वञ्जुला, तुङ्गभद्रा, सुप्रयोगा, वाह्या, कावेरी ये नदियां सह्य नाम पर्वतसे निकलती हैं और शतमाला, ताम्रपर्णी, पुष्पावती, उत्पलवती इन्होंकी उत्पत्ति मलयपर्वतसेहै और त्रियामा, ऋषिकुल्या, इक्षुरसा, अत्रिविदा, उन्मूलिनी, वंशवरा, महेंद्रतनया, ऋषिका, मन्दगामिनी, पलाशिनी इतनी नदियोंका जन्म शुक्तिमान् पर्वतसे है मुख्यता करके इतनी नदियां कुलपर्वतोंसे उत्पन्नहो भारतखण्ड के प्रजाको पवित्र करती हैं इन्होंसे और छोटी २ अनेक नदी हैं और इस भारतखण्डका व्यास लक्ष योजनकाहै ॥

चौरासी का अध्याय ॥

रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! अब हम शाकद्वीपका वृत्तान्त वर्णन करते हैं सो आप श्रवण करें यह शाकद्वीप जम्बूद्वीपसे द्विगुण विस्तार लवणोदधि करके वेष्टित जिसमें पुण्यजीव निवास करतेहैं जिन मनुष्योंको रोग वृद्धता और दुर्भिक्षआदिका दुःख कभी नहीं होता और शाकद्वीपमेंभी सात कुलपर्वतहैं और जिसमें उदयाचल नाम पर्वत पूर्व दिशाको विस्तार युक्तहै और जिसके पश्चिममें धारनाम पर्वतहै और इसी धारपर्वतका दूसरा नाम चन्द्रगिरिभी कहते हैं तिस पर्वतके समीप श्वेतमान् पर्वत

है जिसमें अनेक प्रकारकी प्रजा निवास करतीहै और इसी भांति रजतनाम गिरिहै उस पर्वतके समीप शाकनाम वृक्ष जिसके नाम से उस द्वीपकी ख्यातिहै और रजतगिरिके समीप अम्बकेयनाम पर्वतहै जिसका दूसरा नाम केसरी कहतेहैं और शाकद्वीपमें जो ७ पर्वतहैं उन्हीं पर्वतोंके नामसे खण्डभी होगये हैं और इन पर्वतों से निकली हुई नदियांभी सातही हैं जिन्होंका नाम सुकुमारी, कुमारी, नन्दा, वेणिका, धेनु, इक्षुमती और गभस्तिहै॥

पचासी का अध्याय॥

रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! कुशद्वीपका वृत्तान्त आप श्रवण करें यह कुशद्वीप क्षीरसमुद्र करके वेष्टितहै और शाकद्वीपसे द्विगुणहै जिसमें सातही कुलपर्वतहैं जिन्होंका नाम कुमुद, विद्रुम, हेम, द्रोण, कङ्क, महिष और ककुप् ये सात पर्वतहैं इस कुशद्वीपमें दो खण्डहैं जिन्होंका नाम कुमुद और श्वेतहै और इसी द्वीपमें प्रतपा और प्रवेषा ये दो नदियां पूर्वदिशामें वहती हैं शिवा और यशोदा दक्षिणदिशामें पित्रा और कृष्णा पश्चिम में आह्लादिनी जिसका दूसरा नाम चन्द्राहै सो उत्तरमें बहती है विपुला और शुक्ला ये मध्यदेशकी नदी हैं और अनेक छोटी २ नदियांहैं यह कुशद्वीप दधिनाम समुद्रसे निज प्रमाणसे द्विगुण करके वेष्टितहै॥

छियासी का अध्याय॥

रुद्रजी कहतेहैं हे ऋषीश्वरो! अब क्रौञ्चनाम द्वीपका वर्णन करतेहैं सो आप श्रवण करें जिसका प्रमाण कुशद्वीपसे दूनाहै और क्रौञ्चद्वीपसे द्विगुण घृतसमुद्र करके वेष्टितहै इस क्रौञ्चद्वीप में पर्वत और नदी सात२ हैं क्रौञ्च, विद्युल्लत, रैवत, मानस और इसी नामके औरभी कई नामहैं पावक, अच्छोदक, देवाव्रत, सराय, अन्धकार इन नामोंसे मानस पुकाराजाताहै और देविष्ट

पर्वतका दूसरा नाम काञ्चनशोभभीहै और दिवनन्द, गोविन्द, द्विविन्द और पुण्डरीक जिसका नाम तोषासहभी कहतेहैं ये क्रौञ्चद्वीपके सातों पर्वत रत्नमय हैं और इन्हीं पर्वतोंके अन्तरालमें देशभी बसते हैं क्रौञ्चपर्वतमें कुशलनाम देश जिसका नामान्तर माधव देशभी कहते हैं विद्युल्लतके समीप मनोनुग देश जिसे सम्बर्तकभी कहते हैं और उष्णवान् सोम प्रकाशक और पावक नाम जो देशहैं उन्हींको सुदर्शनभी कहते हैं और अन्धकारदेश जिसका दूसरा नाम सम्मोह भी है और मुनिदेश उसीका प्रकाशभी संज्ञाहै और दुन्दुभी नाम देश जिसका अनर्थ दूसरा नामहै ये सात देश हैं और क्रौञ्चद्वीपमें नदीभी सातही हैं जिन्हों का नाम गौरी, कुमुद्वती, संध्या, रात्रि, मनोजवा, संख्या और पुण्डरीका और भी छोटी छोटीसी अनेक नदियां क्रौञ्चद्वीपमें हैं॥

सत्तासी का अध्याय॥

रुद्रजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! और जो तीन द्वीप हैं उनका वृत्तान्त यह है कि प्रत्येक द्वीप एकसे एक दूने विस्तार करके युक्त आपसमें हैं और समुद्रों करके वेष्टित हैं और प्रत्येक द्वीपमें सात २ पर्वत और सात २ नदियांभी हैं यह ब्रह्माण्ड कटाहका प्रमाण लक्षण हमने वर्णन किया ऐसे ब्रह्माण्ड अनेक नारायण की मायासे उत्पन्न होते हैं औ उसीमें लीन होते हैं इस भूमण्डल सहित समुद्र और पर्वतको श्रीविष्णुभगवान् शूकररूप धारकर पातालमें मग्न हुआ देख कृपा करके निज दन्तपर उठाय स्थापन करते हैं सृष्टि होनेके लिये हे ऋषीश्वरो! यह पृथ्वीका आयाम विस्तार हमने वर्णन किया अब आप सब निस्संदेह हो सावधानतासे विष्णुभगवान् का भजनकर निज २ वाञ्छित फल को प्राप्तहो और हम कैलासपर्वतकी यात्रा करते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इतना कह शिवजी तो ऋषियों से बिदाहो

कैलासको चलदिये और ऋषीश्वरोंने शिवजीकी आज्ञा मान शिवजीको प्रणामकर अगस्त्यजीसे बिदाहो निज २ अभीष्ट दिशाओंको यात्रा करते भये॥

इति रुद्रगीता समाप्ता॥

अट्ठासी का अध्याय॥

श्रीवाराहभगवान्‌जीसे धरणी प्रश्न करतीहै हे भगवन्! आपके मुखारविन्दसे चित्र विचित्र अतिमधुर व मनोहर कथा के श्रवणसे अभीतक चित्त तृप्त नहीं भया इसलिये आप यह वर्णन करें कि ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी इन तीनोंमें श्रेष्ठ और परात्पर कौनहै? इस प्रकार पृथिवीकी प्रार्थना सुनि वाराह नारायण कहनेलगे कि हे धरणि! सबसे परे नारायण भगवान् हैं तिनसे परे ब्रह्माजी और तिनसे परे रुद्रभगवान् जिनके अनन्त चरित्र हैं सो तुम सावधानहो श्रवण करो हम वर्णन करते हैं किसी समयमें अतिरमणीय सब वृक्ष व पुष्प लताओं करके युक्त अनेक रत्नोंका निवास कैलासनाम पर्वतमें सब देवोंके देव महादेव निजगणों करके सेवित विराजमान श्रीपार्वतीजीके साथ कुछ कथन कररहे थे औ शिवजीके चारों ओर अनेक गण जिन्होंके मुख सिंहके समान गजके तुल्य शूकरके तुल्य व किसीके छाग मत्स्य हंस वृषभआदि अनेक जीवोंके तुल्य जिन्होंके मुख और जैसा जिसका मुख वैसाही नादकर २ कोई नाचते हैं कोई गाते हैं कोई किलकिला शब्द कररहे हैं कोई इधर उधर दौड़रहे हैं जिन्होंके हाथोंमें अनेक अस्त्र शोभित होरहे हैं ऐसे २ असंख्य गण शिवजीके चारों ओर विराजरहे हैं कि उसी समय ब्रह्माजी बहुत दुःखी भये २ बड़ी व्याकुलतासे घबड़ाये भये इकल्ले आय शिवजीके समीप प्राप्तभये इस प्रकारकी व्यवस्था ब्रह्मा जी की देखि शिवजी बड़े आदरसे अभ्युत्थानपूर्वक नमस्कार

कर उत्तम आसनपर बैठाय पाद्य अर्घसे पूजन भलीभांति करके कुशल प्रश्न पूछने लगे कि हे भगवन्! आप आतुरसे होरहे हो सो कृपा करके इस दुःखका कारण कहिये जिससे मेरा संदेह निवृत्तहो यह सुनि ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे शिवजी! आपसे क्या अविदितहै जिस निमित्त मैं क्लेशित होरहाहूं परन्तु पूछने पर कहना उचित है इस लिये हम कहते हैं श्रवण कीजिये इतना कह ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे शिवजी! महिषनाम दैत्य करके पीड़ित संपूर्ण देवता मेरी शरणमें आये उन्होंको दुःखी देख हम आपके समीप आयेहैं इसकी शान्तिका कोई उपाय आप विचार करें यह ब्रह्माजीकी वाणी सुनि शिवजीने श्रीविष्णुभगवान्का ध्यान किया उसी समय विष्णुभगवान् शिवजीके व ब्रह्माजीके मध्यहीमें प्रकटहो तीनों अन्तर्धानहो एकमूर्ति होगये उस मूर्तिकी दृष्टिसे एक कुमारी नील कमलके सदृश जिसका वर्ण अति उत्तम नीलवर्ण चिकने केश कमलके तुल्य नेत्र सुन्दर नासिका ललाट और मुख करके युक्त दिव्यरूपसे प्रकट भई इस प्रकार अद्भुतरूप धारण किये विचित्र कन्याको देखि ब्रह्मा, विष्णु, शिव ये तीनों कहनेलगे कि हे कुमारि! तुम कौनहो और किस विचारके लिये प्रकट भईहो इस भांति त्रिदेवोंका वचन सुनि विचित्रकुमारीने कहा कि हे देवताओ! आप तीनोंके संयोगसे मेरा जन्महै क्या आप अपना २ वर्ण मेरेमें नहीं देखते जो पूछतेहो कि कृष्ण शुक्ल पीत ये तीनों वर्ण मेरेमें हैं इतना सुनि ब्रह्मादि तीनों देव अतिप्रसन्नहो वर देते भये हे देवि! तेरा नाम त्रिकला है और तू सब कालमें विश्वकी रक्षाकर और भी तेरे गुणों करके सब सिद्धियोंके देनेहारे अनेक नाम होंगे और हे देवि! और भी एक कारण सुन कि जो तेरे देहके तीन वर्ण हैं इस लिये तू अपने शरीरको तीन भागकर इस भांति त्रिदेवोंका वचन सुन उसी समय वो कुमारी तीन स्वरूपसे प्रकट हुई एकका शुक्लवर्ण, दूसरी का

रक्तवर्ण और तीसरीका कृष्णवर्ण वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जो ब्राह्मीनाम देवी शुक्लवर्णाहै वो तो प्रजाकी उत्पत्ति करनेमें प्रवृत्त भई और जो रक्तवर्णा कुमारीहै सो शंख, चक्र, गदा, पद्म निज करकमलोंमें धारि विष्णु भगवान् के स्वरूपसे संसार की रक्षामें प्रवृत्तभई और जो नीलवर्णा त्रिशूल धारण किये विकराल दंष्ट्रा करके मुख भयंकर दिगम्बरा रौद्रीशक्ति सो जगत्के संहार करनेमें प्रवृत्त भई जो ब्रह्मांशसे कुमारी उत्पन्न भई सो ब्रह्माजीकी आज्ञासे श्वेत पर्वतमें जाय तप करनेलगी व वैष्णवी विष्णुजीकी आज्ञासे मन्दराचलमें जाय तप करनेलगी व शिवजी की आज्ञासे शैवीशक्ति नीलपर्वतमें जाय तप करनेलगी फिर ब्रह्माजीने निजशक्तिसे सृष्टि करनेका प्रारम्भ किया परन्तु सृष्टि वृद्धिको न प्राप्त भई तबतो ब्रह्माजी विचार करनेलगे कि किस कारण यह सृष्टि नहीं बढ़ती ऐसा विचारते २ यह निश्चय हुआ कि श्वेतपर्वतमें हमारी शक्ति तप कररहीहै यह विचारकर ब्रह्माजी उस कन्याके समीप जा पहुँचे और उसे तप करते देखि यह बोले कि हे देवि! किस निमित्त तू तप करती है जो तेरे मनमें वाञ्छा हो सो मांग हम प्रसन्नहैं देवेंगे तब तो यह ब्रह्माजीकी वाणी सुनि कन्या बोली कि हे भगवन्! एक स्थानमें मैं नहीं रहाचाहती इसलिये आपसे यही वर मांगती हूं कि मेरी गति सर्वत्र हो यह सृष्टि कुमारीका वचन सुनि ब्रह्माजी बोले कि जो तेरी वाञ्छाहै सोई होगी तू सर्वव्यापिनी होगी इतना सुनि सृष्टि कन्या तो ब्रह्माजीके शरीरमें लीन होगई उस समयसे ब्रह्माजी की रचीहुई सृष्टि उत्तरोत्तर वृद्धिको प्राप्त भई॥

नवासी का अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! अब श्रीदेवीजीका चरित्र और वर्णन करतेहैं सो सावधानहो श्रवण करो जिसका नाम त्रिशक्तिहै

तिन शक्तियोंमें ब्रह्मशक्ति शुक्लवर्णा एकाक्षर बीज करके युक्त वर्णमाला धारण किये वागीशी, सरस्वती, विद्येश्वरी, ज्ञाननिधि, देवी, विभावरी और मिताक्षरा आदि अनेक नामोंसे कही जाती है और पालनशक्ति रक्तवर्णा, रक्ताङ्ग, रागवस्त्र, भूषणों करके युक्त हरिप्रिया, कमला, विश्वविमोहिनी, इन्दिरा और लोकजननी इत्यादि नामों से प्रसिद्धहै और रुद्रशक्ति कृष्णवर्णा कृष्णवस्त्राङ्ग-राग संयुक्त सर्पके भूषण करके भूषित संहारकर्म में निरत काली, कात्यायनी, चामुण्डा, रौद्री और अम्बिका आदि नामों करके कही जातीहै हे धरणि! ये तीनों शक्तियां सदा ब्रह्मा विष्णु और शिव के आलम्बनसे सृष्टि पालन संहार करती हैं इस प्रभावको जानके ब्रह्माजी विष्णुजी और रुद्रजी ये तीनों शक्तियोंको एकमूर्ति मानके स्तुति करतेहैं (अथ स्तुतिः ॥ ॐजयस्व सत्यसंभूते ध्रुवे देवि क्षरे धरे। सर्वगे सर्वजननि सर्वभूतमहेश्वरि। सर्वज्ञा त्वं वरारोहे सर्वसिद्धिप्रदायिनि। त्वमोंकारस्थिता देवि वेदोत्पत्ति-स्त्वमेव च। देवानां दानवानां च यक्षगन्धर्वरक्षसाम्। पशूनां वी-रुधां वापि त्वमुत्पत्तिर्वरानने। विद्याविद्येश्वरी सिद्धा प्रसिद्धा त्वं सुरेश्वरि। सर्वज्ञा त्वं वरारोहे सर्वसिद्धिविधायिनी। सर्वगा गत-संदेहा सर्वशत्रुनिबर्हिणी। सर्वविद्येश्वरी देवि नमस्ते स्वस्तिका-रिणि। इति) ब्रह्माजी इस भांति सृष्टिशक्तिकी स्तुति कर यह बोले कि हे देवि! जो पुरुष इस स्तुतिको पढ़कर और स्वरूपा, विजया, भद्रा, सर्वशत्रुविनाशिनी इन चारों नामको स्मरणकर ऋतुस्नानको प्राप्त जो निज स्त्री है उसे प्राप्तहो ऋतुदान देवे तो बलवीर्य करके युक्त ज्ञानसे पूर्ण सृष्टिका बढ़ानेहारा पुत्र प्राप्तहो॥

नब्बे का अध्याय॥

वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! त्रिशक्तिमें वैष्णवी नाम जो मन्दराचलको तप करनेगई अब उसका वृत्तान्त वर्णन करतेहैं

सो श्रवण करो राजसीनाम शक्ति कुमारव्रत धारणकर बदरिका-
श्रममें इकल्ली तप करनेलगी तप करते २ बहुत काल व्यतीत
होनेसे उस शक्तिके मनमें क्षोभ उत्पन्नहुआ तिस क्षोभके होतेही
अनेक कुमारी उत्तम २ रूप धारणकर २ उत्पन्नभईं जिन्होंके
स्वरूप एकसे एक मनोहर अतिरमणीय व उत्तम २ वस्त्र भूषणों
करके भूषित कि जिन्होंकी शोभा देखि रम्भादिक भी लज्जित
होजावें इस प्रकार कुमारियोंके गणोंकी उत्पत्ति भई देखि प्रधान
देवीने निजमाया करके एक अतिरमणीय पुर प्रकट किया कि
जिसके बाहर चारोंओर स्वर्णकी शहरपनाह और रत्नों करके
जटित बड़े २ फाटक जिसमें लगरहे हैं और शहरके भीतर साफ़
और चौड़ी उत्तम बाज़ार कि जिसमें अनेक भांतिके पदार्थ शोभा
देरहे हैं और हौज़फ़व्वारे चारोंओरसे छुटरहेहैं और बड़े २
ऊंचे जाली झरोखेदार महल कि जिन्होंके स्फटिक नीलमणि
आदिके बड़े २ शृङ्गोंपर कपोत आदि अनेक पक्षी विराजरहेहैं
और भांति २ की वाटिका पुष्पों करके शोभित और जिनकी
सुगन्धको पाय स्वर्गसुख को त्याग मधुकर गुञ्जार कररहेहैं और
कहीं मूंगेकी सीढ़ियों करके युक्त और नीलोत्पल, कल्हार, शत-
पत्र, सहस्रपत्र आदि कमलकी अनेक जातियों करके भूषित
और चक्रवाक,कलहंस, हंस आदि अनेक भांतिके पक्षियों करके
शोभित मीन कच्छप आदि जलजन्तुओंसे संकुल वापी विराज-
मान होरही हैं और जिस नगरमें छवोंऋतु मानो रूप धारण
किये विराजरही हैं और जिस नगरके मध्यमें उत्तमोत्तम राज-
महल बनरहे हैं ऐसा नगर प्रधानदेवीने निजमायासे प्रकटकर
और प्रधान २ देवियोंके गणोंको निवास करनेके लिये आज्ञा
दी कि हे कुमारियो! यह नगर तुम्हारे लिये उत्पन्न भयाहै इस
में यथोचित सुखपूर्वक निवासकरो वाराहजी कहतेहैं हे धरणि!
तब तो देवियोंके गण उन असंख्य स्थानोंमें आय निवास करने

लगे अब उन मुख्य २ गणोंका नाम कथन करते हैं विद्युत्प्रभा, चन्द्रकान्ति, सूर्यकान्ति, गम्भीरा, चारुकेशी, सुजाता, मुञ्जकेशिनी, घृताची, उर्वशी, चारुकन्या, शशिनी, शीलमण्डिता, विशालाक्षी, धन्या, पीनपयोधरा, चन्द्रप्रभा, गिरिसुता, सूर्यप्रभा, अमृता, स्वयंप्रभा, चारुमुखी, शिवदूती, विभावरी, जया, विजया, जयन्ती, अपराजिता और सुरोत्तमा ये प्रधान देवियोंके गण निज २ कुमारीगणोंके साथ प्रधानदेवी की सेवा करनेलगे हे धरणि! इन गणों करके सेवित प्रधानदेवी राजसिंहासनमें विराजमान होरहीहै और प्रधानदेवीकी सेवामें चारों ओर कुमारियोंके गण जिन्होंके स्वरूप और वस्त्र भूषण मन हरनेहारे सो निज २ हाथोंमें कोई चमर कोई व्यजन कोई छत्र और किसीके हाथमें दर्पण किसीके जल कोई हाथ बांध स्तुति कररहीहै कोई प्रधानदेवीका ध्यानही कररहीहै कि इसी समयमें नारदमुनि वहां आये प्रधानदेवीने नारदजीको देखि आदरपूर्वक विद्युत्प्रभानाम सखीको आसन देनेकी आज्ञादी और पूजा कीभी आज्ञादी सो आज्ञा पाय विद्युत्प्रभाने रत्नसिंहासन लाय नम्रतासे नारदजीको दे पाद्य अर्घ्य आचमन आदि से प्रीतिपूर्वक पूजनकर भोजन पान आदि अनेक पदार्थोंसे सन्तुष्ट कर सावधान देखि प्रसन्नहो प्रधानदेवी पूछनेलगी कि हे नारदजी! तुम्हारे आगमनसे हम बहुत प्रसन्न भईं अब आप यह वर्णन करें कि कहांसे आये और किसलिये सो कहिये इस भांति प्रधान देवीका वचन सुनि नारदजी कहनेलगे कि हे देवि! हम आज आपके दर्शन करके और इस नगरकी शोभा देखि और आपके गणोंकी सुशीलता और सुन्दरता देखि धन्य भये और जो आप हमारा आगमन पूछतीहो तौ प्रथम ब्रह्मलोकसे चलके इन्द्रके समीप स्वर्गमें पहुँचे वहांका वृत्तान्त देखि आपके दर्शन निमित्त यहां आये यहां आय आपका दर्शनकर कृतार्थ भये इतना कहि

श्रीभगवतीजीसे बिदाहो मन में उस पुरकी और कुमारियों की सुशीलता और सुन्दरता विचार करते २ महिषासुर दैत्यकी पुरी में जाय प्राप्त भये तब तो नारदजीको आये देखि महिषासुर आसनसे उठ प्रणामकर आसन पाद्य अर्घ्य से पूजनकर बड़े हर्ष से बोला कि हे ऋषीश्वर! आपने बड़ी कृपा की जो आपने निजदर्शनसे मुझतुल्य संसारासक्तोंको कृतार्थ किया और आप यह वर्णन करें कि इस समय कहांसे आगमन हुआ इस प्रकार महिषासुरकी विनयवाणी सुनि नारदजी हँसकर कहनेलगे कि हे दैत्येन्द्र! हमारा यह वृत्तान्तहै कि पिताजीके समीपसे स्वर्ग में गये वहां इन्द्रजीसे मिलके कैलासको गये वहां शिवजीके दर्शनकर मन्दराचलमें पहुँचे वहां क्या देखतेहैं कि एक नगर सब रत्नोंसे व अनेक पदार्थोंसे परिपूर्ण और उत्तमोत्तम कुमारियों करके भूषितहै हे दैत्येन्द्र! उन्हीं कुमारियोंके मध्य एक अपूर्व रूप और अवस्था करके सम्पन्न निजप्रभासे विश्वको प्रकाश करती कुमारियों करके सेवित निर्भय विराजमान होरही है ऐसी कुमारी सर्वलक्षणों करके युक्त व रूपवती देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, विद्याधर, नाग आदि में तो है नहीं और मनुष्यकी तो कथाही कौनहै हे दैत्यराज! कहांतक वर्णन करें दशों दिशाओं में व तीनों लोकोंमें आजतक कोई स्त्रीनाम हमारे दृष्टिमें नहीं आई अब किस प्रकार आसक्तीहै इस लिये हम आपके पास आयेहैं सब रत्नोंके स्वामी आपहैं इस लिये वह स्त्रीरत्नभी आपहीके योग्यहै परन्तु हम यह जानते हैं कि जिसमें चराचर जीतनेकी सामर्थ्य होगी वही उसका पति होगा इसी निमित्त किसी ने उसकी तरफ़ आजतक दृष्टि नहीं की इतना कह थोड़ी देर वहां रहि दैत्येन्द्रसे बिदाहो नारदजी अन्तर्धान होगये॥

इक्यानबे का अध्याय ॥

श्रीवाराहजी भगवान् कहतेहैं हे धरणि ! जब महिषासुर के समीपसे नारदजी चलेगये तबतो सब वृत्तान्त सुनि महिषासुर चित्तमें व्याकुलहो कामसे पीड़ित मनमें विचारनेलगा कि नारदजीने जो कन्याका स्वरूप वर्णन किया सो किसभांति और कब मिले इसभांति शोच विचारकर निजमन्त्रियोंको बुलाया सो आठों मन्त्री जिनका नाम प्रघस, विघस, शंकुकर्ण, विभावसु, विद्युन्माली, सुमाली, पर्जन्य और क्रूर ये आठों मन्त्री बड़े पण्डित व विचारवान् शूरवीर शत्रुओंके संहार करनेमें चतुर आय हाथजोड़ माथ नवाय विनयपूर्वक प्रणामकर महिषासुरके समीप आज्ञासे निज २ स्थानमें बैठ अतिनम्रतासे पूछनेलगे कि भोःस्वामिन् ! जिस लिये हमसबोंको आपने स्मरण किया सो हाज़िरहैं आज्ञा दीजिये इसभांति मन्त्रियोंका वचन सुनि महिषासुरने नारदजीके आगमनसे लेकर सारा वृत्तान्त और कुमारियोंके मिलनेका विचार और देवताओंके जय करनेका सब कह सुनाया और यह भी कहनेलगा कि हे मन्त्रियो ! उस कुमारीका रूप गुण सुनके हम क्षण २ में विकल होतेहैं और नारदजीने येभी कहाहै कि विना देवताओंको जीते वह नहीं मिलेगी सो निज २ बुद्धिके अनुसार उसके लाभका विचार करो और देवताओंके पराजय का भी विचार करो इतना महिषासुरका वचन सुनि प्रघसनाम मन्त्री कहनेलगा कि हे स्वामिन् ! जिस कुमारीको नारदजीने जैसा वर्णन कियाहै सो वैसीहीहै और उसको भली भांति हम भी जानतेहैं सो आप श्रवण करें महाराज ! वह कुमारी वैष्णवी शक्तिहै और देवी तपस्विनीहै और पतिकी इच्छा नहीं रखती निज सेवाके लिये कोटियों कुमारियोंके समूह निज सामर्थ्यसे उत्पन्नकर व मायापुरभी उनके और निजरहनेके लिये निर्माण

कर उसी पुरमें निवास करतीहै सो आप इस विचारको त्यागदेवें वह अगम्याहै जैसे गुरूकी पत्नी राजाकी पत्नी मन्त्रीकी पत्नी अगम्या होतीहै ऐसेही उसको भी जानिये इन अगम्याओंके गमन करनेमें अथवा कुदृष्टि देखनेमें बहुत अनर्थ होताहै और प्राणकाभी संदेह होताहै इतना कह प्रघसनाम मन्त्री चुप होगया तो विघसमन्त्री कहनेलगा कि इन्होंने तो ठीक कहा परन्तु जो हम कहतेहैं सोभी आप श्रवण करें हे स्वामिन्! विजयी पुरुषों को सब पदार्थ सुलभ होतेहैं और विजय बलसे और बुद्धिसे होती है इस लिये साहस तो करना उचित नहींहै उस कन्याके समीप कोई बुद्धिमान् दूत भेजिये जो निजचातुर्यतासे कुमारीको अथवा कोई उसका स्वामी होवे उसको साम, दाम, दण्ड, भेद आदि नीतिके साथ वश्य करके कार्य साधन करे प्रथम तो सामहीसे कार्य होगा यदि न हो तो और प्रकारका उपाय किया जायगा जो कोई उपाय न बनेगा तो सन्नद्धहो दण्डदे हरण करके ल्यावेंगे सो कुमारीके समीप तो दूत भेजिये और आप इन्द्रादि देवताओं के विजय हेतु सेनाको आज्ञा दीजिये इसभांति विघसकी वाणी सुन संपूर्ण मन्त्रियोंने सहित राजाके आदरपूर्वक स्वीकारकर महिषासुर कहनेलगा कि विघसने बहुत उत्तम सम्मति दीहै इस लिये पण्डित और बली देश कालज्ञ दूतको भेज वृत्तान्त जान पश्चात् जो उचित होगा सो कियाजायगा इस भांति महिषासुर का वचन सुनि प्रसन्नहो उत्तम गुणों करके युक्त बहुत चतुर अनेक मायाविशारद विद्युत्प्रभनाम दूतको बुलाय आज्ञादे कुमारी के समीप भेजा और विघसनाम मन्त्रीने सेनापतिको आज्ञादी कि निज २ सेनाओंको युद्धके लिये तय्यारकरो और निज २ अस्त्रोंको ले युद्धके अर्थ निकलो यह सुनि विरूपाक्षनाम सेनापति और मेघवर्णनाम सेनापति निज २ अधिकारियोंको आज्ञा दी इस आज्ञाको पाय हाथी, घोड़े, रथ, पैदर युत चतुरङ्गिणी

सेनाको तय्यारकर देवताओंकी विजयके लिये विजयका नगारा बजाय यात्रा की। इस भांति दैत्योंकी सेना गर्जतीहुई जिसमें एक २ वीर इन्द्रके समान पराक्रमी और सबोंके आगे बड़े मद-मत्त गजपर आरूढ़ महिषासुर जाय स्वर्गपुरको चारों तरफ़से घेर लिया तब तो महिषासुर असंख्य सेना लिये युद्ध करनेको प्राप्त देवताओंने देख बड़ी शीघ्रतासे कवच धारणकर निज २ अस्त्रों को ले इन्द्रजी महाराजको आगेकर युद्धके लिये दैत्योंको आगे जाय घेरा और युद्ध करनेलगे इसप्रकार देवताओंको युद्ध करते देखि अञ्जन, नील, कुक्षि, मेघवर्ण, बलाहक, उदाराक्ष, ललाटाक्ष, सुभीम और स्वर्भानु ये आठो दैत्य बड़े वीर जाय वसुओंके साथ युद्ध करके बड़े बलसे आठों वसुओंको संग्रामसे भगादिया हे धरणि! इसी भांति बारह दैत्योंने बारहों सूर्योंको पराजित किया जिन्होंके नाम भीम, ध्वांक्ष, स्तब्धकर्शा, शंकुकर्ण, वज्र-कील, ज्योतिर्वीर्य, विद्युन्माली, रक्ताक्ष, भीमदंष्ट्र, विद्युज्जिह्व, अतिकाय और महाकाय इन्हों ने सूर्यको जीता और ग्यारह महाप्रबल दैत्य ग्यारहो रुद्रोंको संग्रामसे विमुख किया जिन्होंका नाम बाल, कृतान्त, रक्ताक्ष, प्रहरण, मित्रहा, अनिल, यज्ञहा, ब्रह्महा, गोघ्न, स्त्रीघ्न और संवर्तक इन वीरोंने एकादश रुद्रोंको भगाया इसी भांति जो जो दैत्य जिस २ देवताके सम्मुख युद्ध करनेको गया उसीसे देवता नल उसके व संग्रामभूमि छोड़ २ के भगे इस प्रकार देवताओंका पराजयकर दैत्योंकी सेना जय पाय बड़े हर्षसे गर्जने लगी वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! यद्यपि रुद्र, आदित्य और वसु ये अपराजितहैं तथापि ब्रह्माजीके वरदानके प्रभावसे महिषासुरकी सेना तो जीतगई और देव-गण सब पराजितहो सहित देवराजके जाय ब्रह्मलोकमें ब्रह्माजी की शरणमें पहुँचे॥

बान्नबे का अध्याय ॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! महिषासुरके जयका वृत्तान्त तो हमने वर्णन किया अब और वृत्तान्त सुनो। महिषासुरका दूत विद्युत्प्रभनाम जो पहले वर्णन कर आये हैं सो जाय मायापुरमें श्रीभगवतीजीके समीप पहुँच और हाथजोड़ प्रणामकर बहुत नम्रतासे कहनेलगा कि हे देवि ! सत्ययुगमें ब्रह्माजीके पुत्र व सारस्वत मुनिका मित्र सुपार्श्व नाम ऋषीश्वर हुआ तिसका पुत्र सिन्धुद्वीप और सिन्धुद्वीप का पुत्र अश्वरस सो अश्वरस ऋषि माहिष्मती नाम पुरीके समीप रेवानदीके तटसमीप वनमें कुटी बनाय निराहारहो उग्र तप करनेका प्रारम्भ किया इसी प्रकार तप करते २ मुनिको बहुत काल बीते किसी समय विप्रचित्तिनामक असुरकी कुमारी रूपयौवनसम्पन्ना अनेक कुमारियोंको साथ लिये क्रीड़ा करती २ अश्वरस ऋषिके स्थानमें आ पहुँची तो इधर उधर सखियोंके साथ माहिष्मती नाम कन्या वृक्षोंकी शोभाको देखती हुई व लताओंकी शोभा अनेक भांतिके पक्षियोंकी शोभा वनके पशुओंकी शोभा देखती २ मुनिजी महाराजके पास आ पहुँची वहां आतेही यह विचार उत्पन्न हुआ कि यह मुनि झूठी समाधि लगा करके बैठाहै इसलिये इसको भयंकर रूप धार डरावना चाहिये यह विचार माहिषीका रूप बहुत बड़ा पर्वतके तुल्य धारणकर व बड़े २ शृङ्गों करके भयंकर व अनेक महिषियों करके सहित मुनिजीके पास जा पहुँची उसे देखि व उसके साथ बहुतसी भैंसियोंको देखि ज्ञानदृष्टिसे दैत्यकन्याका उत्पात जान कोपकर रक्तनेत्रहो मुनिजी कहनेलगे कि हे दुष्टे! तू निरपराध हमको जो भैंसका रूप धार डरपातीहै इसलिये तेरा यही रूप सदा बनारहे यह शाप दे चुप होगये इस भांति दारुण व कठिन शाप सुनि अतिपीड़ितहो घबड़ाय त्राहि २

शब्द करतीहुई जाय शाप मोक्षके लिये अश्वरसमुनिजीके चरणों में गिरपड़ी तब तो सहित सखियोंके माहिष्मतीका दीन वचन सुनि व शरणमें पड़ी देखि दया उत्पन्नभई और मुनिजी शान्त-चित्तहो यह कहनेलगे कि जो तैंने दुष्टता की उसका फल मिला अब इसी स्वरूपमें कुछ काल रहके एक पुत्र उत्पन्न करेगी तो इस दुर्दशासे मुक्त होगी यह मेरा वचन मिथ्या नहीं होगा यह सुनि ऋषिजीको प्रणाम कर नर्मदा तटमें जाय वनमें इधर उ-धर निज सखियोंके साथ तृण खाती घूमनेलगी किसी समय वड़े तपस्वी सिन्धुद्वीपनाम ऋषि नित्य नियम स्नान करनेको नर्मदा तटमें आये वहां सुमालीनाम दैत्यकी कन्या अतिरूपवती और युवावस्थामें प्राप्त नग्न अकेली नर्मदामें स्नान कररहीथी उसे देख सिन्धुद्वीपजी महाराज कामवशहो चित्तको रोक न सके इसलिये ऋषिजीका वीर्य नर्मदाके तट शिलाके ऊपर गिरगया और ऋषिजी स्नान आदि कर्मोंसे निवृत्तहो निज कुटीको चले गये भावीवश हे धरणि! वह माहिष्मती नाम दैत्यकन्या भैंसिका रूप धारण किये वहां आय पहुँची जिस स्थानमें मुनिका वीर्य पड़ाथा उसका विलक्षण सुगन्ध पाय जलके साथ पीगई उन मुनिका वीर्य पीतेही माहिष्मती तो गर्भवतीहो व अपना समय पूराकर वड़ा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न किया और आप मुनिके शाप से मुक्तहो निज लोकको गई और महिषासुर वहांहीं रेवातटमें तप करनेलगा उसके तपसे ब्रह्माजी प्रसन्नहो वर देतेभये कि हे महिष! तू सुर और असुरों करके अजित होगा और तेरा अखण्ड राज्य होगा इस प्रकार महिषासुर असुरोंका महाराजहै वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! महिषासुरका दूत विद्युत्प्रभ आय देवीजीसे यह वचन सुनाय कहनेलगा कि हे देवि! सो दैत्येन्द्र महिषासुर ब्रह्मकुलोत्पन्न नारदजीसे तुम्हारा रूप और गुण सुन के तुमको निज चित्तरूप रत्नदे तुम्हारे आधीन सब भांति होरहा

है इसलिये उत्तम जानि निज अनुरागियों पर कृपायुक्त हो उन का मनोरथ सिद्ध करना उचितहै यह वचन विद्युत्प्रभका सुन देवी मन्द हास करके निज सखियोंकी ओर देख चुप होरही तब तो श्रीदेवीजीकी जयानाम सेवकी निज स्वामिनीके हृदयका भाव जान विद्युत्प्रभसे कहनेलगी कि हे दूत! जो तुमने कहा सो भली भांति मालूम हुआ परन्तु यह विचारना चाहिये जिसका संकल्प आजन्मकुमार व्रतकाहो सो किस प्रकार विवाह करेगी इसलिये हे दूत! जिस भांति तुमने शान्तिरससे निज प्रयोजन कथन किया ऐसेही हमभी कहती हैं कि यहां हमारी स्वामिनीकी सेवकी कोटिहूं कुमारियां हैं उनमें किसीका मिलना तो दुर्लभहै व जिसकी वाञ्छासे तुम आयेहो उसकी कौन कथा इसलिये जो तुम अपना कुशल चाहतेहो तो शीघ्र यहांसे चले जावो नहीं तो बड़े अनर्थमें पड़ोगे इतना कह देवीजीकी सखी जया तो चुप होगई और दूत इस भांति रूखी वाणी सुनके चुपचाप चलदिया वाराह जी कहतेहैं हे धरणि! दूतके जातेही आकाशमार्गहो नारदजी आय मायापुरमें प्राप्तहो श्रीदेवीजीको प्रणामकर सत्कारपूर्वक आसन पर बैठ कहनेलगे कि हे देवि! आपके समीप देवताओं ने महिषासुरसे पीड़ित निज दुःखके निवेदन करनेको हमको भेजाहै और येभी मालूमहो कि महिषासुरने देवताओंको जीत सबोंके अधिकार पर निज अधिकारियोंको स्थापित कर थोड़े कालमें आपके समीप भी पहुँचने चाहताहै सो हे देवि! उस दुष्टको मार व देवताओंका क्लेश दूर कीजिये इतना कह श्रीदेवी जीसे बिदाहो नारदजी तो इच्छागति चलेजाते भये नारदजी के जाने अनन्तर देवीजीने निजकन्योंको आज्ञादी कि तुम सब संग्रामकी तय्यारी कर निज २ अस्त्रोंको ले सावधान होजाव इतना प्रधान देवीका वचन सुनतेही सब कुमारियों ने निज २ सौम्य स्वभाव व मनोहररूप छोड़ नाना अस्त्र धारण

कर अतिभयंकर रूप धार संग्राम करनेको जब तय्यार भई कि उसी समय गर्जताहुआ अगणितसेना संग लिये महिषासुर भी आ पहुँचा पहुँचतेही देवीगणों के साथ महिषासुरकी सेनाका संग्राम होनेलगा वाराहजी कहते हैं हे धरणि! उस महिषासुर की असंख्य सेना को देवीजीके गणोंने क्षणमात्रही में विध्वंस करदिया जिस प्रकार रुईके पर्वतमें अग्नि पड़े व वायुभी प्रचण्ड हो क्षणमें भस्म करदेवे इस भांति जब संपूर्ण दैत्यसेना देवियोंने विध्वंस किया जो कुछ दैत्य थोड़े से बचे सो जा महिषासुरके समीप सारा वृत्तान्त निवेदन किया इस भांति निज बलका नाश सुन महिषासुर बड़े क्रोध से विकलहो कहनेलगा कि हे असुरो! यह क्या आश्चर्य सुनाते हो और हमारे जीवतेही क्यों हाय २ कर भगेजातेहो इसभांति महिषासुरका वचन सुनि यज्ञहन नाम दैत्य जिसका स्वरूप हाथीकासा सो बोला कि हे महाराज! आप सावधान होवो गाफ़िल क्यों होरहेहो कुमारियोंके गणोंने आप की संपूर्ण सेना विध्वंस करदी ऐसी यज्ञहन की वाणी सुनतेही महिषासुर अतिक्रोधित हो बड़ी गदा हाथ में ले कुमारियोंके वध करने को बड़े वेगसे दौड़ा जायके जहां श्रीदेवी निवास कर रही थी वहां पहुँचा वाराहजी कहते हैं हे धरणि! श्रीदेवीजी ने महिष को पहुँचा देख अठारह भुजा धारणकर निज भुजाओं में नानाभांति के अस्त्रोंको ले और सिंहके ऊपर बैठ शिवजीका स्मरण किया तब तो देवीजीके स्मरण करतेही शिवजी आय प्राप्त भये उस समय शिवजीको प्रणामकर देवी कहनेलगी कि हे शिवजी! आप आज्ञा देवें तो इस दुष्टका संहारकर देवताओं को संकटसे छोड़ावें इतना कह शिवजीकी आज्ञाले हंते २ क्षण-मात्रहीमें संपूर्ण दैत्योंका संहारकर जबतक महिषको मारा चाहें तबतक तो वहांसे महिष भागकर अन्तर्धान होगया तब तो देवी जी इधर उधर देखनेलगीं कि थोड़ीसी देरमें फिर महिषासुर

आय युद्ध करनेलगा इसी प्रकार कईबार युद्धसे भगि भागि के गाफ़िलीसे बारम्बार युद्ध करता रहा इस भांति के युद्धमें देवीजी को दशहज़ार वर्ष व्यतीत हुये हे धरणि ! सारे ब्रह्माण्डमें घूमि २ भजि २ करके युद्ध किया करता तबतो किसी समय श्रीदेवीजीने घेरके शतश्रृंग नाम पर्वतमें अति क्रोध करके सिंहसे कूद महिष पर सवारहो त्रिशूलसे महिषके कण्ठको छेद व खड्गसे शिरको दो खण्ड कर दिया इस प्रकार श्रीभगवती के अस्त्रसे पवित्रहो निज प्राणको त्याग महिष तो स्वर्ग को गया व श्रीभगवतीजी तो उसी शतश्रृंग पर्वत में बैठ श्रम निवृत्त करनेलगीं तब तो ब्रह्मादिक देवता श्रीभगवतीजीको सावधान देखि अति संतुष्ट हो स्तुति करनेलगे (देवा ऊचुः ॥ नमो देवि महाभागे गम्भीरे भीमदर्शने। जयस्थे स्थितिसिद्धान्ते त्रिनेत्रे विश्वतोमुखि। विद्याविद्ये जये जाप्ये महिषासुरमर्दिनि । सर्वगे सर्वदेवेशि विश्वरूपिणि वैष्णवि । वीतशोके ध्रुवे देवि पद्मपत्रशुभेक्षणे । शुद्धसत्त्वव्रतस्थे च चण्डरूपे विभावरि। ऋद्धिसिद्धिप्रदे देवि विद्येऽविद्येऽमृते शिवे । शांकरी वैष्णवी ब्राह्मि सर्वदेवनमस्कृते । घण्टाहस्ते त्रिशूलाढ्ये महामहिषमर्दिनि । उग्ररूपे विरूपाक्षि महामायेऽमृतस्रवे । सर्वसत्त्वहिते देवि सर्वसत्त्वमये ध्रुवे। विद्यापुराणशिल्पानां जननी भूतधारिणि । सर्ववेदरहस्यानां सर्वसत्त्ववतां शुभे । त्वमेव शरणं देवि विद्याविद्याश्रयेऽम्बिके । विरूपाक्षि सुरूपाक्षि शान्तिशोभितविग्रहे । नमोऽस्तु ते महादेवि नमस्ते परमेश्वरि । शरणं त्वां प्रपद्यन्ते ये देवि परमेश्वरि। न तेषां जायते किंचिदशुभं रणसंकटे। यश्च व्याघ्रभये घोरे चौरराजभये तथा । स्तवमेनं सदा देवि पठिष्यति यतात्मवान् । निगडस्थोऽपि यो देवि त्वां स्मरिष्यति मानवः । सोपि बन्धैर्विमुक्तस्सन् सुखी भोगी च जायते। इति) वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस भांति देवताओंकी स्तुति सुनि बहुत प्रसन्नहो श्रीभगवती बोलीं कि हे देवताओ !

इस स्तुतिसे हम अत्यन्त प्रसन्न भईं अब जो वाञ्छाहो सो वर मांगो इस भांति देवताओंने श्रीभगवतीजीका वचन सुनि हाथ जोड़ नम्रहो कहनेलगे कि हे मातः! जो मनुष्य इस मेरी की स्तुति से आपकी स्तुति करें उनके सब कार्य सिद्धहों यही वर दीजिये इस प्रकार देवताओंकी प्रार्थना सुनि श्रीभगवती "तथास्तु" कहके उसी पर्वतमें निवासकरि देवताओंको निर्भय वरदान दे निज २ स्थानके जानेको आज्ञादी देवगणोंने श्रीमहामाया की आज्ञा पाय माथ नवाय प्रणामकर निज २ स्थानोंमें जाय सुख-पूर्वक निर्भय राज्य करनेलगे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस आदिशक्ति महामायाके चरित्रको जो स्त्री व पुरुष प्रीतिसे श्रवण करे व श्रवण करावे वे दोनों अनेक क्लेशों से मुक्त हो अनेक भांतिका संसारसुख भोग अन्तमें उत्तम विमानमें बैठ अप्सराओं के गण करके सेवाको प्राप्त स्वर्ग में जाय अनेक कल्प देवताओं के साथ विहार करें॥

तिरान्नबे का अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस पालन शक्तिका चरित्र हमने वर्णन किया अब संहारशक्तिका चरित्र सावधान हो श्रवण करो जब शिवजीकी आज्ञासे नील पर्वतमें रौद्रीशक्ति तप करने लगी तब पञ्चाग्निका सेवन करती घोरतप बहुत काल किया हे धरणि! उसी समयमें रुरुनाम दैत्य बड़ा उग्र तप करके ब्रह्माजी को प्रसन्नकर सर्वविजयी वर पाय समुद्रमें पुर बनाय अनेक कोटि दैत्योंके साथ सुखपूर्वक निवास करनेलगा जैसे पहले समय में नमुचि नाम दैत्य सब संपत्ति करके युक्त समुद्रके भीतर रहता था जिसका वध इन्द्रके हाथसे हुआ वैसेही यहभी रहनेलगा सो रुरु समुद्रके मध्य निजपुरमें दैत्यों के साथ संमति करके अनेक कोटि चतुरंगिणी सेना ले देवताओं के विजय के लिये निकला इस

भांति दैत्योंकी सेना जो अनेकों वाहनों पर स्थित और नानाविध अस्त्रोंको लिये गर्जतेहुये बड़े २ वीर जयका नगारा बजाते व आगे २ सबके रुरुनाम दानव सुवर्णके उत्तम रथपर स्थित जाय स्वर्गको चारोंओरसे घेरलिया तब तो देवताओंने निज नगरी घिरी हुई देखि अतिशीघ्र निज २ अस्त्रोंको धारणकर निज २ वाहनोंमें स्थितहो आय युद्ध करनेलगे वहां इन्द्रका और रुरु का संग्राम होनेलगा और परस्पर मुशल, मुद्गर, बाण, दण्ड, परिघ, निस्त्रिंश आदि अनेक अस्त्रोंसे देवता और दैत्य क्रोध कर लड़ २ के कटनेलगे इस संकुलयुद्धमें दैत्योंके अस्त्रप्रहारसे देवता व्याकुलहो घबड़ाय संग्रामसे विमुख होकर इधर उधर को भागचले और असुरोंने देवताओंका पीछाकर मारनेलगे इसी भांति भागते २ देवता सब जाय नीलपर्वतमें जहां देवीजी तप कररहीहैं वहां पहुँचि त्राहि २ शब्द करके बड़े ऊँचे स्वर से पुकारनेलगे इसप्रकार देवताओंकी आतुर पीड़ायुक्त दीन वाणी सुनि रौद्री संहारकारिणी शक्ति जिसका नाम कालरात्री सो ऊंचे स्वरसे बोली कि, हे देवताओ ! न डरो हम तुम्हारी रक्षा करेंगी इतना कह व देवताओंको हाय २ करते देखि कहने लगी कि हे देवताओ ! किसकारण निज २ स्थान व अधिकार छोड़ व्याकुल भय विह्वल यहां आयेहो निज भयका कारण कथन करो यह श्रीदेवीका वचन सुनि सब देवता कहनेलगे कि हे मातः ! यह रुरुनाम दानव बड़ा वीर हमारे पीछे आताहै इसकी भयसे आप हमारी रक्षा करें इतना देवताओंका वचन सुनि व पीड़ित देखि देवताओंकी ओर दृष्टिकरके बड़े अट्टहासकरके हँसने लगी हँसतेही कालरात्रीके मुखारविन्दसे अनेक कोटि देवियोंके गण महाविकराल मुण्डमाल धारण किये और निज २ हाथोंमें पाश, अंकुश, खड्ग, शूल, गदा, धनुष, बाण, मुद्गर लिये व अतिभयंकर जिन्होंका रूप कृष्णवर्ण सो सब कालरात्रीकी

आज्ञासे देवताओंको साथ ले दानवोंके साथ युद्ध करनेलगीं व थोड़ेही कालमें संपूर्ण दानवोंकी अनन्तसेना कालरात्रीजीके गणोंने ऐसा विध्वंस किया कि एकभी न बाक़ी रहे केवल प्रधान रुरु अकेलही संग्राममें रहगया सो तो ऐसी माया उत्पन्न किया कि जिसकी मायासे संपूर्ण देवता मोहितहो निद्रासे विकलहो हो जहां तहां गिरगये यह देखि श्रीकालरात्रीजीने त्रिशूलसे ऐसा प्रहार किया कि शिर कटके चर्म जुदे औ मुण्ड जुदे होगये उसके चर्मको औ मुण्डको भगवतीने हाथमें लिया इसीसे देवताओंने कालरात्रीको चर्ममुण्डानामसे कथन किया वाराहजी कहते हैं हे धरणि! अब दैत्योंकी असंख्य सेना संहारकर देवियोंके गण आय प्रार्थनापूर्वक कालरात्रीसे कहनेलगे कि हे मातः! हम सब को क्षुधा बहुत बाधा कररहीहै इसलिये हमारे निमित्त कुछ भोजन बताइये जिसमें हम तृप्तहों इस भांति देवियोंका वचन सुनि कालरात्रीजीने बहुत विचार किया परन्तु किसी पदार्थका निश्चय न हुआ कि जिसके भोजनसे देवियां तृप्तहों तब तो शिवजीका ध्यान किया ध्यान करतेही कालरात्रीजीके समीप शिव जी आय प्रकटभये और कहनेलगे कि हे देवि! किस निमित्त हमारा स्मरण किया सो कहो उस कार्यको हम करें यह शिवजी का वचन सुनि कालरात्रीजीने कहा कि हे प्रभो! ये देवियोंके गण क्षुधा करके व्याकुल हमसे भोजन मांगती हैं सो शीघ्र इन के लिये आप भोजन देवें नहीं तो अतिबली हैं और संग्रामके परिश्रमसे थकित हैं सब मिलके हमको खाजायँगी यह कालरात्रीका वचन सुनि रुद्रजी कहनेलगे कि हे देवि! इन्होंके लिये हमने भोजनका विचार कियाहै सो सुनिये जो गर्भवती स्त्री दूसरी स्त्रीका पहिनाहुआ वस्त्र धारण करे अथवा और किसी दूसरे पुरुषको स्पर्श करे उसके गर्भको ये भक्षणकरें और बालकोंके पीड़ा में जो बलि दीजातीहै उसको ग्रहणकर शत वर्षपर्यन्त तृप्त रहें

और रक्षाहीन सूतीघरमें जाय निवासकर बालकोंको पीड़ा दें वहां जो कुछ पूजा बलि मिले उससे तृप्त रहें और शून्यगृहोंमें, क्षेत्रोंमें, तड़ागोंमें, वनोंमें, जीर्ण वृक्षोंमें, व्यभिचारिणी स्त्रियोंमें और जो स्त्रियां पति पुत्र वर्तमान होनेसेभी दिन राति रोदन करें वहां और इन उक्त स्थानोंमें निवास करें और जो इकल्ला इन स्थानोंमें आवे बालक स्त्री उनको पीड़ा दे पूजा बलि ले तृप्तरहें इसप्रकारकी आज्ञा देवियोंको दे शिवजी रुरुदैत्यको मरा हुआ देखि कालरात्रीकी स्तुति करनेलगे और देवियोंने शिवजीकी आज्ञा पाय उक्त स्थानोंमें निवास करने लगीं (अथ स्तुतिः ॥ जयस्व देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणि । जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोस्तु ते। विश्वमूर्ते शिवे शुद्धे विरूपाक्षि त्रिलोचने। भीमरूपे शिवे विद्ये महामाये महोदये । महाजवे जये जृम्भे भीमाक्षि क्षुभिते क्षये । महामारि विचित्राङ्गि गेयनृत्यप्रियंकरि । विकराले महाकालि कालिके पापहारिणि । पाशहस्ते दण्डहस्ते भीमरूपे भयानके । चामुण्डे ज्वलमानास्ये तीक्ष्णदंष्ट्रे महाबले। शतयानस्थिते देवि प्रेतासनगते शिवे । भीमाक्षि भीषणे देवि सर्वभूतभयंकरि। कराले विकराले च महाकाले करालिनि। कालीकरालविक्रान्ते कालरात्रि नमोऽस्तु ते। इति) वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस भांति उत्तम पदों करके युक्त शिवजीकी स्तुति श्रवणकर अतिप्रसन्नहो कालरात्री कहनेलगी कि हे शिवजी ! हम तुम्हारी स्तुतिसे बहुत प्रसन्नभई जो वाञ्छाहो सो वर मांगो यह सुनि श्रीभगवतीजीसे हाथ जोड़ शिवजी कहनेलगे कि हे देवि ! जो हमने आपकी स्तुति कियाहै इस स्तोत्रसे जो तुम्हारी स्तुति करें उनसे प्रसन्नहो अनेक दुःखोंको दूरकर उनका अभीष्ट सिद्ध करो व हे भगवति ! जो इस स्तोत्रको तीन काल नियम करके पाठ करें उनको पुत्र पौत्र धन धान्य पशु मित्र करके युक्त करो औ जो इस स्तोत्रका श्रवण करें वे सब पापोंसे मुक्तहो आनन्द

पदको प्राप्तहो इस प्रकार शिवजीकी प्रार्थना सुनि श्रीभगवती 'तथास्तु' कह अन्तर्धान होगई और शिवजी कैलासको पधारे और इन्द्रादिक देवता सब रुरुकी भयसे मुक्तहो जाय निज २ स्थानमें निष्कण्टक राज्य करनेलगे वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इस त्रिशक्ति माहात्म्यको जो भक्तिपूर्वक कीर्तन करते हैं वा श्रवण करतेहैं वे सब पापोंसे मुक्तहो मुक्तिभागी होते हैं त्रिशक्ति कथा को जो नियम करके कृष्णपक्षकी नवमीको अष्टमी को वा चतुर्दशीको श्रवण करें पवित्र होके और व्रत करके एक वर्ष जो राजा श्रवण करे तो अवश्य छुटी हुई राज्यको पावे हे धरणि! यह त्रिशक्तिका वृत्तान्त हमने वर्णन किया इन तीनोंमें जो श्वेतवर्णा शक्तिहै उसकी सात्त्विक संज्ञाहै और ब्रह्मरूपिणी है और जिसका रक्तवर्णहै वह शक्ति वैष्णवी राजसी संज्ञा करके कथन कीजाती है और जो यह कृष्णाशक्ति है सो हे धरणि! तामसी रौद्री शक्तिहै जिस भांति एक परमात्मा कार्यवशहो तीन रूप धारताहै वैसेही प्रयोजनवश हो शक्तिभी तीन रूप धारण करती है जो इस त्रिशक्तिके उत्पत्ति चरित्रको श्रवण करे सो सब पापोंसे मुक्तहो मोक्षको प्राप्त होता है जो पुरुष वा स्त्री नियम करके व्रतपूर्वक इस चरित्रको श्रवण करे वह सब पापोंसे छूट व संसारमें अनेक सुखभोग अन्तमें विमान पर बैठ देवलोकको जाताहै जिसके घरमें यह लिखी हुई पुस्तक विराजमान होवे तिसके घरमें अग्नि, चौर, सर्प और रोग, मारीभय कभी न होवे हे धरणि! जो इस माहात्म्य पुस्तकको नित्य पूजन करें उन्होंको त्रैलोक्यके पूजनका फल होताहै और पुस्तक पूजनके प्रभावसे धन धान्य पशु पुत्र करके युक्त होते हैं और स्त्रीरत्न, हाथी, घोड़े, गौ, दास, दासी और अनेक भांति के सम्पत्ति करके युक्त होतेहैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस भांति अतिगुप्त पदार्थ हमने कथन किया और शिवजीका सब माहात्म्य वर्णन

किया अब तीनों शक्तियोंका प्रधान संख्या श्रवण करो जो रौद्री शक्ति संहार करनेवालीहै जिसका नाम चामुण्डा कालरात्री और तामसी है इसके मुख्य नव कोटि गणहैं और वैष्णवी पालनशक्तिके अष्टादशकोटि गणहैं और हे धरणि! जो सात्त्विकी ब्रह्मशक्तिहै उसके गणोंकी कुछ संख्या नहीं वे असंख्यहैं इन सब शक्तियोंके न्यारे २ शिवजी उतनेही रूप धारणकर पति होके सबको धारण करतेहैं और जिस भांति जिस शक्तिका रूप भूषण वाहनहै वैसेही उन शक्तियोंके प्रीतिके लिये उसी प्रकारका रूप धार शिवजी उनके समीप रहतेहैं इसलिये जो शक्तियोंका आराधन करताहै तिससे शिवजी सदा प्रसन्न रहतेहैं और शिवजी के प्रसन्न होनेसे कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं सब सुलभ है॥

चौरान्नबे का अध्याय॥

वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! अब रुद्रजीकी उत्पत्ति श्रवण करो जिसके श्रवणसे निष्पापहो मनुष्य परमपद को प्राप्त होता है हे धरणि! जिस समय ब्रह्माजीसे रुद्र भगवान् प्रकट भये तो रुद्रजी को ब्रह्माजीने उठाय बड़ी प्रीतिसे निज कन्धाके ऊपर बैठाय अथर्वण वेदका उपदेशकर निज पञ्चम मुखसे कहनेलगे कि हे कपालिन्! हे बभ्रो! हे कैरात! हे कुमारविक्रम! हे विशालाक्ष! विश्वकी रक्षा करो इस भांति भावी नामों से जब ब्रह्माजीने रुद्र भगवान् को पुकारा उसे सुनि रुद्रजी कुपितहो वामहस्तके अंगुष्ठ के नखसे ब्रह्माजीका मध्यशिर काटलिया परन्तु काटतेही वह शिर रुद्रजीके उसी वामहस्तमें लिपटगया तब तो उसके गिरादेनेका रुद्रजीने बहुत उपाय किया परन्तु न गिरा तब घबड़ायके रुद्रजी ब्रह्माजीसे कहनेलगे कि हे देव! यह कपाल हमारे हाथ से किस भांति गिरे सो आप बताइये इस भांति शिवजीका वचन सुनि ब्रह्माजी कहनेलगे कि इसी भांति

कापालिका व्रत धारण करो निज तेजसे समयाचारयुक्त हो इस का साधन करो जब सिद्ध होगा तब गिरेगा यह ब्रह्माजीका वचन सुनि रुद्रजीने उस व्रतको धारण किया महेन्द्र पर्वतमें आय उस कपालको फोड़के तीन टुकड़े किया और केशको ले यज्ञोपवीत बनाय धारण किया और कपाल का एक भाग रुधिरसे पूर्ण निज हाथमें रक्खा और दूसरे भागको जटाजूटमें धारण किया तीसरे भागको टुकड़ा २ कर व केशसे गूंध माला बनाय निज कण्ठमें धारण किया और वहां से चल नित्य नये २ तीर्थ में स्नान करनेलगे प्रथम तो समुद्रमें स्नान कर श्रीगङ्गाजीमें जाय स्नान किया वहांसे सरस्वतीमें जाय पहुँचे स्नान कर यमुनासंगमें आय स्नान किया और वहांसे शतद्रू, चन्द्रभागा, देविका, महानदी, वितस्ता और गोमती आदि नदियोंमें स्नान कर सारे पृथिवीके तीर्थ घूमते २ जब छः वर्ष बीते तो कोपीन सहित कटिसूत्रभी गिरगया फिर दो वर्ष पर्यन्त कपाल छूटनेके मनोरथसे तीर्थोंमें स्नान करते घूमतेरहे परन्तु कपाल न गिरा तब तो एक वर्ष पर्यन्त हिमाचल पर्वतमें भ्रमणकर हरिहरक्षेत्र में जाय पहुँचे वहां स्नानकर अयोध्या स्नान करते श्रीकाशीजी में पहुँचे इतने में बारह वर्ष व्यतीत हुये तब तो काशीजी की सीमामें प्रवेश करतेही अकस्मात् कपाल शिवजीके हाथसे गिर गया जिस भूमिमें वह कपाल गिरा वह कपालमोचन नाम तीर्थ हुआ जिसमें स्नान करनेसे ब्रह्महत्यादिक अनेक पातक निवृत्त होते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! कपाल छूटनेपर शिवजी जाय श्रीगङ्गाजीमें स्नानकर भक्तिसे विश्वेश्वरजीकी पूजाकर ब्रह्महत्यासे मुक्तहो प्रसन्न होतेभये और तभीसे कपालमोचन नाम तीर्थ लोक में विख्यात हुआ जहां स्नानमात्रसे ब्रह्महत्यादि महापातक निवृत्त होतेहैं ब्रह्माजीने जाना कि रुद्रके हाथसे कपाल गिरा तब वहांहीं आय कहनेलगे कि हे रुद्रजी! अब आप लोक

मार्गमें टिकें व हे पुत्र ! तुम्हारे किये हुये व्रतको जे करेंगे ते अनेक पापोंसे छूट अभीष्ट फलको प्राप्त होंगे और हे रुद्रजी ! जो तुमने कपाल धारणकर नग्नहो यह व्रत धारण कियाहै इस व्रतकी शुद्ध शैवसंज्ञा होगी और हमारे साथ तुम्हारा जे पूजन करेंगे उनके सब वाञ्छित सिद्ध होंगे इतना कह ब्रह्माजी तो ब्रह्मलोकको गये और रुद्रजी कैलासको गये वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! यह रुद्रजीका जन्म और कपालव्रतका चरित्र हमने वर्णन किया इसे जो कोई सुने वा सुनावे वे दोनों सब पापोंसे मुक्तहो स्वर्गको जाते हैं ॥

पंचान्नबे का अध्याय ॥

धरणी वाराह भगवान्‌से प्रश्न करती है कि हे भगवन् ! जो आपने सत्यतपा नाम ऋषिका वृत्तान्त प्रथम वर्णन किया जिस ने व्याघ्रभयसे अरुणि नाम ऋषिकी रक्षा की और सोई सत्य-तपा दुर्वासाजीकी आज्ञासे हिमवान् पर्वतमें जाय तप करनेलगा सो उसका वृत्तान्त अनेक आश्चर्यों करके युक्तहै सो आप वर्णन करें यह धरणीका वचन सुनि वाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि ! सो भृगुवंशमें उत्पन्न सत्यतपानाम ऋषि ब्रह्मकुलमें जन्म लेकर भी व्याधोंके संगसे व्याधकर्ममें प्रवृत्त रहा फिरभी दुर्वासाजीके संग होनेसे व उनके बोध देनेसे हिमाचल पर्वतमें जाय पुष्यभद्रा नदीके तट में चित्रशिला के समीप भद्रबट के नीचे कुटी बनाय सावधानहो तप करनेलगा सो ऋषि किसी समय धुनी जलाने के लिये कुठार ले सूखाकाठ काटनेलगा उस समय ज्यों कुल्हाड़ी काठपै चलाई त्यों दैवयोग काठसे उछलके बायें हाथकी तर्जनी नाम अंगुलीमें लगी और लागतेही अंगुली कटके गिरगई गिरने पर न तो उसमें रुधिर व न मांस केवल भस्मका चूर्ण दीखा तब तो उस कटीहुई अंगुलीको उठाय सत्यतपाने फिर हाथमें लगालिया

सो लगातेही ज्योंकी त्यों वह अंगुली अपनी जगह पर जमगई इस तमाशेको एक किन्नर व किन्नरी ये दोनों वटके वृक्षपर बैठे देख रहेथे सो रात्रि व्यतीत होतेही सारा वृत्तान्त स्वर्गमें जाय इन्द्रसे वर्णन किया सो संपूर्ण वृत्तान्त इन्द्रजी सुनके मनमें विस्मितहो विष्णु भगवान्को साथ ले इस सत्यतपा मुनिके कौतुक देखनेको चले तो विष्णु भगवान्ने वाराहका रूप धारण किया और इन्द्रजीने हाथमें धन्वा ले और बाणको खैंच उस वाराहके पीछे २ किरातरूप अर्थात् व्याध बनके दो एक बाण मारे परन्तु वह वाराह इस भांति भागताहै कि कहीं दीखताहै व कहीं छिप जाताहै इसी भांति छिपते भागते जाय वेगसे सत्यतपाजीकी कुटीमें घुसा पीछे २ लगाहुआ व्याध आयके कुटीके समीप पहुँच सत्यतपा ऋषिको देख कहनेलगा कि हे ऋषे! इधर हमारे बाणसे बिधाहुआ शूकर आयाहो तो आप बताइये हम कुटुम्बी हैं व क्षुधासे पीड़ित हैं हमारी ईश्वरने यही जीविका रचीहै इस लिये आप दया करके सत्य २ बतादेवें जिससे हम कार्य सिद्ध करके अपनी क्षुधा शान्त करें इस भांति सत्यतपा व्याधका वचन सुन विचार करनेलगा कि जो इस वाराहको बताताहूं तो इसका प्राण जायगा व हम शरणागतके बधका दोषभागी होंगे यदि नहीं बताते तो यह कुटुम्बी व्याध क्षुधासे पीड़ित होरहाहै इसके आहार हरणका दोष होगा इसलिये ऐसे धर्मसंकटमें क्या करना चाहिये जिससे कोई पाप न लगे व धर्म रहे इसप्रकार बहुत देर तक चुप होके विचारतारहा परन्तु कोई उत्तर न सूझा तब तो परमेश्वरका स्मरण करनेलगा उसके करतेही अकस्मात् सत्यतपा यह बोला कि हे व्याध! यह तू विचार कर कि जिसने देखा वह मुख जिह्वा विना उत्तर नहीं देसक्ता व जिसे उत्तर देनेकी सामर्थ्यहै वो विना नेत्रके उसने देखा नहीं इसलिये उसे क्या मालूमहै व इस विषयमें क्या उत्तर देवें इसलिये तूही मनमें

समझ यह सुनि व्याध चुपहो व प्रसन्नहो माया छोड़ दोनों विष्णु और इन्द्रका स्वरूप धारणकर सत्यतपाजीसे कहनेलगे कि हे ऋषीश्वर ! हम दोनों तुमसे बहुत प्रसन्नहैं जो इच्छाहो सो वर मांगो यह वाणी विष्णु भगवान्‌की व देवराजकी सुनि व दोनों देवताओंको देख बड़े हर्षसे दण्डवत् प्रणामकर हाथ जोड़ माथ नवाय कहनेलगा कि हे प्रभुजी ! आज हम कृतार्थ भये व जन्म लेनेका फल हुआ व हमारा तप सफल हुआ जो आप योगियों कोभी दुर्लभ ऐसा दर्शन दिया अब कौनसा वर आपके दर्शनसे अधिकहै जिसे मांगें परन्तु आपकी आज्ञा माननीयहै इसलिये यही वर चाहतेहैं कि जे ब्राह्मण प्रतिपर्वमें इस हमारी कथाका व आप दोनों महात्माओंकी कृपाका स्मरण कथन करें उनके संपूर्ण पातक व उपपातक निवृत्तहों और उनको यज्ञोंका फल प्राप्त हो अर्थात् जो फल कर्मयज्ञमें ब्रह्मयज्ञसे व ज्ञानयज्ञसे होताहै सो उनको मिले व हमारी मुक्तिहो यह सत्यतपाऋषिकी वाणी सुनि प्रसन्नहो 'तथास्तु' कह दोनों देवता अन्तर्धान भये व सत्यतपाजी उसी स्थानमें पूर्वके तुल्य तप करनेलगा इसी भांति तप करतेही थोड़ेकाल व्यतीत होनेसे वहां अरुणिनाम मुनि सत्यतपाजीके गुरु आय प्राप्तभये तब तो उनको देखि बड़े हर्षसे उठ साष्टाङ्ग दण्डवत्‌कर भक्तिसे पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय इत्यादि वेदोक्त रीतिसे पूजाकर वारम्बार प्रणामकर अपनेको कृतार्थ मान उत्तम आसन पर बैठाय हाथ जोड़ आगे खड़ा हुआ तब तो अरुणि ऋषि सत्यतपाकी भक्ति व नम्रताको देखि कहनेलगे कि हे सत्यतपा ! हे पुत्र ! तू सिद्ध हुआ और निज तपश्चर्यासे ब्रह्मरूप हुआ अब तेरा मुक्तिकाल प्राप्त हुआ इसलिये उठ हमारे साथ परमपदको चल जिस स्थानके प्राप्त होनेसे फिर जन्म लेना नहीं होता यह कह दोनों गुरु शिष्य सत्यतपा और अरुणि श्रीनारायणजीके चरणका ध्यान कर शरीर छोड़ उन्हीं चरणों

में लीन होगये वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इस सत्यतपाऋषि के इतिहासको जे श्रवण करें उनके सब पाप छूटजायँ व समस्त अभीष्ट फल प्राप्तहों और अन्तमें उत्तमगति पावें ॥

छानबे का अध्याय ॥

धरणीजी वाराह भगवान्से पूछनेलगी कि हे भगवन्! जो माया ब्रह्माजीके शरीरसे उत्पन्नहो अष्टभुजीहो गायत्रीरूप धारणकर चैत्रासुरका वध किया सोई भगवती नन्दानाम धारणकर देवताओंके अनेक कार्योंको किया व महिषासुरका वध किया व वोही वैष्णवी नामसे प्रसिद्ध भई यह सब एकहीमें किस भांति घटेगा इस संदेहको आप कृपाकरके निवृत्त करें यह पृथिवीका प्रश्न सुन हर्षसे वाराह नारायणजी कहनेलगे कि हे धरणि! जिस भांति विष्णुनाम एकही पदार्थहै कार्यवशहो अनेक होनेसे एकको कुछ हानि नहीं होती इसीभांति शक्तिपदार्थ एकही है उस के नाम भेद अनेक हैं इस बातको जो भली भांति जानताहै सोई वेदविद् है व सोई पण्डित है वेदवादियोंके सिद्धान्तमें शक्तिनाम सब एकहीहै और पुरुष नाम सब एकही है केवल संसारके निर्वाहके वास्ते अनेकसा दीखता है केवल द्वैविध्य जबहीं तक है जबतक अज्ञान है अज्ञान जब निवृत्त हुआ व ज्ञानका उदय भया तब तो एकके सिवाय दूसरा नहीं दीखता हे धरणि! इस जीवके वास्ते अज्ञान जैसा शत्रु कोई नहीं इसलिये अज्ञानके दूर करनेका उपाय अवश्य करना चाहिये सो उपाय बे गुरुकृपा नहीं होसक्ता इसलिये प्रथम भ्रम का दूर करनेहारा सन्तोषी वैष्णव वेदशास्त्रसम्पन्न सदाचारनिष्ठ ब्राह्मण शीलकुलसम्पन्न देखि जाय उसके समीप सेवामें तत्परहो परस्पर परीक्षा लेवे जैसे गुरु शिष्यकी परीक्षा लेवे व शिष्य गुरुकी औ वर्णभेद से परीक्षा होती है जैसे ब्राह्मण शिष्यका एक वर्ष क्षत्रियका दो

वर्ष वैश्यका तीन वर्ष परीक्षा ले उत्तमगुणों करके सम्पन्न देख मुहूर्त विचार तीर्थ में वा देवालयमें वा और कोई पवित्रस्थान में शिल्पशास्त्र विधानसे मण्डप रच व वन्दनवार पुष्पमालासे शोभितकर मण्डपमध्य में यथोक्त वेदी बनाय व यथास्थान में कुण्ड निर्माणकर वेदी मध्यमें सर्वतोभद्रमण्डल अथवा नवनाभ-मण्डल बनाय कार्त्तिकमासकी शुक्लदशमीको क्षीरवृक्षका मन्त्र पढ़के दातुन ले दन्तधावन कराय विधिपूर्वक स्नान कराय शिष्य को उत्तम वस्त्र धारण करावे व स्वप्नमन्त्र जो शास्त्रमें लिखाहै उसका जप करावे व एक वार हव्यभोजन करावे व रात्रिमें देवके समीप कुश और श्वेतकम्बल आसन में गुरु निजसमीप पूर्व दिशाको शिर करायके शिष्यको शयन करावे और रात्रिके अन्त में अर्थात् पिछलीरात जो स्वप्न देखै उसे प्रातःकाल उठ श्रीगुरु को प्रणामकर विनयपूर्वक शिष्य निवेदन करे उस स्वप्नको गुरु देख शुभाशुभका विचार करे जो तो शुभहो तौ उत्तम हो जो अशुभ हो तौ तिल और घृतका हवनकर शान्तिसूक्तका पाठ कर एकादशी के दिन वेदी के मध्यमें नव कलश यथालाभ स्वर्णसे लेकर मृत्तिका पर्यन्त आठों कलश आठों दिशाओं में पूर्वक्रमसे और नववां कलश मध्यमें विधानसे स्थापन कर आठों कलशों में यथास्थान इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुवेर, ईशान इनको आठों दिशाओं के कलशों में आवाहनकर षोडशोपचारसे पूजनकर और मध्यके कलश में विष्णुभगवान्का आवाहन कर षोडशोपचार करके गुरुका पूजन करे व विष्णुभगवान्के पूर्व बलभद्रजीका पूजन करे दक्षिण में प्रद्युम्नका पश्चिममें अनिरुद्धका व उत्तरदिशामें वासुदेवका पूजनकर ईशानदिशामें शंखका पूजन करे अग्निदिशामें चक्रका दक्षिणदिशामें कौमोदकीनाम गदाका वायुदिशामें पद्मका पूजन कर फिर ईशानमें मुशलका पूजन करे व विष्णुभगवान् के

दक्षिणभागमें गरुड़जीका पूजनकरे व वामभागमें लक्ष्मीजी का पूजनकर विष्णुभगवान्के अग्रभागमें खड्गका श्रीवत्सका व कौस्तुभका पूजन करे फिर चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल आदि षोडशोपचारसे पूजनकर शिष्यके नेत्रको शुक्लवस्त्र से मन्त्रपूर्वक बांध व अञ्जलि को पुष्पोंसे पूर्णकर मण्डपमध्य में ल्याय मन्त्रपूर्वक देवके ऊपर पुष्पाञ्जलि कराय गुरु निज दक्षिणभागमें बैठाय यथाकामना कलशजलसे अभिषेक करे जैसे मुक्तिकामनावाले को मध्यघटके जलसे जयकामनावाले को पूर्व घटसे तेजकामनावालेको अग्निदिशाके घटसे मृत्यु जीतनेकी कामनावालेको दक्षिणघटसे दुष्टविध्वंसन कामनामें नैर्ऋत्यघट से शान्तिकामनामें पश्चिमघटसे पापछूटने की कामनामें वायु दिशाके कलशसे संपत्तिकामनामें उत्तरके कलशसे और लोकपाल होने की कामनामें ईशानदिशाके कलशसे गुरु शिष्यका अभिषेक करे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! एकही कलशके अभिषेक व स्नानसे संपूर्ण पापोंसे मुक्त हो ज्ञान प्राप्त होता है व नवों कलशोंसे जो स्नान करे उसका क्या कहना चाहिये वो तो साक्षात् विष्णुरूपही है उसको भोग व मोक्ष दोनोंहू सुलभ हैं इस भांति गुरु शिष्यका अभिषेककर शान्तिदिशामें बैठाय मोक्ष मार्गका मन्त्र उपदेशकर आचारका उपदेश करै और यह भी शिक्षा दे कि हे पुत्र! अग्नि, गुरु, ब्राह्मण, गौ, वेदशास्त्र और देवता, रुद्र, सूर्य, लोकपाल, ग्रह, वैष्णवक्षेत्र, तीर्थ, पुण्यवृक्ष, पूज्य और वृद्ध इन्होंको सदा प्रणाम करना व इनसे नम्र रहना व सबमें विष्णुभगवान्का चिन्तन करना इस प्रकार धर्मोपदेश कर कुण्डमें विधिपूर्वक अग्निका स्थापन कर "ॐ नमो भगवते सर्वरूपिणे हुंफट् स्वाहा"। इस मन्त्रसे एक सहस्र आहुति दे जिस मन्त्रका उपदेश शिष्यको दियाहो उससेभी अष्टोत्तरशत आहुति दे पूर्णाहुति करे और शिष्यभी निजगुरु को यथाशक्ति

गौ, भूमि, हाथी, घोड़े, स्वर्ण के भूषण और उत्तम २ वस्त्र आदि अनेक पदार्थ दे मन, वचन, कर्मसे सेवा में गुरुके तन और प्राणसे हाज़िर रहे वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस भांति जो दीक्षा ग्रहण करते हैं उनके सब पाप छूटजाते हैं और दिव्यज्ञान उत्पन्न होताहै जिस ज्ञानसे भ्रमबुद्धि को त्याग तत्त्व पदको प्राप्त होते हैं और हे धरणि ! विना दीक्षा ग्रहण किये पुरुषका कोई कर्म सफल नहीं होता सब निष्फल होताहै इस लिये अवश्य दीक्षा लेनीचाहिये दीक्षा ले जप, भजन, देवपूजा, स्तुति, दान, तीर्थ, व्रत, सब करनेसे सफल होते हैं अब हम एक इतिहास वर्णन करते हैं सो तू श्रवण कर जिसमें वशिष्ठजी का व राजाश्वेतका संवादहै एक श्वेतनामक राजा बड़ा तपस्वी इलावृतखण्डमें उत्पन्न हुआ सो किसी समय पृथिवी दान करने के विचारमें ब्रह्माजीके पुत्र वशिष्ठजीसे जाय पूछनेलगा कि हे भगवन् ! हम पृथिवीका दान ब्राह्मणों को दिया चाहते हैं सो आप विचारपूर्वक आज्ञा देवें इस भांति श्वेतका वचन सुनि वशिष्ठजी कहनेलगे हे राजन् ! विचार तो तुम्हारा ठीकहै परन्तु अन्नदान देवो जिससे सब काल सुखी रहो और हे राजन् ! अन्नदानके तुल्य पृथिवीमें दूसरा दान कोई है नहीं इससे सब दानोंसे अन्नदानही श्रेष्ठहै यह विचार करो कि सब जीवों का प्राण अन्नहै व अन्नहीसे सब जीवों की उत्पत्ति है व वृद्धि भी अन्नहीसे है इसलिये जिस भांतिसे बने वैसे अन्नदान को करो यह सुनि छोटीसी बात जान वशिष्ठजीका वचन न माना और ब्राह्मणोंको बुलाय २ रत्न, वस्त्र, भूषण और उत्तम २ ग्राम देने लगा इस भांति देते २ यह बुद्धि उत्पन्न भई कि जो २ यज्ञ वेद में लिखे हैं सो २ करना चाहिये यह विचार वशिष्ठजीको बुलाय अश्वमेध यज्ञका प्रारम्भकर एक हजार अश्वमेध किया इसी भांति जो २ यज्ञ वशिष्ठजीने जिस २ विधिसे बताया उसी २

विधिसे सब यज्ञोंको किया व सुवर्णके पात्र चांदीके पात्र और अनेक भांतिके उपभोगकी सामग्री सब ब्राह्मणोंको दिया परन्तु अन्न और जल छोटा पदार्थ जान किसीको न दिया इस प्रकार करते करते राजाश्वेत कालवशहो शरीर त्यागकर दिव्य विमान में बैठ स्वर्गको गया स्वर्गमें जाय जो २ पदार्थ दान किये थे सो सो असंख्य होके मिले परन्तु अन्न और जलके न देनेसे क्षुधा तृषासे व्याकुलहो देवराजसे पूछ जहां उसका शरीर भस्म हुआ था वहां जाय जली हुई हड्डियोंको ले चाटनेलगा तब तो कुछ २ क्षुधा शान्त भई तब तो फिर विमानमें बैठ स्वर्गको चला गया इसी प्रकार जब २ क्षुधा लगे तब २ वहांहीं आय निज अस्थियोंको चाट क्षुधा शान्तकर चलाजाय किसी दिन वशिष्ठ जी महाराज यह व्यवस्था देख राजा श्वेतसे कहनेलगे कि हे राजन्! यह क्या तुम्हारी दशाहै कि स्वर्गमें भी जायके सन्तुष्ट नहीं भये इस प्रकार वशिष्ठजीका वचन सुनि राजाश्वेत कहने लगा कि हे भगवन्! पूर्वजन्ममें हमने अन्न और जलका दान नहीं दिया इसलिये क्षुधा नहीं निवृत्त होती और तृषाभी दुःख देती है आप हमारे क्लेशको देखि कोई उपाय बतावें जिससे यह दुःख छूटे यह सुनि वशिष्ठजी कहनेलगे कि हे राजन्! हम क्या कहें प्रथम तो हमने कहा तब तुमने माना नहीं और बे दिये कोई पदार्थ मिल नहीं सक्ता सुवर्ण और रत्नके दानसे मनुष्य भोगवान् परलोकमें होता है परन्तु अन्नदान करनेसे संपूर्ण मनो-रथोंसे तृप्त होताहै सो तुमने छोटासा दान समझके नहीं दिया हे राजन्! उसीका फल यह भोगनापड़ा इस भांति वशिष्ठजी का वचन सुनि राजाश्वेत कहनेलगा कि हे भगवन्! आप यह मेरी दुर्दशा देखि विचारपूर्वक यह कथन करें जिसमें अब मेरा कल्याणहो यह राजाका वचन सुनि वशिष्ठजी कहनेलगे कि हे राजन्! एक वृत्तान्त आप श्रवण करें हम कहते हैं पूर्व समयमें

विनीताश्वनाम एक राजा हुआ उसनेभी तुम्हारे तुल्य यज्ञ और दान तो असंख्य किया परन्तु स्वल्प पदार्थ मानके अन्नदान नहीं किया सो राजा जब कालवश हुआ तब तो निज सुकृतके प्रभावसे उत्तम विमानमें बैठ स्वर्गको देवतुल्य शरीर धारणकर चला और उसी समय राजा क्षुधासे पीड़ितहो क्या देखताहै कि हरद्वारमें नीलपर्वतके समीप अपनी पूर्वदेह पड़ीहै और निजकुलके पुरोहित गङ्गाजीके तटपर बैठे हैं उनसे विनयपूर्वक कहनेलगा कि हे मुने! हमारी गति स्वर्गको हुई परन्तु क्षुधासे व्याकुल होरहे हैं इसके निवृत्त होनेका कोई उपाय बतावें यह सुनि ऋषिजी कहनेलगे कि हे राजन्! तिलधेनु, जलधेनु, घृतधेनु, धेनु, रसधेनु, गुड़धेनु, शर्कराधेनु, मधुधेनु, क्षीरधेनु, दधिधेनु, नवनीतधेनु, कर्पासधेनु, धान्यधेनु, कपिलाधेनु और उभयमुखी आदि धेनुवोंका दान आप शीघ्र करें जिसके करनेसे क्षुधा निवृत्त होय और अनन्त तृप्ति होय यह होता मुनिनाम पुरोहितका वचन सुनि राजा विनीताश्व बोला कि हे मुने! इन धेनुवोंको किस भांति देना चाहिये सो विधि आप कृपा करके कथन करें यह सुनि होतामुनि कहनेलगे कि हे राजन्! तिलधेनुका विधान आप श्रवणकरें सोलह प्रस्थ तिलको कृष्णमृगचर्म पर स्थापनकर उसे गौ करके कल्पना करे और एक प्रस्थ तिलका वत्स कल्पना करे और कस्तूरीकी नासा बनावे जिह्वा गुड़की बनावे और मुक्ता पुच्छस्थानमें रक्खै घण्टा आदि भूषणोंसे भूषितकर और रेशमी वस्त्रसे ढांप सुवर्ण का शृङ्ग चांदीका खुर बनाय यथास्थान में धर कांस्यपात्र की दोहनी भी स्थापनकर सर्वौषधके साथ उत्तम पर्वमें कुटुम्बी वेदपाठी दरिद्री ब्राह्मण को देवे और संकल्प करने के अनन्तर यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐ अन्नं मे जायतामन्यत्पानं सर्वरसास्तथा। सर्वं सम्पादयास्माकं तिलधेनो द्विजार्पिता) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मणके हाथमें जलसहित दे और ब्राह्मण उसे

ग्रहणकर यजमानकी ओर देखि यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। गृह्णामि देवि त्वां भक्त्या कुटुम्बार्थे विशेषतः। भजस्व कामान्मां देवि तिलधेनो नमोऽस्तु ते) यह वाक्य उच्चारणकर यजमानको आशीर्वाद दे गौको ग्रहण करे हे राजन्! इस गोदानको जो भक्तिपूर्वक करते हैं उनके सब मनोरथ सिद्ध होते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जे मनुष्य इस कथाको भक्तिसे श्रवण करते हैं वे संसारसागरसे पार होकर विष्णुलोकमें जा प्राप्त होतेहैं॥

सत्तानबे का अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! विनीताश्व राजासे होतामुनि कहनेलगे कि हे राजन्! अब आप जलधेनु का विधान श्रवण करें जिसके करनेसे करनेवाला मनुष्य जबलों सूर्य, चन्द्र और पृथ्वी रहे तबतक तृषापीड़ित नहीं होता इसका विधान यहहै कि चार हाथ पृथिवी गोमयसे लेपनकर उसमें कृष्ण मृगका चर्म बिछाय उसके ऊपर कलश स्थापन करे और कपूर, अगर, चन्दनयुक्त जलसे पूर्णकर उसे गौ करके कल्पना करे और कलशसे छोटा नालयुक्त पात्र उसी समीप कपूर, अगर, चन्दन-युक्त जलपूर्ण स्थापन करे उसे बछरेके स्थानमें कल्पना करे और कलशके मुखमें आम्रका पल्लव व उत्तम सुगन्धयुक्त पुष्प दूर्वा धरै और पञ्चरत्न भी कलशमें छोड़े और जटामासी, उसीर, कूट, सुगन्धबाला, आँवले, सफ़ेद सरसों और सप्तधान्य ये सब पदार्थ कलशके मध्यमें छोड़े और कलशके चारों दिशाओं में चार पात्र एक घृतसे पूर्ण दूसरा दधि करके पूर्ण तीसरा मधु करके और चौथा पात्र शर्करासे पूर्ण स्थापन करे और सुवर्ण का मुख नेत्र और शृङ्ग बनावे कृष्णागरुके कर्ण बनावे ताम्र की पीठ कांस्य की दोहनी और कुशाके रोम सूत्रकी पुच्छ बनाय कृष्णरेशमी वस्त्रसे ढांप मुखके समीप घण्टाभी स्थापन करे और

गुड़का मुख सीपीके दांत शर्कराकी जिह्वा मक्खनके स्तन और इक्षुके पैर कल्पना कर इन सब पदार्थों को यथास्थानमें स्थापित कर चन्दन, पुष्प, माला, धूप, दीप और नैवेद्यसे पूजन कर सुशील अग्निहोत्री वेदपाठी तपस्वी दरिद्री कुटुम्बी ब्राह्मण को देवे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस जलधेनुका देनेवाला और जो ब्राह्मण ग्रहण करे वे दोनों ब्रह्महत्या, गोहत्या, मद्यपान, पूज्य स्त्रीका संगआदि अनेक महापातक उपपातकोंसे मुक्त हो विष्णुभगवान्के समीपवर्ती होते हैं और जो अश्वमेधयज्ञ करताहै व जो विधिपूर्वक जलधेनु दान करताहै वे दोनों तुल्य स्थान को प्राप्त होते हैं और होतामुनि कहते हैं कि हे राजन्, विनीताश्व! जो इस विधिसे जलधेनु दे व जो ग्रहण करै वे दोनों उस स्थानमें जाते हैं जहां दूधकी नदी बहती है व दही और शहदके बड़े २ तड़ाग हैं व खीर का कर्दम जहांहै व जहां गन्धर्व गान करते हैं अप्सरा नृत्य करती हैं वहां कल्पपर्यन्त निवास कर अन्तमें विष्णुभगवान्के धामको जाते हैं॥

अट्ठानबे का अध्याय॥

होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! अब आप सावधान हो रसधेनु का विधान श्रवण करें पृथिवी को गोमयसे लेप कर कुशा बिछाय उसके ऊपर कृष्णमृगका चर्म बिछाय उस पर इक्षुरस करके पूर्ण कलश स्थापनकर व बर्द्धनीपात्रमें अर्थात् करवामें इक्षुरस पूर्णकर वत्सके स्थानमें कल्पना करे और इक्षुका पाद बनावे चांदीके खुर करके युक्त व सुवर्णका शृङ्ग व शर्करा का मुख व जिह्वा फलके दांत मोतियोंके नेत्र ताम्रकी पृष्ठ पुष्परागमणिके रोम इस भांतिके पदार्थोंसे रसधेनुके अङ्गों की कल्पना कर उसी धेनुके समीप सप्तधान्य रख व चारोंओर दीप प्रज्वलित कर संपूर्ण उपस्करसहित रसधेनु को उत्तम वस्त्र ओ-

छाय चारों दिशाओंमें तिलसे पूर्ण चार पात्र स्थापन कर उत्तम दिनमें वेदविद् कुटुम्बी धर्मनिष्ठ ब्राह्मणको देवे तो हे राजन्! इस दानके करनेसे सब पापोंसे छूट स्वर्ग को प्राप्त होताहै और इस दानके समयमें जो कोई दर्शन करे वहभी सब पापोंसे मुक्त होकर उत्तम गतिको पाताहै वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जे रसधेनु दान करते हैं उनके दश कुल पूर्व पितासे लेकर और दश पीछे पुत्रसे लेकर और एक आप ये इक्कीस पीढ़ी परमपद को जाते हैं होतामुनि कहते हैं हे राजन्! यह रसधेनुका विधान हमने वर्णन किया इसको जो भक्तिसे श्रवण करे वा सुनावे वे दोनों सब पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोक को जाते हैं॥

निन्नानबे का अध्याय॥

होता मुनि कहते हैं कि, हे राजन्, विनीताश्व! अब संपूर्ण कामना देनेहारी गुड़धेनु वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो पृथिवी को गोमयसे लीप कुश और कृष्ण मृगचर्म बिछाय तिसके ऊपर वस्त्र बिछाय बहुत गुड़ स्थापनकर उस गुड़को धेनु व उससे थोड़े गुड़ करके वत्स कल्पना करे होता मुनि कहते हैं हे राजन्! उत्तम गुड़धेनु तो मागध तौलसे चार भार की व दो भारकी मध्यम और एक भार की साधारण होती है और धेनुके प्रमाणका चतुर्थांश वत्स करना चाहिये इस प्रकार यथासामर्थ्य धेनु को कल्पनाकर इन पदार्थोंसे धेनुके अङ्गोंकी कल्पना करे सुवर्णका शृङ्ग और मुख, मोतियोंके दांत, रत्न की ग्रीवा, कस्तूरीकी नासिका, अगरुकाष्ठ का शृङ्ग, ताम्रकी पीठ, क्षौमवस्त्र अर्थात् अलसीके वस्त्रकी पूंछ, चांदीके खुर, इक्षुके चरण बनाय रेशमके वस्त्रसे आच्छादित कर घण्टा व चमर करके शोभित मक्खनके स्तन बनाय अनेक फलोंके साथ चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्यसे पूजनकर एक सहस्र स्वर्ण-

मुद्राके साथ श्रोत्रिय सुशील कर्मनिष्ठ कुटुम्बी दरिद्री ब्राह्मण को देवे यदि सहस्र स्वर्णमुद्रा न देसके तो पञ्चशत ढाईशत इससे भी आधे २ कर यथासामर्थ्य देय प्रथम ब्राह्मण को स्वर्ण के भूषण व उत्तमवस्त्रसे अलंकृत कर चन्दन और पुष्पमाला आदिसे पूजित यथारुचि भोजन कराय छतुरी व पादुका दे यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। गुडधेनो महावीर्ये सर्वसंपत्करे शुभे। दानादस्माच्च भो देवि भक्ष्यं भोज्यं प्रयच्छ मे) यह पढ़ पूर्वमुख वा उत्तरमुख हो गुड़धेनु ब्राह्मणको दे होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! इस गुड़धेनुके दान करनेसे मन वचन कर्मसे किया हुआ पाप व अभिमान से मिथ्याभाषण अथवा और किसी सम्बन्धसे जो मिथ्याभाषण हुआहै सो संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं और गुड़धेनुका दाता पुरुष व इस दानको देते समयमें जो देखें वे सब पापोंसे मुक्त होकर उत्तम गतिको जाते हैं जहां दूधकी नदी व घृत तथा खीरका कर्दम वहां जाय सिद्धोंके साथ इक्कीस पीढ़ियोंको ले निवास करते हैं वहां कल्पपर्यन्त निवास कर अन्तमें विष्णुभगवान्‌के समीपवासी होतेहैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! यह दानअयनमें अर्थात् उत्तरायण-दक्षिणायन संक्रान्ति के दिन वा मेष तुला संक्रान्तिके दिन अथवा व्यतीपातमें देनेसे अक्षय फल होताहै व संपूर्ण पाप दूर होतेहैं और संसारके सब सुख भोगकर अन्तमें विष्णु भगवान्‌के धामको जाते हैं॥

सौ का अध्याय॥

होतामुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! अब हम शर्कराधेनु के विधान को वर्णन करतेहैं सो सावधानहो श्रवण करो जिस प्रमाणसे उत्तम मध्यम साधारण गुड़धेनुहै वैसीही शर्कराधेनु भी होनी चाहिये और जिस प्रमाणकी धेनुहो उसका चतुर्थांश बछरा होना चाहिये पृथिवीको गोमयसे लेपन करके कुश व कृष्ण

मृगचर्म व उत्तमवस्त्र बिछाय इसके ऊपर यथासामर्थ्य शर्करा रख व धेनुका चतुर्थांश वत्स कल्पना कर धेनुकी चारों ओर अनेक प्रकारके बीज धरे और इन पदार्थोंसे शर्कराधेनुके अङ्गों की कल्पना करे यथास्थानमें गुड़ करके मुख, चावलकी पीठी की जिह्वा, इक्षुके पाद, चांदीके खुर, नवनीत अर्थात् मक्खनके स्तन, सुवर्णके शृङ्ग, ताम्रकी पीठ, क्षौमवस्त्रकी पूंछ, मोतीके नेत्र, माणिक्यके दांत, प्रशस्तपत्रके कर्ण बनाय वस्त्रसे आच्छादित कर पञ्चरत्नयुक्त चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्य आदि उपचारसे पूजन कर वेदविद् तपस्वी कुटुम्बी दरिद्री ब्राह्मणको अयनमें विषुव संक्रान्तिमें व्यतीपातमें वा दिनक्षयमें देवे और ब्राह्मणकाभी पूजनकर भूषण वस्त्रसे संतुष्ट करे और यथासामर्थ्य दक्षिणा भी देवे और दान कर उस दिन यजमान शर्करा आहार करे और जिस ब्राह्मणको देवे उसका मुख तीन दिनतक न देखे तब पूर्णफल होताहै वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! जो इस शर्कराधेनुका दान करतेहैं वे सब पापोंसे छूट व संसारके अनेक सुख भोग और अन्तमें विष्णु भगवान्के लोकको जातेहैं॥

एकसौएक का अध्याय॥

होता मुनि कहतेहैं हे राजन्, विनीताश्व! अब हम मधुधेनु दानका विधान वर्णन करतेहैं सो आप सावधानहो श्रवण करें प्रथम पृथिवीको गोमयसे लेपन करके वहां कुश व कृष्ण मृगचर्म व उत्तम वस्त्र बिछाय उसके ऊपर सोलह घटको मधुसे पूर्ण कर धेनु कल्पना करे व चार घटसे वत्स बनाय धेनुके अङ्गोंको इन पदार्थों से कल्पित करे सुवर्ण व गुड़का मुख, अगरु चन्दन के शृङ्ग, ताम्रकी पीठ, इक्षुके पाद, रत्नोंके दांत, मोतियोंके नेत्र, रेशमीवस्त्रकी पूंछ बनाय श्वेतकम्बल ओढ़ाय फूलोंके ओठ, कुशाके रोम, चांदीके खुर, प्रशस्तपत्रके कर्ण इस प्रकारकी

धेनु सप्तधान्य करके युक्त व धेनुके चारोंओर चार तिलके पात्र स्थापन करे औ दो वस्त्रसे आच्छादित कांस्यकी दोहनी सहित संक्रान्तिमें अयनमें विषुवमें व्यतीपातमें वा सूर्य चन्द्रग्रहणमें चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्य आदिसे पूजन कर वेदविद् तपस्वी कुटुम्बी दरिद्री ब्राह्मणको बुलाय वस्त्र भूषणों से भूषितकर धेनुकी पूंछ पकड़ जलके साथ यह मन्त्र पढ़के देवे (मन्त्रः। ॐरसज्ञास्सर्वदेवानां सर्वभूतहिते रताः। प्रीयन्तां पितरो देवा मम धेनो नमोऽस्तु ते) यह मन्त्र उच्चारण कर ब्राह्मणके दाहिने हाथमें जल छोड़दे ब्राह्मण उसे ग्रहण कर यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐअहं गृह्णामि त्वां देवि कुटुम्बार्थे विशेषतः। कामं कामदुघे कामान्मधुधेनो नमोऽस्तु ते) यह मन्त्र पढ़ "मधुवाता ऋतायते" इस वेदके मन्त्रको उच्चारण कर मधुधेनु दानदे पीछे से छत्र व उपानत् अर्थात् जूतेका दान देवे इस प्रकार दान देकर यजमान और दान लेनेवाला ब्राह्मण दोनों तीन दिन तक मधु और पायस अर्थात् खीरका भोजन करें होता नाम ऋषि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! इस विधिसे दान करनेमें जो फल होता है सो आप प्रीतिसे श्रवण करें जहां मधुकी नदी बहतीहै व जहां पायसका कर्दमहै उन ऋषियोंके लोकमें जाय मधुधेनुदाता पुरुष निवास करताहै और वहां बहुत काल निवास कर कल्पान्त में जा ब्रह्मलोकमें निवास करताहै वहां बहुत काल रह अनेक भांतिके भोगको भोगि अन्तमें मनुष्यलोकमें जन्म लेकर चक्रवर्ती राजाहो अखण्ड राज्य सुखभोग अन्तमें इक्कीस कुलके साथ विष्णु भगवान्के धामको जाताहै वाराह नारायण कहतेहैं हे धरणि! जो मनुष्य श्रद्धा भक्तियुक्त होकर मधुधेनुदानकी कथाको श्रवण करतेहैं वे सब पापोंसे मुक्त होते हुये उत्तम विमानमें बैठ कर विष्णु भगवान्के लोकको जातेहैं॥

एकसौ दो का अध्याय॥

होता मुनि कहतेहैं हे राजन्, विनीताश्व! अब हम क्षीरधेनु दानको वर्णन करतेहैं सो तुम सावधान होकर श्रवण करो भूमि को गोमयसे लेपन कर कुशा बिछाय, कृष्ण मृगचर्म व उत्तम पवित्र वस्त्र बिछाय उसके ऊपर गोदुग्धसे पूर्ण सोलह घट स्थापन कर गऊकी कल्पना करे व चार घटका वत्स कल्पनाकर गऊ के अङ्गोंको इन पदार्थोंसे कल्पित करे गुड़का मुख, शर्कराकी जिह्वा, मुक्ताके नेत्र, मणिके दन्त, प्रशस्तपत्रके कर्ण, अगरु चन्दनके शृङ्ग, स्वर्णसे मढ़के रूप्यके खुर, इक्षुके चरण, मक्खन के चारों स्तन, ताम्रकी पीठ पट्टसूत्रकी पुच्छ इस प्रकार अङ्गों की कल्पना कर चारों तरफ़ गोमयका लीकखैंच दो उत्तम वस्त्र से ओढ़ाय उस गौके चारोंओर चार पात्र तिलसे पूर्ण स्थापन कर व सप्तधान्यसे पूर्ण चारों दिशाओंमें चार पात्र स्थापन करे व वेदपाठी उत्तम शीलयुक्त सत्कर्मनिष्ठ कुटुम्बी दरिद्रपीडित ब्राह्मणको बुलाय उत्तम वस्त्र भूषणसे अलंकृत कर उत्तम भोजन कराय पूर्वमुख बैठाय आप यजमान उत्तरमुखहो पञ्चरत्नके साथ क्षीरगऊको चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्य करके पूजाकर संकल्पपूर्वक पुण्यपर्वमें ब्राह्मणके दक्षिण हाथमें निवेदन कर ब्राह्मणको छत्र, पादुका और उपानत्भी दे वेदोक्त "आप्यायस्व" इस मन्त्रको तीन वार पढ़े हे राजन्, विनीताश्व! इस दानके अन्तमें साङ्गता पूर्ण होनेके लिये एक हज़ार स्वर्णमुद्रा देना चाहिये अथवा इसका आधा आधेका आधा यथासामर्थ्य देवे इस धेनु देनेसे जो फल होताहै सो आप श्रवण करें क्षीरधेनुदाता पुरुष साठ हज़ार वर्ष इन्द्रलोकमें सुखपूर्वक निवास करताहै और वहांसे जाय निज पितरोंके साथ उत्तम विमानमें बैठ ब्रह्माजीके स्थानमें प्राप्तहो ब्रह्माजीकी आयुष्भर

वहांका सुख भोग अन्तमें द्वादश सूर्यके तुल्य प्रकाशमान विमानमें बैठ वैकुण्ठधाममें जाय विष्णु भगवान्का गण होकर श्रीविष्णु भगवान्के साथ निवास करताहै वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जो मनुष्य इस क्षीरधेनुके माहात्म्यको श्रवण करें व कथन करें वे दोनों सब पापोंसे मुक्त होकर विष्णु भगवान्के धाम को जाते हैं॥

एकसौतीन का अध्याय॥

होता मुनि कहतेहैं हे राजन्, विनीताश्व! अब दधिधेनु दानका विधान वर्णन करतेहैं सो आप श्रवण करें पूर्ववत् पृथिवी गोमय से लेपन कर कुशा बिछाय उसके ऊपर कृष्ण मृगचर्म बिछाय व उसके ऊपर उत्तम वस्त्रभी बिछावे उसके ऊपर सोलह घट दधिसे पूर्ण स्थापितकर उसे गऊ करके कल्पना करे और चार घट दधिपूर्ण उसे वत्सस्थानमें कल्पित कर इन पदार्थोंसे गऊके अङ्गोंकी कल्पना करे गुड़का मुख, शर्कराकी जिह्वा, मणि के दन्त, मोतीके नेत्र, प्रशस्तपत्रके कर्ण, अगर चन्दनके स्वर्ण से मढ़े हुये शृङ्ग, ताम्रकी पीठ, नवनीतके स्तन, इक्षुके चरण, चांदीके खुर, श्वेत रेशमकी पुच्छ बनाय कांस्यकी दोहनी धर सहित वत्सके गऊको दो वस्त्रसे व ऊर्णवस्त्रसे आच्छादित कर दधिधेनुके चारों दिशाओंमें चार पात्र तिलसे पूर्ण व चारपात्र सप्तधान्यसे पूर्ण स्थापितकर उत्तम ब्राह्मण वेदपाठी सुशील कुटुम्बी दरिद्रीको बुलाय वस्त्र भूषणसे भूषित कर चन्दन, अक्षत, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्यसे दधिधेनु की पूजा कर संकल्पपूर्वक "दधिक्राव्णो" यह वैदिक मन्त्र पढ़ि ब्राह्मण को दे पादुका, छत्र और उपानत् भी देवे और दधिका भोजन कर एक दिन वा तीन दिन निर्वाहकर दानव्रत समाप्त कर एक सहस्र स्वर्णमुद्रा दक्षिणा दे तीसरे दिन ब्राह्मणको बिदा करे जो

एकही दिन का व्रत करे तो दूसरेही दिन दक्षिणा देकर विदा करे होता मुनि कहते हैं कि, हे राजन्, विनीताश्व! इस दधिधेनु का जो दान समयमें दर्शन करते हैं उनके सब पाप निवृत्त हो जातेहैं व उनकी उत्तम गति होतीहै वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! जो भक्तिपूर्वक दधिधेनु माहात्म्य व विधिको श्रवण करें व सुनावें वे दोनों सब पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकमें प्राप्त होतेहैं॥

एकसौचार का अध्याय॥

होता मुनि कहतेहैं कि, हे राजन्, विनीताश्व! अब हम नवनीत धेनुदानका माहात्म्य वर्णन करते हैं सो आप सावधान हो श्रवण करें जिसके श्रवणसे अनेक पाप निवृत्त होते हैं भूमि को गोमयसे लेपनकर कुशा बिछाय कृष्णमृगचर्मके ऊपर उत्तम वस्त्र बिछाय उसके ऊपर एक प्रस्थ नवनीत अर्थात् ताज़ा मक्खन घड़ेमें धर गोस्थानमें कल्पना करे व प्रस्थ का चतुर्थांश किसी पात्रमें धर वत्सकी कल्पना करे व इन पदार्थोंसे उस गौके अङ्गोंकी कल्पना करे गुड़का मुख, शर्करा की जिह्वा, मुक्ताके नेत्र, अगरु चन्दनके स्वर्णसे मढ़ा हुआ शृङ्ग व प्रशस्तपत्रका कर्ण, कुशाके रोम, ताम्रका पृष्ठ, सफ़ेद पट्टकी पूंछ, इक्षुके पाद, चांदी के खुर, नवनीतके स्तन बनाय उत्तम वस्त्रसे आच्छादित कर धेनुके चारों दिशाओंमें चार पात्र तिल व सप्तधान्य करके पूर्ण चार पात्र स्थापनकर चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्यसे उस धेनुका पूजन कर व चारों ओर दीपावली बार संकल्पपूर्वक यह मन्त्र पढ़ि ब्राह्मण वेदपाठी कुटुम्बी दरिद्री को देवे (मन्त्रः। ॐ पुरा देवासुरैः सर्वैस्सागरस्य तु मन्थने। उत्पन्नं दिव्यममृतं नवनीतमिदं शुभम्। आप्यायनं तु भूतानां नवनीत नमोऽस्तु ते) यह मन्त्र पढ़े इसभांति धेनुको देकर ब्राह्मणको यजमान तीन दिन अपने घरमें राख आदरसे इच्छाभोजन

करावे व तीन दिन नयनूका भोजन कर व्रत करे होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! इस भांति जो दान देवे व दान देते समय दानका जो दर्शन करें वे दोनों पापोंसे छूट शिवलोकको जाते हैं और नवनीतधेनु दाता पुरुष इक्कीस कुलके साथ शिवलोकमें निवास करताहै वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इस नवनीतधेनुके दान व माहात्म्यको जे श्रवण करें व श्रवण करावें वे दोनों सब पापोंसे मुक्त होकर विष्णु भगवान्के धामको जाते हैं॥

एकसौपांच का अध्याय॥

होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! अब हम लवण धेनुका वर्णन करते हैं सो आप सावधान होकर श्रवण करें पूर्वतुल्य गोमयसे पृथिवीका लेपन कर व कुशा बिछाय उसके ऊपर मृगचर्म व उत्तम वस्त्र बिछाय सोलह प्रस्थ लवण की गऊ कल्पना कर व चार प्रस्थका वत्स कल्पना करे व इन पदार्थों करके गऊके अङ्गोंकी कल्पना करे गुड़का मुख, शर्कराकी जिह्वा, मुक्ताके नेत्र व फलोंके दन्त सुवर्णसे मढ़े अगरु चन्दनके शृङ्ग व प्रशस्तपत्रके कर्ण, ताम्रकी पीठ, कुशाके रोम, सूत्रका पुच्छ, इक्षुका चरण, चांदीके खुर कल्पनाकर कांस्यकी दोहनी धर उत्तम दो वस्त्र ओढ़ाय घण्टासे कण्ठको भूषितकर चन्दन, अक्षत, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्यसे पूजनकर उत्तम ब्राह्मण कुटुम्बी वेदपाठी को देवे पञ्चरत्न सहित व साङ्गता के लिये एक हज़ार रजत मुद्रा दे यह मन्त्र पढ़े (ॐ इमां गृहाण भो विप्र! रुद्ररूपां नमोऽस्तुते। रसज्ञा सर्वभूतानां सर्वदेवनमस्कृता॥ कामं पूरय मे देवि रुद्ररूपे नमोस्तु ते) इस मन्त्रको पढ़ ब्राह्मणको देय तीनरात्रि लवणका पारणकर व्रत समाप्त करे हे राजन्! इस धेनुके देनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त होता हुआ रुद्रलोकमें जाकर शिवजीका गण होताहै वाराहजी कहते हैं हे

धरणि! इस लवणधेनु माहात्म्यको जो श्रद्धासे श्रवणकरे वश्रवण करावे वे दोनों सब पापोंसे छूटकर रुद्रलोकमें जा प्राप्त होते हैं ॥

एकसौछः का अध्याय ॥

होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! अब हम कर्पास धेनुका दान वर्णन करते हैं सो आप सावधान हो श्रवण करें हे राजन्! इस दानको मेष तुलाकी संक्रान्तिमें व दक्षिणायन, उत्तरायणमें युगादि मन्वादिमें ग्रहणमें व दुःस्वप्न देखनेसे इस दानको पुण्यक्षेत्रमें वा नदीतीर वा गऊकी गोशालामें देना चाहिये उत्तम सुशील कुटुम्बी दरिद्री वेदपाठीको देना भूमिको गोमयसे लेपन करके कुशा बिछाय सब भूमिमें तिलको बिखेरकर कृष्णमृगचर्म व वस्त्र बिछाय चारभार कर्पासका धेनु कल्पना कर व एकभार कर्पासका वत्स कल्पना करे व पूर्वके तुल्य गुड़का मुख शर्कराकी जिह्वा मुक्ताके नेत्र स्वर्णके शृङ्ग रौप्यखुर कुशके रोम प्रशस्तपत्रके कर्ण इक्षुके पाद चांदीके खुर सूत्रकी पूंछ कांस्य की दोहनी बनाय चन्दन, धूप, पुष्पमाला, दीप और नैवेद्यसे पूजन कर व ब्राह्मणका वस्त्र भूषणसे पूजनकर पञ्चरत्नके साथ संकल्प पढ़ इस मन्त्रसे देवे (मन्त्रः। यथा देवगणास्सर्वे त्वया हीनो न वर्तते। तथा उद्धर मां देवि पाहि संसारसागरात्) यह पढ़ ब्राह्मणको देवे व जूता, छतुरी, खड़ाऊं और जलपात्र भी देवे व यथाशक्ति हजार पांचसौ मुद्रा साङ्गतामें भी देवे होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! इस कर्पासधेनुका जो पुरुष दान करे सो सब पापोंसे मुक्तहो शिवलोकमें कल्पपर्यन्त वास करताहै और जो दानका दर्शन करे वह मनुष्य सब पापोंसे छूट स्वर्गको जाय वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस कर्पासमाहात्म्य विधानको जो श्रद्धासे सुने व सुनावे वे दोनों अनेक पापोंसे मुक्त होकर स्वर्ग को जाते हैं ॥

एकसौसात का अध्याय॥

होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! अब हम धान्य धेनु दानकी विधि वर्णन करते हैं सो आप सावधान होकर श्रवण करें जिसके दान देनेसे पार्वतीजी प्रसन्न होती हैं सो धान्य धेनुदान मेष तुलाकी संक्रान्तिमें अथवा दक्षिणायन उत्तरायण सूर्यमें वा कार्त्तिकी पूर्णिमा को देना चाहिये जिसके दान करनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्तहो दश कपिला देनेका पुण्यभागी होताहै इसका विधान यहहै कि भूमिको गोमयसे लेपनकर तिल बिखेर कुशा बिछाय तिसके ऊपर कृष्णमृगका चर्म बिछाय उत्तम वस्त्र बिछाय तिस पर चार द्रोण अन्नकी गौ कल्पना करे व एक द्रोण अन्नका वत्स कल्पना कर इन पदार्थोंसे धेनुके और अङ्गोंकी कल्पना करे मधुका मुख, शर्कराकी जिह्वा, फलोंके दांत, मोतीके नेत्र, सुवर्णयुक्त अगर चन्दनके शृङ्ग, प्रशस्तपत्रके कर्ण, ताम्रकी पीठ, सूत्रकी पूंछ, इक्षुके पैर, चांदीके खुर, मक्खनके स्तन और कुशाके रोम कल्पनाकर कांस्यकी दोहनी सहित उत्तम दो वस्त्रसे ढाँप पञ्चरत्न के साथ चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्यसे पूजनकर उत्तम वेदपाठी ब्राह्मण कुटुम्बीको बुलाय वस्त्र भूषणसे भूषितकर संकल्पपूर्वक यह मन्त्र पढ़ देवे (मन्त्रः। त्वं हि विप्र महाभाग! वेदवेदाङ्गपारग। मया दत्तां च गृह्णीष्व प्रसीद त्वं द्विजोत्तम॥ प्रीयतां मम देवेशो भगवान्मधुसूदनः। यावल्लक्ष्म्यस्ति गोविन्दे स्वाहा चास्ति विभावसौ॥ शक्रे शचीति विख्याता शिवे गौरी च संस्थिता। गायत्री ब्रह्मणि प्रोक्ता ज्योत्स्ना चन्द्रे रवेः प्रभा॥ बुद्धिर्बृहस्पतौ ख्याता मेधा मुनिषु सत्तमा। तद्वत्सर्वमयी धेनुर्धान्यरूपा मयि स्थिता) यह मन्त्र पढ़ तीन परिक्रमा कर ब्राह्मणके दक्षिण हाथमें निवेदन कर यथाशक्ति साङ्गता दे ब्राह्मणको बिदा करे होता मुनि कहते

हैं हे राजन्, विनीताश्व ! इस धान्यधेनु दान देनेसे जब तक पृथिवी चन्द्रमा सूर्य और समुद्र रहे तब तक दाता अनेक भोगों करके युक्त स्वर्गमें निवास करता है व कल्पान्तमें मुक्तिभागी होताहै वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस धान्यधेनुको जो दे और जो दानसमयमें दर्शन करे वे दोनों इस लोकमें सब सुख भोग अन्तमें उत्तम विमानमें बैठ अप्सराओं करके सेवित कैलासको जाय एक कल्प वास करते हैं और वहां से कल्पान्तमें आय पृथिवीमें जन्म ले जम्बूद्वीपके अधिपति होते हैं व हे धरणि! इस कथाको भक्ति श्रद्धा करके युक्त जो सुने व सुनावे वे दोनों सब पापोंसे मुक्त होकर उत्तम गतिको पातेहैं ॥

एकसौआठ का अध्याय ॥

होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व ! अब हम कपिला का माहात्म्य वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो जिस के दान करनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्तहो श्रीविष्णुजी भगवान् के धामको जाताहै हे राजन् ! जिस गौका सब अङ्ग शुक्लवर्ण हो उसे कपिला कहते हैं व कपिलामें ब्रह्माण्डके सब तीर्थ निवास करते हैं जो मनुष्य प्रातःकाल उठ पवित्रहो कपिलाके गलाको धोय वह जलले शिरसे स्नानकरे तो तीस वर्षका किया हुआ पाप उसी क्षण नष्ट होजाताहै जिसभांति अग्नि सूखे काष्ठको भस्म करताहै वैसेही वह जल स्नान करनेहारे मनुष्यके पातक को भस्म करताहै व हे राजन् ! प्रातःकाल उठ पवित्रहो जो मनुष्य कपिलाकी प्रदक्षिणा करते हैं उनको संपूर्ण पृथिवीकी प्रदक्षिणाका फल होताहै और एकही प्रदक्षिणा करनेसे दश जन्मका किया पाप निवृत्त होताहै और जो पुरुष व्रत करके कपिलाके मूत्रका स्नान करते हैं उनको गङ्गादि सर्व तीर्थोंके स्नानका फल होताहै सो पुरुष एकही दिनके स्नानसे यावज्जीव

के पापोंसे निवृत्त होताहै और हे राजन्! जो मनुष्य एक सहस्र गोदान करताहै और जो एक कपिला दान करता है वे दोनों एक तुल्य होते हैं यह ब्रह्माजीका वचनहै और गौवोंका खुजलाना अत्यन्त उत्तमहै असंख्य पुण्य देनेहारा है जो गौका नित्य पालन करते हैं समय २ में जल व तृण प्रीतिसे देते हैं वे गोमेध यज्ञके फलभागी होते हैं जो पुरुष सर्वकालमें नियमपूर्वक श्रद्धा से कपिलाका सेवन करते हैं वे इस लोकमें धन धान्य पुत्र पौत्र युक्तहो संसारके अनेक सुख भोग अन्तमें निष्पापहो उत्तम विमान में बैठकर विष्णुभगवान्के लोकको जाते हैं॥

एकसौनव का अध्याय॥

होता मुनि कहते हैं हे राजन्, विनीताश्व! अब हम उभयमुखी गौके दानका विधान वर्णन करते हैं सो आप श्रवण करें कपिला नाम गौ यज्ञके निमित्त सम्पूर्ण उत्तम पदार्थके तेजको लेकर ब्रह्माजीने उत्पन्न किया इसलिये कपिला उत्तमोंमें उत्तम मङ्गलोंमें मङ्गल पुण्योंमें पुण्य सब तपोंका तप और व्रतोंका व्रत दानोंका दान निधियोंकी निधि कपिलाहै जो २ पृथिवीमें पुण्यतीर्थ हैं और जो २ पुण्यक्षेत्र हैं अग्निहोत्र आदि सत्कर्म सो सब कपिलाके अङ्गोंमें निवास करते हैं कपिलानाम जो गौ है सो हे राजन्! सेवा करनेहारेको संसारसागरसे पार करती है और जो शूद्र कपिला गौके दुग्धको पान करे उसे पतित जानना वह चण्डालके तुल्य होताहै इसलिये यह गौ केवल अग्निहोत्र के योग्य व पितृकर्म योग्यहै व उत्तम ब्राह्मण जो गायत्री मन्त्र के जपनेवाले हैं उनके योग्यहै इस निमित्त अपना कुशल लोक व परलोकमें चाहे तो शूद्र कपिला गौ न रक्खे और यदि लोभसे शूद्र होके कपिला गौका दूध वा दही वा घी खाय तो अपने पितरोंके साथ रौरव नरकमें जाताहै व जितने दिन वह

गौ जीवे उतनेही दिन उस शूद्रके पितर विष्ठा खाते हैं और मरने पर रौरव नरक वास होताहै वहां रौरवमें एककोटि वर्ष रहके पीछे पृथ्वीमें शूकरयोनिमें जन्म पाताहै व उसको भोगके श्वान-योनिमें जन्म पाताहै वहभी भोगके विष्ठाका कृमि होताहै और जिस शूद्रके घरमें कपिला गौ हो उसका दिया दान जो ब्राह्मण ले उस दिनसे उसके पितर नरकवासी होतेहैं इसलिये उस ब्राह्मणको पंक्तिसे बाहर करना चाहिये व उस शूद्रप्रतिग्रही ब्राह्मणसे बात करना भी न चाहिये व एकासनमें बैठना तो कौन कहे यदि प्राजापत्य व्रत करे तो वह ब्राह्मणपंक्तिके योग्य होताहै वाराह नारायण कहते हैं हे धरणि! कपिला गौ को उत्तम वेदपाठी ब्राह्मण बुलाय विधिसे पूजनकर जब उस गौके प्रसवका समय आवे उससमयमें ब्राह्मणका पूजन कर व गौका पूजन कर कांस्य-दोहनी, स्वर्णशृङ्गी, रौप्यखुरी व उत्तम ऊर्ण वस्त्र वा पट्टवस्त्र ओढ़ायके जिस समय गौकी योनिसे वत्स निकलने लगे मुख-मात्र देख पड़े उस काल उसका उभयमुखी नामहै उससमय संकल्पपूर्वक जलके साथ ब्राह्मणको दे और यह मन्त्र पढ़े (ॐ इमां गृह्णोभयमुखीमुभयत्र शमस्तु वै। तदेवं सविद्ध्यर्थं सदा स्वस्तिकरी भव) यह मन्त्र पढ़ दे व ब्राह्मण गौको ग्रहणकर यह मन्त्र पढ़े (प्रतिगृह्णामि त्वां धेनो कुटुम्बार्थं विशेषतः। शुभं भवतु मे नित्यं देवधात्रि नमोऽस्तु ते। ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु क इदं कस्मादात् कामायादात् कामोऽदात्) यह मन्त्र पढ़ ग्रहण करे और यथाशक्ति स्वर्ण दक्षिणा दे बिदा कर कुछ दूर ब्राह्मणके साथ जाय वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जो इस भांति उभयमुखी गौका दान करते हैं उनको पृथिवीदान देनेके तुल्य फल होताहै व उनकी इक्कीस पीढ़ी विष्णु भगवान्के धाम को उत्तम विमानमें बैठ जाती हैं व जो ब्राह्मणका धन चोरावे गोवध करे गर्भपातन करे और बंचन करनेवाला ब्रह्म-

दूषक ब्रह्मनिन्दक आदि अनेक पातकों करके युक्त इस उभय-मुखी गोदानसे पवित्रहो उत्तम गतिको जाते हैं और हे धरणि! जो मनुष्य इस इतिहासको प्रातःकाल उठके पाठ करते हैं वे वर्ष-मात्रके पातकोंसे मुक्त होते हैं और जो इस दानमाहात्म्यको पितृ-श्राद्धके समय व ब्राह्मणभोजन समयमें सुनाते हैं उनके पितर शतवर्ष पर्यन्त तृप्त रहते हैं और जो इस माहात्म्य को सुने वा सुनावे वे दोनों सब पापोंसे छूटकर उत्तम लोकको जाते हैं होता मुनि विनीताश्व राजासे कहते हैं कि; हे राजन्! इस प्रकार उ-भयमुखी गौ देना चाहिये इससे परे कोई दान नहीं है सब पापों को दूर करनेहारा व भुक्ति मुक्तिका देनेहाराहै और हे राजन्! तिलधेनुसे लेकर सब भांतिकी धेनुओंके दानका विधान हमने वर्णन किया इन दानोंके करनेसे सब भांतिके पातक निवृत्त होते हैं व भुक्ति-मुक्ति-फल प्राप्त होता है और हे राजन्! जो तुम क्षुधा व तृषा करक पीड़ित होरहेहो इसलिये यह समीप कार्त्तिकी पूर्णिमा प्राप्त है इसमें सुवर्णका पुरुष बनाय व सब धान्य सुवर्णके साथ आप दान करके निज पुरोहितको दो तो इस क्लेशसे निवृत्तहो सर्वदा तृप्त रहोगे इस ब्रह्माण्ड दान देनेसे सब जीवों की तृप्ति होती है इस प्रकार होता मुनिका वचन सुनि राजा विनीताश्व विधानपूर्वक ब्रह्माण्ड दान देकर क्षुधा तृषाके क्लेश से निवृत्तहो निज विमानमें बैठ कर आनन्दपूर्वक देवलोक को गया वशिष्ठजी महाराज श्वेताश्वसे कहते हैं कि हे राजन्! इसी भांति तुमभी ब्रह्माण्डदान कर इस क्षुधा तृषाके क्लेशसे छूट तृप्त होगे इस वशिष्ठजीके वचनको सुन राजा श्वेताश्व वहांही वशिष्ठ जीके कहे अनुसार सम्पूर्ण क्रमसे दानकर व अन्तमें यथाविधि ब्रह्माण्ड दान कर सब क्लेशोंसे मुक्तहो स्वर्गको जाता भया वाराह जी कहते हैं हे धरणि! यह कथा हमने वर्णन की इस कथाके श्रवणसे वेदोंकी संहिताके श्रवणका फल होताहै और सब पाप

निवृत्त होते हैं यह कथा प्रथम ब्रह्माजीने निजपुत्र पुलस्त्यजीसे वर्णन की और पुलस्त्यजीने परशुरामजी से कहा और परशुराम जीने वशिष्ठजी से कही वशिष्ठने उग्रसे व उग्र ऋषिने राजा मनुसे वर्णन की यह तो प्रथमकल्पका वृत्तान्तहै अब हे धरणि! दूसरे कल्पका वृत्तान्त श्रवण करो दूसरे कल्पमें हमसे तुमको बोध होगा व तुमसे कपिलादिक मुनियोंको प्राप्त होगा व कपिलादिकोंसे व्यासजीको लाभ होगा व व्यासजीके शिष्य रोमहर्षण आदि कई उत्तम २ अधिकारी होंगे उन्हींको प्राप्त होगा और रोमहर्षणसे शुनकनाम ऋषिको प्राप्त होगा औ श्रीव्यास भगवान्के किये हुये अठारह पुराण और उपपुराणोंको रोमहर्षण नाम व्यासजीके शिष्य शौनकादि मुनीश्वरों को श्रवण करावेंगे नैमिषारण्यमें जिन पुराणोंका नाम ब्राह्म, पाद्म, वैष्णव, शैव, भागवत, नारदीय, मार्कण्डेय, आग्नेय, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त्त, लिङ्ग, वाराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मात्स्य, गरुड़ और ब्रह्माण्ड हे धरणि! इन्होंको जे श्रवण करेंगे वो अनेक पापोंसे मुक्तहो धन संतान युक्त विष्णु भगवान्के धामको जायँगे॥

एकसौदश का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं; हे शौनकादिक! श्रीवाराहजीके मुखारविन्दसे इतनी कथा सुनि धरणी हाथ जोरि अपनेको धन्य मानि माथ नवाय विष्णुभगवान्की स्तुति करनेलगी (प्रसीद देवदेवेश लोकनाथ जगत्पते। भक्त्या त्वां शरणं यामि प्रसीद मम माधव। त्वमादित्यश्च चन्द्रस्त्वं यमस्त्वं धनदस्तथा। वसवो वरुणश्चासि अग्निर्मरुत एव च। अक्षरश्च क्षरश्चासि त्वं दिशो विदिशो ह्यसि। मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नारसिंहोऽथ वामनः। रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्की त्वमेव हि। एवं पश्यसि योगेन श्रूयते त्वं महायशाः। युगादियुगसाहस्रप्रवर्तकस्त्वो भवान्।

पृथिवीवायुराकाशमापोज्योतिश्च पञ्चमम्। शब्दस्पर्शश्च रूपश्च रसोगन्धस्त्वमेव हि। सग्रहाणि च ऋक्षाणि कलाकाष्ठामुहूर्तकाः। ज्योतिश्चक्रं ध्रुवश्चासि सर्वत्र द्योतते भवान्। मासः पक्षमहोरात्रमृतुस्संवत्सराश्चापि। मासाः पक्षोदिनान्येव षड्रसाश्चापि संयमाः। सरितस्सागराश्च त्वं पर्वताश्च महोरगाः। त्वं मेरुर्मन्दरो विन्ध्यो मलयो दर्दुरो भवान्। हिमवान्निषधश्चासि सचक्रोसि वरायुधः। धनुषाश्च पिनाकोऽसि सांख्यं योगोऽसि चोत्तमम्। परंपरासि लोकानां नारायण सनातन। संक्षिप्तश्चैव विस्तारो गोप्ता यज्ञश्च शाश्वतः। यज्ञानाञ्च महायज्ञो यूपानामसि संस्थितः। वेदानां सामवेदोऽसि साङ्गोपाङ्गो महाव्रतः। गर्जनं वर्षणं चासि त्वं वेधाश्चानृतानृते। अमृतं सृजसे विष्णो येन लोकानधारयत्। त्वं प्रीतिस्त्वं परा प्रीतिः पुराणः पुरुषो भवान्। ध्येयाध्येयं जगत्सर्वं यच्च किञ्चित्प्रवर्त्तते। सप्तानामपि लोकानां त्वं नाथस्त्वमसंग्रहः। त्वं च कालश्च मृत्युश्च त्वं भूतो भूतभावनः। आदिमध्यान्तरूपोऽसि मेधा बुद्धिः स्मृतिर्भवान्। आदित्यस्त्वं युगावर्तस्त्वं तपस्वी महातपाः। अप्रमाणः प्रमेयोऽसि ऋषीणां च महाऋषिः। अनन्तश्चासि नागानां सर्पाणामसि तक्षकः। उद्भवः प्रभवश्चासि वरुणश्चारुणो भवान्। क्रीडाविक्षेपणश्चासि गृहेषु गृहदेवताः। सर्वात्मकस्सर्वगतो वद्धको मन एव च। युगं मन्वन्तरस्त्वं च वृक्षाणां च वनस्पतिः। श्रद्धासि त्वं च देवेश दोषहन्तासि माधव। गरुडेन महात्मानं वहसे त्वं परायणम्। दुन्दुभिर्नेमिघोषैश्च आकाशगमनो भवान्। जयश्च विजयश्चासि भूतात्मंस्त्वं भयापहः। सर्वात्मकः सर्वगतः चेतनो मन एव च। भगस्त्वं विषलिङ्गश्च परस्त्वं परमात्मकः। सर्वभूतनमस्कार्यो देवदेव नमोनमः। आदिकालात्मकः कृष्णः सर्वलोकात्मको विभुः। इति) सूतजी कहते हैं, हे शौनक! इस स्तुतिको जो भक्तिसे नित्य पाठ करे व सुने वह पुरुष सब आधि व्याधियोंसे मुक्तहो

कर अभीष्ट फलको प्राप्त होताहै और धन स्त्री पुत्र पौत्र आदि अनेक सुख भोग अन्तमें विष्णु भगवान् के लोकमें जाय निवास करता है॥

एकसौग्यारह का अध्याय॥

सूतजी कहतेहैं हे शौनकजी! पृथिवी इसभांति वाराहभगवान् की स्तुतिकर प्रसन्न देखि कहनेलगी हे भगवन्! आप कृपा करके मेरे संशयको निवृत्त करें मेरे यह संदेहहै कि आधार किसको कहते हैं और उपयोग क्या पदार्थहै व समय २ में जो कर्म किया जाताहै उसका क्या फलहै? और त्रिकालसंध्या क्या पदार्थहै स्थापन क्या होताहै आवाहन विसर्जन किसका नाम है? और चन्दन, धूप, पाद्य आदि किस प्रकारसे करना चाहिये और स्थानलेपनकी रीति व दीपदान करना नैवेद्य नानाभांति किस विधिसे होताहै व विष्णु भगवान्का क्या आसनहै किस भांति शयन करना व पूजा किस रीतिसे होना चाहिये प्राणप्रतिष्ठा देवताकी कैसेहो और वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरत्, हिम और शिशिर इन ऋतुओंमें कैसे उत्साह पूजन करना इन्होंमें क्या पदार्थ योग्यहै व क्या त्याग करना चाहिये और नवान्न निवेदन किस प्रकारसे होताहै पूजामें किस २ वस्तुका त्याग व स्वीकारहै और व्रत करनेकी क्या रीतिहै व विष्णु भगवान्को शुक्ल, पीत, हरा, कृष्ण इन रङ्गोंके वस्त्रमें कौनसा प्याराहै? और मधुपर्क किसका नामहै क्या गुणहै और मधुपर्कके भक्षणसे किस लोकमें जाते हैं कितना प्रमाण मधुपर्क देना चाहिये और स्तुति करनेकी क्या रीतिहै और कौन २ सा मांस भक्षणयोग्यहै कौनसे फल व शाक पवित्रहैं और अभ्यागतके आनेपर किस रीतिसे पूजा करनी चाहिये व आवाहन किस मन्त्रसे होताहै और आपके भक्त भोजन किस रीतिसे करें और जो मनुष्य नित्य एकाहार

व्रत करते हैं व कृच्छ्रचान्द्रायण प्राजापत्य आदि व्रत करते हैं उन्होंकी कौन गति होतीहै ? और व्रत करके जो शरीर त्याग करते हैं व बहुत आहार करनेसे जिनका शरीर त्याग होताहै वे किस गतिको प्राप्त होते हैं ? और हे भगवन् ! जो लवण त्याग करते हैं व जो भिक्षान्नसे जीवते हैं व आपके क्षेत्रोंमें जो शरीर त्याग करते हैं जो पञ्चाग्नि सेवन करते हैं जो कंकरोंपर शय्या करके शयन करते हैं जो झूला झूलते हैं जो गोष्ठमें सदा निवास करते हैं जो पञ्चगव्य नित्य पान करते हैं जो गोमय नित्य भक्षण करते हैं जो सक्तु नित्य भक्षण करते हैं जो नित्य दूधपान करते हैं जो पाषाण भोजन करते हैं जो नित्य दूर्वा भक्षण करतेहैं जो नित्य शिरके ऊपर दीप जलाके खड़े रहते हैं जो बैठके दीपको धारण करते हैं जो उत्तान पड़के दीप धारण करतेहैं जो दण्ड-वत् करके वेदका परिक्रम करते हैं जो गृहस्थ पुत्र स्त्री आदि कुटुम्बको त्यागि आपका भजन करते हैं इन सम्पूर्णोंकी क्या २ गति होतीहै ? सो आप वर्णन करें आप सर्वज्ञहैं हे भगवन् ! लोकके माता पिता व सब कर्मके साक्षी आपहैं लोकके हित वास्ते आप वर्णन करें जिसके श्रवणसे सब भांति चित्तका संतोष होय हे स्वामिन् ! मैं आपकी शिष्या व दासीहूं यहभी वर्णन कीजिये जो जलशयन करते हैं जो ऊर्ध्वबाहु उठाये रहते हैं और जिनके मुखसे नित्य अहर्निश नारायण का नाम उच्चारण होता है और जो शिरश्छेद समयमेंभी नारायण का नाम नहीं भूलते इन सम्पूर्णोंकी क्या गति होती है ? यह मेरी प्रीतिके लिये और संसारके धर्मप्रवृत्ति होनेको दया करके आप वर्णन करें ॥

एकसौबारह का अध्याय ॥

इस भांति धरणी की विनययुक्त वाणी सुनि वाराहजी कहने लगे कि हे धरणि ! तुमने बहुत उत्तम प्रश्न किया कि जिसके

श्रवण करनेसे सब पातक दूर होते हैं और मनुष्य उत्तमगतिको प्राप्त होते हैं अब सावधान हो निज प्रश्नोंके उत्तरको श्रवण करो हे धरणि! हमारी प्रसन्नता नतो किसी भांतिके दानसे होती है व न व्रत करनेसे जैसी भक्तिसे होती है और जो सावधान चित्त होकर भक्तिसे नम्रहो हमारा स्मरण करते हैं रात्रिमें दिन में उजेरेमें अंधेरेमें शुद्धहो अशुद्धहो जिस किसी अवस्थामें वे मनुष्य हमको बहुत प्रियहैं और हे धरणि! जो भक्तिपूर्वक द्वादशीतिथिका व्रत करके हमारा स्मरण करते हैं और (ॐ नमो नारायणाय) इस अष्टाक्षरमन्त्रका जप करते हैं व इसी मन्त्रसे हमारा तर्पण उत्तम पवित्र जलसे करते हैं वो पुरुष जितने जलके विन्दु हमारे निमित्त देते हैं उतनेही कल्प इक्कीस पीढ़ियोंके साथ स्वर्गवास करते हैं और जो द्वादशीव्रत करके सफ़ेद पुष्प व उत्तम धूपसे हमारा पूजन करते हैं वे मनुष्य हमको बहुत प्यारे होते हैं और हे धरणि! द्वादशीका व्रत करके जो मनुष्य श्रद्धा से उत्तम परिडतको बुलाय व सत्कारपूर्वक पूजाको कर हमारा चरित्र श्रवण करते हैं वे अवश्य हमारे लोकमें निवास करते हैं और हे धरणि! जो मनुष्य हमारी प्रसन्नताके लिये श्यामाक, साठी, गोधूम, मूंग, चावल, यव, कांकुनि और नीवार अर्थात् जलके भीतर जो चावल होताहै जिसे मध्यदेशमें "तिनीपसाई" कहते हैं इन्होंको भोजन कर भक्तिसे हमारी सेवा करते हैं वे पुरुष सब पापोंसे मुक्त होकर हमारे कृपापात्र होते हैं और हमारे जो अस्त्रहैं शंख, चक्र, हल, मुसल इन्होंका दर्शन पाते हैं और हे धरणि! जो ब्राह्मण भक्तियुक्त हो षट्कर्म करता हुआ काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सरता करके रहित शास्त्रके कहे हुये विधानसे जितेन्द्रिय होके हमारा भजन करते हैं और कूप, तड़ाग, वापी आदि बनाते हैं वे हमको प्राप्तहो अखण्ड वैकुण्ठसुख भोगते हैं और हे धरणि! जो क्षत्रिय शान्तचित्त हो दान यज्ञ

आदि अनेक उत्तम २ कर्म करते हैं और अहंकारसे मुक्तहैं निन्द्य कर्मोंसे सदा डरतेहैं गुरुभक्तहैं और थोड़ा वचन बोलतेहैं अतिथि और ब्राह्मणकी सेवा करते हैं और किसीकी आत्माको दुःख नहीं देते भक्तिसे नित्य हमारा भजन करतेहैं वे हमारे लोकमें प्राप्त होते हैं हे धरणि! अब उत्तम वैश्योंके धर्मका श्रवण करो जो वैश्य हमारी भक्ति करके युक्तहो लाभ हानिमें समबुद्धि रख शास्त्रके कहेहुये धर्ममें तत्परहो गुरु, वृद्ध, माता, पिता आदिकी सेवा करते हैं और ऋतुकालमें स्त्रीका संग करते हैं वे हमको बहुत प्रिय हैं हे धरणि! अब शूद्रोंका धर्म श्रवण करो जिस कर्मके करनेसे शूद्र उत्तम गतिको जाते हैं व हमारे प्रिय होते हैं जो शूद्र अहंकार त्याग करके ब्राह्मणआदि तीन वर्णोंकी सेवा निश्छल होके करें व उससे जो लाभहो उसमें निर्वाह करें व पवित्र रहें तीन वर्णोंको प्रीतिसे नमस्कार करें व सबसे नम्र रहें सत्य बोलें चोरी न करें ऐसे शूद्र हे धरणि! ऋषियोंसेभी अधिक हमको प्रियहैं और हे धरणि! जिस भांति चारों वर्ण प्रमाद छोड़ निज २ कर्ममें तत्पर हो यथालाभमें संतुष्ट हों ऋतुओंके धर्म, शीत, वर्षा, ग्रीष्म आदिको सहते हुये नीतिसे धनको संग्रह कर स्त्री, पुत्र, माता, पिता आदिका अशक्त होके पालन करें और समयमें जो अभ्यागत आवे उसकी आदरसे सेवा कर भोजन दे आप भोजन करे व दोनों सन्ध्यामें नित्य निद्रा त्याग संसारसे चित्तको खैंच हमारा स्मरण करे व बन पड़े तो प्रातःकाल सायंकाल मलमूत्र त्यागकर स्नान कर पवित्रहो हमारी मूर्तिको भक्ति करके स्नान कराय चन्दन, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य आदि जो २ प्रियपदार्थ मिलें सो २ हमारे अर्पणकर ध्यान लगाय हमारे मन्त्रका जप करे व कुछ न बने तो केवल जल, फल, फूल, दूर्वा आदिहीसे हमारा पूजन करे और जो कुछ भोजनका पदार्थ है सो हमारे अर्पण कर आप खाय इस भांति

हे धरणि! जे करें वे सब पापोंसे मुक्त होकर हमारे प्यारे होते हैं और अनेक जन्मोंके पापोंसे छूटकर हमारे वैकुण्ठधामको प्राप्त होते हैं॥

एकसौतेरह का अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जे मनुष्य हमारी आज्ञामें युक्त हो एकचित्त अहंकाररहित इन्द्रियोंको जीत शान्तचित्तहो हमारा भजन करते हैं और फल, मूल, शाक, दुग्धआदि पदार्थों का सेवन कर द्वादशी व्रत करते हैं और व्रतमें मांसभक्षण नहीं करते षष्ठी, अष्टमी, अमावस और दोनों पक्षोंकी चतुर्दशीको मैथुन नहीं करते वे मनुष्य धर्मात्मा हैं और पवित्र हैं वे अवश्य विष्णुलोकको जाते हैं अब हे धरणि! जो २ पदार्थ निन्द्य हैं अर्थात् न करना चाहिये सो २ श्रवण करो जो मनुष्य अहंकारमें डूब कर हमारा ध्यान, पूजन, जप आदि कर्म करते हैं वह निष्फल होता है जो भक्ष्याभक्ष्यका विचार नहीं रखता और सब पदार्थोंका विक्रय करता है व किसीसे नम्र नहीं होता अर्थात् नमस्कार प्रणाम किसीसे नहीं करता व हमारा भजन करता है वो निष्फल जानो और भोजनके समय अतिथि आजाय उसे जो नहीं देते आप भोजन करते हैं उन पापात्मोंका सब कर्म निष्फल होता है व पंक्तिमें बैठके भोजन जो एक तुल्य सबको नहीं देते पंक्तिभेद करते हैं वेभी पापात्मा हैं उनका किया कर्म सब निष्फल होता है व जन्म ले सब प्रकार समर्थहो संपूर्ण आयुर्बल संसारमें खोदिया जिसने तीर्थ, व्रत, देवपूजा, दान, कूप, तड़ाग, बागीचा आदि कुछ सुकृत न किया उन्होंका जन्म लेनाही वृथा होगया केवल माताको दुःख देनेहीका जन्म हुआ इसलिये उनके सब कर्म निष्फल हैं और हे धरणि! कोई मनुष्य संसारमें जन्म ले शरीरपालनके निमित्त पराये पीछे २ जीविकाके निमित्त दौड़ते हैं और कोई धनी होके अनेक भांतिके चैन उड़ाते हैं व कोई

अन्न विना भूखे मरतेहैं कोई उत्तम वस्त्र धारतेहैं कोई नङ्गे घूमतेहैं कोई उत्तम शय्यापर सोते हैं किसीको भूमिमें तृणभी नहीं मिलता कोई पण्डितहैं कोई जड़ मूर्ख जिनको अक्षर उच्चारणही दुर्लभहै और कोई धन होने परभी अन्न वस्त्रसे क्लेशित रहते हैं कोई निर्धनभी सुखी होतेहैं और किसीके दो स्त्रियांहैं तिनमें एकका मान एकका अपमान होताहै ये सब हे धरणि ! खोटे कर्मोंके फलहैं कि जो संसारमें मनुष्य जन्म पाय उत्तम कुल और सुन्दररूप पाय हमारा भजन नहीं करते केवल देहके पोषणमें और विषयमें सब धर्म भूल आयुर्बलको नष्टकर कीड़ेसे जन्मते रहतेहैं इससे इन मूढ़ोंके लिये और क्या दण्ड होना चाहिये ? हे धरणि ! इनको यही दण्ड बहुतहै कि जो मनुष्यका जन्मही निष्फल बीतजाना यह सब खोटे संगोंका व खोटे कर्मोंका फल है अब हे धरणि ! उत्तम २ कर्म वर्णन करतेहैं सो श्रवण करो जो पुरुष शुद्धचित्तहो नियमसे हमारा पूजन कर अनेक भांति की नैवेद्य हमारे अर्पण कर व हमारा उच्छिष्ट मान भोजन करते हैं और तीनों कालमें अर्थात् प्रातःकाल मध्याह्नकाल और सायंकालमें सावधानहो संध्यावन्दन करके मनको स्थिरकर हमारा ध्यान करते हैं व देवता अतिथि आदिकोंको संतुष्ट कर आप भोजन करते हैं और जिन्होंके घरमें आयके अतिथि निराश नहीं जाते अर्थात् सत्कारपूर्वक संतुष्ट होके जाते हैं व जिन्हों की अमावास्या तिथि पितरोंके पिण्डदान तर्पणसे खाली नहीं जाती प्रति अमावास्यामें पितृयज्ञ हुआ करतीहै और जो आप साधारण अन्नसे क्षुधा शान्ति करके संतुष्ट होते हैं व आश्रितों को उत्तम २ पदार्थ भोजन कराते हैं और जो अनेक विवाह करके सब स्त्रियोंको एक तुल्य सत्कार करते हैं और जो अति रूपवती परनारीको देखि मनको चलित नहीं करते पापदृष्टिसे नहीं देखते हैं और जो पुरुष रत्नोंके भूषण, सुवर्ण, मोती, मूंगा

आदि भांति २ के नानाविध पदार्थोंको लोष्ट, पाषाण अर्थात् पत्थर कोयलाके तुल्य निकम्मा समझते हैं और जो संग्रामके मध्य भय छोड़ निज शरीर त्याग करते हैं हे धरणि ! ये पुरुष धन्य हैं और महात्मा हैं इनके ऊपर हम सदा प्रसन्न रहते हैं अन्तमें इन पुरुषोंको हम वैकुण्ठवास देते हैं और हे धरणि ! यह सब जो हमने वर्णन कियाहै ये गुण वे हमारी अनुग्रह नहीं होते अब स्त्रियोंके उत्तम गुण श्रवण करो जिन गुणों से स्त्री लोक परलोकमें गति पाती हैं व सुखी रहती हैं हे धरणि ! वे स्त्री धन्य हैं व विरल हैं जो सब भांति निजपतिको ईश्वरमान पूजन करती हैं और संतुष्ट रखती हैं और जो स्त्री सासुकी सेवा करती हैं आप सदा पवित्र वस्त्र धारण करती हैं शृङ्गारसे युक्त रहती हैं और आलस्य त्याग घरके सब कार्यमें तत्पर रहती हैं और समय समयमें निज कुटुम्बको भोजनादिक सेवासे प्रसन्न रखती हैं मिथ्या नहीं बोलतीं वो स्त्री धन्य हैं सदा धन पुत्र कर के सुखी रहती हैं और अन्तमें उनको उत्तम लोक मिलताहै अब गृहस्थियोंके साधारण अपराध वर्णन करते हैं सो श्रवण करो जे पुरुष कुसुमका शाक भक्षण करते हैं वे पापभागी होते हैं जे पराया धारण किया वस्त्र धारते हैं और जो नवीन अन्न बे देवता पितरके निवेदन किये आप भोजन करते हैं जो निज शरीर का चन्दन पुष्प आदिसे भूषित कर पीछे हमारा पूजन करते हैं और पैरोंमें जूता पहिन हमारे पूजनकी सामग्री इकठ्ठी करते हैं और जो हमारे मन्दिरका द्वार विना नगारा अथवा घण्टा आदि शब्द किये उघाड़ते हैं और जो भोजनके अर्पणसे दुःखीहो हमारे पूजनको करते हैं हे धरणि ! ये मनुष्य अपराधी गिने जाते हैं और इनके ऊपर हमारा कोप समझना चाहिये इसलिये जो २ पदार्थ त्याग करने योग्य हैं उन्हें त्यागदेवे और जो २ ग्रहणके योग्य हैं उनका ग्रहणकर दृढ़ नियममें टिक उदारचित्त

हो इन्द्रियोंको कुमार्गसे रोंक निज स्त्रीमें प्रीति रख शास्त्रकी आज्ञानुसार आलस्यसे रहितहो मेरे कर्ममें तत्परहो स्त्रीहो वा पुरुष हे धरणि! जो इस भांति मेरा भजन करेंगे वे अवश्य मेरे प्रीतिपात्र होंगे जो पुरुष यथार्थभक्त होंगे उनके कुटुम्ब, स्त्री, पुत्र, माता, पिता सब उसके पुण्यसे उत्तमगतिभागी होंगे और जो स्त्री यथार्थभक्ता होगी उसके पुण्यसे उसके पति आदि श्वशुरकी इक्कीस पीढ़ी व पिताकी इक्कीस पीढ़ी सब उत्तमगतिभागी होंगे इसलिये चारों वर्णमें कोई हो स्त्री वा पुरुष जो यथार्थ भजनमें तत्पर रहे वो हमको बहुत प्रियहैं व उनकी सदा हम रक्षा करतेहैं अनेकों विघ्नोंको निवृत्त करके उन्हें सुखी रखतेहैं हे धरणि! यह अतिउत्तम व पवित्र चरित्र हमने वर्णन किया व तुम हमारी प्रियाहो व भक्ताहो इस इतिहासको गुप्त रखना जो श्रद्धाहीन, मूर्ख, वञ्चक, पिशुन, नास्तिक, दीक्षाहीन, शठ, परस्त्रीलुब्ध, कृपणहों उनको नहीं देना और जो श्रद्धावान्, संतोषी, गुरुभक्त, विष्णुभक्तितत्पर, उदारहों उनको अवश्य देना हे धरणि! जो २ तुमने लोकके हितके लिये पूछा सो २ हमने वर्णन किया अब क्या सुना चाहती हो?॥

एकसौचौदह का अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! अब नित्य पूजाविधान श्रवण करो जिसके करनेसे हमारी कृपा होती है प्रातःकाल उषःकालमें उठ शौच स्नानसे निवृत्तहो दीपको चैतन्य कर हाथको पृथिवी में पोंछ जलसे पवित्रहो हमारे चरणोंको दण्डवत् प्रणामकर विहित काष्ठके दन्तधावनको ले हमारी मूर्तिको समीप ल्याय इस मन्त्रसे निवेदन करे (मन्त्रः। ॐभुवनभवनरविसंहरणअनन्तमध्यगृह्णेमन्दन्तधावनम्) यह पढ़ दन्तकाष्ठ हमारे मुखमें लगाय पवित्रजलसे मुख धोय पुष्पमाला उतार निज शिरमें धारणकर

हाथ धोय इस मन्त्रको पढ़ हमको आचमन करावे (मन्त्रः। ॐ तद्भवांस्त्वं गुणश्चैव आत्मनश्चापि गृह्णतः। शुद्धतत्त्वेन शीतेन वारिणास्यं विशोधय) इस मन्त्रसे हमारा मुख प्रक्षालन कर हाथ धोय अष्टाक्षर मन्त्रसे चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य और पुष्पाञ्जलि दे इस मन्त्रको पढ़के (मन्त्रः। ॐ यष्टारं सर्वयज्ञानां भूतस्रष्टारमेव च। पुष्पाञ्जलिं ददाम्येतन्माधवाय गृहाण तत्) यह मन्त्र पढ़ि पुष्पाञ्जलि दे दण्डाकार भूमिमें गिर दोनों हाथोंसे हमारे चरणोंको स्पर्श करता हुआ (ॐ जनार्दन प्रसीद) यह उच्चारण कर यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐ लब्ध्वा संज्ञां च त्वयि नाथप्रसन्ने त्वदिच्छातो ह्यङ्गिनां चैव मुक्तिः। यतस्त्वदीयः कर्मकरोहमस्मि त्वयोक्तं यत्तेन देवः प्रसीदतु) यह मन्त्र पढ़ि दण्डवत् प्रणामकर भक्तिसे नम्रहो घृतसे वा तैलसे अभ्यञ्जन करे और इस मन्त्रको पढ़े (मन्त्रः। स्नेहं स्नेहेन संगृह्य लोकनाथ मया हृतम्। सर्वलोकेश सिद्धात्मन्! ददाम्यात्मकरेण च। स्नेहं गृहाण मद्दत्तं लोकनाथ जगत्प्रभो) इस मन्त्रको पढ़ प्रथम शिरमें लगावे फिर दक्षिण अङ्गमें फिर वाम अङ्गमें पीठमें कटिमें हे धरणि! इस अभ्यङ्ग करनेसे हम बहुत प्रसन्न होते हैं और जितने विन्दु घृत वा तैलके हमारी देहमें लगते हैं उतनेही हजार वर्ष वो लगानेवाला पुरुष हमारे लोकमें निवास करताहै इस भांति अभ्यञ्जनकर हमारे अङ्गोंमें उद्वर्तन करे जिसके करनेसे हमारे सब अङ्ग शुद्धहों उस उद्वर्तनमें जवका चूर्ण, लोध, पिप्पली, शहद, रोहिण, कर्कटक, शर्करा, मधूक, अश्वगन्धा और घृत इन पदार्थोंको इकट्ठे करके हमारी प्रसन्नताके लिये उद्वर्तन करे इस भांति उद्वर्तनकर आँवलेसे व सुगन्ध जलसे स्नान करावे और यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। देवानां देवदेवोऽसि आदिभूत सनातन। सोद्वर्तनं व्यक्तरूप गृहाणेदं जलं शुचे) यह मन्त्र पढ़ि स्नान कराय स्वर्णके वा चांदीके वा ताम्रके घटसे गङ्गाजल आदि ले

यह मन्त्र पढ़ि स्नान करावे (ॐ गाङ्गं च निर्मलं वारि नानातीर्थसमन्वितम्। गृहाण भगवन्नाथ स्नानार्थं च दयां कुरु) इस भांति स्नान कराय इस मन्त्रको पढ़ि चन्दन निवेदन करे (ॐ सर्वगन्धाः सौमनस्यं सर्वे वर्णाश्च तेऽङ्गजाः। उत्पन्नाः सर्वलोकेश त्वया सप्तसु योजिताः। मया दत्तन्तवाङ्गेषु नानावहशुचीन्प्रभो। मम भक्त्या सुसंतुष्टः प्रतिगृह्णीष्व माधव) वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस भांति हमारे अङ्गोंमें चन्दन दे उत्तम २ सुगंध पुष्पकी माला हमारे कण्ठ व शिरमें पहिनाय उत्तम २ पुष्पोंकी पुष्पाञ्जलि इस मन्त्रसे देवे (मन्त्रः। जलजं स्थलजं चैव पुष्पं कालोद्भवं शुचि। संसारभयमोक्षाय गृह्ण गृह्ण समाच्युत) हे धरणि! इस भांति पूजन कर उत्तम धूप ले निर्धूम अग्निमें जलाय यह मन्त्र पढ़ता हुआ धूप देवे (मन्त्रः। ॐ वनस्पतिरसं दिव्यं बहुद्रव्यसमन्वितम्। मम संसारमोक्षाय धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्। शान्तिर्यैस्सर्वदेवानां शान्तिर्मम परायणम्। संख्यानां शान्तियोगेन धूपं गृह्ण नमोस्तु ते। त्राता नान्योऽस्ति मे कश्चित्त्वां विहाय जगद्गुरो। त्रायस्वमामतो देव पुण्डरीकाक्ष ते नमः) इन मन्त्रोंको पढ़ धूप दे शुक्ल पीत वस्त्र उत्तम २ ले हमारे अर्पण करे व अञ्जली बांध हाथ जोड़ यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। प्रीयतां भगवान्देवः श्रीनिवासः सनातनः। क्षौमवस्त्रप्रदानेन आदिरूपी सनातनः) इस भांति वस्त्रको दे हाथमें पुष्प ले माला को इस मन्त्रसे अर्पण करे (मन्त्रः। नानापुष्पमयीं मालां तुलसी पुष्पमण्डिताम्। गृहाण भगवन्नेतां मुक्तिन्देहि सनातन) इस भांति मालाको दे ताम्बूल बीड़ी हाथमें ले यह मन्त्र पढ़ि निवेदन करे (ॐ मुखालंकरणं श्रेष्ठं जातीकर्पूरमिश्रितम्। गृहाण वीटिकां देव! ममाज्ञानं विनाशय) वाराहजी कहते हैं; हे धरणि! इस भांति उत्तम भक्तको हमारा पूजन करना उचितहै इस पूजन से प्रसन्न होके हम निज भक्तको धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष देते हैं

व सदा प्रसन्न रखतेहैं और अनेक अपराध क्षमा करतेहैं॥

एकसौपन्द्रह का अध्याय॥

इस भांति वाराह भगवान्के मुखारविन्दसे पूजाविधान सुनि धरणी पूछनेलगी कि हे भगवन्! सब पूजाविधान तो आपने कृपा करके वर्णन किया अब नैवेद्य वर्णन कीजिये कि किस २ पदार्थ की नैवेद्य देनेसे आप प्रसन्न होतेहैं यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि! अब नैवेद्य वर्णन करतेहैं सो साव-धानहो श्रवण करो हमारे सन्तोषके लिये सब पदार्थहैं जोई भक्तिसे हमको भक्तजन निवेदन करतेहैं सोई हम प्रीतिसे अङ्गी-कार करतेहैं दूध, दही, घी, सप्तधान्य, शाक, मधु, उदुम्बर आदि ऐसे अनेक पदार्थहैं जिनमें हमारी प्रीतिहै अब जो २ शाक हमको प्रियहैं सो २ श्रवण करो बथुवा, कुमुदिनी, चौलाई, पालक, मरसा ये शाक उत्तमहैं इनकी नैवेद्यसे हम प्रसन्न होते हैं और अन्नमें चावल, साठी, वासमती, मूंग, मोठ, उड़द, कुलथी, तिल, यव, गेहूं और सावां ये अन्न हमको अतिप्रिय हैं और गोरसोंमें गौका तथा बकरीका तथा भैंसका दही, दूध, घृत उत्तम होताहै इन्होंके अर्पणसे अधिक हमारी प्रसन्नताहै अब हे धरणि! जो २ उत्तम व भक्ष्य पशुओंके मांसहैं सो २ श्र-वण कीजिये सबसे उत्तम मृगमांस फिर छाग, शशा ये हमको अतिप्रियहैं और जिन मांसोंसे यज्ञ होतीहै वेही मांस हमारी नैवेद्यमें चाहिये और मांसोंमें महिषमांस व पशुके पृष्ठका मांस गुदाका मांस ये महानिन्द्यहैं इन्हें हमारी नैवेद्यमें कभी न दे और हे धरणि! जो पवित्रभी जीवहैं परन्तु वेदमन्त्रसे उनका प्रोक्षण न हुआहो अथवा रोगीहों वा स्वयंमृतहों वा उनके पैरोंका मांस हो वो सदा वर्जित करना चाहिये अब हे धरणि! जो २ उत्तम पक्षी हैं व जिन पक्षियोंके मांसमें हमारी प्रीतिहै सो २ श्रवण करो कुरर,

मोर, कुक्कुट, जलकुक्कुट, लावा, बहरी, बटेर, कपोत, तित्तिर, बेणुक, चटक, क्षारिक और पचकोणा आदि पक्षियोंका मांस उत्तम होताहै ये सब हमारी नैवेद्यके योग्यहैं हे धरणि! हमारे वचन को प्रमाण कर हमारी प्रीतिके लिये इनका मांस विधिपूर्वक जो पुरुष अर्पण करतेहैं वे सब पापोंसे मुक्तहो सिद्धिको प्राप्त होते हैं इसलिये जो हमारी प्रसन्नता चाहे तो अपराध बुद्धिको त्याग हमारी प्रीतिके निमित्त इन पदार्थोंको हमारे निवेदन करे॥

एकसौसोलह का अध्याय॥

वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! अब परम गुप्त एक पदार्थ कथन करतेहैं सो तू श्रवण कर जिसके सुननेसे संसारसागरसे पार होताहै प्रातःकालमें विधिपूर्वक स्नान कर हमारी मूर्तिके समीप आय विधानसे पूजन कर सावधानहो सनातन जो हमारा रूप है उसे ध्यान करता हुआ हमारे रूपको दशों दिशाओं में ऊपर नीचे जो कुछ पदार्थहैं उन्होंमें देखता हुआ व भक्तिपूर्वक सबों को प्रणाम करता "ॐ नमो नारायणाय" इस मन्त्रका यथाशक्ति जप करे और जप समाप्तकर हाथ जोड़ अञ्जली बांध नेत्रको मूंद ध्यानमुद्रासे इस स्तोत्रका पाठ करे (ॐ नमो नारायणाय। यजामहे दिव्यपरं परेशमनादिमध्यान्तमनन्तरूपम्। भवोद्भवं विश्वकरं यजामहे कान्तं च कालादिमरूपमाद्यम्॥ अनन्यरूपं च महानुभावं संसारमोक्षाय कृतावतारम्। यजामहे सोमपथे भवन्तं सोमार्कनेत्रं शतपत्रनेत्रम्॥ जगत्प्रधानं जनलोकनाथं श्रुत्युक्तसंसारविमोक्षणं च) इस स्तोत्रको भक्तिसे नम्र हो यथाशक्ति प्रातःकाल मध्याह्नकाल सायंकाल जो हमारे चरणकमलमें चित्त देकर पाठ करते हैं उनके सबकर्म सफल होते हैं और संपूर्ण पापकी राशि अनेक जन्मोंकी नष्टहोतीहै हे धरणि! यह गुप्त पदार्थोंसे भी परम गुप्तहै व योगोंका योगहै कर्मोंका

कर्महै सांख्योंका सांख्यहै इसको मूर्ख, अभक्त, पिशुन, शठ, अदीक्षित आदिको नहीं देना जो विष्णुदीक्षा करके युक्तहो निज शिष्य हो भक्ति श्रद्धा करके युक्तहो उसे देना इस विष्णुभगवान् के मुखारविन्दसे कहे हुये स्तोत्रको जो नित्य पाठ करें सो अन्तसमयमें विष्णुभगवान्का दर्शन पावें और साक्षात् विष्णु भगवान्के धामको जायँ वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस भांति तीनों कालमें नित्य २ हमारे पूजनको जो करते हैं वो फिर माता के गर्भमें जन्म नहीं लेते मुक्तिको प्राप्त होते हैं॥

एकसौ सत्रह का अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! जिन २ कर्मोंके करनेसे मनुष्य खोटीयोनिमें जन्म नहीं लेते और जिसके करनेसे उत्तमगतिको प्राप्त होते हैं सो श्रवण करो हे धरणि ! जो मनुष्य उत्तम कर्म करके अपनी प्रशंसा नहीं करते और सबसे नम्र रहते हैं सबके उपकारमें युक्त रहते हैं व धर्मपूर्वक विचारसे सब काम करतेहैं और शीत, घाम सहते हुये भूख व प्यास भी सहते हैं वे हमारे प्रिय होते हैं उन्होंकी अपगति कभी नहीं होती और हे धरणि ! जो पुरुष दरिद्री होके भी असत्य नहीं बोलते किसीकी निन्दा नहीं करते निज स्त्रीसे प्रीति रखते हैं परस्त्रियोंसे वर्जित रहते हैं ब्राह्मण, साधु, वृद्ध, माता, पिताकी सेवा करते हैं और सबसे प्रिय भाषण करते हैं सबके हितकी वाञ्छा रखते हैं व जीवहिंसा मुक्तहैं परधनमें तृष्णा नहीं करते और संतोष रखते हैं सबोंके दुर्वचनको सहलेते हैं और ऋतुकाल विना स्त्रीप्रसंग नहीं करते हे धरणि ! ऐसे जो मनुष्य हैं वो धन्य हैं उनके किये हुये पूजन को हम प्रीतिसे ग्रहण करते हैं और उनकी सदा रक्षा रखते हैं और अन्तमें उनको वैकुण्ठवास देते हैं और उनका कुयोनिमें जन्म कभी नहीं होता हे धरणि ! अब औरभी श्रवण करो चारों

वर्णोंके लिये धर्मशास्त्रके प्रवर्तक आचार्योंने अपने २ ग्रन्थोंमें किसीने कुछ कथन किया और किसीने कुछ उन शास्त्रोंमें परस्पर अत्यन्त भेद बना रहताहै जैसा धर्मशास्त्रके मुख्य आचार्य मनु, रुद्र, शंख, लिखित, कश्यप, धर्म, अग्नि, वायु, यम, इन्द्र, वरुण, कुबेर, शाण्डिल्य, पुलस्त्य, आदित्य, पराशर, विष्णु, ब्रह्मा और पितर आदि महर्षियोंने और देवताओंने अपने २ ग्रन्थों में कहीं कुछ कहा कहीं कुछ इस लिये हे धरणि! मनुष्यको अपने चित्तमें यह विचार करना चाहिये कि जिसमें किसीको पीड़ा न हो वो धर्म सब धर्मोंसे उत्तमहै इसलिये पुरुषका यही परमधर्महै और उचितहै कि पराये आत्माको अपने आत्माके तुल्य समझे और दुःख किसीको न दे किसीकी निन्दा न करे किसीकी स्त्रीपर कुदृष्टि अर्थात् पापदृष्टि न करे किसीके पदार्थमें लोभ न करे किसीकी चोरी न करे और मद्य मांससे त्याग रक्खे मनसेभी ब्राह्मणी स्त्रीका संग न करे और अपने हाथसे किसी जीवकी हिंसा न करे व औरको हिंसाकी प्रेरणा भी न करे और निज पादसे अग्निका स्पर्श न करे कुमारीके साथ मैथुन न करे क्रोध किये हुये ब्राह्मणको किसी भांति प्रसन्न करे और गोदान अन्नदान करतारहे जीवोंको अभयदान देवे व पुत्रोंमें समदृष्टि राखे श्रीगुरु में भक्ति राखे हे धरणि! जो पुरुष इस भांति धर्ममें युक्त हो हमारी भक्ति करें उन्हें हम शीघ्र मिलते हैं व संसारसागर से पार करके वैकुण्ठधाम देते हैं उनका कुयोनिमें जन्म कभी नहीं होता॥

एकसौ अठारह का अध्याय॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि! अब अतिगुप्त धर्म वर्णन करते हैं सो सावधानहो श्रवण करो जो पुरुष दोनों पक्षकी अष्टमीको व चतुर्दशीको मैथुन नहीं करते व भोजन जिस अन्नका करतेहैं उसकी निन्दा नहीं करते और पहली अवस्थासे हमारी भक्तिमें

तत्पर होते हैं व सदा माता पिताकी सेवा करते हैं जो कुछ प्रारब्धसे मिले उसी में संतुष्ट रहते हैं यथासामर्थ्य दानभी करते हैं व किसी कर्ममें व्याकुल नहीं होते सब जीवोंपर दया रखते हैं और निस्पृह रहतेहैं हे धरणि! ऐसी जिनकी बुद्धिहै व दिन रात्रि हमारा चिन्तन करते हैं वो कुयोनिमें कभी नहीं जाते हमको बहुत प्रिय हैं वो अवश्य हमारे लोकको जाते हैं और हे धरणि! अब जो देवताओंको भी अत्यन्त गुप्त है सो हम वर्णन करते हैं सावधानहो श्रवण करो जो पुरुष जरायुज, अण्डज, उद्भिज्ज, स्वेदज जीवोंकी हिंसा कभी नहीं करते व खोटेमार्गमें जिनका मन कभी नहीं होता वो कोकामुखनाम क्षेत्रमें निज शरीरका त्याग करते हैं वे अवश्य हमारे प्यारे होते हैं इस भांति वाराहनारायण का वचन सुनि हाथ जोड़ नम्रहो विनयपूर्वक धरणी पूछने लगी कि; हे भगवन्! हम आपकी शिष्या व दासी हैं इस लिये हमारे ऊपर कृपा करके अति गुप्तभी आप वर्णन करें कि चक्रतीर्थ, वाराणसी, अट्टहास, नैमिषारण्य, भद्रकर्णह्रद और प्रयागतीर्थ आदि उत्तम २ क्षेत्रोंको छोड़ आप कोकामुखकी प्रशंसा करतेहो और नगर, हिरण्ड, मुकुट, मण्डलेश्वर और केदार आदि क्षेत्रोंको त्याग कोकामुखकी प्रशंसा करतेहो व देवदारुवन, जालेश्वर, दुर्ग, महाबल, गोकर्ण, शुद्धक्षेत्र, जाल्मेश्वर, एकलिङ्ग आदि नानाविध क्षेत्र और तीर्थोंकोत्याग जो आप कोकामुखका वर्णन करतेहो सो कोकामुख क्या पदार्थहै व कहां है क्या माहात्म्यहै सो आप वर्णनकरें? यह धरणीकी विनयवाणी सुनि वाराहजी भगवान् कहनेलगे कि; हे धरणि! जो तुम पूछतीहो यह प्रश्न अत्यन्तगुप्तहै तथापि तुम्हारी प्रीतिसे हम वर्णन करते हैं सो तुम सावधानहो श्रवण करो हे धरणि! कोकामुखनाम क्षेत्र हमाराहै व हमको अतिप्रियहै जिसका माहात्म्य श्रवण करनेसे मनुष्योंके सब पाप छुटजाते हैं हे धरणि! किसी समयमें एक

लुब्धक अर्थात् मांसाहारी कोकामुख क्षेत्रमें इधर उधर घूम रहा था उसी समय क्या देखताहै कि थोड़ेसे जलमें एक मछली फिर रहीथी उसे देखि लुब्धकने वंशी लगाय उस मीनको फँसालिया और खैंच जलके बाहर ल्याय जबतक वंशीकी डोरी सँभारा चाहै तबतक आकाशमें उड़ताहुआ एक श्येननाम पक्षी अर्थात् बाज़ बड़े वेगसे उड़के उस मीनको ले आकाशको उड़गया तबतो मीनको अति गम्भीरतासे जब लेके वह बाज़ न उड़सका तबतो मीन बाज़के मुखसे छुटके कोकामुख तीर्थमें गिरी गिरतेही प्राण मुक्तहो कोकामुख तीर्थके प्रभावसे शकाधिपनाम राजाका पुत्र रूपवान् सब गुणों करके युक्त उत्पन्न हुआ और वहांहीं कोकामुख तीर्थमें हे धरणि ! किसी व्याधकी स्त्री हाथोंमें मांस लिये रास्तेमें चली जातीथी कि इसी समय कोई चील्ह नाम पक्षी उड़ती २ बड़े वेगसे व्याध स्त्री के हाथसे मांस झपट मारके लेगई और लेकर जाय किसी ऊंचे वृक्षके ऊपर बैठ खानेलगी कि उसी समय व्याध की दृष्टि उस चील्ह पर पड़ी और दृष्टिके पड़तेही ऐसा एक बाण मारा कि वह चील्ह उसी बाणसे बिंधीहुई जाय कोकामुख क्षेत्रमें गिरी व प्राणको त्याग चन्द्रपुरनाम नगरमें अतिरूपवती राजकन्याहो उत्पन्नभई सो कन्या अप्सराओंसेभी अधिक गुणरूप संपन्न व युवावस्थाको प्राप्त हुई परन्तु कोई पुरुष उसके चित्तमें न आया कि जिसके साथ अपना विवाह स्वीकार करे इसी भांति व्यतीत होते युवावस्था पूर्ण आय प्राप्त हुई और उसके माता पिता देखि २ रात्रि दिन शोच किया करते कि यह कन्या किसे देवें इसी शोच विचारमें शकाधिपति राजपुत्रका गुण व सुन्दरता श्रवणकर चन्द्रपुरका राजा कन्या कीभी प्रीति देखि शकाधिपके पुत्रको ब्याहदिया तब तो वह कन्या व राजपुत्र परस्पर गुण व रूपदेखि अतिहर्षितहो परमेश्वरकी कृपाका धन्यवाद करनेलगे कि जिसने दोनोंको अपनी सृष्टिमें एकसे एकको अ-

धिक रचा और परस्पर आनन्दित हो अवस्थाका सुख करतेहुये यथोचित पिताके दिये हुये राज्यको करनेलगे ऐसी आपसमें प्रीति उत्पन्न हुई कि एकके विना दूसरेको क्षणमात्र चैन न पड़े वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इसी भांति दोनों प्रेममें मग्न परस्पर बहुत काल संसारसुख भोग किसी समय राजपुत्रके मस्तक में अतिदारुण पीड़ा उत्पन्न भई कि जिस क्लेशसे वह राजपुत्र मूर्च्छितसा होगया उसे मूर्च्छित देखि राजवैद्योंने अनेक औषध मन्त्र यन्त्र आदि किया परन्तु किसी भांति वह पीड़ा निवृत्ति होनेको कौन कहे शान्ति होनेमें भी न आई तब तो निज प्राणप्यारे पतिको अतिविकल घबड़ायाहुआ देखि चन्द्रपुरके राजा की कन्या बोली कि हे प्राणनाथ! आपको बड़ा क्लेश होरहाहै उसे देखि मैंभी मृतप्राय होरहीहूं कि कोई उपायसे यह शिरोव्यथा आपकी निवृत्ति नहीं होती सो मैं आपकी अतिप्यारी हूं कोई उपाय आपही मुझे बतावें और मैं करूं जिससे आप प्रसन्नहों आपको क्लेशमें बहुतदिन होगये यह सुनि राजपुत्र कहने लगा कि हे प्रिये! इसमें हम क्या बतावें? सब क्लेशोंका मूल मनुष्यका देह होताहै इस देहके धारण करनेसे सभी भांतिके सुखदुःख भोगने पड़तेहैं संसारमें जन्म लेकर दुःख सुखको क्या पूछना? यह पूछेसे नहीं निवृत्त होता केवल भोगने सेही निवृत्त होताहै इतना कहके राजपुत्र तो चुप होगया और इस क्लेशका मूल रानी सुना चाहतीथी कि एकान्तमें किसी समय दोनों आनन्द कररहेथे कि रानी हाथ जोड़ नम्रहो फिर पूछनेलगी कि हे प्राणनाथ! आप दयाकर अपने क्लेशका मूल बतावें जिसमें हमारा सन्देह निवृत्तहो यदि गुप्तभीहो तबभी आप कृपाकरें मेरे से गुप्त न रक्खें मैं आपकी प्रिया हूं अवश्य मेरेसे कहना चाहिये यह निज प्राणप्रिया रानीका हठ देखि शकाधिपका पुत्र कहने लगा कि हे प्रिये! प्रथम तो जिसके उदरसे जन्म लियाहै वह माता

पिताहैं उनकी आज्ञा लो फिर अपने पहले जन्मका स्मरण करो मनुष्यभावको त्यागदो और कोकामुख क्षेत्रमें चलो वहां हम सारा वृत्तान्त कहेंगे इसलिये हमारे माता पिताके पास जायके कोकामुखके दर्शनकी आज्ञा लो यह राजपुत्रका वचन सुनि अतिहर्षित हो राजकन्या जाय श्वशुर सासुके समीप हाथ जोड़ प्रणामकर विनयसे कहनेलगी कि हे गुरो! आपके पुत्रको क्लेश सदा बना रहताहै शिरकी पीड़ासे सदा क्लेशित रहतेहैं सो आपभी जानतेहैं कि जिसमें दवा उपाय कोई नहीं काम करती सो इसके दूर होनेके लिये कोकामुख क्षेत्र जानेकी आज्ञा आप देवें तो मैं भी आपके पुत्रकेसाथ जाय कोकामुखका दर्शन करूं और आपके पुत्रके दुःख को निवृत्त करूं और हे महाराज! जबसे मैं आपके घर आईहूं तबसे कोई प्रार्थनाभी आपसे नहीं करी इसलिये आपको आज्ञा देनाही उचितहै यह मेरी प्रार्थना आप सफल करें कि जिसमें आपका पुत्र सुखीहो देखो नित्य २ जब मध्याह्न होता है तब आपका पुत्र इस वेदनासे मृतकतुल्य होजाता है सो क्या आप नहीं जानते इसलिये यह क्लेश बे कोकामुखके दर्शन नहीं दूर होगा इसमें आप कुछ विचार न करें बहुत शीघ्र आज्ञा देवें यह वचन पुत्रवधूका सुनि पुत्रको बुलाय अति प्रीतिपूर्वक शकाधिप राजा कहने लगा कि हे पुत्र! यह तुम दोनोंने क्या विचार किया जो कोकामुखकी यात्रा किया चाहतेहो देखो विचारकरो कि यह अखण्ड राज्य हाथी घोड़े उत्तम २ रत्न, स्त्री, कोष, असंख्य सेना सब तुम्हारी आज्ञामें है इसका सुख करो व राज्य करो कोकामुखमें जानेसे क्या होगा व हमारे तुम्हीं एक पुत्र प्राणके प्यारेहो बे तुम्हारे देखे हम कैसे जीवेंगे? यह मोहयुक्त पिता की वाणी सुनि राजपुत्र हाथोंसे पिताके चरणोंको पकड़के कहने लगा कि हे पिता! शरीरके आनन्द होनेसे सब अच्छासा मालूम देताहै जब शरीरही सुखमें नहींहै तो राज्य कौन करे और कोष,

बल कौन सँभारे है तो ठीक २ सब हमाराही परन्तु जो शरीरसे दुःखी है तो कुछ रुचता नहीं इसलिये आप हमको निषेध न करें कोकामुखके जानेको आज्ञा देवें यह पुत्रकी विनयवाणी सुनि प्रीतिसे शकाधिपने पुत्रको आशीर्वादपूर्वक आज्ञादी कि आनन्द से जावो इस भांति पिताकी आज्ञा पाय दोनों स्त्री पुरुष राजपुत्रने कोकामुखकी यात्रा की और राजपुत्रकी यात्रा देखि राजमन्त्री बहुतसा धन साथ ले सेनाभी साथ ले और पुरवासी भी राजपुत्रके स्नेहसे चले जाय थोड़े दिनोंमें कोकामुख पहुँचे वहां जातेही रानी राजासे कहने लगी कि हे महाराज! अब आप कोकामुखमें आ पहुँचे अपना वृत्तान्त वर्णन कीजिये जिसलिये आप आये हैं और आपने प्रथम वचन भी देरक्खाहै कि कोकामुखमें सब वृत्तान्त वर्णन करेंगे यह स्त्रीका वचन सुनि हँस करके राजपुत्र कहने लगा कि हे प्रिये! अब तो रात्रि हुई आज तो सुखसे यहां निवास करो प्रातःकाल होनेदो जो तुमने पूछाहै सो सारा वृत्तान्त हम वर्णन करेंगे यह कहके रात्रि तो सुखपूर्वक व्यतीत किया प्रातःकाल होतेही आवश्यकोंसे निवृत्तहो स्नान कर क्षौमवस्त्र धारणकर अनेक भांतिके दानको दे विष्णुभगवान् को प्रणाम कर सावधानहो स्त्रीका हाथ पकड़ प्रेमसे राजपुत्र कहने लगा कि हे प्रिये! जो तुमने पूछा है सो सावधानहो श्रवण करो यह कहके राजपुत्र कहने लगा कि हे प्रिये! यह जो अस्थिके टुकड़े पड़े हैं सो मेरेही देहके हैं और मैं पूर्व जन्मका मीनहों औ जलमें रहता रहा सो बंशी लगाके बधिकने हमको फँसा लिया जब वह बधिक बंशीकी डोरी सँभारने लगा तो उसे गाफिल देखि एक श्येन नाम पक्षी झपटके चोंच मार ले उड़ा तब तो कुछ २ प्राण हमारे रहा परन्तु जब हमको लेकर वह श्येन न उड़ सका तबतो उसके मुखसे छूट इस तीर्थ जलमें हम गिरे व प्राण छुट गया सो हे प्रिये! जिस समय हमारे शिरमें उसने

चोंचका प्रहार कियाहै उसी समयसे उसी जगह शिरमें पीड़ा होतीहै इसको हमीं जानते और दूसरा नहीं जान सक्ता और इस कोकासुख तीर्थमें जो प्राण त्याग हुआ इसलिये तीर्थके प्रभावसे हम राजपुत्र भये हे प्रिये ! जो तैंने हमारा वृत्तान्त पूछा सो हमने वर्णन किया अब तेरी जहां इच्छाहो वहांको जा इतना कहके राजपुत्र तो चुप होगया वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इस भांति पतिके मुखसे पूर्वजन्मका वृत्तान्त सुन हाथ जोड़ नम्रहो राजकन्या पूछने लगी कि हे भगवन्, प्राणनाथ ! आपने जो निजपूर्व जन्मका वृत्तान्त कह सुनाया सो तो ठीकही है परन्तु अब आप कृपा करके यहभी कहें कि मैं पूर्वजन्मकी कौन हूं व किस पुण्यसे मेरा जन्म राजवंशमें हुआ यह विनययुक्त वाणी स्त्री की सुनि राजपुत्र कहनेलगा कि हे प्रिये ! अब तेरा वृत्तान्त मैं वर्णन करताहूं सो सावधानहो श्रवण कर तू पूर्वजन्मकी चील्ह नाम पक्षीहै सो नित्य क्षुधा तृषासे दुःखी आहार ढूंढ़ती एक ऊंचे वृक्षपर रहतीथी सो किसी समयमें किसी व्याधने धन्वा बाणले वनमें जाय मृग व सूकरको मार उसका मांस अपनी स्त्री को दिया तब उसकी स्त्री मांस ले आगे २ चली और वह व्याध धन्वामें बाण खैंचे मांसकी रक्षा करता पीछे २ चला जाते २ थोड़ीसी दूरमें वह चील्ह व्याधकी स्त्रीके हाथमें मांस देख दौड़ के चोंचमें मांस लेके आकाशको उड़ी व लेजाय जिस वृक्षमें रहती रही वहां बैठ सावधानहो नोच २ कर खानेलगी तब तो व्याधने चील्हको गाफिल मांस खाती देखि एकबाण ऐसा मारा कि वह चील्ह बाणके साथही प्राण छोड़ उसी स्थानमें गिरी व ये जो छोटे २ अस्थिके टुकड़े दिखाते हैं सो उसी चील्हकेहैं कुछ तो काल बीतनेसे गलके मट्टीमें मिलगये कुछहैं सो पक्षी इस तीर्थ के माहात्म्यसे चन्द्रपुरके राजाकी कन्या भई व हमको ब्याही गई यह तेरा वृत्तान्तहै सो हे प्रिये ! इस क्षेत्रके प्रभावको देखि

तिर्यक् योनि ज्ञानहीन पक्षीभी प्राणमात्र त्याग करनेसे उत्तम जन्म व जातिस्मर भये और जो मनुष्य होके सनातनधर्ममें टिककर इस क्षेत्रमें जो रीतिसे प्राण त्याग करतेहैं वह साक्षात् वैकुण्ठवासी होतेहैं यह निज पतिके मुखारविन्दसे निज पूर्व वृत्तान्त सुनि राजकन्या बहुत प्रसन्नहो सत्यमान कृतार्थहो संसार को मिथ्या जानि उत्तम २ ब्राह्मण बुलाय विधिपूर्वक अनेक प्रकारके भोजन कराय रत्नोंके भूषणोंसे व उत्तम २ वस्त्रोंसे भूषित कर हाथी, घोड़े, सुवर्ण, दास, दासी और भी जो सामग्री साथ आईथी सो भक्तिपूर्वक बड़ी प्रीतिसे देकर ब्राह्मणोंको प्रणामकर बिदाकिया इस भांति स्त्री सहित राजपुत्रका वृत्तान्त देख साथ जो आयेथे वे भी यथासामर्थ्य दान करके क्षेत्र प्रभावसे उत्तम रूपको धारण कर व विमानमें बैठ श्रीविष्णुभगवान्के धामको जाय प्राप्तभये वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इसभांति सबके सब स्त्री पुरुष उस कोकामुख क्षेत्रके प्रभावसे मनुष्य देह छोड़ २ दिव्यरूप धारणकर श्वेतद्वीपमें जाय प्राप्त भये यह धर्मयुक्त अति पवित्र इतिहास हमने वर्णन किया इस कथाको नास्तिक, क्रूर, लोभी, अभक्त और दम्भीको नहीं सुनाना जो हमारा भक्तहो आस्तिकहो उसे सुनाना इस इतिहासको जो अन्तकालमें श्रवण करें वे सब पापोंसे मुक्तहो उत्तम विमानमें बैठ विष्णुपार्षदों करके सेवाको प्राप्तहो श्वेतद्वीपमें निवास करें॥

एकसौउन्नीस का अध्याय॥

इस प्रकार कोकामुख क्षेत्रका माहात्म्य सुनि धरणी बहुत प्रसन्नहो वाराह भगवान्से कहनेलगी कि हे भगवन्! आपने बड़ी अनुग्रह की जो ऐसी अत्यन्त गुप्तबात सुनाई कोकामुखक्षेत्रका माहात्म्य सुन मैं धन्य और कृतकृत्य भई अब आप दयाकरके ऐसाही कोई उत्तम व गुप्तबात औरभी कथनकरें जिसके श्रवण

करनेसे पाप छूटें व आपके चरणमें भक्तिहो जिसके होनेसे संसार का भय छूटे ऐसी विनययुक्त वाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि! जो तुम कहतीहो सो ऐसाहीहै विना हमारी भक्ति जीव का कल्याण नहीं होता इसलिये हम अतिगुप्त बात वर्णन करते हैं जो आजतक हमने किसीसे नहीं वर्णन किया सो सावधान हो श्रवण करो जिसके श्रवण करनेसे मुक्ति होतीहै हे धरणि! वर्षाऋतु बीत जानेसे व आकाश निर्मल होनेसे शरद्‌ऋतु होतीहै उस ऋतुके कार्त्तिकमासमें जो द्वादशी तिथिका व्रत करते हैं वे हमको बहुत प्रिय हैं उस द्वादशीमें जो हमारा पूजन इस मन्त्रसे करते हैं सो जन्म २ हमारे प्रियभक्त होते हैं व धन पुत्र करके युक्त होते हैं (मन्त्रः। ॐ ब्रह्मणा रुद्रेण च स्तूयमानो भ-वान्देवैर्वन्दितो,वन्दनीयः। प्राप्ता चेयं द्वादशी संप्रबुद्धस्वाद्य मेघा गतानिर्मलेदं नभश्च) हे धरणि! इस मन्त्रसे जो हमारा जाग-रण करता है वह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष फलको प्राप्त होता है वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति प्रबोधन कर्म हमने वर्णन किया अब शैशिर कर्म श्रवणकरो जिसके श्रवण करनेसे सब कर्म सफल होतेहैं शिशिरऋतुमें द्वादशीका व्रत करके जो २ उत्तम पुष्प मिलें उन्हें ल्यावे और हमारी मूर्तिका पूजन षोड़शोपचारसे करके पूजनके अन्तमें बहुतसे पुष्प हाथोंमें ले पुष्पाञ्जलिकी रीति से यह मन्त्र पढ़के पुष्पाञ्जलि देवे (मन्त्रः। शिशिरो भवान् धातरिमं लोकहिमं दुस्तरं दुःप्रवेशम्। कालसंसारान्मां तारयेमं धातात्रिलोकनाथ) हे धरणि! इस मन्त्रसे जो हमको शिशिर ऋतुमें पूजाके अन्तमें पुष्पाञ्जलि देते हैं वे संसारके सुख भोग अन्तमें परम पदको प्राप्त होते हैं हे धरणि! अब हेमन्तऋतु व वसन्तऋतुका विधान वर्णन करतेहैं जिसके श्रवणसे कोटि जन्म का पाप निवृत्त हो जो पुरुष मार्ग मासमें व वैशाखमासमें हमारा सब भांति उत्तम २ पदार्थोंसे पूजन कर अनेक भांतिके पुष्पों करके

युक्त तुलसीमञ्जरीकी माला मार्ग मासमें और माधवी पुष्प और दमनमञ्जरीकी माला वैशाख मासमें जो हमारे अर्पण (ॐनमो नारायणाय) इस मन्त्रसे करते हैं उनकी बारह वर्षकी पूजा की हुई सफल होती है और वे संसारके सब सुख भोग अन्तमें हमारे समीपवर्ती होते हैं यह वाराह भगवान्के मुखारविन्दसे निकली हुई मधुरवाणीको सुनि हाथ जोड़ नम्रहो धरणी कहने लगी कि हे भगवन्! बारहों महीनोंमें दोही महीने आपने क्यों वर्णन किये ? जो मार्गशीर्ष व वैशाख और पन्द्रह तिथियोंमें द्वादशी क्यों प्रिय भई इसमें क्या कारणहै सो आप कृपा करके वर्णन करें ? जिसमें हमारा संशय निवृत्तहो यह सुनि वाराह भगवान् कहने लगे हे धरणि! वैशाख तो इसलिये प्रसन्न हुआ कि सब ऋतुओंमें वसन्त ऋतु हमारा रूपहै व महीनोंमें मार्गशीर्ष हमारा रूपहै व तिथियोंमें द्वादशी हम हैं इस निमित्त इन महीनों में द्वादशीको जो भक्तिपूर्वक चन्दन, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य आदि पदार्थ अष्टाक्षरमन्त्रसे वा द्वादशाक्षर मन्त्रसे देते हैं उनको षोड़श महादानका फल होताहै व सब पापोंसे मुक्त हो हमारे पार्षद होते हैं व दिव्य सहस्र वर्ष हमारे लोकमें निवास करते हुये अन्तमें जन्म लेकर चक्रवर्ती राजा होते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! जो तुमने पूछा सो हमने संक्षेपसे वर्णनकिया॥

एकसौबीस का अध्याय॥

श्रीवाराह भगवान् कहते हैं हे धरणि! अब हम वैशाखमास के शुक्लपक्षकी द्वादशीका वर्णन करते हैं सो श्रवण करो वैशाख महीनेके शुक्ल द्वादशीको शालवृक्षके पुष्पोंको ले व हमारी मूर्ति का विधानसे पूजनकर वेदमन्त्रसे वा पुराणमन्त्रोंसे स्तुति करें जिस भांति इन्द्रादि देवता, लोकपाल, सिद्ध, विद्याधर, पिशाच, सर्प, राक्षस, आदित्य, वसु, रुद्र, अश्विनीकुमार, मरुद्गण और

ब्रह्मादिक सदा स्तुति करते हैं और यह मन्त्र पढ़ करके भांति २ के पुष्प अर्पण करते हैं (मन्त्रः। ॐ मासेषु सर्वेषु च मुख्यभूतस्त्वं माधवो माधव एव मासः। पश्ये भवन्तं तु वसन्तकाले उपागतं गन्धरसप्रयुक्तया। नित्यं च यज्ञेषु तथेज्यतेयो नारायणः सत्यलोकेषु वीरः) इस मन्त्रसे पुष्प अर्पणकर वसन्तपूजन समाप्त करे हे धरणि! इसीभांति ग्रीष्मोत्सवभी करना चाहिये तिसमें सब पूजन "ॐनमो नारायणाय" इस मन्त्रसे करके अन्त में यह मन्त्र पढ़ि पुष्पाञ्जलि करे (मन्त्रः। ॐमासेषु सर्वेष्वधिमुख्यभूतो मासो भवान् ग्रीष्म एकः प्रपन्नः। पश्ये भवन्तं खलु वर्तमानं चराचरे देहि सदा सुशान्तिम्) हे धरणि! इस भांति ग्रीष्मऋतुमें जो पूजनके अन्तमें हमारी प्रार्थना करताहै वह कभी यमबाधा नहीं देखता और हे धरणि! वर्षाऋतुमें भी सब भांति पूजन करके अन्तमें कदम्बवृक्षके पुष्प व सरलके पुष्प व अर्जुन के पुष्पोंको ले मन्त्र पढ़ि पुष्पाञ्जलि देवे "ॐनमो नारायणाय" (प्राप्तोऽयं वार्षिको मासः शयनं रमया सह। कुरु नाथ प्रपन्नानां कृत्वा रक्षां यथासुखम्) इस भांति हे धरणि! जो प्रतिऋतुओं में हमारा भजन पूजन विधिपूर्वक करते हैं वह हमारे प्रिय होते हैं और उनकी भागवतसंज्ञाहै उनके कियेहुये सब कर्म सफल होतेहैं और उन मनुष्योंके दर्शन करनेसे अनेक पाप निवृत्त होतेहैं हे धरणि! जो तुमने पूछा सो हमने वर्णन किया अब क्या श्रवण किया चाहतीहो?॥

एकसौइक्कीस का अध्याय॥

इस भांति श्रीवाराह भगवान्के मुखारविन्दसे वचन सुनि अतिहर्षितहो धरणी पूछनेलगी कि; हे भगवन्! आपके मुखारविन्द की अमृतरूप वाणी सुनते २ मेरेको तृप्ति नहीं होती इसलिये आप कृपा करके यह कथन करें कि माया क्या पदार्थ

है जिसे आप कथन करतेहैं? यह हमारी मायाहै उस मायाका क्या स्वरूपहै व कहांहै? हे भगवन्! आपके अनुग्रहसे आप की माया मैंभी जाना चाहतीहूं यह धरणीकी विनयवाणी सुनि विष्णु भगवान् श्रीवाराहजी महाराज कहनेलगे कि हे धरणि! यह प्रश्न मत पूछो व ऐसी बातमें चित्त न दो वृथा क्लेशमें क्यों पड़ती हो जिस मायाके वृत्तान्तको आजतक ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र और सनकादिक न जानसके उसे तुम किस भांति जानोगी हे धरणि! जो इन्द्र वर्षा करता है और जल करके सब चराचर पूर्ण होता है यह हमारी माया है व चन्द्रमा शुक्लपक्षमें दिन २ नित्य एककला वृद्धिको प्राप्त होता है और कृष्णपक्षमें एक २ कला क्षीण होते २ अमावास्याको बिल्कुल नहीं दीखता सो हमारी मायाहै और जो जल हेमन्तऋतुमें शीतल रहताहै और वही ग्रीष्मऋतुमें उष्ण होता है और वर्षामें मलीन होताहै यह हमारी माया जानो हे धरणि! जो सूर्य पूर्वदिशामें उदय होताहै व पश्चिममें अस्त होके फिर प्रातःकाल पूर्वदिशामें उदय दीखता है सो हमारी मायाहै और जलरूप पुरुषका वीर्य व स्त्रीका रुधिर एकत्रहो गर्भमें अङ्ग २ यथायोग्य बनके बाहर निकल नित्य २ बढ़ करके पुरुष स्त्री हो नाना व्यवहार करताहै वह हमारी माया जानो हे धरणि! जो बालक गर्भमें ज्ञानयुक्त होता है व गर्भके बाहर होतेही ज्ञानहीन होजाताहै सो हमारी मायाहै और देखो कि सब जीव अनेक भांतिके आहार करते हैं और सबकी देहमें रुधिर व वीर्य एकही भांति है और उसी वीर्यसे यथायोनि जीव उत्पन्न होते हैं यह हमारी मायाहै और हे धरणि! हमारी माया से नदियां जल बहतीहैं पर्वत सब औषध व नानारत्न धातु उत्पन्न करते हैं और जीवोंकी देहमें नाना भांतिके विकार उत्पन्न होतेहैं और नित्य २ अवस्था बदलती रहतीहै यह सब हमारी माया जानो हे धरणि! यह सब जानते हैं कि विष्णुको गरुड़

लेचलतेहैं और हम अपनी मायासे गरुड़रूप होके आपको ले चलते हैं दैत्य होके अपनी मायासे देवताओंको पीड़ा देते हैं और अपनी मायासे यज्ञमें देवताओंको तृप्त करतेहैं सब यही जानते हैं कि बृहस्पति यज्ञ में मन्त्रसे देवताओंको तृप्त करते हैं हे धरणि! वह बृहस्पति हमारी मायाहै शुक्र हमारी मायाहै वरुण, कुबेर, अग्नि, वायु, यम और निर्ऋति ये सब हमारी माया हैं इन्द्रने वृत्रवध किया यह सब जानते हैं परन्तु यह सब हमारी मायाहै लोक जानताहै कि सूर्य लोकको प्रकाश करताहै सो सूर्य हमारी मायाहै हे धरणि! संपूर्ण वर्षाका जल समुद्रमें जाता है सो हमारी माया बड़वानल होके सब पान करती है और हम अपनी मायासे द्वादश सूर्य होके पृथ्वीको भस्म करते हैं व मेघ-गण होके फिर जलसे प्रलयाग्निको निवृत्त करते हैं इसी भांति मायासे वाराहरूप धारणकर पृथ्वीका उद्धार करते हैं और निज मायासे ब्रह्माजीको व रुद्रजीको उत्पन्न करते हैं और निजमाया से पितृगण होके कव्यको ग्रहण करते हैं हे धरणि! और हम कहां तक वर्णन करें एक ऋषिको अपनी माया करके स्त्रीके योनिमें प्रवेशित किया इस प्रकार श्रीवाराह नारायणका वचन सुन ध-रणी पूछने लगी कि; हे भगवन्! ऋषिजीने ऐसा कौन कर्म किया कि जिससे स्त्रीयोनि पाई यह धरणीकी प्रार्थनारूपी वचन सुनि वाराहजी कहने लगे कि हे धरणि! यह उत्तम कथा हम वर्णन करते हैं सो सावधानहो श्रवण करो एक सोमशर्मा नाम ब्राह्मण बड़ा तपस्वी अनेक योनिमें नाना भांतिके क्लेशोंको भोग करके फिर ब्राह्मणताको पाया और जिस भांति उस सोमशर्मा को स्त्रीयोनि मिली सो श्रवण करो हे धरणि! न तो उसने कुछ अयोग्य कर्म किया और न उससे कुछ अपराध हुआ वह तो हमारा परमभक्त व हमारेही ध्यानमें सदा रत रहताथा इसीभांति तप करते २ थोड़ेही कालमें हम प्रसन्नहो वर देनेको उस तपस्वी

के समीप आये व बोले कि हे ऋषीश्वर! इस तेरे ध्यान और तपस्यासे हम बहुत प्रसन्न हुये जो इच्छाहो सो वर मांगो धन पुत्र निष्कण्टक राज्य जो कुछ वाञ्छाहो सो लो हम देतेहैं अथवा स्वर्गका सुख चाहतेहो सो लो अप्सराओंका सुख भोगो यह हमारा वचन सुनि वह ब्राह्मण हाथ जोड़ दण्डवत् प्रणाम कर बड़ी नम्रतासे कहने लगा हे भगवन्! आपके दर्शनसे मैं कृतार्थ हुआ मेरा जन्म व तप सब सफल हुआ आप जो अनुग्रह करके मुझे वर देते हैं तो मेरा अपराध क्षमाहो तो मैं प्रार्थना करूं जिस वरदानकी मेरी वाञ्छाहै और राज्य, धन, पुत्र अथवा स्वर्गभोग वा त्रिकालज्ञता यह मैं कुछ भी नहीं चाहता केवल मुझे यही वाञ्छाहै कि जिस मायासे आप संसारकी उत्पत्ति, पालन, संहार करतेहो वह माया क्या पदार्थ है? यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्नहैं व वर देते हैं तो यही वर देवें कि आपकी मायाको मैं देखूं यह सोमशर्मा ऋषिकी वाणी सुनि हे धरणि! हम हँसके बोले कि; हे ब्राह्मण! इस उपाधिमें क्यों पड़ताहै? जिससे निवृत्त होनेका उपाय उत्तम २ जन करते हैं उसमें पड़नेसे क्या आनन्द होगा? इसलिये इस विचार को छोड़ो और जो चाहो सो सब लो वाराहजी कहते हैं हे धरणि! यह हमारा वचन सुनि हाथ जोड़ सोमशर्मा तो यही फिर बोला कि हे भगवन्! यदि आप प्रसन्न हैं व मेरी वाञ्छा पूर्ण करते हैं तो यही वर दीजिये और तो मैं कुछ नहीं चाहता तबतो हँसके हमने कहा कि अच्छा जो तुम यही चाहतेहो तो कुब्जाम्रक नाम तीर्थमें जाय स्नान करो जो चाहतेहो सोई देखोगे तब तो उस ब्राह्मणने बड़े हर्षसे हमारे प्रणाम कर व बिदाहो कुब्जाम्रकके समीप जाय किनारे पर कमण्डलु, कोपीन, मृगचर्म, दण्ड आदि उपस्कर स्थापित कर व विधिपूर्वक तीर्थ आवाहन कर स्नान करनेको डूबी लगाई तब तो क्या देखताहै कि किसी निषादकी स्त्रीके गर्भमें बालकहो निवास

लिया यह देखि गर्भके मध्य विष्ठा और मूत्रके मध्य जठराग्निकरके पीड़ित नरकके कूपमें डूबा अत्यन्त पीड़ितहो विषाद करने लगा कि मैंने क्या पाप किया कि जिसका फल गर्भवास हुआ जिसमें महादुर्गन्ध विष्ठा व मूत्र और कृमि आदि नानाभांति यातनाकी वेदनासे श्वास लेनेका सावकाश नहीं मिलता देखो यह दुर्दशा कि कहां तो ऋषिवृत्तिसे श्रीविष्णु भगवान्का भजन व श्रीगङ्गाजी का सेवन कहां यह गर्भवास इसीभांति अतिव्याकुल हुआ विचार कर रहा था कि नवममास पूर्ण होतेही सूतिवातके वेगसे गर्भके बाहर कन्यारूपहो प्रकट हुआ तबतो निषादके घरमें बाल्यावस्था व्यतीतहो जब युवावस्था प्रारम्भ भई तब उसे विवाहयोग्य देखि निषादने किसी निषादपुत्रको सुन्दर व युवा धन धान्य करके युक्त देखि उस कन्याका विवाह करदिया तब तो वह कन्या निषाद पतिको पाय बड़े हर्षसे अपने सुशीलता हाव भाव कटाक्षसे निषादको प्रसन्न करती और भक्ष्याभक्ष्य पेयापेयको करती समय २ पर कई कन्या व पुत्र उत्पन्न किये इसभांति उसी निषादके घरमें पचास वर्ष व्यतीत हुये पीछे किसी दिन निज वस्त्रोंको मलिन देखि व हाथमें घट ले गङ्गाजीको चली वहां जाय किनारे पर घट रख वस्त्रोंको धोय निर्मलकर स्नान करनेका विचार किया व जब श्रीगङ्गाजीमें डूबी लगाई व फिर बाहर जलके शिर निकाला तो वही निषादकी स्त्री निजरूपको त्याग हे धरणि! पहलेके मुवाफ़िक़ फिर सोमशर्मा ऋषिका रूप धारण किया और पहलेकी धरी हुई धोती व मृगचर्म कमण्डलु आदि निजपदार्थोंको देखि उन्हें देखा और निज मूर्खता करके श्रीभगवान्जीसे माया देखने का वर मांग वोभी सब स्मरणहो पछतानेलगा और उस स्त्रीका घट वस्त्र देखि लज्जितहो कहनेलगा कि यह मैंने क्या मूर्खता की जो ब्रह्मकर्मसे भ्रष्ट होकर नानाभांतिके अधर्म किये देखो कहां तो मैं ब्राह्मण कहां भक्ष्याभक्ष्य पेयापेय रात्रिदिन करतारहा और

ब्रह्मचारी होके वेश्याके तुल्य पचासवर्ष व्यभिचारमें दिन गँवाये और पुत्र कन्याभी उत्पन्न किये ऐसी मेरी बुद्धिको धिक्कारहै कि जिससे मैं इस दशाको प्राप्त हुआ देखो जो २ न करना चाहिये सो २ मैंने किया अनेक जीवोंका बध किया और जिन जीवोंको स्पर्श नहीं करना चाहिये उनका मांस खाया अनेक पुरुषोंके साथ मैथुन किया अब मेरी क्या दशा होगी व इस क्लेशसे अधिक क्या होनाहै? जो तपस्वी होके निषादीके गर्भमें जा उसका विष्ठा मूत्र भक्षण किया हे धरणि! ब्राह्मण सोमशर्मा तो इसभांतिके संतापमें पड़ी रहाथा कि निषादने अपने घरमें देखा कि मेरी स्त्री गङ्गामें वस्त्र धोने व जल लेनेको गई सो बड़ी देर लगी कहां गई यह विचार पुत्रोंको साथ ले क्रोधसे भरा हुआ जाय गङ्गा-तीर पहुँच इधर उधर खोजने लगा जब कहीं स्त्रीका पता न मिला व किनारे पर घड़ा व वस्त्र सूखता देखि सोमशर्मा ऋषिसे पूछने लगा कि हे ऋषीश्वर! यहां हमारी स्त्री हाथमें घट ले वस्त्र धोने नहाने और जल लेने आईथी सो तो वस्त्र सूखि रहाहै और घट रक्खाहै आप कहां गई बड़ी देरसे घरसे निकलीहै सो आप को यदि मालूमहो तो बताइये यह निषादका वचन सुनि सोम-शर्माऋषि कहनेलगे कि हे निषाद! तुम रोदन मत करो जो हम कहतेहैं सो श्रवण करो जिस स्त्रीकी खोज तुम कररहेहो वो स्त्री हम हैं तुम्हारे घरमें पचास वर्ष रहे व पुत्र कन्या उत्पन्न किये आज घट ले जलको व वस्त्र धोनेको आये सो वस्त्र धोके सुखाया सो यह सूखताहै और यह घट तुम्हारा रक्खाहै गङ्गाजीमें जब स्नान करनेलगे तब तो हम स्त्रीस्वरूप त्याग यह स्वरूप होगये यह सुनि निषाद कहने लगा कि हे ब्राह्मण! यह असंभव बात है जो तुम कहरहे हो ऐसा न तो किसीने देखा और न सुना जो स्त्रीसे पुरुष हो यह सुनि ऋषिजी बोले कि हे निषाद! परमेश्वर की माया सब कुछ करसकतीहै इसलिये शोक तो करो नहीं और

बालकों को ले घरको जाय अपना व्यवहार करो यह सुनि निषाद कहनेलगा कि हे ऋषे! आपने ऐसा कौन अनुचित कर्म किया कि जो स्त्री भये और फिर स्त्रीसे मुक्त हो पुरुष किस कर्मसे भये सो आप कथन करें तो मेरा संदेह दूर हो यह निषादका वचन सुनि ऋषिजी कहने लगे कि हे निषाद! यथार्थ तू श्रवण कर कि न तो मैंने अपने समझमें कोई पाप किया और न मिथ्या भाषण किया और न भक्ष्याभक्ष्य किया केवल वृद्धोंके आचारमें युक्तहो भक्तिपूर्वक श्रीविष्णु भगवान् का भजन पूजन और आराधन करता रहा इस भांति तप करते देखि प्रसन्नहो श्रीनारायणने प्रत्यक्षहो दर्शन दिये और कहने लगे कि हे सोमशर्मन्! हम तेरे नियम और तपसे बहुत प्रसन्न हुये जो वाञ्छाहो सो वर मांग यह विष्णु भगवान्का वचन सुनि हाथ जोड़ हमने यही मांगा कि आप अपनी माया मुझे दिखावें यह सुनि विष्णु भगवान्ने मेरेको बहुत समझाया और रोंका भी परन्तु अज्ञानवश मैंने एक न माना तब तो मेरा हठ देखि हँसके यह बोले कि हे ब्राह्मण! जो तू बारम्बार यही चाहताहै तो कुब्जाम्रकमें जाय स्नानकर तेरेको माया दीखेगी यह कह विष्णु भगवान् तो अन्तर्धान भये और मैं यहां आया इस तीर्थ के किनारे पर मृगचर्म, कोपीन, दण्ड और कमण्डलु धरके स्नान करने लगा जो डूबी लगाया तो क्या देखताहूं कि निषादी के गर्भमें निवास लिया फिर हमको कुछ ज्ञान न रहा तुम्हारी स्त्री भये इतना काल तुम्हारे घरमें रहके जिस प्रकार स्त्रियोंका कर्म होताहै सो सब किया पुत्र कन्याभी भये सो तुम सब जानते हो अब किसी कारण यहां स्नान करनेको आय वस्त्र धोया और स्नान करने लगे फिर पहलेके मुवाफ़िक़ पुरुषरूप होगये हे निषाद! देख यह हमारा वस्त्र, कमण्डलु और मृगचर्म आदि सब ज्योंका त्यों परमेश्वरकी मायासे धरे हैं देख पचास वर्षमें

भीतर गलके विगड़ जाना चाहिये सो वैसाही मानों आजके रक्खे हैं इतना सोमशर्मा ऋषिके कहतेही सहित बालकोंके निषाद अन्तर्धान हुआ जब सोमशर्माने निषादको अन्तर्धान देखा तबतो प्राणवायुको चढ़ायके ऊर्ध्ववाहुहो वायु भक्षण करता हुआ तप करने लगा वाराहजी कहतेहैं कि हे धरणि! उसे तप करते देखि उसके पड़ोसी जो तपस्वी हैं सो कहने लगे कि हे सोमशर्मन्! तुमतो आज हमारे साथ स्नानको आये और श्री गङ्गाजीके तटपर दण्ड कमण्डलु धरके इधर कहीं गये और वहांसे निषाद बालकोंको लिये आया उसे विदाकर यहां आसन लगाय बैठेहो क्या अपनी कुटी भूल गये यहांहीं रहोगे अब देर होतीहै हम सब तुम्हारे लिये थँभरहे हैं दोपहरसे दिन ढलगया अब आप स्थानको चलिये यह ब्राह्मणोंका वचन सुनि सोम शर्मा चुपहो विचार करने लगा कि देखो पचास वर्ष मेरेको नि-षादके घरमें स्त्री हुये भया और ये सब आजही बताते हैं मानों अभी चार पहरका दिनभी नहीं बीता यह क्या होरहाहै हे धरणि! सोमशर्मा यह विचार करी रहाथा कि हम निज ईश्वररूप धारणकर यह बोले कि हे ब्राह्मण ! क्यों भ्रान्तचित्तसे हो रहे हो क्या तुमने कुछ आश्चर्य देखा है जो तुम घबड़ाय रहेहो व सावधान नहींहो यह हमारा वचन सुनि व हमको देखि उसीसमय भूमि में साष्टाङ्ग दण्डवत् कर बड़ी दीनतासे बारम्बार ऊंची सांस भरके कहनेलगा कि हे देवदेव! ये ब्राह्मण मेरेको कहते हैं कि तुम प्रातःकाल अपना दण्ड कमण्डलु यहां स्थापित करके इस समय आयेहो क्या अपनी कुटी भूलगये चलो देर होती है और हम तुम्हारे साथके लिये खड़े हैं हे भगवन्! हमारा वृत्तान्त यह है कि पचासवर्ष निषादके घरमें स्त्री बनके रहे और वहां तीन पुत्र और चार कन्या उत्पन्न किया अनेक भांतिके दुष्कर्म किया भक्ष्याभक्ष्य व पेयापेयका विवेक कुछ न रहा इच्छापूर्वक व्यभि-

चार किया सो हे भगवन्! किस कुकर्मके फलसे यह घोर नरक जानेका कर्म किया और इस अधर्मसे हम किस नरकमें जायँगे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! तब तो इस भांति सोमशर्माकी क्लेश-भरी वाणी सुनकर हम बोले कि हे ब्राह्मण! अब शोच न कर यह सब तेरीही भूलहै जो हम उत्तम वर देतेथे उसे छोड़ माया देखनेकी प्रार्थना की और हमारे रोकनेसे भी न माना सो माया तुम ने देखी अब क्यों शोचतेहो न तो दिन बीता न तो पचास वर्ष बीते न तुमने निषादके घरमें जन्म लिया न किसीकी स्त्री भये न कोई पुत्र कन्या भये व न तुमने कुछ भक्ष्याभक्ष्य व पेया-पेय का ग्रहण किया व न कोई तुमसे पाप बना क्यों मिथ्या शोच करके व्याकुल होतेहो यह सब हमारी माया है जिस मायाको तुम देखा चाहतेथे सो देखलिया अब न घबड़ाओ न तो तुम भ्रष्ट भये न तुम्हारा अर्चन छुटा न तुम तप करके रहित भये यह केवल हमारी माया है हे सोमशर्मन्! किसी समयमें एक हमारा भक्त तुम्हारे समीप आया उसका अनादर तुमने किया और अभ्युत्थान नहीं दिया अर्थात् देखके उठे नहीं और प्रणाम नहीं किया उस पापके फलसे यह मायाका दर्शन तुमको हुआ हे ब्राह्मण! जो रात्रि दिन हमारा पूजन व ध्यान करते हैं व भक्त हमारे रूप हैं उनके दर्शनसे संपूर्ण पाप दूर होते हैं और उनका आदर सत्कार जो करते हैं वो हमाराही आदर जानो जो उन भक्तोंको प्रणाम करते हैं वो प्रणाम हमारेही होताहै हे ब्राह्मण! जो हमारा दर्शन किया चाहे तो प्रीतिसे हमारे भक्तोंका दर्शन करे उस दर्शनमें हमीं हैं हे ब्राह्मण! अब तुम सिद्ध हुये अब जावो भजन करो इस शरीरको त्यागोगे तब हमारे समीप श्वेतद्वीप में तुम्हारा निवास होगा व हमको हमेशा देखोगे हे धरणि! यह वृत्तान्तको विचार करके माया देखनेकी बुद्धि न कर मेरी माया को देव दानव आदि कोई नहीं जान सकते हे धरणि! यह च-

रित्र हमने तुमसे वर्णन किया यह बड़ा पुण्य इतिहास है इसे नास्तिक मूढ़ शठ और गुरुद्रोहीको नहीं सुनावना इसके श्रवण से मनुष्य सब पापोंसे मुक्त होकर उत्तम गतिको प्राप्त होताहै फिर मायाजाल में नहीं आता व इस कथाको जो नित्य प्रातः काल उठके पढ़े वो मृत्युमुख संसारमें नहीं जन्म लेता इस भांति मायाचरित्र हमने वर्णन किया हे धरणि! अब क्या सुना चाहती हो? सो वर्णन करें॥

एकसौबाईस का अध्याय॥

इस प्रकार श्रीवाराह भगवान्‌के मुखारविन्दसे निकली हुई अमृतवाणी को सुनि बड़े विनय से अपने को धन्य मान धरणी पूछनेलगी कि हे भगवन्! आपने कुब्जाम्रक तीर्थका माहात्म्य सुनाया अब कृपा करके यह भी वर्णन करें कि इस तीर्थका कुब्जाम्रक नाम क्यों हुआ व इस तीर्थ में क्या २ महिमा है और यह एकही तीर्थ है अथवा इसके समीप और भी कोई तीर्थ हैं सो आप वर्णन करें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि! जो २ तुमने पूछा है सो २ हम सब कहते हैं सावधान हो श्रवण करो जिस भांति कुब्जाम्रक भया और जो २ तीर्थ और यहां हैं सो कहते हैं हे धरणि! प्रथम सत्ययुग के प्रारम्भ में निद्रावश हो शेषशय्या में जब हमने शयन कियाथा उस समयमें हमारे दोनों कर्णसे मल निकला उस मल से मधु व कैटभ दो बड़े प्रबल वीर उत्पन्न भये उन्होंने जाय हमारे नाभिकमल में विराजमान ब्रह्माजी को सताया उस समय ब्रह्माजी अपनी रक्षा के लिये हमको बोधन किया तबतो हे धरणि! हम बड़े परिश्रम से उन को मार ब्रह्माजी को निर्भयकर उनके मेदसे पृथिवी को रचा इसी से इसका मेदिनी नाम कहाया इस भांति सब यथास्थित करके हम गङ्गाद्वार में आये वहां क्या देखते हैं कि एक रैभ्यनामक

मुनि तप कररहा है व हमारा ध्यान कररहा है उस रैभ्य ने ऐसा घोर तप किया कि दश हज़ार वर्ष ऊर्ध्वबाहु होके व हज़ार वर्ष जलपान करके व हज़ार वर्ष शेवाल नाम जल के भीतर जो तृण होता है उसे खायके व पांच सौ वर्ष वायु भक्षण करके तप करता रहा इस भांति उसका उग्र तप देखि हम बहुत प्रसन्न हो प्रकट भये और 'वरं ब्रूहि' ऐसा शब्द उच्चारण किया उसे सुनि रैभ्य ऋषि ने ध्यान छोड़ हमारी तरफ़ देखा तो हम उस स्थान में एक आम्रका वृक्षथा उसके ऊपर बैठे हमारे भारसे वो आम्र नम्रहो कुबड़ासा होगया इसलिये हे धरणि! उस तीर्थ का कुब्जाम्रक नाम भया जिस स्थान में प्राणत्याग होनेसे मनुष्य कैसहू पापात्मा होय सब पापोंसे मुक्त होकर हमारे वैकुण्ठधामको प्राप्त होता है हे धरणि! इस भांति हमको आम्रवृक्ष पर रैभ्यऋषि ने देख बड़ी प्रीतिसे नम्र हो विनयपूर्वक दण्डवत्कर हाथ जोड़ कहनेलगा कि हे भगवन्! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं व वर देते हैं तो यही वर चाहिये कि जबतक सूर्य, चन्द्र और पृथिवी रहे तबतक यहां आपका निवास हो और मैं सदा आपका दर्शन किया करूं और आपके चरणकमल में मेरी अनन्य भक्ति हो हे धरणि! इस भांति रैभ्यऋषिका वचन सुनि हमने वर दिया कि "तथास्तु" ऐसाही होगा यह वर पाय बड़े हर्ष में हो रैभ्यजी कहनेलगे कि हे भगवन्! आप लोकोपकार के निमित्त अपने मुखारविन्दसे इस तीर्थकी महिमा वर्णन करें जिसे सुनके जड़ मनुष्य भी श्रद्धाकर मुक्तिभागी हों हे धरणि! यह रैभ्यजी का वचन सुनि हम कहनेलगे कि हे रैभ्यजी! जो तुम पूछते हो सो भक्तिपूर्वक सावधान हो श्रवण करो इस भूमि में अनेक तीर्थ हैं उन तीर्थोंकी महिमा हम यथार्थ वर्णन करते हैं हे रैभ्यजी! इस कुब्जाम्रक तीर्थमें जो मनुष्य पुरुष व स्त्री वा नपुंसक निरशन व्रत करके अर्थात् अन्न को त्याग कार्त्तिकमास में वा मार्गशीर्ष में वा

वैशाखमास में प्राण त्याग करें वो सब पापों से छूट मुक्तिको प्राप्त हों और हे रैभ्यजी! इसके समीप एक मानस नाम क्षेत्रहै जिसमें स्नानमात्र करने से मनुष्य इस शरीर को त्याग नन्दनवन में निवास पाता है और उस नन्दनवन में दिव्य सहस्र वर्ष नाना भांति दिव्य भोगों को भोग करके अन्त में भरतखण्ड पृथ्वी में आय उत्तमकुल में जन्म ले स्वरूपवान् धन और गुण करके युक्त बहुत काल पृथिवीका सुख भोग करता है और जो इस मानसतीर्थ में कार्त्तिकमास की शुक्ल द्वादशी को प्राण त्याग करता है सो सब पापों से मुक्त होकर श्वेतद्वीप में आय हमारा समीपवर्त्ती पार्षद होता है और हे रैभ्यजी! इसी के समीप मायानाम तीर्थ है जिसमें स्नान करनेसे व पितरों के तर्पण करने से जन्मान्तर में हमारा भक्त होता है और उसके पितर दशहज़ार वर्ष पर्यन्त स्वर्गवास करते हैं अथवा जो माया तीर्थ में शरीर त्याग करें वे जन्मान्तर में योगीराज हों हमारे लोक में निवास करें और हे रैभ्यजी! कुब्जाम्रक के समीप एक सर्वात्मकनाम तीर्थ है जिस में वैशाखशुक्लद्वादशी को स्नान करने से पन्द्रह हज़ार वर्ष स्वर्गवास स्नान करनेहारा मनुष्य पाताहै और इसी तीर्थ का शीर्षकप भी नाम है इसमें जो शरीर त्याग करें वह अवश्य यमबाधा से मुक्त हो हमारे लोक को जाते हैं और हे रैभ्यजी! उसीके समीप एक पूर्णमुखनाम अतिगुप्त क्षेत्र है जिस तीर्थ में श्रीगङ्गाजी का जल बहुत शीतल रहता है सो वहां आय उष्ण होजाता है उस पूर्णमुख तीर्थ में श्रीब्रह्माजी नित्य स्नान करनेको आते हैं और वहां स्नान करने से वा शरीर त्याग करने से मनुष्य चन्द्रलोकमें जा देवताओंके पन्द्रहहज़ार वर्षपर्यन्त निवास करताहै और वहां से च्युत होके भारतखण्ड में आय ब्राह्मण के घर में विद्या और धन करके युक्त जन्म पाताहै अथवा मार्गशीर्षमास में शुक्लद्वादशी को जो पूर्णमुख तीर्थमें शरीर त्याग करते हैं वे वैकुण्ठधामको जाते

हैं हे रैभ्यजी! और भी तीर्थ आप श्रवण करें उसीके समीप अशोक नाम तीर्थहै जिसमें स्नान करनेसे शोक नहीं रहता और अनन्याचित्त होके उस तीर्थमें स्नान करते हैं वे दश हज़ार वर्ष पर्यन्त स्वर्गबास पाते हैं और अन्तमें भारतखण्डमें आय उत्तम स्वरूप धन और गुण करके संपन्न हमारे भक्त होते हैं और उस अशोकतीर्थमें जो वैशाखमासमें शुक्ल द्वादशीको किसीभांति निज शरीरको त्याग करें वे सब पापोंसे मुक्तहो जन्म मरण दुःखसे छूट हमारे लोकको जाते हैं और हे रैभ्यजी! एक करवीर नाम क्षेत्रहै जिसका चिह्न कथन करते हैं जिससे पहिचाना जाय माघमासकी शुक्लद्वादशी को मध्याह्न कालमें जो स्नानकर पितरोंको तर्पण करें वे हमारी भक्तिसे युक्तहो ज्ञानको प्राप्त होते हैं और अन्तमें शरीर त्यागकरके उत्तम विमानमें बैठ स्वच्छन्दगति रहते हैं जहां चाहें वहां जायँ उनकी गति कहीं नहीं रुकती और हे रैभ्यजी! उसी कुब्जाम्रकतीर्थके समीप बड़ा फल देनेहारा पुण्डरीकनाम तीर्थ है तिस तीर्थमें यह चिह्न है कि मास २ में शुक्लद्वादशीको मध्याह्न के समय रथचक्रके तुल्य बड़ा और गोलाकार कच्छप निकलता है उस तीर्थमें स्नान करने से पुण्डरीक नाम यज्ञ करनेका फल होता है और जो शरीर त्याग करें उन्हें दशबार पुण्डरीक यज्ञ करनेका फल होता है और इस पुण्यसे हमारे लोकको प्राप्तहो हमारेही तुल्य रूप पाय अखण्ड सुख भोगते हैं वाराहजी कहते हैं हे रैभ्यजी! कुब्जाम्रकके समीपही एक अग्निनाम तीर्थहै जिसमें स्नान करनेसे चारों वेदके पाठ करनेका फल होताहै जिस में कार्त्तिक, मार्गशीर्ष, वैशाख और आषाढ़ मासके शुक्लद्वादशी को मध्याह्न समयमें विष्णुका द्वादशाक्षर मन्त्र जपता हुआ चित्त सावधान करे तो चारो संहिताओंके शब्द सुनते हैं और उसका अग्नितीर्थमें यह चिह्नहै जो उष्णकालमें तीर्थ शीतल रहताहै और शीतकालमें उष्ण जल होजाताहै हे रैभ्यजी! इस अग्नि-

ताथम स्नानमात्र करनेसे वो फल होताहै जो एक जन्म विधि-पूर्वक ब्रह्मचर्यसे विष्णुपूजनमें फल होता है और जो अनशन व्रत करके शरीर त्याग करें वे अवश्य मुक्तिभागी होते हैं वाराह जी कहते हैं हे रैभ्यजी! कुब्जाम्रक तीर्थके समीप वायुनामक तीर्थहै जिसमें स्नानमात्र करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होताहै और जो पुण्यमासमें पन्द्रह दिन स्नान करें वो संसारसागरसे पारहो चतुर्भुज मूर्ति धारणकर साक्षात् विष्णु भगवान्का समीप-वर्ती होताहै और हे रैभ्यजी! उसीके समीप वरुणनामक तीर्थ है जिसमें स्नान और पितरोंका तर्पण करनेसे आठ हज़ार वर्ष वरुणलोकमें निवास करताहै और यदि किसी भांति शरीर त्याग करे तो अवश्य सब पापोंसे मुक्तहो हमारे लोकमें प्राप्तहो अखण्ड सुख भोगताहै जिस तीर्थका यह चिह्नहै कि एक जलका प्रवाह रात्रि दिन चलता रहताहै बहुत वर्षा होनेसे अधिक नहीं होता और बहुत धूप होनेसे कम नहीं होता कि जिसमें एकबारके स्नान करनेसे पन्द्रह हज़ार वर्ष स्वर्गमें वास करताहै और वहांसे पुण्य क्षीण होनेपर भारतखण्डमें विद्या और धन करके सम्पन्न ब्राह्मण के उत्तमकुलमें जन्म लेताहै और हे रैभ्यजी! कुब्जाम्रकके स-मीप मानस परमपावन तीर्थ है जिसमें स्नान करनेसे सब पापों से मुक्तहो देवलोकको प्राप्त होताहै और जो तीसव्रत करके अ-पना शरीर त्यागकरे वो वैकुण्ठ वास पावे और वो मानस तीर्थ वे हमारी कृपा अतिदुर्लभहै केवल हमारी भक्तिहीसे मिलता है व हे रैभ्यजी! और भी वृत्तान्त कुब्जाम्रक तीर्थके समीपका श्रवण करो जिसके श्रवण करनेसे मनुष्यके संपूर्ण पातक छूटजाते हैं कुब्जाम्रकके समीप एक महानुभाव मुनि रहाकरतेथे वो मुनि पूजाके निर्माल्यका पत्र पुष्प जिस जगे धरा करते वहां दैवयोग से एक सर्पिणी रहनेलगी और उसी निर्माल्य के गन्ध पुष्प से अपना निर्वाह करती बहुत काल रही किसी समय दैवयोग एक

नकुल वहां आया और उस सर्पिणी को देख परस्पर स्वाभाविक वैरसे दोनों ईर्षावशहो युद्ध करनेलगे इसीभांति यथासामर्थ्य परस्पर लड़ते २ दोनों कालवश भये और जाय सर्पिणी तो प्राग्ज्योतिषपुर के राजा की कन्या हुई और नकुल कोशलदेशके राजा का पुत्र हुआ इस तीर्थ के मरणप्रभाव से दोनों राजकुल में जन्म ले और उत्तमरूप पाय वृद्धिको प्राप्त भये तब तो दोनों की प्रकृति पूर्वजन्म की वासना से यह भई कि राजपुत्र तो कहीं सर्पिणी देखे तो उसी समय मार दे और कन्या नकुल को देखि पूर्वजन्म के वैर से मरायदे इस भांति दोनों की प्रकृति भई दैवयोग जब कन्या विवाह योग्य भई तो प्राग्ज्योतिष्पतिने कौशल देशके राजपुत्र को ब्याहि दिया तबतो दोनों परस्पर परमप्रीति में युक्त हो आनन्द से रहनेलगे जैसा स्त्री पुरुष की परस्पर प्रीति होना चाहिये वैसेही दिन २ बढ़नेलगी और इसी भांति परस्पर आनन्द विनोद में सतहत्तर वर्ष वीते हे रैभ्यजी! तब तो वे दोनों हमारी माया से मोहित परस्पर वैर न स्मरण किया एक समय एक सर्पिणी राजपुत्र की दृष्टिमें आई उसे देखि राजपुत्र मारनेलगा तब तो निजपति को रानीने बहुत निषेध किया परन्तु एक न माना मारही दिया उसे देखि रानी कुपित हो चुप होगई उसी समय भावीवश एक नकुल आय पहुँचा उसे देखि रानी पूर्ववैर स्मरणकर मारनेलगी तबतो राजपुत्रने बहुत निषेध किया कि यह नकुल शुभदर्शन है इसे न मारो परन्तु रानी तो क्रोधसे भरी हुई उसे मारही दिया तबतो उस नकुल को मरा देख बड़े अफ़सोस में हो क्रोध करके राजपुत्र कहने लगा कि स्त्रियों करके पति सदा मान्य होता है सो तुमने हमारी आज्ञा न मानी इस शुभदर्शन मङ्गलरूप नकुल को मारदिया ऐसा अनुचित क्यों किया? तब तो प्राग्ज्योतिष् राजाकी कन्या निज पतिका क्रोधयुक्त वचन सुनि आपभी क्रोध से भरी हुई यह कहनेलगी

कि आपने पहले हमारे कहनेको नहीं माना सर्पिणी को मार दिया इसी से हम भी आपके कहने में नहीं रहीं नकुल को भी मारा इसमें हम और आप बराबर रहे यह सुनि राजपुत्र कहने लगा कि हम राजा हैं हमारा यही धर्म है जो दुष्टोंको दण्ड देना और इस सर्पिणी के बराबर कौन जीव दुष्ट है जो स्पर्श करतेही प्राण हरलेती है इसलिये हमने इसका बध किया और नकुलने क्या अपराध किया सो तू बता देख जिसके दर्शन से शकुन मङ्गल होता है और जिसकी मूर्ति दर्शनीय है जो सदा राजाओं के महलों में निवास करता है उसे तूने मारदिया इसलिये क्या करें यदि स्त्री न होती तो इसी समय तेरा बध करते परन्तु अबध्य जानके त्यागदेते हैं आजसे न तो तू हमारी स्त्री और न हम तेरे पति यह कह राजा तो चुप होगया वाराहजी कहते हैं हे रैभ्यजी! उसी दिन से परस्पर ऐसी शत्रुता हुई कि जिसका कुछ ठिकाना नहीं इसीभांति जब बहुत दिन बीते राजा कोसलाधिप ने खबर पाई कि हमारे पुत्र और पुत्रबधू दोनों परस्पर प्रीति छोड़ शत्रु होरहे हैं यह जान दोनों को अपने समीप बुलाय पूछनेलगे कि हे पुत्र! तुम्हारी स्त्रीपुरुष की तो आपसमें सदा परममैत्री रहती थी कि जिसे देखि हमारे नगरके लोग सब धन्यवाद और उपमा देतेथे कि ऐसी प्रीति हो जैसी राजपुत्र के परस्पर स्त्री पुरुष में है उसे सुनि हम बहुत प्रसन्न होते थे सो यह क्या आश्चर्य सुनते हैं कि तुम दोनों परस्पर शत्रु होरहे हो इसमें जो यथार्थ व सत्य वृत्तान्त हो उसे कहि सुनावो जिस मूल से तुम्हारा परस्पर विरोध हुआ यह पिता का वचन सुनि राजपुत्र नम्र हो हाथ जोड़ प्रणामकर कहनेलगा कि महाराज! इस स्त्रीने नकुलका बध किया और हमने बहुत समझायके विनयपूर्वक निषेधभी किया परन्तु इसने एक न माना हमारे अतिप्रिय नकुलको मारही दिया इसलिये हे महाराज! जब स्त्री पुरुषकी आज्ञामें न रही

तो उससे प्रीति करना अनुचितहै यह कह राजपुत्र तो चुप हो-गया तबतो इस भांति पुत्रकी विनयवाणी सुनि राजा पुत्रबधूसे पूछनेलगा कि हे राजपुत्रि ! जो तेरे पतिने कहा सो तो तूने श्रवण किया अब तू अपना वृत्तान्त सुनावो यह निज श्वशुरका वचन सुनि बड़े विनयसे नम्रहो हाथ जोड़ प्रणामकर कहनेलगी कि, हे परमपूज्य, महाराज ! इनका तो कथन ठीकही है परन्तु मेराभी वृत्तान्त आप श्रवण कीजिये आपके पुत्रने निरपराध एक सर्पिणी घूमि रही थी उसे देखि मारनेलगे तो मेरे चित्तमें बड़ी दया हुई उसे अनाथ देखि मैंने बहुत विनय किया और हाथ जोड़े कि इसे आप छोड़देवें परन्तु इन्होंने हमारा कहा एक न माना मारदिया तबतो उसे मरी देखि मेरेको बड़ा दुःख हुआ और क्रोधभी हुआ उसी समय नकुल कहींसे घूमता २ आय गया ज्यों मेरी दृष्टिमें पड़ा त्योंहीं मैंने मार दिया इन्होंने कहा ज़रूर परन्तु क्रोधवश हुई २ मैं एकभी न सुनी यह वृत्तान्त मैं सत्य कथन करतीहूं आगे जो आपकी इच्छाहो सो कीजिये अब इस जन्ममें आपके पुत्रके साथ मेरा स्नेह तो कभी न होगा यह कह राजकन्या जब चुप होगई तबतो राजा कोसलाधिप दोनोंके तरफ़ देखि समझाने लगे कि, हे पुत्र ! तुम्हारा विरोध स्त्रीके साथ निष्फलहै और हे पुत्रबधू ! थोड़े दोषमें तू अपने पतिसे विमुख न हो यह बहुत अनुचितहै इसलिये दोनों परस्परमें समझ वि-चार विरोधको त्याग पूर्वतुल्य प्रेम करो सर्पिणी और नकुल जो दोनोंसे बध हुआ उसे भूलजावो निष्कारण वैर न करो सर्पिणी से और नकुलसे तुम्हारा क्या सम्बन्धहै जिसके लिये तुम दोनों इतना विरोधकर दुःखी होरहेहो यह ममत्वमें तुम्हारा हास्य होता है और वृद्धोंमें मूर्ख गिने जातेहो यह पिताका वचन सुनि अति नम्रतासे राजपुत्रने कहा हे पिता ! इस दुष्टिनीने हमारे प्राण तुल्य नकुलको मारा हम किस भांति इसे स्त्री मानें और पुत्रबधु

ने भी ऐसेही कहा कि महाराज! जिस भांति इनका प्राण नकुल हमने मारा ऐसेही हमारा प्राण सर्पिणी इन्होंने मारा अब दोनों प्राणरहित होगये मैत्री तो जीवते २ होती है मरने पर किसके साथ कौन मैत्री करसक्ताहै ? यह कह प्राग्ज्योतिषपुरकी कन्या जब चुप होगई तबतो हे रैभ्यजी ! राजा कोसलाधिप तो बड़े आश्चर्यमें हुआ और इस विरोधका मूल बहुत विचारा परन्तु जब कुछ विचारमें न आया तब फिर समझायके निजपुत्रसे कहनेलगा कि हे पुत्र! तुम्हारी दोनोंकी वाणी सुनि मेरा चित्त बड़ा दुःखित होताहै सो जो इसमें ठीक २ हो सो कहो गोलमटोल न कहो ऐसा खुलासा कहो जिसमें हमारे मनका संदेह मिटे और सत्य कहनेसे धर्म रहताहै और परमेश्वर प्रसन्न होताहै देखो हम तुम्हारे पिता हैं हमारे साथ छिपाना अनुचितहै इस भांति पिताका वचन सुनि राजपुत्र बोला कि, हे पिता! आज तो रात्रि हुई ये सब मनुष्य अपने २ घर जायँ प्रातःकाल जो कुछ होगा सो आपसे सत्य २ कहेंगे इतना कह मनुष्योंको आज्ञा दी राजाभी आवश्यक संध्या-वन्दनमें लगा बाद रात्रि व्यतीत होनेके स्नान संध्या आदि नित्यकर्मसे निवृत्तहो राजा कोसलाधिपने पुत्रको फिर बुलाया और सत्यका शपथ दे फिर पूछने लगा तो राजपुत्रने हाथ जोड़ यह कहा कि, महाराज! आप कुब्जाम्रक तीर्थके चलनेकी मुझे दोनोंको आज्ञा देवें और आप भी चलें तो वहां पहुँचके कहूंगा यदि आप पूछतेही हैं तो वहां के कथन करनेसे ठीक होगा तब तो पुत्रका वचन सुनि कोसलाधिपने कुब्जाम्रक तीर्थयात्रा की आज्ञा दी सो सुनि अधिकारियों ने राजाकी आज्ञानुसार तयारी करि राजाको विदित किया तबतो राजा पुत्र और पुत्रवधू को साथ लेकर आपभी चले जब जाय कुब्जाम्रकमें पहुँचे तबतो पुत्रसे प्रीतिपूर्वक राजाने फिर पूछा उसे सुनि पुत्र बोला महाराज! आज रात्रि व्यतीत होने दीजिये प्रातःकाल सब कहूंगा यह

सुनि कोसलाधिपने रात्रि व्यतीत कर प्रातःकाल आवश्यक कर्मों से निवृत्तहो स्नान संध्या कर पितृतर्पण श्राद्ध दान और ब्राह्मण भोजन कराय सावधान हो प्रीतिसे पुत्र और पुत्रवधू को बुलाय आगे बैठाय आदर से पूछनेलगा तब तो पुत्र उठके पिता की प्रदक्षिणा कर प्रणामपूर्वक कहनेलगा कि हे महाराज ! आप थोड़ी दूर हमारे साथ चलें इतना कह निज पिता को साथ ले जाय जिस स्थान में प्रथम वृत्तान्त हुआ था वहां ठाढ़कर और हाथ जोड़ विनयपूर्वक यह कहनेलगा कि हे महाराज ! यह जो आपके सम्मुख ढेरसा दीखता है सो ये पुष्पपत्र निर्माल्य हैं जो ऋषिलोग यहां नित्य परमेश्वर का आराधन करते हैं जो निर्माल्य होता है वो इकट्ठा कर यहां छोड़ देते हैं सो इसमें एक सर्पिणी उत्तम २ पुष्पों की सुगन्ध पाय यहां रहा करती थी इसी भांति एक नकुल घूमते २ कहीं से आय यहां पहुँचा और उस सर्पिणीको देखि और ज्ञातिवैर समझ मारनेका इरादा किया और सर्पिणीभी नकुलको देखा कि यह दुष्ट अवश्य मुझे मारेगा यह समझ छिपजाने का यत्न तो बहुत किया परन्तु नकुल तो उसके ऊपर पहुंचही गया तबतो दोनोंसे परस्पर युद्ध होनेलगा और लड़ते २ दोनों थकिके और परस्पर प्रहार से मूर्च्छित हो कालगति को प्राप्त हो शरीर त्याग किया सो हे पिता ! वह नकुल मैं हूं सो इस तीर्थमें प्राणत्याग होनेसे मैं आपका पुत्र हुआ यह गुप्त वृत्तान्त जो आपने पूछा सो हमने वर्णन किया इतना कह कर राजपुत्र तो चुप होगया तब तो प्राग्ज्योतिषपुर राजा की कन्या अपने श्वशुरसे नम्रहो कहनेलगी कि; हे महाराज ! आप के पुत्र ने जो वृत्तान्त वर्णन किया सो सब यथार्थहै अब आप मेरा वृत्तान्त श्रवण करें वो सर्पिणी मैं हूं जो बहुत काल निर्माल्य में रही और जिसे नकुल ने मारा परन्तु इस तीर्थके प्रभाव से और देवउच्छिष्ट निर्माल्यके नित्यसंग से प्राग्ज्योतिषपुर में जन्म

ले और राजपुत्री हो आपके पुत्र के साथ व्याहीगई और उसी तीर्थमें मरनेसे परस्पर इतने दिन वैर भूल संसारी सुख किया जब नकुल का मुझे दर्शन हुआ और आपके पुत्र को सांपिनि दिखाईदी तभी पूर्वजन्म का ज्ञान हो परस्पर वैरके स्मरण होतेही मैत्री और परस्पर स्त्रीपुरुषकी प्रीति सब जातीरही और आपस में दोनों शत्रु होगये यह वृत्तान्त जो आपने पूछा सो हमने कहा अब आप हमारे अपराधों को क्षमा करें हम दोनों इस समय शरीर त्याग करके और वैरभी त्यागि उत्तमगतिको जाते हैं इतना कह राजा कोसलाधिपका पुत्र और पुत्रवधू दोनों शरीर त्यागि उत्तम विमानमें बैठ अप्सराओं करके सेवित उत्तमरूप धार सब के देखतेही स्वर्गको गये और राजाभी उनकी ऊर्ध्वदेहिक क्रिया करके अपने कोसलाको चला आया वाराहजी कहते हैं हे रैभ्य जी! इस कुब्जाम्रक तीर्थका यह माहात्म्य परमपवित्र और गुप्त हमने वर्णन किया जिसके श्रवणसे मनुष्य को सर्व छोटे बड़े पाप निवृत्त होते हैं यह सुनि हे धरणि! रैभ्यनाम मुनि अपने को धन्य और कृतार्थ मान सब संदेहको छोड़ सावधान हो उसी कुब्जाम्रक तीर्थमें हमारा ध्यान करते हुये तप करनेलगे हे धरणि! विचारो कि महानीच और अविवेकी तिर्यक्योनि सर्प और नकुल ये दोनों हमारी अनुग्रहसे और तीर्थ के प्रभावसे उत्तम राजवंशमें जन्म ले और सब भांति के संसारसुख भोग अन्तमें उत्तमगति को प्राप्त भये जो अश्वमेधादि बड़े २ यज्ञ करने से भी दुर्लभहै हे धरणि! इस पुण्य इतिहासको जे प्रातःकाल पवित्रहो श्रवण करें वे सब पापोंसे छूट इक्कीस कुलके साथ स्वर्गबास पावें और स्वर्ग भोगकर चतुर्भुज मूर्तिधार अखण्ड वैकुण्ठ वास पावें॥

एकसौतेईस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं हे शौनकजी! इस भांति श्रीवाराह भगवान् के मुखारविन्दसे नकुल और सर्पिणीका इतिहास सुनि प्रेममें मग्न होकर धरणी कहनेलगी कि हे भगवन्! यह अपूर्व वृत्तान्त श्रवण करनेसे मेरा अनेक भ्रम निवृत्त हुआ और इस संसार के भाररूपी क्लेशसे निवृत्त हुई आपके मुखारविन्दसे अब मैं यह सुना चाहतीहूं कि जिस भांति पुरुष भागवतधर्मका अधिकारी होताहै सो दीक्षाविधान आप कृपा करके वर्णन करें जिससे मेरा संदेह निवृत्तहो यह धरणीकी विनयवाणी सुनि श्रीवाराहभगवान् कहनेलगे कि हे धरणि! जो तुमने प्रश्न किया सो देवताभी नहीं जानते यह अत्यन्त गुप्त है परन्तु तुम हमारी भक्ताहो इस लिये गुप्तभी तुम्हारेसे प्रकाश करते हैं तुम अयोग्यसे नहीं कहना इतना कह वाराहजी कहनेलगे कि अब जिसभांतिकी दीक्षा को प्राप्तहो पुरुष धर्म, अर्थ, काम, मोक्षको प्राप्त होताहै और हमारा प्रिय होताहै सो श्रवण करो हे धरणि! यह दीक्षा चारों वर्णोंके लिये हम कहते हैं कि जिस पुरुषका चित्त वैराग्ययुक्तहो और संसारसागरसे डरताहो वो अपने चित्तको पहले कृच्छ्र, चान्द्रायण आदि व्रतोंसे शुद्ध करके उत्तम ब्राह्मण हमारा भक्त देखि गुरु करनेके लिये पहले उसकी सेवा करे यदि वह महात्मा सेवासे प्रसन्नहों तब अपना मनोरथ निवेदनकर आज्ञा ले दीक्षा के निमित्त धानकी खील, शहद, कुश, गोघृत, चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, कालामृगचर्म, पलाशदण्ड, कमण्डलु और कलश आदि जो २ पदार्थ गुरु आज्ञा देवें सो २ इकट्ठे कर और गुरुकी पूजाके लिये वित्तशाठ्य छोड़ यथासामर्थ्य भूषण और वस्त्र उत्तम २ ल्यावे और सब गुरुको निवेदन कर आप हव्य भोजन करे और गुरु विधिपूर्वक मण्डप बनाय तोरण वन्दन-

वारसे भूषित कर उसमें यथोक्तवेदी और कुण्ड हवनके लिये बनाय वेदी मध्यमें सर्वतोभद्र मण्डल बनावे और सुवर्ण, चांदी, तांबा, पीतल, मट्टी आदि यथालाभ कलश ले चारकलश वेदी के चारों कोणमें और मध्य कलश शुक्लवर्णके सूत्रसे वेष्टित कर सर्वतोभद्रमें स्थापन विधानसे स्थापित करे और तीर्थजलसे पूर्णकर कलशमें आम्र आदि पञ्चपल्लव और कुश, दूर्वा, पूग, फल, पञ्चरत्न वा नवरत्न आदिसे युक्तकर तिस ऊपर ताम्रपात्र तिलोंसे पूर्णकर रक्खे और कलशके चारों दिशाओंमें चार पूर्ण-पात्रभी स्थापन करे और कलशके चारों कोणोंमें चार कलश शुक्ल सूत्रसे वेष्टित और पञ्चरत्न, पञ्चपल्लव, ताम्रपात्र, तिलपूर्ण आदिसे सुशोभित कर स्थापन करे हे धरणि ! जो उत्तम हमारे भक्त वैष्णवजन कहीं नजदीक या दूरहों उन्हें उस दीक्षायज्ञमें बुलायलेवे उस यज्ञके अधिकारी हैं और जो भगवद्दास उत्तम वैष्णव आवें उन्हें देखि अभ्युत्थानदे भक्तिपूर्वक पवित्र जलसे चरण धोय चन्दन, पुष्प, मालासे पूजनकर उत्तम आसन पर बैठाय नानाभांतिके व्यञ्जन भोजन कराय उनके सुख निवासके लिये उत्तम आसनदे हे धरणि ! इन भक्तोंके सत्कारसे हम अ-त्यन्त तृप्त होते हैं और जो इन वैष्णवोंका आदर नहीं करता अपमान करताहै उसे अनेक ब्रह्महत्या आदि पातक होते हैं हे धरणि ! जो पुरुष पतिव्रता स्त्रीका त्याग करते हैं और गोवध, ब्राह्मणवध और गुरुकी आज्ञा भङ्ग करते हैं उनसे हम सदा अ-प्रसन्न रहते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! शिष्यको स्नान कराय उत्तम शुक्लवस्त्र पहिनाय यज्ञमण्डपमें ल्याय गुरु अपने दक्षिणभागमें बैठाय विधिसे मध्यकलशमें षोड़शोपचारसे ह-मारा पूजनकर अग्नि स्थापन कर कुण्डमें खीर, घृत, शर्करासे हवन करे और हमारी आज्ञा ले शिष्यको मन्त्रोपदेश करे और तीनवार मन्त्र सुनाय सदाचार जो हमको प्रियहै सो सुनावे जिस

के करनेसे हम प्रसन्न होते हैं हे पुत्र! जो पापात्माहों उनका संग नहीं करना और शालवृक्षके पत्रमें भोजन नहीं करना और बिल्व वृक्ष, आम्र, गूलर, पिप्पल, वट, प्लक्ष इन वृक्षोंको काटना नहीं और करील वृक्षोंके काटनेमें पुण्य होतीहै उदुम्बरका फल भोजन नहीं करना मत्स्य और वाराह मांस और वासी अन्न नहीं खाना और हे पुत्र! किसीकी निन्दा वा चुगली वा किसी जीवकी हिंसा नहीं करना और भोजनके समय जो अतिथि आवे उसका सत्कारपूर्वक सेवा करना और परस्त्रीमें मनको चलित नहीं करना परन्तु गुरुपत्नी, राजपत्नी, मित्रपत्नी और ब्राह्मणी इनसे तो सदाही बचना और किसीके धनमें वा कोई उत्तम पदार्थ देखि लोभ नहीं करना और परभाग्यका उदय देखि ईर्षा नहीं करना किसीका धारण किया वस्त्र, जूता, छतुरी नहीं धारण करना इतना धर्मोपदेश करके गुरुशिष्यके अञ्जलीमें पुष्पदे कलशके ऊपर यह मन्त्र पढ़ि छुड़ावे (ॐ सप्तद्वीपाः सप्तसागरा अत्रायान्तु श्रीभगवता सह) यह मन्त्र पढ़ि पुष्पाञ्जलिदे गुरु पढ़े (ॐ भगवन् सुस्वागतं २) फिर नारायण अष्टाक्षर मन्त्र से पाद्य, अर्घ, आचमनीय, मधुपर्क दे फिर आचमनदे फिर हमारी आज्ञाले लोहका उत्तम क्षुरा ले यह मन्त्र पढ़े (ॐ एवं ते वरुणः पातु शिष्यच्छेदयतः शिरः । जलेन विष्णुयुक्तेन दीक्षां संसारमोक्षणीम्) यह पढ़ि गुरु अपने हाथसे क्षुर नापितको दे उससे नापित शिष्यके शिरमें जो केशहों उनको ऐसी भांति वपन करे जिसमें रुधिर न निकले इसभांति वपन कराय उत्तम जल से स्नान करावे और उत्तमवस्त्र धारण कराय यागमण्डपमें फिर अपने दक्षिण भागमें बैठाय शिष्यके मस्तकपर हाथ दे गुरु सुन्दर विष्णु नामसम्बन्धी नामकरण करे तिस पीछे शिष्य गुरु की ओर देखि और वैष्णवोंकी ओर देखि हाथ जोड़ यह मन्त्र पढ़े (वदाम्यहं भागवतांश्च सर्वान्सुदीक्षिता ये गुरवश्च सर्वे ।

विष्णुप्रसादेन च लब्धदीक्षा मम प्रसीदन्तु नमामि सर्वान्) यह मन्त्र पढ़ि भूमिमें दण्डवत् प्रणामकर गुरुकी आज्ञा ले घृत, मधु, धानकी लाई और काले तिलका सात बार हवन करे फिर तिल और खीरसे बीस बार आहुतिदे जानुसे पृथ्वीमें नम्रहो यह मन्त्र पढ़े (अश्विनौ दिशः सोमसूर्यौ च सर्वे सुसाक्षिणः सन्तु भवन्तु तुष्टाः। दीक्षा गृहीता खलु वैष्णवीयं भजामि विष्णवाचरणैकनिष्ठः। सत्येन धार्यते भूमिः सत्येनैव च सागराः। तेन सत्येन हृदये विष्णुं कृत्वा भजाम्यहम्) यह मन्त्र पढ़ि वैष्णवों की ओर देखि श्रीगुरुकी प्रीतिपूर्वक तीन प्रदक्षिणा करे यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। गुरुदेवप्रसादेन लब्ध्वा दीक्षां यदृच्छया। यच्चैवापकृतं किञ्चिद् गुरुर्मर्षयतां मम) यह मन्त्र शिष्यके मुखसे सुनि गुरु शिष्यको आगे बैठाय इस मन्त्रको पढ़ि शुक्ल यज्ञोपवीत कमण्डलु और दण्ड देय (मन्त्रः। विष्णुप्रसादेन गतोऽसि सिद्धिं प्राप्ता च दीक्षा सकमण्डलुश्च। एतद् गृहीत्वा चर विष्णुभक्तिं विष्णुक्रियां वैष्णवसेवनं च) तवतो शिष्य गुरुको प्रणामकर यज्ञमण्डपके सहित वैष्णवोंकी प्रदक्षिणाकर साष्टाङ्ग प्रणामकर हाथ जोड़ यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। अन्धो भूत्वा यद्यहं ग्राम्यलुब्धो दीक्षां गृहीत्वा विषयांश्च सेवे। तथापचारान्कृतकर्मणां मे क्षन्तुं समर्था गुरवो हरिश्च) इस प्रार्थनाको सुनि कृपापूर्वक गुरु आज्ञा दे कि भोःशिष्य! विष्णुपूजन अष्टाक्षर मन्त्रसे सदा करना और सब कर्मोंके अन्तमें इस मन्त्रसे प्रार्थना करना (मन्त्रः। ॐ शृण्वन्तु मे भागवताश्च सर्वे गुरुश्च विष्णुश्च शृणोतु वाक्यम्। अहं शिष्यो भवतां दासभूतः पूजां गृहीत्वा च सदा क्षमध्वम्) वाराहनारायण कहते हैं हे धरणि! इस भांति ब्राह्मणोंके लिये हमने वैष्णवी दीक्षा अतिगुप्त वर्णन किया जिस दीक्षाके प्राप्त होनेसे गुरु और शिष्य दोनों परम पदको प्राप्त होते हैं॥

एकसौचौबीस का अध्याय॥

वाराह नारायण कहते हैं हे धरणि! अब जिस भांति क्षत्रियों को वैष्णवी दीक्षा प्राप्त होतीहै सो श्रवण करो जिस भांति पहले दीक्षाविधानमें कह आये हैं तैसेही वेदी, मण्डप, कुण्ड, सामग्री इकट्ठे करे कृष्णमृगचर्म, कमण्डलु और दण्डका कुछ प्रयोजन नहीं और सब एकत्र कर पूर्व भांतिसे गुरु सारा कर्मकर मन्त्रोपदेशकरे और शिष्यके हाथमें पुष्पोंसे अञ्जलीभर गुरु यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। त्यक्तानि विष्णोश्शस्त्राणि त्यक्तं क्षत्रियकर्म च। सर्वं त्यक्त्वा भजे विष्णुं तारयास्मान्भवाब्धितः) तबतो शिष्य पुष्पाञ्जलि कलशपर दे श्रीगुरुके दोनों चरण पकड़ प्रणत होकर यह मन्त्र पढ़े (ॐ नाहं शस्त्रं देवदेव स्पृशामि परापवादं नच वै ब्रवीमि। संसारमोक्षाय करोमि कर्म आज्ञां गुरोर्मूर्ध्नि दधामि नित्यम्) यह मन्त्र पढ़ि यथासामर्थ्य गुरुको दक्षिणादे ब्राह्मण वैष्णवको भोजनदानसे सत्कार कर सदा विष्णु का पूजनकरे और सदा वैष्णवोंसे नम्र रहे तो क्षत्रिय विष्णुलोकको प्राप्त होताहै अब हे धरणि! वैश्यको वैष्णवीदीक्षा वर्णन करते हैं सो श्रवण करो पूर्वकी भांति सब सामग्री इकट्ठी कर दश हाथकी वेदी बनाय और विधिसे कलश स्थापन कर हमारा पूजन कर गुरु वैश्य शिष्यको उदुम्बर काष्ठसे दन्तधावन कराय पीतवर्णके छाग चर्मसे वेष्टितकर मन्त्रोपदेश कर अन्तमें इस मन्त्रसे पुष्पाञ्जलि करावे हाथमें पुष्पाञ्जलिले वैश्यशिष्य यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। अहं वैश्यो भगवंस्त्वां प्रपन्नः प्रमुच्य कर्माणि च वैश्ययोगम्। दीक्षा च लब्धा भगवत्प्रसादात्प्रसीदतां मे भवमोक्षणाय) यह मन्त्र पढ़ि कलशमें पुष्पाञ्जलि दे गुरुकी विधिवत्पूजा कर दक्षिणा दे हाथ जोड़ यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐ त्यक्त्वा वै कृषिगोरक्षा वाणिज्यं क्रयविक्रये। लब्धा च त्वत्प्रसादेन विष्णुदीक्षा मयाधुना)

यह मन्त्र पढ़ि गुरुसे आज्ञा ले ब्राह्मण वैष्णवको भोजन कराय दक्षिणा दे शान्तचित्त हुआ २ विष्णुसेवा भजनमें तत्पर संसार में पुण्यतीर्थ क्षेत्रोंमें बिचरे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! अब हम शूद्रके लिये वैष्णवीदीक्षा वर्णन करते हैं सो सुनो शूद्र प्रथम गुरुके समीप जाय प्रार्थना करे तब गुरु आठ हाथकी वेदी बनाय पूर्वतुल्य मण्डप कुण्ड रचि विधिपूर्वक कलश स्थापनकर शूद्रशिष्यको स्नान मुण्डन कराय पवित्र कृष्णवस्त्र और कृष्ण छागका चर्म बाँसका दण्ड ग्रहण कराय मन्त्रोपदेशकर शिष्य के हाथमें पुष्पाञ्जलि दे यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः । शूद्रोऽहं सर्वकर्माणि मुक्त्वा भक्ष्यं च सर्वशः । भक्ष्याभक्ष्यं ततस्त्यक्त्वा प्रपन्नोस्मि गुरुं हरिम्) यह मन्त्र पढ़ि पुष्पाञ्जलि दे गुरुका चरण पकड़ यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। श्रीगुरो तव दासोऽहं लब्ध्वा विष्णुप्रसादतः । भजामि सततं विष्णुमपराधं क्षमस्व मे) यह मन्त्र पढ़ि गुरुको दक्षिणादे ब्राह्मण वैष्णवको भोजन कराय यथाशक्ति दक्षिणादे विवेकपूर्वक गुरुकी आज्ञामें टिक परमेश्वरका भजन कर उत्तमगतिको प्राप्त होय वाराहजी कहते हैं हे धरणि! दीक्षा को प्राप्तहो ब्राह्मण शुक्लवर्णका छत्र धारणकरे और क्षत्रिय रक्त वर्णका छत्र, वैश्य पीतवर्णका छत्र और शूद्र कृष्णवर्णका छत्र धारणकरे यह वचन दीक्षाविधान का श्रीवाराहजी भगवान्के मुखारविन्दसे सुनि धरणी हाथ जोड़ नम्रहो पूछनेलगी कि हे भगवन्! आपने तो चारो वर्णकी दीक्षा वर्णन किया अब उन्हों का आचार वर्णन करें जिसके करनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्तहो दीक्षाका फल पाय आपके प्यारेहों। यह सुनि बहुत प्रसन्नहो वाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि ! जो तुम पूछतीहो सो है तो बहुत गुप्त परन्तु तुम्हारी प्रीतिसे कहते हैं सो सुनो यह कह वाराहजी कहनेलगे हे धरणि! प्रथम तो दीक्षाको गुरुसे लेकर चराचरमें हमारे रूपकी भावना करे व हाथमें माला राखे चलते;

फिरते, बैठेउठे हमारे नामका स्मरण कियाकरे और नित्य प्रातः काल शौच दन्तधावनसे सावधान हो स्नान संध्यासे निवृत्त हो हमारे मन्दिरमें आय रीतिसे द्वारपालोंकी पूजाकर मन्दिरकी परिक्रमा कर दक्षिण अङ्ग आगेकर प्रवेशकर उत्तमकुशा, मृगचर्म, कम्बल आदि आसन बिछाय शोधन कर भूतापसरण दिग्बन्धन आचमन और शिखाबन्धन कर गुरुका वाममें व गणेशका दहिने हमारा मध्यमें ध्यानकर दिग्बन्धन करे और भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, मातृका न्यासकर विधिपूर्वक शंख स्थापनकरे हे धरणि! जिस पूजामें शंख नहीं स्थापित होता वहां हम नहीं आते इसलिये वह असुरपूजा होतीहै इसलिये अवश्य शंख स्थापनकर चन्दन शुद्ध जल और तुलसीसे शंखको पूर्णकर नारायण अष्टाक्षर मन्त्र से अभिमन्त्रित कर आचमन कर पूजाकी सामग्री सब अपने दहिने ओर रख जिस भांति हमारा स्वरूप गुरुने उपदेश किया हो उसे हृदयकमल में ध्यानकर मानसोपचारसे पूजनकर निज पुष्पाञ्जलिमें ल्याय हमारी जो मूर्ति बाहरहै उसमें स्थापित कर नारायण अष्टाक्षर मन्त्रसे आवाहन आदि मुद्रा दिखाय पाद्य, अर्घ, आचमनीय, मधुपर्क, स्नान, पञ्चामृत स्नान, शुद्धस्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, चन्दन, पुष्पमाला, वनमाला, मुकुट, नाना भूषण, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा और आरार्तिक आदि यथालाभ यथाशक्ति उपचारसे पूजन कर मूलमन्त्रका जप करे और जपके अन्तमें गोघृत और खीरसे उत्तम पवित्र काष्ठसे विधान करके अग्नि स्थापन कर हवन करे और दशांश तर्पण मार्जनकर ब्राह्मण वैष्णवको भोजन कराय अतिथि पूजन गोग्रास दे बलिवैश्वदेव करके आपभी पितरोंका तर्पण कर भोजन हमारे अर्पण कर भोजन करे और पवित्रहो पौराणिक उत्तम ब्राह्मण कुटुम्बीसे पुराण श्रवण करे और आचारपूर्वक सर्वदा रहे हे धरणि! इस भांति जो दिन २ हमारी सेवा करते हैं

उन्हें इस लोकमें और परलोकमें कुछ दुर्लभ नहीं वह सदा निष्पाप हैं और हमारे प्रियहैं उनसे सदा हम प्रसन्न रहतेहैं और उनके दर्शनसे पापात्माभी पापरहित होजातेहैं ॥

एकसौपच्चीस का अध्याय ॥

श्रीवाराहजी भगवान्‌के मुखारविन्दसे पूजाविधान सुनि धरणी पूछनेलगी कि हे भगवन् ! आपके पूजनमें किस धातुका पात्र पवित्रहै सो आप कृपा करके वर्णन करें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि ! सुवर्ण, चांदी, ताम्र आदि सब धातु हमको प्रियहैं परन्तु सबसे उत्तम ताम्र अतिप्रियहै पूजामें औरे पदार्थ के लिये जो चाहे सो पात्र रक्खे परन्तु नैवेद्यमें तो ताम्रपात्रही चाहिये इसके विना हमारी तृप्ति नहीं होती यह सुनि बड़े विनयसे हाथ जोड़ आश्चर्यमान पृथिवी पूछनेलगी कि हे भगवन् ! सब धातुपात्रोंको त्याग ताम्रही क्यों आपने अङ्गीकार किया और किस निमित्त यह पवित्र हुआ सो आप कृपा करके कथन करें जिसमें मेरा संदेह निवृत्तहो यह सुनि वाराहजी प्रसन्न हो कहनेलगे हे धरणि ! जो तुम पूछतीहो सो सावधानहो श्रवण करो जिस भांति ताम्रकी उत्पत्तिहै और जिसलिये हमको प्रिय हुआ हे धरणि ! कल्पके आदिमें गुडाकेशनामक दैत्य हुआ उसने हमारा आराधन चौदहहजार वर्ष धर्मसे किया उसके निश्चय और तपसे हम प्रसन्नहो उसके समीप आय दर्शनदिया और बोले कि; हे दैत्येन्द्र ! तुम्हारे तप करनेसे हम बहुत प्रसन्न भये जो वाञ्छाहो सो वर मांगो कोई पदार्थ अब तुमको दुर्लभ नहीं है यह सुनि अति हर्षितहो अञ्जली बांधि कहनेलगा कि हे नाथ ! जो आप मुझ पै प्रसन्नहो व वर देतेहो तो प्रथम वर तो यही चाहताहूं कि हजारों जन्म तक आपके चरणकमलमें मेरी अखण्ड भक्तिहो और यह भी वर चाहताहूं कि आपके हाथोंसे चक्र छूटि मेरा प्राण हरण करे

और यह मेरी देह ताम्रमयहै इसे आप पवित्र करके यज्ञ पूजनमें लावें और इसके पात्रमें नैवेद्य आप प्रीतिसे अङ्गीकार करें यही मेरी प्रार्थनाहै और कुछ न चाहिये यह सुनि हम बोले कि "तथास्तु" यह कह और ये भी कहा कि वैशाखमासमें शुक्ल द्वादशी को मध्याह्नके समय हमारा चक्र तुमको मारेगा यह कह हे धरणि! हमतो अन्तर्धान भये और गुडाकेश दैत्य दुर्लभ वर पाय बहुत आनन्दमें हो ध्यान करता वही काल देखनेलगा जिसको हमने आज्ञा दियाथा जब वैशाखकी शुक्ल द्वादशी आई उस दिन बड़े हर्षसे स्नान दान आदि शुभ कर्मोंसे निवृत्तहो हमारा ध्यान करता हुआ हाथ जोड़ यह शब्द उच्चारण करनेलगा कि हे विष्णो! चक्र त्याग करनेमें क्यों देरी करतेहो? आपके विरहसे मैं क्षण २ में दुःखी होरहाहूं अब शीघ्रही कृपा करके अपने चरणोंमें लीन कीजिये इतना पुकारतेही हमारा प्रेरित चक्र आय गुडाकेशको उसी क्षण दो खण्ड किये दैत्यतो हमारे चरणोंमें लीन हुआ और उसके चर्मसे ताम्र हुआ रुधिरसे सुवर्ण अस्थि से चांदी और रांगा, सीसा, कांसा और पीतल आदि अनेक धातु उस गुडाकेश दैत्यके मलोंसे उत्पन्न भये हे धरणि! इस लिये हमको ताम्र बहुत प्रियहै इसीलिये हमारे भक्तजन पूजन में सब पात्र ताम्रहीके रखते हैं इतना सुनि धरणी हाथ जोड़ वाराहजीसे पूछनेलगी कि; हे भगवन्! कृपा करके आप वैष्णवी सन्ध्या वर्णन कीजिये जिसके करनेसे भक्तजन सब पापोंसे छूट आपके प्रीतिपात्रहों यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! जो तुम पूछतीहो सो सावधानहो श्रवण करो प्रातःकाल सूर्य उदयके समयसे दो घड़ी पहले अर्थात् तारे देखपड़ें और मध्याह्न में व सन्ध्याके समय सूर्य अस्त होनेके प्रथम सन्ध्याकाल होताहै उस समय साधक शौच दन्तधावन स्नानसे सावधानहो वैष्णव आचमन कर विष्णुद्वादशाक्षर मन्त्रसे शिखाबन्धन कर विष्णु

के द्वादशनामसे द्वादश तिलकदे हाथमें जलले अष्टाक्षरमन्त्रसे आठबार अभिमन्त्रितकर निज शिरमें मार्जन करे फिर सूर्यमण्डलमें हमारा रूप ध्यानकर विष्णुगायत्री पढ़ तीन अर्घ्यदे इस मन्त्रसे हाथ जोड़ प्रार्थना करे (ॐ भवोद्भवमादित्यरूपमादित्यं सर्वे देवा ब्रह्मरुद्रेन्द्रास्त्वां च कृष्णो यथास्थानध्यानयोगस्थितांते ध्यानसंस्था वासुदेवं नमन्ति। वयं देवमादित्यं व्यक्तरूपं कृत्वा चात्मनि देवसंस्था तथापि संसारार्थं कर्म तत्कारणमेव संध्यासंस्थावासुदेव नमोनमः) इस मन्त्रको पढ़ता हुआ सूर्यमण्डल में हमारा ध्यान करे हाथ जोड़ फिर विष्णु अष्टाक्षरमन्त्र जप हमारे अर्पणकर जलमें हमारा ध्यानकर तर्पण चौबिसनाम मन्त्र से करके विसर्जन करे॥

एकसौछब्बीस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं हे शौनक! इस भांति धरणी श्रीवाराहजी महाराजके मुखारविन्दसे संध्याकर्म आदि नानाभांति विचित्र कथा सुनि हाथजोड़ नम्रहो पूछनेलगी कि हे भगवन्! जो वैष्णवों के लिये आपने पहले बत्तिस अपराध कथन किये हैं वो अपराधी मनुष्य कौनसे उत्तमकर्म करनेसे अपराधोंसे मुक्तहो उत्तम गतिको पावें सो आप कृपा करके वर्णन करें जिसके श्रवणसे मेरा सन्देह दूरहो यह धरणीकी विनयवाणी सुनि वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! हमारे भक्त होके जो लोभसे राजअन्न भोजन करते हैं वो दश हजार वर्ष पर्यन्त नरकमें बास करतेहैं यह वाराह भगवान्का वचन सुनि धरणी भयसे कम्पितहो हाथ जोड़ कहने लगी कि; हे भगवन्! आप कृपा करके यह वर्णन करें कि राजधान्यमें क्या दोषहै? कि जिसके भोजनसे आपका भक्त होकरके भी नरकबास दशहजार वर्ष करताहै यह धरणीकी विनयवाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! राजा लोग

निरंकुश होते हैं इसलिये उनमें रजोगुण तमोगुण अधिक होता है जिसके होनेसे धर्मसे भ्रष्टहो रात्रि दिन जीवहिंसा, स्वेच्छा-दण्ड, भक्ष्याभक्ष्य, पेयापेय, अगम्यागमन आदि विवेकशून्य हो जो मनमें रुचताहै सोई करते हैं और उनको जिस तरफ़ झुकते देखा प्यारके लिये उनके परिजन उसीमें बड़ाई करके ईश्वरके तुल्य बनादेते हैं सो सुनि अपनेको ईश्वर मान निर्भय हो राजा जो चाहताहै सोई करताहै पापका भय नहीं रखता इस लिये राजाके बराबर पापात्मा राजाही हैं हे धरणि! जो हमारा भक्त ऐसे राजाओंका अन्न खाय उसे नरकवास होना क्या आ-श्चर्य है? इन हमारे भक्तोंको ऐसा राजधान्य खाना चाहिये कि जो राजा मन्दिर बनवाय हमारी मूर्ति उसमें स्थापित कर और हमारे भोग रागके लिये जीविका करदे उसमेंसे हमारा भक्त उत्तम २ नैवेद्य बनाय हमारे अर्पणकर पीछे आप भोजन करे तो उस पापमें लिप्त नहीं होता इसभांति वाराह भगवान्का वचन सुनि बड़े हर्षमें हो धरणी पूछनेलगी कि; हे भगवन्! यदि राजधान्य खायाहो तो क्या प्रायश्चित्त करनेसे पवित्रहो? यह वचन सुनि वाराहजी कहने लगे कि, हे धरणि! राजधान्य खाने-वाला पुरुष यदि प्रायश्चित्त किया चाहे तौ एक चान्द्रायण व्रत करे और तिस पीछे एक तप्तकृच्छ्र करे फिर एक सांतपन नाम व्रत करे तौ निरपराधहो हमारी पूजाका फल पावे॥

एकसौसत्ताइस का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! जो पुरुष बे दन्तधावन किये हमारी सेवा पूजन करते हैं वे सब उत्तम कर्मोंको नष्टकर पाप-भागी होते हैं अर्थात् पहले बहुत कालका कियाहुआ कर्म सब नष्ट होजाताहै यह वाराहजीका वचन सुनि धरणी कहनेलगी कि हे स्वामिन्! एक दातून किये विना जन्मभरका उत्तम कर्म

क्यों क्षीण होताहै और कौनसे कर्म करनेसे मनुष्य इस पापसे मुक्त होजाताहै सो आप कृपा करके वर्णन करें यह धरणीका वचन सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! मनुष्यका देह वात, पित्त, कफ करके पूर्ण है और मलका भाण्ड है इसलिये दुर्गन्धपूर्ण मुख दन्तधावन करनेसेही शुद्ध होता है इसलिये जिससे यह पातक बनपड़े सो अपने शुद्ध होनेको यह प्रायश्चित्त करे कि पांच दिन स्नान दन्तधावन भोजन आदि सब कर्मोंको त्याग आकाशशयन करे आकाशशयन उसे कहते हैं कि झूला बांधि उसपर निवास करे और मौन होकर रहे अन्तमें छठेंदिन पञ्चगव्य पानकर हमारा पूजनकर भोजन करे तो इस पातकसे निवृत्तहो और हे धरणि! जो मनुष्य मैथुनकर बे स्नान किये हमारा स्पर्श करते हैं वे मर करके चौदहहजार वर्ष पर्यन्त रेत-कुण्डनाम नरकमें निवास करते हैं यह वाराहजीका वचन सुनि पृथिवी पूछनेलगी कि; हे भगवन्! इस पापसे उद्धार जिस भांति हो सो प्रायश्चित्त आप कथन करें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! गृहस्थ होके हमारे भक्तसे यह अपराध बनपड़े तो तीन दिन अग्निका सेवन करे निरशन करके अर्थात् भोजन त्यागिके व तीन दिन वायुभक्षण करके रहे तो इस पापसे छूटि हमारी पूजाका अधिकारी होय और हे धरणि! जो पुरुष हमारा भक्त होकर मृतक मनुष्यका स्पर्श करते हैं और उस मुर्देके साथ श्मशानमें जाते हैं उन पापियोंके पितर स्वर्गसे भ्रष्टहो श्मशानके शृगाल होते हैं इसलिये उनको यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि सात दिन एकाहार व्रतकर आठवें दिन स्नानकर पञ्च-गव्य पान करनेसे पवित्र होतेहैं और हे धरणि ! जो मनुष्य कामवश होके रजस्वला स्त्रीका संग करते हैं और बे प्रायश्चित्त किये हमारा पूजन करते हैं वह दुष्ट अन्तमें रजनाम कुण्ड नरकमें एकहजार वर्षतक बास करते हैं और जन्म लेकर नेत्रोंसे

अन्धे मूर्ख ब्राह्मण होते हैं इसलिये उनको यह प्रायश्चित्त करना उचित है कि तीन दिन त्रिकाल स्नान कर व मौनहो आकाश-शयनकरें चौथे दिन पञ्चगव्य पानकर पवित्रहो हमारी पूजाका अधिकारीहो और हे धरणि ! जो शव (लाश) का स्पर्श कर बे प्रायश्चित्त किये हमारा पूजन करते हैं वे मरके दश हज़ार वर्ष पर्यन्त गर्भवास करते हैं अर्थात् गर्भमें रहते हैं जब जन्महोने का समय आया तब गर्भहीमें मृतकहो दूसरे गर्भमें जाय निवास लिया इसीभांति दशहज़ार वर्ष व्यतीतहो फिर दशहज़ार वर्ष चाण्डाल योनिमें रहते हैं फिर सातहज़ार वर्षतक जन्म लेलेकर अन्धे होते हैं और शतवर्ष पर्यन्त जलमें मण्डूकहो तीनवर्ष मक्षिकायोनिमें रह पन्द्रहवर्ष वानर होते हैं फिर दशवर्ष कृकलहो सौवर्षतक हस्तीयोनिमें रहते हैं और बत्तीसवर्ष पर्यन्त गदहाहो नववर्ष मार्जारयोनिमें रह ग्यारहवर्ष टिट्टिभनाम जलसमीपके पक्षी होते हैं इसभांति निजकर्मके फलको भोगते हैं इसलिये हे धरणि ! यदि हमारे भक्तसे मृतकस्पर्श पाप बनपड़े तो प्रायश्चित्तके लिये पन्द्रहदिन एकबार भोजनकर हमारा स्मरणकरे और सोलहवें दिन पञ्चगव्य पानकर पवित्रहो हमारा पूजन कर पापसे छूटे ॥

एकसौअट्ठाइस का अध्याय ॥

वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! जो भक्त हमारे पूजन करते अधोवायु त्याग कर बे शौचाचमन किये हमारा सेवन करें वे पापभागीहो अन्तमें शरीरत्यागकर पांचवर्ष पर्यन्त मक्षिकाकी योनि भोगकर तेरह वर्षतक मूषककी योनिमें रहते हैं फिर तीन वर्ष कच्छपकी योनिमें उस पापका फल भोगते हैं इसलिये हे धरणि ! उनको प्रायश्चित्त करके पवित्र होना चाहिये इसका यह प्रायश्चित्तहै कि तीन दिन घृतपान करके अग्निमें हवनकरे

और तीन दिन रात्रिको भोजनकरे तब पवित्रहो हमारे पूजन योग्य होतेहैं और हे धरणि! जो हमारे पूजन करते समय दैव-योगसे विष्ठापतन होजाय तो सचैल स्नानकर आसन धोय चौका लगाय पवित्रहो हमारा पूजनकरे और यदि अपवित्रही हमारा स्पर्श करलेवे तो प्रायश्चित्तकरे कि जलमध्य शय्याबनाय तीन दिन वास करनेसे वे मनुष्य पवित्र होतेहैं यदि हमारे पूजन समयमें मूत्र त्याग होजाय तो यह प्रायश्चित्त करना उचितहै कि पन्द्रह दिन आकाशशयन और एकाहार व्रतकर पवित्रहो हमारे पूजनका अधिकारीहो हे धरणि! जो नीलवस्त्र धारणकरके हमारा स्पर्श करें वेभी प्रायश्चित्तके योग्यहैं यदि प्रायश्चित्त न करें तो शरीर त्यागके पांचसौवर्ष कृमि होके नरकबास करते हैं इसलिये उनको यह करना उचितहै कि तीन चान्द्रायणनाम व्रत करें तो पवित्रहो हमारी सेवा पूजा के अधिकारी हों और हे धरणि! जो पुरुष आचारहीन हमारा पूजन करते हैं उन मूर्खों का किया हुआ पूजन अर्थात् चन्दन, पुष्प, पत्र, धूप, दीप और नैवेद्य आदि कुछभी हम नहीं ग्रहण करते इसलिये उनको प्राय-श्चित्तके भयसे आचारयुक्त होना चाहिये सो आचार इसभांति से करना योग्य है कि पूर्वमुख हो मृत्तिका लेपकर नित्य हस्त पाद प्रक्षालन करे सातबार पैरों में मृत्तिका लेपकरे और तीनबार दोनों हाथों में फिर मुख प्रक्षालनकर आसन में बैठ प्राणायाम कर हमारा स्मरण करते हुये तीनबार शिरका स्पर्शकर तीन २ बार कर्ण और नासिका का स्पर्शकरे फिर तीनबार पवित्र जल से निजशरीर का प्रोक्षणकर कर्म का अधिकारी हो हमारी सेवा पूजाकरे और जो इस विधान से पहले शरीर को वे शुद्ध किये हमारा पूजन करें वे अपने पाप दूर करनेको हे धरणि! महा-सांतपन नाम व्रत करें जिसके करने से वो पवित्र होते हैं और हे धरणि! जो क्रोध में युक्त हो चलचित्त से हमारे पूजन को करते

हैं वे मनुष्य उस पाप से मरण के बाद वन में शतवर्षतक बन्ही होते हैं और तीन सौ वर्षतक मण्डूकस्थल में होते हैं और चौदह जन्मतक राक्षस हो अन्त में यमराज के यहां रेतःकुण्ड नाम नरकमें गिराये जाते हैं बहुतकाल वहां क्लेश भोगके शतवर्षतक गृध्रयोनि में रहते हैं फिर दशवर्षपर्यन्त चक्रवाकनाम जलपक्षी होते हैं इसलिये हे धरणि! काम क्रोध करके युक्त पुरुष हमारा पूजन कभी न करें जब शान्तचित्त और सावधान हो तब प्रीति व भक्ति से हमारी सेवा करे यह वाराह भगवान् का वचन सुनि हाथ जोड़ नम्रहो धरणी पूछने लगी कि; हे भगवन्! यदि यह अपराध मनुष्य से बने तो वह किस भांति पाप से छूट आपकी सेवा का अधिकारी हो यह सुनि वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! इस पाप का प्रायश्चित्त यह है कि एक मास एकाहार होकर वीरासन से रहें और चारमास घी पायस का भोजनकर तीनमास जव को गोदुग्ध में पका करके खायँ पीछे तीन दिन निराहार व्रतकर पवित्र हो हमारी सेवायोग्य होते हैं और हे धरणि! जो पुरुष रक्तवस्त्र धारण करके हमारा सेवन करते हैं अब उनका अपराध सुनो रजस्वला जो स्त्री है उनके रजको वो पुरुष पन्द्रहवर्षपर्यन्त यमलोक में पान करते हैं फिर पृथ्वी में जन्म ले सर्वभक्षी मनुष्य होते हैं और जो पुरुष अन्धकार में हमारी सेवा करते हैं उनकोभी यही पाप होताहै हे धरणि! इन दोनों पापोंके छुड़ाने के लिये नेत्रों को पन्द्रह दिन मूंद के किसी का दर्शन न करे फिर बीसदिन एकबार भोजनकर किसीमहीने में द्वादशी का निराहार व्रतकर फिर गोमूत्र में जवको पकाकर तीन दिन भोजन करे तो उस पातकसे छूट हमारी सेवा का अधिकारी होय और हे धरणि! अब फिर नीलवस्त्र धारण करनेवाले जो हमारे भक्त हैं उनके पातक का निर्णय सुनो जब वो शरीर त्याग करते हैं और प्रायश्चित्त नहीं करते वे पांचवर्ष काष्ठ में घुननाम कृमि हो

अन्त में तीनवर्ष मशक की योनि में निवास करते हैं और दश वर्षतक मत्स्य हो तीनवर्ष तक लवा नामपक्षी और पञ्चवर्ष तक नकुल और दशवर्ष तक कच्छप हो बारम्बार जन्मले २ कर संसार में भ्रमण कर फिर कपोतयोनि में जन्म ले चौदहवर्ष पर्यन्त हमारे मन्दिर में वासकरते हैं हे धरणि ! इस पाप के निवृत्त होने के लिये सातदिन व्रत करके अग्नि सेवन कर फिर तीन दिन तीन २ मुष्टि जवके सत्तुवों का सेवन करे तो पाप से निवृत्त होकर हमारी पूजा का अधिकारी होता हुआ हमारा सेवन कर मुक्ति को प्राप्त होता है ॥

एकसौउन्तीस का अध्याय ॥

वाराह भगवान् कहते हैं, हे धरणि ! जो पुरुष बे धोये वस्त्र को धारण कर हमारा पूजन सेवन करते हैं वे पापात्मा होकर जन्मान्तर में हाथी का जन्म पाते हैं उसे भोग करके एकजन्म ऊंट की योनि में निवास करते हैं फिर बगुला होते हैं उसे भोगकर शृगालयोनि में दुःख भोग घोड़ा का जन्म होताहै तिसके अनन्तर मृग होते हैं हे धरणि ! इन योनियों के दुःखों को भोगकर दरिद्र मनुष्य सात जन्मतक होते हैं इसलिये यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि तीन दिन गोमूत्र में जव पकाकरके भोजनकरे फिर तीन दिन तिल की खली का भोजन कर तीन दिन तीन २ मुष्टि चावल का कण भक्षण करें फिर तीन दिन दुग्धपानकरके फिर तीन दिन पायस का आहार कर तीन दिन निराहार व्रतकर उच्छिष्ट वस्त्र के पाप से निवृत्तहो हमारे पूजनका अधिकारी हो हे धरणि ! जो पुरुष कुत्तेका जूठा कोई पदार्थ हमारे अर्पण करताहै वो पापात्मा अन्तमें अनेक दुःखोंको भोग करताहै और मर करके सात जन्म पर्यन्त श्वानकी योनिमें जन्म पाताहै फिर सातही जन्मतक शृगाल होताहै उसे भोगकर सात जन्मतक उलूकनाम पक्षीहो

अन्तमें पवित्रहो वेदका जाननेहारा उत्तम कुलका ब्राह्मण होता है हे धरणि ! इसलिये इस पापका † प्रायश्चित्त यहहै कि तीन दिन मूल कन्दका आहार व त्रिकाल स्नान करे फिर तीन दिन शाकाहार करे और तीन दिन दुग्धका तीन दिन दहीका तीन दिन खीरका फिर तीन दिन निराहार रहि पवित्रहो हमारी सेवा का अधिकारी होय हे धरणि ! जो भक्त वाराहका मांस भक्षण करताहै उसके पापका फल सावधानहो श्रवणकरो वो पुरुष दश जन्मतक वाराहका जन्म पाताहै और इक्कीसजन्म तक व्याध होताहै फिर मूषकयोनिमें चौदहवर्ष पर्यन्त रहके उन्नीसवर्ष राक्षसयोनिमें रहताहै फिर शल्लजीवकी योनिमें आठ वर्ष रहके तीस वर्ष पर्यन्त व्याघ्रयोनिमें रहताहै हे धरणि ! वाराहके मांस का भक्षण करनेहारा इन योनियोंके दुःखोंको भोग करके उत्तम ब्राह्मणके कुलमें जन्म ले विष्णुभक्त होता है इस लिये इसका प्रायश्चित्त इसीजन्ममें करना चाहिये हे धरणि ! पांचदिन गोमय भक्षणकर सातदिन जलपान करके रहे फिर तीन दिन विना लोन का सक्तु तीनमुष्टि भोजनकर सातदिन तिलभक्षण करे फिर सात दिन गोदुग्ध भोजनकर उनचास दिन अहंकार वर्जित मौनहो त्रिकाल स्नान करता हुआ मूंग और जवका आहार करनेसे उस पापसे निवृत्तहो फिर हमारी पूजाका अधिकारी होय और हे धरणि ! जो हमारा भक्त होके जालपादनामक पक्षीका मांस भक्षणकरे तो वो मरकरके पन्द्रहवर्षतक जालपादनाम पक्षी होता है फिर दश व नव वर्ष पर्यन्त कुम्भीन नाम वनचारी जीव होते हैं फिर पांच वर्षतक शूकर योनिमें रहके फिर पवित्रहो ब्राह्मण के कुलमें जन्म लेतेहैं तब हमारी भक्ति करनेसे सब पापोंसे मुक्त हो हमारे लोकको प्राप्त होतेहैं हे धरणि ! इस पापका यह प्राय-

† "प्रायो नाम तपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते । तपो निश्चयसंयुक्तं प्रायश्चित्तमिति स्मृतम्" ॥ १ ॥

श्चित्त है कि पन्द्रह दिनका इस भांति व्रत करे तो पवित्र होताहै तीन दिन जवान्न, तीन दिन वायुभोजन, तीन दिन फलाहार, तीन दिन तिलभक्षण और तीन दिन अलोना भोजन करनेसे पवित्र होकर सब पापोंसे मुक्त होताहुआ हमारे पूजनका अधिकारी होताहै हे धरणि ! जो मनुष्य दीपका स्पर्शकर बेहाथके प्रक्षालन किये हमको स्पर्श करतेहैं वे पापात्मा मर करके साठि वर्षतक कुष्ठरोग करके पीड़ित होतेहैं और चाण्डाल योनिमें जन्म पातेहैं इसलिये अवश्य प्रायश्चित्त करना चाहिये हे धरणि ! इसका प्रायश्चित्त यह है कि किसी महीनेकी द्वादशीका व्रत निराहार कर आकाशशयन करे तो इस पापसे मुक्तहो हमारे सेवनके योग्य होते हैं और हे धरणि ! जो मनुष्य श्मशान में जाय वे स्नान किये हमारा स्पर्श करतेहैं उनका पाप श्रवण करो वो मनुष्य मर करके चौदह वर्षपर्यन्त शृगालयोनिमें रहते हैं फिर सात वर्ष गृध्रनाम पक्षीकी योनिमें रहि चौदह वर्ष प्रेतयोनिमें निवासकर अन्तमें तीस वर्ष पर्यन्त प्रेतोंका उच्छिष्ट भोजन पाते हैं इसलिये श्मशान गमनका अवश्य प्रायश्चित्त करना चाहिये इतना श्रीवाराह भगवान्‌के मुखारविंदसे वचन सुनि धरणी पूछने लगी कि; हे भगवन् ! एक विस्मय हमारे चित्तमें उत्पन्न हुआ सो आप कृपा करके निवृत्त करें कि आप तो बारम्बार श्मशानकी निन्दा करतेहो और शिवजीको सर्वोपरि वर्णन करतेहो इसमें किस भांति हमारा संशय दूर होय कि जो शिवजी कपाल हाथमें लिये आठोयाम निजगणोंके साथ श्मशानही में निवास करतेहैं और सब देवोंमें उत्तम गिने जातेहैं और आप भी उनको पूज्य कथन करतेहैं इसमें क्या भेदहै कि आपका भक्त एकबारभी श्मशानमें जाय तो बे प्रायश्चित्त किये आपसे विमुख हो नानायोनिका दुःख भोगे और जो रात्रिदिन वहां निवास करे वो पवित्र गिनाजाय यह सुनि वाराह भगवान् कहने लगे कि;

हे धरणि! संदेह दूर होनेको हम कथन करतेहैं सो सावधान होकर सुनो जिस समय त्रिपुरका भस्म शिवजीने कियाथा तो यह विचार करो कि उस पुरमें बालक, वृद्ध, उत्तम २ स्त्रियां और अनेक पक्षी पशु आदि अवध्य जीवभी भस्म हुये उसके अनन्तर उन सबोंके भस्म करनेका पातक शिवजीको आय घेरा उस करके शिवजीका दिव्यैश्वर्य ज्ञान-वैराग्य आदि सब पुरुषार्थ नष्ट होगया और आप शून्यचित्तहो व्याकुल बैठे शोच रहेथे और शिवजी के गणभी बड़े आश्चर्यमें हुये इस दशाको देखि कुछ किसी के विचार में न आया कि क्या कारण है जिससे शिवशून्य हो रहे हैं हे धरणि! तब तो शिवजी के समीप हम जाय पहुँचे तो हमको भी देखि वैसेही चुपरहे हमारे साथ भाषणमात्र भी न किया और आदर तो कौन कहे तब यह दशा शिवजी की देखि हम बोले कि आप किस दशा में हो और क्या विचार कर रहे हो ? किस लिये अपनी विभूति प्रभुता और योगैश्वर्य भूलि मौन साधन किया आप सब देवताओं के प्रभु अपने को किस भांति भूले यह सब यथायोग्य कथन करो और हमारे तरफ दृष्टि करो अपनी योगमायाका स्मरण करो आपकी प्रसन्नता के लिये यहां हम आये हैं हे धरणि! यह हमारा वचन सुनतेही कुछ चैतन्य हो बड़ी मधुरता से यह बोले कि हे विष्णो! आपसे हमारा कुछ अन्तर नहींहै और ब्रह्माजीका भी आपसे कुछ अन्तर नहीं है आपके प्रसाद से हमने त्रिपुर का वध किया उस त्रिपुर के भस्म होनेके समय बहुत से जीव निरपराध और अवध्यभी भस्म भये उस अपराध से हम क्लेशित और व्याकुल हो रहे हैं इसलिये आप कृपा करके कोई उपाय ऐसा कहें जिसमें हमारा क्लेश निवृत्त होय हे धरणि! शिवजी की इस प्रकार वाणी सुनि हमने यह कहा कि आप कपाल का माला धारणकर शीघ्र समलस्थान को जाय निवास करो यह हमारा वचन सुनि शिवजी यह

कहने लगे कि समलस्थान कौनहै जहां जाय हम निवास करें यह सुनि हमने कहा कि हे शिवजी! श्मशान की समलसंज्ञा है वहां कपालमाला धारणकर निजगणों के साथ निवास करो वहां चित्त तुम्हारा अति प्रसन्न और सावधान होगा वहां हज़ारों वर्ष टिक फिर गौतमजीके स्थानको जावो वहां जानेसे तुम्हारा चित्त सुखी होगा हे धरणि! उस दिन से लेकर शिवजीने श्मशान बास लिया इसलिये श्मशान को जो हमारा भक्त जाय उसे यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि पन्द्रह दिन तक चौथे २ पहरमें भोजन करे और आकाशशयन करे कुशासन में और प्रातःकाल पञ्चगव्य पानकरे तो उस पापसे मुक्त होकर हमारे लोक को प्राप्त होय॥

एकसौतीस का अध्याय॥

हे धरणि! जो पुरुष पिण्याकभक्षण करके हमारा सेवन करें उनको प्रायश्चित्त करना उचितहै. बे प्रायश्चित्त किये वो पुरुष मरकरके उलूकनाम पक्षी की योनि में जन्म पाते हैं उसे त्यागि कच्छप होते हैं इसलिये यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि तीन दिन जव गोमूत्र में पकाकर भोजन करें फिर एक दिन गोमूत्र पानकरें और रात्रि को आकाशशयन वीरासन से कर प्रातःकाल पञ्चगव्य पान करनेसे पवित्र होते हैं और हे धरणि! जो मूर्ख वाराह मांस हमारे नैवेद्य में देवें वो जितने वाराह के देह में रोम होते हैं उतनेही हज़ार वर्ष घोर नरक में देनेवाला पुरुष रहता है फिर संसारमें जन्म लेकर जन्मान्ध होताहै इसलिये उसे यह प्रायश्चित्त करना उचितहै कि सात दिन तक फलाहार करे सात दिन मूलाहार करे और सातदिन दुग्ध भोजनकरे सातदिन गौका मठा भोजन कर सातदिन जव को गोमूत्र में पकाकर भोजन करे तब पवित्र और निष्पाप हो हमारा सेवनकर उत्तम लोक को प्राप्त होता है और हे धरणि! जो पुरुष मद्य पान करके हमारा पूजन

करते हैं सो मरकरके दशहज़ारवर्ष तक दरिद्री होते हैं जन्म जन्म में इसलिये अपने पाप के दूर करने को मद्य अग्नि में तप्त करके पान करें औ प्राणत्याग करने से पवित्र हो उत्तम गति को जाते हैं और हे धरणि! जो पुरुष कुसुम्भशाक भक्षण करते हैं वे पुरुष उस पाप से नरक बासकरके पन्द्रहवर्ष पर्यन्त ग्रामशूकर होते हैं फिर श्वानयोनि में जाय तीनवर्ष रहके शृगालयोनि में जन्म ले एकवर्ष रह पवित्र होते हैं इसलिये यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि यदि आपही भक्षण करें तो एक चान्द्रायण व्रत करनेसे शुद्ध होते हैं और यदि हमारे नैवेद्य में कुसुम्भ का शाक निवेदन करें तो बारह दिन पयोव्रत करने से पवित्र होते हैं और हे धरणि! जो पुरुष पराया वस्त्र धारण करके हमारा पूजन करते हैं वो मर करके मृगयोनि में बहुत काल रहते हैं इसलिये उनको आठ व्रत करना चाहिये और माघमहीने की द्वादशी को व्रतकर रात्रि को जलशयन करें और प्रातःकाल पञ्चगव्य पान करने से पवित्र होते हैं और हमारे लोक को जाते हैं और हे धरणि! जो पुरुष नवीन अन्न बे हमारे नैवेद्य किये आप भोजन करते हैं वे पातकी होते हैं और उनके पितर पन्द्रह वर्ष उनके हाथ से जल और पिण्डदान नहीं ग्रहण करते हैं इसलिये उनको तीनरात्रि व्रत करना चाहिये और चौथेदिन आकाशशयनकर पवित्र होते हैं और पांचवेंदिन पञ्चगव्य पानकरें तो पवित्रहों और हे धरणि! जो पुरुष चन्दन और माला बे दिये हमको धूप दान करते हैं वे भी पापात्मा मरकरके वस्त्रके कृमि होते हैं इस लिये उनको अपने प्रायश्चित्त करनेको किसी मासकी शुक्लद्वादशीका व्रत करना चाहिये और त्रयोदशीको पञ्चगव्य पानकर इस पातक से मुक्तहों हे धरणि! जो मनुष्य पैरमें जूता धारण कर बे पाद प्रक्षालन किये हमारा पूजन करते हैं वे पापात्मा जन्मान्तरमें तेरह सौ वर्षतक चर्मकारकी योनिमें रहते हैं फिर शूकरयोनिमें

रह श्वान होते हैं तब उनका पाप निवृत्त होताहै इस लिये यह प्रायश्चित्त करें तो पवित्रहों कि हमारे मन्दिरकी प्रदक्षिणा एक मासतक एक हजार करें और नित्य पञ्चगव्य पानकरें तो पवित्र हों व हमारी पूजाके अधिकारीहों और हे धरणि ! जो मनुष्य बे भेरी शब्द किये प्रातःकाल हमको जगाते हैं वे पापी मरकरके जन्म २ में बधिर होते हैं इसलिये उनको यह प्रायश्चित्त करना चाहिये जिस किसी महीनेकी शुक्लद्वादशीका व्रत करें और आकाशशयन करें तो पवित्र होते हैं और हे धरणि ! जो मनुष्य अजीर्ण भोजनकर अन्नके अपच होनेसे डकार करते हमारा पूजन करें वे पापी जन्मान्तरमें उस पापसे श्वानयोनिमें जन्म पाते हैं फिर मरके मर्कट होते हैं फिर छाग होते हैं फिर शृगाल होते हैं फिर मूषकहो अन्ध मनुष्यहो पवित्र होते हैं इसलिये उनको यह प्रायश्चित्त करना उचितहै कि तीनदिन गोमूत्रमें जवान्न पकाकरके खायँ फिर तीनदिन मूलाहार तीन दिन पायस तीनदिन सत्तू और तीनदिन वायुभोजन तीनदिन आकाशशयन करने से और अन्तमें पञ्चगव्य पान करनेसे पवित्र होते हैं हे धरणि ! ये प्रायश्चित्त हमने तुम्हारी प्रीति करके भक्तोंके उद्धारके लिये वर्णन किये जो इस कथाको प्रातःकाल उठकरके अथवा किसी पुण्य दिनमें श्रवण करें वे सब पापोंसे मुक्तहो हमारे धामको निज पितरोंके साथ जायँ हे धरणि ! जो २ तुमने प्रश्न किया सो २ हमने वर्णन किया अब क्या सुना चाहतीहो ?॥

इति श्रीवाराहपुराणे पूर्वार्द्धं समाप्तम् ॥

श्रीवाराहपुराण भाषा ॥

उत्तरार्ध ॥

एकसौइकतीस का अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक ! इसभांति श्रीवाराहजी भगवान्के मुखारविन्दसे अनेक भांतिके प्रायश्चित्तोंका वर्णन सुनि अतिप्रसन्नहो हाथ जोड़ विनयपूर्वक पृथिवी कहनेलगी कि; हे भगवन्! आपने मुझपै बड़ीही अनुग्रह की जो जीवोंके उद्धार के लिये अनेकभांतिके पापोंका प्रायश्चित्त वर्णन किया अब आप कृपा करके यह वर्णन करें कि जिसके सुननेसे सब भांतिके पातक दूरहों और आप यह भी कथन करें कि पृथिवीमें कौन २ सा तीर्थ वा क्षेत्र आपको प्रीति देनेवालाहै और गुप्तहै प्रथम जिसभांति आपने कुब्जाम्रकका वर्णन किया वैसेही और जो आपका परमप्रिय कोई स्थानहो उसका वर्णनकरें यह सुनि श्री वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि ! जो पूछतीहो तो सावधान होकर श्रवण करो मेरा अतिप्रिय कोकामुख नाम क्षेत्रहै जिस भांति कुब्जाम्रकहै उससे न्यून किञ्चित् भी नहीं है जिसे शूकर-क्षेत्र भी कहते हैं सो क्षेत्र श्रीभागीरथी गङ्गाजी के निकट सब वाञ्छाका पूर्ण करनेहारा और मुक्तिका दाता है यह वाराह भगवान् का वचन सुनि धरणी कहनेलगी हे भगवन् ! आप कृपा करके उस क्षेत्रका माहात्म्य वर्णन करें कि उसका जलपान करने से वा वहां निवास करने से वा उस स्थान में शरीर त्याग करनेसे जो २ फल प्राप्त होता है सो २ आप वर्णन करें कि जिसके श्रवणसे मेरा संदेह दूर होय यह सुनि वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि ! वहां शरीर त्याग करनेसे अथवा उसके

सेवनसे जो २ फल प्राप्त होता है सो २ हम वर्णन करते हैं साव-धान होकर सुनो और उस शूकरक्षेत्र में जो २ और भी तीर्थ हैं सो २ भी श्रवण करो कि जहां प्राण त्याग करने से इक्कीस कुलों के साथ पुरुष मुक्त होता है और जिसके दर्शनमात्र से सातजन्म का किया हुआ पाप निवृत्त होजाता है और मरकरके सात जन्मतक धनाढ्य, गुण करके युक्त और उत्तमकुल में जन्म पाता है और जो वहां ज्ञानपूर्वक प्राण त्याग करते हैं वे तो चतुर्भुज शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण कर साक्षात् हमाराही रूप होकर श्वेतद्वीपको जाते हैं और भी हे धरणि! सुनो उस स्थान में जो चक्रतीर्थ नाम तीर्थ है तिसमें वैशाखमास के शुक्ल द्वादशी को स्नान करनेसे दशहज़ार दशसौ वर्षतक पुरुष उत्तमकुल में धन धान्य करके युक्त उत्तम स्वरूप धार जन्म पाता है और अन्त में वैष्णवीदीक्षा को प्राप्त हो सब पापों को त्यागकर हमारे रूप को धारण कर चक्रतीर्थ के प्रभाव से हमारे लोक को जाता है जिस चक्रतीर्थ में अति उग्र तप करके चन्द्रमा ने हमको प्रसन्न किया यह सुनि बड़े हर्षसे हाथ जोड़ धरणी बोली हे भगवन्! किस कामना के लिये चन्द्रमाजी ने आपका आराधन किया सो वर्णन कीजिये यह सुनि वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! अब चन्द्रमा का अतिपवित्र वृत्तान्त श्रवण करो जिस लिये उन्होंने तप किया और हमारे अनुग्रह से जो फल उनको प्राप्त हुआ चन्द्रमा का जब जन्म हुआ तब जाय कोकामुखक्षेत्र में ब्रह्माजी की आज्ञा से तप करने लगा उसके शुद्ध तप करने से हम प्रसन्न होकर चन्द्रमा के समीप प्रकट भये तब तो हमको देखि हमारे उग्रतेजसे मूर्च्छित हो भूमि में गिर गया और बड़े २ नेत्र मूंदि करके हाथ जोड़ भयभीत होकर स्तुति करने लगा तब तो उसकी दीनता व विनय देखि हम प्रसन्न हो बोले कि; हे सोम! डर त्याग सावधान हो वर मांगो जिस निमित्त इतना

क्लेश सहके तुमने तप किया अब तुम्हारे तप से हम प्रसन्न हैं जो इच्छा हो सो मांगो यह सुनि अतिप्रसन्न होकर चन्द्रमा बोला कि हे स्वामिन् ! यदि आप प्रसन्न हैं और वर देते हैं तो यही वर दीजिये कि जौलौं यह सृष्टि रहे तौलौं आपके चरणारविन्द में मेरी अचल भक्ति हो और यह मेरा रूप सातोंद्वीप में सबके समीपही दीखे और मेरे नाम से यज्ञों में ब्राह्मण सोमपान करें और उनकी उत्तमगति हो और हे भगवन् ! मेरे क्षीण होने से पितर निज २ भागको ग्रहणकर तृप्त हों और अधर्म में मेरी बुद्धि कभी न हो और नक्षत्र, औषधी और ब्राह्मणों का मैं राजा होऊं यह सोमकी प्रार्थना सुनि हम "तथास्तु" कहके अन्तर्धान भये और चन्द्रमा वाञ्छित वर पाय अपने लोक जाय निवास करनेलगा हे धरणि ! जिस स्थान में चन्द्रमा तप करके सिद्ध हुआ था वह अतिपुनीत तीर्थ और सब मनोरथ सिद्ध करनेहाराहै उस तीर्थ में जो तप करते हैं अथवा निज पितरोंको पिण्डदान तर्पण करते हैं उनके पितर यमबाधा से मुक्त होकर उत्तमगतिको पाते हैं और करनेवाला शरीर त्याग करनेसे तीस हजार वर्ष पर्यन्त वेदविद् उत्तम ब्राह्मण धन धान्य करके पूर्ण होता है और हे धरणि ! अन्त में उसकी मुक्ति होती है अब हम तीर्थका चिह्न वर्णन करते हैं सो सुनो जिससे सोमतीर्थ का ज्ञान हो वैशाख महीने के कृष्णपक्ष की द्वादशी तिथि को अति अन्धकार होने से सर्वत्र कुछ पदार्थ नहीं दीखता और उस क्षेत्र में तो विना चन्द्रमाही के प्रकाशपूर्वक सब भूमि दीखती है हे धरणि ! यह सोमतीर्थ का चिह्न हमने वर्णन किया ॥

एकसौबत्तीस का अध्याय ॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि ! अब हम शूकरक्षेत्र का माहात्म्य वर्णन करते हैं सो श्रवण करो हे धरणि ! जिस स्थान

के प्राण त्याग करने से शृगाली मनुष्ययोनि में अतिसुन्दरी व सब गुणों करके युक्त राजकन्या हुई और गृध्रभी मरकरके मनुष्यरूप अतिरमणीय धारण कर राजपुत्र हुआ कि जिसके श्रवणसे अतिआश्चर्य होता है सो सुनो यह सुनि धरणी विनयपूर्वक पूछनेलगी कि हे भगवन्! आपने बड़ी आश्चर्यकी बात कही कि शृगाली और गृध्रने दोनों मरनेमात्र से राजघर में जन्म पाया अब आप उन दोनोंका वृत्तान्त कहें कि; किस कारण उन्होंने प्राणत्याग किया और किस राजा के पुत्र व कन्या भये व अन्त में फिर वे दोनों किस गतिको प्राप्त भये सो वर्णन करें यह सुनि वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! अब हम दोनों का वृत्तान्त वर्णन करते हैं सो श्रवण करो त्रेतायुग के अन्त में व द्वापर के आदि में कम्पिलानाम नगर में ब्रह्मदत्तनामक राजा हुआ तिस राजाके सोमदत्तक नाम सब गुणों करके युक्त सुशील और धर्मात्मा पुत्र हुआ जिसके गुणों को सब काल में शत्रुभी प्रशंसा किया करते थे सो सोमदत्त किसी समय पिता की आज्ञासे पितृकार्य के लिये आखेट करने को वनमें गया वहां दैवयोग जीव तो उस जङ्गल में अनेक थे परन्तु हाथ कोई न लगे और वह सोमदत्त इधर उधर घूमरहा था कि दृष्टिमें एक शृगाली आई उसे देखि सोमदत्तने बाण चलाया सो बाण उसके लगा और पीड़ासे दुःखी हो भगी जाय गङ्गाजी में जल पिया व जलके पीतेही गिरी और प्राण छुटगया सो हे धरणि! उस शृगाली का प्राण सोमतीर्थ में छुटा और सोमदत्त भी क्षुधा तृषा करके पीड़ित उसी जङ्गल में एक बटवृक्ष था वहां जा पहुँचा तो क्या देखता है कि वटकी शाखापर एक गृध्र सुखपूर्वक निवास कररहा है उसे देखि एक बाण ऐसा मारा कि उस बाणके साथही वह गृध्र तड़फड़ाय के भूमि में गिरा व गिरतेही प्राण त्याग दिया तब तो सोमदत्त ने उस गृध्र का पंख बाण में लगाने के विचारसे घर पहुँचा व

आय पिता को सारा वृत्तान्त सुनाय अपने काम में प्रवृत्त हुआ हे धरणि! उस शूकरक्षेत्र के प्राण त्याग करने से गृध्र तो जाय कलिङ्गराज का पुत्र अतिरमणीय गुणों करके युक्त हुआ और शृगाली तो अतिरूपवती कान्तिसेननाम राजा की कन्या हुई और दैवयोगसे राजा कान्तिसेन और कलिङ्गराज से पहलेही मैत्री बनरहीथी इसलिये दोनों ने परस्पर स्नेहवश होकर विवाह का सम्बन्ध करलिया जब विवाह हुआ तो हे धरणि! कान्तिसेनराजा की कन्या और कलिङ्गराजका पुत्र ऐसे परस्पर स्नेही भये कि मानो अनेक जन्मोंसे मैत्री चली आती है दोनों परस्पर ऐसे प्रेमरसमें मग्न हुये कि क्षणमात्र भी त्याग न सके यदि एक को एक न देखे तो ऐसे व्याकुल हों कि वह वियोग सहा न जाय कलिङ्गराज ने भी निजपुत्र को गुणवान् व प्रजामें अनुरागवान् देखि व अपनी अवस्था को वृद्ध देखि यह विचार किया कि पुत्र को राज्य दे वनमें जाय ईश्वरका आराधन करें यह विचार उत्तम मुहूर्तमें पुत्रको राज्याभिषेक कर आप साधु होकर वनको सिधारा और पुत्रभी राज्यपाकर नीतिपूर्वक प्रजाओंका पालन करनेलगा समय २ में उस राजाके पांच पुत्र बड़े रूपवान् और गुणके आगर उत्पन्न भये पुत्रों को देखि राजा व रानी दोनों बड़े हर्ष से प्रीतियुक्त राज्यभोग किया करतेथे कि एक दिन रानी राजाको एकान्त में हाथ जोड़ बड़ी विनय से यह कहनेलगी कि; हे महाराज! आप हमारे पति और ईश्वर हैं इसलिये मैं आपसे कुछ विनय करना चाहती हूं सो आप क्षमा करके अङ्गीकार करें तो मैं कहूं यह निजरानी की विनय सुनि राजा बड़े हर्षसे कहनेलगा कि हे प्रिये! ऐसी कौन बात दुर्लभ है जिस लिये विनय तुम करती हो जो इच्छा हो सो कहो और विश्वास रक्खो तुम्हारी प्रार्थना कभी भङ्ग न होगी जो चाहोगी सोई करूंगा हमने आजतक कभी मिथ्या भाषण नहीं किया और तुम्हारे लिये तो कौनसी बात

कठिन है जो न होसके यह निजपति के मुखका वचन सुनि रानी दोनों हाथों से निजपति के चरणों को पकड़ यह कहने लगी कि मैं यही चाहती हूं कि, हे महाराज ! जब दोपहर का समय हो तब मैं एकान्त जाय इकल्ली शयन करूं उस समय मेरे को कोई न देखे यह वर मैं चाहती हूं और मेरी वाञ्छा किसी राजभोगमें अब नहीं रही जो २ सुख करना था सो २ सब करलिया यह रानी का वचन सुनि राजपुत्र हँस करके कहनेलगा कि; यह कौन सी बड़ी बात है जहां तुम्हारा चित्त चाहे वहां खुशी से शयन करो जो तुम्हारे वे हुक्म जायगा सो दण्डभागी होगा यह सुनि रानी तो जाकर मध्याह्न समय में एकान्त शयन करने लगी वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इसीभांति सतहत्तर वर्ष व्यतीत हुये जब अठहत्तरवां वर्ष लगा तो अकस्मात् राजाको यह बुद्धि उत्पन्न हुई कि देखो कितेक दिनों से रानी का और हमारा दिन में वियोग रहताहै सो विचार करना चाहिये कि यह हमारी रानी दिन में मध्याह्नसमय एकान्तमें कौनसा व्रत ध्यानयोग समाधि करती है जिस लिये एकान्त सेवन करती है और धर्मशास्त्र में भी आचार्योंने यह धर्म कहीं नहीं कहा कि मध्याह्नमें स्त्री एकान्त इकल्ली शयन करे और मनुप्रभृति धर्मशास्त्र के आचार्यों के प्रतिकूल कौनसा धर्म अथवा जादू टोना क्या नित्य किया करती है ? जो मनुष्य व्रत करते हैं वे रक्तवस्त्र शृङ्गार और ताम्बूल आदि गन्ध द्रव्य नहीं धारण करते यह रानी सब कुछ धारण करती है त्याग भी किसी पदार्थका नहीं रखती इसमें कुछ विचार करना चाहिये इसलिये और तो क्या विचार करना छिप करके इसे देखें कि किस अवस्था में है यह शोच विचारकर राजा रात्रि में तो रानीके साथ व्यतीत किया प्रभात होतेही निज आवश्यक कर्मों से निवृत्त हो छिप करके जहां रानी नित्य मध्याह्नमें निवास करती थी वहां जाकर उसकी शय्या के नीचे राजा देखने लगा तो रानी

होतेही मध्याह्न वहां आय अतिक्लेश से निजशय्या में पड़के ऊंची श्वास दुःखकी मारी लेती हुई यह कहने लगी कि हे परमेश्वर! मैंने पूर्वजन्ममें कौनसा पाप किया कि जिसका फल मैं भोगरही हूं देखो मेरा पति भी यह मेरी दुर्दशा नहीं जानता व और भी कोई इस मेरे दुःखको नहीं जानते मेरा शीश फटा जाता है इस क्लेशसे तो मरनाही भला है परन्तु नहीं जानती कि मेरी मृत्यु क्यों नहीं होती देखो पतिकी सेवा त्याग एकान्तमें इकल्ली रहना मेरे को अयोग्य है परन्तु क्या करूं अभी तो जबतक मेरा वृत्त कोई नहीं जानता तबतक तो मैंही दुःखी हूं यदि यह किसी ने मालूम किया तो हमसे भी अधिक हमारा प्राणनाथ राजा भी दुःखी होगा अब किसी उपाय से यदि मैं शूकरक्षेत्र को जाऊं तो यह क्लेश मेरा निवृत्त हो इस भांति रानी शिरकी विषम वेदना से पीड़ित कह रहीथी कि राजा भी पलंग के नीचे से प्रकट होकर व बड़ी प्रीतिसे निजरानी को उठाय हृदयमें लगाय आश्वासन-पूर्वक मधुरवाणी से कहने लगा कि हे प्रिये! क्यों इतना क्लेश सह दुःखी होरही हो आज हमने तुम्हारा क्लेश जाना आजतक तुमने दुःख सहलिया व हमसे निवेदन क्यों नहीं किया कि जो हम उत्तम २ वैद्योंको बुलाय औषध आदि उपाय करते यह सब दुःख दूर होजाता परन्तु अब हमने जाना इसका उपाय औषध, मन्त्र, यन्त्र आदि करके दूर करेंगे अथवा जिस भांति बनेगा सोई उपाय किया जायगा जिसमें तुम सुखी होवोगी और जो तुम शूकरक्षेत्र की यात्रा कहतीहो सोभी दुर्लभ नहीं है परन्तु तुमने तो व्रतके बहाने से इतना क्लेश भोगा इतना निज प्राण-प्यारे पतिका वचन सुनि रानी बहुत हर्ष में हो कहने लगी कि हे महाराज! आप जो पूछते हैं सो अवश्य हम को कहना चाहिये परन्तु ठीक २ हमारे कहने से आपको क्लेश होगा इसलिये आजतक हमने अपना वृत्तान्त नहीं कहा और आप राजपुत्र

हैं आजतक केवल सुखही में रहे दुःख देखा नहीं और यह भी है कि आपके अन्तःपुर में अनेक सुन्दरी अप्सराओं को भी लज्जित करनेवाली अनेक स्त्रियां हैं अकेली हम क्लेशमें भी रहें तो रहने दीजिये जिसमें आप क्लेशितहों सो न करें आप हमारे पतिरूप साक्षात् परमेश्वर हैं हमको सदा पूछनेसे भी वही कहना चाहिये जिसमें आपका मन प्रसन्नहो और पतिव्रता स्त्रियोंका यही सनातनधर्म है कि सदा पतिको सुख दें दुःख देनेवाली स्त्री नरक जाती है यह धर्मयुक्त निजप्राणप्रिया रानीका वचन सुनि राजा कलिङ्गाधिप कहने लगा कि हे प्रिये! चाहे हमको शुभ हो वा अशुभ हो परन्तु यथार्थ हमारे पूछने से तुमको कहना उचित है पतिव्रता स्त्रियोंका यही धर्म है जो धर्म हो वा अधर्म हो निजपति से सब सत्य २ प्रकट करे यह सनातनधर्म विचारके गुप्त रखना तुमको योग्य नहीं है यह निजपतिका वचन सुनि व धर्म विचार रानी यह बोली कि, हे महाराज! यदि आप बारम्बार पूछते हैं तो प्रथम यह कीजिये कि, निज बड़े पुत्रको बुलाय राज्याभिषेक कर उसे राज्य सौंप मुझे साथ ले आप शूकरक्षेत्र को चलें तो मैं कहूंगी अन्यथा नहीं कहसक्की यह सुनि राजाने निज मन्त्रियों को और पुरोहित को आज्ञा दी कि शीघ्र विधानपूर्वक सब सामग्री इकट्ठी करो बड़े पुत्र का अभिषेक करना होगा यह सुनि मन्त्रियों ने बड़ी प्रीति से राजआज्ञा मान सब पदार्थ इकट्ठेकर राजाको विदित किया उसे सुनि राजा बड़ीप्रीतिसे उत्साहपूर्वक निज ज्येष्ठपुत्रका उत्तम मुहूर्तमें अभिषेक कर व राज्य दे प्रधानों को शूकरक्षेत्र जानेकी आज्ञा दी सो सुनि मन्त्रियों ने राजा की आज्ञानुसार सब तैयारीकर राजासे निवेदन किया सो सुनि राजा रानीको साथ ले और थोड़ेसे शिष्ट वृद्ध पुरवासियों के साथ मङ्गलपूर्वक शूकरक्षेत्रकी यात्रा की और पुत्रको बुलाय बड़ीप्रीति से मस्तकको सूंघ यह बोला कि हे पुत्र! यदि बहुतकाल सुख-

पूर्वक राज्य किया चाहतेहो तो यह हमारा वचन कभी न भूलना कि किसीसमय दान न बन्द करना व सुपात्र में दान देते रहना व बालक, स्त्री, वृद्ध जो शरणागत आयेहों उनकी सदा रक्षा रखनी जो चोर, लुटेरे, अधर्मी, परस्त्रीगामी हों उनको दण्ड देना औ परस्त्री कैसीही सुन्दरी हो उसमें लोभ नहीं करना परन्तु ब्राह्मणी तो विशेष करके त्यागना और हे पुत्र ! परधन में लोभ न करना अन्यायसे जो धन आया हो उसे स्पर्श नहीं करना और शिष्ट वृद्धोंकी आज्ञा माननी व उनका आदरभी सदा करते रहना व सब कालमें प्रमाद न करना शरीर की सदा रक्षा रखनी और विचार करके दण्ड देना जल्दी किसीके विश्वासमें नहीं आना जो ब्राह्मण कहें उसे अङ्गीकार करना व आश्रितों का पोषण भलीभांति करना जिसमें वो दुःखी न रहें हे पुत्र ! यदि हमारा प्यार चाहते हो तो इन बातों को भूलना नहीं इसभांति हे धरणि ! निज पिता कलिङ्गाधिप का वचन सुनि राजपुत्र मोह से विवश हो निज पिताके दोनों चरण पकड़ कहने लगा कि; हे महाराज ! मैं तो बालक हूं आजतक खेल में व स्वतन्त्र रहनेके सिवाय और कुछ भी नहीं जाना आप यह भार मुझे क्यों देते हो ? सर्वथा इसमें मेरी अरुचिहै इसलिये आपतो राज्यकी व मेरी रक्षा करें और मैं बालकपनेका क्रीड़ा व आनन्द करूं यह सुनि मधुर वचनों से कलिङ्गाधिप कहने लगा कि हे पुत्र ! जो कहते हो सो सब ठीक है परन्तु हमारी भी आज्ञा तुमको माननीय है इससे जो हम कहें सो प्रीतिसे करो पिता का धर्म यही है जो पुत्रको दे यह कह कलिङ्गाधिपने तो शूकरक्षेत्रकी यात्रा की और राजा के साथ पुरवासी और आश्रित बाल, वृद्ध, स्त्री, पुरुष बहुत साथ होलिये कलिङ्ग देश से चलते २ कितेक दिनों में आय सुखपूर्वक शूकरक्षेत्र में पहुँचे और पहुँचि यथास्थान में निवास कर राजा रानी से बोला कि; हे प्रिये ! जो तुमने कहा कि, शूकर-

क्षेत्र में गुप्त कथन करेंगी सो आ पहुँचे अब अपना वृत्तान्त कहो यह सुनि कान्तिसेन राजाकी कन्या मुसुकुराय राजा के चरणों को निज हाथों से पकड़ कहने लगी कि हे प्राणनाथ! अब यहां आये हो हम और आप तीन दिन व्रतकर गङ्गासेवन करलें पीछे से कहैंगी यह सुनि राजा ने आदरसे रानी का वचन स्वीकार कर संकल्पपूर्वक तीन दिन का व्रत किया और त्रिकाल गङ्गास्नान, दान, ब्राह्मण भोजन आदि सत्कर्मों से व्रतको समाप्तकर चौथे दिन निज रानी से कहने लगा कि अब क्या करना चाहिये जो उचित हो सो निज मन का वृत्तान्त और अपना क्लेश कह सुनावो तबतो रानी हे धरणि! हमारा स्मरणकर और निज भूषणों को उतार ब्राह्मणों को दे राजा के चरणों में प्रणाम कर और हाथ जोड़ एकान्त में बड़ी प्रीतिसे राजा के हाथ को पकड़ यह कहने लगी कि हे महाराज! मैं पूर्वजन्म की शृगाली थी और इसी क्षेत्र में सदा रहा करती थी सो दैवयोग राजा ब्रह्मदत्त का पुत्र सोमदत्त आखेट को आया उसने भावीवश मेरे शिर में एक ऐसा बाण मारा कि जिसके लगतेही हमारी मृत्यु हुई सो आप अपने हाथों से हमारे शिर में घाव का चिह्न देखें हे महाराज! इस तीर्थ के प्रभाव से हम राजकुमारी होकर आप की पत्नी भई और यहां के प्राणत्याग होने से हमारा स्मरण भी पूर्वजन्म का नहीं भूला सो आप निश्चय करें अब यह शरीर भी हमारा त्याग होता है सो आप देखेंगे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! निज स्त्री के मुख से इतनी बात सुनतेही राजा को भी पूर्वजन्मका भलीभांति स्मरण हुआ और बड़े हर्षमें हो कलिङ्गराज निज रानी से कहनेलगा कि हे प्रिये! अब तुमने तो निज वृत्तान्त कह सुनाया हमारा भी वृत्तान्त सुनो इतना कह कहनेलगा कि यह जो गृध्रवट दिखाता है इस में रहनेवाला मैं गृध्र हूं उसी सोमदत्त के बाण से मैंने भी प्राणत्याग किया

था और इसी तीर्थके प्रभावसे राजपुत्र होकर तुम्हारा पति हुआ अब मेरा पूर्वजन्म सब स्मरण हुआ अब तुम्हारे साथही मैंभी प्राण त्याग करताहूं इतना कहतेही हे धरणि ! हमारे दूत उत्तम विमान ल्याय उसी स्थानमें प्रकट भये उसे देखि राजा और रानी दोनों हमारा स्मरण करते शरीर त्यागकर दिव्यदेह धारण कर उसी विमानमें बैठ बड़े आनन्दसे दोनों जाय श्वेतद्वीप में पहुँचे यह आश्चर्य देखि जो राजाके साथ पुरवासी आयेथे वो भी प्रेम श्रद्धायुक्त दान पुण्य कर निज निज शरीरको त्याग २ उसीभांति उत्तम विमानों पर बैठ वोभी सब श्वेतद्वीप निवास पाया इसलिये हे धरणि ! इस शूकरक्षेत्रमें जो प्राण त्याग करते हैं वे सब श्वेतद्वीपनिवासी होते हैं जो पुरुष वा स्त्री जन्म भरमें कभी एक बार भी शूकरक्षेत्रमें स्नानभी कियाहै वो चाहे जहां शरीर छोड़े परन्तु दशहजार वर्ष स्वर्गबासकर जम्बूद्वीपमें जन्म लेकर उत्तम हमारा भक्त होताहै और हे धरणि ! जो पुरुष वा स्त्री गृध्रवट नाम तीर्थमें स्नान जन्मभरमें एकबारभी करते हैं वे चौदह हजार वर्ष इन्द्रके साथ देवलोकमें सुख भोग अन्तसमय भारत-खण्डमें जन्मले हमारे भक्त होते हैं इसभांति श्रीवाराह भगवान्के मुखारविन्दकी वाणी सुनि नम्र हो व हाथ जोड़कर धरणी कहने लगी कि हे भगवन् ! अब आप कृपा करके यहभी कहें कि यह तीर्थ कौनसी पुण्य करनेसे मिलताहै व कौनसी पुण्यसे मनुष्य तीर्थमें प्राण त्याग करताहै यह धरणीका प्रश्न सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि ! जो पूर्व जन्ममें धर्मात्मा व विचारवान् मनुष्य हैं वे पूर्वपुण्यके प्रभावसे उत्तमक्षेत्रमें ज्ञानपूर्वक शरीर त्याग करते हैं और यदि कोई प्रबल पातकभी है उसके प्रभावसे मनुष्य देह नहीं पाते हे धरणि ! जैसे शृगाली और गृध्र इस भांतिकी तिर्यग् योनिमें रहे परन्तु पुण्यके प्रभावसे बास तीर्थ हीका मिला व अन्तमें जिस किसी भांति शरीर त्याग हुआ तो

भी उत्तम कुलमें जन्म ले संसारके सब सुख भोग अन्तसमय ज्ञानपूर्वक शरीर त्यागकर उत्तमलोकमें भी प्राप्त हुये हे धरणि! और भी एक वृत्तान्त कहते हैं सो सावधान होकर प्रीतिसे श्रवण करो इसी शूकरक्षेत्रमें सूर्यजीने पुत्रकामना करके दश हज़ार वर्ष चान्द्रायण व्रत करके तप कियाथा उस तपसे हम प्रसन्नहो सूर्य को दर्शन दे वर देनेलगे तबतो सूर्यजीने यह कहा कि; हे भगवन्! यदि आप मुझे वर देते हैं तो संतानका वर दीजिये कि जिसमें मेरेको बड़ा प्रतापी पुत्र मिले हे धरणि! तबतो हमने प्रसन्नहो वर दिया उस वरके प्रभावसे यमनाम पुत्र और यमुनानाम कन्या ये दो संतान सूर्यके हुये हे धरणि! जहां सूर्यजीने तप कियाथा उस स्थानमें एकाहार करके जो प्राणत्याग करते हैं वे दशहज़ार वर्ष सूर्यलोकमें निवास कर भूमण्डलके महाराजहो अनन्तसुख भोग अन्तमें तीर्थमें प्राण त्यागकर हमारे लोकको आते हैं हे धरणि! यह कोकामुख शूकरक्षेत्रका माहात्म्य हमने वर्णन किया इस अतिपवित्र कथाको उत्तम कर्मनिष्ठ विवेकी वैष्णवको श्रवण करानेसे हमारी प्रसन्नता होतीहै और कर्महीन, नास्तिक, धूर्त, कृतघ्न इसके श्रवण योग्य नहीं हैं इसलिये उनको श्रवण करानेसे पातक होताहै और श्रोता वक्ता दोनों अधिकारी हों तो दोनोंके सात २ कुल इस कथाके प्रभावसे उत्तमगतिको पाते हैं॥

एकसौतेंतीसका अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि, हे शौनक! इसभांति कोकामुख शूकरक्षेत्र का विचित्र माहात्म्य सुनि हाथजोड़ व नम्र होकर धरणी कहने लगी कि; हे भगवन्! आपने बड़े आश्चर्यका शूकरक्षेत्रमाहात्म्य वर्णन किया कि जो गृध्र और शृगाली अपमृत्यु से भी प्राण त्यागकर राजा रानी भये और अन्तमें पूर्वजन्मका स्मरण भी हुआ जो योगियोंको भी दुर्लभहै फिर ज्ञानपूर्वक प्राण त्यागकर

श्वेतद्वीपमें प्राप्तहो आपके पार्षद भये अब आप यह वर्णन करें कि शूकरक्षेत्र में गोदान अन्नदान आदि अनेक भांतिके दान करने से और विष्णुमन्दिरकी सेवा करनेसे अथवा पञ्चोपचार षोड़शोपचार करके आपकी सेवा करनेसे क्या फल होता है? सो आप कृपा करके वर्णन करें जिससे आपके सेवक आपकी सेवा को कर परमपदको प्राप्त हों यह सुनि वाराहजी महाराज मधुरवाणीसे कहनेलगे कि हे धरणि! जो तुम पूछतीहो सो हम कहते हैं सावधान होकर श्रवण करो किसी समयमें शूकरक्षेत्र मध्य जो सूर्यतीर्थ कह आये हैं जहां सूर्यजी तप करके सिद्धहुये वहांहीं एक खञ्जरीट नामक पक्षी रहा करताथा सो किसी दिन क्षुधासे व्याकुलहो कीड़े ढूंढ़ २ खानेलगा और सदा वेही कीड़े उसके आहारथे परन्तु दैवयोग उस दिन इतने कीड़े उस पक्षीको मिले कि जिसको खाते २ अजीर्ण ऐसा हुआ कि जगहसे उड़ना तो कौन कहे दो चार क़दम चलनाभी दुर्लभ हुआ उसी समय बहुत बालक इकट्ठे होकर क्रीड़ा करते २ वहां आय पहुँचे जहां वह पक्षी अजीर्णसे व्याकुल पड़ाथा उसे देख बड़े कौतुकमें हो परस्पर कहनेलगे कि; यह पक्षी हम लेंगे दूसरेने कहा हम लेंगे इसी भांति शैला मचा रहेथे कि उनमेंसे एक बालक बड़ेवेगसे जाय उसे उठाय सूर्यतीर्थ में फेंकके कहनेलगा कि तुम सब इसे लो मरे हुये पक्षीको हम नहीं लेंगे हे धरणि! जब उस पक्षीको बालकने उठाया तबतक तो थोड़ासा प्राणथा भी परन्तु उसने जो वेगसे फेंका व जलमें गिरा उसी समय मृतक होगया व उस क्षेत्र और तीर्थके प्रभावसे प्राण त्यागि जाय किसी धनाढ्य वैश्यके घर में पुत्रहो जन्म लिया तबतो जन्म लेतेही सुन्दर स्वरूप व सब गुणों करके युक्त बारह वर्षके मध्यमेंही हो निज माता पिताको बड़े हर्षको देनेलगा किसी दिन बड़े हर्षमें उसके माता पिता बैठे थे व परस्पर पुत्रकी प्रशंसा कररहेथे कि वह पुत्रभी आय हाथ

जोड़ बड़ी नम्रतासे पिता माताको प्रणामकर कहने लगा कि आप मेरे गुरुहो इस लियेमैं आपसे कुछ याच्ञा करताहूं सो आप कृपा करके मेरा मनोरथ सफलकरें और मैंने आजतक भी कुछ मांगा नहीं इस लिये मेरी वाञ्छा आप भङ्ग न करें इस भांति दोनोंने निज पुत्रकी वाणी सुनि बड़े प्रेमसे पुत्रको उठाय हृदय में लगाय आदरसे कहनेलगे कि हे पुत्र ! सत्य करके जानो कि तुम्हारेसे दूसरा कौन हमको प्रियहै कि तुम्हारा वचन न मानेंगे तुमको जो कुछ कहनाहै सो कहौ अवश्य तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा हे पुत्र ! हमारे घरमें तीस हज़ार गौ उत्तम २ हैं और हमारा वणिज् व्यापार सबहै और जो धन, धान्य, रत्न, वस्त्र आदि उत्तम २ पदार्थ हैं सो तुम्हारे आधीन हैं जो चाहो सो करो चाहो किसी मित्रको धन दिया चाहतेहो सो दो अथवा कोई उत्तम कन्याका विवाह चाहतेहो सोभी दुर्लभ नहींहै और यदि कोई यज्ञ दान ब्राह्मणभोजन आदि सत्कर्म करना चाहतेहो सो इच्छापूर्वक करो इस भांति प्रेमसंयुक्त पिता माताकी वाणी सुनि पुत्र हाथ जोड़ नम्र होकर विनयपूर्वक कहनेलगा कि हे पिता ! न तो मैं दान करना अथवा कन्याका विवाह वा मित्रका उपकार वा वणिज् अथवा ब्राह्मणभोजन यज्ञ योग आदि कोई कर्म नहीं चाहताहूं मेरी तो यह प्रार्थनाहै कि आप दोनों कृपा करके शूकरक्षेत्र जानेकी आज्ञा देवें तो मेरी वाञ्छा सफलहो इस भांति पिता माता पुत्रका वचन सुनि मोहसे विवशहो कहनेलगे कि हे पुत्र ! अभी तक तुम्हारी अवस्था बारह वर्षकी भी नहीं भई यह क्या तुमने विचार किया जो संसार सुख छोड़ तीर्थबास किया चाहतेहो अभीतक तुमको भोजन करना और बालक्रीड़ा करनी चाहिये यह विचारो कि आजतक हमारी गोदसे बाहर कभी नहीं हुये और दूध पीवना नहीं छुटा बगैर मा बापके इकले कहीं न गये आज यह कौनसी बुद्धि उत्पन्न हुई और यह बुद्धि किसने दी

और आज तक कोई मानभङ्गभी तुम्हारा नहीं भया किसलिये यह विचार तुमने किया इतना कह उस बालकके माता पिता धैर्य त्याग रोदन करनेलगे तब तो हे धरणि! इस अवस्था में माता पिताको देखि वैश्यपुत्र यह कहनेलगा कि आप दोनों मिथ्या शोक क्यों कररहे हो हमने जब से जन्म लिया तबसे आजतक जो कुछ उचित रहा सो तुमने पालन किया जीवोंकी जैसी प्रारब्ध जिस समय में होती है उसमें शोच करना निष्फल है शरीरधारण करतेही माता पिता गोत्र कुटुम्ब सम्बन्ध होताही है और मरने बाद पूर्व सम्बन्ध छूटना क्या आश्चर्य है यह संसार अगमसमुद्र है इसमें अनेक जन्म हुये और अनेक होंगे उनमें अनेकों के हम माता पिता भये व अनेक हमारे माता पिता भये किस किसका मोह करें इसभांति पुत्रके वचन सुनके माता पिता बड़े विस्मयको प्राप्त हो कहनेलगे कि हे पुत्र! यह क्या वचन कहतेहो हमारी समझ में भी नहीं आती और सत्यभी है यह सुनि वैश्यपुत्र कहनेलगा कि हे माता! हे पिता! जो यह स्फुट सुना चाहते हो तो शूकरक्षेत्र की यात्रा की आज्ञा दो वहां सूर्य-तीर्थ में जाकर निज हृदयकी वार्ता सब गुप्तभी कहूंगा यह सुनि माता पिताने शूकरक्षेत्र जानेको निज पुत्रको आज्ञा दी और निज कर्माधिकारियों से कहा कि; सब प्रकार के उपस्कर अर्थात् दानसामग्री के साथ बीस हज़ार गौ लेकर शूकरक्षेत्र को चलो यह कहकर निज स्थान से माघशुक्ल त्रयोदशी को अति आनन्दमें होकर निजपुत्र को साथ ले पद्माक्षनामक अभीरों का स्वामी और सब कुटुम्ब सेवक साथ शूकरक्षेत्रकी यात्रा की और चलते २ जाय वैशाखशुक्ल द्वादशी को हे धरणि! हमारे क्षेत्र में पहुँचे वहां पहुँच विधिपूर्वक स्नान कर क्षौमवस्त्र से वेष्टित कर बीस हज़ार गौओंका दान किया और वस्त्रभूषण शय्या आदि अनेक भांति के दानों को कर नानाभांति के व्यञ्जनों से

ब्राह्मणों को तृप्त कर सहित पुत्रके वहांहीं निवास करनेलगा इसी भांति निवास करतेही ग्रीष्मऋतु व्यतीत होतेही वर्षाका प्रारम्भ हुआ कि चारों ओर से बड़ी २ कारी २ घटा और बिजलीकी छटा हो हो कर ग्रीष्मऋतु के ताप करके संतप्त पृथिवीको ठंढीकर और हरिततृणोंसे और सस्योंसे मनुष्य और पशुआदि सब जीवोंको आनन्दित करती हुई शरद् ऋतु आय प्राप्त भई तब तो कार्त्तिक मास की शुक्ल एकादशी का व्रत करके पुत्रसे अभीर और अभीरी दोनों कहनेलगे कि हे पुत्र ! अब यहां आये बहुत दिन भये आपको जो कुछ कहना है सो कहो यह सुनि पुत्र कहनेलगा कि; हे माता ! हे पिता ! बहुत उत्तम बात आपने स्मरण कराई परन्तु आज व्रतका दिन है कल द्वादशी तिथि परमेश्वर की अतिप्यारी होगी तब मैं अपने चित्त का वृत्तान्त कहूंगा यह कहकर उस रात्रि व्रत जागरण आदि नियमों से व्यतीतकर प्रातःकाल उठ शौचस्नान आदि नियमों से निवृत्त हो परमेश्वर को प्रणामकर पिता माता के चरणों को प्रणामकर हाथ जोड़ अतिनम्र हो कहनेलगा कि हे पिता ! हे माता ! जिस लिये हम यहांको आये हैं सो सावधान हो श्रवण करो हे पिता ! पूर्वजन्म हमारा खञ्जरीटजाति पक्षीका है उस जन्ममें हमें किसी दिन निज आहार जानि बहुतसे कीड़े खाने से अजीर्ण हुआ उस अजीर्णता के होने से उड़ना तो कौन कहे पर एक पगभी चलनेकी सामर्थ्य न रही तब तो इस अवस्थाको देखि एक बालक मुझे उठायके देखनेलगा तब तो दूसरे बालक ने कहा कि क्या तुम्हीं देखोगे इतना कहकर बड़े बेग से उस पक्षीको अपने हाथमें लिया इसी भांति परस्पर कई एक बालक हाथसे हाथ पर लेले देखनेलगे इसी समय किसी बालकने हाथ में ले दूसरे बालककी भयसे बड़ी जल्दी से जलमें गेर दिया और कहनेलगा कि लो तुम हम मरे हुये पक्षीको नहीं लेते सो

हेमाता! वो खञ्जरीटपक्षी जलमें पड़तेही प्राण त्यागकर पुण्यतीर्थ के प्रभावसे तुम्हारे उदरमें जन्म लिया सो मैं हूं यह तुम्हारे घर में रहते २ त्रयोदश वर्ष व्यतीत भये हे पितः! हे मातः! यह हमारा गुप्त वृत्तान्त है अब तुम दोनों यहांसे इच्छापूर्वक घरको पधारो हम नारायणके प्रसन्न होनेका सत्कर्म करेंगे यह पुत्रका वचन सुनि दोनों कहनेलगे कि; हे पुत्र! जिस कर्म को करके नारायणको प्रसन्न किया चाहते हो सो कर्म हमसे भी कथन करो कि; जिसके करनेसे हमभी परमेश्वर के प्रिय होके परमधाम श्वेतद्वीप को प्राप्त होवें यह सुनि व पिता माता का सावधान चित्त देखि पुत्रने सन्मार्ग उपदेश कर आप श्रीनारायणपरायण हो काल व्यतीत करनेलगा व उसके पिता माता भी पुत्रोपदेश मार्ग से परमेश्वर को भजनेलगे उन्हें देखि जो कोई और भी साथ आये थे वे भी विषयवासना से निवृत्त होकर नारायण के भजन में तत्पर भये इसी प्रकार भजन करते २ कुछेक दिन में निज शरीर त्याग कर २ जाय श्वेतद्वीप में प्राप्त हो परमेश्वरके पार्श्ववर्ती भये जो गति योगियों को भी दुर्लभ है उस गतिको पहुँचे हे धरणि! उस तीर्थ के प्रभाव से संस्कार व विद्याहीन वैश्यजाति भी प्राप्त भये यह शूकरक्षेत्र का माहात्म्य हमने वर्णन किया इस माहात्म्यको जो हमारे भक्त पुण्य दिनमें अथवा नित्य सुनें व सुनावें वे सब पातकों से मुक्त होकर श्वेतद्वीप जो हमारा धाम है वहां निवास पावें॥

एकसौचौंतीस का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं, हे धरणि! यह सावधान होकर श्रवण करो कि जो मनुष्य हमारे मन्दिर में लेपन करते हैं तिनको जो फल प्राप्त होता है जो मनुष्य गोमय लेकर हमारे मन्दिर में ले-पन करते हैं उसमें जितने पद हमारे भक्तों के पड़ते हैं उतनेही

हज़ार वर्ष उस लेपन देनेहारे पुरुषको स्वर्गबास होता है और यदि नियम से बारहवर्ष पर्यन्त निरन्तर हमारे मन्दिर में लेपन करे वह मनुष्य उत्तम कुलमें जन्म ले धनधान्ययुक्त हो संसार में नानाभांति सुख भोगि अन्तमें शरीर त्याग करने से कुशद्वीप में जन्म पाता है और वहां हज़ारों वर्ष नाना भांति के सुख भोगि पुण्यक्षीण होने पर उत्तम भूमिमें आय धर्मनिष्ठ अखण्ड मण्डलेश्वर राजा होता है हे धरणि! और तो कहांतक लेप करनेका माहात्म्य वर्णन करें जो मनुष्य हमारे मन्दिर में लेप करने के लिये गोमय ल्यादेता है वह जितने पद गोमय लेकरके चलताहै उतनेही हज़ार वर्ष स्वर्गबास कर पुण्य क्षीण होने पर शाल्मलीद्वीप में जाय जन्म लेकर ग्यारह हज़ार वर्ष बासकर वहां का सुख भोगि पृथिवी में धर्मात्मा राजा होता है और जो अखण्ड बारह वर्ष इसीभांति गोमय लीपने वास्ते ल्यादेता है हे धरणि! वह पुरुष अवश्य हमारा लोक पाता है हे धरणि! हमारे स्नानके निमित्त वा लेपन के निमित्त जो पुरुष उत्तम व पवित्र जल ल्यादेता है वह जल जितने बिन्दु होते हैं उतनेही हज़ार वर्ष स्वर्गलोक में बास पाता है और पुण्यक्षीण होने पर क्रौञ्च नाम द्वीप में जन्म ले वहां का अखण्ड सुख भोगि फिर पृथिवी पर उत्तम राजाओं के कुल में जन्म ले और अखण्ड पृथिवी का राज्य भोगि अन्तमें श्वेतद्वीपमें बास पाता है और हे धरणि! जो मनुष्य हमारे मन्दिरका मार्जन करते हैं वे मनुष्य जितनी रेणु बाहर गेरते हैं उतने सौ वर्ष स्वर्ग में बास पाते हैं और अन्त में स्वर्गसे भ्रष्ट होके शाकद्वीप में जन्म पाय वहांका सुख भोगि अन्तमें सागर मेखला पृथिवी का महाराजहो अनेक भांति के सुख भोगि अन्त में श्वेतद्वीप में बास पाते हैं और हे धरणि! जो मनुष्य हमारे मन्दिर में गान करते हैं उनका पुण्य सावधान होकर श्रवण करो गान के समय में उस रागके जितने

अक्षर मुखसे निकलते हैं उतनेही हज़ार वर्ष गान करनेवाला पुरुष इन्द्र के समीप देवलोक में बासकर और नानाभांति का सुख नन्दन आदि विहारभूमि में भोगि पुण्य क्षीण होने पर भारतखण्ड में जन्म ले सुख संपत्ति करके युक्त विष्णुभक्त होता है और पृथिवी में हमारा यश गान करता परमानन्द में मग्न हुआ २ नानाभांति के सुख संपत्ति को भोगि शरीर अन्त में हे धरणि! हमारा परमप्रिय जो श्वेतद्वीप नाम स्थानहै वहां जाय प्राप्त होता है सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! इस भांति श्रीवाराहजी का वचन सुनि धरणी पूछने लगी कि; हे भगवन्! आपने गानविद्या का बड़ाही माहात्म्य वर्णन किया अब आप यह वर्णन करें कि इस गान के प्रभाव से कौनसा पुरुष मुक्त हुआ और सद्गति को प्राप्त भया इसभांति धरणी का वचन सुनि वाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि! जो पूछती हो सो सावधान होकर श्रवण करो किसी एक वनमें विष्णुमन्दिर था उस मन्दिर के समीप गानविद्या में निपुण एक चाण्डाल रहा करता सो चाण्डाल नियम से नित्य २ जायकर विष्णु भगवान् के सन्मुख दूर बैठि प्रेम से उत्तम २ विष्णुपद गाता था सो किसी समय कार्त्तिकमास के शुक्ल पक्षकी जो देवोत्थानी एकादशी है उस दिन जागरण और गान के लिये अपने घरसे सावधान हो कुछेक रात्रि बीतने से चला तब तो क्या देखता है कि एक बड़ा बलवान् और भयंकर ब्रह्मराक्षस रास्ता रोकके खड़ा है उसे देखि भयभीत हो चाण्डाल कहनेलगा कि; हम अधम जाति हैं इस लिये रास्ता दो यह सुनि ब्रह्मराक्षस उसके खाने के विचार में बहुत प्रसन्न हुआ कहने लगा कि; हे चाण्डाल! हम मानुषाहारी दश दिन के भूखे क्षुधा करके पीड़ित ब्रह्मराक्षस हैं आज ब्रह्माजी ने तुमको हमारे आहार के लिये भेजा है सो आज तुम्हारे मांस और रुधिर से अपनी क्षुधा और तृषा दूर क

आनन्द व तृप्तिको प्राप्त होंगे यह राक्षस की वाणी सुनि गीत के गाने और एकादशी व्रत जागरण का उत्साह आदि भङ्ग होता देखि हाथ जोड़ विनयपूर्वक यह कहनेलगा कि; हे राक्षस! है तो यथार्थ कि दैवने हमको तुम्हारे भोजन के लिये भेजा है और यह ऐसाही होना चाहिये परन्तु इस समय में मेरी यह अभिलाषा है कि आज के दिन यदि आप मुझे छोड़ देवें तो अपूर्व पुण्य दिन यह कार्त्तिक शुक्ल एकादशी को मैं इस विष्णु-मन्दिर में जाय जागरण और गान करि विष्णुको रिझाय नियम पूराकर कल्ह आऊं तो आप मुझे भलीभांति भक्षण करें यह चाण्डाल का वचन सुनि क्षुधा करके पीड़ित बड़े क्रोध से वह कहनेलगा कि; रे मूर्ख! मिथ्याभाषण क्यों करताहै? कि मैं फिर आऊंगा जो कि एकबार मृत्यु के मुख से किसी भांति कोई बच जाता है तो वह फिर उस मृत्यु के मुख में क्यों आवेगा? यह राक्षस का वचन सुनि चाण्डाल कहनेलगा कि आप तो सत्य कहते हैं परन्तु यह देखो कि जन्मान्तर में कोई ऐसा पाप मुझ से वनपड़ाहै कि जिसका फल यह हुआ जो अतिनिन्दित चाण्डालयोनि में जन्म पाया अब मैं मिथ्याकथनका पाप जान बूझिके किस भांति करूंगा इस लिये मेरा वचन सत्य मानो और विचार करो कि सत्यही के आधार सारा विश्वहै और सूर्य, चन्द्रमा, ऋषि, मुनि, पृथिवी, जल आदि सब पदार्थ सत्यही से निज २ स्थान में टिके हैं देखो हे राक्षस! ऐसा पदार्थ सत्य है जिससे निज कन्या को सत्य के भरोसे दूसरको देदेते हैं और सत्यही से स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त होताहै और यदि हम असत्य भाषण करें तो यह पाप हमको प्राप्त हो जो पाप गुरुपत्नी, राजपत्नी, कन्यागमन में होता है और जिस लोक को ब्राह्मण के बध करनेहारे गोवध करनेहारे व मद्यप व्रतभङ्ग करनेहारे जाते हैं वे लोक हमको हों इस भांतिका प्रतिज्ञावचन चाण्डाल का सुनि

ब्रह्मराक्षस बड़ा प्रसन्न हो कहनेलगा कि; हे चाण्डाल! तू धन्य है व इच्छापूर्वक जावो तुम्हारे प्रणाम हैं इतना कह ब्रह्मराक्षस तो अन्तर्धान हुआ और चाण्डाल हमारे मन्दिर में आय हे धरणि! बड़े हर्ष से वह रात्रि तो वैष्णवों के साथ जागता हुआ गान करते व्यतीत की व प्रातःकाल के होतेही आवश्यकों से निवृत्त हो नारायणको प्रणामकर परिक्रमा कर बड़े आनन्द से ब्रह्मराक्षस के समीप जा पहुँचा और बड़ी प्रसन्नता से मरना निश्चयकर मधुर वचनसे ब्रह्मराक्षससे कहनेलगा कि; हे राक्षस! अब हम सब आवश्यकों से निवृत्तहो तुम्हारे समीप आये अब इस हमारे शरीर को इच्छापूर्वक भोजन कर तृप्त हो अब बि· लम्ब न करो तुम्हारी कृपासे हम विष्णु भगवान् का ध्यानकर यह निन्दित शरीर त्यागकर उत्तम वैष्णवस्थानको जायँगे यह चाण्डालकी वाणी सुनि ब्रह्मराक्षस विस्मित होकर अतिमीठी वाणी से कहनेलगा कि; हे चाण्डाल! तू धन्यहै व तेरी साधुता व सत्यता देखि हम अतिप्रसन्न भये कि जो तेरी बुद्धि चाण्डाल योनिमें भी न चलित हुई अर्थात् सत्यता का त्याग तूने न किया यह ब्रह्मराक्षस की वाणी सुनि चाण्डाल कहनेलगा कि यद्यपि हम नीच जाति हैं तथापि सत्य नहीं त्यागते क्योंकि असत्य भाषण के तुल्य पातक चाण्डाल में भी नहीं है क्योंकि जो चाण्डालको अन्तमें नरक ग्रहण करते हैं और असत्यवादीसे नरक भी डरते हैं इतना सुनि ब्रह्मराक्षस विकट वाणी से डेरा- वता हुआ गर्जिके कहनेलगा कि, हे चाण्डाल! जो तू अपने प्राणकी रक्षा चाहताहै तो विष्णुमन्दिर में जागरण कियेकी व नित्य गान करने की पुण्य देदेवे तो तेरे को छोड़ देवें तू सुख- पूर्वक जहां इच्छाहो वहां जा अन्यथा बे भक्षण किये न छोडूंगा यह ब्रह्मराक्षसका वचन सुनि चाण्डाल कहनेलगा कि कहते तो तुम ठीकही हो परन्तु मुझे खाने का विचार छोड़ गीत का

पुण्य क्यों मांगते हो यह सुनि ब्रह्मराक्षस कहने लगा कि जो तुम सकुटुम्ब बचा चाहते हो तो बेविचारे विष्णुमन्दिर के गानका पुण्य हमको दो अन्यथा सकुटुम्ब तुम हमारा भोजन होगे यह राक्षसकी वाणी सुनि चाण्डाल कहनेलगा कि हे राक्षस! इच्छापूर्वक हमारा व हमारे कुटुम्ब का मांस खावो रुधिर पी करके तृप्तहो परन्तु हम गानका फल नहीं देंगे यह सुनि राक्षस कहने लगा कि; अच्छा सम्पूर्ण गीतों का फल न दो तो एकही गीत का फल दो जिस करके हम इस राक्षसयोनि से छूट उत्तम गति को पावें इस भांति राक्षस का वचन सुनि चाण्डाल विस्मित हुआ २ मधुरवाणी से कहने लगा कि; हे राक्षस! कौन सा पाप तुमने पूर्वजन्म में किया था कि जिसका यह फल प्राप्त भया यह सुनि ब्रह्मराक्षस कहनेलगा कि; हे चाण्डाल! जो तू पूछता है सो वृत्तान्त श्रवण कर पूर्वजन्म के हम सोमशर्मानामक ब्राह्मण हैं सो लोभवश होके सूत्रमन्त्र पद्धतियों को त्याग इच्छायज्ञ बहुत काल तक कराते रहे सो दैवयोग किसी यजमान को यज्ञ करातेही समय हमारे उदर में शूल उठा उस घोरशूलकी वेदना से प्राण त्यागभया सो हे चाण्डाल! उस विधिहीन यज्ञ दोष करके हम राक्षसयोनि में प्राप्त हो नाना भांतिके दुःख भोगनेलगे इसलिये निज गीत पुण्यसे आज कृपा करके इस क्लेश से हमारी रक्षाकर उद्धार करो यह दीन व श्रद्धायुक्त वाणी राक्षस की सुनकर चाण्डाल ने निज गीतका पुण्य देने को अङ्गीकार कर शुद्धचित्त हो कहनेलगा कि हे परमेश्वर! जो गीत स्वर के साथ आपके सन्मुख कार्त्तिककी शुक्ल एकादशी को प्रीति से हमने गान किया है उसमें एक गीतका फल इस ब्रह्मराक्षस को होय जिससे इसकी उत्तम गति होय और यह दुःख छूटै वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस भांति चाण्डाल से एक गीत का फल पाय ब्रह्मराक्षसयोनि से छूट हमारा प्रिय जो श्वेतद्वीप

नाम परमपद वहां जाय प्राप्त भया हे धरणि ! यह गीतफल हमने वर्णन किया जो मनुष्य कार्त्तिकमास की शुक्लद्वादशी को प्रीतिपूर्वक हमारे मन्दिर में गान करते हैं वे सब पापों से मुक्त हो हमारे लोक में जाय मुक्तिभागी होते हैं और जो मनुष्य जागरणपूर्वक हमारे मन्दिर में गान करते हैं वे संसारसागरसे पार हो परमपद को प्राप्त होते हैं हे धरणि ! इस भांति गान करनेका फल हमने वर्णन किया अब वाद्यताल का फल साव-धान हो श्रवण करो जो मनुष्य पुण्यपर्व में जाय हमारे समीप गाते हुये मनुष्यों के साथ प्रेमसे भांति २ के बाजे बजाकर हम को रिझाते हैं वो मनुष्य शरीर त्यागकर नवहज़ार नौ सौ वर्ष कुबेरलोक में जाय अनेक भांति का सुख भोगि अन्त में आय पृथिवी में उत्तम कुलमें जन्म पाय विष्णुभक्त होते हैं हे धरणि ! अब नृत्यका माहात्म्य वर्णन करते हैं सो श्रवण करो जो मनुष्य हमारे मन्दिर में नियम से प्रीतिपूर्वक नृत्य करते हैं सो हमारे प्रसाद से शरीर त्यागकर तेंतीस हज़ार वर्ष जाय पुष्करद्वीप में निवास ले नानाभांति वहां का सुख भोगि अन्तमें स्वर्गवास पाते हैं और स्वर्गभोग भोगि अन्त में पृथिवी में आय उत्तम कुल में धन विद्या करके युक्त नानाभांति सुख भोगि शरीर छोड़ने से वैकुण्ठधामबासी होते हैं और हे धरणि ! जो मनुष्य भक्ति-पूर्वक हमारे मन्दिर में नृत्य, गान, वाद्य, जागरण आदि नाना भांति के उत्साह को करते हैं वे शरीर त्यागकर स्वर्ग में जाय नानाभांति के सुख भोगि अन्तमें जम्बूद्वीप के महाराज होते हैं और हे धरणि ! जो मनुष्य उत्तम सुगन्धयुक्त अनेक भांति के पुष्प हमारी मूर्तिपर चढ़ाते हैं वो पुष्प जितना क्षण हमारे अङ्ग पर रहें उतनेही हज़ारवर्ष स्वर्गबास पाते हैं हे धरणि ! यह परम गुप्त वृत्तान्त भक्तों के लिये हमने वर्णन किया इस इतिहास के श्रद्धावान् जो परम वैष्णव हमारे भक्तहैं उन्हें जो श्रवण करावे

सो वैकुण्ठफल पावे और कृतघ्न, शठ, विश्वासघाती, ब्राह्मण-द्रोही, गुरुद्रोही ये सब इस परमपवित्र कथाके अधिकारी नहीं हैं॥

एकसौपैंतीस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि, हे शौनक! इसभांति वाराह भगवान् का वचन सुनि प्रेममें मग्न हो हाथ जोड़ नम्र हो धरणी कहने लगी कि; हे भगवन्! आपने कृपा करके नानाभांति का इतिहास वर्णन किया अब आप यह कथन करें कि सर्वकाल में आप कहां निवास करते हैं और आपका परमप्रिय निवासस्थान कौन है और किस स्थान के उत्तम कर्म करने से प्रसन्न हो मनुष्यों को आप उत्तम गति देते हैं? सो सब वर्णन करें इस भांति धरणीका वचन सुनि प्रसन्न हो वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! जो तुम पूछतीहो सो सावधान होकर श्रवण करो पृथिवीमें जो २ हमारी प्रीति के स्थान हैं सो २ सब कथन करते हैं हे धरणि! सब स्थानों से उत्तम सब कालमें हमको प्रिय जो प्रथम कह आये हैं कोकामुख नाम क्षेत्रहै जिसे महात्माजन बदरी भी कहते हैं और एक लोहार्गलमक क्षेत्र भी हमको अतिप्रिय है इन स्थानों को हे धरणि! हम क्षणमात्र भी नहीं त्याग करते सदाही इन स्थानों में निवास करते हैं इसलिये महात्माजन इन स्थानों को हमारे स्वरूप से किंचित् भी न्यून नहीं समझते और हे धरणि! जो मनुष्य हमको शीघ्र मिला चाहें वे कोकामुखक्षेत्र में जाय हमारा आराधन करें इतना सुनि हाथ जोड़ पृथिवी कहने लगी कि; हे भगवन्! आपको परम प्यारा जो कोकामुख नाम क्षेत्र है वो एकही है कि और भी कोई दूसरा स्थान है सो आप वर्णन करें और भी जो २ गुप्त स्थान कोकामुखमें हों सो भी आप कथन करें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! जो तुम पूछती हो सो सावधान होकर श्रवण करो कोकामुख नाम क्षेत्र में जल-

बिन्दुनाम तीर्थ है अत्यन्त ऊंचे पर्वतसे जलधारा पड़ती है उस तीर्थ में जो मनुष्य एकबार भी स्नान करते हैं वे अवश्य हमारे लोक को जाते हैं और हे धरणि! एक विष्णुधारा नाम तीर्थ कोकामुख में बड़े ऊंचे पर्वत से मुसलसमान पृथिवी में गिरती है उस विष्णुधारा में जो पुरुष स्नान और एक दिनरात्रि व्रत करते हैं वे सहस्र अग्निष्टोम यज्ञके फलको प्राप्त होते हैं और जो विष्णुधारा में शरीर त्याग करते हैं वे हमारे समीप प्राप्त होते हैं और हे धरणि! उसी कोकामुखमें एक विष्णुपद नाम स्थान है जिसे वाराहशिला भी कहते हैं उस स्थान में जो स्नानकर तीन रात्रि व्रत करते हैं वे हमारे भक्त होकर क्रौंचद्वीपमें जाय जन्म पाते हैं और जो विष्णुपद में शरीर त्याग करते हैं वे संसारसागर से पार होकर हमारे लोक में निवास करते हैं और हे धरणि! जिस स्थान में तुम्हारे साथ हमने क्रीड़ा किया है वो विष्णुसरनाम तीर्थ कोकामुख में है उसमें जो प्रातःकाल स्नान करते हैं वे सब पापों से मुक्त हो हमारे लोक को प्राप्त होते हैं और हे धरणि! उसी कोकामुख में सोमतीर्थ नाम स्थानहै जिस स्थान में पञ्चशिला नाम भूमि विष्णुनामाङ्कित प्रसिद्ध है उसमें जो मनुष्य स्नान करते हैं व पांचरात्रि व्रत करते हैं वे सब पापों से मुक्त होके गोमेदनाम द्वीपमें जन्म पाते हैं और जो उस सोमतीर्थ में प्राण त्याग करते हैं वे सब पापों से मुक्त हो परमपदको प्राप्त होते हैं और हे धरणि! इस कोकामुख क्षेत्रमें तुङ्गकूट नाम पर्वत है जिससे चार जलधारा बड़े ऊंचे से गिरती हैं उसमें जो स्नान व पितरोंका तर्पण करते हैं व पञ्चरात्र व्रत करते हैं वे सब पापों से मुक्त होकर गोमेदनाम द्वीपमें जाय जन्म पाते हैं और जो उस क्षेत्र में प्राण त्याग करते हैं वे हमारे लोकमें जाय निवास करते हैं और हे धरणि! उसी कोकामुख में एक अनित्याश्रमनामक स्थान है जिसे मनुष्य तो कौन कहे देवता भी नहीं

जानते उसी तीर्थमें जो स्नान व एक दिनरात्रि व्रत करते हैं वे सब पापोंसे मुक्त हो पुष्करमें जन्म पाते हैं और इस क्षेत्रमें जो प्राण त्याग करते हैं वे सब पापों को त्याग परमपद को प्राप्त होते हैं और हे धरणि ! उसी कोकामुख में अग्निसरनाम तीर्थ है जहां पांचधारा पर्वत की कन्दरासे निकलती हैं जिसके स्नान करने से व पांच दिन निराहार व्रत करने से हमारे भक्त होके कुशद्वीप में जन्म पाते हैं और जो शरीर त्याग करते हैं वे सब पापों से मुक्त होकर ब्रह्मलोक में जाते हैं और हे धरणि ! उसी कोकामुख में ब्रह्मसरनाम अतिगुप्त तीर्थ है जहां बड़े ऊंचे से एक धारा शिला के ऊपर गिरती है जिसमें स्नान करने से व निराहार एक व्रत करने से सब पापों से मुक्त हो उत्तम क्षत्रिय के कुल में जन्म ले व पृथिवीका अनेक सुख भोगि व बड़ी शूरता से प्राणत्याग करि इन्द्रलोक में जाय अप्सराओं के साथ नन्दन वनमें विहार कर अन्त में हमारे लोक में आय अनन्तसुख भोगता है और हे धरणि ! उसी कोकामुखमें सूर्यप्रभनाम अति पवित्र तीर्थ है जिसमें अग्निसमान अत्यन्त जलती हुई जलकी धारा गिरती है जिसमें स्नान व पञ्चदिन निराहार व्रत करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो सूर्यलोक में निवास करता है यदि वहां प्राण त्याग करे तो सूर्यलोक में जाय वहां का सुख भोगि अन्त में हमारे समीप बास पाताहै और हे धरणि ! उसी कोकामुख में धेनुवटनाम हमारा क्षेत्र परम गुप्त और प्रियहै जिस में एक जलधारा बड़े ऊंचे पर्वतके शिखर से गिरतीहै जिसमें एक दिन स्नान करने से व सात दिन निराहार व्रत करने से सात समुद्र के स्नानका फल पाताहै और जो धेनुवटमें प्राण त्याग करे वो सातोंद्वीप के सुखको यथाक्रम से भोगि अन्तमें हमारे समीप बास पाता है और हे धरणि ! कोकामुख में धर्मोद्भवनाम हमारा परम प्रिय क्षेत्रहै जिसमें एक जलधारा पर्वतके मध्यको

फोड़ बाहर निकलती है तिस में जो स्नान और एकरात्र व्रत करता है वो मनुष्य फिर शूद्रयोनि में जन्म नहीं पाता और उस क्षेत्र में जो प्राणत्याग करता है वो सब पापों से मुक्त हो दक्षिणा सहित साङ्ग यज्ञ करने के फलको प्राप्त होता है और हे धरणि! उसी कोकामुख में कोटिवट नाम क्षेत्र हमारा परम प्रिय अतिगुप्त क्षेत्र है जिसमें पर्वतके शिखरसे एक बड़ी प्रबलधारा जल की गिरके नीचे वटमूल में पड़ती है उसमें स्नान करने से और तीनरात्रि निराहार व्रत करनेसे मनुष्य सब पापों से छूट जितने वट में पत्र हैं उतनेही हज़ार वर्ष धन व रूप करके युक्त पृथिवी में विहार करता है और जो उस तीर्थ में प्राणत्याग करता है वो सब पापों से मुक्त हो अग्नि के समान तेजपुञ्ज सा शरीर धार देवलोकका सुख भोगि अन्तमें हमारे समीप आता है और हे धरणि! उसी कोकामुख में अतिगुप्त हमारा प्यारा पापमोचन नाम क्षेत्र है जहां घटके बराबर मोटी जलधारा गिरती है जिस में स्नान करने से व एक दिनरात्रि के निर्जल व्रत करने से मनुष्य चारों वेदके पढ़ने का फल पाता है और जो उस स्थानमें शरीर त्याग करे वो उत्तम ब्राह्मण के कुल में जन्म पाय चारोंवेद का जाननेवाला हमारा भक्त जन्म २ में होवे और हे धरणि! उसी कोकामुख में कौशिकी नाम बड़ी पुण्य देनेवाली नदी है जो इस नदी में स्नानकर पञ्चरात्र निराधार व्रत करता है वो इन्द्रलोक को सुख भोगि अन्त में हमारे समीप निवास पाता है और जो कौशिकी समीप प्राणत्याग करता है वो जन्म मरण से मुक्त होकर हमारे समीप श्वेतद्वीप में निवास पाता है और हे धरणि! उसी स्थान में एक मातङ्ग नाम क्षेत्रहै जिसमें एक जल की धारा बहि करके कौशिकी में जाय मिलती है तिसमें जो एक बार भी स्नान करे औ एकरात्र व्रत करे वो सब पापों से मुक्त हो हमारा भक्त होताहै और जो मातङ्ग क्षेत्र में प्राणत्याग करताहै

वो हमारे स्वरूप को धारण कर हमारे लोकमें आय प्राप्त होता है हे धरणि! उसी स्थान में वज्रभव नाम परमगुप्त हमारा परम प्रिय तीर्थ है जिसमें एक जलकी धारा निकल के कौशिकी नाम नदी में मिलती है जिसमें एक दिन स्नान करने से और व्रत करने से मनुष्य शरीर त्याग करने से इन्द्र के समान उत्तम रूप धार वज्रधारण कर स्वर्गसुख भोगता है और जो वज्रभव तीर्थ में प्राणत्याग करता है वो सब पापों से मुक्त हो इन्द्ररूप धार स्वर्गलोक का सुख भोग करता हमारे समीप बास पाता है और हे धरणि! कोकामुख शिला से तीन कोस पूर्वदिशा में अतिगुप्त हमारा क्षेत्र है जिसका शक्ररुद्र नाम है तिसमें जो मनुष्य स्नान कर तीन रात्रि व्रत करता है वो सब पापों से मुक्त हो दूसरे जन्ममें जम्बूद्वीपका राजा हो अन्त में हमारे समीप निवास पाताहै और हे धरणि! उसी स्थान में एक क्षेत्र हमको बड़ाही सुख देनेहारा दंष्ट्रांकुरा नामहै जिसे देवता भी नहीं जानते मनुष्यकी तो कौन कहे जिसमें स्नान और एकरात्र व्रत करनेसे मनुष्य सब पापों से छूट शाल्मलिनाम द्वीप में जन्म ले वहांका सुख भोगि अन्त में हमारे समीप बास पाता है और हे धरणि! उसी कोकामुख में विष्णुतीर्थनामक अतिपवित्र स्थान है जिसमें पर्वत के ऊपर से जलकी तीन धारा गिरती हैं उस तीर्थ में जो स्नान व पितरों का तर्पण करते हैं वे सब पापों से मुक्तहो वायुलोक को प्राप्त होते हैं और जो वहां शरीर त्याग करते हैं वे वायुलोक में जाय कई कल्प वहां का सुख भोगि अन्त में विष्णुलोकमें जाय विष्णु-पार्षद होते हैं और हे धरणि! उसी स्थानमें कोकामुख का और कौशिकी का परम पवित्र संगमनामक तीर्थ है उस संगम में जो स्नान व पितरों का तर्पणकर एकरात्र व्रत करते हैं वो शरीर त्याग करनेसे उत्तम कुल में जन्म पाते हैं और जातिस्मर होते हैं और भी जिस लोक की वाञ्छा करें वहांही उस स्नान के पुण्य

से प्राप्त होते हैं और जो उस संगमतीर्थ में प्राण त्याग करें वे सब पापों से मुक्त हो हमारे समीप आते हैं और हे धरणि! कोकामुख के समीप मत्स्यशिलानाम एक बड़ाही पवित्र तीर्थ है जिस में पर्वत के ऊपर से एक जलकी धारा गिरती है उस धारा में जो स्नानकर व पितरों का तर्पण कर जो मधु व लाजायुक्त सूर्य को अर्घ देते हैं और शिलाका दर्शन करते हैं वे सब पापोंसे मुक्त होकर परमपद को अर्थात् विष्णुधाम को प्राप्त होते हैं और जो वहां प्राणत्याग करते हैं वे जिस लोक में इच्छा हो वहां जाय इच्छासुख भोगि अन्तमें हमारे समीप आते हैं और हे धरणि! हमारा क्षेत्र कोकामुख पांच योजन का विस्तार है जिस में एक शिला शुक्ल वर्ण है उस शिला में दक्षिणमुख हम सदा निवास करते हैं वाराहरूप धारणकर निजमुख को वामभाग नीचा कर दंष्ट्राको ऊंचाकर जगत् को देखते निज भक्तों को दर्शन देते हैं हे धरणि! उस हमारे रूपका जो दर्शन करते हैं वे सब पापों से मुक्तहो संसारसागर से पार हो मुक्त होते हैं और जो संसार भय से निवृत्त हुआ चाहे वो किसी भांति कोकामुख में जाय तीर्थों में स्नानकर हमारा दर्शन करे व पृथिवी में कोई तीर्थ इस लोक या परलोक के वाञ्छाफल देनेहारा नहीं है कोकामुख के स्नान दर्शन करनेहारे जो पुरुष हैं उनके पितर दश पहले के और दश पीछे के और आप इसभांति इक्कीस कुल सब पापों से छूट उत्तम गति को प्राप्त होते हैं और जो इस पवित्र उत्तम कथा को प्रातः-काल उठिके सुनें सुनावें व कथनकरें वे सब पापों से मुक्त होकर उत्तम गतिको प्राप्त होते हैं हे धरणि! जो तुमने प्रश्न किया सो हमने वर्णन किया अब क्या सुना चाहती हो? ॥

एकसौछत्तीस का अध्याय ॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! उसी हिमालयनाम पर्वत

में देवताओं को भी दुर्लभ परमपवित्र लोकविख्यात बदरी नाम हमारा स्थानहै उस विश्वके तारण करनेहारी जो बदरी है तिस में जो स्नान व्रत और हमारा दर्शन करते हैं वे फिर माता के गर्भ में निवास नहीं लेते और जो ब्रह्मकुण्डनाम तीर्थ है वहां हम सर्वदा निवास करते हैं उस ब्रह्मकुण्ड में जो स्नानकर तीन रात्र व्रत करते हैं सो अग्निष्टोमनामक यज्ञ के फल को प्राप्त होते हैं और जो इन्द्रियों को जीति व्रत करके उस स्थान में प्राणत्याग करे वो सब पापों से मुक्त हो सत्यलोक में जाय बहुत काल वहां निवास कर अन्त में हमारे समीप आता है और हे धरणि ! उसी बदरी में अग्निसत्यपद नाम तीर्थ है जिसमें पर्वत के मध्यसे मुसल की बराबर उष्णोदक की धारा गिरती है जो उस में स्नान तर्पण कर तीनदिन व्रत निराहार करते हैं वे सबपापों से मुक्त होकर जन्मान्तर में सत्यवादी होते हैं और हमारे भक्त होते हैं जो वहां इन्द्रियों को जीति सावधान हो व्रत कर प्राण त्याग करें वे सत्यलोक में जाय वहांका सुख भोगि अन्तमें हमारे समीप आते हैं हे धरणि ! इन्द्र ने आय यहां बड़ाघोर तपकर हमको प्रसन्न किया वह इन्द्रलोकनामक तीर्थ अतिपवित्रहै जिस में जलकी धारा बड़ीभारी पर्वत के शिखरसे गिरती है उस धारा में जो स्नान कर एक रात्र व्रत करते हैं वे पवित्र हो सत्यलोक में जा प्राप्त होते हैं और जो निरशन व्रत करके शरीर त्याग करते हैं वे सत्यलोक का सुख भोगि अन्तमें हमारे समीप आते हैं हे धरणि ! उसी बदरी में पञ्चशिख नाम तीर्थ है जिसमें पर्वत के शिखर से पांच जल की धारा गिरती हैं उस पञ्चधारा में जो मनुष्य स्नान करते हैं वे अश्वमेध नाम यज्ञके फलको प्राप्त होते हैं देवलोक में जा देवियों के साथ उत्तम विमान पर बैठि वहां का सुख भोगते हैं और पञ्चधारामें जो निरशन व्रत करके प्राण त्याग करें वे इन्द्रके समीप जाय वहां का सुखभोगि अन्तमें

हमारे समीप आय प्राप्त होते हैं और हे धरणि! उसी बदरी में द्वादशादित्य कुण्डनाम तीर्थ है यहां वारहों आदित्यों को हमने स्थापन किया है जहां पर्वत के शिखरसे वारह धारा जल की नीचेको गिरती हैं तिसमें जो कोई द्वादशी तिथि को स्नान करते हैं वे सब पापों से मुक्त होकर सूर्यलोक में जाय निवास करते हैं और जो वहां निरशन व्रत करके प्राणत्याग करते हैं वे सब पापों से मुक्तहो सूर्यलोकका सुख भोगि अन्तमें हमारे समीप आते हैं हे धरणि! उसी बदरी में लोकपालनामक तीर्थ है जहां हमने लोकपालों को स्थापित किया है जिसका दूसरा नाम सोमकुण्डभी है जिसमें ज्येष्ठमासकी शुक्लद्वादशीको स्नान करनेसे जन्मान्तरमें हमारा भक्त होताहै और जो उस तीर्थमें प्राण त्याग करते हैं वे सब पापोंसे मुक्तहो लोकपालोंके लोकका सुख भोगि अन्तमें हमारे समीप आते हैं और हे धरणि! उसी समीप मेरु-वरनामक अतिगुप्त तीर्थ है जहां वड़े ऊंचेसे जलकी तीन धारा पीतवर्णकी गिरती हैं परन्तु भूमिमें पड़तेही वो श्वेत होजाती हैं उस तीर्थमें जो स्नानकर निराहार तीनव्रत करें वे शरीर त्याग कर सुमेरुके शिखरमें जाय निवास करें और जो वहां प्राणत्याग करें वे हमारे समीपवर्ती हों और हे धरणि! जो मानसोद्भेदनाम तीर्थ है तिसमें यह चिह्नहै कि पर्वतके शिखरसे जल गिरताहै और पृथिवीमें समाय जाताहै जो पुरुष उसी तीर्थमें स्नान करें वे सब पापोंसे छूटि हमारे भक्त होते हैं हे धरणि! औरभी उसी स्थानमें पञ्चशिरनाम क्षेत्र है यहां ब्रह्माजीने निजशीर्षोंको काट करके हमारे अर्पण कर घोर तप किया उसमें जो स्नानकर पांच व्रत करते हैं वे अन्तमें शरीरको त्याग ब्रह्मलोकको जाते हैं और जो निरशन व्रत करके शरीर त्याग करें वे सब पापोंसे मुक्तहो ब्रह्मलोकमें जा वहांका सुखभोगि अन्तमें हमारे समीप आते हैं और हे धरणि! उसी बदरीक्षेत्रमें उर्वशीकुण्डनाम तीर्थहै जहां

हमारे दक्षिण ऊरूको भेदनकर उर्वशीनाम अप्सरा उत्पन्न भई है और जहां कल्पोंसे लेकर हम उग्रतप कर रहे हैं और उसी स्थानमें ब्रह्मा-इन्द्र आदि संपूर्ण देवता हमारे दर्शनके लिये आये परन्तु हमारी योगमायाके आवरणसे किसीने दर्शन न पाया तब हमने कहा कि; हे देवताओ! क्यों विस्मय करतेहो हमारा दर्शन होचुका इस उर्वशीको ले स्वर्गको जावो और इस उर्वशीकुण्डमें जो एक रात्र व्रत व स्नान करेंगे वे सब पापोंसे मुक्तहोकर उर्वशीलोकमें प्राप्तहोंगे और जो इस क्षेत्रमें प्राणत्याग करेंगे वे उर्वशीलोकमें जाय वहांका सुख भोगि अन्तमें हमारे समीपवर्ती होंगे और हे धरणि! जो बदरीमें जा हमारा स्मरण करें वे मुक्तिको प्राप्तहोंगे जो इस बदरीमाहात्म्यको सुनें या हमारे भक्तको सुनावें वे दोनों हमारे धामको प्राप्त होंगे॥

एकसौसैंतीसका अध्याय॥

सूतजी कहते हैं हे शौनक! इसभांति वाराह भगवान्का वचन सुनि धरणी हाथ जोड़ नम्रहोकर विनयपूर्वक धर्मके सुनने की वाञ्छा करके पूछनेलगी कि; हे भगवन्! मैं स्त्रीहूं इसलिये कोमलस्वभावसे प्रश्न करतीहूं सो आप कृपाकर निजदासी जान मेरेसे यह वर्णन करें कि स्त्रियां अबला होती हैं इसलिये क्षुधाके न सहनेसे कोई व्रत या नियम उनसे किसभांति बनपड़ेगा और उनमें येभी दोष हैं कि मास मासमें ऋतुदोष करके अपवित्र रहती हैं जब हरएक मासमें अपवित्र रहना ठहरा तो कोई नियम किसभांति पार होगा इसलिये आप अनुग्रह करके कोई ऐसी रीति बतावें कि जिससे उनकाभी कल्याणहो यह विनय वाणी धरणी की सुनि वाराह भगवान् कहनेलगे कि; हे धरणि! बहुत उत्तम वार्त्ता तुमने पूछी जिसमें संसारके जीवोंका उपकारहो यह कहकर कहनेलगे कि जो स्त्री हमारी भक्ता हैं वे किसी अवस्थामें

हों सदाही पवित्र हैं और सबभांति की सेवा हमारी करसकती हैं यदि उनको निज शरीरके अशुद्धपनेका भ्रमहो तो अञ्जली निजमस्तकमें करके यह मन्त्र पढ़िलें तो रजोदोषसे निवृत्तहो हमारी सेवाके योग्यहों मन्त्रः ॥ "ॐ अनादिमध्यान्तमजं पुराणं रजस्वलादेववरं नमामि" हे धरणि! इस मन्त्रके उच्चारण करतेही रजस्वला पवित्रहो सब कर्मोंके योग्य होतीहै इस भांति वाराह भगवान्‌के मुखारविन्दकी वाणी सुनि धरणी कहने लगी कि; हे भगवन्! पुरुषहो वा स्त्रीहो अथवा दोनोंसे भिन्न नपुंसक हो वो किसप्रकारके कर्म करनेसे सब पापोंसे छूटकर संसार-सागरसे पारहो यह सुनि वाराहजी कहनेलगे हे धरणि! इन्द्रियों को रोंकि निज चित्तको सावधानकर जो संन्यास योगसे हमारा भजन करते हैं वे पुरुष—स्त्री—नपुंसक कोईहों सब पापोंसे मुक्तहो परम पदको प्राप्तहोते हैं औरभी श्रवणकरो हे धरणि! जो निज मन, बुद्धि, चित्तको नहीं वशकरसकते वो सब भावसे हमारी शरण हो अनन्त वृत्तिसे हमारा स्मरण करें तो सब पापोंसे मुक्त होजाते हैं भक्ष्याभक्ष्य, पेयापेय और अगम्यागमन आदि जितना पाप कर व हमारी शरणहो हमारा स्मरण करें तो उनको पाप नहीं लगसकता रात्रिको व दिनको व सन्ध्याको व सोवते जागते चलते व फिरते किसीसमय जो हमारा स्मरण दो घड़ी, घड़ी, आधी घड़ी, निमिष, त्रुटि, लव और क्षणमात्रभी करें वे सब पापोंसे मुक्तहोकर उत्तमगतिको प्राप्त होते हैं हे धरणि! जो हमारा चिन्तन करताहै वो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और चाण्डाल आदि किसी योनिमें हो सर्वथा पवित्रहै और हे धरणि! उस पुरुषकी प्रशंसा सदा हम करते हैं जो ज्ञानपूर्वक हमारेमें चित्त लगाकर निज हृदयमें हमारा ध्यान करता हुआ हमारी सेवा करताहै उसको कहींसे भय नहींहै और हे धरणि! कैसेही उत्तम कर्म करनेवाले पुरुष हैं परन्तु हमसे विमुख हैं उनको अधमसे

अधम जानना चाहिये इसलिये ज्ञान व वैराग्य सब हमारे अ-र्पण कर अनन्यभावसे हमारा भजनकर हमारे समीप आय नाना भांति सुखभोगि मुक्तिको प्राप्त होय हे धरणि! यह मर्यादा कल्प के आदिमें हमनेंही रची जो मास २ में स्त्रियोंके ऋतुदानको पुरुष उद्यतहों जिससे सन्तति उत्पन्नहो और यदि पुरुष समर्थ होकर स्त्रीके ऋतुसमयमें न प्राप्तहो और ऋतुदान न देवे तो उसे एकगर्भके हत्या करनेका दोष होताहै उस दोषसे दश पहले और दश पीछेके पितर नरकवास पाते हैं इसलिये सर्वथा ऋतु समयमें स्त्रीसंग करना चाहिये और हे धरणि! निज विवाहिता स्त्रीके विना दूसरीके गमन करनेसे अधोगति होतीहै और जो पुरुष कामसे मोहितहो रजस्वला स्त्रीका गमन करते हैं उनके पितर उन्हींके वीर्यको पान करतेहैं इसलिये जब पांचवेंदिन स्त्री रजोदोषसे निवृत्तहो स्नानकर शृङ्गारयुक्तहो तब उत्तमस्थानमें जाय कोमलशय्यापर आनन्दपूर्वक उसका संग करे फिर उसे ऋतुदान दे स्नानकर उत्तमवस्त्र धार प्रसन्नहो हमारा भजनकरे हे धरणि! ऋतुकालमें स्त्रियोंका भोग पितरोंके लिये कहाहै कि जिस में पुरुष पितरोंके ऋणसे मुक्तहो इसलिये निजभार्यासेही भोग करना उचितहै इस भोग करनेसे भोक्ता पुरुषका ब्रह्मचर्य दूर नहीं होता वो ब्रह्मचारिहीके तुल्यहै और जो पुरुष ऋतुसमयमें किसी कारणसे निज स्त्रीका संग नहीं करते हैं वह भ्रूणहत्याके दोषभागी होते हैं भ्रूणहत्या उसे कहते हैं जो स्त्रीके गर्भका बालक वे समय किसी उपायसे बाहर निकालदेना और हे धरणि! म-नुष्योंके लिये दोप्रकारका मार्ग मुक्त होनेकाहै एकतो तत्त्वका विचार दूसरा कर्मयोग इन दोनों योगोंमें किसी एकके दृढ़ सेवन से पुरुष उत्तम गतिको प्राप्त होताहै और हे धरणि! जो स्त्री ह-मारी भक्ता होके रजस्वला धर्मको प्राप्तहो वो तीनदिन निराहार व्रत और भूमिशयन करती व्यतीतकर चौथेदिन शिरसों स्नान

कर पवित्र वस्त्रधार दोनों हाथोंसे मस्तकसे अञ्जली बांधि इस मन्त्रको पढ़ें ॥ (मंत्रः । ॐ आदिर्भवानुगुप्तमनन्तमध्यो रजस्वला देव वयं नमामः । उपोषिता त्रीणि दिनानि चैवं मुक्तौ रतं वासुदेवं नमामः) इस मन्त्रको पढ़ फिर वह स्त्री हमारी सेवा की व संसारके व्यवहार कामोंकी अधिकारिणी होतीहै और हे धरणि ! यह भी निश्चय करो कि स्त्री, पुरुष, नपुंसक इनमेंसे कोईहो संसारके विषयवासना से मुक्तहो रात्रिदिन भक्तिपूर्वक हमारा चिन्तन करते हैं वो किसी अवस्थामें अपवित्र नहीं होते और जो विषयी संसारासक्तचित्त हैं उन्हें सदाही अपवित्र समझना चाहिये और वो अनेकों जन्मतक संसाररूपी समुद्रसे पार नहीं होते माता, पिता, स्त्री, पुत्र आदि नानाभांतिके कुटुम्बमें मग्न हुये २ उन्हींके पालन पोषणमें हमारी मायासे मोहित काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सरतारूप अग्निके संतापसे व्याकुल एक श्वास लेनेकोभी सावकाश नहीं पाते और जन्म मरणबाधा से नहीं छूटते हे धरणि ! लोकमें जन्मले अज्ञानियोंके संगदोषसे मोहजालमें फँसा हुआ हमसे विमुख घोरनरकमें बेवश जाय पड़ते हैं और जिन कुटुम्बोंके लिये अनेक भांतिका अधर्म करते हैं वे अन्तमें इसे त्यागि अपनी रस्ता लेते हैं और अधर्म करनेवाले पुरुषको भोगना पड़ताहै विचारकरो हे धरणि ! थोड़ेदिनों के वास्ते संसारमें जन्मले मोहवश ऐसे कर्म करते हैं कि जिसमें बहुतकालतक वो मूढ़ नानाभांतिके दुःखोंको भोगते नानायोनिमें जन्म लेते हैं यह केवल हमसे विमुख होनेका फलहै इसलिये पूर्वापर शोच विचारकर हृदयसे त्यागकर जो संन्यासयोगसे हमारी शरणमें प्राप्त होते हैं वे सब दुःखोंसे मुक्तहोकर उत्तमगति को प्राप्त होतेहैं और हे धरणि ! जो मनुष्य प्रातःकाल उठि सावधान हो इस कथाका श्रवण करें वेभी सब पापोंसे छूटि हमारे लोकको प्राप्तहों ॥

एकसौअड़तीस का अध्याय॥

सूतजी कहतेहैं कि; हे शौनक! इसभांति कथाका वर्णनकर वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! औरभी बड़ागुप्त परम पवित्र एक हमारा स्थानहै श्रीगङ्गाजीके दक्षिणतट विन्ध्यनाम पर्वत में जिसका नाम मन्दारक्षेत्र है जिस पृथिवी में सर्वकाल त्रेतायुगसम धर्म रहताहै जिस क्षेत्रमें हमारी मूर्ति रघुवंशमणि दशरथके ज्येष्ठपुत्र श्रीरामचन्द्र स्थापित करेंगे इसभांति श्री वाराह भगवान्‌के वचन सुनि हाथजोड़ नम्रहो धरणी कहनेलगी कि; हे प्रभो! मन्दारक्षेत्रकी महिमा भलीभांति आप वर्णन करें कि मन्दार क्षेत्रमें कौन २ गुप्त व पवित्र स्थानहैं और वहां क्या२ सत्कर्म करना चाहिये और उन सत्कर्मोंके करनेवाले किस लोकको प्राप्त होतेहैं सो आप कृपा करके वर्णन करें यह धरणी की वाणी सुनि वाराह भगवान् कहनेलगे कि; हे धरणि! जो तुम पूछतीहो सो है तो परमगुप्त तथापि तुम्हारे स्नेहसे हम वर्णन करते हैं हे धरणि! हम सदा मन्दारक्षेत्रमें निवास करते हैं और उत्तम जो मन्दारपुष्प है उसे अपने हृदयमें धारण करते हैं और उस पर्वतसे ग्यारहजलके कुण्ड निकलते हैं और वहांही एक मन्दारका उत्तम वृक्षहै जिसके नीचे हम सदा निवास करते हैं औरभी वहां एक आश्चर्य दीखताहै कि हर एक महीनेकी दोनों द्वादशी और चतुर्दशीके मध्याह्नसमय में वह मन्दारवृक्ष पुष्पों करके युक्त होताहै व और दिनोंको नहीं फुलाता व उसी मन्दार वृक्षके नीचे एक उत्तम जलसे भराहुआ कुण्डहै कि जिसमें स्नान कर एकरात्रि निराहार व्रत करनेसे मनुष्य सबपापोंसे मुक्तहो उत्तम गतिको प्राप्त होताहै और हे धरणि! जो वहां तप करके प्राणत्याग करें वो हमारे लोकमें निवास पावें और हे धरणि! उस मन्दारवृक्षकी उत्तरदिशामें एक प्रापणनामक पर्वत है तिससे

दक्षिणदिशाको तीन जलधारा गिरती हैं उस जलमें सदा हम स्नान करते हैं इसलिये उसका स्नानकुण्ड नामहै उस स्नानकुण्डमें जो मनुष्य स्नान कर एकरात्रि व्रत करे वो सबपापोंसे मुक्तहो सुमेरुपर्वतके दक्षिण शिखरपर बास पावे और जो वहां व्रत करके शरीर त्यागकरें वे कर्मबन्धनसे छूटि हमारे समीप बास पावें और हे धरणि ! उस मन्दारवृक्षकी पूर्वदिशामें बड़े ऊंचे पर्वतसे एक जलकी धारा सुथरीसी गिरतीहै कि जिसका रङ्ग पीतवर्ण है जो उस जलमें स्नानकर एकरात्रि व्रतकरें वे सबपापोंसे छूटि देवलोकमें जाय देवताओंके साथ विहार करें और जो उस स्थानमें किसी भांति प्राणत्याग करें वे निज इक्कीसकुलों के साथ हमारे लोकमें बास पावें और हे धरणि ! उसी मन्दारवृक्ष के अग्निकोणमें एक अगाध जलका कुण्डहै जिसमें एकबार स्नान और एकव्रत करनेसे सबपापोंसे मुक्तहो सुमेरुपर्वत में बास पाते हैं और हमारेमें चित्त लगाकर जो वहां प्राणत्याग करें वे संसार से पारहो हमारे लोकमें प्राप्त हों और हे धरणि ! मन्दारवृक्षके पूर्वपर्वतमें एक बड़ी गहरी गुहाहै जिसमें एक जलधारा बड़ी मोटी गिरतीहै तिस जलमें जो स्नानकर पांच व्रत करते हैं वो सब पापोंसे मुक्त होकर सुमेरुपर्वतकी पूर्वदिशामें स्वर्गके समीप जा बास पातेहैं और यदि उस तीर्थमें कोई प्राणत्याग करें तो हमारे लोकमें आय प्राप्तहों और हे धरणि ! उसी मन्दारवृक्ष की दक्षिणदिशामें बड़े ऊंचेसे जलकी पांच धारा गिरती हैं उसमें जो स्नान और एकव्रत करते हैं वे सब पापोंसे मुक्तहो सुमेरुपर्वतके दक्षिणशृङ्गमें निवास पाते हैं और जो वहां किसी भांति प्राण त्याग करें वे संसारसागरसे पारहो हमारेलोकमें निवास करें और हे धरणि ! मन्दारवृक्षके नैर्ऋत्यकोणमें एक जलधारा बड़ी प्रकाशवती गिरतीहै उसमें जो स्नानकर एकव्रत करतेहैं वे सब पापोंसे छूटि जाय ध्रुवलोकमें बास करते हैं और जो उस तीर्थ

में प्राणत्याग करें सो जन्म मृत्युभयसे मुक्तहो हमारे लोकमें जाते हैं और हे धरणि! उस मन्दारवृक्षकी पश्चिमदिशामें एक बड़ा गम्भीर जलका कुण्डहै कि जिसका नाम चक्रावर्त तीर्थ है उसमें जो स्नानकर पांच रात्रि व्रत करतेहैं वे सव पापोंसे मुक्तहो मेरुपर्वतआदि देवताओंकी विहारभूमिमें जाय अप्सराओंके साथ भांति २ के सुख भोगतेहैं और जो उस तीर्थमें विधिपूर्वक प्राणत्याग करें वे सब पापोंसे मुक्त हो हमारे लोकमें बास पावें और हे धरणि! उस मन्दारवृक्षकी वायुदिशामें एक तीर्थहै जिसमें बड़ी मोटी जलकी तीन धारा गिरती हैं उनमें जो स्नानकर तीन व्रत करें वे सब दुःखोंसे मुक्त होकर देवलोकमें प्राप्त होते हैं और हे धरणि! जो उस तीर्थमें प्राणत्याग करते हैं वे संसारसागरसे पार होकर विष्णुलोकको जाते हैं और मन्दारवृक्षकी दक्षिण दिशामें दोकोस एक अगाध जलकुण्ड अतिपवित्र है कि जिसके स्नान करनेसे और आठदिन व्रत करनेसे देवलोक प्राप्त होताहै यदि कोई उस स्थानमें प्राणत्याग करे तो सब पापोंसे मुक्त होकर वैकुण्ठको जाय हे धरणि! उस मन्दारवृक्षके पश्चिम एक बड़ा गुप्ततीर्थहै जिसमें सात जलकी धारा गिरती हैं उनमें जो स्नान व एकरात्र व्रत करता है वो स्वर्ग में जाय अप्सराओं के साथ विहारकर अन्तमें आय भरतखण्डका राजा होताहै और यदि उस स्थानमें प्राणत्याग करे तो संसारसे मुक्तहो वैकुण्ठवास पावे वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इसभांति मन्दारक्षेत्रके चारों दिशाओं में पांच २ कोसके मान सब पुण्यतीर्थ हैं जहां हमारा सब कालमें निवास है और भी एक अतिगुप्त वार्त्ता वर्णन करते हैं सो श्रवण करो हे धरणि! मन्दार वृक्षके दक्षिणभागमें चक्र निवास करता है और वामभागमें गदा, लाङ्गल, मुसल और शंख ये अग्रभागमें मन्दारके सर्वदा निवास करते हैं हे धरणि! इस मन्दारमाहात्म्यको जो नित्य सुनें व कथन करें

वे दोनों सब पापों से मुक्त होकर हमारे निकट बास पावैं ॥

एकसौउनतालीस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं, हे शौनक ! इसभांति वाराहभगवान् की विचित्रवाणी सुनि हर्षितहो धरणी कहनेलगी कि; हे भगवन् ! आपने परमपवित्र मन्दारक्षेत्रका वर्णन किया कि; जिसके श्रवण से हमारा अनेक भ्रम निवृत्त हुआ अब आप मुझे दीन व श्रद्धालु जान और भी तीर्थ वर्णन करें जो मन्दारकी तुल्य अथवा न्यून अधिक तीर्थहैं जिसके श्रवणसे आत्माकी तृप्ति व आपकी प्रसन्नताहो यह धरणीकी विनयवाणी सुनि श्रीवाराहभगवान् कहनेलगे कि हे धरणि ! जो तुम पूछतीहो सो सावधान होकर श्रवण करो इतना कहि कहनेलगे कि; शालग्रामनामक अति पुण्यक्षेत्र है कि जिसकी महिमा सुननेसे अनेक जन्मोंके पातक निवृत्त होतेहैं हे धरणि ! भावी द्वापरयुगमें यदुवंशमें शूरनाम अतिविख्यात राजा होगा तिसका पुत्र यदुवंशका सुख देनेहारा अतियशी वसुदेवनाम होगा तिस वसुदेवके परम सुन्दरी देवकी नाम स्त्री तिसके गर्भमें हम किसी कारणसे जन्म लेंगे तब हमारा नाम लोकविख्यात वासुदेव होगा तब यदुवंशको शोभित करते हमारे वर्तमानसमयमें एक शालंकायननामक ब्रह्मऋषि हमारे आराधनमें युक्त हुआ २ चारोंओर पृथिवीमें घूमते तप करने लगा व इस विचारसे कि विष्णुके तुल्य हमारे पुत्र होय सो शालंकायनऋषि बहुत काल सुमेरुपर्वत में तपकर पिण्डारक नाम अतिपवित्र जो हमारा क्षेत्रहै उसमें जाय बड़ा उग्र तपकर फिर लोहार्गलनामक तीर्थमें तप करता व हमारेही खोजमें राति दिन लगाभया जाय शालग्रामनाम पर्वतमें पहुँचा जहां हमारा सर्वदा निवास है और हे धरणि ! जिस पर्वतमें हम शिलारूप धारणकर नित्य निवास करते हैं और जहांकी सब छोटी बड़ी

शिला पूजनीय हैं यदि चक्रके चिह्न करके युक्तहो तो फिर क्या कथन करना वो शिला तो सर्वोत्तमाहै और हे धरणि! उसी स्थान में शिवजी भी लिङ्गरूप धारणकर विराजमान रहते हैं इसलिये लिङ्गचिह्न देख शालग्रामको शिवनाभ करके कथन करते हैं और जहां सोमने अपने नामसे शिवलिङ्ग स्थापितकर बड़ी उग्र तपस्या किया दशहज़ार वर्ष दक्षप्रजापतिके शापसे निवृत्त होनेके लिये और जब सोमका तप सिद्ध भया तब उक्त शापसे मुक्तहो निज कलाको प्राप्तहो व शिवजीकी स्तुति करनेलगे (स्तुतिः। सोमउवाच ॥ शिवं सौम्यमुमाकान्तं भक्तानुग्रहकारकम्। नतोऽस्मि पञ्चवदनं नीलकण्ठं त्रिलोचनम् १ शशाङ्कशेखरं दिव्यं सर्वलोकनमस्कृतम्। पिनाकपाणिदेवेशं भक्तानामभयप्रदम् २ त्रिशूलडमरुभ्यां च लसद्धस्तं वृषध्वजम्। नानामुखैर्गणैर्जुष्टं नानारूपैर्भयानकैः ३ त्रिपुरघ्नं महाकालमन्धकादिनिषूदनम्। गजाजिनावृतं स्थाणुं व्याघ्रचर्मविभूषितम् ४ नागयज्ञोपवीतं च मुण्डमालाधरं प्रभुम्। अरूपमपि सर्वेशं भक्तेच्छोपात्तविग्रहम् ५ वह्निसोमार्कनयनं मनोवाचामगोचरम्। जटाजूटप्रकटितगङ्गासंमार्जितांहसम् ६ कैलासनिलयं शम्भुं हिमाचलकृताश्रयम् ॥ इति) इसभांति सोमकी स्तुति श्रवणकर प्रसन्नहो शिवजी कहनेलगे कि हे सोम! जिस वरदानकी इच्छाहो सो मांगो हे चन्द्र! यह हमारा दर्शन बहुत दुर्लभहै इतना सुनि अतिहर्षितहो सोम कहनेलगा कि; हे भगवन्! यदि आप प्रसन्न हैं व मुझे वर देते हैं तो कृपा करके इस मेरे पूजनकिये लिङ्गमें आप सर्वदा निवास करें और जो भक्त इस लिङ्गका पूजन करें उसका सब मनोरथ आप पूर्ण करें यह सोमकी याचना सुनि बहुत प्रसन्नहो शिवजी कहनेलगे कि; हे सोम! यहां श्रीविष्णु भगवान्का निवास है इसलिये उनके स्नेहसे हम सदा निवास करते हैं परन्तु अब तुम्हारी प्रीतिके लिये आजसे हम इस लिङ्गमें रात्रि दिन निवास

करेंगे क्योंकि हे सोम! तुमभी आठ मूर्तियोंमेंसे हमारीही मूर्ति हो इसलिये तुम्हारी वाञ्छा पूरी करनी हमको सर्वथा उचित है और जो प्रीतिसे इस तुम्हारे स्थापित लिङ्गकी पूजा करेंगे उनके हम संपूर्ण मनोरथ सिद्ध करेंगे और हे सोम! शालंकायनमुनि के उग्र तपोबलसे व विष्णुके सम्मतसे इस तुम्हारे स्थापित लिङ्ग में निवास करनेसे हमारा सोमेश्वर ऐसा नाम लोकमें विख्यात होगा और इस पर्वतमें जो शिलाहै वो विष्णुकी व हमारी आज्ञा से तपकी सिद्धि देनेहारी है हे सोम! शालंकायनऋषि तो तप इसीलिये करताथा कि विष्णुके अथवा रुद्रके तुल्य हमारे पुत्र हो परन्तु आजतक हम किसीके पुत्र भये नहीं और हमारी तुल्य दूसरा कौनहै वे हमारे और शालंकायनकी वाञ्छा तो किसी भांति पूरा किया चाहिये और दूसरा यह वृत्तान्तहै कि, नर्मदा जीने निजपुत्र होनेके लिये हमारा बड़ा तप कियाहै कि शिव तुल्य हमारे पुत्रहो सो उसे भी वर देना उचित समझ प्रसन्नहो हमने यह वर दिया कि हे नर्मदे! हम लिङ्गरूपीहो सर्वदा तुम्हारे गर्भमें सहित गणेशके तुम्हारे पुत्रहो निवास करेंगे हे नर्मदे! तुम साक्षात् जलरूपा हमारी मूर्तिहो हे सोम! शिवशक्तिमयी मूर्ति रेवाकी इसलिये जानना चाहिये और उसीसमयसे रेवा-खण्ड ऐसा शब्द उस भूमि का नाम प्रसिद्ध हुआ और हे सोम! अब गण्डकीका वृत्तान्त श्रवणकरो जिसने पूर्वकालमें देवताओं के दश हज़ार वर्ष सूखे पत्ते व जल वायु भोजनकरके विष्णु भगवान्‌को चिन्तन करतीहुई गण्डकीने बड़ा घोर तप किया उस तपसे प्रसन्नहो विष्णुभगवान् प्रकटहो मधुरवाणीसे कहनेलगे कि हे गण्डकि! तुम्हारे इस उग्र तपसे हम अतिप्रसन्न भये तुम ने हमारी बड़ीही भक्ति की इसलिये जो तुम्हारी वाञ्छाहो सो वर मांगो इसभांति प्रसन्न व शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये मन्दहास करके सुशोभित विष्णुभगवान्‌को देखि बड़े हर्षसे

दण्डवत् प्रणामकर गण्डकी स्तुति करनेलगी (स्तुतिः। अहो देव मया दृष्टो यो दुर्दर्शः कुयोगिनाम्। त्वया सर्वमिदं सृष्टं जगत्स्थावरजङ्गमम् १ तदनु त्वं प्रविष्टोसि पुरुषस्तेन चोच्यसे। त्वल्लीलोन्मीलिते विश्वे कः स्वतन्त्रोऽस्ति वै पुमान् २ अनाद्यन्तमपर्यस्तं यद् ब्रह्म श्रुतिबोधितम्। तदेव त्वं महाविष्णो यस्त्वां वेद स वेदवित् ३ तवैवाद्या जगन्माता या शक्तिः परमा स्मृता। तां योगमायां प्रकृतिं प्रधानमिति चक्षते ४ निर्गुणः पुरुषोऽव्यक्तश्चित्स्वरूपी निरञ्जनः। आनन्दरूपः शुद्धात्मा ह्यकर्ता निर्विकारकः ५ स्वां योगमायामाविश्य कर्तृत्वं प्राप्तवानसि। प्रकृत्या सृज्यमानेऽस्मिन्द्रष्टा साक्षी निगद्यसे ६ प्रकृतेस्त्रिगुणैरस्मिन् सृज्यमानेऽपि नान्यथा। सान्निध्यमात्रतो देव त्वयि स्फुरति कारणे ७ स्फटिके हि यथा स्वच्छे जपाकुसुमरागतः। प्रकाश्यते त्वत्प्रकाशाज्ज्योतीरूप नतास्मि तत् ८ ब्रह्मादयोऽपि कवयो न विदन्ति यथार्थतः। तं कथं वेद्म्यहं मूढा तव रूपं निरञ्जनम् ९ मूढस्य जगतो मध्ये स्थिता किञ्चिदजानती। त्वया धृष्टा कृता चास्मिन् योग्यायोग्यमविन्दती १० तेन लोके महत्त्वं च इच्छामि त्वत्प्रसादतः। ज्ञात्युदारफलं याचे तन्मे त्वं दातुमर्हसि ११) इस भांति गण्डकीकी स्तुति सुनि अतिप्रसन्न हो हँसकर श्रीविष्णुभगवान् कहनेलगे कि हे गण्डकि! जो तुम वर मांगतीहो सो अतिदुर्लभहै तथापि हमारे दर्शनको पाकर मनुष्य किसी बातका दुःखी नहीं रहता शिवजी कहते हैं हे सोम! इसभांति विष्णुभगवान्की वाणी सुनि हाथ जोड़ शिर झुकाय मधुरवाणीसे गण्डकी कहनेलगी कि; हे भगवन्! यही वर चाहतीहूं कि मेरे गर्भमें आय पुत्रहो निवास करो हे सोम! तब तो गण्डकीका वचन सुनि विष्णुभगवान् विचारनेलगे कि देखो यह नदी हमारे संगके लोभसे यह वर याचती है इसलिये इसे यही वर देना योग्य है जिससे लोकका पाप निवृत्तहो व उत्तम गतिको प्राप्तहो यह शोच विचार विष्णु

भगवान् प्रसन्न होकर गण्डकीसे यह कहनेलगे कि; हे गण्डकि! यह हमारा वचन सुन कि; निजभक्तों के अनुग्रहकारण शालग्रामशिलारूपहो पुत्रतुल्य हम सर्वदा तुम्हारे उदरमें निवास करेंगे इस लिये सब नदियोंमें तुम श्रेष्ठा होगी और जो जीव तुम्हारे जलको स्नान वा दर्शन पान आदि करेंगे वे निष्पापहो कर उत्तम लोकको प्राप्त होंगे और जो तुम्हारे जलमें स्नानकर निज पितरोंका तर्पण करेंगे उनके पितर स्वर्गवास पावेंगे और वे तीनप्रकारके पापोंसे मुक्तहो ब्रह्मलोकको जायँगे और हे गण्डकि! जो मनुष्य व्रत करके तुम्हारे समीप शरीर त्याग करेंगे वे भवसागरसे पारहो हमारे लोकमें आय निवास करेंगे शिवजी कहते हैं हे सोम! इसभांति गण्डकीको वरदान दे विष्णुभगवान् अन्तर्धान होगये तबसे लेकर हम इस क्षेत्रमें निवास करते हैं हे सोम! विष्णुभगवान् और हम दोनों भक्तोंके लिये नानारूप धारण करते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इतना कहकर शिव जीने सोमके अङ्गोंको गङ्गाजलसे मार्जन किया उसीसमय शिव जीके स्पर्श करतेही चन्द्रमा दक्षके शापसे मुक्तहो निज तेजसे प्रकाशितहो जो शिवजीकी तरफ़ देखने लगे तो देखतेही देखते शिवजी अन्तर्धान होगये हे धरणि! सोमेश्वर महादेवके दक्षिण भागमें बाण करके रावणने पर्वतका भेदन किया था उसी स्थान से जलकी धारा अतिपवित्र प्रकट भई जिसका नाम लोकमें बाण-गङ्गा करके प्रसिद्धहै और हे धरणि! सोमेश्वरके पूर्वभागमें रावण का तपोवनहै जहां तीन रात्रि ब्रह्मचर्यहो व्रतपूर्वक निवास करने से तपका फल प्राप्त होताहै जहां नृत्य करके रावणने शिवजीको प्रसन्न किया इसलिये उस भूमि का नाम लोकमें नर्तनाचल करके विख्यातहै हे धरणि! जो पुरुष बाणगङ्गामें स्नानकर बाणेश्वर-नामक शिवलिङ्गका दर्शन करते हैं उन्हें गङ्गास्नानके तुल्य फल प्राप्त होता है और अन्तमें स्वर्गबास पाते हैं और उसी समीप

शालंकायननाम तीर्थहै जहां शालग्रामजी प्रकट होते हैं हे धरणि! और भी अत्यन्त गुप्त एक वृत्तान्त श्रवण करो कि शालंकायन मुनिने पुत्रकामना करके जहां बड़ा तप किया व यह मनमें चिन्तन करतारहा कि परमेश्वरके तुल्य मेरे पुत्रहो यह जानि मुनिकेसमीप शिवजी परमसुन्दर रूप धारणकर मुनिजीके दक्षिणभागमें जा खड़े भये परन्तु मुनि तो यह वृत्तान्त न जानि तपहीमें लगा रहा तबतो यह वृत्तान्त देखि शिवजीकी आज्ञासे हँसकरके नन्दीश्वर कहनेलगे हे मुनीश्वर! तुम्हारा तप सिद्ध भया उठो देखो तुम्हारे दक्षिणभागमें पुत्र होके हम खड़े हैं जो आज्ञाहो सो करें तुमने यह प्रतिज्ञा किया कि ईश्वरके तुल्य मेरे पुत्रहो सो मेरे तुल्य मैंहीहूं यह जानि मैं तुम्हारा पुत्र हुआ अब तुम्हारा तप सिद्धभया कि जो हम तुम्हारे पुत्र भये यह नन्दीका वचन सुनि अतिप्रसन्न हो मुनि विस्मितहो कहनेलगा कि हम तो तुमको देखते नहीं किस भांति हम निज तपका फल मानें और कैसे तपसे निवृत्तहों इस लिये हम यहांही तप करेंगे जबतक परमेश्वरका दर्शन न होगा और तुम हमारी आज्ञासे मथुरामें जाय हमारे आश्रममें सामुख्यायन नाम हमारा शिष्य है उसे शीघ्र यहांको ल्यावो यह शालंकायन ऋषिका वचन सुनि नन्दी जाय मथुरामें ऋषिके आश्रममें सामुख्यायननामक ऋषिशिष्य को देखि व कुशलप्रश्न पूछ गुरुकी आज्ञा कहिसुनाया यह सुनि बड़े हर्षसे आदरपूर्वक सामुख्यायन मुनि नन्दीजीसे निजगुरुका वृत्तान्त सब पूछ कहने लगा कि; आप यहां किसलिये आयेहो और श्रीगुरुमहाराज क्या आज्ञा देते हैं? यह सुनि नन्दीजीने सब वृत्तान्त कह सुनाया सो सुनि बड़े हर्षसे गुरुकी गौवोंको ले व सब धन ले साथ नन्दीके मथुरासे चल कुछ ही दिनमें गण्डकीके तट जहां शालंकायनजी तप कररहे थे वहां आय पहुँचे और पहुँच निज गुरु जीको भक्तिसे प्रणामकर बड़े हर्षसे क्षेमवृत्तान्त सुनाय निज

गुरुकी आज्ञा पाय तप करनेलगे और नन्दी तो वहांसे जाय त्रिवेणीजीमें पहुँचे वहां कुछ दिन निवासकर देविकातीर्थको जाय स्नानकर वहांसे पुलहाश्रममें जाय त्रिजलेश्वर शिवजीका दर्शन कर फिर प्रयागमें आये वहां त्रिवेणी तीर त्रिकण्टकेश्वर नाम शिव का दर्शनकर शूलकण्टक सोमेशआदि शिवलिङ्गको पूजि वेणीमाधवनाम विष्णुभगवान्‌का पूजनकर सबदेवताओंका दर्शन कर व ऋषियोंका दर्शनकर कैलासको चलेगये और हे देवि! त्रिवेणीक्षेत्र पृथिवीमण्डलमें सब तीर्थोंसे उत्तमहै जिसमें पृथिवी-मण्डलके सब देवता व तीर्थोंका समाज होताहै यहां स्नान करने से मरकरके मुक्ति होती है इसीलिये इसका तीर्थराज नाम है व विष्णुका प्याराहै हे धरणि! एक अत्यन्त गुप्त वृत्तान्त वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो कि एक समयमें विष्णुभगवान् संसारके कल्याण करनेके लिये हिमाचलनाम पर्वतमें जाय बड़ा उग्र तप करनेलगे उस तपके करनेसे ऐसा तेज उत्पन्न भया कि जिस तेजसे चराचर तीनों लोक घबड़ाके उसका कारण पूछने के लिये सब देवता एकत्रहो ब्रह्माजीके समीप जाय पहुँचे और दण्डप्रणाम कर विनयपूर्वक कहनेलगे कि; हे ब्रह्मन्! यह क्लेश नहीं जानते कि किसके तेजसे हम सब भस्म होरहे हैं औ किस का घोरतप होरहाहै इसलिये हम आपके शरणमें आये हैं हमारा क्लेश आप दूर करें यह सुनि ब्रह्माजी कहनेलगे कि; हे देवताओ! जिसकरके तुम सब दुःखी होरहेहो सो हम भी नहीं जानते इसलिये हमारे साथ शिवजीके समीप चलो इतना कहि सब देवताओंको साथ ले ब्रह्माजी जाय कैलासमें शिवजीके समीप पहुँचे तबतो ब्रह्माजी सहित सब देवताओंको देखि सत्कारपूर्वक शिवजीने कुशलवृत्तान्त पूछ आगमनका कारण पूछा तबतो ब्रह्माजीने सब वृत्तान्त कहिसुनाया सो सुन ध्यानकर थोड़ीसी देरमें शिवजी ब्रह्मा से कहनेलगे कि जिस तेजको देखि तुम सब व्याकुल होरहे

हो सो हमारे साथ चलो हम देखाते हैं यह कहि सहित ब्रह्माजी के सब देवताओंको साथले जहां विष्णु भगवान् तप कररहेथे वहां जाय पहुँचे व विष्णुको तप करते देखि बड़ी प्रीतिसे कहनेलगे कि आप जगत्के कर्ता प्रभु सबके आधार सबके स्वामी किसलिये ऐसे महाघोर तपमें युक्त होरहेहो व आपके तपोमय तेजसे चराचर प्रजा सब व्याकुल होरहीहै सो कृपा करके कथन करें यह शिवजीका वचन सुनि अतिप्रसन्नहो हर्षसे विष्णु भगवान् शिवजी को प्रणामकर हाथ जोड़ कहनेलगे कि हे भगवन्! यह हमारा तप लोकके कल्याणनिमित्त है और आपके दर्शननिमित्त है हम आपके दर्शन पानेसे कृतार्थ भये व हमारा परिश्रम सफल भया यह विष्णु भगवान्का वचन सुनि शिवजी बोले कि हे देवदेव! आजसे इस स्थानका मुक्तिक्षेत्र नाम होगा और आपके गण्डस्थानसे अर्थात् कपोलसे तपकरते समय स्वेद उत्पन्न भयाहै इसीसे इस स्वेदरूप जलगण्डकी नाम नदीहो लोकको पवित्र करती प्रसिद्धहोगी और आप इस गण्डकी के गर्भमें सदा निवास करोगे और हम, ब्रह्मा और सब देवता इस तीर्थमें सबकाल निवास करेंगे इसलिये हे विष्णो! जो मनुष्य संपूर्ण कार्त्तिकमास स्नान करें वे सब पापोंसे मुक्त हो सब सुखको भोगि मुक्तिफलको प्राप्त हों इसलिये हे धरणि! यह स्थान तीर्थोंमें परमतीर्थ व मङ्गलोंमें परम मङ्गलहै कि जिसके स्नानसे गङ्गास्नान तुल्य फल होताहै जिसके स्मरणसे वा दर्शनसे वा स्पर्श करनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्तहोकर उत्तमगतिको प्राप्त होते हैं और जिस गण्डकीकी समताको गङ्गाके विना और दूसरी नदी नहीं कर सक्ती और भी इसीके तुल्य एक नदीहै कि जिस का नाम देविकाहै जिसके तटपर पूर्वसमयमें पुलस्त्य और पुलहमुनिने सृष्टि करनेके लिये बड़ा तप किया और वहांही निज आश्रम बनाया इसलिये उस दिनसे देविका नदीका लोकमें

ब्रह्मतनया नाम प्रसिद्ध भया शिवजी कहतेहैं कि हे विष्णो! वहांही पुलह व पुलस्त्य मुनिके दो पुत्र उत्पन्न भये जिनका नाम जय व विजय सो वेदवेदान्तमें निपुणहो व विष्णुभगवान् के पूजनको करते तपस्वी इन्द्रियजित् होतेभये और जिनके भक्तिवश हो विष्णुभगवान् पूजासमय में नित्य दर्शन देतेथे सो किसीसमय जय विजयको राजा मरुत्तने यज्ञ करानेके लिये बुलाया वहां जाय दोनोंने विधिपूर्वक राजा मरुत्तका यज्ञकराय अन्तमें राजा मरुत्तने प्रीतिपूर्वक दोनों ऋषियों को दक्षिणादे बिदा किया तब तो दोनों ऋषि आय घरमें धनका विभाग करने लगे उससमय जयबोला कि समभाग करके आधा तुमलो आधा हम लें यह सुनि विजयने कहा कि; ऐसा नहीं जिसने जो पाया हो सो ले यह सुनि जयने विजयको शाप दिया कि तुम ग्राह हो जावो तब तो जयका शाप सुनि विजय क्रुद्धहो बोला कि जो तुमने हमको निरपराध शाप दिया है इसलिये तुमभी मदान्ध हस्ती हो यह दोनों परस्पर शापदे भावीवश जय तो गण्डकी नदीमें ग्राह भया और विजय उसी समीप वनमें हस्ती भया सो दोनों अपने २ स्थानमें निज २ स्वभाववश निज २ साथियों के साथ क्रीड़ा करते काल व्यतीत कररहेथे कि बहुतकाल व्यतीत होने पर भावीवश तृषा करके व्याकुल वही हाथी और बहुतसे गज के गणों करके युक्त गण्डकीमें जहां वो ग्राह रहताथा वहां जाय जलपान कर और निज गणोंके साथ जलक्रीड़ा करनेलगा तब तो पूर्व वैरवश हो ग्राहने आ उस हाथीके पैरको पकड़लिया तब तो गजने यथासामर्थ्य छुड़ानेका उपाय बहुतसा किया परन्तु किसीभांति छूटि न सका इसीभांति दोनों बड़े पराक्रम करते गज और ग्राह जलमें युद्ध कररहेथे कि दोनोंके पराक्रमसे व्याकुल जितने जलजीव हैं सो सब प्राणान्त कष्ट मानिके ईश्वरका स्मरण करनेलगे कि हे ईश्वर! निरपराध हमलोगोंके ऊपर यह

विपत्ति होरहीहै इसे अपनी करुणासे क्षमाकर दूर कीजिये इसी भांति लड़ते २ जब बहुत काल व्यतीत भया तब तो जलके स्वामी वरुणजी महाराजको बड़ा दुःखभया उस दुःख करके व्याकुल वरुणने विष्णु भगवान्को सब वृत्तान्त निवेदन किया उसे सुन वहां आय सुदर्शनचक्रसे ग्राहका मुख फाड़ गजको जल से बाहर किया उस उमय चक्रके वेगसे गण्डकीकी शिला बहुत ही चिह्नित होगईं और उन्हीं चिह्नोंसे वज्रकीटनामक कृमि विशेष भावीवश उत्पन्नभया उसी चिह्नसे गण्डकीमें चक्र उत्पन्न होते हैं इस भांति हमने गण्डकीकी महिमा वर्णन किया और ऋषभका पुत्र भरत नाम राजा जब पुलहाश्रममें तप करने आया और बहुत काल वहां तप किया तबसे उस स्थानका भरतेश नाम लोकमें विख्यात भया फिर किसी निमित्त भरत निजदेह त्यागकर मृगयोनिमें उत्पन्न भया तबभी परमेश्वराराधनयोग से स्मरणपूर्वक मृगशरीर त्यागि ब्राह्मण हुआ परन्तु लोकके व्यवहार न करनेसे उसका जड़भरत नाम विख्यात भया सोई भरत ने निज स्थानमें जलमें विष्णुका पूजन बहुतकाल किया उससे जलेश्वरनामक स्थान कहाया जिसके भक्तिपूर्वक पूजनसे योगसिद्ध होती है वाराहजी कहते हैं हे धरणि! शालग्राम नामक जो हमारा प्रिय क्षेत्रहै तिसमें प्रथम जलेशके स्तुति करनेसे सबजीवों की रक्षाके लिये यहां सुदर्शनचक्रको छोड़ा वहांही चक्रतीर्थ नाम तीर्थ भया हे धरणि! उस तीर्थके स्नान करनेसे सब पापोंसे मुक्त हो व तेजोमयरूप धार मनुष्य सूर्यलोकमें प्राप्त होताहै और भक्तोंके रक्षानिमित्त हमारी आज्ञासे सुदर्शनने गण्डकी नदीमें जहां जहां भ्रमणकिया तहां तहां सब पाषाणोंमें सुदर्शन का चिह्न होगया इसलिये वह चक्रतीर्थ कहाया जहां स्नानमात्र करनेसे मनुष्य अतितेजस्वीहो सूर्यलोकमें निवास करते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! भक्तोंके उपकारके लिये सुदर्शनचक्रने जहां

भ्रमण किया वहांही शिलामें चिह्न होनेसे पाषाणोंका गण्डकी-चक्र नाम हुआ इसलिये वह क्षेत्र सदा पूज्यहै और जिस दिन से नन्दी शालंकायनके शिष्य आमुख्यायनको गोधन सहित मथुरासे ल्याये उस दिनसे उसका हरिहरनाम क्षेत्र भया और देवताओंके घूमनेसे उस क्षेत्रका देवाटभी नामभया हे धरणि! इसलिये शिवजीकी महिमाका वर्णन कौन करसक्ताहै जिनकी सेवा सबकालमें निज निज कल्याणके लिये देव, मुनि, गन्धर्व, यक्ष और राक्षस आदि सब करते हैं हे धरणि ! तिस स्थानमें शालंकायन ऋषिकी वाञ्छा पूरी करनेके लिये शिवकी आज्ञासे साक्षात् नन्दी पुत्रभाव होके प्राप्त भये और शिवजीने तो उसी चक्रतीर्थके समीप निवासकर निज जटासे तीनजलकी धारा प्रकटकिया जिससे एकका नाम गङ्गा दूसरी धारा यमुना और तीसरी सरस्वतीनाम लोकमें विख्यात भई जिस जगे ये तीनों धारा उत्पन्नभई हैं उसको त्रैधारिकतीर्थ कहते हैं और हे धरणि! योगियोंके सिद्धि देनेहारे योगीराज शिवजीने जहां शालग्राम-क्षेत्रमें निवासलिया और विष्णु भगवान्को वर दिया उस क्षेत्रमें जो स्नानकर पितरोंका तर्पण करते हैं उनके पितर अनन्तकाल-पर्य्यन्त तृप्तहो स्वर्गवासी होते हैं और जो त्रिधारेश्वर शिवका पूजन करताहै वो मुक्त होताहै हे धरणि ! जिस त्रिधारेश्वर की पूर्वदिशामें अतिपुण्य देनेहारा हंसनाम तीर्थ है जहां एक बड़ी आश्चर्यकी बातहै सो हे धरणि ! सावधान होकर श्रवणकरो किसी समय शिवरात्रिके दिन शिवजीके भक्त हंसतीर्थमें स्नान कर त्रिधारेश्वरजीका पूजन करनेलगे जब स्नान, चन्दन, बिल्व-पत्र, पुष्पमाला, धूप, दीप आदिसे पूजन करचुके और नैवेद्य भी अर्पण किया उसी समय अकस्मात् बहुतकाल क्षुधा करके व्याकुल प्रकटहो उस नैवेद्यको चारों तरफसे खानेलगे और कुछ तो खाया व कुछ निज २ चोंचमें लेकर उड़गये उन्हें और काकों

ने मुखमें चारालिये देखि उसके लोभसे युद्ध करनेलगे निज २ टोंटोंसे और पगोंसे परस्पर युद्ध करतेहुये मूर्च्छित हो २ भावी-वश हंसतीर्थमें गिरे व गिरतेही उन काकोंका शुक्लवर्ण हो चन्द्रमा के समान प्रकाशमान हो निज वैरको भूलि यथेच्छित दिशाको उड़कर चले गये यह आश्चर्य वहांके शिवभक्तोंने देखि व वि-स्मित होकर हंसतीर्थकी महिमा वर्णन करते निज २ स्थानको पधारे तबसे लेकर लोकमें उसका हंसतीर्थ नाम विख्यात भया यहां स्नानमात्र करनेसे पुरुष यक्षलोकको प्राप्त होता है और हे धरणि! वहां जो कोई अनशनव्रत करके प्राण त्याग करताहै वह यक्षलोकमें जाय वहांका सुख भोगि अन्तमें हमारे समीप आताहै हे धरणि! इसभांति हंसतीर्थका प्रभाव वर्णन किया हम और शिवजी दोनों लोकके अनुग्रह निमित्त रात्रिदिन अनेक उपाय किया करते हैं कि जिसमें संसारका कल्याण होय हे धरणि! इस भांति परम गुप्तक्षेत्र का माहात्म्य व शिवजीका प्रभाव वर्णन किया और इस क्षेत्रका प्रमाण मुक्तिक्षेत्र अर्थात् शालग्राम क्षेत्र के चारों दिशामें बारह २ योजन है जहां हम शालग्रामरूप हो कर निजभक्तोंके कल्याणनिमित्त नित्य निवास करते हैं॥

एकसौ चालीसका अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! इसभांति विचित्रकथा वाराह जीके मुखारविन्दसे श्रवणकर धरणी कहनेलगी कि; हे भगवन्! शालंकायन ऋषिने तप किया था फिर उनका क्या वृत्तान्त भया सो आप वर्णन करें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! जब शालंकायन ऋषिको तप करते बहुतसे दिन व्य-तीत भये तब तो ऋषि क्या देखताहै कि एकबड़ा उत्तम छाया करके युक्त शालनामक वृक्ष प्रकाशित होरहा है और मनोहर शाखा पत्र, पुष्प, फल करके सुशोभित होरहाहै तिसे देखि तपके

परिश्रमसे खेदको प्राप्त हुआ २ ऋषि उस शालवृक्षको देखि अतिहर्षित हो मनमें यह विचार करनेलगा कि; यह वृक्ष विश्राम के लिये बड़ा उत्तम है यहां विश्राम करता हुआ मैं विष्णुभगवान् का आराधन करूंगा यह विचार उस वृक्षके समीप पूर्वदिशा में बैठि पश्चिममुख हमारा स्मरण करनेलगा हे धरणि! थे तो हमीं शालरूप परन्तु हमारी माया करके मोहित हमको न पहिं-चाना इस प्रकार भजन करते २ वैशाखमासकी शुक्ल द्वादशी को उसी शालवृक्षकी पूर्वदिशामें प्रकट होकर हमने दर्शन दिया उस दर्शनको पाय कृतार्थ मानि संतुष्टहो शालंकायन मुनि वेद मन्त्रोंसे साष्टाङ्ग प्रणामकर वेदसूक्तसे स्तुति करनेलगा तब तो स्तुतिकर नेत्रोंको खोलि हमको देखनेलगा तब तो हम हे ध-रणि! शालवृक्षकी दक्षिणदिशामें दीखे तब तो ऋग्वेदके मन्त्रों से स्तुति करताहुआ हमारी तरफ़को मुखकर हमको देखनेलगा हे धरणि! उस ऋषिके देखतेही हम पश्चिमदिशा में दिखाने फिर दक्षिणसे लौटि पश्चिम हमारी तरफ मुख कर यजुर्वेदके मन्त्रोंसे स्तुति करनेलगा उस स्तुतिको सुनतेही मुनिके देखते देखते हम उत्तरदिशामें दीखे तब तो हमको उत्तरदिशामें देखि सन्मुखहो सामवेदके मन्त्रोंसे हमारी स्तुति करनेलगा हे धरणि! इसभांति चारों दिशामें जब हमारी स्तुति ऋषिने की उसे सुनि हम प्रसन्न होकर ऋषिसे यह बोले हे शालंकायनजी! तुम धन्य हो तुम्हारा तप सिद्ध हुआ और हम तुम्हारी तपस्या व स्तुतिसे बहुत प्रसन्न भये अब जो वाञ्छाहो सो वर मांगो इसभांति हमारी वाणी सुनि प्रसन्नहोकर शालंकायन हाथ जोड़ नम्र होकर यह कहनेलगा कि हे भगवन्! आपहीके प्रसन्न होनेको मैंने तप किया व सारी पृथिवीमें जो २ पुण्यस्थानहैं वहां घूमा और यही चाहता रहा कि आप कृपा करके प्रकटहो मुझे दर्शनदें सो आपने कृपा करके मेरी वाञ्छा पूर्णकिया यदि मुझे आप वर देते हैं तो मेरी

यही कामना है कि ईश्वरतुल्य मेरे पुत्रहो और मैं कुछ नहीं चाहता इसभांति शालंकायन मुनिकी वाणी सुनि प्रसन्नहो हे धरणि! मीठी वाणीसे हम यह बोले कि; हे शालंकायनजी! यह मनोरथ तो तुम्हारा बहुत काल हुआ सिद्धभये जो ईश्वर की दूसरी मूर्ति नन्दिकेश्वर नाम तुम्हारे दक्षिणअङ्गसे उत्पन्न भये उन्हींको तुम पुत्र जानि संतुष्ट होकर तपका विश्राम करो और हे मुनीश्वर! इनको जन्म लिये तुम्हारे यहां कई कल्प व्यतीत भये व तुमने नहीं जाना देखो तुम्हारीही आज्ञासे नन्दिकेश्वरजी तुम्हारे शिष्य अमुष्यायणके समीप मथुरामें जाय व वहांसे गौवोंको ल्याय सहित अमुष्यायणके तुमको दिया व हाथमें त्रिशूल लिये सदा तुम्हारे समीप रहते हैं फिर तुमको ज्ञान नहीं है इसलिये हे शालंकायनजी! अब प्रसन्न होकर निज पुत्र नन्दिकेश्वरजीके साथ इस हमारे क्षेत्रमें सदा निवास कर हमारे तुल्य प्रतिष्ठाको प्राप्तहो हे शालंकायनजी! और भी गुप्त एक बात कहते हैं सो सावधान होकर श्रवणकरो आजसे तुम्हारी प्रीतिके लिये हमारे वरदानसे इस क्षेत्रका नाम शालग्राम होगा और सब क्षेत्रोंसे पवित्र होगा हे शालंकायनजी! जो यह वृक्ष शालनामक दीखता है सो हमीं हैं परन्तु इस वृत्तान्तको शिवजीके विना दूसरा कोई नहीं जानताहै हम निज माया करके गुप्त होरहे हैं परन्तु तुम्हारे ऊपर दया करके वरदान देनेको प्रकट भये हैं हे धरणि! इतना कहि शालंकायन मुनिके देखतेही हमतो अन्तर्धान भये तब तो हमको अन्तर्धान देखि उस शालवृक्षकी परिक्रमाकर शालंकायन मुनि निज आश्रमको सिधारा हे धरणि! इसलिये यह शालग्राम क्षेत्र हमको अत्यन्त प्रियहै और भक्तोंको भुक्ति व मुक्तिका देनेहारा है और भी जो २ पदार्थ गुप्त हैं सो २ सावधान होकर श्रवण करो जिन्होंके श्रवण करनेसे मनुष्य घोर संसारसागरसे पार होताहै हे धरणि! इस शालग्राम क्षेत्रमें पन्द्रहतीर्थ और भी गुप्त

हैं तिन्हों में जो विल्वप्रभनामक तीर्थहै सो हमको बड़ा प्यारा है जिस तीर्थकी चारोंदिशामें एक २ कोसपर चार जल के कुण्ड हैं तिन कुण्डोंमें जो स्नान करते व व्रत करते हैं वो चार अश्वमेध यज्ञके पुण्यको प्राप्तहोते हैं और हे धरणि! हमारी भक्तिमें युक्त होकर उस तीर्थमें जो प्राण त्याग करते हैं वो अश्वमेधयज्ञके फल को भोगि अन्तमें हमारे समीप आते हैं हे धरणि! औरभी एकतीर्थ चक्रस्वामी नामकहै कि जहांकी शिला सब चक्रचिह्नों करके युक्त हैं उनकी चारोंदिशामें तीन २ योजन उस चक्रस्वामी तीर्थका मान है वहां जो मनुष्य स्नान व व्रत करते हैं वे सबपापोंसे मुक्त होकर हमारे लोकको प्राप्त होते हैं और यदि वहां अन्न जल त्याग हमारा ध्यानकर जो प्राणत्याग करें वे वाजपेययज्ञके फल को भोगकर अन्तमें हमारे लोकको प्राप्त हों और हे धरणि! वहांहीं एक विष्णुपदनामक अत्युत्तम क्षेत्र है जिसमें तीन जल की धारा अतिशीतल गिरती हैं उस तीर्थमें जो स्नानकर तीन दिन निराहार व्रत करते हैं उन्हें तीन अतिरात्रनाम यज्ञका फल होताहै और यदि वहां हमारा ध्यानकर निरशनव्रत कर जो प्राण त्याग करें वे संसारसागरसे मुक्तहो अतिरात्रके फलको भोगि अन्तमें हमारे लोकको प्राप्तहों और हे धरणि! उसी शालग्राम क्षेत्रमें अतिगुप्त कालीह्रदनामक अतिपवित्र तीर्थ है जो बदरी वृक्षके मूलसे उत्पन्न हुआ है उस तीर्थमें जो स्नानकर छः रात्रि व्रत करते हैं वे नरमेधनाम यज्ञके फलको प्राप्त होतेहैं और यदि वहां संसारवासना त्यागि व हमारा ध्यान कर जो प्राण त्याग करें वे अवश्य नरमेध फलको भोगि अन्तमें हमारे लोकको प्राप्त हों हे धरणि! उसी स्थानमें शंखप्रभनाम अतिगुप्त हमारा क्षेत्र है जिस जगह सदा शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको अर्धरात्रिमें शंखका शब्द सुनाताहै और उसी क्षेत्रमें अतिमनोहर गदाकुण्डनाम तीर्थहै उस तीर्थमें जो मनुष्य स्नानकर तीनरात्रि व्रतकरे तो तीनों

वेदके पढ़नेका फल प्राप्तहो और जो कोई उस स्थानमें हमारा ध्यान करके प्राण त्याग करे तो वह हमारा स्वरूप होताहुआ गदा धारणकर हमारे लोकमें प्राप्तहोय हे धरणि! उसी स्थानमें अग्निप्रभनाम अतिरमणीय परमगुप्तक्षेत्र है जिसमें एक जलधारा ईशानदिशासे गिरती है उस धारामें स्नानकर जो चारदिन व्रत करें वे अग्निष्टोम यज्ञ का पञ्चगुण अधिक फल प्राप्तहों और यदि वहां हमारा ध्यानकर प्राण त्याग करें तो अग्निष्टोमफल को भोगकर हमारे लोकको प्राप्तहों और उस तीर्थकी यह परीक्षा है कि ग्रीष्मऋतुमें उसका जल ठंढा और हिमऋतुमें शीतल होताहै और हे धरणि! उसी स्थानमें सर्वायुध नाम हमारा क्षेत्र है कि जिसमें सात धारा जलकी अत्यन्त शीतल गिरती हैं उस धारामें स्नानकर जो सातदिवस व्रत करते हैं वे सबपापोंसे मुक्त होकर बड़े प्रतापी राजा होते हैं और यदि वहां हमारा ध्यानकर जो प्राण त्याग करें वे उत्तम कुलमें जन्म ले पृथिवीमण्डलका राजभोग अन्तसमय हमारे लोकमें आते हैं हे धरणि! और भी गुप्त एक तीर्थ है जिसका देवप्रभ नाम है जिसमें पांच धारा जलकी सदा ऊंचे पर्वतसे गिरती हैं उस धारामें स्नानकर जो छः व्रत करते हैं वे चारों वेदके पढ़नेका फल पाते हैं यदि लोभ मोह त्यागि वहां जो प्राण त्याग करें वे हमारे लोकमें निवास पावें वाराहजी कहते हैं हे धरणि! उसी स्थानमें विद्याधरनाम एक और भी क्षेत्र है जिसमें अति शीतल पांच जलधारा ऊंचे पर्वत से गिरती हैं तिसमें जो स्नानकर एकरात्र व्रत करते हैं वे सब पापोंसे छूटि विद्याधरलोकको प्राप्तहोते हैं यदि वहां हमारा ध्यान कर प्राण त्याग करें तो विद्याधरके लोकका सुख भोगि अन्त में हमारे लोकको प्राप्तहों हे धरणि! उसी स्थानमें एक पुण्यानदी नाम अतिपवित्र रमणीय क्षेत्रहै जिसमें गन्धर्व विद्याधर आदि देवताओंके गण सदा निवास करते हैं उस तीर्थमें स्नानकर जो

आठदिन व्रत करते हैं वे सब्बपापोंसे मुक्तहो सातोंद्वीपोंमें इच्छा-पूर्वक द्वीपों का सुख भोगते हैं यदि वहां हमारा ध्यानकर प्राण त्याग करें तो सातोंद्वीपका सुख भोगि हमारे लोकमें प्राप्तहों हे ध-रणि! उसी स्थानमें एक गन्धर्व्वनाम परम पवित्र तीर्थहै जिसकी पश्चिम दिशा में एक जलधारा गिरती है तिसमें स्नानकर जो चार दिन व्रत करते हैं वे आठोंलोकपालोंके स्थानमें जा वहांके सुखको भोगतेहैं यदि हमारा ध्यान करके वहां जो प्राण त्याग करें तो लोकपालोंके स्थानोंका सुख भोगि हमारे लोकको प्राप्तहों हे धरणि! उसी स्थानमें देवह्रदनाम अतिपवित्र तीर्थ है जहां हमने बलिसे तीनपद पृथिवी मांगिके तीनोंलोक मापके देवताओंको दिया था वो देवह्रदनाम क्षेत्र है जिसमें जल निर्मल पवित्र शी-तल व अगाधहै हे धरणि! जिस देवह्रदमें चक्रचिह्न करके युक्त मत्स्य विराजमान होरहे हैं और भी कथन करते हैं सो सावधान होकर श्रवणकरो कि जिस देवह्रदमें बारहों मासकी द्वादशीतिथि को सूर्योदयसमय में सुवर्णवर्णकासा कमल दिखाता है जिसे श्रद्धावान् हमारे भक्त देखते हैं और पापात्मा नहीं देखते और वो कमल प्रातःकालसे लेकर मध्याह्नतक दिखाता है फिर गुप्त होजाता है हे धरणि! उस देवह्रदमें जो स्नानकर दशरात्रि व्रत करते हैं वो दशअश्वमेधके फलको प्राप्त होते हैं और यदि वहां हमारा ध्यान करके प्राण त्याग करें तो दशाश्वमेधफल भोगकर अन्तमें हमारे सारूप्यमुक्तिको प्राप्तहों हे धरणि! और भी विल-क्षण परमगुप्त एक तीर्थ वर्णन करते हैं जिसके समीप नित्य इन्द्रादिक देवता निज २ स्त्रियोंके साथ गन्धर्व, अप्सरा, नाग, नागकन्या, देवर्षि, राजर्षि, मुनि, सिद्ध और किन्नर आदि समस्त देवगण प्राप्त होतेहैं हे धरणि! नैपालनामक स्थानमें जो पशुपति नाम शिवजी हैं उन नीलकण्ठजीके जटाजूटसे श्वेतगङ्गा नाम तीर्थ प्रकटभया तिससे छोटी२ अनेक नदियां कोई प्रकट और कोई

गुप्त निकलीं सो जाय २ गण्डकी कृष्णाआदि नदियोंमें मिलीं और एक त्रिशूल गङ्गानाम नदी जिसमें अनेक पवित्र नदियां आकर मिलीं इस भांति हे धरणि ! सब नदियोंका संगम ऐसा पवित्रहै जो देवताओंकोभी दुर्लभहै और जो सिद्धाश्रमनाम लोक विख्यात पुण्यका देनेहारा तीर्थ है जिसमें भृगुनाम ऋषीश्वरका तपोवन है वो सब पवित्रों से पवित्र है जहां छहोंऋतुवें निज २ शोभाको देरही हैं हे धरणि! उस स्थानकी शोभा वर्णन करते हैं सो श्रवण करो कि; जिस स्थानमें वृक्ष व लता सब फल पुष्प करके शोभित व कदलीवृन्दों करके विराजमान निचोल, नाग, पुन्नाग, केसर, खजूर, अशोक, बकुल, चूत, प्रियाल, नारिकेल, पूग, चम्पा, जम्बू, नारङ्ग, जम्बीर और मातुलुङ्ग इन वृक्षों करके शोभित और केतकी, मल्लिका, मालती, यूथी, राजी, कुन्द, कुरवक, नाग, कुटज और दाड़िम आदि अनेक पुष्प वृक्ष शोभाको देरहे हैं हे धरणि! यहां शृङ्गाररसमें मग्नहो देवताओंके मिथुन अर्थात् स्त्री पुरुष आयके सदा विहार करते हैं हे धरणि! उस पुण्यक्षेत्र में जो पुरुष स्नान करें वो शत अश्वमेधयज्ञके फलको प्राप्तहो और जो वैशाखमासमें स्नानकरें वे सहस्र गोदानके फलभागीहों और जो माघमासमें स्नान करें वे प्रयागस्नानके तुल्य फलको प्राप्त हों और हे धरणि ! जो कार्त्तिक मासमें तुलाके सूर्यमें नियमसे एकमास नित्य स्नान करें वे अवश्य मुक्तिफलको प्राप्तहों और जो किसीमासमें तीन दिन स्नान व व्रत करें वे राजसूयनामक यज्ञके फलको प्राप्तहों देवलोकमें देवताओंके साथ विहार करें और हे धरणि ! उस पवित्र तीर्थमें जो पुरुष यज्ञ, तप, दान, श्राद्ध, तर्पण और देवपूजन आदि सत्कर्म थोड़ाभी करे तो अनन्तफलको प्राप्तहो हे धरणि! इस तीर्थके सेवनकरनेहारे मनुष्य के अनेक अपराध हम क्षमा करते हैं इसीलिये यह तीर्थ सबतीर्थों से उत्तमहै जैसे श्रीगङ्गाजीका यमुनाजीके संगम होनेका फल

अर्थात् प्रयाग त्रिवेणी तीर्थका प्रभाव अमितहै वैसेही इसेभी जानो हे धरणि! इस शालग्रामक्षेत्रमें हम पूर्वमुखहोकर निवास करते हैं और हमारे दक्षिणभाग में सदाशिवजी निवास करते हैं वाराहजी कहते हैं हे धरणि! लोकके कल्याण करनेहारे कैलासवासी शंकरजीकी जो सेवा करते हैं वे हमारेही सेवक हैं और जो हमारी सेवा करते हैं वे शंकरके सेवक हैं हमारेमें व शिवजीमें कुछ भेद नहींहै जो हमारी वा शिवजीकी स्तुति वा निन्दा करें वो हम दोनों तुल्यही समझते हैं शिवप्रिय सो हमारा प्रिय व हमारा द्रोही सो शिवद्रोही हे धरणि! जहां हम वहां शिवजी व जहां शिवजी तहां हम इसभांति हमारा व शिवजीका वियोग निमेषमात्रभी नहीं होताहै हम दोनों एकही हैं जो भेद करके जानते हैं वे यमस्थानमें दण्डभागी होते हैं और जो हमको व शिव जीको एक समझते हैं वो सदा इसलोकमें तो सुखी रहतेहैं और परलोकमें सद्गति पाते हैं इसीलिये हे धरणि! यह शालग्रामक्षेत्र हरिहरात्मकहै अर्थात् दोनोंका रूपहै और रुरुखण्डनाम स्थान भी हमको बहुत प्रियहै और जो यहां प्राण त्याग करते हैं वे सनातनपद जो हमारा स्थानहै वहां प्राप्त होते हैं इसी कारण यह मुक्तिक्षेत्र कहाया इसलिये शालग्राम क्षेत्रको त्रिवेणीसे कुछभी न्यून न समझना चाहिये इसभांति हे धरणि! सब नदियोंमें गण्डकीनदी उत्तम गिनी जाती हैं व जहां जाय गङ्गाजीमें मिली है वहांका पुण्य कौन वर्णन करसकताहै हे धरणि! इस क्षेत्रसे परे दूसरा क्षेत्र नहींहै परंच अत्यन्त गुप्त यह कथा हमने वर्णन किया यह कथा अतिपवित्र योग, जप, तीर्थसेवन, दान, यज्ञ, वेदपाठ और नानाभांतिके पुण्यकर्म इन सबोंसे अधिकहै हे धरणि! इस कथाके अधिकारी वो हैं जो शठ, पिशुन, गुरुद्रोही, पञ्चमहापातक आदि दुष्कर्मोंसे रहितहों व हमारे भक्तहों लोभ, मोह, अनाचार आदिसे वर्जितहों उन्हीं पुरुषोंको यह कथा सुलभ है और

हे धरणि! जो प्रातःकाल उठिके सावधान होकर इस कथाका पठन वा श्रवण वा स्मरण करें वे इक्कीस कुलके साथ सबपापों से मुक्त हो हमारे स्थानमें प्राप्तहों भगवान् वाराहजी कहते हैं हे धरणि! यदि इस संसारसागरसे कोई पार जायाचाहे तो शालग्राम क्षेत्रका सेवन अथवा इस कथाको प्रीतिसे सदा श्रवण करे इस भांति हमने पवित्रकथाको वर्णनकिया अब क्या सुना चाहती हो?॥

एकसौइकतालीस का अध्याय॥

श्रीसूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! इसभांति वाराह भगवान् के मुखारविन्दसे विचित्रकथा सुनि धरणी कहने लगी कि, हे भगवन्! इस क्षेत्रका माहात्म्य श्रवणकर आपकी कृपासे मेरे अनेक भ्रम दूर भये और मैं धन्यभई हे भगवन्! आपने रुरुखण्ड नामक तीर्थका वर्णनकिया है सो क्या पदार्थ है? व रुरुनामक कौनथा कि जिसके नामसे रुरुखण्ड कहाया व किसलिये आप की प्रीति उसमें अधिक भई सो आप कृपा करके मेरेसे वर्णन करें? हे शौनक! इसभांति धरणीकी वाणी सुनि प्रसन्नहो हँसके वाराहजी यह कहनेलगे कि; हे धरणि! जो पूछती हो सो सावधान होकर श्रवण करो इसभांति आश्वासनकर कहनेलगे कि हे धरणि! किसी समय एक भृगुवंशमें उत्पन्न वेदवेदाङ्ग का जाननेवाला देवदत्त नामक ब्राह्मण हुआ सो ब्राह्मण यज्ञ कराने में निपुण व्रतआदि नियमोंमें तत्पर व अतिथिका प्यार करनेवाला सदा तप किया करताथा सो ऋषिके तपश्चर्या प्रभाव से वह आश्रम अतिही रमणीय होगया कि, जिसमें अनेकभांति के वृक्ष सो नानाभांतिके लताओं करके शोभित व भांति भांति के मृग व पक्षी परस्पर विरोध त्यागि सुहृद्हो जहां तहां विराजमान होरहे हैं हे धरणि! उस आश्रममें देवदत्त नामक ऋषि हज़ारों वर्ष तप करता रहा तबतो उसका तप देखि भयभीत हो

इन्द्र निज पद छूटनेके डरसे व्याकुलहो अप्सरा, कामदेव, वसन्त ऋतु आदि गणोंको बुलाय मधुरवाणी से यह कहनेलगा कि हे मित्रो ! तुम्हारे योग्य जो कार्य उपस्थितहै उसमें मेरी सहायता करना उचित है व समय में मित्रही सहाय होताहै इसलिये हे हमारे सखाओ ! इस समय मैं तुम्हारी शरण में हूं मेरा क्लेश निवृत्त होना तुम्हारे सबके अधीन है इसलिये मेरी निर्भयताका विचार शीघ्र करो यह देवराजका वचन सुनि विस्मितहो हाथ जोड़ बड़ी नम्रतासे सबगणोंके साथ कामदेव कहनेलगा कि; हे महाराज ! आप क्यों इतनी दीनता कररहे हो हम आपके भक्त सेवक व सबभांति अनुचर हैं जो आप आज्ञा देंगे उसमें किंचित्भी विलम्ब न होगा निज अभिप्राय आप प्रकट कीजिये कौनसा जितेन्द्रिय है जिसको हम स्वाधीन करें आपतो खुशीसे मुझे आज्ञा देवें इस भांति अप्सरा व वसन्तआदिकों की वाणी सुनि प्रसन्न होकर इन्द्र कहनेलगा कि; हे मित्रो ! मैं तो सबकाल में सुखी हूं जिसके तुम्हारे ऐसे सेवक हैं तथापि इस समय हिमालयपर्वत में जो हृषीकेशनामक स्थान है वहां देवदत्तनामक मुनि तप कररहाहै उसका विचार यह है कि इन्द्रका पद लेवें इसलिये उसके तप का विध्वंस शीघ्र करो इसभांति इन्द्रजीकी आज्ञा पाय हाथ जोड़ शीश नवाय वसन्तादिगण कामदेवको आगेकर मुनिके समीप चलनेलगे तबतो इन्द्रने प्रम्लोचानाम अप्सराओं में परमसुन्दरी उसे बुलाय भलीभांति समझाय कहनेलगे कि; हे प्रम्लोचे ! मेरे स्थानके हरनेको जो देवदत्त मुनि तप कररहा है वहां जाय निज विलास हाव भाव कटाक्ष सुरति आदिकों से उसे वश में कर तपसे निवृत्तकर शीघ्र हमको आनन्द दो यह सुनि बड़े हर्षसे वसन्तआदि गणों के साथ प्रम्लोचा जाय हिमाचल में जहां मुनि तप कररहेथे वहां पहुँची तो वहांकी शोभा क्या देखती है कि वह मुनिजीका तपोवन नाना

भांति के वृक्ष व लताओं करके शोभित होरहाहै व फूले फले वृक्ष लताओंपर मधुर बोलनेवाले भांति भांतिके पक्षियों के जोड़े व भ्रमर विनोद कररहेहैं और इसशोभाको देखि गन्धर्वोंकेगण शीतल, मन्द, सुगन्ध वायुको सुखपूर्वक सेवन करते कमल, पङ्कज, कह्लार, उत्पल, शतपत्र और इन्दीवर आदि अनेक भांतिके पुष्पितकमलों करकेयुक्त व विविधभांति जलचरजीवों करके भूषित निर्मल जल से पूर्ण जलाशय देखि कामकी व्यथासे व्याकुल निज २ प्रियाओंके साथ जहां जलक्रीड़ा कररहे हैं इसभांति मुनि जी के आश्रमको देखि हर्षितहो मधुरस्वरसे गाना प्रारम्भ किया उस मनोहर गानको सुनि देवदत्त मुनि समाधिको त्याग प्रीति से श्रवण करनेलगे तब तो अवसर जानि कामदेव निजधनुष्में पुष्परूपी बाणका संधानकर लक्ष्यरूपी मुनिके हृदयको बेधन किया यद्यपि मुनि अतीतचित्त व विचारवान्थे तथापि उस समय इन्द्रकी मायाको देखि विवश होकर कामबाण से पीड़ित क्या देखते हैं कि एक सुन्दरी उत्तम २ भूषण व वस्त्रों करके शोभित स्वयं शोभाकी राशि उसी वनके कुञ्जसे गेंद खेलती इकल्ली व गेंदहीमें दृष्टि इधर उधर मुनिजीके थोड़ीही दूर घूमरही है उस मृगनयनीको देखि देवदत्तमुनि अत्यन्तही कामपीड़ित हुये और वह सुन्दरीभी मुनिजीको देखि कुछ लज्जितहो कटाक्षरूपी बाणों से मुनिरूपी मृगको बेधती व निज अङ्गोंकी शोभाको देखाती गेंदको खेलरहीथी कि उसी समय मलयमारुतने उस प्रम्लोचाके वस्त्रको ऐसा झकोरदिया कि वेवस्त्र उसको अङ्गोंसे छूट वायुवेग से अतिही दूर उड़गये इस अवस्थाको देखि देवदत्तमुनि काम से पीड़ितहो उस स्त्रीके समीप आय कहनेलगा कि, हे सुन्दरि! तुम कौनहो व किसकी कन्याहो क्या किया चाहतीहो व कहांसे आईहो? हम जानते हैं कि हम जैसे भाग्यहीनों के भाग्योदयके लिये दयावान् ईश्वरने तुमको भेजाहै इसलिये हेप्रिये! हम तुम्हारे

आधीनहैं जो सेवकाईकी इच्छाकरो सो सब अङ्गीकारहै इसलिये दयादृष्टिसे देख हमारी अभिलाषको पूराकरो इतना कह व निज दक्षिणहाथसे उस अप्सराके वामहस्तको पकड़ निज हृदयमें लगाय कामवश इच्छा पूरी कर उसके साथ निज आश्रम में निवास करनेलगा हे धरणि! निज तपस्याके प्रभावसे अनेक भांतिके सुखको उस प्रम्लोचाके साथ भोगता बहुतकाल व्यतीत किया किसी समय उस मुनिके विचारमें ज्ञान उत्पन्न हुआ तब तो विषयोंसे विरक्तहो यह कहनेलगा कि; देखो मेरी मूर्खता जो बहुत कालका किया हुआ तप इस स्त्रीके साथ विषयभोगमें मैंने नष्ट किया यह केवल परमेश्वरकी मायाहै कि जिस करके बड़े २ ज्ञानी भी योगसे भ्रष्टहो विषयमें लिप्त होजाते हैं यह लोकका कथन सत्यहै कि स्त्री अग्निकुण्ड समान व पुरुष घृतकुम्भ समानहै जब घृतका व अग्निका संयोग हो तो क्यों न घृत ढले परन्तु हम यह जानते हैं कि यह उपमा ठीक नहीं क्योंकि वे संयोग दर्शनमात्रसे अग्नि घृतको ढालि नहीं सक्ती और स्त्री देखनेहीसे पुरुषको स्वाधीनकरसक्ती है इतना कहि उसी समय प्रम्लोचाको त्याग दिया औ यह विचार करनेलगा कि इस स्थान में तपके विघ्न करनेको उत्पात बहुत प्रकट होते हैं इसलिये और जगह चल तप करना चाहिये यह विचार निज आश्रमको त्यागि गण्डकीके तीर भृग्वाश्रमनामक स्थानमें जाय पूर्वदिशा में एकान्त भृगुतुङ्गपर्वतके समीप घोरतपमें युक्त हो शिवजीका आराधन करनेलगा इस भांति बहुत कालके आराधन करनेसे शिवजी प्रसन्न हो लिङ्गरूप धारणकर प्रकट हो प्रसन्नतापूर्वक यह कहने लगे कि हे ऋषीश्वर ! जिसका तुम ध्यान व पूजन करते हो वे शिव हम हैं जो वाञ्छाहो सो वर मांगो व विष्णु भगवान्से हमारेसे अन्तर न देखो अर्थात् एकही रूप दोनोंको देखो और जो पहले तप करते हमारे व विष्णुमें तुमने भेद

किया वही भेद विघ्न हो तुम्हारा बहुत कालका किया हुआ तप विध्वंस किया इसलिये हमको व विष्णुको एकदृष्टि के देखनेसे सिद्धिको प्राप्त होगे और देखो तुम्हारे तपके प्रभावसे अनेक शिवलिङ्ग प्रकट भये हैं हे मुने! आजसे लेकर इस स्थानका नाम समंग करके लोकमें प्रसिद्ध होगा और जो गण्डकीतीर्थ में स्नानकर हमारे लिङ्गको पूजन करेंगे वे पूर्णयोगके फलको प्राप्त होंगे वाराहजी कहते हैं, हे धरणि! इस भांति वरदान दे शिवजी उसी स्थानमें अन्तर्धान भये और देवदत्त मुनिभी शिवजीका दर्शन व उपदेश पाय योगयुक्त होकर सायुज्य मुक्तिको प्राप्त भया हे धरणि! पहले कह आये हैं जो प्रम्लोचानाम अप्सरा देवदत्त मुनि से गर्भ को धारणकर व कन्या उत्पन्नकर उसी पूर्व आश्रम में उस कन्या को त्यागि स्वर्ग को चलीगई व कन्या रुरुनाम मृगों के मध्य उन्हीं मृगों करके सेवित थोड़ेही काल में युवावस्था को प्राप्तभई उसे देखि कइक पुरुषों ने अङ्गीकार करना विचारा परन्तु उस कन्या के चित्तमें एक न आया तबतो निज चित्तमें निश्चयकर विष्णु भगवान् का चिन्तन करती तप करने लगी हे धरणि! तप करते समय में उसने पहला महीना फलाहार करके व्यतीत किया व दूसरा मास दूसरे २ दिन व तीसरे मास पांचवें २ दिनमें व चौथे मास में सतवें २ दिन सूखे वृक्ष के पत्ते खाकर तप किया व अष्टममास प्रारम्भ होतेही सबभांति के आहार त्यागि वायुभोजन करनेलगी इसभांति विष्णु भगवान् का ध्यान करतीहुई स्तम्भ के तुल्य निश्चल होकर अनेक भांति के दुःखों को सहती हुई समाधियोग करके पूर्ण शतवर्ष तप किया वाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! इसभांति उस कन्या के उग्र तपको देखि चराचर जीव सहित हमारे सब विस्मयको प्राप्तभये तबतो हम प्रकट हो उस कन्याके समीप जाय क्या देखते हैं कि सब इन्द्रियोंको रोककर निज हृदयकमल में हमारी मूर्तिके ध्यान

में डूबीहुई बाहर हमारे आने को नहीं जाना तबतो हे धरणि! उसके हृदय की ध्यानमूर्ति अन्तर्धानकर केवल बाहर प्रकट हो रहे जब हृदय में हमारी मूर्ति न दीखी तब तो घबड़ाकर नेत्रों को खोलतेही वही ध्यानगम्य मनोहर मूर्ति निज नेत्रों से आगे खड़ी देखि बड़े आनन्द में निमग्न हो गद्गद वाणी से हाथ जोड़ स्तुति करनेलगी हे धरणि! उसकी प्रेमयुत वाणी सुनि प्रसन्न हो हम यह बोले कि; हे अङ्गने! तुम्हारी श्रद्धा व तप करके हम बहुत प्रसन्न हैं जो अदेय भी पदार्थ है सो मांगो हम सबभांति तुम्हारी वाञ्छा पूर्ण करेंगे सूतजी कहते हैं हे शौनक! इस भांति विष्णुभगवान् की वाणी सुनि बारम्बार विनयपूर्वक प्रणाम व अनेक भांति की स्तुतिकर वह कन्या कहनेलगी कि; हे भगवन्! यदि आप प्रसन्न हैं व मेरा मनोरथ पूर्ण किया चाहते हैं तो इसी मनोहर मूर्ति से यहां सबकाल निवास करें इतना सुनि "तथास्तु" कहकर फिर विष्णु भगवान् बोले कि यह वर तो मैंने दिया और भी जो वाञ्छा हो सो मांगो हे धरणि! तबतो हमको प्रसन्न देखि बड़े हर्ष से नम्र होकर कहनेलगी कि; हे नाथ! यदि आप प्रसन्न हो मुझे दुर्लभ वर देते हो तो मेरेको पवित्र करो व यह क्षेत्र-मेरे नाम से लोक में प्रसिद्ध होय हे धरणि! तबतो यह कन्या की प्रार्थना सुनि यह वर दिया कि; हे कन्ये! यह तुम्हारी देह तीर्थों में उत्तमतीर्थ तुम्हारेही नाम से प्रसिद्ध हो व इस तीर्थ में जो स्नानकर तीन रात्रि व्रत करेंगे व हमारे इस अनुग्रहमूर्ति का दर्शन करेंगे वे सब पापों से मुक्त होंगे इसमें संशय नहीं व ब्रह्महत्याआदि जो बड़े २ घोर पातक हैं वे सब इस तीर्थ के स्नानमात्रही से निवृत्त होंगे और ज्ञात अज्ञात जो नानाभांति के पातक हैं उन्होंसे मुक्त हो इस तीर्थ के स्नान करनेवाले पुरुष उत्तम गति को प्राप्त होंगे इसभांति अनेकप्रकारके वरदान दे हे धरणि! हमतो अन्तर्धानभये व वह

रुरुनाम कन्या शरीर त्याग कर तीर्थरूपा होगई इस भांति हमने रुरुतीर्थ का माहात्म्य वर्णन किया इस माहात्म्य को जो मनुष्य पुण्यदिवस में श्रवण व कथन करें वे उत्तमगति को प्राप्त हों ॥

एकसौ बयालीस का अध्याय॥

श्रीवाराह भगवान् से धरणी प्रश्न करती है कि; हे भगवन्! आपने परमगुप्त रुरुक्षेत्र का माहात्म्य वर्णन किया और भी जो गुप्त क्षेत्र हैं कृपा करके उनका वर्णन कीजिये इस भांति विनय-युक्त धरणी का वचन सुनि वाराह भगवान् कहने लगे कि; हे धरणि! अब सावधान हो एक अतिगुप्त हिमालय में गोनि-ष्क्रमणनामक तीर्थ है उसका श्रवण करो यहां हमने गौवों को प्रकट किया है और यहां औवनाम महान् ऋषि ने सत्तरकल्प पर्यन्त हमारा तप किया है हे धरणि! वह औवऋषि इतने काल नियम से हमारा ध्यान करता हुआ तप में लगारहा परन्तु वर-दान कुछ भी न चाहा हे धरणि! सो औवऋषि सत्तरकल्प के अनन्तर किसी दिन कमल के पुष्पों से हमारे पूजन करने के लिये विचारा परन्तु हिमालय में तो कमल मिले नहीं तब हरि-द्वार तीर्थ में कमल लेनेको आया तब तो उस औवऋषि का स्थान से उठना जानिके महादेवजी उस औवके स्थान को आये व आतेही शिवजी के तेजसे वह स्थान सब भस्म होगया तब तो शिवजी हिमालय को चलेआये हे धरणि! औवऋषि ने गङ्गाद्वार में आय स्नानादि कर्मों से निवृत्त हो बहुत से अनेक भांति के कमलपुष्पों को ले निज आश्रम में आया तबतो क्या देखता है कि सब स्थान सहित निज कुटी के भस्म होरहा है इस वृत्तान्त को देखि यद्यपि है तो मुनि सर्वथा शान्तस्वभाव तथापि कारणवश हो क्रोधयुक्त यह कहनेलगा कि, जिसने हमारे आश्रम को दग्ध किया है वह भी अनेक दुःखों से संतप्त संसार

में भ्रमण करताहुआ क्षणमात्र भी सुख न पावे इसभांति शाप देकर औवंऋषि फिर तप करनेलगा वाराहजी कहते हैं हे धरणि! यद्यपि शिवजी परमेश्वर हैं साक्षात् लोक के नाथ तथापि ब्राह्मण का शाप तो धारण करतेही बना इसभांति औवं के शाप करके दग्ध भये शिव इधर उधर घूमने लगे इस भांति श्रीशिवजी का भ्रमण व औवंऋषि का तपःप्रभाव देखि सब देवताओं के गण विस्मित होकर परस्पर विचार करनेलगे कि; क्या उपाय बने जिसमें शिवजी को शान्ति होय परन्तु किसी के विचार में कुछ ठीक २ उपाय न बैठा हे धरणि! उस समय शिवजी के क्लेश होने से हम भी बहुत दुःखी भये क्योंकि हमारा उनका एकही स्वरूप है हमारे क्लेश में वे दुःखी होते हैं व उनके क्लेश में हम दुःखी होते हैं हे धरणि! उस अवसर में श्रीपार्वतीजी हमसे यों कहनेलगीं कि क्यों शिवजी व आप दोनों दुःखी हो रहे हो इसके निवृत्ति होनेका उपाय क्यों नहीं करते कि, औवंमुनि के समीप जाय प्रार्थनाकर निज अपराध क्षमा कराओ क्योंकि बे उनकी कृपा यह दुःख दूर नहीं होगा इसभांति श्रीपार्वतीजी की वाणी सुनि यथार्थ मानि हम दोनों जाय औवं ऋषि के समीप विनयपूर्वक स्तुति कर क्रोध शान्त कराय निज क्लेशनिवृत्त होने की प्रार्थना की तब तो प्रसन्न हो औवं कहने लगा कि; यह क्लेश तभी शान्त होगा जब सुरभी नाम गौके दुग्धों से स्नान करोगे यह सुनि हे धरणि! हमने अपनी माया करके गौवों को प्रकट किया तबतो उन गौवों के दुग्ध करके शिवजी औ हम दोनों स्नानकर क्लेश से छूट सुख को प्राप्त भये उस दिन से जहां गौवें प्रकट भईं वह स्थान गोनिष्क्रमणनामक तीर्थ कहाया हे धरणि! उस परम पवित्र तीर्थ में जो मनुष्य स्नानकर एकरात्रि व्रत करें वे सबपापों से मुक्त हो गोलोक में वास पावें और यदि निरशन व्रत करके उस तीर्थ में प्राण त्याग

करे वह भवसागर से पार हो चतुर्भुजमूर्ति धारणकर श्वेतद्वीप नामक जो हमारा लोक है वहां बास पावे हे धरणि! जो मनुष्य गोनिष्क्रमणतीर्थ में स्नानकर तीन रात्रि व्रत करें वे पांच यज्ञों के फल को प्राप्त होवें और यदि वहां प्राण त्याग करें तो पञ्च-यज्ञ के फल को भोगि अन्त में हमारे समीप बास पावें हे धरणि! उसी गोनिष्क्रमण तीर्थ के समीप अतिपवित्र पञ्चपदनामक उत्तम तीर्थ है जिसकी यह पहचान है कि एक उत्तम जल का कुण्ड है व उसके चारों दिशा में चार बड़ी विस्तीर्ण व सुन्दर शिला हैं व सब से बड़ी शिला एक मध्य में है व उसी कुण्ड के पूर्वदिशा में हमारी मूर्तिहै जिसके समीप ब्रह्मपद है हे धरणि! उस पञ्चपद तीर्थ में स्नानकर जो पांचरात्रि व्रत करे वह मनुष्य सबपापों से मुक्त हो हमारे समीप बास पावे और यदि वहां व्रत करके प्राण त्याग करे तो सब पापों से मुक्त हो कैवल्यनाम मोक्ष को प्राप्त होय हे धरणि! जो ब्रह्मपदनामक तीर्थ कह आये हैं उसके समीप पश्चिमदिशा में एक जल की धारा अखण्ड गि-रती है उस धारा में स्नान कर जो मनुष्य एकरात्रि व्रत करे वह सबपापों से मुक्त होकर ब्रह्मलोक में जाय ब्रह्माजी के समीप बास पावे और हे धरणि! जो मनुष्य कार्त्तिकमास की शुक्लद्वादशी को ब्रह्मतीर्थ में स्नानकरे वह सबपापों से मुक्त हो तीन वाज-पेय यज्ञ के फल को प्राप्त होवे और यदि ब्रह्मतीर्थ में हमारा ध्यान कर प्राण को त्याग करे वो तीन वाजपेय फल को भोग हमारे समीप बास पावे और हे धरणि! उसी ब्रह्मापदके समीप कोटिबटनामक परम पवित्र तीर्थ है जिसका प्रमाण ब्रह्मपद से वायुदिशा में पांचकोस है उस कोटिबटतीर्थ में जो स्नानकर छः दिन व्रत करता है वो सब पापों से मुक्त हो अनेककोटि यज्ञ के फल को प्राप्त होता है और यदि वहां कोटिबट में प्राण त्याग करे तो कोटियज्ञफल को भोगि अन्त में हमारे समीप बास पावे

और हे धरणि! उस कोटिबट की ईशानदिशा में पांच कोस पर विष्णुसर नाम उत्तम तीर्थ है जिसका विस्तार पांच कोस तक है व अगाध निर्मल जल भरा है उस विष्णुसरतीर्थ में स्नान कर जो परिक्रमा करता है व तीन रात्रि व्रत करताहै वो जितने पद पृथिवी की परिक्रमा करता है उतनेही हजार वर्ष ब्रह्मलोक में बास पाता है हे धरणि! जो उस क्षेत्र में प्राण त्याग करे वो ब्रह्मलोक का सुख भोग अन्त में हमारे समीप वास पावे और भी उस क्षेत्र में एक बड़ा आश्चर्य है कि अकस्मात् ज्येष्ठमहीने की शुक्लद्वादशी को मध्याह्न समय में प्रकट उस तीर्थ के मध्यसे गौ का शब्द स्फुट सुन पड़ताहै इसलिये उस विष्णुसर का गोस्थल नाम भी दूसरा है हे धरणि! उसके समीप जे कोई उत्तम कर्म करते हैं वे सब पापों से मुक्त हो उत्तम गति को प्राप्त होते हैं हे धरणि! इस भांति सबकल्याण का देनेहारा व सब पापों का दूर करनेहारा गोस्थलनाम तीर्थ हमने वर्णन किया यह तीर्थ सब तीर्थों में उत्तम सर्वमङ्गल का दाता सवश्रेष्ठों में श्रेष्ठ है इसका माहात्म्य जे श्रद्धा विश्वासपूर्वक प्रीति से कथन कर व भक्तोंको श्रवण करावें वे दोनों हमारे लोकको प्राप्त हों और तो कहांतक इसकी प्रशंसा करें इस तीर्थ के पांच २ योजन चारो दिशा में आठोप्रहर हमारा बास रहता है इसलिये वहां की भूमि गोलोक के तुल्य है व जे वहां निवास करनेहारे पशु, पक्षी, कीट, पतङ्ग हैं वे सब जीवन्मुक्त हैं यह इतिहास परम गुप्त तुम्हारी प्रीति से हमने वर्णन किया अब तुम नास्तिक अविश्वासी पाखण्डी इन्होंसे न कथन करना इसके श्रवणपात्र केवल हमारे भक्तही हैं॥

एकसौतेंतालीस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं; हे शौनक! इसभांति वाराहजी का वचन

सुनि प्रसन्न होकर धरणी कहनेलगी कि; हे भगवन्! इस कथा के श्रवण करने से चित्त अत्यन्त प्रसन्न भया व अनेक संशय निवृत्त भये अब हे भगवन्! ऐसेही औरभी अपूर्व कथा वर्णन कीजिये कि जिसके सुनने से चित्त प्रसन्न होय यह धरणी की विनयवाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! हम सब धर्म के प्रभु हैं इसलिये हमको महात्माजन नारायण कहते हैं और सदाभक्तजन हमको अतिही प्रिय हैं इसलिये हम भक्तों से कुछभी गुप्त नहीं रखते हे धरणि! तुम हमारी परमभक्ता हो अब सावधान हो यह मनोहर कथा श्रवण करो जिसके श्रवण करनेसे अनेक भांति के पातक दूर होते हैं इतना कहि वाराहजी भगवान् कहनेलगे कि; हे धरणि! एक सुतस्वामीनामक अति-पवित्र हमारा क्षेत्र है जिस क्षेत्रमें द्वापरयुग में देवकी के गर्भ से उत्पन्न हो वसुदेवके पुत्र सब दुष्टदानवोंके संहार करने को वासुदेव करके विख्यात होंगे तब तो हे धरणि! शाण्डिल्य, जाजलि, कपिल, उपसायक और भृगु ये पांचो ऋषि हमारे भक्त ज्ञान-सम्पन्न तपोमूर्ति उस सुतस्वामी क्षेत्र में हमारी मूर्ति को संकर्षण, वासुदेव, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध इन चारोनामों से स्थापित करेंगे व इस हमारी अनन्यभक्ति से उन ऋषियों को दृढ़ज्ञान उत्पन्न होगा जिस ज्ञानसे उनके शिष्य-प्रशिष्य सब पवित्र होकर हमारे परमधाम को प्राप्त होंगे हे धरणि! और भी सावधान हो श्रवण करो यह वाराहपुराण नाम शास्त्र है जिसभांति बहुत से दुग्ध को युक्ति से दधि बनाय कर मथन करनेसे साररूप घृत निकलआता है वैसेही हे धरणि! सब शास्त्र व पुराणों को मथन करके इस कथाप्रबन्ध को सबधर्म के प्रकाश करने के लिये तुमसे वर्णन किया इसहेतु इसका वाराहपुराण नाम है हे धरणि! जो २ धर्म विषय का अत्यन्तगुप्त व सूक्ष्म संकेत है सो २ हमने इस पुराण में वर्णन किया हे धरणि! कोई महात्मा ज्ञाननिष्ठ होते हैं कोई

कर्मनिष्ठ, कोई जपनिष्ठ, कोई दाननिष्ठ, कोई योगनिष्ठ और कोई विचारनिष्ठ ये सब निज २ धारणा करके उत्तमगति को प्राप्त होते हैं और जो इन उत्तमकर्मों से रहित भक्ष्याभक्ष्य करनेहारे महाअधम हैं उन भाग्यहीनों के लिये यह सुगममार्ग हमने बड़े परिश्रम व यत्न से प्रकाश किया हे धरणि! और जो अनेकभांति के पुण्यदेनेहारे पदार्थ हैं उन्हीं के सेवन से बहुतकाल में चित्त शुद्ध होताहै और इस वाराहपुराण के श्रवणमात्रही से मनुष्य सबपापों से मुक्त होकर हमारा समीपवर्ती होताहै हे धरणि! अब सुतस्वामीक्षेत्र की महिमा सावधान होकर श्रवण करो कि जिसमें लोह की प्रतिमा ऐसी मनोहरा विराजमान है परंच जिसके देखने से कुछ निश्चय नहीं होता कि किस धातु की है सो हे धरणि! मणिपूरपर्वत में उस प्रतिमा का जे दर्शन करते हैं उन्हें साक्षात् हमाराही दर्शन होताहै और वे सब पापों से मुक्त होकर परमगति को प्राप्त होते हैं और हे धरणि! उसी क्षेत्रकी उत्तर दिशा में अतिगुप्त पञ्चारुण नाम तीर्थ है तिसमें स्नान करके जे पांचरात्रि व्रत करते हैं वे शरीर त्याग करनेसे नन्दनवनमें जाय अप्सराओं के साथ विहार करके अन्त में हमारे समीप आते हैं हे धरणि! इसीक्षेत्र में हमारे दक्षिणभाग अर्धयोजनप्रमाण भृगुकुण्डनामक परमगुप्त तीर्थ है तिसमें स्नान करनेसे जन्मान्तर में उत्तम हमारा भक्त व जितेन्द्रिय हो संसार के नानाभांति सुख को भोगि अन्त में ध्रुव के समीप बास पाता है और यदि वहां अन्नजल त्यागि व्रतकरि जो शरीर त्याग करे वो ध्रुवलोक के सुखभोगि हमारे लोक को प्राप्त होय हे धरणि! और भी एकगुप्ततीर्थ उसीक्षेत्र में है जिसका नाम मणिकुण्ड है जिसमें यह चमत्कार है कि अनेकभांति की मणि जल के बीच दीखती हैं व जिसमें स्नान करनेसे मनुष्य जन्मान्तर में सब रत्नों का भोग करनेवाला महाराज होता है और वहां व्रतकर शरीर त्याग

करनेसे सब कर्मोंसे मुक्त हो हमारे लोक में वास करे और हे धरणि ! इस मणिकुण्ड के तीन कोस पूर्वदिशामें निर्मल व मधुर जल करके पूर्ण अगाध अतिरमणीय धूतपापनामक तीर्थ है जिसमें स्नान करनेसे मनुष्य सब पापों से मुक्त हो उत्तम विमान में बैठि हमारेलोक में प्राप्त होताहै और धूतपाप तीर्थ के पश्चिम पांचकोस पर अतिपवित्र व मनोहर रमणीय मरकत मणि के तुल्य जिसमें भूमि अगाधजल करके पूर्ण पापशोषणनामक तीर्थ हमको अतिप्रीति देनेवाला है जिसके स्नान से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो इन्द्रलोक को प्राप्त होता है और उस तीर्थ में यह आश्चर्य है कि एक मोटी जलधारा मणिपूरपर्वत से गिरती है उसमें जो स्नान करता है जब तक उसका पाप नहीं निवृत्त होता तबतक वह धारा गिरती है व पाप छुटजानेसे धारा बन्द होजाती है हे धरणि ! उसी क्षेत्र में चारो दिशा में पांच २ कोस हमारा निवास है और वहां एक आमलक नाम वृक्ष हमारी माया से सदा पुष्प फल करके युक्त रहता है उसका फल पापी व अधम मनुष्य नहीं पाते जब तीन रात्रि इन्द्रियों को जीति व्रतकर उस तीर्थ में स्नानकर पाप से मुक्त होवे तब उस फल को प्राप्त होय सूतजी कहते हैं हे शौनक ! इस कथा को सुनि धरणी हाथ जोड़ यह कहने लगी कि; हे प्रभो ! आपने कृपा करके सुतस्वामी तीर्थ का वर्णन किया अब आप कृपा करके सुतस्वामी शब्द की निरुक्ति अर्थात् अक्षरार्थ वर्णन करें कि जिसके श्रवण से संशयों को त्यागि चित्त प्रसन्न होय यह धरणी की विनय वाणी सुनि वाराह भगवान् कहनेलगे कि; हे धरणि ! जब हम मथुरा में वसुदेव के पुत्र हो देवताओं के कण्टक कंसासुर को मारेंगे तब संपूर्ण इन्द्रादिक व ब्रह्मादिक देवता और नारद, असित, देवल और पर्वतादि ऋषीश्वर मणिपूरनामक पर्वत में निवास करनेवाले जो हम हैं तिनकी स्तुति करेंगे और सुतस्वामीनाम करके

हमको कथन करेंगे हे धरणि! इसीलिये हमारा सुतस्वामीनाम होगा यह तुम्हारे प्रश्न करने से हमने अतिरहस्य कथन किया और मणिपूरपर्वत का माहात्म्य वर्णन किया यह हमारा अवतार अट्ठाईसवें द्वापरयुग में होगा इसभांति हे धरणि! सुतस्वामी तीर्थ का माहात्म्य हमने वर्णन किया अब क्या सुनने की तुम्हारे इच्छा है? सो हम वर्णन करें॥

एकसौचवालीस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं, हे शौनक! इस भांति श्रीवाराहजी भगवान् के मुखकमल से सुतस्वामी तीर्थ का माहात्म्य सुनि धरणी हाथ जोड़ कहनेलगी कि; हे भगवन्! इस तीर्थ के माहात्म्य श्रवण करनेसें मेरे अनेक भ्रम निवृत्त हुये अब हे कृपानिधान! ऐसीही और भी उत्तमवार्त्ता कथन करिये जिससें मेरा चित्त आनन्द को प्राप्त हो यह धरणी की विनय वाणी सुनि श्रीवाराह भगवान् कहनेलगे कि, हे धरणि! एक अत्यन्तगुप्त वार्त्ता कथन करते हैं कि; जिसके श्रवण से अनेक भांति का संशय दूर होय व अनेक पातक निवृत्त होयँ हे धरणि! द्वापरयुगमें यादवनाम क्षत्रियकुल में एक शौरिनाम क्षत्रिय होंगे जिनके कईरानियों में देवकीनाम रानी के गर्भ से हम जन्म लेंगे तब उन्हीं शौरि का दूसरा नाम लोकप्रसिद्ध वसुदेव भी होगा इसी सम्बन्ध करके हमारा नाम वासुदेव होगा और हे धरणि! हमारे निवास करने की पुरी विश्वकर्मा करके रचित पञ्चयोजन की चौड़ी दशयोजन की लम्बी जिसका नाम द्वारका होगा उस उत्तम पुरी में पृथिवी के भार दूरकरने के लिये सैकड़ोंवर्ष हम निवास करेंगे इसभांति देवताओं का क्लेश दूर कर पृथिवी का भार उतार फिर निज लोक को प्राप्त होंगे और ईश्वर के तुल्य जिनका प्रताप लोकविख्यात दुर्वासानाम मुनि किसी कारण यदुवंश को शाप देंगे

उनके शापसे मोहित हो परस्पर वृष्णिवंश, अन्धकवंश, भोज-वंश और यदुवंश आपसमें युद्धकर यमलोक को प्राप्त होंगे और चन्द्रमा के तुल्य निर्मल प्रकाश वनमाला धारण करनेवाले हलधर श्रीबलभद्रजी हमारे पहले भी निज धाम को पधारेंगे इस भांति वाराह भगवान् की वाणी सुनि हाथ जोड़ नम्र होकर धरणी कहनेलगी कि हे लोकनाथ, हे प्रभो! यदुवंशको दुर्वासाजी ने क्यों शाप दिया? इसका आप वर्णन करें इसभांति धरणी की विनयवाणी सुनि श्रीवाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! इस दुर्वासाजी के शाप का कारण यह होगा कि उस वासुदेवावतार में जाम्बवान् की पुत्री परमसुन्दरी नारियों में रत्न जिसका नाम जाम्बवती होगा वो हमारी स्त्री होगी जिसका पुत्र स्वामिकार्त्तिक का अवतार दश हजार हाथी का बल जिसमें साम्बनामक हमारा पुत्र होगा सो और भी एक उमिर के कइक बालक मिलके कुछ बालक्रीड़ा बागीचे में कररहेथे कि भावीवश उसी बागीचे में हमारे दर्शन के लिये मुनियों का समूह आय किसी वृक्ष के नीचे बैठि निज २ आवश्यकों से निवृत्त होनेलगा तबतो यदुवंश-कुमार सब इकट्ठे होकर मुनियों की परीक्षा के लिये भावीवश ऐसी बुद्धि उत्पन्न भई कि; हे भाइयो! आजतक मुनियों को त्रिकालज्ञ अर्थात् भूत, भविष्य, वर्त्तमान के जाननेवाले सुनते आये हैं आज इनकी परीक्षा लेना चाहिये यह विचार सबके मन में आय साम्ब को स्त्रीवेष बनाय आगेकर दुर्वासामुनि के समीप आय विनयपूर्वक कहनेलगे कि; हे भगवन्! यह स्त्री गर्भवती है आप निज वृत्तान्त पूछने में लज्जा करती है इसलिये आप कृपा करके विचारपूर्वक बतला दीजिये कि पुत्र अथवा कन्या क्या उत्पन्न करेगी यदि पुत्र उत्पन्न हो तो बहुत उत्तम होगा यह सुनि दुर्वासाजी क्रोधवश हो यह कहनेलगे कि, हे धूर्तो! यदि ऐसीही बुद्धि तुम्हारी हुई तो लोह का मुसल उत्पन्न होगा

जिस करके तुम्हारा वंशक्षय होगा इसभांति दुर्वासाजी के मुख का दारुण वचन क्रोधयुक्त श्रवणकर सब बालक डरेहुये हमारे समीप आये तबतो हे धरणि! उन कुमारों की आतुरता देखि उन्हींका वृत्त पूछा तब यथावत् वृत्तान्त सबोंने कह सुनाया उसे सुनि बालकों से हमने भी यही कहा कि; जो दुर्वासाजीने कहा सोई होगा इसमें मिथ्या नहीं होगा हे धरणि! इसभांति शाप का कारण हमने वर्णनकिया अब जो २ उत्तमस्थान द्वारकाजी में होंगे उन्हींका श्रवण करो हे धरणि! हमारी प्यारी जो द्वारका है उसमें समुद्र निकट पञ्चसर नाम तीर्थ है जहां शतशाखनाम प्लक्ष का वृक्ष है तिस पञ्चसर में स्नान कर जे मनुष्य छः दिन व्रत करें वे सब पापोंसे मुक्त होकर स्वर्ग में निवास पावें और यदि उस पञ्चसर में प्राण त्याग करे तो सब पापों से छुटि उत्तम विमान में बैठि अप्सराओं करके सेवा को प्राप्त हमारे लोक को आवे और हे धरणि! प्रभासनाम क्षेत्र उसी स्थान में अतिपवित्र है उस तीर्थ में कैसाही पापात्मा हो स्नान करतेही सब पापोंसे मुक्त हो और यदि पांच दिन व्रतकर शरीर त्याग करे वो सातो द्वीपों में क्रमसे जन्म ले व राजभोग कर अन्त में हमारे समीप को प्राप्त होय हे धरणि! उस प्रभासक्षेत्र में यह बड़ा आश्चर्य है कि जल में मकर बहुत हैं परन्तु तीर्थ के प्रभाव से ऐसे क्रोधमुक्त हैं कि स्नानसमय में समीपही रहते हैं और किसीको दुःख नहीं देते और यदि वहां कोई निज पितरों को पिण्डदान करके उस जल में छोड़े तो उस पिण्ड को देखतेही लेकर मकर भोजन कर जाते हैं और येभी विलक्षण है कि धर्मात्मा के पिण्डको तो ग्रहण करते हैं व पापियों के दियेहुये पिण्डों को स्पर्श नहीं करते हे धरणि! जिस स्थान में यह आश्चर्य है उसका नाम पञ्चपिण्ड है अगाधजल से पूर्ण व जिसका पार एक कोस का विस्तार उस तीर्थ में जे मनुष्य पांच रात्रि व्रत करें वे शरीर त्याग करके इन्द्र

के समीप निवास पावें हे धरणि! यदि उस पञ्चपिण्ड तीर्थ में विधिपूर्वक प्राण त्याग करें तो सब पापों से मुक्त हो इन्द्रलोक का सुखभोगि अन्त में हमारे समीप निवास पावें और उस पञ्चपिण्डतीर्थ के प्राणत्याग में यह चमत्कार है कि पुण्यात्मा मनुष्य का तो प्राण शीघ्र छुटजाता है व पापात्मा मनुष्य किसी भांति से प्राण त्याग करे परन्तु उस भूमि में प्राण नहीं निकलता और हे धरणि! उस तीर्थ में येभी आश्चर्य है कि, बारहो महीनों की चौबीसों एकादशियों को मध्याह्न समयमें शुक्ल वर्णका व पीत वर्णका कमल विकसित होता है और हे धरणि! उसीके समीप एक ब्रह्मसंगम नामक उत्तम तीर्थ है जिस तीर्थ में जलकी चार धारा बड़े ऊंचे मणिपूरनामक पर्वत से निकल के गिरती हैं तिसमें जे चार व्रत करके स्नान व पितृतर्पण करते हैं वे वैखानस लोक में जाय निवास करते हैं और यदि वहां प्राण त्याग करें तो सब पापों से मुक्त होकर वैखानसलोक में जाय अनेक भांति के सुख को भोगकर अन्त में हमारे समीप आवें हे धरणि! उस ब्रह्म-संगम तीर्थ का चमत्कार श्रवण करो कि, जो जलधारा मणिपूर पर्वत से गिरिरही है उसके नीचे यदि पुण्यवान् स्नान करें तो वह धारा गिरती है यदि पापी स्नान करने लगे तो उसी समय वन्ध हो जाती है और हे धरणि! उसी क्षेत्रमें हंसनामक तीर्थ है जिसमें एक धारा निर्मल व बड़ी मोटी मणिपूरपर्वत से गिरती है उस धारा में जो मनुष्य छःदिन व्रत करके स्नान करे तो सब पापों से मुक्त होकर वरुणलोक में निवास करे और यदि उस स्थान में प्राण त्याग करे तो सब पापों से छूट वरुणलोक का सुख भोगि अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! उस हंस-कुण्ड में यह आश्चर्य है कि, चौबीसो द्वादशियों को मध्याह्न समय में हंसपक्षी का जोड़ा देखता है उसे पुण्यात्मा तो देखते हैं पापी नहीं देखते और जो उन हंसों का दर्शन पावे वह

मनुष्य परमसिद्धि को प्राप्त होताहै हे धरणि ! उसी स्थान में कदम्बनाम क्षेत्र अति उत्तम पुण्य का देनेवाला है जिसके प्रभाव से वृष्णिवंश के राजा पवित्र होकर हमारे स्थान में प्राप्त भये यदि चार दिन व्रत करके कदम्बतीर्थ में स्नान करे तो वह पुण्यात्मा पुरुष ऋषिलोक को प्राप्त होय और यदि किसीभांति वहां प्राण त्याग करे तो ऋषिलोक में जाय वहां का सुख भोगि अन्त में हमारे लोक को प्राप्त होय हे धरणि ! उस तीर्थ में एक बड़ा चमत्कार है सो श्रवण करो कि कदम्बवृक्ष के पूर्वदिशा में एक उत्तम जल की धारा गिरती है जिससे वह कदम्ब सदा हरा व गहरी छाया करके युक्त रहता है और उसी कदम्ब में माघमास की शुक्ल द्वादशी को सूर्योदय समय में पुष्प उत्पन्न होते हैं वे पुष्प यदि किसीको लाभ हों तो वह पुरुष अष्टसिद्धियों करके युक्त लोक में अनेक भांति के सुखों को भोगि अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि ! उसी स्थान में चक्रतीर्थनामक परमपवित्र तीर्थ है जिसमें मणिपूरपर्वत के ऊपर से अतिप्रबल पांच जलधारा गिरती हैं व जिसमें बारहो महीनों की चौबीसो द्वादशी को अर्धरात्र समय में अतिमधुर व श्रवण इन्द्रिय को सुख देनेहारा मनोहर शब्द सुन पड़ता है व सुगन्धयुक्त वायु भी उसीसमय बहती है वह समय पापियों को सदा दुर्लभ व पुण्यजीवों को सदा सुलभ है और हे धरणि ! उस चक्रतीर्थ में जो मनुष्य पांचरात्रि व्रत करके स्नान करे वह अन्त में दशहज़ार वर्ष स्वर्गलोक में निवास करे और यदि संसार का सुख त्यागिके चक्रतीर्थ में प्राण त्याग करे वह सब पापों से मुक्त हो व दशहज़ार वर्ष स्वर्गलोक में सुख भोगि अन्त में हमारे समीप आवे व हे धरणि ! उस चक्रतीर्थ के उत्तरभाग में एक अशोकनामक उत्तम वृक्ष है सोभी द्वादशी के दिन सूर्योदयकाल में पुष्पित होता है वह पुष्प जिस किसीको मिले वह आठ

सिद्धियोंकरके युक्त होताहै परन्तु वह पुण्यात्मा को ही प्राप्त होता है पापी को किसीप्रकार नहीं मिलता है धरणि ! उसीक्षेत्र में रैवतकनाम पर्वत है जिसमें हम अनेकक्रीड़ा वासुदेव शरीर से करेंगे वह रैवतक नानाभांति के वृक्ष व लताओं करके शोभित है व जिसमें भांतिभांति की शोभित शिला व अनेक गुहाओं करके शोभित है और हे धरणि ! उसमें यह आश्चर्य है कि, जो वहां पापी हैं उनमें अनेकभांति के वृक्षों के पुष्प पत्र गिरते हैं तथापि लुप्त होजाते हैं और वह जल सदा निर्मलही रहता है तिस वापी में जो छःदिन व्रत करके स्नान करे सो सब पापों से मुक्त होकर सोमलोक को प्राप्त होता है और यदि वहां प्राण त्याग करे तो सोमलोक का सुख भोगि अन्त में हमारे समीप आवे उसी समीप जल का एक बड़ा गहरा कुण्ड है जिसमें भांति भांति के मीन कच्छप आदि अनेक जलजन्तुओं करके पूर्ण व अनेकभांति के कमलों करके युक्त महारमणीय देवताओं करके सेवित है तिसमें जो मनुष्य आठदिवस व्रत करके स्नान करते हैं वे देवलोक में जाय अप्सराओं के साथ नन्दनवन में अनन्त सुख भोगते हैं और हे धरणि ! उस तीर्थ में बड़ाआश्चर्य है कि वह कुण्ड प्रातःकाल थोड़ेही जल से बढ़ने लगता है ज्यों ज्यों सूर्य चढ़ता है व दिन की वृद्धि होती है त्यों त्यों वहभी बढ़ते २ मध्याह्न में पूर्ण होजाता है और दिन के साथ घटते २ सायंकाल फिर थोड़ा सा जल होता है और इसीभांति बढ़ते २ रात्रिही के साथ अर्धरात्र के पुनः पूर्ण होता है और ज्यों २ रात्रि घटती है वैसाही घटते २ प्रातःकाल शेष जल रहजाता है हे धरणि ! उसके पश्चिमदिशा में एक बड़ा उत्तम बिल्ववृक्ष है वह वृक्ष बारहो महीनों की द्वादशी को पुष्पित होता है उन पुष्पों को पुण्यात्मा पुरुष ही देखते हैं पापी नहीं देखते हैं हे धरणि ! यदि सूर्यास्तसमय में पुष्प किसीको मिले तो वह पुरुष

सबपापों से मुक्त हो अष्टसिद्धियों को प्राप्त होताहै हे धरणि! उसी स्थानमें अतिपुण्यका देनेहारा विष्णुसंक्रमणनामक तीर्थ है जिस स्थान में हमको व्याधने बाणसे बेधित किया है वहांही एक जल का कुण्ड है जिसमें बड़ेवेगसे एक जल की धारा गिरती है तहां यह आश्चर्य है कि विष्णु भगवान् इन्द्र व गणेश आदि सब देवता प्रत्यक्ष निवास करते हैं सो केवल पुण्यवान् पुरुषों को उन्होंका दर्शन सुलभ है और पापियों को सदाही दुर्लभ है हे धरणि! उस विष्णुसंक्रमण तीर्थ के दक्षिणभाग में एक पिप्पलनाम वृक्ष है कि जो बारहो महीनों की दोनों द्वादशियों को मध्याह्नसमय में फल करके युक्त होताहै वह फल यदि किसी को प्राप्त हो तो वह पुरुष अष्टसिद्धियों करके युक्त होताहै और हे धरणि! उसी क्षेत्र में हम उत्तरदिशा को मुख करके सदा निवास करते हैं उस कुण्ड में जो पुरुष चारव्रत करके स्नान करे वह सबपापों से मुक्त हो सूर्यलोक को जाय और यदि वहां किसीभांति प्राण त्याग करे तो सब पापों से मुक्त हो सूर्यलोक में जाय वहां का सुख भोगकर अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! हम व बलभद्र और एकादशी तीनों श्रीद्वारकाजी में सदा निवास करते हैं इसीलिये चारोंदिशा में तीस २ योजन पृथिवी पवित्र है वहां जायकर हे धरणि! जो हमारा दर्शन करते हैं वे थोड़ेही काल में सब पापों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होते हैं और यह कथा सब कथाओं में से पवित्र व उत्तम है इसलिये मृत्युसमय में इसका भूलजाना योग्य नहीं है और जो मनुष्य अपना कल्याण चाहे सो इस कथा को प्रातःकाल उठके पवित्र होकर पाठकर सो निज इक्कीस कुलपुरुषों के साथ सब पापों से मुक्त हो उत्तमगति को प्राप्त होय इस भांति हे धरणि! श्रीद्वारकाजी का माहात्म्य हमने वर्णन किया अब का सुनने की वाञ्छा है सो हे धरणि! हम वर्णन करें॥

एकसौपैंतालीस का अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं हे शौनक! इसभांति श्रीवाराह भगवान् के मुखारविन्द की वाणी सुनि अतिप्रसन्न होकर हाथ जोड़ माथ नवाय पृथिवी कहनेलगी कि; हे भगवन् ! मेरे दीन के ऊपर आपने बड़ी अनुग्रह की जो श्रीद्वारकाजी का तथा उसमें और जो नानाभांति के तीर्थ व देव हैं उन्हों का वर्णन किया अब आप कृपा करके और भी जो कोई अतिपवित्र व गुप्तस्थान होयँ उन का वर्णन करें इसभांति पृथिवी की विनयवाणी सुनि प्रसन्न होकर वाराह भगवान् कहनेलगे कि; हे धरणि ! तुम्हारी प्रीति से एक अतिगुप्त वार्त्ता कथन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो एक तीर्थ सानन्दूरनामक हमारा प्यारा मलयपर्वत के दक्षिण व समुद्र के उत्तर समीपही है जिसमें हमारा सब काल में निवास रहता है हे धरणि ! उसी क्षेत्र में एक मनोहर हमारी प्रतिमा देवताओं करके स्थापित है जिसका निश्चय कोई नहीं करसक्ता कि यह प्रतिमा किस पदार्थ की है अपने २ मनमें जिसको देखके अनेक भांति के तर्क करते हैं कोई उसे लोह की कहता है व कोई ताम्र की, कांस्य की, पीतल की, सीस की व शिला की निज निज बुद्धि के अनुसार समझ से कहते हैं हे धरणि ! जिसके दर्शन करने से मनुष्य असार संसारसागर से पार होते हैं व उसीस्थान में एक जल का कुण्ड निर्मल व मीठे जल से भरा भया है व जिसमें यह आश्चर्य है कि वैशाख मास की द्वादशी को मध्याह्न समय में सुवर्ण के रङ्ग का सा कमल खिला भया दीखता है व उसी के मध्य एक उत्तम छाया करके युक्त व लताओं से वेष्टित दिव्यवृक्ष है जो किसी देश के मनुष्यों करके पहिंचाना नहीं जासक्ता और उस सरमें यह भी आश्चर्य है कि अनेक भांति की मछलियां छोटी बड़ी जिसमें

पूर्ण होरही हैं और यदि कोई पिण्डदान करके उसमें छोड़े तो जो सबसे बड़ा मीन है कि जिसके देह में चक्र का चिह्न है सो जबतक वह पिण्ड न खाय तबतक कोई मीन उसे स्पर्श नहीं करता यदि वह खाता है तो उसके पीछे सभी मीन खाते हैं और हे धरणि! उसी के समीप रामसरनामक अतिगुप्त हमारा क्षेत्र है कि जो अगाधजल से भरा हुआ व अपार है अर्थात् कोई पार नहीं जासक्ता व रक्तकमलों करके पूर्ण है हे धरणि! जो उसमें एक व्रत करके स्नान करे वह सब पापों से मुक्त होकर बुधके लोक को जाय और यदि वहां प्राण त्याग करे तो बुध के लोक का सुख भोगि अन्त में हमारे समीप आवे और हे धरणि! उसी रामसर की उत्तर दिशा में ब्रह्मसर नामक तीर्थ है कि जिसमें एक बड़ाभारी शुक्लवर्ण का कमल है सोई कमल ब्रह्माजी का स्थान है उसमें जो मनुष्य छः दिन व्रत करके स्नान व पितरों का तर्पण करे वह सब पापों से छूट ब्रह्मलोक में निवास पावे और यदि वहां प्राण त्याग करे वह ब्रह्मलोक का सुख भोगि अन्त में हमारे समीप बास पावे हे धरणि! उसी ब्रह्मसर के समीप संगमननामक तीर्थ है जो पवित्र व निर्मल जल से पूर्ण है और अनेक भांति के वृक्ष लता व पक्षियों करके शोभित है समुद्र के एकयोजन दूर अनेक भांति के कमलों करके शोभित पाप का नाश करनेहारा है कि, जिसमें छः दिन व्रत करके स्नान कर व पितरों का तर्पण करे वह पुरुष सब पापों से मुक्त होकर वरुणजी के लोक में जाय वहां अनेक भांतिके ऐश्वर्य को भोगि अन्तमें हमारे समीप आवे और हे धरणि! उस संगमन तीर्थ की यह पहिंचान है कि जिसमें अनेक प्रकार के वृक्ष जो चारोंओर उस तीर्थ के बिराज रहे हैं उन्हों के पत्र पड़ते हैं परन्तु फिर वे देखने में नहीं आते कि क्या होते हैं और हे धरणि! उसी के समीप शक्रसरनामक अति पवित्र क्षेत्र है उस शक्रतीर्थ का यह

लक्षण है कि वहां से पूर्वदिशा में दो कोस भूमि के पहले चार जल की धारा बड़े वेग से गिरती हैं व एक में मिलकर शक्रतीर्थ में आय मिलती हैं और यह चमत्कार उसमें है कि उन धाराओं में यदि कोई पापी स्नान करे तो बन्ध होजाती हैं व पुण्यात्माओं के स्नान में नहीं और वह धारा कम व ज़्यादह कभी नहीं होती बराबर सदा समान रहती है और माघमास की शुक्ल द्वादशी को अर्धरात्र समय में अनेक भांति के मधुरगानयुक्त शब्द सुनने में आते हैं हे धरणि ! उसी शक्रसर में जो मनुष्य चार व्रत करके स्नानकरे वह क्रम से इन्द्र, यम, वरुण और कुबेर के पुर में जाय बहुत काल अनेक भांति के सुख को भोगता है और यदि नियम करके वहां प्राण त्याग करे तो सब पापों से मुक्त होकर उत्तम विमान में बैठि हमारे समीप आवे और हे धरणि ! उसी शक्रसर के समीप सूर्पाकरनाम महापवित्र व रमणीय क्षेत्र है जहां श्रीपरशुरामजी का आश्रम है इसी लिये हमारा सदा वहां निवास रहता है व हमारे समीप सन्मुख एक सेमल का वृक्ष है उस सेमलके वृक्ष को पापी मनुष्य नहीं देखते उस तीर्थ में पांचदिन व्रत करके जो मनुष्य स्नान करे वह सब पापोंसे मुक्त होकर ऋषिलोक में प्राप्त हो वहां अनेक भांति का सुख भोगता है और यदि वहां किसी भांति प्राण त्याग करे तो सब पापों से छूटि ऋषिलोक का सुख भोगि अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि ! उसी सूर्पाकर के समीप वायुदिशा में जटाकुण्ड नामक तीर्थ है उस तीर्थ का मण्डल चारों दिशा में दश २ योजन है वहां यदि पांच व्रत करके स्नानकरे वह पुरुष अगस्त्यलोक में जाय भांति २ के सुख को अनन्तकाल भोगता है और हे धरणि ! जो वहां प्राण त्याग करे तो सब पापोंसे मुक्त हो उत्तम विमान में बैठि अप्सराओं करके सेवा को प्राप्त अगस्त्यलोक में जाय वहां का सुख भोगि अन्त में हमारे समीप

आता है और हे धरणि! जिस जटातीर्थ में बारहो महीना की
द्वादशी को सूर्योदय समय से लेकर व सायंकालतक व सन्ध्या
से प्रातःकालतक जल समान निश्चल रहता है और अन्य दिनों
में तरङ्गों करके युक्त चञ्चल रहताहै हे धरणि! इसभांति सान-
दूरनामक तीर्थ को अतिरमणीय मन के हरनेहारा वृत्तान्त
वर्णन किया इसके श्रवण करनेसे भक्ति उत्पन्न होतीहै जिसके
होनेसे हम प्रसन्न होके उस पुरुष को मुक्ति देते हैं यह अतिगुप्त
पापहरनेहारी कथा वर्णन किया हे धरणि! जो इस कथा का
श्रवण करे वह पुरुष तो मुक्तही होता है परन्तु जो पाठ करता है
वह पुरुष अवश्य हमारे समीप आताहै इसलिये निरन्तर इसका
पाठकरे यदि मुक्ति को सुलभ चाहे इसभांति हे धरणि! यह
अपूर्वकथा हमने वर्णन किया अब क्या श्रवण किया चाहती हो॥

एकसौछियालीस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! इसभांति सानन्दूर तीर्थ का
माहात्म्य श्रीवाराहजी के मुखकमल से सुनि धरणी बड़ी भक्ति
से युक्त हो विनयपूर्वक हाथ जोड़ कहनेलगी कि; हे भगवन्,
करुणासिन्धो, नृसिंह, लोकनाथ, देवदेव, सहस्रनेत्र, कालरूप,
प्रभो! आपने मुझपर करुणा करके अत्युत्तम सानन्दूर तीर्थ का
माहात्म्य वर्णन किया कि जिसके श्रवण से मैं कृतार्थ भई अब
आप और भी विलक्षणतीर्थ व क्षेत्र वर्णन करें जिसके श्रवण से
मैं आनन्द को प्राप्त होऊं इस भांति विनय गद्गदवाणी सुनि
वाराह भगवान् प्रसन्न हो कहनेलगे कि, हे धरणि! तुम धन्य हो
और हमारी प्रिया हो इसलिये तुम अत्यन्त गुह्य और पवित्र
तीर्थ वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो सूतजी क-
हते हैं हे शौनक! इसभांति श्रीवाराहजी भगवान् जब कथन
करने का प्रारम्भ करनेलगे उसी समय श्रीसनत्कुमार भगवान्

आप्राप्तभये उनको देखि सहित पृथिवी के श्रीवाराह नारायण अभ्युत्थान पाद्य अर्घ इत्यादि पूजाओं को कर उत्तम आसन दिये तबभी सनत्कुमार भगवान् बड़े हर्ष से पूजा को स्वीकार कर प्रसन्न हो प्रशंसापूर्वक पृथिवी से कहनेलगे कि हे धरणि! तुम बड़ी धन्या हो साक्षाद्विष्णु भगवान् के मुखारविन्द से नानाभांति के धर्मों का निर्णय श्रवण करती हो इसलिये हम भी इस कथा के श्रवण में श्रद्धायुक्त होकर आये हैं व सावधानहैं हे शौनक! इसभांति श्रीभगवान् वाराहजी सनत्कुमारजी का वचन सुनि प्रसन्न हो कहनेलगे कि; हे सनत्कुमारजी! आप महात्मा हो व उत्तम अधिकारियोंमें शिरोमणि हो इसलिये अब कथन करतेहैं सो श्रवण करो यह कहि कहनेलगे कि; हे धरणि! जो पूछती हो सो श्रवण करो पृथिवी में एक सिद्धबटनामक हमारा बड़ा पवित्र क्षेत्र है जो हिमालयपर्वत में म्लेच्छोंके बीच सर्वदा विराजमान है अर्थात् जिस भूमि के मनुष्य म्लेच्छप्राय हैं हे धरणि! उसी भूमि में लोहार्गलनामक तीर्थ अतिपवित्रहै जिसका प्रमाण चारोंओर पांच पांच योजन है व पापियों करके अतिदुर्गम है उसस्थान में सुवर्ण की प्रतिमा में हम सदा निवास करते हैं और उसी स्थानमें हमने अपनी माया करके ब्रह्मा, रुद्र, स्कन्द, इन्द्र, वायु, आदित्य, वसुओं के गण, अश्विनीकुमार, चन्द्रमा और बृहस्पति आदि सब देवताओंकी गति रोक करके निवास दियाहै हे धरणि! सब देवताओं के अर्गल अर्थात् गतिबन्ध होनेसे लोहार्गलनाम है उस लोहार्गल क्षेत्र में जो मनुष्य हमारा दर्शन करे सो सब पापों से मुक्तहोकर हमारे समीप आवे और उस लोहार्गलतीर्थ में जो तीनरात्रि व्रत करके स्नानकरे सो पुरुष हमारे स्वरूप को धारणकर उत्तमविमान में बैठ देवलोक में जाय अनेक सहस्रवर्ष नन्दनवन में नानाभांति के सुख को भोगे और यदि अन्न को त्यागकर उस भूमि में प्राण त्याग करे सो सब

पापोंसे मुक्त हो बहुत काल देवलोकका सुखभोगि अन्तमें हमारे समीप आवे हे धरणि! औरभी लोकके विस्मय करनेहारा वृत्तान्त श्रवण करो कि, जोई हमारा भक्त चौबिसो द्वादशियों में किसी द्वादशी को वेदके विधान से उस लोहार्गल में पूजन करे तब उस जलमें सफ़ेद वर्णका घोड़ा सब शृङ्गारों करके भूषित सजाभया व उसके ऊपर एक उत्तम कान्ति करके युक्त तेजस्वी पुरुष जो हाथ में माला व कमण्डलु लिये आनन्दपूर्वक बैठा एक श्वेत-वर्ण के पर्वत पर चढ़रहा है यह दीखता है जिसके देखने से अनेक जन्मों के पातक निवृत्त होते हैं उसी लोहार्गल क्षेत्र में एक पञ्चसरनाम जल का कुण्ड है उस कुण्ड में जो चार रात्रि व्रत करके स्नान करे वह मनुष्य चैत्ररथनाम गन्धर्व के लोक में जाय बहुत काल आनन्द करे और उस क्षेत्र में जो अन्नको त्यागकर हमारा स्मरण करता हुआ प्राण त्याग करे वो सब पापों से मुक्त हो दिव्यदेह को धार उत्तम विमानपर बैठि अप्सराओं करके सेवित जाय गन्धर्बलोक का सुख भोगि अन्त में हमारे लोक में आवे हे धरणि! उसी लोहार्गल क्षेत्र में नारदकुण्डनाम तीर्थ है जिसमें पांच धारा निर्मल जल की गिरती हैं उस नारदकुण्डमें जो मनुष्य एकरात्रि स्नान करे वो सब पापों से छूटि नारदजीका दर्शन पाता है और यदि उस भूमि में प्राण त्याग करे तो नारद-लोक में जाय वहां का सुख भोगि अन्तमें हमारे समीप वास पावे और उसी नारदकुण्ड के समीप वशिष्ठकुण्डनाम तीर्थ है उसमें जो पांचरात्रि व्रत करके स्नान व पितृतर्पण करे सो विमान में बैठि वशिष्ठलोक को जाय और यदि वहां प्राण त्याग करे तो सब पापों से मुक्त हो वशिष्ठलोक का सुख भोगि अन्तमें हमारे लोक को आवे और हे धरणि! पञ्चकुण्डनामक तीर्थ है उसी स्थान में कि जिसका जल अत्यन्त शीतल रहता है यहां पञ्चशिखनामक मुनि ने तप किया है उस तीर्थ में जो पांच व्रत

करके स्नान करें वह सब पापों को त्यागि ऋषिलोक को प्राप्त होय और यदि वहां प्राण त्याग करे तो सब पापों से मुक्त हो सप्तर्षिलोक में जाय वहां का सुखभोगि अन्त में हमारे लोक में आवे हे धरणि! उसी लोहार्गल क्षेत्र में शरभङ्गनाम मुनि का स्थान है जिसके नाम का शरभङ्गकुण्ड तीर्थ है उस कुण्डसे बाहर जलकी धारा बहती है जिसका नाम शरभङ्गा नदी है उस नदी में जो छः दिन व्रत करके स्नान करता है वो सब पापों से मुक्तहो मुनिलोक में जाय निवास करता है और यदि वहां संसारवासना को त्यागि व्रत करके शरीर त्याग करे तो विमान में बैठि मुनिलोक में जाय वहां विहार कर अन्त में हमारे समीप आवे और भी उसी स्थान में अग्निसरनाम सब पापों के दूर करनेहारा तीर्थ है तिसमें जो मनुष्य आठ व्रत करके स्नान करे वो सब पापों से मुक्त हो अग्निलोक में जाय और यदि उस स्थान में किसी भांति प्राण त्याग करे वो सब भांति के सुखको अग्निलोक में जाय भोगि अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! इसी भांति बृहस्पतिकुण्डनाम तीर्थ है जिसका जल वेद के तुल्य है जिसकी धारा उत्तर को बहती है उस तीर्थ में जो पांच दिन व्रत करके स्नान करे वो निष्पाप हो विमान में बैठि बृहस्पतिलोकमें जाय विहार करे और यदि वहां प्राण त्याग करे तो बृहस्पतिलोक में जाय अनन्त सुखभोगि अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! उसी भूमि में वैश्वानर नाम कुण्ड है जहां हिम के तुल्य जलकी धारा गिरती है वहां जो छः दिन व्रत करके स्नान करे वो सब पापों से मुक्त हो वैश्वानरलोक में जाय विहार करे और यदि वहां प्राण त्याग करे तो वैश्वानरलोक में जाय वहां विहारकर अन्त में हमारे समीप आवे और भी उसी स्थान में कार्त्तिकेयकुण्डनाम तीर्थ है जिसमें पांचजल की धारा पर्वत से गिरती हैं जिसमें छः दिन व्रत करके जो स्नानकरे सो निष्पाप हो स्वामिकार्त्तिक

का दर्शन पावे और वहां यदि चान्द्रायण व्रत करके प्राण त्याग करे तो विमान में बैठि दिव्यरूप हो कार्त्तिकेयजी के लोकमें जाय विहारकर अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! उसी लोहार्गल में उमाकुण्डनाम तीर्थ है जिसमें जो मनुष्य दशरात्रि व्रत करके स्नान करे तो निज नेत्रों से प्रत्यक्ष उमादेवी का दर्शन पावे और अनेक सुख भोगकर अन्तमें उमाजी के लोक को जाय और यदि वहां प्राण त्याग करे तो देवरूप धारणकर दिव्य विमान में बैठि श्रीउमाजी के लोक में जाय बहुतकाल विहारकर अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! उस उमाकुण्ड के समीप माहेश्वरकुण्डनाम तीर्थ सब पापों का हरनेहारा है कि जिसमें हंस सारस आदि अनेक भांति जलपक्षियों के वृन्द विहार करते हैं और हिमाचलपर्वत से जिसमें बड़ी मोटी जल की धारा गिरती है उस माहेश्वरकुण्ड में जो दशरात्रि व्रत करके स्नान करे वो सब पापों से मुक्त हो यावज्जीव सुख भोगे व अन्त में दिव्यरूप हो रुद्रलोक को प्राप्त हो विहार करे यदि वहां प्राण त्याग करे तो उत्तम विमान में बैठि रुद्रलोक में जाय अनेक भांति के विहारकर अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! इसी माहेश्वर कुण्ड के थोड़ी दूर वामभाग में ब्रह्मकुण्डनाम तीर्थ है जहां ब्रह्माजीने वेदों का उद्धार किया है जिसमें पाण्डुरङ्गकी जलधारा हिमालय से गिरती है तिसमें जो मनुष्य सातरात्रि व्रत करके स्नान करे सो निष्पाप हो विमान में बैठि ब्रह्मलोक में जाय विहार करे और यदि वहां प्राण त्याग करे तो ब्रह्मलोक में जाय वहां विहारकर अन्त में हमारे समीप आवे हे धरणि! इसभांति पवित्रों में पवित्र उत्तमों में उत्तम व सब कथाओं का सार हमने वर्णन किया इस कथा को जो मनुष्य पढ़े वा सुने वो इक्कीस पीढ़ियों को नरकसे उद्धारकर उत्तमगति को प्राप्त करता है इस लिये इस कथा को मृत्युसमय में विस्मरण करना चाहिये यदि

अपना परलोक का क्षेम चाहे तो इस कथा से विमुख न होय इस भांति वाराहनारायण के मुखारविन्द का वचन सुनि धरणी आनन्द में मग्न हो कृतार्थमान नारायण की प्रार्थना अनेक भांति की की और सनत्कुमार मुनि प्रसन्न हो वाराहजी से बिदा होकर निज स्थान को गये ॥

एकसौसैंतालीस का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि, हे शौनक! इसभांति विस्मय का देनेवाला लोहार्गल तीर्थ का माहात्म्य सुनि विस्मित हो धरणी हाथ जोड़ नम्र होकर कहनेलगी कि; हे भगवन्, हे जगत्पते, हे लोकनाथ! आपकी कृपा से अत्युत्तम व गुप्तवृत्तान्त श्रवण किया हे भगवन्! हम आपकी दासी हो आपकी शरण में हैं व आप हमारे प्रभु हैं इस आपके विलक्षण कृपा करके हम निर्मल होगईं व यह निश्चय भया कि लोहार्गल से परे दूसरा क्षेत्र नहीं है तथापि आपके मुखकमल से वचनरूपी अमृत को पान करती तृप्ति नहीं होती इसलिये हे प्रभो! सब पवित्रों में पवित्र और उत्तमों में उत्तम सब जीवों का कल्याणदाता जो तीर्थ होय उसका आप कथन करें इसभांति पृथिवी का वचन सुनि प्रसन्न होकर श्रीभगवान् वाराह जी कहनेलगे कि; हे धरणि! अब सावधान हो श्रवण करो उस तीर्थ का माहात्म्य वर्णन करते हैं कि; जिसके तुल्य तीर्थ स्वर्ग, मृत्यु, पाताल इन तीनोंलोक में तीर्थ दूसरा नहीं है जैसी मथुरानाम पुरी है जहां साक्षात् हमारा निवास रहताहै इस वचन को सुनि धरणी कहनेलगी कि, हे लोकनाथ! पुष्कर नैमिषारण्य और काशीआदि अनेक विध पुण्यभूमिकों को त्यागकर आप मथुराही का कथन करते हैं तो इसमें क्या विशेषताहै? इस हमारी शंका को आप कृपा करके दूर करें इसभांति पृथिवी का वचन सुनि श्रीभगवान् वाराहजी कहने

लगे कि; हे धरणि! हम संपूर्ण माहात्म्य मथुरा का वर्णन करते हैं सो सावधान हो श्रवण करो यह कहि कहनेलगे कि; हे धरणि! और क्षेत्र तो हमारे निवास करनेसे पवित्र हुये और मथुरा जन्म लेने से अतिउत्तम भई हे धरणि! पाप की दूर करनेहारी मथुरा की जो हम स्तुति करते हैं कि, जो २ जीव मथुरा में वास करते हैं सो २ सब शरीर त्याग करनेसे मुक्ति को प्राप्त होते हैं माघमास के अमावास्या को जो फल श्रीत्रिवेणीजीके स्नान में होताहै सो फल मथुरा में नित्य २ होता है व पूर्ण एकहजारवर्ष काशीवास में जो फल होता है सो फल हे धरणि! मथुरा के स्नानमात्रही से होता है और जो फल कार्त्तिकमास की पूर्णमासी को पुष्करजी के स्नान में होताहै वो फल श्रीमथुराजी के स्नानमात्रहीसे होता है हे धरणि! कहांतक वर्णन करें कि यह संसार हमारी माया से मोहित भया भ्रमता है व मथुरामण्डल में नहीं जाता कि जिसमें सब पापों से मुक्त हो उत्तमगति को प्राप्त होय व स्नान करना तो उत्तम ही है जो कहीं किसी भूमि में कोई मथुरा इस तीन अक्षर के शब्द को उच्चारण करते हैं वो पापों से मुक्त होजाते हैं हे धरणि! कुब्जाम्रक में सूकरक्षेत्र में व मथुरा में विना सांख्ययोग निवास करनेमात्रही से मुक्ति होती है जो मनुष्य पवित्र होकर उत्तम नियमाचार करके युक्त मथुरा में निवास करते हैं व उन्हों को जो भोजन भिक्षा देता है वे दोनों मोक्ष को प्राप्त होते हैं हे धरणि! उस मथुरापुरी में ययाति नाम क्षत्रिय के कुल में चारमूर्ति से हम उत्पन्न होंगे ऋषियों करके स्तुति को प्राप्त मथुरामण्डल में कुछ ऊपर शतवर्ष निवास करेंगे उन चारों मूर्तियों में प्रथममूर्ति हमारी बलभद्र नाम शुक्लवर्ण की होगी दूसरी स्वर्ण के तुल्यकान्ति प्रद्युम्न नाम होगी तीसरी अशोकवृक्ष के पल्लवसमान वर्ण अनिरुद्धनाम होगी और चौथी मूर्ति नीलकमल के तुल्य कृष्णनाम होगी

उस समय पवित्र व कल्याणके देनेहारे हमारे अनेक नाम अति गुप्त होंगे उन चारो प्रकार के शरीरों में से संसार के कुशल क्षेम के लिये धर्म के दूषक अधर्मी घोर दुःखदेनेहारे अनेक दैत्यों का संहार करेंगे हे धरणि! जिस मथुरा में यमुनानाम नदी सदा बहती है जिसका जन्म साक्षात् सूर्य भगवान् से हुआ है व जो धर्मराज की भगिनी है जिसभांति प्रयाग में त्रिवेणी लोकविख्यात है वैसेही मथुरा में आय यमुना लोकविख्यात मुक्ति की देनेहारी भई और भी तीर्थ मथुरामण्डल में अनेक हैं जिन्हों में स्नान करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो हमारे लोक को जाते हैं हे धरणि! उसी मथुरा में विश्रान्तिनाम तीर्थ तीनों लोक में प्रसिद्ध है जिसमें स्नान करने से मनुष्य हमारे लोक को आते हैं सब तीर्थों के स्नान में जो फल है सो फल श्रीकृष्ण जीकी गतश्रम मूर्ति के दर्शनमात्र से होता है हे धरणि! जो पुण्य, जप, यज्ञ, ध्यान और संयम आदि करने से नहीं प्राप्त होता सो विश्रान्ति तीर्थ के स्नान में होता है जो पुरुष एक दिन तीनों काल में अर्थात् प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल में गतश्रम हमारी मूर्ति का दर्शन करे व प्रदक्षिणा करे वो सब पापों से मुक्त हो विष्णुलोक को जाय और भी संसारसागर से पार करनेहारा प्रयाग नाम तीर्थ है जिसमें स्नानमात्र से पुरुष हमारे लोक को आता है और कनखल नामक तीर्थ है परमगुप्त जिसमें स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग को जाता है और तिन्दुक नाम तीर्थ है जिसके स्नान करने से मनुष्य हमारे लोक में प्राप्त होता है जिस तिन्दुक नाम तीर्थ में जो वृत्तान्त पूर्वसमय में भया है सो श्रवण करो पाञ्चालविषय में एक काम्पिल्य नाम नगर धन धान्य करके युक्त जिसका राजा ब्रह्मदत्त नाम भया हे धरणि! उस नगर में तिन्दुकनामक नापित हुआ सो नापित उस काम्पिल्य नगर में बहुतकाल से निवास करता था परन्तु उसके कुटुम्ब

के मनुष्य क्षीण होते २ सब कालवश मरगये तबतो निज कु-
टुम्ब के क्षय होने से शोक करके दुःखी हुआ २ सब नगर के
लोकों का त्याग करके श्रीमथुराजी को चला आया वहां आय
ब्राह्मण के घर में निवास कर उसी ब्राह्मण की सेवा करता व
श्रीयमुनाजी में नित्य नियम से स्नान करता हुआ कालक्षेप
करने लगा इसीभांति बहुतकाल के निवास करने से किसी दिन
मृत्यु को भी प्राप्त भया सो नाथित तीर्थ में मृत्यु होने से अच्छे
उत्तम जाति धन करके संपन्न ब्राह्मणकुल में जन्म ले विद्वान्
योगनिष्ठ जातिस्मर ब्राह्मण भया और मथुरा तीर्थ के प्रभाव
से हमारे में उत्तम भक्तिनिष्ठ हो हमारा भजन कर अन्त में
मुक्त हो हमारे समीप को आया हे धरणि! उसी मथुरा में सूर्य-
तीर्थ सब पापका दूर करनेहारा है जिस स्थान में विरोचन के
पुत्र बलि ने सूर्य का आराधन किया है कि जिसमें छूटा भया
राज्य व अखण्ड लक्ष्मी प्राप्त होय इसलिये निराहार हो ऊर्ध्व-
बाहु सवावर्ष पर्यन्त अखण्ड व्रत करने से सब मनोरथ को प्राप्त
भया कि जिसको साक्षात् सूर्य भगवान् प्रकट होकर कहने लगे
कि हे बले! किसलिये इतना क्लेश सहकर हमारा आराधन करते
हो यह सुनि हाथ जोड़ नम्र हो बलि कहने लगा कि, हे भगवन्!
राज्य से भ्रष्ट भया २ धन व कुटुम्ब करके हीन पाताल में ब-
सता हूं वहां निर्धन होकर असमर्थ किस भांति कुटुम्ब का पालन
करूं यह बलिकी दीनवाणी सुनि दया करके युक्त हो सूर्य भगवान्
निज मुकुट से लेकर एक मणि बलि को दी सो ले प्रसन्न हो
सूर्य को प्रणाम कर बिदा हो पाताल को चला गया हे धरणि!
इस सूर्यतीर्थ में जो स्नान करे सो सब पापों से छूटि निज वा-
ञ्छित को प्राप्त होय और यदि उस तीर्थ में प्राण त्याग करे तो
उत्तम विमान में बैठि हमारे लोक में आवे और आदित्यवार
को वा चन्द्र सूर्य के ग्रहण में जो मनुष्य सूर्यतीर्थ में स्नान करे

वो सब पापों से मुक्त हो राजसूययज्ञ के फल को प्राप्त होय और हे धरणि! जहां ध्रुवजी ने अपनी इच्छा से तप किया है उस तीर्थ के स्नानमात्र करने से ध्रुवलोक प्राप्त होता और प्राणत्याग करने से हमारे समीप बास पाता है और यदि कोई ध्रुवतीर्थ में निज पितरों को पिण्डदान करे किसी समय तो उस के सब पितर वैकुण्ठबास पाते हैं और पितृपक्ष में विशेष करके पिण्ड देना चाहिये जिसके करने से बहुत शीघ्र पितरों को उत्तमगति मिलती है हे धरणि! ध्रुवतीर्थ के दक्षिण ऋषितीर्थ है जिसमें स्नान करनेवाला पुरुष ऋषिलोक को जाता है व ऋषितीर्थ में प्राणत्याग करने से पवित्र हो हमारे लोक को आता है हे धरणि! ऋषितीर्थ के दक्षिण मोक्षनामक उत्तमतीर्थ है जिसमें स्नानमात्रही से मोक्ष प्राप्त होती है व उसी स्थान में देवताओं को दुर्लभ कोटिनामक तीर्थ है जिसमें स्नान व दान करने से मनुष्य हमारे लोक में आता है उस कोटितीर्थ में मनुष्य स्नानकर निज पितर व देवता का जो तर्पण करते हैं उन के पितर तृप्त हो उत्तम गति को प्राप्त होते हैं हे धरणि! कोटि-तीर्थ के स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मलोक में जाता है व उसी कोटितीर्थ के समीप वायुनामक तीर्थ है जो पितरों को अतिदु-र्लभ है हे धरणि! वायुतीर्थ में पिण्डदान करने से पितर पितृ-लोक में प्राप्त होते हैं और यदि ज्येष्ठ मास में पिण्डदान करे तो गया के तुल्य पितरों की तृप्ति होती है हे धरणि! इस भांति हमने बारह तीर्थ का वर्णन किया ये तीर्थ देवताओं को भी दु-र्लभ हैं इन्हों में स्नान, दान, जप, होम जो कुछ उत्तम कर्म करे सो सहस्रगुण फल होता है इन्हों के स्मरण करने से मनुष्य सब पापों से छूट जाता है व इन तीर्थों के माहात्म्य सुनने से सब कामना प्राप्त होती हैं॥

एकसौअड़तालीस का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! मथुरामण्डल में शिवकुण्ड नाम तीर्थ के उत्तर नवतीर्थ विराजमान हैं उन नवतीर्थों से अपर तीर्थ न हुआ है न होगा जिस नवतीर्थ के स्नानमात्रही से मनुष्य भाग्यवान् व रूपवान् होता है और अन्त में मनुष्य स्वर्गबास पाता है जिस तीर्थ में नित्य स्नान करने से मनुष्य मुक्तिभागी होता है हे धरणि! अब हम और भी कथन करते हैं सो श्रवण करो जो संयमन नाम तीर्थ है तिसमें जो वृत्तान्त पूर्व समय में भया सो कथन करते हैं एक निषाद जाति का मनुष्य महापापी व दुराचारी नैमिषारण्य का रहनेवाला किसी समय कार्यवश होकर मथुरा में आया व आतेही यमुनाजी के तरजाने के विचार नदी में हल करके तिरता हुआ उस पार को चला परन्तु भावीवश संयमनतीर्थ में जल के आवर्त में पड़ घबड़ाय व डूबके मृतक होगया सो निषाद उस तीर्थ के प्रभाव से मरकरके सौराष्ट्रदेश के राजा का पुत्र हो उत्पन्न भया जिसका नाम लोकविख्यात यक्षधन यह भया सो राजा यक्षधन काशी के महाराज की लड़की का विवाह किया जिसका नाम पीवरी और तो उस यक्षधन राजा के अनेक रानियां थीं परन्तु पीवरी नाम रानी सब स्त्रियों में सुन्दरी व प्रीतिपात्र भई तिस पीवरी के साथ राजा यक्षधन वन में, उपवन में, नदीतट में और उत्तमवाटिकाओं में प्रजापालन करता हुआ विहार करनेलगा इसभांति भोग में आसक्त राजा की आयुर्बल सत्तरि वर्ष व्यतीत भई और उस पीवरी रानी में राजा यक्षधन के सात पुत्र व पांच कन्या उत्पन्न हुईं सो राजा यक्षधन पांचो कन्याओंको उत्तम २ कुल में राजपुत्रों के साथ विवाह किया और सातो पुत्रोंकाभी समय २ पर विवाह करदिया इसी भांति

राज्यको पालन करताहुआ राजा यक्षधन व रानी पीवरी किसी दिन शयन कररहे थे कि, रात्रिसमय राजा स्वप्न में निद्रावश होकर हा मथुरा! हा मथुरा! इसभांति कईवार बोलउठा उसे सुनि रानी राजा को सावधानकर पूछनेलगी कि, महाराज! आप बारम्बार मथुरा का नाम क्यों लिया? इसभांति रानी का वचन सुनि राजा कहनेलगा कि; हे प्रिये! शयन में निद्रावश होकरके मनुष्य असंबद्ध बोलताही है उस वचन को क्या पूछना योग्य है देखो हे प्रिये! जो मद्यआदि करके मत्त, विक्षिप्त और निद्रावश हों उन मनुष्यों के वचन का कुछ ठिकाना नहीं रहता वे अप्रमाण बोलते हैं इसलिये जो हमने निद्रा में कुछ कहा उसको न पूछो यह सुनि रानी पीवरी हाथ जोड़ नम्रहो कहनेलगी कि, हे स्वामिन्! यदि हमारा आप प्यार करते हैं व सब भांति से हमारा मान रखते हैं तो आप निजचित्त के वृत्तान्त को कथन करें क्योंकि आजलक आपने किसी समय यह शब्द नहीं उच्चारण किया यह वचन निद्रायुक्त का नहीं है आप हमसे छिपाते हैं इसलिये जबतक इसका ठीक २ वृत्तान्त न कहोगे तबतक हम भोजन व जलपान भी न करेंगी प्राणत्याग करदेंगी श्रीभगवान् वाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! इसभांति निजरानी पीवरी का वचन सुनि राजा यक्षधन कहनेलगा कि, हे प्रिये! यदि तुम हठ करके पूछती हो तो यह जो बड़ेवृद्धों का बनाया राज्य है इसे बड़ेपुत्रको दो व और पुत्रोंको यथाअधिकार सब को राज्य दो और सब घर का बन्दोबस्त करके मथुरा को चलो तो वहां कथन करेंगे और हे प्रिये! यह भी विचार करना चाहिये कि, राज्य व पुत्र आदि जो संसार के पदार्थ हैं वे किसी दिन विवश त्याग करने होंगे इसलिये इसी समय सब त्यागकर चलो त्याग करने में बड़ा फल है व शास्त्र में भी यही लिखा है कि विद्या के तुल्य नेत्र दूसरा नहीं है व नेत्रके तुल्य बल दूसरा

नहीं है व संग्रह के परे दुःख नहीं व त्यागके परे सुख नहीं इस लिये अब काल व्यतीत करना योग्य नहीं है इसी समय बड़े पुत्र को बुलाय राज्याभिषेक करना उचित है यह विचार अधिकारियों को बुलाय बड़ेपुत्र के राज्याभिषेक की आज्ञा दी तबतो हे धरणि ! राजा की आज्ञा मुआफ़िक़ अधिकारियों ने सब सामान इकट्ठे कर हाथ जोड़ कहनेलगे कि; श्रीमहाराज के आज्ञा मुवाफ़िक़ सब तैयार होरहा है यह सुनि राजा यक्षधन मन्त्रियों व ब्राह्मणों के साथ यथाविधि राज्याधिकार दे व शिक्षा दे थोड़े मनुष्यों के साथ सहित रानी पीवरी के यात्राकर कुछेक दिन में आय मथुरा में पहुँचे व इन्द्रपुरी के तुल्य मथुरा की शोभा देखि आनन्द हो मधुवन में जाय विष्णुस्थान का दर्शनकर वहां निवास लिया जिस मधुवन में भाद्र महीने की शुक्लपक्ष की एकादशी को स्नान करनेसे मनुष्य मुक्त होता है और दूसरा तालवन नाम पुण्यभूमि है जिसमें धेनुकासुर का वध बलदेवजी ने किया है व तीसरा कुमुदवन नाम पुण्यभूमि है जिसके दर्शन से मनुष्य कृतार्थ होता है व भाद्रमास के शुक्लएकादशी को उस स्थान के दर्शन से मनुष्य रुद्रलोक को जाताहै व चौथा सब वनों में उत्तम बहुलवन नाम वनहै उसके दर्शनसे मनुष्य अग्निलोक को जाता है व पांचवां काम्यकनाम सर्वोत्तम वन है जिसमें विमलकुण्डनाम तीर्थ है जिसके दर्शनसे व स्नानसे मनुष्य विमल होकर नन्दनवन में जाता है व छठा यमुना के पार भद्रनामक उत्तम वन है उस वन के दर्शन से मनुष्य हमारा भक्त होता है व अन्तमें नागलोक में बास पाता है और हे धरणि ! सातवां लोक विख्यात खादिरवन है जिसके दर्शन से मनुष्य हमारे लोक को आता है व आठवां महावन नाम वन है कि जिसके दर्शन से मनुष्य इन्द्रलोक में बास पाता है और नवमवन सब पापों का हरनेहारा लोहजङ्घ करके रक्षित लोहजङ्घ नाम वन है व

दशवां वन देवताओं करके पूजित विल्ववन है जिसके दर्शन से मनुष्य ब्रह्मलोक को जाता है और ग्यारहवां योगियों का प्रियभाण्डीर नाम वन है जिसके दर्शनमात्रही से मनुष्य गर्भ-वास नहीं जाते मोक्ष को प्राप्त होते हैं हे धरणि! भाण्डीर वन में जाय वासुदेवजी का दर्शन करके मनुष्य मुक्तिको प्राप्त होता है और बारहवां वृन्दावन नाम वन है हे धरणि! वह वृन्दावन हमको सदा प्यारा है और जिसके दर्शन से अनेक पाप दूर होते हैं हे धरणि! जो मनुष्य वृन्दावन का व गोविन्द का द-र्शन करते हैं उनकी उत्तम गति होती है और उनके संपूर्ण पातक निवृत्त होजाते हैं॥

एकसौ उनचास का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं हे शौनक! इसभांति वृन्दावन आदि वनों का वर्णन करके फिर वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! इन सब तीर्थों का दर्शन व सेवन करता हुआ राजा यक्षधन व रानी पीवरी ये दोनों एकत्र बैठे एकान्त में रानी पीवरी कहनेलगी कि हे स्वामिन्! अब आप मथुरा में जिसलिये आये हो सो कृपा करके कथन करो यह सुनि राजा कहने लगा कि; हेप्रिये! किसीदिन तुम भी सोती हुई निद्रा के वश मथुरा २ कह उठी हो सो क्यों उच्चारण किया उसका भेद यदि तुम कहो तो हम भी कहें इसभांति निजपति की वाणी सुनि पीवरी रानी हँस करके कहनेलगी कि हे प्राणप्यारे! मैं निज वृत्तान्त वर्णन करती हूं सो आप श्रवण करें इतना कह कहने लगी कि; एक समय में पीवरी गङ्गातीर के रहनेवाली कार्त्तिकमास की द्वादशी को मथुरा में आई वहां देवयात्रा के लिये नाव में चढ़ी चली जाती थी कि दैवयोग नाव डूबगई व डूबतेही नाव के मैं भी डूबिके मरगई तब तो हे स्वामिन्! उस यमुना के बीच मृत्यु

होने से काशिराज की कन्या भई और आपने विवाह किया इतनी अवस्था बीती और पुत्र कन्या भये तथा तीर्थ के मृत्यु होने से पूर्वजन्म का स्मरण नहीं गया इतना निज रानी का कथन सुनि राजा नेभी पूर्व जन्म में जैसा वृत्तान्त भया था निषादयोनि में सो सब आदिही से कह सुनाया तब तो दोनों परस्पर स्त्री पुरुष एक एक का वृत्तान्त सुनि व विस्मित हो हमारे भजन को कर अन्त में कालवश होने से हमारे लोक को आये इसभांति हे धरणि! हमने आश्चर्य वर्णन किया जो मनुष्य धारापतननाम तीर्थ में निज शरीर को त्याग करता है सो स्वर्गलोक को प्राप्त होता है और यमुनेश्वर के दर्शन करने से व प्राणत्याग करने से मनुष्य विष्णुलोक को प्राप्त होता है हे धरणि! इससे परे सब तीर्थों में उत्तम नागतीर्थ है जिसमें स्नान करनेवाला पुरुष स्वर्ग को जाता है व प्राण त्याग करने से हमारे लोक को आता है और हे धरणि! कण्ठाभरण नामक अति पवित्र तीर्थ है जिसमें स्नानकरने से मनुष्य सूर्यलोक को प्राप्त होता है और उस कण्ठाभरण के समीप प्राण त्याग करने से हमारे लोक में प्राप्त होता है और हे धरणि! उसी भूमि में ब्रह्मलोकनाम उत्तमोत्तम तीर्थ है जिसके जलपान से व स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मलोक में जाय विहार कर हमारे लोक में आता है और हे धरणि! यमुना के मध्य में एक सोमतीर्थ है जहां हमारा दर्शन सोम को भया है उसतीर्थ में जो मनुष्य स्नान करे वो सोमलोक में जाय विहार करे और यदि प्राणत्याग करे सो सोमलोक में जाय वहां विहार कर हमारे लोक में आवे और हे देवि! सरस्वतीपतननाम क्षेत्र बड़ा अपूर्व है जिसका जल स्पर्श करनेसे मनुष्य मूर्ख भी होय तो योगीराज होजाता है और यदि तीनरात्रि व्रतकर उस सरस्वतीपतन तीर्थ में स्नान करे वो ब्रह्महत्या नाम पातक से निवृत्त

होय और यदि वहां प्राण त्याग करे तो उत्तम विमान में बैठ हमारे लोक में आवे और हे धरणि! मथुरा में दशाश्वमेध नाम तीर्थ है जिसमें स्नान करनेसे मनुष्य अश्वमेध फल को प्राप्त हो देवलोक को जाता है और हे धरणि! मथुरा के पश्चिम ऋषियों करके पूजित ब्रह्माजी का निर्माण किया मानसनाम तीर्थ है जिसमें स्नान करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर हमारे लोक को आता है और हे धरणि! उसी के समीप विघ्नराज नामतीर्थ है संपूर्णपाप हरनेवाला उस तीर्थ में जो मनुष्य चतुर्थी को वा अष्टमी को वा चतुर्दशी को स्नान करते हैं वे विघ्नों करके पीड़ित नहीं होते उन स्नान करनेवाले पुरुषों की विद्या, यज्ञ, व्रत और दान आदि क्रिया में कभी भङ्ग नहीं होता श्रीगणेशजी उसका सदा कुशल करते हैं सो हे धरणि! उस गणेशतीर्थ में प्राण त्याग करे तो विमान में बैठि गणेश लोक में जाय विहार कर अन्त में हमारे समीप आवे और भी मथुरा मण्डल में परम पवित्र कोटितीर्थनाम क्षेत्र है जिसके स्नान करनेसेही कोटि गोदान का फल होता है और यदि उस कोटितीर्थ में प्राण त्यागकरे तो विमान में बैठि सोमलोक में जाय विहार कर अन्तमें हमारेलोक को आवे हे धरणि! उससे परे आधे कोसपर शिवक्षेत्र है जहां बैठिके शिवजी मथुरा की रक्षा करते हैं उसभूमि में जाय स्नानकर शिवजी के दर्शन से मथुरामण्डल के सबतीर्थों का फल होता है और वहां यदि प्राण त्याग करे तो हमारे लोक में आवे ॥

एकसौ पचास का अध्याय ॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! और भी एक अत्यन्त दुर्लभक्षेत्र वर्णन करते हैं सो श्रवणकरो एक मथुरामण्डल में अनन्त नाम तीर्थ है जिस में अनन्त भगवान् अचल व ध्रुव

लोक के कल्याणनिमित्त वहां नित्य निवास करते हैं जो मनुष्य अनन्त भगवान् का दर्शन दक्षिणायन उत्तरायण विष्णुपदी आदि पुण्य दिनों में करते हैं वो सबपापों से मुक्त हो हमारे लोक को जाते हैं और अक्रूरनामक्षेत्र है हे धरणि! जिसके दर्शन करनेसे मनुष्य राजसूय अश्वमेध के फल को प्राप्त होते हैं इस तीर्थ में हे धरणि! जो पूर्व में वृत्तान्त भया है सो वर्णन करते हैं सावधान होकर श्रवणकरो एक वैश्यजाति सुधननाम हमारा भक्त धन व बन्धु करके युक्त बड़े आनन्द में रहाकरता उस सुधन भक्तके दिन सदा हमारे भजन में व्यतीत होते घर में स्त्री पुत्रआदि सब कुटुम्ब का पालन करता भया अनेक भांति के संसार व्यवहार में युक्त सब भांति का उद्यम करता परन्तु मानकूट व तुलाकूट कभी नहीं करता इसभांति बसता भया नित्य २ दिव्यचन्दन, धूप, पुष्प और नैवेद्य आदि अनेक पदार्थोंसे हमारा पूजन किया करता और महीनों की दोनों एकादशियों को नियम से हमारे मन्दिर में जाय विधिपूर्वक पूजाकर संपूर्ण रात्रि नृत्य व गान करने से व्यतीत करता इसीप्रकार सदा किया करता था किसी एकादशी को दिन में व्रतकिया सायंकाल में हमारे मन्दिर को जागरण के लिये जाता था कि रास्ते में एक ब्रह्मराक्षस उस सुधन वणिक् के पैरों को पकड़लिया तब तो वह वणिक् कहनेलगा कि, तू कौन है व किसलिये हमारा पैर पकड़ा छोड़दे तब तो वह राक्षस बोला कि हे वणिक्! हम तो राक्षस हैं व क्षुधा करके पीड़ित हैं अब भावीवश यहां तुम मिलेहो तुम्हारे मांस व रुधिर से मैं तृप्त हूंगा यह राक्षस की वाणी सुनि सुधन कहनेलगा कि, हे राक्षस! तेरा कथन तो ठीकही है परन्तु जो हमारा नियम है उसे करके मैं आऊं तो यह शरीर तेरे अर्पण है यथेच्छ भोजनकर तृप्त हो यह हमारा शरीर अनेक भांति के पक्वान्न, मिठाई, घृत करके

पल रहा है इससे तू अधिक तृप्त होगा अब तो हम नारायण के मन्दिर में जागरण के लिये जाते हैं इस व्रत को भङ्ग न कर इस व्रत को पूराकर बड़े प्रातःकाल अवश्य आऊंगा तो इच्छा पूर्वक इस शरीर से तृप्त होना इस भांति सुधनभक्त का वचन सुनि राक्षस हँसकरके बोला हे धूर्त्त! क्यों मिथ्याभाषण करता है क्योंकि कौन ऐसा संसार में मनुष्य है जो राक्षस के मुख से बच करके फिर प्राणदेने को आवेगा इसभांति राक्षस का वचन सुनि सुधनभक्त यह कहनेलगा कि भाई! है तो सत्य परन्तु मैं तो कुछ प्राणों के मोह से असत्यभाषण नहीं करता केवल व्रत व नियम भङ्ग होने से डरता हूं व आजतक किसी व्यवहार में मैंने असत्यभाषण नहीं किया अबभी नहीं करूंगा देख हे राक्षस! यह जगत् सत्यमूल है व सत्यही में टिका है देखो ऋषि, मुनि आदि सब सत्यही से सिद्धि को प्राप्त होते हैं यदि हम बणिक् होके अनेक भांति के व्यापार करके असत्य कथन नहीं किया तो अब क्या करेंगे हे राक्षस! हमारी प्रतिज्ञा श्रवण कर सत्य २ हम रात्रि जागरण कर विष्णु भगवान् के आगे नृत्य व गान करके प्रातःकाल अवश्य आवेंगे देखो सत्य में जगत् टिकरहा है व ब्राह्मण सत्य मानिके वेद पढ़ते हैं और राजा सत्य से राज्य करते हैं व सत्य से पृथिवी स्थित है सत्य से निज कन्या और को दीजाती है सत्य से स्वर्ग व मोक्ष होता है व सत्यसे सूर्य और चन्द्रमा प्रकाश करते हैं इन्द्रआदि लोकपाल सत्यही में हैं जिस सत्य को ये सब मानते वो सत्य मेरा नष्ट होजाय जो मैं प्रातःकाल न आऊं और भी हे राक्षस! श्रवण कर जो पाप रजस्वला स्त्री के गमन से होता है, जो पाप भूमिदान करके फिर हरलेने से होता है, जो पाप पतिव्रता स्त्री के त्याग करने से होता है, जो पाप एक पंक्ति में भोजन भेद करने से होता है और हे राक्षस! जो पाप अमावास्या को श्राद्ध

करके स्त्रीसंग करने से होता है जो पाप गुरुस्त्री, भ्रातृस्त्री, पुत्र बधू, मित्रबधू, मामा की स्त्री व पिता से छोटेभाई की स्त्री इन्हों के गमन में होता है व राजपत्नी, ब्राह्मणपत्नी व विधवा के गमन में जो पाप होता है सो पाप हमको प्राप्तहोय जो हम प्रातःकाल तुम्हारे समीप न आवें और जो किसीको कुछ देनेको कहकर फिर न देवे उसका पाप व जो निज कन्यादान देना कहे औरको देय औरको उसका पाप और राजपुरोहित का पाप ग्रामपुरोहित का पाप ब्राह्मणबध करनेवाले का पाप मद्यपान करनेवाले का पाप व चौरकर्म करनेवाले का व्रत त्यागने का जो पाप होता है और ये लोग जिसगति को जाते हैं उस गति को हम जायँ व इन्हों के पाप हमको होयँ जो हम तुम्हारे समीप प्रातःकाल न आवें वाराहजी कहतेहैं हे धरणि! इस भांति सुधनभक्त का प्रतिज्ञावचन सुनके ब्रह्मराक्षस अत्यन्त हर्ष हो मधुरवाणी से बोला कि, इच्छा पूर्वक जावो तुमको प्रणाम है व तुम धन्य हो यह सुनि सुधन ब्रह्मराक्षस से मुक्त हो बड़े हर्ष से आय हमारे मन्दिर में जागरण नृत्य व गानआदि उत्साह से वह रात्रि व्यतीत कर व प्रातःकाल (ॐ नमो नारायणाय) इस मन्त्र से वारम्बार प्रणाम कर व श्रीयमुनाजी में स्नानकर जो ब्रह्मराक्षस के समीप चलने का विचार किया उसी समय मूर्ति धारणकर प्रकट हो हम बोले कि हे सुधन, भक्त! बड़ी शीघ्रतासे कहां को चला है तब तो हे धरणि! वह बणिक् हमको देखि प्रणामकर यह बोला कि; ब्रह्मराक्षस के पास जाता हूं यह सुनि हमने निषेध किया कि न जावो देख सब धर्म शरीर के साथ हैं शरीर विना कौन धर्म होसक्ता है इस लिये शरीर राक्षस को देना उचित नहीं है यह हमारा वाक्य सुनि सुधन बोला कि; महाराज! उस राक्षस से सत्य साक्षी देकर आया हूं सो क्यों न जाऊं यह कह सत्यनिष्ठ हो बड़ी शीघ्रता के साथ राक्षस के समीप जा पहुंचा व मधुरवाणी से

उस राक्षस से कहनेलगा कि हे राक्षस! हम तुम्हारे समीप आये हैं अब देरी न करो इच्छापूर्वक इस हमारे देह का मांस व रुधिर सुखपूर्वक भक्षणकरो श्रीलोकनाथ विष्णु भगवान् का मैं जागरण आदि नियम समाप्त करके आया हूं और हे राक्षस! आजतक कभी मिथ्या भाषण नहीं किया उसी सत्य से हमको भक्षण करो इसभांति सुधन का वचन सुनि व सत्यता देखि मधुर वचन से राक्षस कहनेलगा कि; हे सुधन! तू धन्य है जिसकी बुद्धि इसभांति सत्य में स्थित है हे साधो! हम तुम से बहुत प्रसन्न हैं अब तुम समस्त जागरण का फल हमको दो जिसके प्रभाव से हमारी मुक्ति होय यह राक्षस की वाणी सुनि सुधन कहने लगा कि; हे राक्षस! सब नृत्य व जागरण कौन देता है हमतो एक दिन का वा आधे दिन का वा एक प्रहर का न देंगे इच्छा में आवे सो करो इस भांति सुधन का वचन सुनि ब्रह्मराक्षस कहनेलगा कि हे पुण्यात्मन्! एकही दिन का पुण्य दो जिसमें हम इस दुःख से मुक्त होकर उत्तमगति को जावें यह सुनि सुधन भक्त बोला कि; हे राक्षस! हम तुमको कुछ पुण्य नहीं देंगे जो तुम्हारी इच्छा हो सो करो परन्तु यह तो कहो कि किस अपराध करने से यह योनि तुमको प्राप्त भई है यह सुनि हँस करके ब्रह्मराक्षस बोला कि हे सुधन! तुमसे क्या गुप्त है हम तो तुम्हारे समीपी अग्निदत्तनाम छन्दोग्य ब्राह्मण हैं नित्य बाहर से जब घरको आनेलगें तब ईंट और किसीकी उठाय के लावें इसीभांति सारा घर पराई ईंटों से पूर्ण करदिया हे सुधन! उस कर्म से हम ब्रह्मराक्षस भये अब तुम मिलेहो और हमारी तुम्हारी मैत्री हुई इसलिये उपकार करना तुमको उचित है और तो क्या कहें? परन्तु जो एकदिन का भी विश्रान्तितीर्थ का पुण्य देदेवो तो हमारा कल्याण होजाय यह सुनि सुधन बोला कि, हे राक्षस! बहुत उत्तम बात तुमने कही एकदिन का नृत्यफल हमने

तुमको दिया यह सुनतेही वो राक्षस मुक्त होकर उत्तमगति को गया और सुधन वणिक् नारायण का प्रणाम कर जब जानेलगा उसीसमय परमेश्वरके पार्षद् आय उत्तम विमान लेकर कहनेलगे कि; हे सुधन! तुम धन्य हो तुम्हारी पुण्यसे हम विष्णुभगवान् की आज्ञा से विमान लाये हैं इसपर बैठि दिव्य रूप धारण कर वैकुण्ठको चलो यह सुनि सुधन प्रसन्न हो चतुर्भुज रूप धारण कर सकुटुम्ब वैकुण्ठको सदेह प्राप्त भया इसभांति हे धरणि! अक्रूरतीर्थ का प्रभाव हमने वर्णनकिया अक्रूरतीर्थ से परे दूसरा तीर्थ न भया है न होगा जिस तीर्थ के प्रभाव से सुधनवणिक् सकुटुम्ब मुक्त हुआ हे धरणि! कार्त्तिकमास के शुक्लएकादशी को अक्रूरतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य राजसूय यज्ञ के फल को प्राप्त होता है व कार्त्तिक की अमावास्या को जो अक्रूरतीर्थ में वृषोत्सर्ग करता है वो पितरों को तारता है अर्थात् उसके पितर यमबाधा से छूट स्वर्गमें वासपाते हैं और जो कार्त्तिकी को पितृश्राद्ध करते हैं उनके पितर अनन्त तृप्तिको प्राप्त होकर स्वर्ग को जाते हैं॥

एकसौ इक्यावन का अध्याय॥

श्रीवारह भगवान्जी कहतेहैं, हे धरणि! मथुरा में वत्सक्रीड़नकनाम अतिपवित्र क्षेत्र है जहां रक्तचन्दन करके शोभित रक्तशिलाहै जिसके स्नानमात्रही से मनुष्य वायुलोक को प्राप्त होता है और वत्सक्रीड़नक में प्राण त्याग करनेसे सबपापों से मुक्त होकर हमारेलोक को प्राप्त होता है हे धरणि! परमउत्तम भाण्डीरनामकतीर्थ पापों का हरनेहारा है जिसकी चारोंदिशाओं में शाल, ताल, तमाल, अर्जुन, इंगुदी, पीलु और करीर आदि अनेकवृक्ष शोभा को देरहे हैं उस भाण्डीरतीर्थ में स्नान करनेसे मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर इन्द्रलोक में प्राप्त होता है व प्राणत्याग करनेसे हमारे समीप आता है और हे धरणि! जहां

हमने गौवों के व गोपबालकों के साथ अनेकभांतिकी क्रीड़ाकरी है वह वृन्दावननाम देवतालवदुर्लभ क्षेत्र है उस वृन्दावन में एक रात्रि व्रत करके जो स्नानकरे वो अन्त में सबपापोंसे मुक्तहोकर दिव्य विमान में बैठि अप्सराओं करके सेवित स्वर्ग में जा प्राप्त होय और यदि वृन्दावन में प्राण त्याग करे वो हमारेलोक में आवे हे धरणि! औरभी पाप के नाशकरनेहारा तीर्थ वृन्दावन में है जहां हमने केशीनाम दैत्य का वध किया है वहां जो मनुष्य एकबार स्नानकरे उसको श्रीगङ्गाजी के शतबार स्नान का पुण्य फल प्राप्त होय और केशीतीर्थ से शतगुणा पुण्य वहां है जहां कंस का वध करके विश्रामकिया है हे धरणि! जो केशीतीर्थ में निज पितरों को पिण्डदान करेंगे उनके पितर गयाक्षेत्र के तुल्य तृप्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होंगे और केशीतीर्थ में स्नान, दान, जप, होम आदिकरने से अग्निष्टोमनाम यज्ञ का फल प्राप्त होगा और हे धरणि! द्वादशादित्यनाम जो तीर्थ है वह अत्यन्त दुर्लभ है जहां हम शीत से व्यथित होके सूर्यका आश्रय लिया है और वहांही कालीयनामसर्प का दमन किया है व सूर्य को स्थापित किया और आदित्यों से हमने यह कहा कि; जो तुम्हारी वाञ्छा होय सो वरमांगो यह सुनि आदित्य बोले कि, हे भगवन्! यदि हमको आप वर देते हो तो यह तीर्थ हमारे नाम से प्रसिद्ध होय यह आदित्यों का वचन सुनि हमने यह कहा कि; यहां जो स्नान करेगा वो निष्पाप होकर आदित्य लोक को जायगा और यहां यदि प्राण त्यागकरे सो महापातकों से मुक्त होकर हमारे लोक में प्राप्त होगा आदित्य तीर्थ के उत्तर व कालीय के दक्षिण इनदोनों तीर्थों के मध्य में जो प्राण त्याग करेंगे वो सबपापों से मुक्तहोकर मुक्ति को प्राप्त होंगे॥

एकसौ बावन का अध्याय॥

श्रीवाराह भगवान्जी कहते हैं कि; हे धरणि! अब यमुना जी के पार के तीर्थों का श्रवण करो जो यमलार्जुन नाम तीर्थ है वो अति पवित्र व मुक्ति का देनेहारा है और जहां हमने शकट को उलटा है जिसके उलटने से अनेक घी के भांड फूटगये हैं उस भूमि में स्नान व व्रत करने से अनन्त फल प्राप्त होता है उस भूमि में ज्येष्ठमास की शुक्लद्वादशी को स्नान और दान करने से महापातक दूर होता है और ज्येष्ठमास की शुक्लद्वादशी को शकटकुण्ड में स्नानकर मथुरा में विष्णुदर्शन करने से मनुष्य मोक्ष को प्राप्त होता है यमुनाजल में स्नानकर पवित्र हो इन्द्रियों को जीति जो मनुष्य गोविन्दजी का दर्शन व पूजन करते हैं वो परमपद को प्राप्त होते हैं और हे धरणि! पितृलोक में पितर निज २ गोत्र के मनुष्यों को सदा यह आशीर्वाद देते हैं कि, हे परमेश्वर! हमारे कुल में ऐसा कोई होय जो मथुराजी में आय यमुना में स्नानकर व गोविन्दकी पूजाकर व्रत करेगा कि, जिसकी पुण्य से हमारी उत्तमगति होगी और ज्येष्ठमहीने की द्वादशी को कौनसा पुरुष हमारे कुलमें धन्य होगा जो यमुनानीर में पिण्डदान करेगा हे धरणि! वहुलवननाम जो पुण्यभूमि है तहां रुद्रकुण्ड है जिसमें स्नानमात्र से मनुष्य रुद्रलोक को जाता है और चैत्रमासकी शुक्लद्वादशी को रुद्रकुण्ड में स्नान करने से पुरुष हमारे लोक को जाता है इसमें संशय नहीं करना और हे धरणि! जो भाण्डह्रदनाम तीर्थ है तिसमें सदा सूर्य का दर्शन होता है उस अर्कस्थलकुण्ड में जो पुरुष स्नान करता है वो सब पापों से मुक्तहोकर सूर्यलोक को प्राप्त होता है और अर्कस्थल के समीप विमल जल से पूर्ण देवताओं को दुर्लभ सप्तसमुद्रनामक तीर्थ है जिसमें स्नान करने से मनुष्य निष्पाप होकर जिस

लोक में जाने की इच्छा करे वहांही प्राप्त होताहै और यदि सप्त-समुद्रतीर्थ के समीप प्राणत्याग करे तो हमारे लोक में प्राप्त होता है हे धरणि! जो वीरस्थल नामक गुप्ततीर्थ निर्मल जल से पूर्ण व अनेकभांति के कमलों करके सुशोभित है उस तीर्थ में स्नान व व्रत करने से मनुष्य वीरलोक में जा प्राप्त होता है और प्राणत्याग करने से हमारे लोक को आता है हे धरणि! वहांही कुशस्थल नामतीर्थ पापराशि का हरनेहारा व पुण्य का देनेहारा है जिसमें स्नान करने से मनुष्य पवित्र होकर ब्रह्मलोक में प्राप्त होता है और वहां प्राणत्याग करने से हमारे समीप आता है और उसीस्थान में पुष्पस्थलनाम शिवक्षेत्र है जहां के स्नान करने से मनुष्य शिवलोक में जा प्राप्तहोकर शिवजी के साथ विहार करता है व शिवक्षेत्र में प्राण त्याग करने से हमारे समीप को आता है हे धरणि! ये पांचस्थल पञ्चमहापातक के दूर करनेहारे हैं इन्हों में स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मलोक में प्राप्त होता है और गोपीश्वरनामक जो महापातक दूर करनेहारा क्षेत्र है जहां अनेकवृन्द गोपियों के साथ श्रीकृष्णजीने विहार किया है और जहां यमलार्जुन का निपातरूप क्रीड़ा किया है व जहां गाड़ी उलटि के घृत के अनेक भांडों को फोड़दिया और जहां इन्द्र का सारथी मातलि आकर रत्न के घटों से गोप-वेष हमारा अभिषेक किया है वो गोपीश्वर मातलि करके पूजित है उसी स्थान में सप्तसामुद्रिकनाम कूप विमलजल से पूर्ण जिस जल के तर्पण को रात्रि दिन पितर वाञ्छा करते हैं इसलिये सप्त सामुद्रिक कूप में जो पिण्डदान व तर्पण चन्द्रबार को करते हैं उनके पितर कोटिवर्ष पर्यन्त तृप्त रहतेहैं हे धरणि! गोविन्दजी और गोपीश्वर के मध्य में जो निज शरीर त्यागकरे वो शक्र-लोक में जाकर अनन्तकाल विहार करता है और रुद्रजी गोविन्दजी ब्रह्मा और गोपीश्वर इन्हों के मध्य में स्नान, दान,

तर्पण और पिण्डदान आदि करनेवाला पुरुष निज इक्कीस पीढ़ियों को उत्तमगति देता है और इन्हों में स्नान करने से मनुष्य सबपापों से मुक्तहोकर विष्णुलोक में विहारकरता है व प्राण त्याग करने से मनुष्य हमारा स्वरूप हो हमारे लोक में आता है और हे धरणि! वसुपत्र नाम तीर्थ में फाल्गुन नामतीर्थ में व वृषभाञ्जननाम तीर्थ में स्नान दान आदि सत्कर्मों के करने से मनुष्य देवलोक में विहार करता है व प्राणत्याग करने से हमारे लोक को आता है और मथुरा के पश्चिम आधे योजन में धेनुकासुर की भूमि में तालवननाम तीर्थ है जहां के स्नान, दान आदि कर्म करने से मनुष्य वाञ्छितफल को प्राप्त होता है और वहांही सम्पीठकनाम जो उत्तमक्षेत्र है जिसमें कमल करके युक्त निर्मल जल का कुण्ड है उस कुण्ड में जो मनुष्य एक व्रत करके स्नानकरे व अग्निष्टोमनामक यज्ञ के फल को प्राप्त होताहै और यदि वहां प्राण त्याग करे वो हमारे लोक को आता है व मथुरा की पश्चिमदिशा में आधे योजनपर हमने पुत्रवाञ्छा करके तप किया है व उसी तपके करने से सूर्य प्रसन्न हो पुत्ररूप वर दिया उस सूर्यतीर्थ में जो भाद्रमास की कृष्णसप्तमी को स्नान व दान करे उनका सब मनोरथ सूर्य भगवान् जी पूर्ण करते हैं और वहांही संतान के लिये राजामनु और रानी शतरूपा ने तप करके सूर्य को प्रसन्न किया व संतानफल को पाया और वहांही सूर्य का आराधन संतान की वाञ्छा करके राजा शन्तनु ने किया जिसके करने से भीष्मनाम पुत्र को पाया इसलिये वहां जो मनुष्य सूर्यदेव प्रीत्यर्थ स्नान, दान, व्रत आदि जो उत्तम करते हैं उनकी वाञ्छा सूर्य भगवान् जी बहुत शीघ्र सफल करते हैं॥

एकसौ तिरपन का अध्याय॥

श्री वाराहजी कहते हैं कि, हे धरणि! हमारा तीर्थ मथुरा मण्डल बीस योजन का प्रमाण है इसके मध्य में जो २ तीर्थ हैं उन्हों के स्नान करने से मनुष्य सबपापों से मुक्त होता है और वर्षाकाल में तो मथुरामण्डल के तीर्थों में स्नान करने से अधिक फल होताहै हे धरणि! पृथिवी में जितने तीर्थ व पुण्यभूमि हैं वो सब हरिशयन के समय मथुरामण्डल में आ प्राप्त होते हैं इसलिये जो मथुरा में हरिशयन की यात्रा करता है वो अनन्त तीर्थों के स्नानफल को पाता है और सुप्तोत्थित जो हमारा दर्शन करते हैं वो अनेक जन्मों के पातकों से निवृत्त होते हैं जो मनुष्य मथुरा में जाय केशवभगवान् का दर्शन करता है व यमुनाजी में स्नान करता है वो अवश्य हमारे लोक में आता है और जो मनुष्य मथुरा का प्रदक्षिण करता है व केशव का दर्शन करता है उसको सातोद्वीप पृथ्वी के प्रदक्षिण का फल होता है और जो मनुष्य गोघृत करके पूर्ण पात्र में दीपदान केशवजी के समीप देताहै वो पांच योजन विस्तार के विमान में बैठि दीपों के वृक्षों करके युक्त अप्सराओं करके सेवित अनेक भांति के धन धान्य रत्न और वस्त्रों करके पूर्ण सिद्ध, चारण, गन्धर्वों करके स्तुति को प्राप्तहो असंख्यकाल देवलोक में निवास करता है व पुण्यक्षीण होने से पृथिवी पर आय सार्वभौम राजा होता है यह वाराहजी का वचन सुनि धरणी कहने लगी कि, हे भगवन्! इस मथुराक्षेत्र की चारोंदिशा में कौन २ देवता रक्षा करते हैं सो आप वर्णन करें यह धरणी की विनय वाणी सुनि वाराहजी कहने लगे कि, हे धरणि! हमारे क्षेत्रकी रक्षा करने के लिये हमने पूर्व दिशा में इन्द्र को दक्षिण में यमको पश्चिम में वरुण को और उत्तर में कुबेर को आज्ञा दिया वेही

सबकाल में रक्षा करते हैं और मध्य में सदाशिव उमापतिजी रक्षा करते हैं इसलिये जो मनुष्य यात्रा करने को जिस दिशा से आवे वो उस दिक्पाल का पूजन करके मथुरा में प्रवेशकर शिवजी का पूजन करनेसे मथुरा की यात्रा सफल होती है और हे धरणि! जो मथुरा में गृह वा प्रासाद बनाते हैं वो साक्षात् जीवन्मुक्त होते हैं व अन्त में उनको चतुर्भुज विष्णु जानना चाहिये हे महाभागे! मथुरा में जो निर्मलोदक नामकुण्ड है उसमें साक्षाद्विष्णु का निवास जानो और उस सर में जो एक रात्रिव्रत करके स्नान करता है वो सबपापों से मुक्त होकर उत्तम गति को प्राप्त होता है यदि उसस्थान में प्राण त्यागकरे वो उत्तम विमान में बैठि विष्णुलोक में जाकर विहार करता है और हे धरणि! उस विमलोदककुण्ड में यह आश्चर्य है कि ग्रीष्म ऋतु में ठंढा और हिमऋतु में उसका जल उष्ण व कभी उसकी वर्षा में वृद्धि नहीं होती और ग्रीष्म में क्षीण नहीं सर्वदा सम रहता है और जो २ मथुरा में तीर्थ हैं उन्हों के स्नान करने से निष्पाप हो मनुष्य उत्तमगति को जाता है और वृन्दावन व मथुरा में जितने पुरातन कूप, तड़ाग, झरने, कुण्ड और नदी आदि में जो जल है सो सब तीर्थ रूप हैं और हे धरणि! मथुरा में पद २ सब भूमितीर्थ से कुछ कम नहीं है अर्थात् मथुरा तीर्थ मय है व पाप हरनेहारी है हे धरणि! मथुरा में मुचुकुन्द नाम सब तीर्थों में उत्तम तीर्थ है उस मुचुकुन्दकुण्ड के स्नान करने से मनुष्य अभीष्ट फल को प्राप्त होता है व प्राणत्याग करने से हमारे लोक को जाता है हे धरणि! इस जन्म में जितने पाप किया होय अथवा अन्यजन्म में वो संपूर्णपातक गोविन्द इसनाम लेने से दूरहोतेहैं और बहुत मन्त्रों करके क्या प्रयोजन है? जिसकी भक्ति जनार्दन में है जो नरक में गिररहे हैं उन्हों के लिये केवल जनार्दन भगवान् ही शरण हैं जो मथुरा

का प्रदक्षिण करके व जनार्दन भगवान् के समीप स्नान करते हैं उनको अनन्तफल होता है हे धरणि! शयन से उठे हुये जनार्दन के दर्शन से मनुष्य सब पापों से मुक्तहोकर चतुर्भुज होता है और कार्त्तिकमास के शुक्ल नवमी को जो मथुरा की प्रदक्षिणा करके विष्णु का दर्शन करता है वो सबपापों से मुक्तहोकर उत्तम गति को प्राप्त होता है हे धरणि! ब्राह्मण के बध करनेहारा, मदिरापान करनेहारा, गोबध करनेहारा और व्रत का त्याग करनेहारा, मनुष्य मथुरा की परिक्रमा करने से पवित्र होता है जो मनुष्य कार्त्तिक शुक्ल अष्टमी को मथुरा में जाय विधि से यमुना में स्नानकर ब्रह्मचर्य होकर उस रात्रिव्रत करे व पवित्र वस्त्र धारणकर नवमी को प्रदक्षिणाकर जनार्दन का दर्शनकरे वो सब पापों से मुक्तहोकर वैकुण्ठ को जाता है और जो मनुष्य प्रदक्षिणा करनेवाले का स्पर्श करता है वो भी निष्पाप होकर उत्तम गति को प्राप्त होता है व श्रीमथुरा में जाय स्वयम्भू भगवान् का दर्शनकर विमलोदक नाम कूप में जो निज पितरों को तर्पण व पिण्डदान करता है उसके पितर देवलोक में जा निवास करते हैं और हे धरणि! विमलोदक में स्नान करने से मनुष्य देवलोक में जाता है और वहां प्राणत्याग करने से मनुष्य हमारे लोक में प्राप्त होता है॥

एकसौ चौवन का अध्याय॥

इसभांति वाराहजी का वचन सुनि धरणी हाथ जोड़ व नम्र होकर कहनेलगी कि; हे भगवन्! आपके मुखारविन्द से अनेक भांति के तीर्थों का माहात्म्य मैंने श्रवण किया और अनन्त पुण्य देनेहारा तीर्थ व पृथिवी का परिक्रमा माहात्म्य श्रवण किया कि, जिसके श्रवण करने से मनुष्य भवसागर पार होकर उत्तमगति को जाता है परन्तु ये दोनों अब के मनुष्यों के

लिये दुर्घट हैं इससे आप कृपा करके पृथिवी की परिक्रमा का कोई सुगम उपाय वर्णन करें जिससे मनुष्यों का कल्याण होय इसभांति धरणी की विनयवाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे भद्रे! पृथिवी में चारोंदिशा की परिक्रमा करना इन मनुष्यों को अत्यन्त दुर्लभ है क्योंकि यह भूमण्डल समुद्रवलय साठि करोड़ योजन प्रमाण है जिसका साक्षी केवल आकाशही है और नहीं होसक्ता इसलिये प्रथम इस पृथिवीमण्डल की परिक्रमा वायुने किया फिर ब्रह्माजी, लोमशमुनि, नारदजी, ध्रुवजी, जाम्बवान्, रावण और हनुमान्जी इन्हों ने किया और वालिनामक किष्किन्धा के रहनेवाले वानरने किया फिर सुग्रीव, मार्कण्डेय व युधिष्ठिर आदि पाण्डवों ने प्रदक्षिणा किया और हे धरणि! अब अल्पबुद्धि व अल्पपराक्रमवाले मनुष्यों से पृथिवी की परिक्रमा मन से करना दुर्लभ है और साक्षात् करना किसभांति होसकता है इसलिये हे धरणि! सातद्वीपों करके युक्त व समुद्रों के साथ पृथिवी की परिक्रमा किया चाहे व श्रीमथुराजी की परिक्रमा करे जो पुरुष मथुरा में जायके परिक्रमा करता है उसे सातोंद्वीप की प्रदक्षिण का फल होता है इसलिये यत्नपूर्वक मथुरापुरी की प्रदक्षिणा करनी उचित है इसभांति वाराहजी का वचन सुनि धरणी कहनेलगी कि, हे भगवन्! किस विधान से मथुरा की प्रदक्षिणा करने से पृथिवीमण्डल की प्रदक्षिणा का फल होता है सो आप कृपा करके कथन करें इसभांति पृथिवी की प्रार्थना सुनि वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! जो तुम प्रश्न करती हो यही प्रश्न प्रथम सप्तऋषियों ने ब्रह्माजी से किया कि, हे ब्रह्मन्! पृथिवीमात्र की परिक्रमा में जो फल होता है वही फल किसीप्रकार थोड़ेही परिश्रम करने से होय सो आप वर्णन करें यह सप्तऋषियों की वाणी सुनि ब्रह्माजी कहनेलगे कि; हे ऋषीश्वरो! संपूर्ण देवताओं में संपूर्णतीर्थों में और संपूर्ण दानों में

जो फल होता है व सहित सागर पृथिवी की परिक्रमा में जो फल होता है सो मथुरामण्डल की परिक्रमा में होता है यह हम सत्य करके कथन करते हैं यह सुनि निश्चय कर सप्तऋषि निज २ स्थान को गये हे धरणि! कार्त्तिकमास की शुक्लनवमी को जो मथुरा की परिक्रमा करते हैं वे सब पापों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होते हैं॥

एकसौपच्चपन का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि, हे धरणि! अब परिक्रमाविधान मथुराजी का वर्णन करते हैं सो श्रवणकरो कार्त्तिकमास की शुक्लाष्टमी को मथुरा में जाय विश्रान्तितीर्थ में स्नानकर पितर और देवताओं का पूजनकर जनार्दनजी का दर्शनकर व्रत करे वा थोड़ासा भोजनकर ब्रह्मचर्य से जागरणपूर्वक रात्रि व्यतीत करे प्रातःकाल उठि मौनहो स्नानकर सन्ध्या तर्पण से निवृत्त हो ताम्रपात्र में तिल, अक्षत, कुशा को ले संकल्पकरे कि, हे परमेश्वर! जिस विधानसे और जिसफल के लिये ध्रुव आदि महात्माओं ने श्रीमथुराजी की प्रदक्षिणा किया है उसी रीति से हम करते हैं यह कहकर सूर्योदय समय में यात्रा का प्रारम्भकरे प्रथम दक्षिणकोटितीर्थ में जाय पवित्र होकर श्रीहनुमान्‌जी का पूजन कर प्रसन्नकर आज्ञा लेय कि हे भगवन्! हम मथुरा की परिक्रमा करते हैं आपकी कृपा से सफल होय और जिसभांति रामजी की यात्रा में सबभांति आपने कार्यसिद्ध किया है उसी भांति आपकी कृपा से हमारी यात्रा निर्विघ्न पूर्ण होय इसभांति हनुमान् व गणेशजी की प्रार्थना कर चन्दन, पुष्प, माला, धूप, दीप और नैवेद्य आदि से पूजनकर वहां से जाय पद्मनाभ भगवान् का दर्शन व पूजन करे फिर जाय वसुमती देवी का दर्शन व पूजनकर अपराजिता देवी का दर्शनकर कंसवासनिका

देवी, औग्रसेनीदेवी, चर्चिकादेवी, दानवोंकी संहारकरनेहारी बघूटीदेवी और जयदादेवी इन्हों का दर्शन व पूजनकरे फिर गृहदेवी व वास्तुदेवी का पूजनकर आज्ञाले मौन हो दक्षिण-कोटितीर्थ में जाय स्नान पितृतर्पण कर देवताओं के दर्शन व प्रणामकर विशुद्धानामदेवी का दर्शनकरे हे धरणि ! फिर जो बालक्रीड़ावसर में गोपों के साथ श्रीकृष्णजीने जहां २ क्रीड़ा की हैं वे २ स्थान संपूर्ण पाप के दूर करनेहारे तीर्थ हैं वहां जाय स्नान तर्पणकर अर्कस्थल, वीरस्थल, कुशस्थल, पुण्यस्थल और महास्थल में जाय पापनिवृत्त होने के लिये स्नान व तर्पण करे हे धरणि ! इनतीर्थों के दर्शन से मनुष्य ब्रह्मलोक में जा विहारकरता है फिर सब पातक दूर करनेहारे मुक्तिनाम तीर्थ में जाय स्नान करे जिस में पूर्वकाल में अवश्य मर करके मुक्तिको प्राप्तहुआ उसका दर्शनकर शिवकुण्ड में जाय स्नानकर शिवपूजनकर मल्लिका का दर्शनकरे फिर कदम्बवनका दर्शनकर दक्षिणदिशा में जाय चर्चिकादेवीका दर्शनकरे जो चर्चिका योगिनी के गणोंकरके युक्त सदा मथुरा की रक्षाकरती है फिर वहां से जाय अस्पृश्या और स्पृश्या दो देवी लोकपूजित बालकों की रक्षाके लिये सदा निवास करती हैं उन का पूजनकर पाप का हरनेहारा वर्षखात नाम कुण्ड में स्नान व तर्पण करे फिर क्षेत्रपाल का दर्शनकर वहां से जाय भूतेश्वर महादेव का दर्शनकरे तब मथुरा की प्रदक्षिणा सफल होती है जहां श्रीकृष्णजीने बालकों के साथ सेतुबन्ध क्रीड़ा किया है उसका दर्शनकर महापातक दूर करनेहारा बालहृदनाम तीर्थका दर्शनकरे जहां बालकों के साथ जलक्रीड़ा कृष्णजी ने किया है हे धरणि ! जिसके दर्शन करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त होता है वहां से जाय सब पापों के हरनेहारे कुकुटतीर्थका दर्शन करे जिसके दर्शन से कैसहू पापात्मा होय वो जीवन्मुक्त होता है वहां से जाय स्तम्भोच्चयनाम कृष्णमुक्ति का

देनेहारा स्तम्भ उसका दर्शन व परिक्रमाकर जाय उस भूमि का दर्शनकरे जहां देवकी व वसुदेव दोनों ने गर्भकी रक्षाके निमित्त शयनकिया है जिसके दर्शन से महापातक निवृत्त होते हैं वहां से चल नारायणजी के स्थान को जाय जहांकी यात्रा करनेसेही मुक्ति होती है वहां जाय परिक्रमा दर्शन पूजन आदिकर विधि-विनायक का दर्शन करे फिर जाय कृष्ण करके पूजित कुब्जिका और वामनी इन दो ब्राह्मणियों के दर्शन करे वहां से आज्ञा लेकर गर्तेश्वरनाम शिवका दर्शन व पूजनकरे जिसके दर्शन व पूजन से यात्रा सफल होती है हे धरणि! यात्रा सफल होने के लिये महाविद्येश्वरीदेवी का दर्शन करे जिसने श्रीकृष्णकी रक्षा की है फिर वहां से चल प्रभावल्लीनाम देवी का पूजन व दर्शनकरे हे धरणि! जब गोपों के साथ सहित बलभद्र कंसके मारने के लिये कृष्णजी ने सम्मतिकिया तो वहां देवीने प्रकट हो रक्षाकर कंस को विध्वंस किया तब श्रीकृष्णजीने संकेतेश्वरी नाम करके देवी का स्थापन किया जिसके दर्शन व पूजन से सब कामना सिद्ध होती हैं वहां से चल गोकर्णेश्वरकुण्ड में स्नानकर शिवजी का दर्शन करे जिसके दर्शन से सब पातक दूर होते हैं फिर सरस्वती नदी का दर्शन स्नान और तर्पणकर विघ्नराज नाम गणेश का दर्शनकरे जिसके दर्शन से अनेकविघ्न दूर होते हैं वहां से चलकर साध्वीनाम गङ्गाका दर्शनकरे जिसके दर्शन से अनेक पातकों से निवृत्त हो कल्याण को प्राप्त होताहै फिर रुद्र महालय नाम तीर्थ में एकरात्रि निवास करने से यात्रा सफल होती है और वहां से चल उत्तरकोटि में जाय गणेशजी का दर्शन व पूजनकरे जहां श्रीकृष्णजी ने गोपों के साथ द्यूत खेलके उन्हों की स्त्री व धन जीताहै व अनेकभांति के हास्यकर गोपोंसे जो २ पदार्थ जीता सोई गोप ल्याइ श्रीकृष्णजी के अर्पण किया वहां दर्शनकर श्रीयमुनाजी में आय स्नानकर पितरों का तर्पण

कर गार्ग्यनाम तीर्थ में आय स्नानकर भद्रेश्वर का दर्शनकर सोमेश्वरतीर्थ में जाय स्नानकर सोमेश्वरजी का दर्शनकरे जिस में यात्रा सफल होय और वहां से चल सरस्वती संगमतीर्थ में जाय स्नान तर्पणकरे वहां यथाशक्ति दान देनेसे विष्णुसायुज्य फल होताहै हे धरणि! सरस्वतीसंगम से चल घण्टाभरण तीर्थ, गरुड़केशवतीर्थ, धारालोपकतीर्थ, वैकुण्ठतीर्थ, खण्डवेलकतीर्थ, मन्दाकिनीसंयमनतीर्थ, असिकुण्डतीर्थ, गोपीतीर्थ, मुक्तिकेश्वर तीर्थ, और वैलक्ष्यगरुड़तीर्थ इन सब तीर्थों में क्रमकरके स्नान, तर्पण, दान आदि सत्कर्म करताहुआ विष्णुका दर्शन कर अविमुक्तेशनाम जो सप्तऋषियों करके स्थापितहैं वहां जाय दर्शनकर हाथ जोड़ यह प्रार्थनाकरे कि; हे भगवन्! यह जो मथुरा की परिक्रमा कररहेहैं सो हमारी सफल होय इसभांति क्षेत्र के स्वामी जो शिव हैं उनकी प्रार्थनाकर जाय विश्रान्तितीर्थ में स्नान और तर्पणकर गतश्रम भगवान् का दर्शन व प्रणामकर जाय सुमङ्गलादेवी का दर्शनकर निजयात्रा का सफल होना प्रार्थना कर यह मन्त्र हाथ जोड़ पढ़े (सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। यात्रेयं त्वत्प्रसादेन सफला मे भवत्विति) यह प्रार्थनाकर पिप्पलादेश्वर शिव पिप्पलाद मुनि करके पूजित इनका दर्शन कर फिर विश्रान्त को जाय वहां थोड़ीदेर विश्रामकर पृथिवीको गोमय से लीपि व पार्थिव एकशिवलिङ्ग बनाय पूजनकर वैसेही रहने देय विसर्जन न कर वहां से जाय देवी का दर्शनकरे जिस देवी को कंस के दुर्मन्त्र जानने के लिये श्रीकृष्णजी ने स्थापन किया है वहां से वरके देनेहारे सुखवासनाम देवता का दर्शनकर आर्तिहरानाम देवी का दर्शनकरे जिसको भय से डरेभये श्रीकृष्णजी ने स्थापित किया जिसके दर्शन से अनेकभांतिका विघ्न भय निवृत्त होता है फिर हे धरणि! वज्राननजी का दर्शन करे जो चाणूर मुष्टिक आदि दैत्योंके वध निमित्त वज्ररूप धारण

किया है जिसके दर्शन से कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं जो न प्राप्त होय अर्थात् जो इच्छाकरे सोई प्राप्त होता है वहांसे चल माथुरमनुष्यों के कुलके स्वामी वर के देनेहारे सूर्य भगवान् का दर्शनकर यात्रा समाप्तकरे हे धरणि ! इसभांति कार्त्तिकमास के शुक्लपक्ष में नवमी को जो मनुष्य मथुरा की परिक्रमा करता है वो अपने प्रथम दशपुरुषों को व आगेवाले दशपुरुषों को एक आप इसभांति इक्कीसपीढ़ियों के साथ विष्णुलोक को प्राप्त होता है हे धरणि ! परिक्रमा के समय में मनुष्य पृथिवी में जितने पद चलता है उतनेही उस कुल के मनुष्य सूर्यमण्डल में जाय निवास करते हैं हे धरणि ! जो पुरुष ब्राह्मणवध करनेवाले हैं और जो मद्यपान करते हैं व चोरी करते हैं और जिन्होंने व्रतधारण करके वे समाप्तकिये बीचही में त्याग दिया है और अगम्यास्त्री के गमनकरनेवाले व क्षेत्र स्त्री के हरनेवाले भी मनुष्य मथुराजी की प्रदक्षिणा यात्रा करनेसे सब पापों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होते हैं हे धरणि ! और तो मथुराजी की प्रदक्षिणा का माहात्म्य कहांतक वर्णनकरें यदि कोई मनुष्य परिक्रमा करके समाप्त किया है उसके दर्शन करनेसे व स्पर्श करनेसे अन्यदेश के रहनेवाले मनुष्य भी पवित्र होजाते हैं जो दूर रहनेवाले मनुष्य प्रीतिपूर्वक इस प्रदक्षिण माहात्म्य को श्रवणकरें वो भी सब पापों से छूटकर उत्तमगति को प्राप्त होते हैं ॥

एकसौ छप्पन का अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक ! इसभांति वाराहजी का वचन सुनि आनन्द होकर धरणी कहनेलगी कि; हे भगवन् ! जो मनुष्य धर्म से विमुख व ज्ञानवर्जित मूढ़ हैं उन्हों की गति किसभांति होगी वो अवश्य नरकभागी होंगे इसलिये आप दोनों के ऊपर कृपा करके विचारपूर्वक ऐसा उपदेश देवें कि

जिसके करने से अधमों की भी सत्गति होय यह धरणी की वाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि ! जो मनुष्य सबधर्मों करके हीन दुराचारी हैं उन्हों के लिये नरक का भय हरनेहारी व पाप के दूरकरनेहारी मथुरा विराजमान है जिसके दर्शन करने से अनेकभांति के पापात्मा पवित्र होकर उत्तमगति को प्राप्त होते हैं और जो मनुष्य पापी होय वा पुण्यात्मा होय मथुरा का दर्शनकरे या मथुरा में निवासकरे वो किसीभांति नरक में नहीं जाता उसको अवश्य स्वर्गही होता है और हे धरणि ! मधुवनआदि जो बारहवन हैं उन्होंका दर्शन जो करता है उस को स्वप्नमें भी नरकबाधा नहीं होती और जो शास्त्र की आज्ञानुसार विधिपूर्वक मथुरा की यात्रा करते हैं वो सब पापोंसे मुक्त होकर स्वर्गवास पाते हैं॥

एकसौ सत्तावन का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि ! मथुरा के उत्तर जो जम्बूद्वीप का भूषणरूप चक्रतीर्थनाम तीर्थ है उसका वृत्तान्त श्रवणकरो किसी समय महोदयनामक नगर का निवास करने वाला वेदपाठी ब्राह्मण निजपुत्र को साथ लेकर शालग्रामक्षेत्र को गया और वहां जाय इन्द्रियों को जीति धर्म में तत्पर होकर त्रिकालस्नान और देवताओं का दर्शन करताभया शालग्रामतीर्थ में निवास करनेलगा वहां कुछ दिन के रहनेसे कोई एक तपःसिद्ध ब्राह्मण वहां बहुतकाल से रहता था उसके साथ प्रीति होगई तब तो वह सिद्ध कल्पग्राम की महिमा वर्णन किया करता और वो पिता पुत्र दोनों श्रद्धासे सुना करते इसभांति परस्पर बहुतकाल व्यतीत होने से किसीदिन वो कान्यकुब्जकुलभूषण सिद्ध ब्राह्मण कल्पग्राम जानेका विचारकरनेलगा तबतो पिता पुत्र दोनों ब्राह्मण प्रार्थनापूर्वक सिद्धब्राह्मण से कहनेलगे कि

आप हमारे मित्र हैं हम आपके समीप आजतक बड़े आनन्द से कालक्षेप किया अब आप निजनिवासभूमि कल्पग्राम को जाना विचारते हैं इतनी हमारे ऊपर कृपा करें कि हमको भी साथही लेचलें यह ब्राह्मण का वचन सुनि सिद्धब्राह्मण बोला कि; हे मित्र! सिद्धों के मार्ग में सिद्धही जासक्के हैं इसलिये तुम्हारे मित्र का याच्ञाभङ्ग हम किसभांति करें अब निजतपोबल से कल्पग्राम को लेचलते हैं इतना कहकर दहनेहाथसे ब्राह्मण को और वामहाथ से ब्राह्मण के पुत्रको ले आकाशमार्ग होकर पक्षियों के तुल्य आय कल्पग्राम में शीघ्रही प्राप्त भया वहां निवास ले तीनों ब्राह्मण रहनेलगे इसभांति कुछकाल व्यतीत होने से वृद्धब्राह्मण के शरीर में रोग उत्पन्न हुआ उस रोग से पीड़ित हो घबराय मृत्यु का निश्चयकर निजपुत्र से कहनेलगा कि हे पुत्र! अब शीघ्र मृत्यु होनेवाली दीखती है इसलिये हमको श्रीगङ्गाजी के समीप लेचलो विलम्ब न करो यह पिता की वाणी सुनि पुत्र उसीसमय श्रीगङ्गाजी के समीप लेगया व लेजाय वहां पिता के मोह करके पुत्र रोदनकरनेलगा और पिता भी पुत्र के मोहसे रोनेलगा इस भांति दोनों मोहाविष्ट हो शोक की वार्ताकरतेरहे व जब भोजन का समय आता तब कल्पग्राम में आय पुत्र भोजन कर फिर पिता के समीप चलाजाता है धरणि! जो पहले सिद्धब्राह्मण को कह आये हैं उस कान्यकुब्ज के एक उत्तमकन्या थी और विवाह के योग्य थी परन्तु उस कन्या के रुचि का पति कोई न दीखता इसलिये कन्या ने किसी को अपनी आत्मा न दी इसीसमय भावीवश वह ब्राह्मणपुत्र भोजन के लिये उस सिद्ध ब्राह्मण के घर में आया उस ब्राह्मणने उसके पिता का वृत्तान्त पूछि आदरपूर्वक निज कन्याको देदिया और यह कहा कि; हे विप्रवर्य! तुम यहांहीं निज स्त्री के साथ निवास करो यह निज श्वशुर की वाणी सुनि वहांहीं सिद्ध के

स्थान में रहनेलगा और वहांसे जायके नित्य पिता की सेवा कर आता और वहांहीं श्वशुर के समीप रहाकरता इसीभांति बहुत काल बीतने से उसका पिता बहुत दुःखी होगया उसे देखि पुत्र भी पिता के दुःख से दुर्बल होगया किसी दिन श्वशुर निज जामाता को दुर्बल देखि हाल पूछनेलगा तबतो दुःखी हो सिद्ध श्वशुर से ब्राह्मण कहनेलगा कि हे महाराज! मैं पिता के क्लेशसे अत्यन्तदुःखी हूं इसलिये आप कृपा करके मेरे पिता की मृत्यु कथन करें कि कब उनकी मृत्यु होगी यह निज जामाता का वचन सुनि श्वशुर कहनेलगा कि, हे ब्राह्मणोत्तम! तुम्हारे पिता ने नित्य शूद्रों का अन्नभोजन किया है उस आहारदोष से मृत्यु बहुत दूर है अर्थात् क्लेशभोग करना अभीतक बहुत है सो शूद्रान्न तुम्हारे पिताके पैरों में है और ऊपर नहीं है जब शूद्रान्न निवृत्त होगा तब मृत्यु होगी इसभांति ब्राह्मण ने निजश्वशुर का वचन सुनि जाय सबवृत्तान्त पितासे निवेदन किया उसको सुनि आत्मा को निन्दा करताहुआ बड़े खेद को प्राप्तभया जब उस वृद्धब्राह्मण का पुत्र पिता के समीप से श्वशुरगृह को भोजन के लिये आया तब वह वृद्धब्राह्मण इकल्ला दुःख करके अत्यन्त पीड़ित अपमृत्यु करना विचारि निजस्थान से उठ धीरे धीरे जाय गङ्गाजी के तटपर बैठगया व इधर उधर देखि उसने एक बड़ा पाषाण लेकर निज दोनों पैरों को तोड़ दिया और उसी पीड़ा से व्याकुल होकर शरीर को भी छोड़ दिया तब तो हे धरणि! उसका पुत्र निज श्वशुरगृह से भोजन करके जब पिता के समीप आया वहां यह अन्तअवस्था पिता की देखि शोकग्रस्त हो बड़ी देरतक रोदन करतारहा पीछे से दैवभावी अवश्य मानिके शोच विचार यह कहने लगा कि, इनका प्रेत-संस्कार करना तो उचित नहीं क्योंकि आपस्तम्बऋषि स्मृति-शास्त्र के आचार्य ने कहा है कि जिसकी मृत्यु सर्प से होय वा

शृङ्गवाले जीव से वा व्याघ्रसिंह से होय अथवा निजहस्त से अपमृत्यु होय वह मनुष्य संस्कार योग्य नहीं होता है और जो आत्मघात करते हैं वे पुरुष नरकभागी होते हैं उनका प्रायश्चित्त करना चाहिये व तिलाञ्जली देना अयोग्य है यह विचार निजपिता का शरीर गङ्गाजी में छोड़ जाकर श्वशुर के पास पहुँचा उसे देखि श्वशुर उसका कहनेलगा कि; हे पुत्र! अब यहां आने के योग्य तुम नहीं हो ब्रह्महत्यारूप पातक तुमको प्राप्त हुआ यह सुनि वह ब्राह्मण निजश्वशुर से कहनेलगा कि; जन्म से लेकर आजतक हमने ब्राह्मणवध नहीं किया किस अपराध से हमको ब्रह्महत्या प्राप्त भई? इसभांति जामाता का वचन सुनि श्वशुर कहनेलगा कि; जो तुमने निज पितावृद्ध को मरवे का उपाय बताया उस करके ब्रह्महत्या दोषभागी भये इसलिये पापी के समीप बैठना, भोजनकरना, बोलना और शयन करना एक वर्ष अनुचित है शास्त्र में लिखा है कि पतित के संसर्ग से संसर्गी भी पतित होजाता है यह सुनि निज श्वशुर से कहने लगा कि; हे महाराज! अब हमको क्या करना उचित है? यह सुनि सिद्धब्राह्मण बोला कि, हे बुद्धिमन्! अब कल्पग्राम को छोड़कर मथुराजी को जावो वे मथुरा और भूमि में तुम्हारी शुद्धता नहीं होगी यह सुनि उसी समय कल्पग्राम को त्यागि मथुरा को गया वहां जाय कोई कुशिक ब्राह्मण के समीप निवास करनेलगा जिसके यहां निरन्तर यज्ञ होता था और दो हजार ब्राह्मण नित्य भोजन करते थे वहां निवासकर ब्राह्मणों का उच्छिष्ट भोजनकर काल व्यतीत करनेलगा व चक्रतीर्थ में नित्य त्रिकाल स्नान भी करने लगा हे धरणि! और कहीं भिक्षा को भी नहीं जाता और ब्राह्मणों का उच्छिष्ट बिना और भोजन भी नहीं करता इसभांति तो इस ब्राह्मण ने मथुरा में निवासलिया और इसका श्वशुर कल्पग्राम में चिन्ताकरनेलगा कि; मेरा

जामाता मथुरा को गया और कन्या घरमें दुःखिनी होरही है अब क्या करना उचित है ? यह शोच विचार दिव्यदृष्टि से निज जामाता का सारा वृत्तान्त विचार अपनी कन्या से बोला कि हे पुत्रि! अब तुम्हारा पति निष्पाप है इसलिये मथुरा को जाय उसको ल्यावो इसभांति निज पिता की आज्ञा मानि सिद्ध की कन्या निजपति के समीप मथुरा को चली व जाकर निज पति से मिल भोजन को दे सारा दिन पति के समीप रह सायंकाल पिताके समीप चली जाती इसभांति कल्पग्राम से दिन २ प्रति भोजन ले जाय पति को दिया करती और वह ब्राह्मण स्त्री का दिया भोजन कर पात्र को चक्रतीर्थ में गेर यज्ञशाला में निवास कियाकरता इसभांति छः महीने व्यतीत होने से वहां यज्ञभूमि के ब्राह्मण उससे पूछने लगे कि; हे ब्राह्मण! कहां से आये हो व कहां निवास करते हो क्या भोजन करते हो ? यह सुनि सब ब्राह्मणों से हाथ जोड़ नम्र होकर निज वृत्तान्त आदि ही से कह सुनाया उसे सुनि एकत्र होकर सब ब्राह्मण कहनेलगे कि; हे ब्राह्मण! अब तू निष्पाप होकर शुद्धहुआ हे द्विज! इस चक्रतीर्थ के प्रभाव से सब पाप तुम्हारे छूटगये और तू सिद्ध भया इसभांति यज्ञ के ब्राह्मणों का वचन सुनि हर्ष को प्राप्तहो जाय चक्रतीर्थ में स्नानकर ब्राह्मणों के समीप फिर आया कि; उसी समय कल्पग्राम से ब्राह्मणी भोजन लेकर प्राप्त भई व आतेही प्रसन्न हो निजपति से कहने लगी कि; हे स्वामिन्! आपकी हत्या निवृत्त होगई अब प्रीति से आप भोजनकरें इस भांति निजस्त्रीका वचनसुनि ब्राह्मण कहनेलगा कि हे प्रिये! आज तक यह वाक्य तुमनें कभी न कहा अब किस विचार से कहती हो यह पतिका वचन सुनि पति से बोली कि महाराज! अपराधी मनुष्य के साथ बातचीत करने से संसर्गदोष होताहै इसलिये आजतक हम कभी वचन नहीं बोलीं अब आप को निष्पाप

देखि कहती हूं हे ब्राह्मणोत्तम! इस चक्रतीर्थ के प्रभाव से आप का पाप निवृत्त भया अब आप कृपाकरके कल्पग्राम को सुशोभित कीजिये हमारे साथ चलिये यह निज प्रिया का वचन सुनि अपने को कृतकृत्य मानि स्त्री के साथही कल्पग्राम को जाय निज श्वशुरको प्रणामकर आनन्द से रहनेलगा वाराहभगवान्‌जी कहते हैं कि; हे धरणि! भद्रेश्वरजी का दर्शन व चक्रतीर्थ का स्नान अनेकभांति के पातकों का दूर करनेहारा है कि जिस चक्रतीर्थ में मनुष्य एकव्रत व स्नान करने से ब्रह्महत्यासे मुक्त होता है तो उसका माहात्म्य कौन कहने में समर्थ है हे धरणि! और तो कहां तक कहें चक्रतीर्थ के समीप कीट व पतङ्ग भी मरें तो मुक्त होते हैं॥

एकसौअट्ठावन का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! अब हम वैकुण्ठतीर्थ का माहात्म्य वर्णन करते हैं सो श्रवण करो जो पूर्वही मिथिलापुरी के ब्राह्मण का वृत्तान्त भया है राजा जनककरके पालित जो मिथिलापुरी है वहां के कई मनुष्य तीर्थयात्रा के लिये चले चलते २ व तीर्थों के दर्शन करते २ शूकरक्षेत्र में आये व वहां से चले तो रास्ते में मथुराजी के दर्शन की भक्ति उत्पन्न भई तब तो चारोंवर्ण के लोगों ने मथुरा में आय वैकुण्ठक्षेत्र में निवास किया उन यात्रियों में एक ब्राह्मण ब्रह्महत्या करके पीड़ित कि जिसके हाथसे रुधिर की धारा बहा करती और सब मनुष्य देखते उसने तो आतेही जो वैकुण्ठतीर्थ में स्नान किया उसी समय वह रुधिर की धारा निवृत्त होगई इस व्यवस्था को देखि साथ के यात्री आश्चर्य करनेलगे कि इसीसमय कोई देव आय करके आकाश में बोला कि, आश्चर्य क्यों करतेहो वैकुण्ठतीर्थ के प्रभाव से स्नान से इसकी ब्रह्महत्या दूर भई यह कह वह देव

अन्तर्धानभया व सब यात्रियों ने तीर्थ का चमत्कार देखि ईश्वर की महिमा को प्रणाम कर मथुरापुरी को सब तीर्थों से अधिक मानते भये कि, जिसके स्नानमात्रही से मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर विष्णुलोक को जाता है सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! वाराहभगवान्‌जी इसभांति वैकुण्ठतीर्थ की महिमा सुनाय कहनेलगे कि; हे धरणि! अब हम असिकुण्डनामतीर्थ का माहात्म्य वर्णन करते हैं सो श्रवणकरो व तीर्थों में उत्तम गन्धर्वकुण्डनामक तीर्थ वर्णन करते हैं जिसके स्नान करने से मनुष्य गन्धर्वलोक को जाता है और वहां प्राणत्याग करने से हमारे लोक को आता है हे धरणि! मथुरामण्डल का प्रमाण बीस योजन है इस मण्डल को कमल का स्वरूप जानना चाहिये जिस कमल के कर्णिकास्थान में क्लेश के दूर करने हारे केशवभगवान् स्थित हैं इसलिये जिन मनुष्यों की कर्णिका स्थान में मृत्यु होय वे वैकुण्ठभागी होते हैं व आठों दिशामें जो दलहैं उनमें भी प्राणत्याग होनेसे मुक्ति होतीहै जिस मथुरारूपी कमल के पश्चिमदल में गोवर्द्धननिवासी श्रीहरिभगवान्‌जी स्थितहैं जिनके दर्शन से मुक्ति होती है और उत्तरदल में श्री गोविन्दभगवान् हैं जिनके दर्शन करने से फिर संसारसागर में मनुष्य जन्म नहीं लेता व जिस कमल के पूर्वपत्र में विश्रान्ति नाम करके ईश्वर स्थितहैं जिनके दर्शन करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर कैवल्यनाम मोक्षको प्राप्त होताहै और हे धरणि! उस कमलके दक्षिणदिशाके दलमें हमारी मूर्तिहै शूकराकार दिव्यमूर्ति जिसके दर्शन करने से मनुष्य ब्रह्मलोक में जाय ब्रह्माजी के साथ विहार करताहै जिस प्रतिमाको हे धरणि! सत्ययुग में मांधाता नाम राजाको बड़ातप करनेसे हमने प्रसन्न होकर वह मूर्ति दिया व राजा मुक्तिकी वाञ्छासे उस मूर्तिकीपूजा हमेशा किया करता जिससमय लवणासुर मारागया उससमय यह

हमारी मूर्ति मथुरा में आई यह मूर्ति बड़ी विलक्षण धातुमयी है इसका निर्माण बड़े तप के प्रभाव से कपिलऋषि ने किया है व निर्माण करके नित्य २ पूजा ध्यान किया करते किसी समय इन्द्रजी ने कपिलजी का बड़ा आराधन किया तब तो कपिलजी प्रसन्न होकर इन्द्र से बोले कि; वर मांगो यह कपिल की प्रसन्न वाणी सुनि इन्द्र ने हमारी मूर्ति मांगी तब तो " एवमस्तु " कह करके मूर्ति को देदिया उसे लेकर इन्द्र स्वर्ग को गया वहां मणिमन्दिर में स्थापित कर पूजने लगा इसीभांति बहुतकाल व्यतीत होने से रावणनाम राक्षस प्रबल होकर स्वर्ग जीतने के लिये आय इन्द्र से युद्ध किया व बड़े पराक्रम से इन्द्रको जीति स्वर्गको ले इन्द्र के स्थान को जब सँभालने लगा तब तो मणिमन्दिर में कपिलवाराह को देखा व देखतेही मोहितहो पृथिवी में साष्टाङ्ग दण्डवत्कर हाथ जोड़ कहनेलगा कि; हे माधव, हे धरणीधर, हे हृषीकेश, हे हिरण्याक्षविदारण, हे वेदगर्भ ! तुम्हारे प्रणाम है आपने कूर्म मत्स्य आदि अनेकरूप धारणकर मधुकैटभ आदि दैत्यों का बध किया इसलिये आपका अमित प्रताप देखकर मेरे नेत्र व बुद्धि स्थिर नहीं होती हे भक्तों के अभयदाता, हे देवदेव ! भक्ति करके नम्रहुआ २ मैं प्रणाम करता हूं मेरे ऊपर आप प्रसन्न होवें इसभांति रावण की स्तुति सुनि सौम्यरूप धारणकर लोकविख्यात कपिलवाराह बोले कि; हे असुर ! तू तो महारजोगुणी है इसभांति निर्मलबुद्धि कैसे भई यह सुनि राक्षस कहनेलगा कि; हे भगवन् ! यह बुद्धि आपही के दर्शन से उत्पन्न भई है यह कहि व समीप जाय साथ लेजाने के विचार मूर्ति को उठानेलगा तब तो बहुत पराक्रम करनेसे भी वह मूर्ति नहीं उठी यह देखि विस्मित होकर कहनेलगा कि; जिन भुजाओंसे शिवजीके सहित कैलासको उठाया उन्हीं भुजाओंसे यह मूर्ति छोटीसी नहीं उठती यह बड़ा आश्चर्यहै हे भगवन् !

कृपा करके अपनी माया निवृत्तकर आप लघुरूप धारणकरें जिसमें मैं आपको लङ्का ले चलूं यह प्रार्थना सुनि कपिलवाराह लघुमूर्ति धारण किया तब तो हे धरणि! उस मूर्ति को पुष्पक विमान में रख रावण लङ्का को ल्याया और ल्याय निजस्थान में बड़ीप्रीति से स्थापनकर पूजने लगा इसभांति बहुत दिन व्यतीत होनेसे अयोध्या के महाराज दशरथ के पुत्र रामचन्द्र रावणके बध करने को लङ्का में आये व रावण को मार विभीषण को लङ्का का राज्य दे व कपिलवाराहकी मूर्ति ले अयोध्या को ल्याये तिसके कुछ काल व्यतीत होने से शत्रुघ्नको लवणासुर के बध करनेको रामचन्द्र ने आज्ञा दी तब तो शत्रुघ्नने आय लवणासुर का बध व मथुरापुरी का निर्माणकर सारावृत्तान्त जाय श्रीरामचन्द्र से निवेदन किया उसे सुनि प्रसन्नहोकर रामचन्द्र कहनेलगे कि; हे शत्रुघ्न! जो तुम्हारी वाञ्छा होय सो वर मांगो इस तुम्हारे पुरुषार्थ से हम बहुत प्रसन्न हैं यह श्रीरामचन्द्र की प्रसन्न वाणी सुनि शत्रुघ्न बोले कि हे प्रभो! यदि आप प्रसन्न हैं तो जो मूर्ति लङ्का से कपिलवाराहकी लेआयेहो सो हमको देव तो हम मथुरामें स्थापन करेंगे यह सुनि प्रसन्न होकर रामचन्द्र बोले कि हे शत्रुघ्न! कपिलवाराहको लेजाय मथुरा में स्थापितकरो व मथुरापुरी आजसे लोकविख्यात होगी व धन्य होगी और मनुष्य धन्य होंगे जो इस मूर्तिका दर्शन करेंगे और इस मूर्तिका दर्शन, पूजन और ध्यान आदि जो करेंगे वे सबपापों से मुक्त होकर वैकुण्ठधाम को प्राप्तहोंगे यह श्रीरामचन्द्र की वाणी सुनि शत्रुघ्न प्रसन्न होकर कपिलवाराह को मथुरा में ले आकर दक्षिणदिशा में स्थापनकर पूजन किया हे धरणि! गया में पिण्डदान करने से जो फल होता है और ज्येष्ठ में पुष्कर के स्नानमें जो फल मिलता है सोई फल कपिलवाराह के दर्शन में होता है और सोई फल विश्रान्ति के दर्शन में गोविन्द के दर्शन में हरिभगवान् के

दर्शन में होता है सूर्यके उदय में हमारा तेज सदा विश्रान्ति में निवास करता है मध्याह्न समय में दीर्घ विष्णु में निवास व सायंकाल में हे धरणि! हमारा तेज केशवजी में स्थित होता है यह भेद हमने आजतक किसी से कथन नहीं किया हे धरणि! तुम हमारी भक्ताहो व प्रिया हो इसलिये कथन किया॥

एकसौउनसठि का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहतेहैं कि; हे धरणि! श्रीमथुराजी के पश्चिम भाग में परम दुर्लभ गोवर्द्धननाम क्षेत्र है जो मथुरा से पश्चिम दो योजनपर विराजमान है जिसकी चारों दिशाओं में चार तीर्थ हैं जिसका नाम पूर्वदिशा में रौद्रतीर्थ दक्षिणदिशा में यमतीर्थ पश्चिमदिशा में वरुणतीर्थ और जिस गोवर्द्धन की उत्तरदिशा में कुबेरतीर्थ है और पूर्वदिशा में जो रुद्रतीर्थ है उसका दूसरा नाम इन्द्रतीर्थ भी है उसमें स्नान करने से जो मनुष्य शरीर त्याग करनेपर इन्द्रलोक को जाता है और इसीभांति यमतीर्थ के स्नान से यमलोक का भय निवृत्त होता है व वरुणकुण्ड के स्नान से वरुणलोक होता है कुबेरकुण्ड के स्नान से कुबेरलोक को प्राप्त होता है और इन चारोंकुण्डों के समीप प्राण त्यागकरे तो उन लोकों में विहारकर अन्तमें हमारे समीप आवे हे धरणि! उन चारों कुण्डों में क्रमसे स्नान कर अन्नकूट का दर्शनकर प्रदक्षिणा करनेसे मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर वैकुण्ठ को जाता है जो पुरुष मानस गङ्गा में स्नानकर गोवर्द्धनपर्वत में हरिजी का दर्शन और अन्नकूटेश्वर का दर्शन प्रदक्षिणा करने से फिर संसार में जन्म नहीं पाता व साक्षाद्विष्णुमूर्तिहोकर विमानमें बैठि वैकुण्ठधाम को जाताहै और सोमवती अमावस्या को गोवर्द्धन में जाय पितरों को पिण्डदान करनेसे मनुष्य राजसूययज्ञ के फल को प्राप्त होता है हे धरणि! गया में पिण्डदान देनेसे पितरों

की जैसी तृप्ति होती है व सद्गति को प्राप्त होतेहैं उसीभांति गोवर्द्धन में पिण्डदान देनेसे फल होताहै और गोवर्द्धन की परिक्रमा व हरिजी भगवान् के दर्शन से राजसूय अश्वमेध यज्ञ का फल होना दुर्लभ नहीं है सूतजी कहते हैं कि, हे शौनक ! इस भांति श्रीवाराहजी का वचन सुनि धरणी कहनेलगी कि; हे भगवन् ! अन्नकूट के परिक्रमाकी रीति व माहात्म्य आप वर्णन करें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि ! भाद्रमास में शुक्लपक्ष की एकादशीको व्रत करके गोवर्द्धनकी प्रदक्षिणा करना चाहिये इसकी विधि यह है कि, प्रातःकाल निजआवश्यकों से निवृत्त होकर सूर्योदय होने से प्रथम मानसगङ्गामें स्नानकर सन्ध्या तर्पण से निवृत्त होकर गोवर्द्धन के शिखर में हरिजी का दर्शनकर जाय पुण्डरीककुण्ड में स्नानकर विधानपूर्वक पितर देवपूजनकर पुण्डरीक भगवान् के पूजनकरने से सबपापों से मुक्त होकर विष्णुभगवान् के धामको प्राप्त होता है फिर हे धरणि ! पुण्डरीककुण्डसे चलकर निर्मल जलकरके पूर्ण अप्सराकुण्ड में जाय स्नान तर्पण से निवृत्त हो अप्सरेश्वर के दर्शन से मनुष्य निष्पाप हो राजसूय व अश्वमेधयज्ञ के फल को प्राप्त होता है फिर वहांसे चल सांकर्षणनाम तीर्थ को जाय जहां श्री बलभद्रजी की वृषभहत्या दूर भई और हे धरणि ! अन्नकूट के समीप शक्र नामक तीर्थ है जहां श्रीकृष्णजी ने इन्द्र का यज्ञभङ्ग किया है जिस कारण इन्द्रने कोप करके व्रजवासियों के त्रास देनेको प्रलय के मेघोंको आज्ञादे घोरवृष्टि कराया जिसके लिये श्रीकृष्ण जीने गोवर्द्धन को उठाय व्रजवासियों की रक्षा की उस स्थान का अन्नकूटनाम है जिसस्थान के दर्शन करने से अनेक जन्मों के पातक दूर होते हैं हे धरणि ! अन्नकूट से चल देवगिरि का दर्शनकरे जिसके दर्शन से व स्नान से वाजपेययज्ञ का फल होताहै और वहां से चल निर्मल जल से पूर्ण कदम्बखण्ड

नाम कुण्ड में जाय स्नान व तर्पणकरे जिससे मनुष्य ब्रह्मलोक को जाता है और श्रीमहादेवजी के कुण्ड में स्नान करने से तर्पण करने से और शिवजी के दर्शन करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर स्वर्ग को जाता है हे धरणि! मानसगङ्गा के उत्तर कृष्णजी का व वृषभरूपी अरिष्टासुर का युद्ध भया है जिसको कोप करके श्रीकृष्णजी ने मारदिया उसीसमय से वृषभहत्या का भय करके श्रीकृष्णजी ने पीड़ित होकर अरिष्टकुण्डनामतीर्थ उस हत्या के दूर करने के लिये प्रकट किया उस वृषभकुण्ड में व राधाकुण्ड में स्नान करने से मनुष्य राजसूय अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त होता है व गोहत्या ब्रह्महत्या आदि महापातक जिसके दर्शन व स्नान से निवृत्त होते हैं व मोक्षराजनाम जो तीर्थ है उसमें स्नान करने से मुक्ति प्राप्त होती है व दर्शनमात्र से सर्व पापमुक्त होते हैं इन्द्रजीने यहां ध्वजारोपण किया है सो इन्द्रध्वजनाम विख्याततीर्थ है जिसके स्नानमात्रही से मुक्ति होती है फिर हे धरणि! इसयात्रा को हरि के निवेदनकर चक्र तीर्थ में स्नानकर व पञ्चतीर्थ कुण्ड में स्नानकर तीर्थयात्रा सफल होने के लिये जाय गोवर्द्धन में रात्रिका जागरण करे यह जागरण एकादशीके रात्रिको कर द्वादशीको प्रातःकाल स्नान सन्ध्या से निवृत्त हो पितरों का पिण्डदान करने से पितर यमबाधा से निवृत्त होकर मुक्तहोते हैं हे धरणि! इसभांति अन्नकूट के परिक्रमा की रीति हमने वर्णन किया यह तीर्थ परिक्रमामाहात्म्य जो प्रीति से श्रवणकरे उसे गङ्गास्नान का फल होता है॥

एकसौ साठि का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! अब और भी वृत्तान्त वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवणकरो जो वृत्तान्त दक्षिणापथ मण्डलनाम भूमि में प्रतिष्ठानपुर में भया है कि जिस

प्रतिष्ठानपुर में धन धान्य करके युक्त बहुकुटुम्बी पुत्र पौत्रादिकों करके भूषित शुशीलनामक वैश्य भया जिसका काल सदा कुटुम्ब के पालन, पोषण और वणिजव्यापार में व्यतीत होता था और इसीभांति संपूर्ण अवस्था व्यतीतभई कभी भूलकरकेभी महात्मा का सत्संग धर्मकथा का श्रवण, तीर्थ स्नान, ब्राह्मण दान और साधुसेवा न किया इसीभांति नीचकर्म में रतहुआ २ शरीर का पालन करता २ कभी कौड़ीमात्र का दान न किया और उस नीच बणिक् की यह दुर्बुद्धि कि आप को तो कौन कहे यदि कोई उसके देखते और भी दान, पुण्य, व्रतआदि उत्तमकर्म कियाचाहे सोभी न करसके इसभांति वह दुःशील बणिक् कालवश हो शरीर को त्याग प्रेतयोनि में प्राप्त हुआ सो प्रेत क्षुधा व पिपासा के दुःख करके व्याकुल खोटे कर्मों का फल भोगता हुआ माड़वारदेश में जा निवासलिया वहां वह प्रेत बहुतकाल रहता कर्मफल भोगनेलगा किसी समय मथुरा के निवास करनेवाला बणिक् व्यापार करने के लिये घर से चल जहां वह प्रेत निवास करता था वहां पहुँचा दैवगति जिस वृक्ष में उस प्रेत का निवास था वहां ही सन्ध्याकाल होजाने से उस व्यापारी बणिक् ने निवासलिया व जब निज आवश्यकों से निवृत्त हो उसने शयन करने का विचार किया तबतो वह प्रेत बड़े हर्ष से व्यापारी के समीप भयानकरूप धारणकर आय प्रकट हुआ व कहने लगा कि; हे मनुष्य! तू हमारे भोजन के लिये यहां आया है मैं अत्यन्त क्षुधा करके पीड़ित होरहाहूं इसलिये आज तेरा मांस खाय व नवीन रुधिरपान करके तृप्त होऊंगा वाराहजी कहते हैं हे धरणि! तब तो वह व्यापारी प्रेत की कठोरवाणी सुनि विनयपूर्वक कहनेलगा कि हे प्रेत! हम कुटुम्ब के पालन के लिये इस कठिनदेश में आये हैं देखो घर में हमारे माता पिता वृद्ध होरहे हैं उन्हों के हम एकही पुत्र हैं व स्त्री

हमारी पतिव्रता है बालक हैं नहीं इसलिये हमारे भक्षण करने से सबकुटुम्ब मृत्यु वश होजायगा यह वचन व्यापारी का सुनि प्रेत कहनेलगा कि; सत्य कहो तुम कहां से आये हो व किस देश में तुम्हारा घर है इस भांति प्रेत की वाणी सुनि वणिक् नम्र होकर कहनेलगा कि; हे प्रेत! लोक विख्यात मथुरा नाम नगरी है जहां यमुनानाम नदी और गोवर्द्धन नाम पर्वत है वहां हमारा निवास है व विभु हमारा नाम है सो हमारे घर में पितृ पितामह आदि बड़ों का धन नष्ट होजाने से दरिद्र हो कुछ थोड़ा धन लेकर व्यापार करने के लिये इस देश में आये यहां भावीवश तुम्हारे नेत्रगोचर भये हे प्रेत! हमारा यह वृत्त है अब जो तुम्हारी इच्छा होय सो करो इतना कहि व्यापारी तो चुप होगया तब तो इस वृत्तान्त को सुनि प्रेत कहनेलगा कि; हे व्यापारी ! तुम्हारा वृत्तान्त सुनि हमारे दया आई अब हमसे निर्भय हो परन्तु कुछ करार करो तो हम तुमको छोड़ें क्योंकि यहां से लौटके मथुरा में जाय हमारा प्रयोजनकरो जो हम कहें हमारा यह कथन है कि यहां से जाय मथुरा में चतुः समुद्रकूप में स्नानकर हमारे नाम से पिण्डदानकर स्नानका फल हमको देकर जहां इच्छाहो वहां जावो यह प्रेत का वचन सुनि विभु कहने लगा कि; हे प्रेत ! धन के विना हम किसीभांति मथुरा में नहीं जासक्के इसलिये इच्छापूर्वक इसशरीर को भोजनकर तृप्त हो यह विभुनामक व्यापारी का वचन सुनि प्रेत कहनेलगा कि; हे मित्र ! धन के लिये क्यों दुःखी होरहेहो तुम्हारे घर में बहुतसा धन तुम्हारे बड़ों का धरा भया पृथिवी में गड़ा है सो हमारा वचन मान के जावो यह सुनि विभु कहने लगा कि; हे प्रेत ! यदि हमारे घर में धन होता तो यहां क्यों आते ? अब तो केवल घरकी दीवारमात्रहै कहो तो उसे खोद के वृद्धोंका नामभी लोपकरें यह सुनि बड़े हर्ष में युक्त हो प्रेत कहनेलगा कि हे

बिभो! हमारे वचन का विश्वासकर घरको जाव वहां कई भार सुवर्ण तुम्हारे बड़ों का खज़ाना ज़मीन में रक्खा है उसे लेकर निज कुटुम्ब के साथ आनन्द करो यह सुनि बिभुनाम वणिक् प्रसन्न होकर कहनेलगा कि; हे प्रेत! इस अवस्थामें यह ज्ञान तुमको किसभांति से प्राप्त भया सो कहो जिस में हमको प्रतीत होय यह बिभु का वचन सुनि प्रेत निजवृत्तान्त सब आदि से कहनेलगा कि; हे बिभो! जिस नगर में हमारा पूर्वजन्म था उस प्रतिष्ठानपुर में बड़ा उत्तमविष्णुमन्दिर था वहां चारो वर्णके लोग अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रआदि सब इकट्ठे होकर पुराण की कथा सुना करते व उसी कथा के श्रवण को एक हमारा मित्र नित्यही जायाकरता सो किसी दिन बड़े आदर से वह मित्र जबरदस्ती हमको भी वहां ले गया वहां जाय मित्रके समीप बैठि हमभी कथा सुनने लगे तब कथा में चतुःसमुद्रकूप का प्रभाव पाप के दूर करने हारा हमने श्रवणकिया और जब कथा समाप्त भई तब सब श्रोताओंने वक्ता का पूजनकर यथाशक्ति दानदिया तब तो जिस मित्र के साथ हम गये थे उसने हम से कहा कि, यहां तुमको भी कुछ देना उचित है ज़रूर दो यह मित्र का वचन सुनि हमचुप होरहे जब बारम्बार मित्र ने प्रेरणा किया कि, यथाशक्ति दो तब तो बड़े क्लेश व संकोचमें होकर एक माशा सुवर्ण हमने दिया उस पौराणिक को फिर जब हम काल-वश हो यमपुर को गये वहां कर्मों के वश हो प्रेतयोनि में प्राप्त भये हे मित्र! हमने धर्म और अधर्म कुछ नहीं विचारा जिस भांति धन मिला उस भांतिसे बहुत धन इकट्ठे किया उसधन से दान, ब्राह्मणभोजन, हवन, तीर्थस्नान, देवपूजन और पितृश्राद्ध कभी नहीं किया इसलिये हम प्रेतयोनि में रात्रिदिन घोर दुःखभोग रहेहैं हे बिभो! जो हमारा वृत्तान्त पूछते हो सो हमने कह सुनाया अब सूधे मथुरा को चले जावो यह सुनि बिभु कहने

लगा कि; हे प्रेत ! इस वृक्ष के मूल में तुम किस रीति से प्राण रक्षण करतेहो सो कथन करो तब तो प्रेत बड़े दुःख से उच्छ्वास भर कहनेलगा कि हे विभो ! जो हम कह आये हैं कि एक माशा सुवर्ण पौराणिक ब्राह्मण को दिया है उसी पुण्य से कुछ तृप्ति रहती है यह हमारे निष्काम दान का फल है व इस प्रेतदशा में भी हमारा ज्ञान नहीं भ्रष्ट हुआ यह सुनि विश्वासकर विभुनामक बणिक् वहां से लौटि मथुरा में आ प्राप्तभया और जिस भांति उसे प्रेतने उपदेश दियाथा वो सब करने से प्रेत तो मुक्त होकर स्वर्ग को गया और बणिक् निज वृद्धोंका धन पाय निज कुटुम्ब के साथ आनन्द करनेलगा वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! यह मथुरा में चतुःसमुद्र कूपका माहात्म्य हमने वर्णन किया जहां के पिण्डदान करने से प्रेतभी उत्तमगति को प्राप्त होते हैं हे धरणि ! मथुराजी में तीर्थ के समीप रास्ते में वा निज घर में किसी प्रकार से प्राणत्याग करे वो सर्वथा उत्तमगति को प्राप्त होता है कैसहू पातकी क्यों न होय हे धरणि ! जिस किसी भूमि में पाप करने से वह पाप तीर्थ में निवृत्त होता है व तीर्थ में पाप करने से वह पाप वज्रलेप के तुल्य होता है अर्थात् किसीभांति वह पाप निवृत्त नहीं होता व मथुरा में किया हुआ पाप मथुरा में प्राणत्याग करने से निवृत्त होता है हे धरणि ! यह मथुरापुरी सब पुण्यभूमियों से उत्तम है कि जिसमें पापकरने से भी करता को पाप स्पर्श नहीं करता इसलिये जो मनुष्य कृतघ्न मद्यपान करनेहारे चोर व्रत के त्याग करनेहारे परस्त्रीगामी व भक्ष्याभक्ष्य करनेहारे मथुरा के प्राप्त होने से सब पापों से मुक्तहो उत्तमगति को प्राप्त होते हैं और हे धरणि ! जो मनुष्य किसी तीर्थ में हजारवर्ष एकपैर से खड़ाहोकर तपकरे इससे अधिक फल मथुरा के निवास करने से होता है और जो मथुरा में भिक्षा देते हैं वो मर करके उत्तमगति को प्राप्त होते हैं और जो सदा मथुरा में निवासकर तीर्थ स्नान

करके शरीर व्यतीत करते हैं वो साक्षात् देवतारूप हैं और हे धरणि! और भूमि में जो पुण्य एक हज़ार ब्राह्मण भोजन कराने में होता है सो पुण्य एक मथुरानिवासी के भोजन कराने से होता है और भूमि में चारो वेद के जाननेवाले ब्राह्मण से मथुरानिवासी मूर्ख उत्तम होता है इसलिये हे धरणि! मथुरा में अवश्य निवास करना चाहिये जो मनुष्य पशु, पक्षी, कीट, पिपीलिका आदि श्रीमथुरा के निवासी हैं वो सब अन्त में चतुर्भुज हमारारूप होते हैं इसलिये ज्ञानी लोग मथुरा वासियों को सर्वदा हमाराही रूप देखते हैं॥

एकसौ इकसठि का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! इसभांति चतुःसागरकूप का अपूर्व माहात्म्य सुनि प्रसन्न होकर वाराहभगवान् से पृथिवी कहनेलगी कि; हे भगवन्! आपने कृपा करके बड़ी उत्तम कथा वर्णन किया अब असिकुण्ड नाम तीर्थ का माहात्म्य आप कथन करें यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! किसी देश का रहनेवाला एक सुमति नाम राजा था वह तीर्थ यात्रा करने का मन में संकल्प किया फिर किसी कार्यवश तीर्थ यात्रा तो हुई नहीं बीच में कालवश होगया तब तो उस राजा का पुत्र विमतिनामक निजपिता का राज्य यथा योग्य करनेलगा जब उस को राज्य करते बहुत काल व्यतीत भये तब तो किसी समय नारदनाम ऋषीश्वर उस विमति राजा के समीप आये ऋषीश्वर को देखि राजा उठिके आसन, पाद्य, अर्घ्य आदि से पूजनकर नारदजी की आज्ञा से बैठा उससमय राजा के पूजन को अङ्गीकार कर नारदजी कहनेलगे कि, हे विमते! पुत्र उसी को कहना चाहिये जो निज पिता को ऋण से छोड़ावे इतना कहकर वहीं ही नारदजी तो अन्तर्धानभये और राजा विमति उस वाणीको

सुनि विस्मित होकर समीपवर्ती मन्त्रियों से कहनेलगा कि, कौन सा ऋण हमारे पिता का है व क्या करने से हमारा पिता ऋण से मुक्त होय? यह हमारी बुद्धि में नहीं आता सो आप सब लोग बुद्धिपूर्वक विचारकरके कथन करो सो किया जाय यह श्रवण कर मन्त्रियों ने यह कहा कि, हे महाराज! आपके पिता ने तीर्थ यात्रा का संकल्प किया था सो नहीं भई व महाराज स्वर्गवासी होगये यही एकऋण है और तो कोई बात बुद्धि में नहीं आती इस वचन को मन्त्रियों के मुखसे सुनि राजा विमति ने पछताय यह विचार किया कि, और तो तीर्थ यात्रा हमसे बनना कठिन है परन्तु मथुरा की यात्रा अवश्य करना चाहिये क्योंकि पुराण का यह कथन है कि, मथुरा में सबतीर्थ निवास करते हैं यह विचार मथुरा में चारमास वर्षा व्यतीत करने के लिये जायनिवासकिया तब तो उस विमति राजा के प्राप्त होतेही मथुरा के सब तीर्थ परस्पर दुःखीहो घबराय कहनेलगे कि यह पापात्मा राजा जब तक हमको स्पर्श न करे तबतक कलापग्राम में चल श्री वाराहजी की शरण में चलें वो हमारे दुःखको दूर करेंगे यह शोच विचार हे धरणि! जहां हम कलापग्राम में निवास करते थे वहां आय पहुँचे व हमको देखतेही हाथ जोड़ नम्र होकर स्तुति करनेलगे (ॐ जय विष्णो जयाचिन्त्य जयदेव जयाच्युत। जय विश्वेशकर्त्रीश जयदेव नमोस्तुते) इसभांति हे धरणि! तीर्थों ने जब हमारी स्तुति किया तब हमने कहा कि, हे तीर्थो! हम तुम्हारे सबों पर प्रसन्न हैं किसलिये यहां को आये हो और क्या वर चाहते हो जो इच्छा होय सो मांगो इसभांति हमारी वाणी सुनि सबतीर्थ कहनेलगे कि; हे भगवन्! हम को अभय वर दान देवो कि जो विमतिनामपातकी राजा स्नान करने को आया है उससे हमको बचावो अर्थात् जबतक हमारे में स्नान न करे तबतक उसका बध करो यदि हमारी प्रसन्नता चाहते हो यह

तीर्थों का विनय सुनि आश्वासनकर मथुरा में जाय विमति राजा के साथ युद्धकर खड्ग से उसका शिर काटा हे धरणि! जिस समय उसके ऊपर खड्ग का प्रहार किया तो नन्दकनाम हमारा खड्ग उसका शिरकाट पृथिवी में प्रवेश करगया जिसभूमि में वह खड्ग गिरा वहांहीं असिकुण्डनाम सबपापों का हरनेहारा तीर्थ लोक में प्रसिद्धभया जिस असिकुण्ड तीर्थ में पापरहित मनुष्य श्रद्धावान् जितेन्द्रिय शुक्लपक्ष की द्वादशी को अपूर्व मनोहर व मधुर फल को पाते हैं यह आश्चर्य उस तीर्थ में अबभी है और हे धरणि! जिसकाल हम मथुरा में आये उसी समय से पश्चिम दिशा में सुवर्णमूर्ति होके स्थित हैं व हम मथुरा में चार मूर्ति होके सदा निवास करते हैं एक मूर्ति वाराह, दूसरीमूर्ति नारायण, तीसरी वामन और चौथी बलभद्र इन चारो मूर्तियों का दर्शन जो मनुष्य असिकुण्ड में स्नान करके करता है वो चारो समुद्रों सहित पृथिवी के परिक्रमा करने के फल को प्राप्त होता है और हे धरणि! जितने तीर्थ मथुरामण्डल में हैं उन सब तीर्थों से असिकुण्डतीर्थ उत्तम है और जो तीर्थों की संख्या परिक्रमा में कह आये हैं वो सब असिकुण्ड में आय पूर्ण होते हैं इसलिये हे धरणि! जो मनुष्य द्वादशी को प्रातःकाल उठि मौन होकर असिकुण्ड में स्नानकर हमारा दर्शन करते हैं उनका भूमि में फिर जन्म नहीं होता हमारे स्वरूप में लीन होजाते हैं॥

एकसौ बासठि का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं; हे धरणि! अब सावधान होकर विश्रान्ति तीर्थ का माहात्म्य श्रवण करो जिसमाहात्म्य को ब्राह्मण के लिये राक्षस ने उपदेश किया है इसभांति वाराहजी का वचन सुनि संशय को प्राप्त होकर धरणी कहने लगी कि हे भगवन्! किस लिये राक्षस ने विश्रान्तितीर्थ की महिमा वर्णन किया व

वो ब्राह्मण कौन है जिसको राक्षस ने विश्रान्ति की महिमा सुनाया यह सब वृत्तान्त आप कृपा करके वर्णन करें यह धरणी की वाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि ! उज्जयिनी नाम नगरी में आचारहीन कर्मभ्रष्ट एक ब्राह्मण हुआ सो ब्राह्मण कभी भूल से भी देवपूजन न करता और शिष्टवृद्ध महात्मा साधुओं को प्रणाम भी न करता व कभी दैवयोग किसी तीर्थ में जाय तो जिस लिये जाय वो कामकर लौटिं आता स्नान नहीं करता और वेदपाठ अग्निहवन आदि सत्कर्म जिसने कभी एक वारभी न किया और परस्त्रीगमन, जीवहिंसा, परद्रोह, चोरी, पिशुनता और सायंकाल प्रातःकालशयन सदा किया करता इस भांति वह ब्राह्मण पापकी मूर्ति व सदा पापियोंके संग रहना ऐसेही अनर्थ सदा प्रीतिसे करता देखो हे धरणि ! गृहस्थी होंके भी जिसने निज धर्म की रक्षा न किया उसका किसभांतिं दोनोंलोक बनेगा क्योंकि ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थ और संन्यासी इन चारों में शास्त्रने गृहस्थ की महिमा सर्वोपरि कही है जिसभांति पशुओंमें गौ उत्तमहै व कुटुम्ब में माता उत्तमहै ऐसेही सबधर्मों से गृहस्थधर्म उत्तम है देखो किसी आश्रम में क्यों न हो परन्तु आश्रित गृहस्थहीका होताहै व सबका सन्तोष गृहस्थही से है देवता, पितर, अग्नि और अभ्यागत ये चारों गृहस्थहीसे तृप्त होते हैं तिस गृहस्थीमें भी उस दुर्बुद्धिने अपना कल्याण न बनाया सो पापी ब्राह्मण सदा चोरोंके साथ चोरी किया करताथा किसी समय चोरी करने को अंधेरी रात्रि में चोरों के साथ गया वहां भावीवश राज्य के चौकीदारों ने देखा चोर समझ के जब पकड़नाचाहा तब तो निज २ प्राणरक्षा के हेतु सब चोर इधर उधर भागे उसी समय वह पापात्मा ब्राह्मणभी किधर को भागा व घबरायाभया दैवयोग रास्ते में कूप था उसके मध्य में जागिरा व अगाधजल के सबब से गिरतेही मृत्युवश होकर ब्रह्मराक्षस

हुआ व उसी कूप में रहने लगा हे धरणि! किसी समय व्यापारियोंका यूथ निज २ मालको लिये सायंकाल होने से उस कूप के समीप आय निवासलिया उन्हों में एक व्यापारी कुछ पठित ब्राह्मण भी था सो सब व्यापारी अपने २ सुबिस्तेकोकर निद्रावश होकर शयन करनेलगे और जो उन्होंमें ब्राह्मण था वो निजआवश्यकोंसे सावधानहो रक्षोघ्नरक्षामन्त्रका जप करनेलगा तब तो वह ब्रह्मराक्षस प्रकट होकर ब्राह्मणसे बोला कि हे ब्राह्मण! जो तुम्हारे मनमें होय सो हमसे मांगो हमदेंगे और यहांसे चलेजावो और कहीं निद्राकरो हम ब्रह्मराक्षस हैं यह कूप हमारा स्थानहै बहुत दिनों से क्षुधा करके पीड़ित होरहे हैं आज हमारे लिये परमेश्वर ने इन मनुष्यों को भेजाहै सो इनके मांस व रुधिर से हमारी तृप्ति होगी यह राक्षसका वचन सुनि ब्राह्मण कहनेलगा कि, हे राक्षस! हम इन्होंको कभी न छोड़ेंगे हमारे ये सबसाथी मित्र हैं व कुटुम्ब हैं तुम यहां से चलेजाव नहीं तो हम निज मन्त्र बल से तुमको भस्म करदेंगे ऐसे ब्राह्मण के भयंकर वचन सुनि भयभीत होकर विनयपूर्वक राक्षस कहनेलगा कि; हे विप्रों में श्रेष्ठ! दया करके हमारे आहारको न निषेध करो यदि किसी का आहार कोई छीन लेता है तो वह ईश्वर के घर में पातकी गिनाजाता है इसलिये दयाकरके हमको भोजन दो यह राक्षस की वाणी सुनि ब्राह्मण कहनेलगा कि, हे राक्षस! तुम कौनहो व किस कर्म दोष से इसघोरयोनि में प्राप्तभयेहो यह ब्राह्मण का वचन सुनि पछिताय के ऊंची साँस को भर उस राक्षस ने पूर्व जन्म का सारा वृत्तान्त कह सुनाया सो ब्राह्मण राक्षस का दुष्कर्म वृत्तान्त सुनि मन में दयायुक्त होकर कहने लगा कि, हे राक्षस! मित्रभाव से हम कहते हैं कि जो तुम्हारी इच्छा हो सो मांगो हम तुम्हारे आत्मा का उपकार किया चाहते हैं यह ब्राह्मण का वचन सुनि राक्षस कहनेलगा कि; हे ब्राह्मण! यदि हमारा आप

उपकार करतेहो व हमको कुछ दियाचाहते हो तो यही हम आप से दीन होके याचना करते हैं कि आप जो मथुरापुरी में विश्रान्तितीर्थ में स्नान किया है उस पुण्य को हमको दीजिये जिस से हम इस संकट से छूट उत्तमगति को प्राप्त हों यह सुनि ब्राह्मण कहने लगा कि; हे राक्षस! विश्रान्तितीर्थ का ज्ञान तुमको किसभांति हुआ सो हमसे कहो यह सुनि राक्षस कहने लगा कि; हे विप्र! हमारा निवास सदा उज्जयिनी में रहा उसी समय किसी कारण हम विष्णुमन्दिर को गये वहां ब्राह्मण विश्रान्ति तीर्थ का माहात्म्य बांचरहे थे वो कथा के सुनतेही हमारी विश्रान्तितीर्थ में भक्ति उत्पन्न भई और वो भक्ति इस अवस्था में भी स्थित है और श्रीवासुदेव भगवान् चराचर जीवों के स्वामी होकर जिस भूमि में विश्राम करते हैं उसे कौन सा अधमजीव है जो जानि सुनके भूलजाय इसभांति राक्षस का भक्तियुक्त वचन सुनि ब्राह्मण बड़े हर्षसे बोला कि; हे राक्षस! हमने एक दिन का विश्रान्तितीर्थस्नान का फल तुमको दिया इस ब्राह्मण की वाणी सुनतेही राक्षस क्या देखता है कि विष्णु के पार्षद उत्तमविमान लिये खड़े हैं उस विमान के व विष्णुपार्षदों के दर्शन पातेही वो राक्षसी शरीरको छोड़कर प्रकाशमान दिव्यरूप को धारणकरता हुआ विमान में बैठकर विष्णुलोक को प्राप्त भया ॥

एकसौतिरसठि का अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! इसभांति विश्रान्तितीर्थ का माहात्म्य सुन आनन्द में मग्न होकर वाराहजी से धरणी कहने लगी कि; हे भगवन्! आपने कृपा करके विश्रान्तितीर्थ का माहात्म्य वर्णन किया जिस के श्रवण से अनेकजन्म के पातक दूर होते हैं अब आप कृपा करके यह कथनकरें कि, श्रीमथुराजीमें क्षेत्रपाल कौन है जो सदा पुरीकी रक्षा करता है व उसके

दर्शन करने से क्या फल है? यह वचन सुनि वाराहजी कहने लगे कि, हे धरणि! बड़ी उत्तमवार्ता पूछी हो अब सावधान होकर श्रवणकरो इस उत्तम मथुरापुरी के क्षेत्रपाल शिवजीहैं जिनका नाम भगवान् भूतपति है व जिनके दर्शन करने से मनुष्य निष्पाप होकर मथुरा की यात्रा का फल पाता है व न दर्शन करने से तीर्थयात्रा निष्फल होती है हे धरणि! इसमें यह कारण है कि, पूर्वकाल में शिवजी ने हमारे प्रसन्न होनेके लिये बड़ा उग्रतप किया था जिसके करने से हम प्रसन्न होकर प्रकट भये व बोले कि; हे शिवजी! इस पूर्ण हज़ारवर्ष के तुम्हारे घोरतप करने से हम बहुत प्रसन्न हैं जो इच्छा हो सो वरमांगो हे धरणि! इस भांति कृपायुक्त हमारे वचन को सुनि शिवजी कहनेलगे कि, हे भगवन्! यदि आप कृपा करके मुझे वरदेते हो तो यह दीजिये कि आपकी परमप्यारी मथुरापुरी में हमारा स्थान हो यह शिव जी की वाणी सुनि प्रसन्न होकर हम बोले कि; हे शिवजी! हमारी मथुरापुरी में आप क्षेत्रपाल होकर निवास करें जो विना आप के दर्शन करने से मथुरातीर्थ की यात्रा सफल न हो अर्थात् मथुरा की यात्रा आपही के दर्शन से सफल होय जिसभांति इन्द्र की पुरी अमरावती सब पुरियों में रमणीय है ऐसेही भूमि के मध्य हमारी मथुरापुरी इस जम्बूद्वीप में हमारी प्यारी मथुरापुरी सबपुण्यभूमि से उत्तम है जिसका प्रमाण चारोंदिशा में बीस २ योजनहै जिसभूमि के पदपदमात्र दर्शन व भ्रमण करनेसे अश्वमेधनामयज्ञ का फल दुर्लभ नहीं है हे धरणि! यह माहात्म्य आज तक ब्रह्माजी से वा शिवजीसे वा और इन्द्रादिक किसी देवताओं से कथन नहीं किया और इसपुरी में असंख्यतीर्थ हैं मुख्य २ तीर्थों की संख्या साठकरोड़ साठहज़ार छःसौ तीर्थ हैं उनमें भी गोवर्द्धन और अक्रूर ये दोनों तीर्थ दक्षिण उत्तर की कोटिमें हैं प्रस्कन्द और भाण्डीर ये दोनों पूर्व पश्चिम कोटि में हैं व सबों

से उत्तम प्रधान विश्रान्तितीर्थ है और हे धरणि! असिकुण्ड और वैकुण्ठतीर्थ ये दोनों नेत्र के तुल्य हैं अविमुक्त, सोमतीर्थ, यमनातिन्दुक, चक्रतीर्थ, अक्रूरतीर्थ और द्वादशादित्य ये छहों तीर्थ मथुराजी के षडङ्ग हैं हे धरणि! इनतीर्थों की महिमा कहां तक वर्णनकरें इन्होंके नाम लेनेसे महापातक दूर होजातेहैं और कुरुक्षेत्रआदि तीर्थों के सेवनेसे जो पुण्य होता है उससे सौगुना अधिक पुण्य मथुरा के दर्शनसे होताहै हे धरणि! जो महात्मा श्रीमथुराजी का यह पुण्य माहात्म्य एकचित्त होके पठन वा श्रवणकरे वो सबपापों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होय व उसके दश पूर्व के और दश पीछेके पितरसहित अपने इसभांति इक्कीसकुल उत्तमगति को प्राप्तहों और जो मनुष्य इस पवित्र कथा का मरणसमय में स्मरण व पठन करे वह सब पापों से छूटकर मुक्ति को प्राप्त होय हे धरणि! यह सब पापों के नाश करनेहारी कथा हमने वर्णन की अब क्या सुनने की इच्छा है सो कहो?॥

एकसौ चौंसठिका अध्याय॥

श्रीवाराह भगवान् धरणी से कहते हैं कि, तीनोंलोक में ऐसा कोई तीर्थ नहीं जो मथुरामण्डल में न होय व बहुत कहने से क्या है जहां रात्रिदिन हमाराही निवास रहता है वहां कौनसा तीर्थ व देवता नहीं है जहां साक्षात् श्रीकृष्णजी का रूपधार हमने क्रीड़ा किया वहां पग २ में तीर्थ जानना चाहिये और वह भूमि दूसरे स्थान के तुल्य किसभांति होसक्तीहै हे धरणि! श्रीमथुराजी का स्वरूप अर्धचन्द्र के तुल्य है जिसके बास करनेहारे जीव कीट, पतङ्ग, श्वान, और शृगाल भी प्राणत्याग करनेसे हमारा स्वरूप चतुर्भुज होते हैं उस अर्धचन्द्र के मध्य जो नियम से प्राण त्यागकरें उनकी मुक्ति में क्या संशय है और

मथुरा की यात्रा दक्षिणकोटि से प्रारम्भ करके उत्तर कोटि में समाप्त करनी चाहिये व यज्ञोपवीतमात्रही से अनेककुल की रक्षा होती है यह श्रीवाराहभगवान् की वाणी सुनि धरणीकहने लगी कि; हे भगवन् ! यज्ञोपवीतमात्र का क्या विधान है सो आप कृपाकरके कथन करें ? यह सुनि वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि ! अब यज्ञोपवीतमात्र की विधि कहते हैं सो श्रवण करो जो दक्षिणदिशा से प्रारम्भ करके उत्तर में समाप्त करना है इसी को यज्ञोपवीतमात्र कहते हैं जिसके करनेसे मनुष्य कैसहू पापात्मा होय सो मुक्त होता है प्रथम शयन से उठि प्रातःकाल मौन हो स्नानकर श्रीकृष्णजी की पूजाकरे फिर तीर्थयात्रा करे इसीभांति नियम से यात्रा समाप्तकर अन्त में वत्स के साथ दूध देनेवाली गौ व उत्तमवस्त्र, सुवर्ण, चांदी आदि वित्तशाठ्य व-र्जित यथासामर्थ्य दानकर ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा दे आज्ञालेकर आपभी भोजनकर यात्रा समाप्तकरे यह यात्रा कार्त्तिक से अवश्य करनी चाहिये और हे धरणि ! जो अर्धचन्द्र में प्राण त्यागकरते हैं वो हमारे लोकमें आते हैं और कहीं भी प्राणत्याग हो तो जिसकी प्रेतक्रिया अर्धचन्द्रमें होय वोभी बहुतकाल स्वर्गमें वास पाताहै और किसी जीवका अस्थि जबतक अर्धचन्द्रमें रहे तबतक वह जीव स्वर्गवासी होताहै और कहांतक वर्णनकरें यदि गर्दभ भी होय विश्रान्तितीर्थ व अर्धचन्द्र में प्राणत्याग करने से चतुर्भुज होताहै जिस अर्धचन्द्रके एक किनारे गर्तेश्वर और दूसरे किनारे भूतेश्वर उनके मध्यमें हम निवासकरते हैं हे धरणि ! मथुरानिवासियों के रूप से हमसे कुछ भेद नहीं है मथुरा बा-सियों के तृप्त होनेसे हम तृप्त होते हैं अब हे धरणि ! गरुड़जीका वृत्तान्त वर्णन करते हैं सो सुनो किसी समय हमारे दर्शन के लिये गरुड़जी मथुरा में आये वहां क्या देखते हैं कि सब प्र-त्येक जीव श्यामवर्ण पीताम्बरधारे चतुर्भुज व गरुड़पर सवार

यह देखि चकित हो घबड़ाय हाथ जोड़ हमारी स्तुति करने लगे "श्लोकः। ॐ विश्वरूप जयादित्य जयविष्णो जयाच्युत। जय केशव ईशान जय कृष्ण नमोऽस्तुते॥ जयामूर्त्त जयाचिन्त्य जय लोकविभूषण" हे धरणि! इसभांति शब्दों को उच्चारण करतेहुये गरुड़जी को देखि प्रकटहो व आश्वासन कर हम यह बोले कि; हे गरुड़जी! किस लिये हमारी स्तुति करते हो व मथुरा में किसलिये आये हो सो यथार्थ कह सुनावो? इसभांति हमारे वचन को सुनि गरुड़जी कहनेलगे कि; हे भगवन्! यहां तो हम केवल आपही के दर्शनकरने को आये हैं परन्तु आप के अनन्तरूप देखनेसे घबड़ाकर आपकी स्तुति करनेलगे अब आपने निज मायाको दूरकर एकरूपहो मुझे दर्शन दे कृतार्थ किया अब जो आज्ञा होय सो करूं परन्तु आपने मुझे अनन्तरूप हो क्यों दर्शन दिया इसका कारण जानना चाहताहूं-इसभांति हे धरणि! गरुड़जीकी संशययुक्तवाणी सुनि हमने यह कहा कि; हे गरुड़जी! मथुरामण्डल में जितने जीव पापी व पुण्यात्मा हैं वे सब हमारेही रूप हैं इस भ्रम के दूर करने को हमने यह माया दिखाया है इतना कहके हम तो अन्तर्धान भये व गरुड़जी ने भी वहां से यथारुचि यात्रा किया इसभांति माथुरों के स्वरूप का हमने वर्णन किया जिनकी पूजा मात्र से हम सदा प्रसन्न होते हैं हे धरणि! यह निश्चय करो कि जो जीव कीट पतङ्ग आदि मथुराजी में प्राणत्याग करते हैं वो सब मुक्त होते हैं और जो आश्विनमासकी शुक्लद्वादशी को पद्मनाभजी का दर्शन करते हैं एकादशी का व्रत करके उन मनुष्यों का संसार में फिर जन्म नहीं होता और जो चैत्रमास के शुक्लएकादशी का व्रतकरके रात्रिमें जागरणकर प्रातःकाल यमुना में स्नानकर चितारत्न नाम विष्णु का दर्शन करते हैं उनकी मुक्ति होने में कुछ संशय नहीं है और जो मनुष्य किसी समय

विश्रान्तितीर्थ में स्नानकर एकानंशा, यशोदा, देवकी और महाविद्येश्वरी इनचारो देवियों का दर्शन करते हैं वे ब्रह्महत्या आदि घोरपातकों से छूटकर उत्तम गति को प्राप्त होते हैं और जो मनुष्य मथुराजी के पश्चिम यमधारानाम तीर्थ में स्नान करते हैं वो ग्रहबाधा से मुक्तहोकर सुखी होते हैं और जिस २ वाञ्छा को मन में कर विश्रान्तितीर्थ में स्नानकर केशव भगवान् का दर्शन करते हैं उनके सबमनोरथ सिद्ध होते हैं और अन्त में हमारे समीप आते हैं॥

एकसौपैंसठि का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! और भी मथुराजी में जो पहले समय में वृत्तान्त भया है सो सावधान होकर श्रवण करो किसी समय मथुराजी में गुण व धन करके युक्त वसुकर्ण नाम एक वैश्य था जिसकी स्त्री परमसुन्दरी पतिव्रता सबगुणों करके युक्त सुशीलानाम भई उस सुशीला की उमर व्यतीत हो गई वृद्धता का प्रारम्भ भया परन्तु संतान का सुख न पाया इस कारण दुःखी, दीनचित्त व मलीनमुख होकर एकान्त में विलाप किया करती थी वही स्त्री किसी समय सरस्वती यमुना के संगम में स्नानकरने को गई वहां और कितेक स्त्रियां निज २ बालकों को साथ लिये स्नान आदि आवश्यक कर्म कररही थीं व संगमतीर्थ के थोड़ेही दूर किसी वृक्ष के नीचे एकमुनि बैठरहे थे इसीसमय वह बणिक्की स्त्री सुशीला सब स्त्रियों को निज २ संतानों के साथ आनन्द करती देखि मन में दुःखीहोकर मुनिजी के समीप बैठि धीरज छोड़ बड़े ऊंचे स्वरसे विलाप करने लगी तब हे धरणि! उस स्त्री का विलापदेखि मुनिजी करुणायुक्त होकर यह कहनेलगे कि; हे पुत्रि! तुम कौनहो व किसकी स्त्री हो किस क्लेश से पीड़ित हुई क्यों इसभांति रोदन कररहीहो

जिसे देखि हमारीभी आत्मा पीड़ित होरही है यदि हमारे सुनने योग्य होय तो कहो यह मुनिजी का वचन सुनि सुशीला कहनेलगी कि; हे भगवन्! जो भाग्यहीन मनुष्य हैं उन्हीं के क्लेश की कौन गिनती है तथापि यदि आप कृपाकरके पूछते हैं तो आप मेरे दुःखको सुनकर जो मेरे लायक़ होय सो आज्ञा दें जिसके करने से मैं इस क्लेश से छूटूं श्रीमहाराज! ये जो स्त्रियां यहां स्नानकेलिये आईहैं वे निज २ पुत्र व कन्या के साथ आनन्द क्रीड़ा करती प्रसन्न होरही हैं इन भाग्यवानों को देखि मैं अभागिनी निज किये पाप के फल से संतानसुख से रहित होकर दुःखी होरहीहूं कि, इस दुःख सागर में डूबी किसभांति पार होऊं इसभांति उस स्त्री की दीन वाणी सुनि दयायुक्त होकर मुनिजी बोले कि, हे पुत्रि! रोदनकरनेसे क्या होगा तू सावधान होकर गोकर्णेश्वरनाम शिवजी का पूजन व भजन भक्तिपूर्वक कर जिसके करनेसे अवश्य संतान का सुख पावेगी इस हमारे वचन का निश्चयकर यह मुनिजी का वचन सुनि उसने भक्ति से प्रणामकर अङ्गीकार किया और वह निजघर में जाय सारा वृत्तान्त पति से निवेदनकर आज्ञा लेकर गोकर्णेश्वरजी के समीप जाय बड़े आदर से भक्तिपूर्वक स्नान, चन्दन, अक्षत, बिल्वपत्र, पुष्प, माला, धूप, दीप और नैवेद्यआदि उपचार कर नानाभांति की मधुरवाणी से स्तुति आदि प्रार्थना करके दोनों स्त्रीपति शिवजी का आराधन करनेलगे व मुनिजीके वचन में ऐसी श्रद्धा उपजी कि हमारा अभीष्ट शीघ्र होगा व मनोरथ को प्राप्त होंगे इसभांति करते २ जब दश वर्ष व्यतीत भये तब उन्हीं की भक्ति से उमापति भगवान् प्रसन्न होतेहुये प्रकटहोकर यह कहनेलगे कि, हे वसुकर्ण! हे सुशीले! हम तुम्हारे दोनों के भक्तिपूर्वक सेवा करनेसे प्रसन्नभये अब जो तुम्हारी इच्छा होय सो वर मांगो और जिस लिये तुम दोनों ने

हमारा आराधन कियाहै सो सुन्दररूप करके युक्त गुणसंपन्न पुत्र तुम्हारे होगा और आज से जो मनुष्य इस पवित्र तीर्थ का सेवन करेंगे उनके सब मनोरथ सिद्ध होंगे इतना कहकर शिवजी तो अन्तर्धानभये और स्त्री पुरुष दोनों ने मनोरथपाय कृतकृत्य हो सरस्वती संगम में स्नानकर घर में जाय बड़े हर्षसे ब्राह्मणों को वस्त्र भूषण धन धान्य दे व नानाभांति के व्यञ्जन भोजन कराय आशीर्वाद लिया उसीसमय से बणिक्की स्त्री सुशीला ने गर्भ को धारण किया हे धरणि! वह गर्भ जिसभांति शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बढ़ता है वैसेही बढ़नेलगा दशमहीने पूर्ण होतेही चन्द्रबिम्ब के तुल्य प्रकाशमान पुत्र उत्पन्नभया उस पुत्रजन्म के उत्सव में वसुकर्ण वैश्य ने उत्तम २ ब्राह्मणों को बुलाय सुवर्ण व रेशमीवस्त्रयुक्त दशहज़ार गोदानकिया फिर ब्राह्मणोंका आशीर्वाद ले जातकर्म कर नामकरण गोकर्ण ऐसा किया इसीभांति अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, गोदान, विवाहआदि सब कर्म मङ्गलपूर्वक किया और वह गोकर्ण पुत्र भी युवावस्था में प्राप्तभया परन्तु सन्तान पुत्र कन्या आदि कुछ भी न भया इस व्यवस्था को देखि उसके पितामाताओं ने फिर पुत्र का विवाह किया इसीभांति चार विवाह किये परन्तु सन्तान किसी स्त्री में न भई तब तो प्रजाक्लेश करके पीड़ित वह गोकर्ण भी देवपूजन, दान, व्रत आदि सत्कर्म करनेलगा व उसने वापी, कूप, तड़ागआदि बनवाये व कई देवताओं के मन्दिर बनाकर स्थापन किये व प्रपादान अन्नदान नित्य किया करता व संसार से उदास रहता हुआ उसने गोकर्णेश्वरके पश्चिमदिशा में विष्णुभगवान् का प्रासाद बड़ा उत्तम बनवाया और विष्णुमन्दिर के सामने भांति २ के पुष्पोंकरके युक्त वाटिका बनाय उत्तम व मधुरफलवाले वृक्षों को लगाया वाटिका की सेवाकरने के लिये मालियों को नौकर कर दिया फिर चारों स्त्रियों के साथ गोकर्ण बड़ीप्रीति से रात्रिदिन

समय २ पर विष्णु भगवान् की सेवाकरता व पुष्पों की माला बनाता धूप, दीप, नैवेद्य भांति २ के देता रहता था और जब विष्णुभगवान् की सेवा से कुछ अवसर मिलता तो स्त्रियों के साथ निज हाथोंसे जल ले पुष्पों को सींचता रहता था जो उस मन्दिर में कोई आवे तो उसकी सेवा ऐसी करता जिसमें उसका आत्मा प्रसन्न होजाता इसभांति बहुतकाल के करनेसे धन क्षीण होगया तब गोकर्ण के चित्त में चिन्ता उत्पन्नभई कि अब धन विना माता पिता आदि कुटुम्ब व अभ्यागत की सेवा किसभांति होसकेगी इसलिये उद्यम करनाचाहिये यह विचारि व्यापारियों की सम्मति ले मणिरत्न व नानाभांति के बहुत मोलवाले मुक्ता ले उत्तरदिशा में जाय विक्रयकर वहां उत्तमजाति के घोड़े पट्ट वस्त्र क्षौमवस्त्र व बड़ेमोलकी मणि ख़रीदकर प्रसन्नपूर्वक निजदेश मथुरा की यात्रा गोकर्ण ने किया वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति यात्राकर सायंकाल किसीपर्वत के समीप उत्तम जल व पशुओंका चारा घास देखि किसी वृक्ष की छाया में सब व्यापारियों के साथ निवास ले वृक्षोंकी डालियों में निज२ बैल घोड़े आदि जीवों को बांधि जल व चारा घास दे आपभी निज २ सेवकों सहित भोजन किया फिर हे धरणि! उसपर्वत की शोभा देखने के लिये कितेक व्यापारी इकट्ठे होकर शिखर के ऊपर जाय इधर उधर घूमते क्या देखते हैं कि कहीं तो जल के झरने बहरहे हैं व कहीं पुष्प फल के भार से झुके अनेक पक्षियों करके सुशोभित जिन्हों में भांति २ की लता लिपटरही हैं ऐसे अनेकभांति के वृक्ष लगरहेहैं व जहां तहां उत्तम २ गुफा अनेकभांति के तपस्वियों करके शोभित हो रही हैं इसभांति पर्वत की शोभा देखते २ यदि एकगुहा की तरफ़ गोकर्ण बणिक् देखनेलगा तो उस कन्दरासे यह शब्द सुनाई दिया कि बहुत उत्तम बात भई जो तुम यहां आये आनन्दसे बैठो हमारे गृहस्थ

के आदर सत्कार को अङ्गीकारकर हमको कृतार्थकरो हे ध-
रणि! इसभांति का मधुर शब्द सुनि गोकर्ण जब उस गुफा की
तरफ़ दृष्टि देताहै तब तो क्या देखता है कि उसगुहा के बीच
द्वारमें एक पिञ्जर जिसके मध्य उत्तम शुक बैठा है वह टँगिरहाहै
वह शुक एक कहताहै कि हे अतिथे! आवो इस उत्तम व पवित्र
आसनपर बैठि पाद्य अर्घ आचमन उत्तम व मधुरफल मांस
आदि पदार्थ अङ्गीकार कर यह गृहस्थधर्म सफल करो और
आपका सत्कार जब हमारे माता पिता आवेंगे वे करेंगे हे सुजन!
जिस गृहस्थ के घर में अतिथि जाकर विना सत्कारके विमुख
लौटजाय उस पापात्मा गृहस्थ को नरकभी नहीं ग्रहण करसकते
और वह अतिथि अपना पाप गृहस्थको दे व उसका पुण्य लेकर
जाताहै इसलिये गृहस्थ मनुष्य को अतिथि का पूजन विष्णु
भगवान् के तुल्य करना चाहिये अतिथि उसे कहते हैं कि जिसके
आगमन का कोई समय निश्चय न होय सो हे मित्र! आपने तो
आकरके हमको कृतार्थ किया आज आपके आगमन से हम
धन्य भये इसभांति शुक का वचन धर्मयुक्त व मनोहर सुनि
गोकर्ण विस्मित होकर हर्षसे यह बोला कि, हे शुक! तुम कौन
हो कि जिसभांति धर्मयुक्तवाणी तुम कहते हो इसभांति बड़ा
पुराण का जाननेहारा पण्डित भी नहीं कहसक्ता इसलिये शुक-
रूप धारण किये कोई देवयोनि हो क्योंकि इसभांति किसीपक्षी
की सामर्थ्य उपदेश करने में नहीं है इसलिये हमारे मन का उ-
त्साह पूर्ण करनेकी योग्यता समझि निज वृत्तान्तको सत्य२ कहो
इसभांति गोकर्ण की वाणी सुनि पूर्वजन्म का स्मरणकर शुक
कहनेलगा कि; हे मित्र! पूर्वजन्म में जो मेरेसे अनर्थ भया है
सो सावधान होकर श्रवण करो किसीसमय सुमेरुपर्वत के उत्तर
किनारे ऋषियों करके सेवित पुण्यभूमि में श्रीभगवान् वेदव्यास
के पुत्र शुकदेवमुनि तप करते रहेथे वहांही नैमिषारण्यनिवासी

मुनि असित, देवल, मार्कण्डेय, भरद्वाज, यवक्रीत, भृगु, अङ्गिरा, तैत्तिरि, रैभ्य, कण्व, मेधातिथि, कुथ, तन्तु, सुमन्तु, आदित्य, वसुमान, एकत, द्वित, त्रित, वामदेव, अश्वशिरा, त्रिशीष, गौतम, दर, सिद्ध, देव, पन्नग और गुह्यकआदि सब इकट्ठेहोकर धर्मसंहिता पुराण आदि श्रवण करनेकेलिये आय शुकदेवजीको प्रणाम कर निज निज प्रश्नों को पूछने लगे हे गोकर्ण ! हम तो वासुदेवजी के शिष्य शुकोदर नाम ढिठाई के साथ सब मुनियोंके मध्य बारम्बार बे अवसर पूछने लगे इसभांति हमारी धृष्टता देखके गुरु वामदेवजी निषेध करने लगे तब तो गुरुका वचन हमने न स्वीकार किया व तर्कयुक्त वचन बारम्बार कहते रहे गुरु नित्य निषेध करते रहे परन्तु जब आपस में परस्पर किसी कथा का प्रारम्भकरें तो हम सबोंके आगेहो जीतबेकी इच्छासे बीच २ में कठिन २ प्रश्न किया करते इसभांति जब हमने गुरु का निषेध किसीभांति अङ्गीकार न किया तब तो कोपयुक्त हो शुकदेवजी ने यह शाप दिया कि रे दुष्ट ! जिसभांति तेरा नाम शुकोदर है पक्षीसम्बन्धी इसीभांति बे समयमें बोलता है तो जा शुकपक्षी की योनिमें जन्म ले हे गोकर्ण ! इस घोर वचन के सुनतेही हम ने निजस्वरूप को क्षणमात्र में शुकरूप देखा इसभांति हमको शुकभया देखि शुकदेवजी की प्रार्थना सबमुनि करनेलगे सब मुनियों की प्रार्थना सुनि शुकदेवजी बोले कि; यह शाप तो इसी भांति होगा परन्तु तुम्हारी सब की प्रार्थना से यह वरदेते हैं कि यह पक्षी सदा ज्ञानयुक्त जातिस्मर पुराणों के तत्त्व का जानने वाला सर्वशास्त्र के अर्थों में कुशल हो मथुराजी में प्राण त्याग कर ब्रह्मलोक में प्राप्त होगा हे गोकर्ण जी ! इसभांति शाप व वरदान शुकदेवजी के मुख का श्रवणकर मथुरा २ इसशब्द को उच्चारण करता सबभांति दुःख उद्वेग करके युक्त हिमाचल की गुहामें निवास करनेलगा दैवयोग किसी समय शबर के हाथ

लगे उसने हमको पिंजरे में रख लिया सो शबर निजस्त्री के साथ हमारी क्रीड़ा कराकरता और हे गोकर्ण जी ! मुनिके प्रसाद से पूर्वजन्म का ज्ञान हमारा नहीं नष्ट हुआ इसभांति अपने किये हुये कर्म का फल यथोचित भोग रहा हूं तब तो इसभांति शुक का वृत्तान्त सुनि गोकर्ण कहने लगा कि; हे बुद्धिमन् ! स्वस्थ हो शोक निवृत्त करो हम तुम्हारे नित्य स्मरण करनेहारी व मुक्ति देनेहारी मथुरा नामपुरी के निवासी हैं बणिज के लिये इस देश को आये व इच्छापूर्वक व्यापार कर फिर मथुरा को जाते हैं वाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि ! गोकर्ण बणिक् के मुख से मथुरा शब्द के निकलतेही बड़ा प्रसन्न हो निज आत्मा को गोकर्ण का पुत्र मानि व निजदेह को अर्पणकर कुछ कहने का विचार किया कि उसी समय शयन से उठि बड़े अभिमान से भरी शबरी ज्यों बाहर आई उसी समय आसन में बैठ उत्तम स्वरूप गोकर्ण वैश्य को देखा उसके देखते ही शुक कहने लगा कि हे मातः ! ये उत्तम अतिथि आये हैं इनका विधि करके प्रीति से पूजन करो ये पूजा करने योग्य हैं इसभांति शुक का मधुर वचन सुनि जबतक कुछ सत्कार किया चाहे तबतक शबर भी आपहुँचा आतेही शबरसे भी यही कहा कि हे पितः ! आज तुम्हारे बड़े भाग्य हैं जो ऐसे महात्मा मथुरानिवासी तुम्हारे अतिथि आये हैं इसभांति धर्मयुक्त शुक की वाणी सुनि हर्षयुक्त हो शबर ने गोकर्ण की सब भांति सेवाकर प्रणाम किया व भांति २ के मधुर २ फल मधु मांस आदि जो वन के उत्तम पदार्थ थे सो सब भक्तिपूर्वक निवेदन किया व हाथ जोड़ नम्र होकर यह बोला कि आप के हम सेवक हैं जो आज्ञा हो सो करें इस भांति शबर की विनय वाणी सुनि गोकर्ण कहने लगा कि; हे शबर ! हम को क्या चाहिये ईश्वर ने सदा यमुना संगम का स्नान व मथुरापुरी का निवास

दे रक्खा है परन्तु जो कुछ हमको दिया चाहते हो तो यह शुक जो पिंजरे में है इसे हमको दीजिये हमारे पुत्र नहीं है इसे पुत्र-स्थान में रक्खेंगे इसभांति गोकर्ण का वचन सुनि शबर कहने लगा कि; हे मित्र! हमको यदि सरस्वती व यमुना के संगम का स्नान लाभ होय तब तो यह शुक तुमको देदेयँ इस शबरके वचन का सुनि गोकर्ण बोले कि; सरस्वती व यमुना के संगम में जो फल प्राप्त होता है सो तुमको मालूम होय तो कहो यह सुनि शबर कहने लगा कि हे गोकर्ण! इस शुकने जो मथुरा का फल व द्वादशी व्रत का फल और संगम का फल सब भलीभांति हम से कहा है इस करके हम सब जानते हैं और तो मथुरा का फल हम कहां तक वर्णन करसके हैं परन्तु तिर्यक्योनि में हो वा राक्षस हो वा कीट पतङ्ग कुछ भी हो जिसके निमित्त मथुरा में व्रत करे उसी की उत्तम गति होती है और संगम के स्नान करने से तो कैसहू पातकी होय सो उत्तम पद को प्राप्त होता है इसभांति हमने संगम स्नान का और गोकर्णेश्वर के दर्शन का फल श्रवण किया है॥

एकसौछाछठि का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति शबर स्त्रीपुरुष शुक का चरित्र श्रवणकराय सहित पिंजरेके शुकको गोकर्णनामवैश्यके निवेदन करदिया तब तो उसे ले वहांसे चल गोकर्ण कुछेक दिन में जाय मथुरामें प्राप्त हो वह शुक निज माता पिता के अर्पण किया व सावधान होकर सबव्यवहारोंको सँभार मथुरा में नि-वास करनेलगा इसभांति बहुतादिन के रहते २ फिर जबधनक्षीण होगया तब तो गोकर्णने उसीदेशके बणिज को फिर विचार किया जिसदेश में शुक प्राप्तहुआ था इस विचार से कइक सौदागरों की सम्मति ले समुद्र के रास्ते जवाहिरियोंको रत्नपरीक्षा के लिये

साथ लेकर छःमहीने के योग्य सबपदार्थों को नाव में ले उत्तम मुहूर्त्त में पिता माता की आज्ञा ले यात्रा का विचार किया तब तो निजस्त्रियों को यह आज्ञा दिया कि हे प्रिये! वृद्ध माता पिता की सेवा समय २ में व वाटिका की सेवा मन्दिर की सेवा यथायोग्य करना कि किसी भांति कोई क्लेश व नुक्सान न होय इसभांति निज स्त्रियों को आज्ञा दे माता पिता को प्रणामकर देवता का दर्शनकर शुक को साथले मङ्गल के शब्दोंको श्रवणकरता मथुराजी से चल नाव में बैठि यात्रा किया व नाव चलते २ जा समुद्रमें पहुँची और जिसभांति अगाधसमुद्रमें नित्य बड़े वेग से चला करती थी वैसे-ही चलतीरही हे धरणि! भावीवश दैवयोग से जो उलटा वायु चलनेलगा उस वेगसे नाव आगेके मार्ग से भ्रष्टहोकर पीछेको हटी व मलाह जो नावके चलानेवाले हैं उन्होंसे न सँभारीगई तो किधर की किधर चलीगई इस व्यवस्थाको देखि सब नाव के निवासीसहित गोकर्ण हाय २ करनेलगे व परस्पर कहनेलगे कि; इसनाव में कोई एक ऐसा पापात्मा है कि जिसके पाप से हम सब मृत्युवश होते हैं इसीभांति चारोंतरफ़ घूमती हुई नौका को चारमहीने व्यतीतभये व छःमहीने की अवधि करके घरसे यात्रा किया था सब कहने लगे कि हाय अब क्याकरें व किस-भांति जीवन होय और वह पापी किसभांति जाना जाय कि जिस एक के बाहर करनेसे सबका प्राण बचे इसवाणी को सुनि शोचि विचारि गोकर्ण बोला कि हे भाइयो! तुम सबपुण्यात्मा हो केवल मैंहीं पापी हूं कि निस्संतान हूं संतानहीन मनुष्य पापी गिनेजाते हैं इतना कहि जो साथ पिंजरेमें शुक था उससे गोकर्ण कहनेलगा कि हे पुत्र! इसविषम समय में कुछ तुम्हारी बुद्धिमें आवे सो कहो कि, जिसमें यह सबका संकट छूटे यह सुनि शुक कहनेलगा कि; हे पिता! डरको त्याग दो मौन होजाव हम तु-म्हारे संकट के दूर करनेका उपाय चिन्तन कर लिया है इतना

कहि व पिंजरेसे निकल उत्तरदिशा में ध्रुवनाम तारेको पहिंचानि नीचगति हो उस नाव से उड़ा व उड़ते २ कई योजन के बाद एक बड़ा ऊंचा पर्वत का शिखर दृष्टि में आया उसे देखि बड़ेहर्ष में होकर उसपर्वतपर गया तो वहां क्या देखता है कि एक मन्दिर बहुत उत्तम शोभा करके युक्त विष्णु भगवान् का उस पर्वत को शोभित कररहाहै उसे देखि प्रसन्नहोकर यह विचारने लगा कि; किसीभांति हमारा पिता भी यहां को आजाता तौ उत्तम होता इसी विचार में कुछ घड़ी व्यतीत भई कि निज २ हाथों में स्वर्ण की थालियों में भांति २ की पूजन सामग्री लिये बहुतसी देवियां वहां आ पहुँचीं व आतेही विष्णु भगवान् की तरफ देखि (ॐ नमो नारायणाय) इसशब्द को कहि साष्टाङ्ग प्रणामकर उत्तम आसन पर बैठि आनन्दपूर्वक नृत्य व संगानका प्रारम्भ किया व भांति २ के बाजे बजनेलगे व हे धरणि ! उसी समय दिव्य भूषण व वस्त्रोंकरके शोभित मनोहर जिनके रूप ऐसी अनेकदेवियां वहांही और आनकर प्राप्तभईं सबकी सब बड़ीभक्ति से नाचि गाय विष्णु भगवान् को रिझाय निज २ स्थान को चलीगईं फिर वह शुक क्या देखता है कि देवता के दक्षिणभाग में अनेकजटा के धारण करनेवाले पक्षी बहुत बड़ा ऊंचा जिन्होंका शरीर सो विराजमान होरहे हैं तिन्होंके मध्य में वह शुक लीख के तुल्य अत्यन्त लघु दीखता उससमय शुक उस जटायु को देखि निज भाषा में शरण २ इस शब्द को बारम्बार पुकारनेलगा तब तो शुक की दीनवाणी सुनि आश्वासन करताहुआ बड़ी प्रीतिसे जटायुष कहने लगा कि; हे शुक ! इस समुद्र के मध्य बड़े २ कराल जीवोंसे बच करके किसभांति कहांसे आयेहो सो अपना वृत्तान्त सत्य २ वर्णनकरो यह जटायुष का वचनसुनि शुक कहनेलगा कि; हे महाराज ! प्रारब्धवश हमारा पिता नौका में बैठि बणिज के लिये कई मनुष्यों के साथ आया

है सो दैवगति वायुवश होनेसे नौका निजमार्ग को त्यागि कुपथ में आयगई इस विपत्ति से दुःखी होकर निजरक्षा के लिये इस पर्वत में आये सो आप सबप्रकार समर्थ हैं दीन व मृत्यु के मुख में गिरेजान आप हमारेपिता की रक्षाकरें जिसमें हमको सुख होय इस वचन को सुनि सबपक्षी बोले कि; हे पुत्र! डरो मत हमारे साथ चलो नौका के समीप हम तुमको मार्ग बताते हैं हमारी पीठिपर बैठि के तुम्हारा पिता सुखपूर्वक यहां को आवे और जलजन्तुका भय नहीं करना सब हमारे चञ्चुसे डर हमको देखि दूर होजाते हैं इतना कहि जटायुष शुक के साथ नौका के समीप चला व जाय वहां से गोकर्ण को निज पीठपर बैठाय लौटि उसी पर्वत पर फिर ल्याय उतारि दिया तवतो गोकर्ण जटायुष की पीठ से उतरि कमलों करके शोभित उत्तम सरोवर में स्नानकर सन्ध्यातर्पण आदि नियमोंसे निवृत्त हो विष्णुमन्दिर में आय विष्णुभगवान् की पूजाकर और देवताओं का दर्शनकर शुक की सम्मति से एकान्त में छिपकरके बैठि गया उसीसमय बहुत देवियों के यूथ उसीभांति निज २ हाथों में पूजा की सामग्री लिये आपहुँचीं व आतेही पूजन करि नाच गान भांति २ के बाजे के साथकर सावधान होकर सबसे जो बड़ी थी सो कहने लगी कि जो अभ्यागत दैवयोग से आवे व महात्मा होय ब्राह्मण का भक्त होय उस भूंखे को भोजन के लिये अमृत के तुल्य फल व तृषाशान्ति करने के लिये उत्तम मीठा और ठंढा जल देना चाहिये इसलिये गोकर्ण को सब दो जिस में तीन महीने तक इसे क्षुधा तृषा फिर दुःख न देवे जिसमें इस पुण्यात्मा का शोक व मोह सब सहित पापों के दूर होय यह कहि उत्तम फल का भोजन अमृततुल्य जल दे देवी बोली कि, हे गोकर्ण! अब किसी भांति का भय और शोक न करो यह स्थान स्वर्ग के तुल्य है इसमें यथासुख निवास करो जबतक

तुम्हारे सब कार्य सिद्ध होयँ इसभांति गोकर्ण से वचन कहकर सब देवी निज २ स्थान को चलीगईं उस दिन से बड़े आनन्द में जिसभांति मथुरा में रहा करता उसीभांति उस पर्वत में रहने लगा हे धरणि! दैवयोग से गोकर्ण की नाव भी वायु ने उठा करके उस भूमि में डाल दिया जहां अनेक भांति रत्नों की पृथिवी तब तो साथ के व्यापारियों ने उस अमोल रत्न को ले इच्छापूर्वक नाव भरलिया और गोकर्ण का खोज करने लगे जब गोकर्ण न मिला तब तो सबके सब दुःखीहो कहने लगे कि, गोकर्ण क्लेश से वा लज्जा से समुद्र में डूबमरा देखो जिसको हम पिता करके जानते और जो हमारी सबकी रक्षा पुत्र की तुल्य करता था वह महात्मा कहां गया और हम उसके घर में लौटिके क्या वृत्तान्त कहेंगे? और तो हमारा कौन बलहै उसका भाग उसके पिता को देंगे यह विचारि फिर मथुराजी की यात्रा की और हे धरणि! उस पर्वत में इसीभांति बड़े शोक को करता गोकर्ण भी कालक्षेप करनेलगा किसी दिन शोकयुक्त हो शुक से निज पिता माता के लिये कहने लगा कि, हे शुक! किसी भांति माता पिता का वृत्तान्त हमको व हमारा माता पिता को मिलना चाहिये तब तो शुक बोला कि हे पितः! हम पक्षियों में छोटे सबभांति असमर्थ हैं नहीं तो आपको यहां से लेचलते सो तो होता नहीं परन्तु मथुरा में जाय आपके माता पिताको तुम्हारा वृत्तान्त कहदेंगे व उन्होंका वृत्तान्त आप से कहेंगे यह हमारी सामर्थ्य है अब आप मुझे आज्ञा दें तो मैं मथुरा को गमन करूं यह शुक की वाणी सुनि हर्षित हो गोकर्ण कहने लगा कि; हे पुत्र! आनन्द से जावो विलम्ब न करो वहां जाय हमारा वृत्तान्त माता पिता से कह शीघ्र यहां को आवो जिसमें हमारे प्राण रहें विना तुम्हारे हम किसभांति जीवेंगे यह गोकर्ण का वचन सुनि प्रणाम कर उसी समय शुक ने मथुरा की यात्रा की और चलते २ कुछ काल में

जाय मथुरा में पहुँचा पहुँचि गोकर्ण के पिता वसुकर्ण से सारा वृत्तान्त निवेदन किया उसे सुनि शोकग्रस्त होकर उसके माता पिता मृततुल्य मानि वह पुत्र का स्नेह शुक में करनेलगे और यह बोले कि हे शुक! हमारे जीवने के लिये गोकर्ण के जो उत्तम २ वृत्तान्त हैं सो वर्णन करो जिसमें हमारे शोक के दिन कटें यह वसुकर्ण का वचन सुनि उसकी इच्छा मुवाफ़िक़ वह शुक पिंजरे में बैठा मीठे २ वचन कहा करता कि इसी समय व्यापारी गोकर्ण के साथी रत्नों से नाव भर के मथुराजी में आपहुँचे व आतेही वसुकर्ण के समीप आय वृत्तान्त निवेदन कर गोकर्ण का भाग बहुत से रत्न निवेदन किया व वसुकर्ण से आज्ञा ले निज २ घर को चलेगये और निज २ घर में रहते वसुकर्ण की सेवा निज पिता के तुल्य करते काल व्यतीत करने लगे ॥

एकसौसरसठि का अध्याय ॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि, हे धरणि! गोकर्ण तो उसी विष्णुमन्दिर के समीप रहता रहा और इसीभांति स्त्रियों का नृत्य गान देखता रहता और स्त्रियां भी नित्य अपने समय आय २ विष्णुपूजन नृत्य गानकर गोकर्ण को भी आनन्द दिया करतीं इसी भांति तेरह दिन व्यतीत भये चौदहवें दिन निज समय पर सब देवियां आईं तो परन्तु अत्यन्त दुःखी व मनमलीन उदासीन वस्त्र जिनके फटे अङ्ग सब भूषण शृङ्गार से रहित व शिर के केश सब उखड़े जैसे और अङ्गों में जिसभांति बन्दर के नखों से नोच खसोट दुर्दशा होती है वैसीही दुर्दशा उन देवियों की होरही है और देह में जिस किसी अङ्गों से रुधिर की धारा वह रही है व रोती हुई बारम्बार यही कहती हैं कि; अपुत्र मनुष्य की स्वर्ग में गति नहीं होती इसभांति स्त्रियों की पीड़ायुक्त विलाप वाणी सुनि बड़े सन्देह में हो गोकर्ण कहनेलगा कि,

हे देवियो! किस दुःख से यह तुम्हारा विलाप है व किस दुष्ट ने तुमको सताया सो कथन करो यह सुनि सबकी सब बोलि उठीं कि, हे धर्मात्मन्! हमारे दुःख के विषय में तुमको प्रश्न करना अयोग्य है सबके दुःख व सुख का कारण ईश्वर है अपने २ किये हुये पाप व पुण्य को सब भोगते हैं इसभांति स्त्रियों का वचन सुनि उन्होंके दुःख के निश्चय के लिये फिर गोकर्ण बड़े विनय से नम्र हो प्रणामकर हाथ जोड़ दीन हो कहने लगा कि आपने कहा तो सबकुछ परन्तु हमारी बुद्धि ऐसी नहीं है जो समझि जायँ इसलिये जो गुप्त भी है तथापि आप हमारे से कथन करें अन्यथा हम पहलेही से अगाध दुःखसागर में डूबे हैं केवल आपही सबका आधार था अब इस तुम्हारे दुःख को देखि निराधार होकर प्राणत्याग करूंगा यह बात गोकर्ण की सुनि उन स्त्रियों के समूह से एक स्त्री कहने लगी कि, दुःख तो उससे कहना चाहिये जो उसको दूर करे अन्यत्र कहना निःष्फल होता है और हे मित्र! यदि पूछतेही हो तो सावधान होकर हमारा सारा वृत्तान्त श्रवण करो इस पृथिवी में जो मुक्ति की देनेहारी मथुरानामपुरी रमणीया है तिस पुरी में अयोध्यापुरी का महाराज चतुरङ्गिणी सेना को लिये बड़ी धूमधाम से तीर्थयात्रा के निमित्त आया और स्नान दर्शन से निवृत्त हो चातुर्मास्य अर्थात् वर्षाकाल श्रीमथुराजी में निवास करना विचारा सो राजा ने जहां डेरा किया था वहांही समीप एक विष्णुमन्दिर व फल पुष्प करके युक्त उत्तम २ वृक्षों की वाटिका थी कि जिसमें मधुरजल करके पूर्ण अनेक कूप वापी व तड़ाग बन रहे हैं और चारों दिशा में घिरा भया प्राकार अतिदृढ़ रक्षा के लिये बना है उस बगीचे में राजसेवक आय २ कर निर्भय जो जिसकी इच्छा में आवे उसे नोचखसोटकर देते इसी भांति थोड़ेही दिन में वह बाग विध्वंस होगया और रक्षावाले पुरुषों

ने निषेध भी किया परन्तु उनका कहना किसीने न माना और विध्वंस करदिया इतना कहकर व वस्त्रों से निज २ मुखों को ढँपिकर धीरज त्यागि रोदन करने लगीं इसभांति उन सबका वृत्तान्त व रोदन सुनि गोकर्ण अत्यन्त दुःख से पीड़ित हो निज मस्तक से सबोंके चरणों को प्रणाम कर दीनता से विनयपूर्वक समझानेलगा तबतो थोड़ी देर में सावधान सबको देखि गोकर्ण कहनेलगा कि यदि हम मथुरा में होते तो उस वाटिका की ऐसी दुर्दशा न होती हम राजा को किसी रीति से निषेध करते ईश्वर की गति दुस्तर है जो हम इस अवस्था में सबभांति असमर्थ हैं वाराह जी कहते हैं हे धरणि! इसभांति गोकर्ण की वाणी सुनि वे सबकी सब चैतन्य होकर बड़ी प्रसन्नता के साथ पूछनेलगीं कि; हे मित्र! आप कौन हो व किस भूमि में तुम्हारा निवास है व किसलिये यहां को आये हो सो संपूर्ण वृत्तान्त वर्णन करो यह स्त्रियों का वचन सुनि गोकर्ण कहनेलगा कि; हे भागमानो! हम मथुरा के निवासी जाति के वैश्य गोकर्णनाम बणिज के लिये आये हैं सो दैववश किसीभांति यहां को पहुँचे उस दिन से नित्य २ तुम सबको वस्त्र भूषण आदि शृङ्गारों करके सुशोभित देखते थे अब तुम्हारी यह दशा देखिके हम अत्यन्त दुःखी होरहे हैं सो अपना वृत्तान्त यथायोग्य वर्णन करो यह सुनि उन स्त्रियों में से एक चतुर स्त्री कहनेलगी कि; हम सब वाटिका के पुष्प, लता, वृक्ष आदि हैं हमारा पालन सदा हमारे स्वामी की आज्ञा से होता था तब हम सुखी रहती थीं व पुष्प फल पल्लव करके शोभित रहतीं सो जबसे राजा वहां आय निवास लिया तबसे राजा के नौकरों ने क्रम २ से हमारा विध्वंस करदिया उस पीड़ा से हम दुःखी हो यह विचार रही हैं कि किसकी शरण में जायँ जो हमारी रक्षाकरे अब हे मित्र ! हमारेमें पुष्प व पल्लव तो रहा नहीं केवल वृक्ष व शाखा ही शेष हैं इसलिये हम सब मूर्च्छित

हो रही हैं जो उस वाटिका के मध्य में ईंट पत्थर का मन्दिर है सोई यहां रत्नमन्दिर होकर दीखता है और जो वहां विष्णुभगवान् का पाषाण विग्रह है सोई साक्षात् स्वयं विष्णुभगवान् विराजमान होरहे हैं और जो वहां कूप व वापी हैं सोई यहां अमृतरस करके पूर्ण भांति २ के कमलों करके शोभित व हंसगणों करके युक्त निर्मल सर विराजिरहा है और जो वहां वृक्ष हैं वे सब स्वर्ण के होकर यहां नारायण के समीप शोभा दे रहे हैं सो हे गोकर्ण! उस बगीचे के विध्वंस होने से हम सब व्यथित व कुरूप होरही हैं इसभांति हे धरणि! स्त्रियों का वचनसुनि गोकर्ण पूछनेलगा कि हे भागमानो! जो मनुष्य बगीचा और पुष्पवाटिका, कूप, वापी, देवमन्दिर आदि बनाते हैं उनको क्या फल होताहै सो आप वर्णन करें? यह गोकर्ण का वचन सुनि एक स्त्री कहनेलगी कि, हे गोकर्ण! द्विजाति जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य ये तीनों वर्ण हैं इन्होंका प्रथम धर्म इष्टापूर्त्तही है इष्ट करने से मनुष्य स्वर्ग को जाता है और पूर्त्त से मुक्ति को प्राप्त होता है वह वापी कूप तड़ाग देवमन्दिर आदि जीर्ण को अर्थात् टूटेफूटे को उद्धार करते हैं अर्थात् नये कर देते हैं वे मनुष्य पूर्त्त नाम पुण्य के फल को प्राप्त होते हैं और हे गोकर्ण! भूमिदानकरनेवाला व गोदानदेनेवाला मनुष्य जिसलोक को जाता है उसीलोक में वृक्ष लगानेवाला भी प्राप्त होता है हे गोकर्ण! अधिक तो क्या कहें परन्तु एक वृक्ष पिप्पल का एक निम्ब का एक बट का दश पुष्पों के दो वृक्ष दाड़िम के दो वृक्ष बिजौरानींबू के और पांच वृक्ष आम्र के जो मनुष्य पृथिवी में रोपण करता है वह कैसहू पापी होय परन्तु इस पुण्य के प्रभाव से नरक नहीं देखता अर्थात् उसको स्वर्गही होता है हे गोकर्ण! जिस भांति सुपुत्र कुल का उद्धार करता है इसीभांति पुष्प व फलों करके युक्त वृक्ष निज लगानेवाले स्वामी को नरक से उद्धार करते हैं इसभांति स्त्रियों

की वाणी सुनि गोकर्ण प्रसन्न होकर कहनेलगा कि; इस अमृत के तुल्य वाणी श्रवण करने से मेरा चित्त तृप्त नहीं होता और भी कृपा करके आप वर्णन करें यह सुनि स्त्री कहनेलगी कि, हे गोकर्ण! वृक्षरूपी पुत्र और सुपुत्रों से अधिक पुण्यवान् होतेहैं निज स्त्री से उत्पन्न हुआ पुत्र कोई पुण्यवान् होता है और वृक्ष तो सभी पुण्यरूपी होते हैं विचार करो कि; जिनके काष्ठ से अग्नि-होत्र आदि यज्ञ होते हैं और जिन्होंकी छाया में पथिक विश्राम कर सुख पाते हैं और जिन्होंके आश्रय में अनेक भांति के पक्षी पुष्पफल से निर्वाह कर निवास करते हैं और जिन्होंके पत्र, पुष्प, फल, छाल, मूल आदि औषधों में मनुष्य का उपकार करते हैं इसलिये वृक्षों की पञ्चयज्ञ सदा होती रहती है और नानाभांति के गृहकार्य जिन्होंसे सुधरते हैं और दो बार वर्ष में फल देते हैं वह मानो निज रोपण करनेवाले माता पिता के तृप्त होने के लिये ब्राह्मणभोजन कराते हैं इसभांति उत्तम कर्म किस पुत्र से बन पड़ेगा जो वृक्षों की बराबरी करसक्ता है इस भांति वृक्षों की महिमा कहकरके मालती दुःख से उसास लेती हुई मूर्च्छित होकर पृथिवी में गिरपड़ी तब तो गोकर्ण ने ठंढे जल के छींटे से फिर सावधान किया तब स्त्री फिर बोली कि हे गोकर्ण! तुम निज वृत्तान्त फिर कथन करो यह सुनि गोकर्ण बोला कि; हे स्त्रियो! हमारे घर में माता पिता वृद्ध होरहे हैं और उत्तम व्रत के धारण करनेवाली चार स्त्रियां पतिव्रता हमारे घरमें हैं व जिस वाटिका व मन्दिर का तुम कथन करती हो वह हमाराही है हमारे वहां न होने से सबभांति क्लेश तुमको भया अब हम क्या करें सबविधि असमर्थ हैं केवल शोकहीमात्र का सावकाश है और तो क्या करसक्के हैं यह गोकर्ण का वचन सुनि एकस्त्री जो सबोंमें वृद्धा थी वह बोली कि; हे गोकर्ण! यदि मथुरा चलने का विचार होय तौ एक मुहूर्त में तुमको लेचलें देखो तुम्हारेलिये यह विमान

आया है अब बहुत से रत्न भूषण और उत्तम २ फल लेकर इसके ऊपर बैठकर यात्रा करो ईश्वर को प्रणाम करिकै तबतो गोकर्ण मन्दिर में जाय परमेश्वर को प्रणामकर आज्ञा ले स्त्रियों के साथ विमान में बैठतेही क्षणमात्र में जहां राजा ने डेरा कररक्खा था वहांही आपहुंचा व आतेही राजा के समीप जाय अनेक भांति के मणि औ रत्न व अनेकभांति के अपूर्व मधुरफल को निवेदनकर प्रणाम किया तबतो इसे देखि राजा ने बहुत प्रसन्न होकर आदरपूर्वक निजआधे आसनपर बैठाया और कुशल पूछने लगा तब तो गोकर्ण ने राजा से यह कहा कि; हे महाराज! इस समय एक घड़ी के वास्ते यहां से हमारे संग आप बाहर चलें कुछ आश्चर्य आपको देखावेंगे यह सुनि राजा निज सेनापति से बोला कि दो घड़ी के लिये हम कहीं जाते हैं किसीभांति का उत्पात न होने पावे सेना की रक्षाकरना इतना कह गोकर्ण के साथ होलिया तबतो गोकर्ण निजविमान के समीप जाय सब वृत्तान्त वर्णनकरि स्त्रियों को देखाया सब चरित्र देखि आश्चर्य में हो राजा गोकर्ण की प्रशंसा बारम्बार करनेलगा और राजा को वर देकर सब स्त्रियां सहित विमान के स्वर्ग को चलीगईं फिर गोकर्ण ने निजवृत्तान्त सब राजा से यथायोग्य वर्णनकिया उसे सुनि राजा प्रसन्न होकर गोकर्ण के लिये हाथी घोड़े उत्तम २ वस्त्र और बहुत से ग्राम दिये श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति पूर्त्तनाम पुण्य का फल हमने वर्णन किया॥

एकसौअड़सठि का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! राजा से बिदा हो गोकर्ण मङ्गलपूर्वक जाय निजघर में माता पिता को मिलि प्रणाम कर शुक को देखि प्रसन्न होकर निज चारों स्त्रियों को मिला और जो २ मथुराबासी निज इष्टमित्र थे उन्हों को मिलि आनन्द हो

निज पुष्पवाटिका में जाय टूटे फूटे को सँभारि ब्राह्मणों को बुलाय बड़े धूमधाम से उसने यज्ञ का प्रारम्भ किया जिस यज्ञ में भांति २ के भोजन व नानाभांति के मधुरपदार्थ इकट्ठे कर सहित चारों स्त्रियों के व माता पिता के यज्ञ समाप्तकर इच्छापूर्वक ब्राह्मणों को दक्षिणा दे मङ्गलपूर्वक गाने बजानेवालों को धन, वस्त्र व भूषण से तृप्तकर बिदा किया फिर सब मथुरावासियों को बुलाय एक २ को छहों रस के भोजन से तृप्तकर मिलिभेंटि प्रणामकर वह हाथ जोड़ यह कहनेलगा कि हे मित्रो! मैं तो केवल माता पिता की पूर्णकृपा व तप के प्रभाव से व आपलोगों की पुण्य से जीवताहुआ लौट आया हूं इतना कह व शुक की तरफ़ देख के बड़े मोह में युक्त होकर रोदन करनेलगा हे मित्रो! जिस वाटिका के नष्ट होने से धर्म उत्तमगति व राजा से बहुत पदार्थों का लाभ भया है वह सब हमारे पुत्र शुक के बुद्धि पराक्रम का फल है यह कहि सबको यथास्थान बिदाकर मथुराजी में रहनेलगा और कुछकाल व्यतीत होनेपर उसने वहांही शुक के नाम मन्दिर उत्तम व दृढ़ बनवाय शिवजी का लिङ्ग स्थापन किया जिसका नाम लोक में प्रसिद्ध शुकेश्वर भया उस प्रतिष्ठा के अन्त में ब्रह्मयज्ञ किया व जिस यज्ञ में दो सौ ब्राह्मण इच्छापूर्वक भोजन व दान को पाय तृप्त होकर आशीर्वाद को देते हुये निज २ स्थान को गये और गोकर्ण साथ शुक के मर करके मुक्त होकर दिव्यलोक में प्राप्त भया हे धरणि! शुकेश्वर शिवजी का दर्शन व संगम में स्नान करनेसे उत्तमगति को मनुष्य पाता है। इसभांति हमने श्रीमथुराजी का माहात्म्य गोकर्णेश्वरशिव का व सरस्वती का संगमफल वर्णन किया जिसके सुनने से मनुष्य इस लोकमें धन व पुत्र आदि सुखोंको पाकर परलोक में उत्तम विमान पै बैठि दिव्यलोक को जाता है॥

एकसौउनहत्तरका अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! अब और भी कथा पाप की दूर करनेहारी हम वर्णन करते हैं जिसमें मुक्ति का देनेहारा संगमतीर्थ का प्रभाव वर्णितहै किसी वन में एकधर्मनिष्ठ उत्तम ब्राह्मण रहा करता कि जिसका नाम महाव्रत था उस ब्राह्मणने जप, तप, हवन, देवपूजन और वेदपाठ आदि उत्तम कर्मोंकरके युक्त बहुतसा काल उसी वनमें व्यतीतकिया किसीदिन उसमहाव्रत ब्राह्मण के मन में यह आया कि, इस शरीर को उत्तम २ तीर्थोंमें धोना चाहिये यह विचारि प्रथम मथुरा में आय सूर्योदयन नाम तीर्थ में स्नानकर प्रदक्षिण का प्रारम्भ करता भया असिकुण्ड का स्नानकर दक्षिणकोटि के तीर्थ में स्नानादि कर्मों से निवृत्त होकर उत्तर कोटि के तीर्थों में जाकर उसने स्नानकिया इस भांति मथुरा के सब तीर्थों में स्नानकर पुष्कर नाम तीर्थकी यात्रा का विचारकर जब वह कुछ दूर चला तबतो किसी शून्य मार्ग में जब गया तो क्या देखताहै कि बड़े घोर विकट दर्शन हैं जिन्हों के ऐसे भयंकर पांच प्रेत देख पड़ते हैं उन्होंको देखि घबराय हृदय से कम्पित होकर उसने नेत्रों को मूंदलिया फिर कुछ धीरज मन में लाय वह महाव्रत प्रेतों से पूछनेलगा कि, आप सब घोर भयंकर मूर्तिधारण किये कौन हो और किस पाप के करने से यह भय देनेवाले स्वरूप को प्राप्त भये हो कहां तुम्हारा सबका निवास है यह महाव्रत ब्राह्मण का वचन सुनि प्रेत कहनेलगे कि; हे ब्राह्मण! क्षुधा तृषा करके पीड़ित निज बुद्धि के फल उदय होनेसे सब उत्तम कर्मोंसे भ्रष्ट होकर बहुत भांति के दुःख को भोगते संसार में घूमरहे हैं न तो पृथ्वी में न आकाश में व न कहीं दिशाओं में हमको शरण है अब हमारे पांचों का नाम श्रवणकरो पर्युषित, सूचीमुख, शीघ्रग, रोधक और

लेखक क्रमसे यह हमारा सबका नाम है इसभांति प्रेतों का वचन सुनि ब्राह्मण बोला कि; प्रेतयोनि तो दुष्कर्म से होतीहै यह नाम किसभांति तुमको प्राप्त भया इस वचन को सुनि प्रेत कहनेलगे कि हमतो सदा स्वादयुक्त उत्तम भोजन करते और ब्राह्मणों को स्वादहीन और ठंढा भोजन देते थे इसलिये हमारानाम पर्युषित भया और इसका नाम सूचीमुख इसनिमित्त भया है कि, भिक्षुक ब्राह्मणों को अन्न के लिये बुलायके पीछे न देना निराश लौटाय देना और यह जो शीघ्रगनामक है सो इस कर्म करने से नाम पाया कि बड़े शीघ्र ब्राह्मणों के समीप जाता व अनेकभांति मिथ्या बोलि उन्हें आशा देता और पीछे किसी भांति का उपकार न करता और रोधकनाम जो प्रेत है इसने यह कर्मकिया है कि सदा सब ब्राह्मणों को रोकिके आपही जो कुछ यजमान से मिलता सो लेलेता और उत्तम भोजनभी आपही करता इसी से यह रोधक नाम पाया और लेखक जो है इसका यह कर्म है कि नित्य भूमि में कुछ लिखाकरता और मौन भी रहता इसलिये लेखक कहाया और हे ब्राह्मण! लेखकनाम प्रेत की गति मन्द है रोधकनाम प्रेत की गति नीचे शिर करके है और शीघ्रग पंगुगति है सूचीमुख की गति हाथों से है और पर्युषित केवल ग्रीवामात्र से है ओठ व उदर लम्बे हैं अण्डभी बहुत गम्भीरहैं अङ्ग सब सूखे हैं हे ब्राह्मण! इस भांति हमने निज वृत्तान्त वर्णन किया और भी जो सुननें की इच्छा हो सो पूछो यह सुनि ब्राह्मण कहनेलगा कि; हे प्रेत! जे २ मनुष्यलोक में जीव हैं उनका भोजन हमको विदित है तुम्हारे सबका क्या आहारहै? सो कहो हमारे श्रवणकरने की इच्छा है इस वचन को सुनि प्रेत कहनेलगे कि; हे ब्राह्मण! जो २ पदार्थ सब जीवों करके निन्दित हैं और जिसके सुनने से ग्लानि होती है वह पदार्थ हमारा भोजन है सो क्रम करके श्रवण करो जो स्त्रियों का मूत्र,

विष्ठा, थूक, कफ, और शौच का जल यही सब हमारा भोजन है और जो घर पवित्र नहीं रहता है उसमें हम निवास करते हैं और जिस घर में मन्त्र विना यज्ञ होता है और बलिवैश्वदेव नहीं होता, गुरुका पूजन नहीं होता, स्त्री जिस घरमें मालिक है, फूटे पात्र हैं और उच्छिष्ट भूमि रहती है, नित्य जिस घरमें कलह होता है, कुपात्र को दान जिस घरमें मिलता है व विधिहीन कर्म होते हैं वर्णसंकरों का संग जहां होता है और जिस घरमें निन्दित कर्म होते हैं इन स्थानों में हे ब्राह्मण ! हमारा निवास है और पात्रहीन का दान हमको प्राप्त होताहै हे ब्राह्मण! इसभांति हमने निज शरीर के निर्वाह का वृत्तान्त वर्णनकिया अब हम इस प्रेतयोनि से बहुत ही दुःखी होरहे हैं इसलिये आप कृपा करके यह कहें कि, किस २ कर्म के करने से प्रेतयोनि दूर होती है यह सुनि ब्राह्मण कहनेलगा कि हे प्रेत ! जो मनुष्य कृच्छ्रनाम चान्द्रायण व्रत करते हैं, श्रद्धा करके उत्तम मधुर भोजन ब्राह्मणों को देते हैं, अभ्यागतों की सेवा करते हैं और जो देवता, माता, पिता और गुरु आदि पूज्यों का छल त्याग कर सेवन करते हैं वे मनुष्य प्रेत नहीं होते और जे मनुष्य मान व अपमान में सम रहते हैं व शत्रु मित्र को बराबर समझते हैं वे प्रेत नहीं होते जे मनुष्य किसी महीने की शुक्लचतुर्थी तिथि को मङ्गलबार होनेपर निज पितरों का श्राद्ध करते हैं वे भी प्रेत नहीं होते और जिन्हों ने काम, क्रोध, लोभ, मोह और तृष्णा आदि दुर्गुणों को जीत लिया है क्षमा, दया, शील, संतोष में जो सदा निरत हैं वे भी प्रेत नहीं होते और जो सदा दरिद्र सत्पात्र को दान देते हैं व शुक्लपक्ष-कृष्णपक्ष में दोनों एकादशी, सप्तमी व चतुर्दशी का व्रत करते हैं वे भी प्रेत नहीं होते और जो गौ ब्राह्मण तीर्थ पर्वत और नदियों को नित्य प्रातःकाल उठकर प्रणाम करते हैं वे भी प्रेत नहीं होते इस

भांति धर्मयुक्त ब्राह्मण का वचन सुनि प्रेत कहने लगा कि; हे महात्मन्! जिन कर्मों से प्रेत नहीं होता वे तो आपने वर्णन किये अब कृपा करके येभी कहैं कि किस कर्म से मनुष्य प्रेत होता है तब ब्राह्मण बोला कि; हे प्रेत! जो ब्राह्मण शूद्र का अन्न भोजन कर प्राण त्यागकरे वह प्रेत होता है व पाखण्डी, नग्न, कापालिक आदि धर्मविरुद्ध निन्द्यमनुष्यों के साथ भोजन करने से इकट्ठे बैठने से बातचीत करने से स्पर्श करने से मनुष्य प्रेत होता है और जे मनुष्य पाखण्डमार्ग में स्थित हैं मद्यपान करते हैं और परस्त्रीगामी हैं वे भी प्रेत होते हैं और जे अप्रोक्षितमांस अर्थात् बलि विधानरहित जे पशु मारे जाते हैं उनका मांस खाते हैं वे भी मरकर के प्रेत होते हैं और जे देवता का धन ब्राह्मण का धन गुरु का धन चौरवृत्ति से वा हठ कर के ग्रहण करते हैं व कन्यादान देकर फिर नहीं देते वेभी प्रेत होते हैं और माता, पिता, बहिनि, स्त्री और पुत्र इनको जो निरपराध त्याग करते हैं वे भी मरने पर प्रेत होते हैं और जो मनुष्य ब्राह्मण विद्या को साङ्ग पढ़के योग्य को त्याग करते हैं अयोग्य को यज्ञ कराते हैं और जो ब्राह्मण होकर शूद्र की सेवा करते हैं वे भी मर करके प्रेत होते हैं और हे प्रेत! जिसने ब्राह्मण का वध व गौ का वध किया हो व जो कृतघ्न होय व पञ्चमहापातक जिसने किये होयँ वे सब मरकर प्रेतयोनि को पाते हैं और जिसने गुरु की आज्ञा को भङ्गकिया होय और उपदेश करनेवाले को न माने अर्थात् इनके वचन में न टिके और जो नास्तिकों से व पतितों से दान लेवे वे सब पुरुष पातकी होते हैं मरनेसे प्रेत योनि पाते हैं इसभांति ब्राह्मण के मुख से धर्म विवेकयुक्त वाणी सुनि प्रेत बोला कि; हे भगवन्! जिन्हों का कर्म आपने कहा है इन पापियों की भी कभी गति होतीहै अर्थात् इनमूढ़ों के पाप छूटने का उपाय किसीभांति कहा है? यह सुनि ब्राह्मण

कहनेलगा कि हे प्रेत! जे धर्मसे विमुख मूढ़ दया और दान करके वर्जितहैं उनकी और कहीं तो गति दीखती नहीं केवल मथुराजी में संगमतीर्थ के विना यदि संगमतीर्थ में श्रवण नक्षत्र करके युक्त भाद्रमास की द्वादशी को स्नान कर पितरों का तर्पण कर वामन भगवान् का दर्शन करके हवन ब्राह्मणभोजन स्वर्ण, चांदी, वस्त्र, छत्र और पादुका आदि जे दान करतेहैं वे किसी भांति प्रेतयोनि में नहीं जाते व सबपापों से मुक्त होते हुये उत्तमविमान में बैठकर स्वर्गलोक को जातेहैं और हे प्रेत! जिस किसीने संगमतीर्थ में स्नान किया वह सबपापोंसे मुक्त होकर वैकुण्ठनिवासी होताहै और यहभी हमने शास्त्र में सुना है कि जो संगमतीर्थ का स्मरण वा नामोच्चारण करता है उसको गङ्गास्नान के तुल्य फल होता है और जो इस संगममाहात्म्य को प्रेत होके श्रवण करे तो प्रेतत्व को त्यागि उत्तम विमान में बैठि विष्णु लोक को जाता है यह ब्राह्मण महात्मा का वचन सुनि प्रेत कहने लगा कि; हे ब्राह्मणोत्तम! हमारे कल्याण के लिये कोई विधि पूर्वक ऐसा व्रत व उपदेश करो कि, जिसके करनेसे हम इस अधर्म प्रेतयोनि से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होयँ यह सुनि ब्राह्मण कहनेलगा कि; हे प्रेत! इसकी विधि जिसप्रकार पुराण में वर्णन की है सो श्रवण करो किसीसमय मान्धातानाम सूर्यवंशी राजा ने निज कुल के पूज्य पुरोहित वशिष्ठजी से यह प्रश्न किया कि हे ब्रह्मन्! किस पुण्यकर्म करने से जीव प्रेतयोनि से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होताहै सो आप वर्णनकरें यह राजा का प्रश्न सुनि वशिष्ठजी कहनेलगे कि, हे राजन्! जे मनुष्य श्रवण नक्षत्रयुक्त भाद्रपद की द्वादशी को स्नान, तर्पण, श्राद्ध, दान और हवन आदि उत्तम कर्म करते हैं वे सब एक २ लक्षगुण को प्राप्त होते हैं और यदि उससमय मथुरा मिले तो संगम में स्नान कर श्रीवामन भगवान् को पूज-

कर जे कलशदान करते हैं हे राजन्! उनको जो फल प्राप्त होता है सो श्रवण करो कि, कपिला गौ को उत्तम पर्व में हेमशृङ्गी, रौप्यखुरी, ताम्रपृष्ठी, मौक्तिकपुच्छी और सवत्सा जो वेदविद् ब्राह्मण को देनेसे पुण्य होता है व पुण्य संगम के स्नानमात्र से होता है व श्रवणद्वादशीव्रत करनेसे मनुष्य को प्रेत वा राक्षस होने का भय नहीं रहता अन्त में चौदह इन्द्र जितने काल राज्य करते हैं उतने काल वह पुरुष स्वर्गबास करताहै फिर स्वर्ग से भ्रष्ट होने पर भूमि में वेदविद् पूर्वजन्म का स्मरण करनेमें समर्थ धनकरकेयुक्त ब्राह्मण होताहै व ब्राह्मण हो ज्ञान योग साधनकर अन्तमें मुक्ति को प्राप्त होताहै व उसी द्वादशी को करवा अन्न से पूर्णकर रत्न स्वर्ण से युक्तकरि व उपानत् अर्थात् जूते, पादुका, छत्र आदि जो दान करता है व होम करके ब्राह्मणों को उत्तम भोजन सहित दक्षिणा के देता है सो प्रेत नहीं होता है हे धरणि! इस द्वादशी के पूजन की यह रीति है कि स्नानकर गोमय से भूमिका लेपनकर पूजा की सामग्री सम्पादनकर विष्णु की मूर्ति स्वर्ण की वा शालग्राम को घट पर स्थापितकर सावधान होकर इन मन्त्रों से पूजाकरे प्रथम हाथ में पुष्प लेकर इसमन्त्रसे आवाहनकरे (ॐ आगच्छ वरदानात्त्वं श्रीपते मदनुग्रहात्। सर्वगोऽपि निजांशेन स्थानमेतदलंकुरु) आवाहन कर इसमन्त्रसे प्रणामकरे(मन्त्रः।ॐ यस्त्वं नक्षत्ररूपेण द्वादश्यां नभसि स्थितः। तन्नक्षत्रपतिंवन्दे मनोवाञ्छित सिद्धये) इस मन्त्र से प्रणामकर तीर्थजल से स्नान करावे (मन्त्रः। ॐनमः कमल नाभाय कमलालयकेशव। कमूर्तेसर्वतोव्यापिन्नारायण नमोस्तुते) इस मन्त्र से स्नान कराय वस्त्र भूषणादिक निवेदन करे (मन्त्रः। ॐ सर्वव्यापिञ्जगद्योने नमःसर्वमयाच्युत। श्रवणद्वादशीयोगे पूजां गृहणीष्व केशव) सब भूषण वस्त्र समर्पणकर इस मन्त्र से धूप देय (मन्त्रः। ॐ धूपोऽयं देवदेवेश शंखचक्र

गदाधर। अच्युतानन्तगोविन्द वासुदेव नमोस्तुते) धूप दे इस मन्त्र से दीप देय (ॐ तेजसा सर्वलोकाश्च निर्वृतास्सन्तु मेऽव्यय। त्वंहि सर्वगतं तेजो जनार्दन नमोस्तुते) इस मन्त्र से दीप दे नैवेद्य देवे (मन्त्रः। ॐ अदितेर्गर्भवासाय वैरोचनिशमायच। त्रिभिःक्रमैर्जितालोका वामनाय नमोस्तुते) इस मन्त्र से नैवेद्य निवेदनकर अर्घ्य देवे (मन्त्रः। ॐदेवानां संभवस्त्वं हि योगिनां परमागतिः। जलशायिञ्जगद्योने अर्घ्यम्मे प्रतिगृह्यताम्) इस मन्त्र से अर्घ्य दे संस्कार करें अग्नि में इस मन्त्र से आहुति देय (मन्त्रः। ॐ हव्यभुक् कव्यकर्ता त्वं होता हव्यस्त्वमेव च। सर्व मूर्ते जगद्योने नमस्तेकेशवाय च स्वाहा) इस मन्त्र से अष्टोत्तर सहस्र आहुति दे दक्षिणा समर्पण करे (मन्त्रः। ॐ हिरण्मयान्नन्देवेश जलवस्त्रमयो भवान्। उपानच्छत्रदानेन प्रीतो भव जनार्दन) इस मन्त्र से दक्षिणा दे हाथ जोड़ नम्र होकर स्तुति करे (मन्त्रः। ॐ पर्जन्यो सलिलं सूर्यः वरुणं केशवः शिवः। अग्निर्वैश्रवणो देवः पापं हरतु मेऽव्ययः) इस मन्त्र से स्तुति कर नमस्कार करे (मन्त्रः। ॐ अन्नं प्रजापतिर्विष्णुरुद्रेन्द्र चन्द्रभास्कराः। अन्नं त्वष्टा यमोऽग्निश्च पापं हरतु मेऽव्ययः) इस मन्त्र से प्रणाम कर करवाको दान करें (मन्त्रः। ॐ वामनो बुद्धिदाता च द्रव्यस्थो वामनस्स्वयम्। वामनस्तारको भूम्यां वामनाय नमोस्तुते) इस मन्त्र को पढ़ि यजमान करवाको देवै ब्राह्मण दान लेते समय यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐ वामनःप्रतिगृह्णाति वामनो मे प्रयच्छति। वामनस्तारकोभाभ्यां वामनाय नमोनमः) इस मन्त्र को पढ़ि ब्राह्मण ग्रहण करे फिर विधानपूर्वक यजमान गोदान करे (मन्त्रः। ॐ कपिलाङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश। दत्वा कामदुघा लोका भवन्ति सफला नृणाम्) इस मन्त्र से गोदान कर विसर्जन करे (मन्त्रः। ॐ ममपापक्षिदे तुभ्यं देवगर्भसुपूजित। मया

विसर्जितोदेव स्थानमेतदलंकुरु) इस मन्त्र से विसर्जनकर सब सामग्री आचार्य को निवेदन करे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! महातपा ब्राह्मण प्रेत से कहनेलगा कि; हे प्रेत! इसभांति द्वादशी का व्रत जे मनुष्य भाद्रमास में करते हैं उनका वाञ्छितफल सिद्ध होता है और सब पापों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होते हैं और हे प्रेत! जे मनुष्य यमुना सरस्वतीसंगम तीर्थ में स्नान, तर्पण, श्राद्ध और गोदानादि अनेक विधि का दान करते हैं उस एकगुण पुण्य का शतगुण फल उस तीर्थ के प्रभाव से होताहै और हमनेभी इस संगमतीर्थ का सेवन भक्तिपूर्वक विधि से बहुतकाल किया है इसलिये तुम सब जो पापमूर्ति हो सो हमको नहीं बाधा करसके भाद्रमहीने में श्रवणनक्षत्र सहित द्वादशी व्रत करने से सबपाप दूर होते हैं हे प्रेत! हमने यह प्रभाव साक्षात् देखाहै वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति महातपा ब्राह्मण के कहतेही आकाशमें नगाड़े आदि बाजे बजने लगे व पुष्पवृष्टि होनेलगी और प्रेतोंकेलिये विमान उत्तमपुरुषों करके युक्त प्राप्त भये व देवदूत कहनेलगे कि, हे प्रेतो! यह हमारा वचन श्रवण करो कि; इस महातपा ब्राह्मण के मुख से पुण्यकथा श्रवण करनेसे तुम्हारा सबका प्रेत शरीर छूटगया इस लिये उत्तमों के साथ संभाषण करना भी उत्तम होता है इतना कहि उनप्रेतों को विमान में बैठाय सबके देखतेही स्वर्गलोकको लेगये वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति तीर्थ व व्रतका प्रभाव हमने वर्णन किया कि, जिसके पुण्यचरित्र सुननेसे प्रेत मुक्त होकर उत्तम गतिको प्राप्त भये तिसके साक्षात्सेवन करने से मुक्ति क्यों न होगी? हे धरणि! इस कथा को जो मनुष्य श्रवणकरें वा भक्ति से पठन करें वे सब पापोंसे मुक्त होकर उत्तम गतिको जाते हैं और पिशाचसंज्ञक जो लोकप्रसिद्ध उत्तमतीर्थहै जिसका यश श्रवण करनेसे मनुष्य प्रेतयोनिसे मुक्त होजाताहै॥

एकसौसत्तर का अध्याय ॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! अब कृष्णगंगातीर्थ का माहात्म्य वर्णन करते हैं सो श्रवणकरो जिसतीर्थ में श्रीव्यास जी महाराज नित्य स्नान करते हैं सो तीर्थ जिसका कृष्णगङ्गा नाम है सो सोमतीर्थ और वैकुण्ठतीर्थ के बीच में है जहां श्री-व्यासमुनिने बहुतकाल तप किया है व जिस कृष्णगङ्गा तीर्थ के सेवनकरने के लिये सदा देश २ के मुनि आया करते व अनेकभांतिका सन्देह शास्त्र, पुराण, स्मृति आदि का पूछि२ निस्सन्देह होते थे और कालञ्जरनाम शिवजी का दर्शन कर कृष्णगङ्गा का स्नान सफल करते वहांहीं व्यासजी ने सबसंग को त्यागि पक्षाहारी होकर बारहवर्ष तप किया "पक्षाहारी उसे कहते हैं जो पूर्णिमा व अमावास्या को भोजन करे और सब तिथियों को व्रत करे" इसभांति कृष्णगङ्गा पर बारहवर्ष तप करके बदरीवन में तप करने को गये वहां जाय उत्तम तप कर सिद्धि को प्राप्त भये हे धरणि! जिस कृष्णगङ्गा के प्रभाव को सुमन्तुमुनि व्यासजी के शिष्य ने निजनेत्रों से देखा है सो कथा हम वर्णन करते हैं सावधान होकर श्रवण करो हे धरणि! पाञ्चाल देश का रहनेवाला वसुनाम ब्राह्मण किसी समय दुर्भिक्ष होने से क्षुधा करके पीड़ित निज पत्नी को साथले दक्षिणदिशा को चला कुछ दूर जाय शिवनदी के दक्षिणतीर सम्बरनाम ब्राह्मणों करके शोभित ग्राम था वहां जाय निवासकर ब्रह्मवृत्ति करने लगा वहां कुछकाल व्यतीत होनेसे पांच पुत्र और दो कन्या उस वसुनामक ब्राह्मण के उत्पन्न भईं तब तो समय देखि पुत्रों का और कन्याओंका विवाह यथायोग्य कर कालवश होगया तब तो उस ब्राह्मण की कन्या कहीं पुराण की कथा में सुना था कि मथुरा में अर्धचन्द्रनामक तीर्थ में अस्थिप्रक्षेप करने से

मुक्ति होती है यह स्मरण करि मथुरा की यात्रा करनेको किसी समय उस देश के यात्री चले तब निजपिता की अस्थि लेकर वसुब्राह्मण की कन्या भी चली परन्तु वह ब्राह्मणकन्या बालरण्डा थी और मनुष्यलोक की सबस्त्रियोंमें से एकही सुन्दरी कि जिसका स्वरूप देखकर मनुष्यकी तो कथा कौनसी देवता भी मोहित होजाते थे इसी से उसका नाम लोकविख्यात तिलोत्तमा था कि जिसके देह में एक तिलमात्र भी कहीं शोभारहित होय वह तिलोत्तमा जब मथुरा में आई तब निजपिता की अस्थि को तो अर्धचन्द्रतीर्थ में छोड़ि व पिण्डदानकर भक्तिपूर्वक तीर्थ में स्नानकरती हुई निवास करने लगी तब तो किसीदिन भावीवश उसे वेश्याओं ने देखा व देखतेही मोहित होकर उसे इकल्ली जानि निजमाया वशकर वेश्या बनाय जाय कान्यकुब्ज देश का राजा वहां तीर्थबास करताथा उसे मिलाया फिर तो वह तिलोत्तमा स्वच्छन्दचारिणी वेश्या होती हुई सर्वत्र जाकर वित्तोपार्जन करने लगी और गाना बजाना और नाचना आदि वेश्याओं के उद्यम में ऐसी प्रवीण भई कि, जिसका नाम वेश्या के कर्ममें प्रथम गिनाजाता है इसीभांति वहां निर्वाह करती हुई रहने लगी॥

एकसौइकहत्तर का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! प्रथम वसुब्राह्मण के पांच पुत्र जो कह आये हैं उन्होंमें सबसे छोटा जो पुत्र था सो व्यापारियों के साथ कुछ उद्यम के लिये बहुतसा धनलेकर सबके साथ चल अनेकभांतिके देशों को देखता हुआ आय मथुरा में पहुँचा व मथुराके तीर्थों में स्नानकर देवताओं का दर्शनकर बणिज के लिये उसने निवास किया वहां कुछ दिनके रहने से बहुतसा धन इकट्ठा होगया तब तो धन होनेसे भोग करने में प्रवृत्तहो वेश्या

भोगके लिये जब चाहा तब वोही तिलोत्तमा भाग्यवश मिली किसी देवमन्दिर में गान कर रही थी उसे देखि मोहित हो दूती भेजि बहुतसा धन दे उसे स्वाधीन कर निज घर में दोनों बड़े आनन्द में रहनेलगे और दिन २ अनेकभांति के वस्त्र, भूषण, चन्दन, सुगन्धद्रव्य आदिकों से व पुष्पमाला आदि भोग के उत्तम पदार्थों से सुखपूर्वक कालक्षेप करनेलगे इसीभांति भोग विलास में जब छः महीने व्यतीत भये तब एक दिन कृष्णगङ्गा में स्नान करने के लिये आया तो व्यासजी के शिष्य सुमन्तु मुनि ने देखा कि उस ब्राह्मण की सबदेह कृमि करके पूर्ण होरही है व स्नान करतेही सबकीड़े रोममार्ग हो निकल कृष्णगङ्गा में लोप हो जाते यह देखि आश्चर्य मानि मुनि उस ब्राह्मण से कहने लगे कि यह कौन मनुष्य है व किसका पुत्र है देखो विचार से यह बड़ा पापी है जो नित्य इसके देह से स्नान समय में कीड़े असंख्य गिरते हैं व तीर्थ के प्रभाव से नित्य निवृत्त होजाते हैं यह विचारि किसी दिन सुमन्तुजी ने पूछा कि, अरे भैया! तू कौन है क्या जाति है और पिता माता तेरा कौन है यहां दिन रात्रि क्या काम करता है? सो ठीक २ हमसे कह सुनाओ यह सुमन्तुजी का वचन सुनि ब्राह्मण बोला कि; हे मुनीश्वर! हम पांचालदेशी ब्राह्मण हैं दक्षिणदेश से बणिज व्यापार के लिये श्रीमथुराजी में आये हैं यहां दूकान करते हैं व अपने घर में रात्रि व्यतीत कर नित्य प्रातःकाल कृष्णगङ्गा तीर्थ में स्नान करते हैं व त्रिगर्त्तेश्वर नाम शिवजी का दर्शनकर, कालञ्जर का दर्शनकर घर में जाय भोजन से निवृत्त हो निज व्यवहार में प्रवृत्त होते हैं यह ब्राह्मण का वचन सुनि सुमन्तुजी कहने लगे कि; हे ब्राह्मण! नित्य यह क्या आश्चर्य देखते हैं कि स्नान के समय इतने कीड़े तुम्हारी देह से गिरते हैं कि जिनका कुछ ठिकाना नहीं व स्नान करतेही सब कीड़े नष्ट हो जाते हैं

तुम्हारी देह निर्मल होजाती है इसलिये कोई गुप्त में उग्रपाप करते हो जिस पाप का यह चिह्न नित्य दीखता है जो इसतीर्थ के प्रभाव से स्नान करतेही निवृत्त होजाता है कालञ्जर के स्पर्श करने से कैसहू पातकी होय वह शुद्धदेह होजाता है इसलिये विचारकर जो कुछ पाप गुप्त व प्रकट तुम से बनता है सो प्रकट कथन करो क्योंकि इस तीर्थ का माहात्म्य जान के तुम्हारे हित के लिये हम पूछते हैं इसभांति तीनोंकाल के जाननेवाले सुमन्तु मुनि के वचन को सुनि ब्राह्मण चुप होकर वहां से चलागया कुछभी उत्तर न दिया व घर में जाय दिन व्यतीतकर रात्रि में एकान्त हो निजस्त्री जो तिलोत्तमा वेश्या थी उससे पूछनेलगा कि; हे प्रिये! तुम किस देश की हो व किसकी कन्या हो सब अपना वृत्तान्त हमसे कह सुनाओ यहां कितने दिनों से तुम रहती हो इसभांति जब ब्राह्मण ने पूछा तब तो उसने कुछ उत्तर न दिया फिर कुछेकदेर में ब्राह्मण कहनेलगा कि, जो हमने पूछा उसका उत्तर तुमने कुछ न दिया इस उत्तर दिये विना हम अन्न जल न करेंगे इसभांति ब्राह्मण की प्रतिज्ञा को देखि तिलोत्तमा सब वृत्तान्त आदिही से कथन करना प्रारम्भकिया कि हे प्रिय! यदि आप हमारा वृत्तान्त पूछतेही हो तो सावधान होकर श्रवण करो श्रीगङ्गाजी के उत्तर किनारे पाञ्चालनाम नगर तिसमें हमारा पिता माता निवास करता था दुर्भिक्ष के क्लेश से वहांसे निकलकर जाय दक्षिणदिशा में नर्मदा के दक्षिणतट ब्राह्मणों के ग्राम में निवास लिया वहां रहते २ पांचपुत्र व सबसे छोटी एक मैं भाग्य-हीन कन्या उत्पन्नभई जब मेरे पिता ने विवाह किया तो थोड़ेही दिन व्यतीत होनेसे मैं तो विधवा हुई और मेरा पिता भी कालवश होगया तब मथुरा के स्नान करनेको वहांसे यात्री बहुतसे आनेलगे उन्हीं सबके साथ पिता की अस्थि ले मैं भी यहां आई आय कृष्णगङ्गामें अस्थि क्षेपकर देवब्राह्मण की सेवा करती व तीर्थ

स्नान करती हुई निवासकरनेलगी भाग्यवश कुछ दिन बीतने से वेश्याओं का संग भया उन्हीं के संग से यह हमारी दशा भई इसभांति मुझ अभागिनी का दोनों कुल नाश करनेवाला वृत्तान्त है मैं पतित होगई कि जिस अधर्मकर्म करनेसे पति के कुल में व पिता के कुलमें इक्कीस पुरुषों की अधोगति भई इस भांति उस ब्राह्मण से निज वृत्तान्त कहि तिलोत्तमा व्याकुल होकर रोदन करने लगी इसभांति अपने किये अधर्म को चिन्तनकर व उत्तम कुल का जन्म समझि धीरज को त्यागि ऊंचे स्वर से रोदन करने लगी तब तो उसका रोदन सुनि सबस्त्री इकट्ठी होकर आश्वासन करनेलगीं कि, हे तिलोत्तमे! क्यों रोदन करती है क्या क्लेश भया ? वाराहजी कहते हैं हे धरणि! तिलोत्तमा का वचन वज्र के तुल्य पांचाल्यब्राह्मण सुनि के मूर्च्छित होकर पृथ्वी में गिरा तब तो सब स्त्रियां ब्राह्मण के चारों दिशा में हो आश्चर्यमानि सब पूछने लगीं किसी भांति उसकी मूर्च्छा जगी तो सब उसके क्लेश का कारण पूछने लगीं तब तो उस ब्राह्मण ने सारा वृत्तान्त अपना व तिलोत्तमा का आदिसे कह सुनाया और निज चित्त में अगम्यागमन का महापातक समझि प्रायश्चित्त करबेके विचार में हो संसार से विरक्तहो यह कहने लगा कि, जो ब्राह्मणबध करते हैं व मद्यपान करते हैं गुरु स्त्री गमन करते हैं उनके लिये शास्त्रविहित यही प्रायश्चित्त है कि अग्निमें भस्म होना देखो माता को गुरु की स्त्री को भगिनी को पुत्रबधू को कन्या को और पिता की भगिनीको अगम्या कहते हैं इन्होंके गमनकरने से अग्नि में शरीरभस्म करदेने से मनुष्य पवित्र होताहै ब्राह्मण तो तिलोत्तमा को निज छोटी भगिनी समझि इसभांति पश्चात्ताप में हुआ व तिलोत्तमा ने भी अपना सगा भाई उस ब्राह्मण को जानि शोक से व्याकुल होकर निष्पाप होने के लिये निज मरना विचारि जो उसके

पास धन, धान्य, वस्त्र, भूषण और रत्न आदि पदार्थ थे वे सब ब्राह्मणोंको दे केवल शरीरमात्र शेष रख जाय कालञ्जर का दर्शनकर कृष्णगङ्गा के किनारे चिता बनाय अग्निको प्रज्व-लितकर अपने पापके दूर करनेके लिये स्नानकर शिवजी का दर्शनकर प्रणामकर चिता में प्रवेश करना विचारा और इसी-भांति ब्राह्मण ने भी सर्वस्व दानकर गङ्गामें स्नानकर शिवजी को प्रणामकर चिता प्रज्वलितकर प्रवेशकरना चाहा उससमय ईशा-वास्यउपनिषद् का जप करताहुआ जाय सुमन्तु मुनिके समीप प्रणामकर कहनेलगा कि; हे भगवन्! जो आप गुप्तपाप पूछते थे सो मेरेसे अगम्यागमनरूप पाप हुआहै देखो हे प्रभो! यह उत्तममथुरापुरी इसमें मनुष्य यथाशक्ति पुण्य करताहै हम ऐसे अधर्मी व कुलनाशक कि, सहोदरा भगिनी से बहुतकाल गमन किया जो आप ने दिव्यदृष्टि से देखि के मेरी देह से कृमि गिरते बताये थे सो सब यथार्थ है मेरे ऐसेही कर्म हैं जिससे नित्य मेरी देहसे कृमि बहुतसे गिरते हैं व कृष्णगङ्गा के प्रभाव से नित्य २ देह निर्मल होजाती सो सब सत्य है मुझसे अगम्यागमनपा-तक होगया है इस पाप के दूर करनेके लिये अब देह त्यागक-रूंगा अब आपके चरणों का प्रणाम करताहूं आप मुझे आज्ञा देवें इसभांति निजपाप को सुमन्तुजीसे निवेदनकर बहुतसा घृत चिता में छोड़ि जो उसने चिता में प्रवेशकरना विचारा उसी समय आकाशवाणीभई कि हे ब्राह्मण! तुम दोनों ऐसा साहस न करो किसलिये भस्म होतेहो तुमतो निष्पाप हो फिर किसलिये मरण विचारतेहो यह विचार करो कि, जिस भूमिमें श्रीकृष्णजीने जन्मलिया व नानाभांति की क्रीड़ा करी व श्रीकृष्णजीके चरण कमल से यह पृथ्वी चिह्नित होगई अब यह स्थान ब्रह्मसमहै यहां जो कुछ किसीसे पाप बनपड़े तो तीर्थस्नान करनेसे निवृत्त होता और भूमिमें पापकरनेसे वहपाप तीर्थस्नानकरनेसे निवृत्तहोताहै

व तीर्थ का किया हुआ पाप वज्रलेप होजाता है जिसभांति गङ्गासागरसंगम के स्नान करने से मनुष्यकी ब्रह्महत्या दूर होती है इसीभांति कृष्णगङ्गा के स्नान से सबभांति के पातक निवृत्त होते हैं और कैसहू पाप होय इन पांच तीर्थों के स्नान से शीघ्र निवृत्त होते हैं जैसे एकादशी को विश्रान्तितीर्थ का स्नान, द्वादशी को शूकरक्षेत्र का स्नान, त्रयोदशी को नैमिषारण्य में चक्रतीर्थ का स्नान, चतुर्दशी को प्रयागत्रिवेणी का स्नान और पूर्णिमा में पुष्करक्षेत्र का स्नान जो मनुष्य करते हैं वे सब पापों से मुक्त होकर उत्तम गति को प्राप्त होते हैं और ये पांचों तीर्थ न बनपड़ें व सबों का इकट्ठे फल लिया चाहे तो मथुरा में ही विश्रान्तितीर्थ, सरस्वतीसंगम, असिकुण्ड, कालञ्जर और कृष्णगङ्गा इन पांचों तीर्थ के स्नान करने से मनुष्य ज्ञात अज्ञात दोनों भांति के पापों से निवृत्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होता है सुमन्तुजी कहते हैं हे ब्राह्मण! मथुरा के सबतीर्थों से अधिक इन पांचतीर्थों का माहात्म्य धरणी से भगवान्वाराहजी ने बारम्बार कहा है जो साक्षात् परमेश्वर चराचर के स्वामी यज्ञमूर्ति मथुरा में निवास करते हैं उनको नियम से तीनदिन दीपदान जो करते हैं वे सब पापों से मुक्त होकर श्वेतद्वीप को प्राप्त होते हैं और हे ब्राह्मण! द्वादशी को जो कालञ्जर में स्नानकर यथाशक्ति दान करता है वह उत्तमविमान में बैठि विष्णुलोक में प्राप्त होता है वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति सुमन्तुजी की वाणी सुनि नम्र हो हाथ जोड़कर पाञ्चाल ब्राह्मण कहनेलगा कि; हे भगवन्! आप हमारे गुरु हैं व पिता हैं अब कौनसी आज्ञा मुझे होती है? मैं अग्नि में प्रवेश करूं कि तीर्थ सेवन करूं जिसमें मेरा कल्याण होय व मैं पाप के भय से छूटूं सो कृपा करके आप कहें अथवा त्रिरात्रव्रत, कृच्छ्रव्रत, चान्द्रायण और प्राजापत्य आदि व्रतों में जिस किसी के करने से मेरा मोक्ष

होय सो आप उपदेश करें यह ब्राह्मण का वचन सुनि सुमन्तुजी कहनेलगे हे ब्राह्मण ! जो कुछ आकाशवाणी भई है वह सत्य है मिथ्या मत मानो और हमने तो प्रत्यक्ष तुम्हारे शरीर में कृमि-रूप पातक देखा है वोही पातक स्नान करने से नित्यही निवृत्त होता था और तुम निर्मल हो जाते थे अब क्यों नहीं विश्वास करते इसलिये तुम सर्वथा निष्पाप हो और यह जो पापिनि तुम्हारी बहिनि है उसने भी पापमुक्तहोकर सतीधर्मको धारण किया अब इसकी भी उत्तमगति होगी इसमें संशय नहीं है वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! इसभांति के प्रभावकरकेयुक्त तीर्थ मथुरा में हैं कृष्णगङ्गा व कालञ्जर व शूकर इनतीर्थों का माहात्म्य हमने वर्णन किया हे धरणि ! जो मनुष्य इस तीर्थमाहात्म्य को श्रद्धा से स्मरण पठन वा श्रवण करतेहैं वे सबपापों से मुक्तहोकर उत्तमगति को प्राप्त होतेहैं उन मनुष्यों का सात जन्म का किया भया पाप सब शीघ्र निवृत्त होताहै और शतगोदान के पुण्य को प्राप्त होताहै अन्तमें वह मनुष्य मुक्तिभागी होता है ॥

एकसौबहत्तरका अध्याय ॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि ! अब और एकबड़ी विचित्रकथा वर्णनकरते हैं सो सावधानहोकर श्रवणकरो किसी समय द्वारकापुरी में सुखपूर्वक स्त्री, पुत्र, भृत्य और मित्र के साथ आनन्दपूर्वक विराजमान श्रीकृष्णचन्द्र को जानि नारदमुनि आय प्राप्त भये उन्हें देखि श्रीकृष्णजी अभ्युत्थान दे पाद्य, अर्घ, आचमन और मधुपर्कआदि पदार्थोंसे पूजनकर प्रीति से प्रणाम करि निज सिंहासन पर बैठे तब नारदजीने कहा कि; हे कृष्णजी! आप एकान्त होवें तो हमको कुछ कथनकरना है इस नारदजी के वचन को सुनि एकान्त हो मुनिजी से हाथ जोड़ कहने लगे कि, अब मैं सावधान एकान्तहूं क्या आज्ञा होती है ? सो करूं

यह श्रीकृष्णजी का वचन सुनि नारदजी कहनेलगे कि, हे महा-
राज! आपका पुत्र साम्बनाम जो है युवा व स्वरूपवान् देखने
लायक़ स्त्रीजनों का मनहरनेवाला इसकी अब जहां तहां यह
ख्याति प्रसिद्ध होरही है कि सब आपका अन्तःपुर इसके वशी-
भूत होरहाहै यह कथा ब्रह्मलोक में प्रसिद्ध होगई इसलिये यह
विचार करना चाहिये कि जिस मनुष्य की सत्कीर्ति लोक में प्र-
सिद्ध होय वह उत्तम पुरुष गिना जाता है और स्वर्ग में बास
पाताहै जिसकी दुष्कीर्ति लोक में प्रसिद्ध होय वह अधम कहाता
है अन्तमें नरकगामी होताहै इसलिये आपकी उत्तम व निर्मल
कीर्तिमें साम्ब कलङ्क लगाता है सो आप इसभांति इन्हों की
परीक्षालेवें कि एकान्त में निजसोलहहज़ाररानियों को बुलाय
जुदे २ आसन पर बैठाय उनके मध्य साम्ब को बैठारिये तब
सबों का क्षोभ आपको विदित होगा यह सुनि नारदजी का व-
चन मानि उसीभांति सबस्त्रियों के सहित साम्बको बुलाय न्यारे२
बैठाय सब के मध्यमें साम्बको बैठाया तब तो दोनों हाथ जोड़
साम्बजीकहनेलगे कि हे प्रभो! आपने किसलिये बुलाया है सो
आज्ञा दीजिये इसी समय साम्बका मनोहररूप देखि श्रीकृष्ण
जी के देखते ही सब स्त्रियां मोहविवश काम से विह्वल होगईं इस
अपूर्व अवस्था को देखि श्रीकृष्णजी ने यह कहा कि; हे स्त्रियो!
यहां से उठि२ अपने २ स्थानको जाव यह आज्ञा पाय सब
स्त्री निज २ स्थान को चलीगईं व साम्ब वहांही कांपता हुआ
हाथ जोड़े बैठारहा व श्रीकृष्णजी को सहित नारद के देखिके
लज्जित हो पृथिवी में देखनेलगा तब तो श्रीकृष्णजी नारदजी
से स्त्री का चञ्चलस्वभाव व पाप का कारण कहनेलगे कि, हे
नारदजी! स्त्रियों को एकान्तसमय न मिलने से फ़ुरसति न मि-
लनेसे व जारपुरुष के न मिलनेसे पतिव्रतात्व होताहै अर्थात् इन
सबों के न होनेसे स्त्री पतिव्रता होतीहै और स्त्रियों का सबकाल

में यही स्वभाव होता है कि उत्तमपुरुष को देखि विह्वलहो शीघ्र स्खलित होजाती हैं और हे नारदजी! यह साम्ब स्वरूपवान् तेजस्वी और सब भांति धर्मगुणों करके युक्त है स्त्रियों के क्षोभ में साम्ब का कुछ दोष नहीं केवल इसके स्वरूप को देखि स्त्रियों ने निज जाति स्वभाव चञ्चलता प्रकटकिया है इस श्रीकृष्णजी के वचन को सुनि साम्ब के लिये शाप देनेके निमित्त युक्तिपूर्वक नारदजी यह कहनेलगे कि महाराज! आपने कहा सो तो ठीक है परन्तु विना दो चक्र रथ नहीं चलसकता इसीभांति विना दोनों के स्नेह होनेसे स्त्रियों का वीर्य कदापि नहीं निकल सकता देखो प्रद्युम्नजी के देखनेसे सबस्त्रियां लज्जितमात्र होतीहैं व साम्ब की दृष्टि से स्खलित होती हैं यदि साम्ब की स्त्रियों के साथ अन्तरङ्ग मैत्री न होती तो वीर्यपात इन्होंका कभी न होता देखिये आपके प्रत्यक्ष साम्ब की दृष्टिपात होतेही सबकी सब कामातुर हो ऐसी विकल भईं कि आपका भय भी कुछ न रहा वीर्य त्याग करदिया इस लिये इसका उपाय कीजिये जिसमें आपको किसी भांति का दुर्यश न हो यह बारम्बार मुनियों में आप का यह अयश सुनिके असहमानि के आये हैं अब आप इस साम्ब पापी का त्याग कीजिये जिसने आपकी स्त्रियों को भ्रष्ट किया इतना कह नारदजी तो चुप होगये वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति नारदजीका वचन सुनि क्रोधकर श्रीकृष्णजी ने साम्ब को शाप दिया कि, हे दुष्ट! आज से कुरूप होजा यह श्रीकृष्णजी के कहतेही साम्बतो कुष्ठरोग करके युक्त होगये व साम्बके शरीर से रुधिर व मज्जा गल २ करके गिरनेलगी तब तो साम्ब उस क्लेश से अत्यन्त पीड़ितहो विनय पूर्वक श्रीकृष्णजी से प्रार्थना करने लगा तब उसकी विनय सुनि श्रीकृष्णजी ने कहा कि इसके मालिक नारदजी महाराज हैं उन्हीं की कृपा से यह क्लेश निवृत्तहोगा यह सुनि जाय नारदजी के समीप नम्र

होकर निजदुःख को निवेदन किया उसे सुनि नारदजीने कहा कि हे साम्ब! तुम सूर्य भगवान्‌का आराधन करो जब सूर्य के उदयका समय होय तब वेदोपनिषद् वाक्यको पढ़ि२ नमस्कार करो जिसके करनेसे यह क्लेश छूटे यह नारदजी का वचन सुनि साम्ब कहनेलगा कि; हे भगवन्! जो पुरुष अगम्यागमन पाप करके युक्त होय उसके स्तुति करने से परमेश्वर किसभांति प्रसन्न होंगे यह सुनि नारदजी बोले कि, हे साम्ब! भविष्य-पुराण इस तुम्हारे सम्बन्ध से होगा जिसको ब्रह्मलोकमें ब्राह्मणों के आगे हम सदा पढ़ेंगे और सुमन्तु नाम मुनि मनुष्यलोकमें मनुके प्रति कथन करेंगे यह सुनि साम्बजी बोले कि; हे प्रभो! इस दुःख से पीड़ित मांसपिण्ड के तुल्य हम होरहे हैं इस पीड़ा करके युक्त उदयाचल पर्वत में हम किसभांति जासकते हैं देखिये महाराज! कि मैं सब भांति निष्पाप था परन्तु आप की आज्ञा से यह दुःख प्राप्त भया यह साम्ब के वचन को सुनि नारदजी कहनेलगे कि, जो फल मनुष्य को उदयाचल में सूर्य के आराधन से होता है हे साम्ब! वोही फल मथुरा में बट सूर्यनामक स्थान में होता है और मध्याह्न में सायंकाल में सूर्य भगवान् सदा मथुरा में निवास करते हैं इसलिये हे साम्बजी! जो मनुष्य वेदमन्त्रों से मथुरा में नियमपूर्वक सूर्य भगवान् का आराधन करताहै वह सबप्रकार के क्लेशों से निवृत्त होकर सुख पाता है सो हे साम्ब! तुम मथुरामें जाय कृष्णगङ्गामें स्नानकर विधिपूर्वक सूर्यका आराधन करो जिसके करनेसे शीघ्र आरोग्य होगे इसभांति नारदजीका वचन सुनि व श्रीकृष्णजी की आज्ञा ले साम्ब आय मथुराजी में सूर्य का आराधन करनेलगे इस प्रकार नारदजी के कहे मुवाफ़िक़ आराधन करतेही थोड़े से दिन में सूर्य भगवान् प्रसन्न होकर मनुष्य का रूप धारण कर आय कहनेलगे कि हे साम्ब! जो इच्छा हो सो वर मांगो हे साम्ब!

जो तुमने वेदवाक्यों करके युक्त पचास श्लोकसे हमारी स्तुति किया है उस से हम बहुत प्रसन्न भये इतना कहि सूर्यभगवान् निज करकमल से साम्ब का संपूर्ण देह ज्यों स्पर्श किया उसी समय सबक्लेशों से मुक्तहोकर साम्ब दिव्यदेह होगया देखने से मानो दूसरा सूर्यही है इस प्रकार कृष्णागङ्गा के तटपर मध्याह्न समय में सूर्यभगवान् साम्ब को वरदिया और उसी समय अन्तर्धान होगये उससमय जो २ कुछ सन्देह साम्बजीने पूछा वह सब सूर्यजीने भलीभांति उत्तर दिया वह प्रश्नोत्तररूप संवाद भविष्यनामक पुराण कहाया व उसीका नामान्तर आदित्यपुराण भी हुआ तिस पीछे साम्बजी ने श्रीमथुराजी में सूर्यजीका उत्तम मन्दिर बनवाय मूर्ति स्थापन किया फिर जाय उदयाचल में और अस्ताचल में सूर्यभगवान् को स्थापित किया इसीभांति साम्ब पुरनामक नगर बसाय के उसमें सूर्यभगवान् की प्रतिष्ठा किया और जिसभांति सूर्यजी ने उपदेश कियाथा उसीभांति रथयात्रा आदिपर्वोत्सव का प्रवन्ध करदिया वाराहजी कहते हैं हे धरणि! माघमास की सप्तमी को प्रतिवर्ष साम्बपुर में रथयात्रोत्सव होने लगा इसभांति सूर्य की भक्ति में तत्परहो साम्ब इसलोक में अनेक भोगों को भोगि अन्त में सूर्यमण्डल का भेदनकर परमपद को प्राप्त भया हे धरणि! यह साम्ब के शाप निमित्त उत्तमकथा हमने वर्णनकिया कि, जिसके श्रवण करनेसे मनुष्य अनेक महा पातकों से मुक्तहोकर उत्तमगति को प्राप्त होते हैं॥

एकसौतिहत्तर का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! पहले जिसभांति दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न ने लवणासुर का बधकर मथुरा बसाया है व ब्राह्मणों के ऊपर अनुग्रह कर मार्गशीर्ष महीने की द्वादशी का व्रत सब को उपदेश किया हे धरणि! उस द्वादशी व्रत को जो नियम से

करता है वह सब पापों से मुक्त होता है इसभांति सब मथुरा-बासियों को उपदेशकर लवणासुर के बध करने के हर्ष में हो अयोध्या में जाय सब वृत्तान्त श्रीरामचन्द्रजी से निवेदन किया उसे सुनि हर्षसे शत्रुघ्न को निज हृदय में प्रेम से लगाय आशीर्वाद दे बड़ीधूमधाम से बहुत सेना साथ ले मथुरा में पहुँचे और एकादशी का व्रतकर विश्रान्तिघाट में स्नानकर सहित कुटुम्ब के बड़ा उत्सव किया रात्रि जागरण समाप्तकर ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा दे बिदाकर कुछ दिन निवासकर फिर अयोध्या को चलेआये हे धरणि ! इसीभांति जो अगहन महीने में जाय मथुरामें एकादशी व्रतकर विश्रामतीर्थ में स्नान करताहै वह सब भांति ईश्वर को प्रिय होताहै और उसके सब काम सिद्ध होते हैं ॥

एकसौचौहत्तर का अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक ! इसभांति वाराहजी का वचन सुनि धरणी कहनेलगी कि; हे भगवन् ! जो २ पदार्थ वैष्णवों के लिये वर्जित हैं व जो २ पदार्थ आप के पूजन में अपराध गिनेजाते हैं सो आप वर्णनकरें जिन कर्मों के करने से निरपराध भी मनुष्य सापराध गिनेजाते हैं वे कर्म कौन हैं ? सो आप वर्णनकरें इसभांति धरणी की विनयवाणी सुनि वाराहजी कहने लगे कि, हे धरणि ! जो पूछती हो सो सावधान होकर श्रवणकरो जो पापात्मा पुरुषहैं उनकी की भई पूजा हम नहीं ग्रहण करते वे कौन हैं प्रथम तो दन्तधावन न करना और दूसरा राजा का अन्न खानेवाला तीसरा मैथुनकरके स्नान जिसने न किया हो चौथा सब का स्पर्श करनेवाला पांचवां विष्ठा त्यागकर जिसने स्नान नहीं किया छठा रजस्वला स्त्री का स्पर्श करनेवाला सातवां सूतकी अर्थात् जिस स्त्रीके संतानहुआ हो उसको दश

दिनके मध्य में स्पर्श करनेवाला आठवां जैनसाधुका संगकरने वाला नीच के साथ बातचीत करनेवाला अत्यन्त कोप करके युक्त खल खानेवाला नीलवस्त्र रक्तवस्त्र मलिनवस्त्र का धारण करनेवाला गुरु के वाक्यको भङ्ग करनेवाला पतित के अन्न को भक्षण करनेवाला अभक्ष्य भक्षणकरनेवाला जैसे लहसुन प्याज आदि चौराई का शाक व बहेड़ा परान्नकालेना देवतास्थान में भोजन करना देवस्थान में जूता पहिन के घूमना इसीभांति निषिद्ध पुष्पों करके देवपूजन करना और देवनिर्माल्य विना दूर किये पूजा का प्रारम्भ करना अँधेरे में पूजा करना दीपविना देव का प्रबोधन करना मद्यपानकरना हे धरणि! ये सब जो गिनाये हैं इन्हीं की अपराधसंज्ञा है इन्होंके करने से मनुष्य ईश्वर से सदा विमुख रहता है अर्थात् उसे परमेश्वर किसी काल में नहीं प्राप्त होता और दूरसे विष्णुमूर्ति को नमस्कार करने से राक्षसी पूजा होती है यदि किसी से एक अपराध बनिपड़े तो एकरात्रि दो रात्रि वा तीन रात्रि त्रिकालस्नान व पञ्चगव्य के पान करने से पवित्र हो पूजा के योग्य होता है और जिसने नीलवस्त्र धारण किया हो वह निजशुद्धि के लिये गोमय निज देहमें लेपकर प्राजापत्यनाम व्रत करने से पवित्र होता है और हे धरणि! श्री गुरु के क्रोध हो जाने से मनुष्य दो चान्द्रायण व्रत करने से पवित्र होता है और एकचान्द्रायण व्रत करने से पतित का अन्नखानेवाला पवित्र होताहै और अभक्ष्यभक्षण करनेवाला मनुष्य एकचान्द्रायण व एक प्राजापत्य व्रतकर गोदान देने से पवित्र होता है जो मनुष्य पैर में जूता पहिनकर देवमन्दिर में जाता है वह पञ्चगव्य पानकरनेसे व पांचदिनके व्रत करनेसे पवित्र होताहै और विना पुष्प के देवता का पूजन न करनाचाहिये और निर्माल्य दूरकिये विना जो देवपूजन करते हैं उनको पञ्चामृत से देवता को स्नान कराय के पीछे और पूजाकरना योग्यहै

और जिसने मद्यपान किया होय वह चार चान्द्रायण व्रतकर बारहवर्ष प्राजापत्य व्रतकर अन्त में तीनगोदान देनेसे पवित्र होता है और जो नीचों के साथ बात चीत करताहै उस अपराध में एकबार पञ्चामृत पान करने से मनुष्य पवित्र होताहै इसभांति वाराहजी धरणी से कहि फिर कहने लगे कि; हे धरणि ! यह अत्यन्त गुप्त पदार्थ हमने कथनकिया अब क्या सुना चाहती हो ? सो हम वर्णनकरें इसभांति वाराह जीका वचन सुनि धरणी मूर्च्छित होगई फिर कुछेक देरमें सावधान होकर कहनेलगी कि; हे भगवन् ! जितने अपराध ईश्वर विषय में आपने वर्णन किये हैं वे तो छूटना मुश्किल दीखते हैं वह अपराध का प्रायश्चित्त होना कठिनहै इसलिये कोई सुगम उपाय आप वर्णनकरें जिसके करने से मनुष्य सबपापों से मुक्त हो आपके प्रीतिपात्र हों यह सुनि श्रीवाराहजी कहनेलगे कि हे धरणि ! जो मनुष्य अपराधी हो सो वर्ष में एकबेर जाय हमारे प्यारे क्षेत्र सूकरतीर्थ में स्नान व व्रत करने से पवित्र होताहै इसीभांति श्रीमथुराजी में व्रत व स्नान करनेसे मनुष्य सब अपराधों से मुक्तहो पवित्र होता है हे धरणि ! मथुरा और सूकरक्षेत्र ये दोनों अतिउत्तम हैं वर्ष में एकबार भी किसीभांति इन्होंमें व्रत और स्नान होजाय तो हज़ारों जन्म के अपराध से मनुष्य मुक्त हो उत्तमगति को प्राप्त होताहै यह सुनि धरणी कहने लगी कि हे भगवन् ! मथुरा और सूकर ये दोनों तीर्थ आपको प्रिय हैं परन्तु आप यह भी कहें कि इन दोनों में कौन अधिक है तबतो वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि ! समुद्र से समुद्र तक पृथिवी में जितने तीर्थ हैं उन सबों में शास्त्र ने कुब्जाम्रक नाम तीर्थ की प्रशंसा कियाहै तिस कुब्जाम्रक से कोटिगुण अधिक सूकर नाम तीर्थ है जिसमें मार्गमास की शुक्लद्वादशी को स्नान करने से मनुष्य जीवन्मुक्त होताहै और जो पुराणों में गङ्गासागर तीर्थका माहात्म्य कथन

किया है इससे भी गुप्त व अधिक पुण्यवाली मथुरापुरी है कि जिसमें आधी घड़ी निवास करने से मनुष्य मुक्त होता है तिस मथुरा में भी सब तीर्थों से उत्तम विश्रान्ति नामक तीर्थ है जिन मनुष्यों को निज आत्मा पवित्र करना हो सो मथुरा में वा सूकरक्षेत्र में वा कुब्जाम्रक में जाय स्नान व्रतकर पवित्र हों इस से अधिक पृथिवी में दूसरा तीर्थ हमारे विचार में नहीं है जो गति योगसाधन करने से होती है व सांख्य के ज्ञान से होती है वह गति इन तीर्थों के स्नानमात्र से होती है हे धरणि! सब तीर्थों का सार मथुरा व देवताओं में सार पदार्थ केशवभगवान् इन दोनों से परे कुछ नहीं है॥

एकसौ पचहत्तर का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं कि; हे धरणि! अब पितरों के तृप्त होनेवाली कथा वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो हे धरणि! मथुरापुरी का रहनेवाला बड़ा पुण्यात्मा शूरवीर दानी और यशस्वी राजा चन्द्रसेन नाम हुआ उस राजा के कुलशील करके युक्त दोसौ रानियां थीं उन रानियों में से एक रानी कुलशील करके युक्त सुरूपा पतिव्रता बड़ेबीर राजा की कन्या चन्द्रप्रभा नाम भई उस चन्द्रप्रभा रानी के सैकड़ों दासी थीं उन्हों में से एक प्रभावती नाम दासी थी उस दासी की दासी शूद्री एक जिसका नाम विरूपनिधना सो विरूपनिधना सदा मद्यपान व मांसभक्षण में प्रीति रखती इसीभांति उस विरूपनिधना के खोंटे आचरण से सैकड़ों पीढ़ी के पितर सब स्वर्ग से भ्रष्ट होकर नरक में जापड़े किसी समय हे धरणि! उस विरूपनिधना दासी का पति बहुत से मनुष्यों के साथ स्नान करने के लिये ध्रुवनामक तीर्थ में आय प्राप्त भया और वहांही ध्रुवतीर्थ में एक त्रिकालज्ञ नाम ऋषि छठें २ दिनमें आहार करनेवाले निवास

करते थे व सदा मौन होकर परमेश्वर का आराधन किया करते सो त्रिकालज्ञ क्या चरित्र देखते हैं कि जब एक पहर दिन और सूर्य अस्त होने को था तब जिन जिनने स्नान किया व निज निज पितरों का तर्पण व पिण्डदान किया था उनके सब पितर विमान में बैठि २ देवलोक को गये और त्रिकालज्ञ वहां ध्रुवतीर्थ में क्या देखताहै कि अनेक भांति के उत्तमरूप धारण किये बड़े हर्ष करके युक्त निजनिज संतानों को आशीर्वाद देते स्वर्गको जाय रहे हैं व किसी के पितर वहां बड़े क्रोध से निज २ संतानवालों को शाप दे रहे हैं जिन्हों को तीर्थ में पिण्डदान व तिल तर्पण नहीं प्राप्त भया निराश होकर क्षुधा करके पीड़ित चले जाते हैं इसभांति पितरों के चरित्र को देखि फिर त्रिकालज्ञ मुनि क्या देखता है कि, उसी ध्रुवतीर्थ के समीप निर्जनस्थान में एक पुरुष बहुत दुर्बल जिसके दोनों नेत्र क्षुधा की पीड़ा से भीतर घुसिरहे हैं व उदर पीठ दोनों एकसी होरही हैं केवल जिसकी देह में चर्म व अस्थिही शेष है ऐसा पुरुष सबभांति जर्जर कांपता भया व जिसके चारों ओर बहुत से मक्खी मच्छड़ लिपटरहे हैं ऐसे क्लेश को प्राप्त मनुष्य को देखि त्रिकालज्ञ मुनि पूछने लगे कि; आप इस दुर्दशा को भोगते मच्छड़ों करके पीड़ित कौन हैं व यहां निरुद्यम क्यों बैठे हैं और स्थान में क्यों नहीं जाते ? इस अपने वृत्तान्त को हमसे ठीक २ वर्णन करो हम इस तीर्थ में नित्य कर्म करते हैं सो तुम्हारे विलक्षण दुःख को देखि हम मोहित होरहे हैं इसलिये शीघ्र निज वृत्तान्त को वर्णन करो जो कुछ हमारे से बन पड़ेगा सो हम तुम्हारा सहाय करेंगे यह त्रिकालज्ञमुनि का वचन सुनि वह मनुष्य कहनेलगा कि; हे ऋषीश्वर ! यहां हमारा मुख्य प्रयोजन तो यही है कि जिन्हों के पुत्र ने इस ध्रुवतीर्थ में श्राद्ध व तर्पण विधिपूर्वक किया है उनके पितर निज २ पुत्रों को आशीर्वाद देते उत्तम विमान में

बैठे हुये सुख से चले जाते हैं हम निज संतान के हस्त से श्राद्ध पाया नहीं इसलिये क्षुधा तृषा करके पीड़ित नरक भोग रहे हैं आशारूप पाश में बँधे सैकड़ों वर्ष से यहां रहते हैं परन्तु योनि-संकर दोष करके हम क्लेशभागी हो रहे हैं अब यहां से चल भी नहीं सकते जे निजपुत्र पौत्रों करके श्राद्ध को प्राप्त भये हैं वे सब भांति समर्थ होकर चलेगये हम इतने बलहीन हो रहे हैं कि चलना तो कौन कहे हिलाभी नहीं जाता देखो हे ऋषी-श्वर! आपके देखतेही राजा चन्द्रसेन के पितरबल पुष्टि करके युक्त बड़े हर्ष में हो स्वर्ग को गये और जो ब्राह्मण वैश्य शूद्र आदि राजा के साथ आये थे उन्होंके श्राद्ध तर्पण करने से उन के भी पितर तृप्त हो २ आशीर्वाद दे २ स्वर्ग को गये और भी जो २ हीनजाति थे उनके भी पितर तृप्त होकर निजलोक में प्राप्तभये इसभांति उस पितर की वाणी सुनि त्रिकालज्ञ ऋषि पूछनेलगा कि, हे मित्र! क्या तुम्हारे संतति नहीं है जो इतने दुःखी होरहे हो अथवा जो कुछ उपाय हमारे लायक़ हो सो कहो हम तुम्हारा उपकार करेंगे यदि हमारे करने के योग्य होगा तब तो वह पितर कहनेलगा कि; हे त्रिकालज्ञ! यदि हमारे संतति होती तो यह क्लेश हम क्यों भोगते जो हमारे शरीर में चारों ओर से मच्छड़ लिपट रहे हैं यही संतान क्षीण होने का लक्षण है परन्तु एक संतान का नाम इस राजा चन्द्रसेन के नगर में हमारे है जो सेवा करनेवाली विरूपनिधना नाम प्रभावती रानी की दासी है सोई हमारे संतति के सूत्र में है जिसकी आशापाश में बँधे हम यहां निवास कररहे हैं कि कभी हमको श्राद्ध तर्पण से यह तृप्त करेगी व हम सुख पावेंगे परन्तु आजतक इस अ-धर्म की मूर्ति ने हमारे निमित्त कुछ सत्कर्म न किया इसलिये हम निज प्रारब्धवश से निराश होरहे हैं इसभांति हे धरणि! उस पितर के मुख से दुःख की वाणी सुनि त्रिकालज्ञऋषि मोह

में युक्तहोकर कहनेलगा कि, हे पितर! उस दुष्ट योनि के पिण्ड-दान करने से तुम किसभांति प्रसन्न होगे और किस भांति के पिण्डदान करने से व किस विधि से पुत्रवाले पितरों के तुल्य तृप्त होगे इस प्रकार त्रिकालज्ञ का वचन सुनि पछिताय कर पितर कहनेलगा कि; हे त्रिकालज्ञ! पूर्वजन्म के कर्म से स्वर्ग व नरक मनुष्य भोग करता है जिन्हों के पुत्र हैं वे उत्तम कर्म करने से स्वर्गबास पाते हैं कि जिन्होंके लिये उत्तम २ दिनों में श्राद्ध तर्पण व नित्य नैमित्तिक सत्कर्म भया करते हैं वेही स्वर्ग-वासी होते हैं और किसभांति स्वर्ग को जा सकता है इसलिये पुत्र विना पितरों को दूसरी गति नहीं है पितर सब पितृलोक में निज २ वंश जिस दिशा में हैं उस दिशा में मुख करके यही कहते हैं कोई ऐसा हमारे कुल में होय जो तीर्थ में नदी में तड़ाग में भरने में वा कूप में अथवा निजघर में मीठा व ठंढा जल सहित तिल के हमको देय जिसमें हम तृप्ति को प्राप्त हों और यदि नदी में जाय जानुमात्र जल में चांदी के पात्रों से तर्पण करे तौ हमारी अनन्त तृप्ति होय हे त्रिकालज्ञ! जो मनुष्य जानुमात्र जल में चांदी के पात्र से हाथ में कुश व तिल ले निज गोत्र को उच्चारण करता व पितृ पितामह आदिकों का नाम उच्चा-रणकरता ब्राह्मण को शर्मा, क्षत्रिय को वर्मा, वैश्यको गुप्तशब्द और शूद्रको दासशब्द उच्चारण करता सहित स्त्रियों के जो त-र्पण करता है उसके पितर की अनन्त तृप्ति होती है उस तर्पण की यह रीति है कि एक २ अञ्जली प्रथम देवताओं को दो २ अञ्जली ऋषियों को और तीन २ अञ्जली पितरों को देना चाहिये इस क्रम से तर्पणकर पीछे "तृप्यध्वम्" इसशब्द को उच्चारणकरना योग्य है प्रतिनामों के अन्त में और "आया-न्तुनः पितर" इस वेद मन्त्र से पितरों का आवाहनकर पिता, माता, पितामह, पितामही, वृद्धप्रपितामह, वृद्धप्रपितामही इन्हों

को दे फिर गोत्र नाम उच्चारण करता मातामह, मातामही, प्रमातामह, प्रमातामही, वृद्धप्रमातामह, वृद्धप्रमातामही इन्हों को "मधुवाताऋतायते" इस वेदमन्त्र को पढ़ि तर्पण करे फिर "नमोवःपितरो" इस मन्त्र को पढ़ि प्रणामकर श्राद्ध के विधान से सबों को क्रम करके पिण्डदानकरे इसभांति आसन, पाद्य, अर्घ, अन्नसंकल्प, पिण्डदान और अवनेजन आदि कर्म सब वेदमन्त्रों से करे आवाहन में द्वितीयाविभक्ति, पूजनकर्म में चतुर्थी विभक्ति और आशीर्वाद में प्रथमाविभक्ति का उच्चारण करना चाहिये इसभांति सुशील पुत्र निज पितरों के प्रीत्यर्थ करे इसभांति पुण्यदिन में यदि जलमात्रभी दे तो पितरों की अक्षयतृप्ति होती है और श्राद्ध करने से तो पितर बहुतहर्ष को प्राप्त होते हैं इतना कहकर वह पितर कहनेलगा कि, हे त्रिकालज्ञ ! जो आपने पूछा था सो हमने वर्णन किया अब पूर्वकर्म के फल से नरक निवास करने के लिये जाते हैं इतना पितर के मुखका वचन सुनि त्रिकालज्ञ कहनेलगा कि; हे पितर ! इस तीर्थ में जो २ पितर आये बहुत सावधान होकर निजपुत्र पौत्रों के किये श्राद्ध तर्पण को अङ्गीकारकर मौन होकर निज २ स्थान को गये और कई निराश होकर चलेगये इसका कारण ठीक २ हमसे कथन करो यह सुनि पितर बोला कि, हे त्रिकालज्ञ ! इन पितरों के निराश होने का कारण श्रवणकरो जो दान देश काल और पात्रहीन होता है उस दान को आसुर कहते हैं वह निष्फल होता है और अपात्र को देने से फल तो कहीं रहा पाप तो होताही है और श्राद्ध दुष्ट मनुष्य के देखने से नष्ट होजाता है और जो श्राद्ध तिल कुश और मन्त्रहीन होय उसकाभी आसुरनाम है इस आसुरश्राद्ध को श्रीवामनजी ने बलिको दिया है इसीभांति रावणनाम राक्षस को सहित कुटुम्ब के जब श्री रामचन्द्रजी ने बधकिया और सीता प्राप्त भई तब सीताने

श्रीरामचन्द्रजी से यह प्रार्थना किया कि रावणके कैद में हमको घोर दुःख हुआ जिसका अन्त नहीं परन्तु उस विषम समय में त्रिजटा राक्षसी ने हमारी बड़ी सहायता किया इसलिये इसे कुछ वरदेना आपको उचित है यह सीताजी की वाणी सुनि श्री रामचन्द्र प्रसन्न होकर बोले कि जो मनुष्य अपवित्र रहते हैं व विना मन्त्र के श्राद्ध होता है और जो क्रोधयुक्त होकर दानदेते हैं व फूटेकांस के पात्र में भोजन करते हैं वह सब त्रिजटा को प्राप्त होयँ इसलिये आसुरकर्म निष्फल होता है और भी कारण है सो श्रवणकरो किसीसमय शिवजी वासुकी नाग से प्रसन्न हो कहनेलगे कि हे वासुके! जो व्रत करके उद्यापन नहीं करते व यज्ञके सफल होने को भूयसी दक्षिणा नहीं देते व मिथ्या प्रतिज्ञा देवता औ ब्राह्मण के समीप जो करते हैं वेदहीन ब्राह्मण को जो श्राद्ध में भोजन कराते हैं व जिस वस्त्र के साथ स्त्री संग करते हैं उसी वस्त्र सहित जो स्नान करते हैं और जो शिष्य ज्ञानदाता गुरुको नम्र होकर प्रणाम नहीं करता वह सब हे नागराज! तुमको हमने दिया इसी वास्ते हे त्रिकालज्ञजी! चाहे श्राद्ध हो वा दान हो वा यज्ञ हो जो विधिहीन होता है सो जिसके लिये होता है उसकी तो तृप्ति नहीं होती व किया हुआ कर्म सब निष्फल होता है इसी निमित्त इस तीर्थ में जिन्हों ने श्राद्धादि कर्म विधिपूर्वक न पाया वह मौन होकर चले गये मौन इसलिये होगये कि फिर कभी विधिपूर्वक होगी तो हम तृप्तहोंगे उनके मौन होने का यही कारण है इसभांति पितर का वचन सुनि त्रिकालज्ञ कहनेलगा कि; हे पितर! छठे २ दिन हम भोजन करते हैं यह छठा दिन आज है परन्तु वे तुम्हारे तृप्त भये हम नहीं भोजन कर सकते इस वास्ते तुम स्थिर हो जबतक हम तुम्हारे लिये कुछ यत्न करें और हमारा यह नियम था कि रात्रि दिनमें कभी इस तीर्थ को न त्याग करेंगे परन्तु तुम्हारा क्लेश देख

कर अब नियम त्यागि उस विरूपनिधना दासी के समीप जाते हैं उसको यहां ल्याय व उसके हाथ से विधिपूर्वक श्राद्ध कराय तुमको तृप्तकर सावधान हो पश्चात् हम भोजन करेंगे इसभांति पितर से कहि त्रिकालज्ञमुनि वहां जाय पहुँचे जहां वह दासी रहती थी जब जाय राजा के समीप पहुँचे तबतो राजा बड़े आदर से उठि के पाद्य, अर्घ, आचमनीय, मधुपर्क और गोदान आदि देकर कहनेलगा कि, हम आज धन्य भये आपने बड़ी कृपा किया जो निजचरणकमल से इस स्थान को पवित्र किया अब आप कृपा करके जिसलिये आये हैं सो आज्ञा दें हमको सफल करें यह राजा चन्द्रसेन की विनयवाणी सुनि प्रसन्न होकर त्रिकालज्ञ कहने लगा कि; हे राजन्! हमारे आगमन का कारण आप सुनि के उसी रीति से कीजिये जिसमें हमारी प्रसन्नता होय कारण यह है कि जो आपकी रानी चन्द्रप्रभा है उस की दासी विरूपनिधना नाम जो है उसके पितर ध्रुवतीर्थ में सब तरह से क्लेशित होरहे हैं इसलिये उस दासी को बुलाय आज्ञा दीजिये जो निज कुल के उद्धार के लिये श्राद्धकर निज पितरों को स्वर्गबास देवे इसभांति त्रिकालज्ञ का वचन सुनि उसी समय राजा चन्द्रसेन ने आज्ञा दे निज रानी चन्द्रप्रभा को बुलाया राजा की आज्ञा को सुनतेही आय हाथ जोड़ रानी ऋषि को प्रणाम कर प्रार्थना पूर्वक विनय करनेलगी कि; हे भगवन्! आपने मुझ दासी को किसलिये बुलाया है सो आज्ञा देवें यह सुनि त्रिकालज्ञ ने सब वृत्तान्त कह सुनाया उसे सुनि रानी ने निज सेवकों को आज्ञा दी कि जाय विरूपनिधना दासीको यहां ले आवो यह सुनि राजसेवक जाय उस दासी के घर पहुँचे तो क्या देखते हैं कि खूब मद्यपान व मांस भक्षण कर मद से विकल शय्या के ऊपर किसी पुरुष के साथ लिपटी पड़ी है उसे इस भांति देखि सावधान कर हाथ पकड़ किसी भांति वहां लेआये

जहां राजा रानी व त्रिकालज्ञ ऋषि बैठे थे तब तो उसे ऋषि-जी मदिरा से मत्त देखि कहनेलगे कि; हे भाग्यवान्! तूने कभी निज पितरों के लिये कुछ सत्कर्म किया है यह ऋषिजी का वचन सुनि विरूपनिधना कहनेलगी कि, श्रीमहाराज मैंने कभी तर्पण, श्राद्धदान, ब्राह्मणभोजन भूले से भी नहीं किया अब आप जो आज्ञा दें सो मैं करूंगी यह दासी का वचन सुनि त्रिकालज्ञजी ने सारा ध्रुवतीर्थ का वृत्तान्त कह सुनाया उसे सुनि आश्चर्य मानि पछितानेलगी तब तो चन्द्रप्रभा रानी ने उसे समझाय बुझाय बहुतसा धन दे बहुते मनुष्यों के साथ सहित रानी के राजा ने जाय ध्रुवतीर्थ में विधिपूर्वक विरूपनिधना दासी से पिण्डदान व तर्पण कराय बहुते ब्राह्मणों का भोजन कराय और अनेक भांति के दान को दिया उस दान के देतेही उसका पितर या तो मरने के तुल्य महा दुर्बल मच्छड़ों करके घिररहाथा व बोल भी न सकता यातो उस दासी के पिण्डदान देतेही दिव्यस्वरूप धारणकर उत्तम २ वस्त्रभूषणों करके शोभित अप्सराओं करके सेवा को प्राप्त स्वर्ग को जाते समय यह कहनेलगा कि; हे मनुष्यो! यह हमारा वचन सावधान होकर सुनो संसारमें जितने तीर्थ पर्वत और नदी हैं अथवा जो उत्तम२ पृथिवी में सर हैं कुरुक्षेत्र, गया, नैमिषारण्य आदि जो पितरों के तृप्त होने के लिये पुण्यभूमि हैं उन सबों से उत्तम व श्रेष्ठ आश्विनमहीने के कृष्णपक्ष में मथुरामण्डल में ध्रुवक्षेत्र है जिसके स्नान, तर्पण, श्राद्धआदि सत्कर्म करने से पितरा की मुक्तिहोती है और बहुत कथनकरने से क्या है प्रत्यक्ष देखते हो कि हम सब क्लेशों से मुक्तहोकर उत्तम विमान में बैठि देवलोक को जाते हैं इतना कहि दासी का पितर त्रिकालज्ञ जीसे कहने लगा कि हे ऋषीश्वर! आपकी कृपा से यह घोरक्लेश हमारा निवृत्तहुआ अब हम देवगति को जाते हैं हे राजन्! हे रानी! ओ दासी!

तुम सब सदा प्रसन्नरहो हम तुम्हारे इस पुण्य से देवगति को प्राप्तहोते हैं इतना कहि त्रिकालज्ञ ऋषि को प्रणामकर आनन्दपूर्वक स्वर्ग को पधारा वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! तबतो राजा चन्द्रसेन तीर्थ का माहात्म्य सुनि व दासी के पितरों की उत्तमगति देखि मथुरा में जाय राज्य करनेलगा हे धरणि ! इस भांति मथुरा का माहात्म्य हमने वर्णनकिया जिसके स्मरण करने से पूर्वजन्म का पातक दूर होता है इस माहात्म्य को जो पुरुष ब्राह्मणों के समीप पाठकरे उसके पितर गया पिण्डदान देने के तुल्य तृप्त होते हैं हे धरणि ! यह कथा मूढ़ दुरात्मा कृतघ्न और शठ आदि नीचोंको न सुनना चाहिये जो मनुष्य श्रद्धावान् हरिभक्त देव पितर के सेवनकरनेवाले हों उनके श्रवण करने योग्य है यह माहात्म्य सब धर्मों से सब तीर्थों से व सबज्ञानों से उत्तम है सो हमने वर्णन किया सूतजी कहते हैं हे शौनक ! इसभांति श्रीवाराहजी का वचन सुनि धरणी विस्मित होकर प्रतिमास्थापन का विधान पूछने लगी इति श्रीमथुरामाहात्म्य समाप्तभया॥

एकसौछियत्तर का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक ! इस भांति अपूर्व मथुरा माहात्म्य सुनि बड़े विस्मय में युक्तहोकर धरणी कहनेलगी कि हे भगवन् ! आपने ऐसी अपूर्व व विचित्रकथा वर्णनकिया कि जिसके श्रवण से हमारे अनेकभांति के संदेह निवृत्तभये अब आप कृपा करके यह सन्देह निवृत्त कीजिये कि आप सर्वव्यापी अजर अमर साक्षात् नारायण हैं सो काष्ठ, पाषाण, मट्टी, ताम्र, कांस्य, चांदी, सोना और पीतल आदि पदार्थों की मूर्ति में किस रीति से निवास करते हो इसभांति धरणी का वचन सुनि वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि ! जिस किसी पदार्थ की प्रतिमा

सब लक्षणों करके युक्त बनावे कि जिसके देखने से मन प्रसन्न होजाय उस प्रतिमा की शास्त्रविधान से प्रतिष्ठाकरे हे धरणि! प्रथम काष्ठमूर्ति की प्रतिष्ठा का माहात्म्य श्रवणकरो मधूकनाम काष्ठको ले अर्थात् महुआ का काष्ठ ले शुभमुहूर्त में भलीभांति उत्तममूर्ति बनवाय विधान से प्रतिष्ठा करावे भक्तिपूर्वक स्नान, चन्दन, वस्त्र, माला, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और दक्षिणा आदि अनेकप्रकार से पूजनकर प्राणायाम करके हाथ में पुष्प ले इस मन्त्र का उच्चारणकरे (ॐयोऽसौभवांस्तिष्ठतिसर्वलोके योगप्रधानःकरुणाकरो हि। ससंभ्रमंलोकगतः प्रतीतःकाष्ठेषुतिष्ठाखिललोकपाल) इस मन्त्र को पढ़ि पुष्पाञ्जलि मूर्ति में दे प्रदक्षिणाकर काम, क्रोध वर्जित हो वहां अखण्ड दीप स्थापितकर "ॐनमो नारायणाय" इस मन्त्र को सावधान होकर जपकरे जप करके हाथ जोड़ इसमन्त्र को पढ़े (मन्त्रः । योऽसौ भवान्सर्वगतिः प्रवीरगतिःप्रभुस्त्वेवससिद्धमोघा। अनेन मन्त्रेण च लोकनाथ संस्थापितास्तिष्ठतु वासुदेव) इसमन्त्रसे साष्टाङ्गदण्डवत्कर भक्तिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन कराय अभ्यागतों को भोजन करावे हे धरणि! इसभांति मधूककाष्ठ की प्रतिमा की स्थापनरीति हमने वर्णन की इसभांति जो काष्ठ की प्रतिमा स्थापन करता है वह मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर हमारे लोक को जाताहै॥

एकसौसतहत्तर का अध्याय॥

श्रीवाराह भगवान् कहते हैं हे धरणि! अब हम शिलामूर्ति के प्रतिष्ठा की विधि वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो उत्तम शिला दृढ़ व सुन्दर देखकर जो मूर्ति बनानेवाले हैं उनको बुलाय धन से तृप्तकर उनको शिला दे बनाने की आज्ञा देय जब वह मूर्ति उत्तमता से मनोहर बनजाय तब उसे वेदपाठी ब्राह्मण व वैष्णवों को बुलाय स्थान को पवित्रकर विधान

पूर्वक पांच कलश को स्थापनकर विष्णुमन्त्र से हवनकरे फिर ओषधियों के जल से मूर्तिको स्नानकराय अधिवासन करावे फिर दही भात की बलि दे "ॐ नमोनारायणाय" इस मन्त्र का जपकर हाथ जोड़ इस मन्त्र का उच्चारण करे (मन्त्रः । ॐ योऽसौ भवान् सर्वजनप्रवीरः समोग्नितेजामहति प्रधानः। योऽसौ भवांस्तिष्ठति सर्वरूप माया बलं सर्वजगत्स्वरूपम्) इस मन्त्रसे प्रार्थनाकर मूर्ति को पञ्चगव्य से स्नानकराय गान व वाद्यपूर्वक सामवेद के मन्त्रों से हमको स्थापितकरे हे धरणि ! सामवेद के मन्त्र जहां पढ़ेजाते हैं वहां हम शीघ्रही आते हैं इसभांति मूर्ति का स्थापनकर इस मन्त्र से आवाहनकरे (ॐ आगच्छहेदेव समन्त्रयुक्तःपञ्चेन्द्रियैःषड्भिरथप्रधानः। एतेषु भूतेषु च संविधाता आवाहितस्तिष्ठ च लोकनाथ) इस मन्त्र से आवाहनकर "ॐ नमोभगवतेवासुदेवाय" इस द्वादशाक्षर वासुदेवमन्त्र से घृत, तिल, शहद और धान की खीलें इन पदार्थों का हवनकरे फिर प्रातःकाल विधिपूर्वक स्नान सन्ध्यासे निवृत्त होकर मूर्तिमें गन्ध लेपन इसमन्त्र से करे (मन्त्रः । योऽसौभवान्लक्षणलक्षितश्च लक्ष्म्यासमेतः सततः पुराणः । अत्र प्रसादेषु समिद्धतेजाःप्रवेश मायाहि नमोनमस्ते) इस मन्त्र से प्रार्थनाकर मूर्ति के अङ्गों में उबटना लगाय पञ्चगव्य से स्नान कराय उष्णजल से स्नान करावे फिर चन्दन,केसर और कपूरआदि मिलाके मूर्तिके अङ्गों में लेपनकरे फिर इस मन्त्रको पढ़े (मन्त्रः । योऽसौ भवान् सर्वजगत्प्रधानःसंपूजितो ब्रह्मबृहस्पतिभ्याम् । प्रवन्दितः कारण-मन्त्रयुक्तःसुस्वागतं तिष्ठ सुलोकनाथ) इसमन्त्रको पढ़ि चन्दन, पुष्प, माला और वस्त्रआदि अर्पणकरे इसमन्त्रसे (मन्त्रः । वस्त्राणि देवेश गृहाण तानि मया सुभक्त्या रचितानि यानि । इमानि संधारयविश्वमूर्ते प्रसीद मह्यं च नमो नमस्ते) इस मन्त्र से वस्त्र अर्पणकर धूपदेय(मन्त्रः।ॐअसावनादिःपुरुषःपुराणोनारायणः

सर्वजगत्प्रधानः। गन्धंच माल्यानि च धूपदीपौ गृहाण देवेश नमो नमस्ते) इस मन्त्र से पूजनकर अनेकभांति के व्यञ्जन भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पेय इन चारों पदार्थों को सुवर्ण व चांदी के पात्रों में धर भोग लगाय गङ्गाजल से आचमन दे ताम्बूल निवेदनकर हाथ जोड़ इसमन्त्रको पढ़े (मन्त्रः। ॐकरोतु शान्तिं भगवाँल्लोकनाथो राज्ञस्सराष्ट्रस्यच ब्राह्मणानाम्। बालेषु वृद्धेषु गवां गणेषु कन्या सुशान्तिश्च पतिव्रतासु॥ रोगा विनश्यन्तु च सर्वतश्च कृषीवलानां च कृषिःसदा स्यात्। सुभिक्षयुक्ताश्च सदा हि लोका काले सुवृष्टिर्भविता च शान्तिः) हे धरणि! इसभांति विधिपूर्वक पूजन कर ब्राह्मण का भोजन करावे फिर दीन, अन्ध, पंगुले आदि भिक्षुक जो किसी अर्थ उस यज्ञ में आये हैं उनको भोजन, वस्त्र, दक्षिणा आदि से प्रसन्नकर आशीर्वाद ले आप निजकुटुम्ब के साथ भोजनकरे वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसविधान से जो मनुष्य हमारा स्थापन करते हैं जितने मनुष्य की देह में रोम होते हैं उतनेही वर्ष हमारे लोक में निवास करते हैं और जिस मनुष्य ने अभिमान त्यागकर भूमि में हमारा स्थापन किया उस मनुष्य ने निज इक्कीस कुल का उद्धार किया हे धरणि! इसभांति पाषाणमूर्ति का स्थापन हमने धर्म की रक्षा वास्ते व भक्तों के सुख के लिये वर्णन किया॥

एकसौ अठहत्तर का अध्याय॥

श्रीवाराहजी कहते हैं हे धरणि! भक्तों के पूजन करनेके लिये हम मृत्तिका की मूर्ति में भी निवास करते हैं उस मृत्तिका की मूर्ति का पूजन करना चाहिये जो खण्डित न हो और फटी न हो हे धरणि! इसभांति की प्रतिमा बनाना चाहिये जो मनोहर हो कि जिसके देखने से मन प्रसन्न होजाय उस मूर्ति का जिस २ कामना के लिये पूजन करे सो २ कामना हम मृत्तिका

मूर्ति के पूजन करने से सब पूर्ण करते हैं और पूजन करने वाला पुरुष इस लोक में अनेक भांति के सुख को भोगि अन्त में हमारे लोक में प्राप्त होता है हे धरणि! जो मनुष्य सबकाल में सावधान होकर हमारा ध्यान करते हैं उनके पूजन करने से व जप करने से क्या है उनके सब मनोरथ हम सदा पूर्ण करते हैं हे धरणि! मृत्तिका की मूर्ति को श्रवणनक्षत्र में अधिवासन कराना चाहिये और पहले जिस विधान से स्थापन कह आये हैं उसी विधान से मन्त्र पूर्वक स्थापन करे चन्दन मिलाकर पञ्चगव्य से इस मन्त्र को पढ़कर हमारी मूर्ति का स्नान करावे (मन्त्रः। ॐयोऽसौ भवान् सर्वजगत्प्रकर्ता यस्य प्रसादेन भवन्ति लोकाः। सत्वं कुरुष्वाच्युतमत्प्रसादं संतिष्ठ अर्चासुचमृन्मयीषु) इस मन्त्र को पढ़ि स्थापनकर पहले कही रीति सों चार कलश पञ्चपल्लव करके युक्त जल से पूर्ण स्थापित कर उस मूर्ति का इस मन्त्र को पढ़ि अभिषेक करे (मन्त्रः। ॐ वरुणः समुद्रस्य पतिः सदा त्वं सम्पूजितो ह्यात्मगति प्रपन्नः। एतज्जलेनैव ममाभिषेकं प्राप्तं वरिष्ठं हि सऊर्ध्वबाहुः॥ अग्निश्च भूमिश्च रसश्च वायुर्व्योमेति यस्मात्प्रभवन्तिसर्वे। तमीश्वरं सर्वगुणावभासं सर्वाश्रयं तं सततंनमस्ते) इन दोनों मन्त्रों से हमारी मूर्ति का अभिषेक कर स्नान, वस्त्र, चन्दन, पुष्प, माला, धूप, दीप और नैवेद्य आदि पदार्थों से हमारा पूजनकर अनेक भांति के शृङ्गार कर हमारी मूर्तिके आगे हाथ जोड़ यह मन्त्रपढ़े (मन्त्रः। ॐपीतेन वस्त्रेण सदा प्रसन्नो यस्मिन्प्रसन्ने तु जगत्प्रसन्नम्। गृह्णन्तु वस्त्रं सुमुखः प्रसन्नो देवा सदा पातु भवस्य बन्धात्) इस मन्त्र को पढ़ि फिर धूप आरती कर प्रापण दे आचमन दे यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐशान्तिर्भवतु देवानां ब्रह्मक्षत्रविशां तथा। शान्तिर्भवतु वृद्धानां बालानां शान्तिरुत्तमा॥ देवो वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी शस्यपूरिता। धर्मे रमन्तु राजानो लोकाश्च सुखिनो

भृशम्) इस मन्त्र से प्रार्थनाकर वैष्णवों का पूजनकर ब्राह्मणों का पूजनकरे फिर ब्राह्मणों को इच्छा भोजन कराय दक्षिणा दे पीछे जो कोई उस यज्ञ में दीन, अन्ध, पंगु, बाल, वृद्ध आये हों उन्हों का प्रीति से यथाशक्ति सत्कार पूजन कर सब के पश्चात् श्रीगुरु को अनेक भांति के वस्त्र भूषण दक्षिणा करके प्रसन्नकर आशीर्वाद ले हे धरणि ! जिस भांति गुरु के पूजन से हम प्रसन्न होते हैं वह प्रसन्नता हमारी किसी भांति नहीं होती यदि बड़े परिश्रम करने से राजा प्रसन्न होताहै तो हाथी, घोड़ा, ग्राम आदि पदार्थ देता है और हम प्रसन्न होके लोक में अनेकभांति के सुख व अन्त में मोक्ष देते हैं हे धरणि ! इस विधान से जो मनुष्य हमारा स्थापन करते हैं उनकी एकसौ तीन पीढ़ी हमारे लोक में प्राप्त होती हैं और उस मूर्ति को स्नान कराते जितने जलबिन्दु पृथिवी में पड़ते हैं उनके पितर उतनेही हज़ार वर्ष हमारे लोक में निवास करते हैं हे धरणि ! इसभांति हमने मृत्तिकामूर्ति का स्थापन विधान वर्णन किया अब और भी वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो ॥

एकसौ उन्नासी का अध्याय ॥

हे धरणि ! ताम्र की प्रतिमा सुन्दरी प्रकाशमान मनोहर बनवाकर व उत्तम दृढ़ रमणीय मन्दिर बनवाकर सब स्थापन सामग्री इकट्ठीकर चित्रा नक्षत्र में मूर्त्ति का अधिवासन रात्रि में कराय पीछे पञ्चगव्य व सुगन्धजल से स्नान कराय यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐयोऽसौभवांस्तिष्ठसि साक्षिभूतः सताम्रके तिष्ठसि नेत्रभूतः। आगच्छमूर्तौ सह पञ्चभूतैः मया च पालैःसह विश्वधाम) इस मन्त्र से रात्रि के समय अधिवासन कराय प्रातःकाल सूर्य उदय होनेपर वेदमन्त्रों को पढ़ते ब्राह्मण स्नानकरावें फिर सुगन्धपदार्थों करके युक्त श्रीगङ्गाजल लेकर इसमन्त्र को पढ़ता

हमको स्नान करावे (मन्त्रः। ॐ योऽसौभवान्सर्ववरःप्रभुश्च मायाबलो योगबलप्रधानः। आगच्छ शीघ्रञ्च मम प्रियाय सतिष्ठ ताम्रेष्वपि लोकनाथ॥ ज्वलनपवनपावनभावनतपनश्वसनस्व यं तिष्ठ भगवन्पुरुषोत्तम) इस मन्त्र को पढ़ता हुआ हमारी मूर्ति को मन्दिर के भीतर लेजाय उत्तम मनोहर सिंहासनपर भक्ति-पूर्वक बैठावे और इस मन्त्र को पढ़े (मन्त्रः। ॐ आकाशप्रकाश जगत्प्रकाश विज्ञानमयानन्दमयत्रैलोक्यनाथात्रागच्छ इह सं-तिष्ठतु भवान्पुरुषोत्तम नमोनमः) हे धरणि! इस मन्त्र से स्था-पनकर शुक्लवस्त्र को ले इस मन्त्रको पढ़े (मन्त्रः। ॐशुद्धस्त्व-मात्मापुरुषः पुराणो जगत्सुतत्त्वं सुरलोकनाथ। वस्त्राणि गृह्णीष्व ममप्रियाय नमोस्तु तस्मै पुरुषोत्तमाय) इस मन्त्र को पढ़ि उत्तम वस्त्रों से हमारी मूर्ति को भूषितकर विविधभांति के पूजन को करे गन्ध, पुष्पमाला और भांतिभांति के अलंकार अर्पणकर धूप, आरती कर इस मन्त्र से विधिपूर्वक नैवेद्य अर्पणकरे (मन्त्रः। ॐ चतुर्विधंतेनैवेद्यं मयाभक्त्या निवेदितम्। सहलक्ष्म्या च भगवन्गृहाण सफलीकुरु) इस मन्त्र से नैवेद्य दे व हाथ जोड़ नम्र होकर शान्तिपाठ करे (मन्त्रः। ॐ शान्तिर्भवतुदेवानां वि प्राणां शान्तिरुत्तमा। शान्तिर्भवतु राज्ञां च सराष्ट्राणां तथावि-शाम्॥ बालानां व्रीहिपण्यानां गर्भिणीनां च देहिनाम्। शान्ति र्भवतु देवेश त्वत्प्रसादान्ममाखिल) इसभांति शान्तिमन्त्र को पढ़ि ब्राह्मणों का गुरु का और वैष्णवों का भक्तिपूर्वक पूजनकर भोजन कराय वस्त्रभूषण से भूषितकर बहुतसी दक्षिणा दे बिदा कर दीनों को भोजनकराय आप सकुटुम्ब भोजन करे हे धरणि! जिस यज्ञ में गुरु नहीं संतुष्ट होता है उस यज्ञ में हमारी तृप्ति नहीं होती है इसलिये जिसभांति बने गुरु को अवश्य संतुष्ट करे जिसके करने से इक्कीसकुल नरक से निकल वैकुण्ठबास पाते हैं इसभांति हे धरणि! ताम्रप्रतिमा का विधान वर्णनकिया

इसीभांति और प्रतिमाओं की विधि वर्णन करते हैं सो साव-
धान होकर श्रवण करो ॥

एकसौअस्सी का अध्याय ॥

हे धरणि ! विधिपूर्वक मनोहर सब उत्तम लक्षणों करके युक्त कांस्यकी प्रतिमा बनवाय मङ्गलपूर्वक गाते बजाते ज्येष्ठानक्षत्रमें जिस मन्दिर में स्थापन करना होय वहां लेजाय इस मन्त्र को पढ़ि अर्घ्य देय (मन्त्रः । ॐ योऽसौभवान्सर्वयज्ञेषु पूज्यो ध्येयो गोप्ता विश्वकायो महात्मा । प्रसन्नात्मा भगवान्मे प्रसन्नः सुपूजितस्तिष्ठतु लोकनाथ) इस मन्त्र से प्रार्थना कर उत्तरदिशा को मुखकर विधानपूर्वक अर्घ्य देने के पश्चात् अधिवासन कराय चार कलश पञ्चगव्य से पूरितकर अनेकभांति के सुगन्ध को मिलाय शहद भी मिलाय हमारे स्नान के लिये स्थापित करे फिर उत्तमकर्मनिष्ठ हमारे दास कलशों को पकड़ " ॐनमो नारायणाय" इस मन्त्रको पढ़ यह मन्त्र पढ़ें (मन्त्रः । ॐआदिर्भवान् ब्रह्मयुगान्तकल्पःसर्वेषु कालेष्वपि कल्पभूतः । एको भवानस्ति न कश्चिद्द्वितीय उपागतस्तिष्ठसि लोकनाथ । विकारअविकारशकारसकारषकारस्वच्छन्दरूपःअरूपः नमःपुरुषोत्तमाय) इस मन्त्र से चारों कलशों के जल को अभिमन्त्रितकर सूर्योदय के पश्चात् विधिपूर्वक कलशों को ले हमारे समीप स्थापनकर इस मन्त्र को पढ़े (मन्त्रः । ॐ नमो नारायणाय । ॐ इन्द्रोभवांस्त्वं च यमः कुबेरो जलेश्वरः सोमबृहस्पती च । शुक्रश्शनैश्चरबुधौ सहसैंहिकेयकेतूरविश्चैव धरात्मजस्त्वम् ॥ तथैव सर्वौषधयाजलानि वायुश्च पृथ्वी च सवायुसारथिः । नागास्सयक्षाश्च दिशश्च सर्वास्तस्मै नमस्ते पुरुषोत्तमाय) इस मन्त्र से हमारी प्रार्थनाकर स्नानघर में ल्याय एकान्त में वेदमन्त्र को पढ़ता मूर्ति को स्नान करावे (मन्त्रः । ॐ सरांसि यानीह सम-

स्तसागरा नद्यश्च तीर्थानि च पुष्कराणि। आयान्तु तान्येव तव प्रसादात् शुद्धौ च मूर्तेःपुरुषोत्तमस्य) इस मन्त्र से चारों कलशों के जल से स्नान कराय विधिपूर्वक उत्तमसिंहासन पर स्थापितकर चन्दन, धूप, दीप आदि से मूर्ति की पूजाकर इस मन्त्र से वस्त्र दे (मन्त्रः। ॐवस्त्राणि देवेन्द्र मया हृतानि सूक्ष्माणि सौम्यानि सुखावहानि। गात्रस्यसंतुष्टिकराणि तुभ्यं गृह्णीष्व देवेश सुलोकनाथ॥ वेदोपवेद ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदअथर्ववेद संस्तुत्तनमः) इस मन्त्र को पढ़ि हमारे चरणों में भक्तिपूर्वक प्रणामकर वस्त्र पहिनाय फूल, माला, किरीट और मुकुट आदि से भूषितकर विधिपूर्वक नैवेद्य दे श्रीगङ्गाजल से आचमन दे शान्तिमन्त्र पढ़े (मन्त्रः। वेदास्सर्वे ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च ग्रहा स्सर्वेसरितस्सागराश्च। इन्द्राद्यष्टौ लोकपालाश्च सर्वे पूर्वोक्ता ये सर्वशान्तिं च कुर्युः। आमामयकामदमवाम ॐ नमःपुरुषोत्त-मायेति) इस मन्त्र को पढ़ि भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा करे पश्चात् स्तोत्र पाठकर प्रणामकर शुद्धवैष्णव गुरु ब्राह्मणों की यथाशक्ति पूजा कर उत्तम भोजन कराय दक्षिणा दे विदाकर आप सकु-टुम्ब भोजनकरे हे धरणि! इस विधान से जो हमारी मूर्तिको स्थापन करते हैं वे निजपिता माता के इक्कीस २ पितरों के साथ हमारे लोक में निवास पाते हैं। इस भांति हे धरणि! हमने कांस्यकी मूर्तिका स्थापन वर्णन किया॥

एकसौइक्यासी का अध्याय॥

अब हे धरणि! चांदी की मूर्ति की प्रतिष्ठा वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवणकरो चांदी की प्रतिमा उत्तम मनोहर दोषों से रहित बनवाय मङ्गलपूर्वक निज घर में लाय अर्घ्य-पाद्य से पूजनकर इस मन्त्र को पढ़े (मन्त्रः। यःसर्वलोकेष्वपि सर्वमर्घ्यपूज्यश्च मान्यश्चदिगोकसामपि। उपागतो गृह्ण इदं

ममार्घ्यं प्रसीद संतिष्ठ सुलोकनाथ ॥ यो राजते यज्ञपतिश्च यज्ञैस्सूर्योदये मम कर्माग्निहोत्रे) इस मन्त्र को पढ़ि अर्घ्य को दे कर्कराशि के चन्द्रमा में श्लेषा नक्षत्र में विधिपूर्वक अधिवासन कराय चारकलश चन्दन जल करके व सर्वौषधी करके युक्त आम्रपल्लव भूषित कर इस मन्त्र से अभिमन्त्रण करे (मन्त्रः। ॐ नमो नारायणाय। योऽसौभवान्सर्वलोकैककर्त्ता सर्वाध्यक्षःसर्वरूपैकरूपः। आयातु मूर्तौ सहितो मया च ध्रुवादिभिर्लोकपालैश्च पूज्यः॥ नमो अनन्ताय) इस मन्त्र से अभिमन्त्रितकर प्रातःकाल उठि नित्यकर्म से निवृत्त होकर भक्तिपूर्वक घट के जलसे हमारी मूर्ति का स्नानकरावे इस मन्त्र को पढ़े (मन्त्रः। ॐनमो नारायणाय। गङ्गादिभ्यो नदीभ्यश्च सागरेभ्यो मयाहृतम्। स्नानाय ते सुरश्रेष्ठ कर्पूरावासितं जलम्) इस मन्त्र को पढ़ि स्नान कराय मन्दिर में ले सिंहासन में स्थापन करे (मन्त्रः। ॐ वेदैर्वेद्यो वेदविद्भिश्च पूज्यो यज्ञात्मको यज्ञफलप्रदाता। यज्ञार्थत्वामाह्वये देवदेव मूर्तावस्यां तिष्ठ वै लोकनाथ ॥ धनयजनरूप्यवणमनन्तायनमः) इस मन्त्र को पढ़ि स्थापनकर पहले कही विधि से मूर्ति का पूजनकरे फिर उत्तम वस्त्र ले हमारे प्रणाम कर यह मन्त्र पढ़े॥ (मन्त्रः। ॐ नमोनारायणाय। योऽसौभवांश्चन्द्ररश्मिप्रकाशःशंखेन कुन्देनसमानवर्णः। क्षीरोज्ज्वलः कौमुदवर्ण देव वस्त्राणि गृह्णीष्व ममप्रियार्थम्। वेषः, सुवेषः, अनन्तः, अमरः, मारणः, कारणः, सुलभः, दुर्लभः, श्रेष्ठः, सुवर्चा इति) इस मन्त्र से वस्त्र दे गन्ध, पुष्प, धूप, दीप दे नैवेद्य देवे (मन्त्रः। ॐ नमोनारायणाय। शाल्यन्नंपायसैर्युक्तं सितया च घृतेन च। प्रापणं गृह्यतां देव अनन्तपुरुषोत्तम) इस मन्त्र से नैवेद्य दे आचमनीय दे शान्तिमन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐ शान्तिकरोतु ब्रह्मा च रुद्रो विष्णुश्च भास्करः। रात्रिश्चैव तु संध्ये द्वे नक्षत्राणि ग्रहादिशः। अचलचञ्चलसचलखेचलप्रचलअरविन्दप्रभउद्भव-

श्चेति नमः) इस शान्ति मन्त्र को पढ़ि वैष्णव गुरुका पूजनकर ब्राह्मणों का पूजन कर भांति २ के भोजन कराय दक्षिणा से संतुष्ट कर आशीर्वाद ले दीन, अन्धे, पंगुले आदि जीवों को संतुष्ट कर निज कुटुम्ब के साथ आपभी भोजन करे हे धरणि! इसभांति हमने चांदी की मूर्ति का स्थापनविधान वर्णन किया जिसके स्थापन करने से मनुष्य पितामाता के इक्कीस ऊपर सौ वंश के साथ वैकुण्ठवास पाता है अब सुवर्ण की प्रतिमा का स्थापनविधान वर्णन करते हैं सो श्रवण करो जिसभांति चांदी की प्रतिमा का स्थापनविधान कह आये हैं उसीभांति सुवर्णकी मूर्ति भी स्थापन करनाचाहिये और जो फल काष्ठ की प्रतिमा में पाषाण की मूर्ति में ताम्र की मूर्तिमें कांस्यकी मूर्तिमें और चांदी की मूर्ति में होताहै उस फल से हज़ारगुणा फल सुवर्ण की प्रतिमा स्थापनकरने से होताहै और सहस्रकुल का उद्धार होताहै यह वृत्तान्त हे धरणि! हमने वर्णन किया अब क्या श्रवण किया चाहतीहो सो वर्णन करें इसभांति वाराहभगवान् के मुखारविन्द की वाणी सुनि धरणी कहनेलगी कि, हे भगवन्! आप कृपा करके यह कथनकरें कि, सुवर्णादिक मूर्तियों का जो आपने वर्णन किया उन्हों में वा शालग्राम में किस में आप सदा निवास करते हैं और शिवलिङ्ग की पूजा वा शालग्राम की पूजा गृहस्थ कितनीकरें उसकी संख्या आप वर्णनकरें इसभांति धरणी की विनयवाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि! गृहस्थ दो शिवलिङ्ग और तीन शालग्राम न पूजनकरें और द्वारका के दो चक्र दो सूर्य तीन गणेश व तीन देवी का पूजन न करें और शालग्राम को सम संख्या में दो मूर्ति और विषम संख्या में तीनमूर्ति न पूजनकरें और हे धरणि! चाहे जिसदेवता की मूर्ति पूजे सर्वथा एकही मूर्ति कल्याण देनेवाली होती है और जो मूर्ति अग्नि में भस्म होजाय व किसी भांति फूटजाय वहभी

सर्वदा पूजायोग्य नहीं है यदि गृहस्थ इन मूर्तियों की पूजाकरे तो वह कभी सुख न पावे और हे धरणि! शालग्रामशिला चक्र चिह्न करके युक्त होतो खण्डित फूटीका दोष नहीं है हे धरणि! जो मनुष्य सदा भक्तिपूर्वक शालग्राम की बारहमूर्ति का पूजन करते हैं उन मनुष्यों के पुण्य को हम कहांतक वर्णनकरें कि विधिपूर्वक सुवर्ण के कमलों से दशकल्प बारह कोटिलिङ्ग का जो पूजन करते हैं उनको जो फल होताहै सो फल एकदिवसमें उस पूजन करने से प्राप्त होताहै और जो शालग्राम की शत-संख्या शिला का पूजन करते हैं उनके पुण्यफल को हम शत वर्ष में भी नहीं कहसक्के और हे धरणि! किसी देवता की मूर्ति होय चारों वर्ण को पूजा करना उचित है व मणि के बनाये जो शिवलिङ्गहैं उनके पूजनेकोभी चारों वर्ण अधिकारी हैं शालग्राम शिला व नर्मदेश्वर शिवलिङ्ग इन्हों की पूजा तीनही वर्ण को अधिकार है अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यको यदि शालग्राम को व शिवलिङ्ग को स्त्री व शूद्र स्पर्शकरलें तो प्रलयपर्यन्त न-रक में वास पातेहैं यदि स्त्री को व शूद्र को शिव विष्णु में भक्ति हो तो मूर्ति का पूजनकरें व शालग्राम नर्मदेश्वर की पूजा जहां होती होय वहां जाय दूर खड़े हो दर्शन मात्र करलें व चरणा-मृतभी लें हे धरणि! शिवजी का निर्माल्य सदा ‡ अभक्ष्य है चाहे पत्र, पुष्प, फल, जल कुछ भी हो परन्तु शालग्राम शिला के साथ सब शिवजी का अर्पितपदार्थ पापों के दूर करनेहारा होता है और हे धरणि! सुवर्णसहित शालग्राम शिला जो ब्राह्मण को दान देता है उसको सहितपर्वत व वन समुद्र के पृथ्वी दान देने का फल होता है और जो कोई शालग्रामशिला को मोल करके दे वा ले वे दोनों नरकगामी होते हैं हे धरणि! इसभांति

‡ "रेवासमुद्भवं लिङ्गं पार्थिवं पारदं तथा। एषां पादोदकं पीत्वानैवेद्यं चापि भक्षयेदिति शिव संहितायाम्॥

प्रतिमामाहात्म्य और स्थापनविधि हमने वर्णन की अब क्या श्रवण किया चाहती हो सो कहैं ? ॥

एकसौबयासी का अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक ! इस भांति श्रीवाराह भगवान् जी के मुखारविन्द से वचन सुनि हाथ जोड़ नम्रहोकर धरणी यह कहनेलगी कि, हे भगवन् ! आपने कृपा करके अनेक तीर्थों के व क्षेत्रों के अतिगुप्त वृत्तान्त वर्णनकिये अब कृपा करके यह वर्णन करें कि पितृयज्ञ क्या पदार्थ है और प्रथम इसको किसने प्रवृत्त किया ? और आप कथाप्रसंग में पहले सोमदत्तनामक राजा का वृत्तान्त कह आये हैं सो सोमदत्त शिकार खेलने को गया फिर उसका क्या वृत्तान्त भया सो आप वर्णन करें ? यह धरणी की विनयवाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि ! तुमने बहुत उत्तम प्रश्न किया परन्तु भार से व्याकुल होरही हो इस वास्ते तुमको दिव्यबुद्धि देते हैं अब सावधान होकर सुनो हे धरणि ! प्रलय होनेके पीछे सब जलमय अन्धकार संसार देख हमारे सृष्टि करने की बुद्धि उत्पन्न भई उस समय में शेषनागरूपी पलंग के ऊपर मायामयी निद्रा से युक्त हुये २ कुछ जागते कुछ सोते हजारों युग व्यतीत होगये तब तो वैष्णवी-माया में युक्त होकर बालकरूप धार बटपत्र के ऊपर शयन करते रहे और हे धरणि ! हम एक मूर्ति से कार्यवश होकर तीनमूर्ति होगये क्रोध से दैत्यों के संहार करने के लिये रुद्र और सृष्टि रचने के लिये ब्रह्मा हमारी नाभिकमल से उत्पन्न भये परन्तु हम तीनों देवता सर्वविश्व जलमय देखि निज वैष्णवी माया में निवास करते परस्पर बहुत कालतक विहार करतेरहे फिर निजमायावश होकर अक्षयबट के एकपत्रपर क्रीड़ाबालक हो निज हाथों से दहिने पैर के अँगूठे को निजमुख में रख आनन्द

रहते व निज उदर के मध्य में चराचर को देखते हे धरणि! इसीभांति कुछ काल बीतने से बड़वानल अग्नि हो निजमुखों से जलसमूह को भस्म करनेलगे जब जल बहुत भस्म होगया तब तो ब्रह्माजी को प्रकटकर व उनको मौन देखि हमने आज्ञा दी कि आप मौन क्यों होरहे हो? हमारा स्मरणकर देवता असुर और मनुष्य को उत्पन्नकरो हे धरणि! इसभांति हमारे वचन को सुनि उन्होंने निजकमण्डलु से जल ले आचमनकर पवित्र हो हमारी आज्ञा के अनुसार सृष्टिरचना प्रारम्भ किया प्रथम आदित्य, वसु, रुद्र, अश्विनीकुमार और वायु के गण उत्पन्नकिये फिर ब्राह्मणों को निजमुख से क्षत्रियों को भुजा से वैश्यों को जङ्घासे और शूद्रों को पैर से उत्पन्न किया और देवताओं को सत्त्वगुण से, मनुष्यों को रजोगुण से, असुरों को तमोगुण से उत्पन्न किया हे धरणि! देवताओं की माता अदिति नामक कश्यप की स्त्री भई व दैत्यों की माता दिति भई जिससे सब देवशत्रु उत्पन्न भये ये सब उत्पन्न हो हो तपोवीर्य करके युक्त सूर्य के तुल्य जिन्हों का तेज व बलवान् होकर सब विद्यानिधान भये तिन्हों के पुत्र पौत्र सब इसीभांति बड़े २ पराक्रमयुक्त भये हे धरणि! मनुवंश में एक आत्रेयनाम ब्राह्मण हुआ था कि जिसका पुत्र तपोनिधान निमि नाम उत्पन्नभया और निमि का पुत्र श्रीमान्नामक तपस्वी भया सो श्रीमान् बहुतकाल तक वायु भोजन करके बहुतकाल जल पी करके और सूखेपत्ते खाकर तप करतारहा कभी पञ्चाग्नि तापता कभी एक पैर से खड़ा हो बाहु को ऊपर उठाय सूर्य को देखता हुआ तप करता रहा और शीत के दिनों में जलशयन करना कभी कृच्छ्रनामक व्रत कभी चान्द्रायण व्रत व कभी प्राजापत्य व सांतपन आदि किया करता था इसभांति हे धरणि! हजारों वर्ष तप करते २ व्यतीत होने से कालवश होकर मृत्यु को प्राप्तभया तब तो

श्रीमान् ऋषि का पिता निमि निजपुत्र को मरा जानि शोकयुक्त होकर दिनरात्रि सब सुखों को त्यागि क्लेश में रहने लगा इसी भांति जब बहुत दिन व्यतीत भये तब तो माघमास की द्वादशी को निमि के मन में यह विचार उत्पन्नभया कि पुत्र का श्राद्ध करना चाहिये यह विचारि बहुत मूल फल कन्द मांस आदि अनेकभांति के भक्ष्यपदार्थों को इकट्ठेकर सात ब्राह्मणों को निमन्त्रण दे पुत्र का स्मरण कर सहित विधान भक्ति से ब्राह्मणों का भोजन कराय दक्षिणा दे विसर्जन कर दक्षिणदिशा में अग्रभागहै जिन कुशों का ऐसे बहुत से कुश भूमि में बिछाय उसके ऊपर नाम व गोत्र का उच्चारणकर पिण्डदान किया इसभांति निमिनामक मुनिने निजपुत्र के लिये पिण्डदानकर शोक में मग्न हुआ दिन व्यतीतकर सूर्य भगवान् के अस्तहोने समय सन्ध्याकर्म से निवृत्त हो एकान्त में कुश मृगचर्म और कम्बलआदि आसन को बिछाय एकचित्त हो नासिका के अग्रभाग को देखता निजआत्मा का ध्यान करनेलगा इसभांति हे धरणि! समाधियोग से हमारा ध्यान कर बहुत रात्रि व्यतीत होनेसे फिर पुत्रशोक में युक्त होकर यह कहनेलगा कि देखो यह श्राद्ध आजतक किसीने किया नहीं मैंने मोहवश यह क्या काम किया ? जो पिण्डदान पुत्र के निमित्त किया यह विना विचारकिये मोहवश से सबभया यदि यह मेरा कृत्य मुनियों को विदित होय तो शाप देकर उसीक्षण भस्मकर दें और यदि इस कर्म को देवता, असुर, गन्धर्व, पिशाच, सर्प और राक्षस जानें तो हमको क्या कहें ? हाय! हमने विना विचारे क्याकिया ? इसीभांति शोच करते २ हे धरणि! वह रात्रि तो निमिजी की व्यतीत भई प्रातःकाल उठि स्नान सन्ध्या से निवृत्त हो फिर उसी शोकसागर में डूबि निजबुद्धि की निन्दा करताहुआ कहने लगा कि देखो लोकमें निन्दाभी भई व पुत्रका प्राण भी न लाभ भया हम बड़े मूर्ख हैं हमारे पढ़नेको योगकरने

को और ज्ञान को धिक्कार है जो अनर्थ करके पीछे शोकसागर में डूबिरहे हैं पुत्र से पिता को स्वर्ग होता है व पौत्र से पितामह को स्वर्ग होताहै हम पुत्रहीन किसभांति स्वर्ग में प्राप्त होंगे और पुत्रहीन हमारे जीवने को धिक्कार है इस जीवने से मृत्यु होना उत्तमहै इसभांति अनेक ग्लानि करके रोदनकर रहाथा कि उसी समय नारदजी आय प्राप्त भये तवतो हे धरणि! नारदजी को देखि स्वागतपूर्वक प्रणामकर अर्घ्य, पाद्य, मधुपर्क आदि से पूजनकर उत्तम आसनपर वैठाय हाथ जोड़ निमिऋषि आगे खड़ा हुआ उसे देखि नारदजी कहनेलगे कि हे निमे! अब शोच को त्याग दो तुम तो बुद्धिमान् हो देखो लोक में किसी के लिये शोक करना उचित नहीं है सब निज २ आयुर्बल के अनुसार जीवते हैं जब आयुष् समाप्त भई तब श्वासमात्र लेना कठिनहै इस लिये महात्माजन विचारवान् होते हैं जिस विषय में अपना वश नहीं है उसमें शोक करने से शत्रुही को प्रसन्नता होती है और यहभी नहीं देखते कि देवता, असुर, यक्ष, गन्धर्व, मनुष्य, मृग और पक्षी आदि में कोई काल के वश न होता हो हे ऋषीश्वर! काल सबके शिरपर है कालवश हुआ मनुष्य किसीभांति प्राप्त नहीं होसक्ता और जिसके लिये शोक करो वह मिलभी नहीं सक्ता तो शोककरना सर्वथा मूर्खताहै हे ऋषीश्वर! आपका पुत्र बड़ा महात्मा था व तपोमूर्ति था सो श्रीमान्मुनि पूर्ण हजारवर्ष तप करके शरीर त्यागि स्वर्ग को गया यह सब विचारि के ऐसे महात्मा पुत्र के लिये शोककरना योग्य नहीं है इसभांति नारदजी का वचन सुनि हाथ जोड़कर निमि कहने लगा कि, हे भगवन्! आपके चरणों को मैं प्रणामकर निज मूर्खता को विदित करताहूं जिसलिये मैं बारम्बार दुःखीहो ऊंची श्वास ले रहाहूं और लज्जित हो रहाहूं अहो भगवन्! आपने बड़ी कृपा करके मुझे शान्त किया आपके दर्शन से सब मेरे

दुःख दूर भया अब जिसलिये मैं दुःखी होरहाहूं सो आप कृपा करके श्रवणकरें कि, महाराज ! मैंने स्नेह से व्याकुल होकर पुत्र के निमित्त सातब्राह्मणों को भोजन कराया व दक्षिणा दे विसर्जनकर भूमि में कुशा रख दक्षिणमुख हो जल के साथ पिण्डदान अपसव्य होकर नामगोत्र उच्चारण करके दिया है सो हे महात्मन् ! यह शोक मोह के वश होने से जो अयोग्य कर्म भया सो आप हमको नष्टबुद्धि जानिके क्षमाकरें और ऐसा उपदेश देवें कि जिसके करने से यह हमारा पाप दूर होय देखिये कि जो यह कर्म हमने किया है सो आगे के महात्मा ऋषि मुनि किसी ने नहीं किया इस लिये वारम्वार भयभीत होरहे हैं किसीभांति आप कृपा करके यह हमारा भय दूर करें इस भांति निमि की दुःखित वाणी सुनि नारदजी कहनेलगे कि; हे ऋषीश्वर ! भय न करो पितरों की शरण में प्राप्त हो जो आपने किया इसमें किसी भांति का अधर्म नहीं है केवल धर्म ही है इसभांति नारदजी का वचन सुनि प्रसन्न होकर निमि पितरों का ध्यान करनेलगा और यह हाथजोड़ प्रार्थना करनेलगा कि, हे पितरो ! मैं मन वचन कर्म से आपकी शरण में हूं इसभांति निमि के ध्यान करतेही निमि का पिता पितृलोक से आय प्राप्त भया व निमि को पुत्रशोक से दुःखी देखि सबभांति से समझानेलगा व यह कहा कि हे निमे ! जो तुमने पितृयज्ञ का संकल्प किया है यह धर्म ब्रह्माजी नें पितरों के लिये स्वयं आज्ञादी है इसलिये यह यज्ञ करनाही योग्य है वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! ब्रह्माजी को प्रणामकर नारदजी निमिनामक मुनि से पितृयज्ञ विधान कहने लगे हे निमे ! जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्य होती है व मर करके अवश्य धर्मराज की आज्ञा माननी होतीहै और जन्म लेकर जितने जीव हैं उन्हों में किसी का अमरत्व होता नहीं अर्थात् मृत्यु न हो

इसलिये हे निमे! जिसने जन्म लिया है वह अवश्य मरेगा व मराभया अवश्य जन्म लेगा इसलिये वह कर्म करना उचित है कि जिसके किये मनुष्य के सब पापों का प्रायश्चित्त हो व मुक्ति प्राप्त होय विचार करो हे निमे! सात्त्विक, राजस, तामस ये तीनों गुण के अनुसार मनुष्य कर्म करते हैं व उसीभांति उनकी गति होती है सो सात्त्विककर्म होना तो कठिन है राजस व तामस कर्म के करने से मनुष्य अल्पायुष् व अल्पबुद्धि होते हैं सात्त्विककर्म करने से अन्त में मनुष्य प्राणत्याग करने से देवता होता है व राजस कर्म से मनुष्य होता है और तामस कर्म करने से राक्षस होता है और हे निमे! धर्मज्ञान वैराग्य और ऐश्वर्य आदि कर्म को सात्त्विक कहते हैं क्रूर मिथ्या बोलनेवाला जीवहिंसाकरनेवाला लज्जाहीन और विषादकरनेवाला कर्म तामस कहाता है जिसके करने से मनुष्य मर करके प्रेतयोनि में प्राप्त होता है व राजसगुण वे कहाते हैं कि जिन मनुष्यों में मान अश्रद्धा और नानाभांति के भोगों की इच्छा अपनी प्रशंसा होय और जिन्हों में ये धर्म हैं सो सात्त्विक गने जाते हैं क्षान्ति, दान्त, ज्ञान, श्रद्धा, तप और ध्यान आदि करने से स्वर्ग वा मोक्ष दोनों का अधिकारी होता है इसलिये हे निमे! निज पुत्र के मरने का शोक न करो शोक करने से बहुत हानि होती है शोक से बुद्धि बल और देह इन्होंकी हानि होती है व इन्हों की हानि होने से लज्जा, धृति, धर्म, कीर्ति, लक्ष्मी, नीति, स्मृति और विवेक ये सब नष्ट होजाते हैं इस व्यवहार को मन में विचारि हे ऋषीश्वर! पुत्र का शोक त्यागदो यदि शोक न त्याग करोगे तो इससे इस लोक में सबभांति की हानि होगी अन्त में नरकभागी होगे हे मुनीश्वर! जो मनुष्य मरणावस्था को प्राप्त होय उसके लिये शोक त्याग के यह करना चाहिये कि प्रथम तो घर से बाहर कर गोमय से लिपी भई भूमि में कुशा

को बिछाय पवित्र कम्बल आदि बिस्तरकर उस ऊपर शय्या-कराय आगे ब्राह्मणों को बुलाय अन्न, भूमि, चांदी, सुवर्ण और अनेक भांति के रसों को दान कराय सब दान के पीछे गोदान करे हे ऋषीश्वर! परलोक के लिये गोदान के तुल्य हितपदार्थ दूसरा नहीं है सब देवता की मूर्ति साक्षात् प्रकट गौ है इन्होंके दान देने से मनुष्य के सब पातक दूर होजाते हैं और स्वर्ग-वास पाता है इसभांति गोदानकर वेद के महावाक्य मन्त्रों को ऊंचेस्वर से उस पुरुष के कान में सुनावे जब जानेकि प्राणत्याग होता है तब इस मन्त्र को ऊंचे स्वर से पढ़ि मधुपर्क दे संसार से मोक्ष करावे (मन्त्रः। ॐ गृहाण चेमं मधुपर्कमाद्यं संसार-नाशनकरं त्वमृतेनतुल्यम्। नारायणेन रचितं भगवत्प्रियाणां दाहस्य शान्तिकरणं सुरलोक पूज्यम्) हे धरणि! परलोक के हित के लिये इस मन्त्रसे मधुपर्क देनेसे फिर उस जीव का जन्म नहीं होता व उत्तमगति को प्राप्त होता है नारदजी कहते हैं हे मुनीश्वर! जब मधुपर्क देनेबादि जाने कि अब प्राण छुटगया तब उसे स्नान कराय उत्तम सुगन्ध घी तेल आदि उस शव (लाश) की देहमें लेपन भलीभांति कर दक्षिणदिशा को उसका शिर कर फिर स्नानकरावे इस मन्त्र को पढ़ि (मन्त्रः। ॐगया-दीनि च तीर्थानि ये च पुण्याः शिलोच्चयाः। कुरुक्षेत्रं च गङ्गा च यमुना च सरिद्वरा॥ कौशिकी च पयोष्णी च सर्वपाप प्रणा-शिनी। गण्डकी भद्रनामा च सरयू बलदा तथा॥ वनानि नव वाराहं तीर्थं पिण्डारकं तथा। पृथिव्यां यानि तीर्थानि चत्वा-रस्सागरास्तथा॥ आयान्तु शवमुक्त्यर्थं स्नाने चान्तिमसंज्ञके) इस मन्त्र से स्नान कराय शुक्लवस्त्र नवीन पहिनाय चन्दन व अगरु आदि काष्ठों की चिता बनाय दक्षिणशिर शव को चितामें रख व अग्नि में देवताओं का ध्यान कर हाथ में अग्नि ले भली-भांति प्रज्वलित कर यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐकृत्वा तु दुष्करं

कर्म जानता वाप्यजानता । मृत्युकालेऽवशं प्राप्य नरः पञ्चत्व-मागतः॥धर्माधर्मसमायुक्तो लोभमोहसमावृतः। दहेयं सर्वगात्राणि दिव्यलोकाय गच्छतु) इस मन्त्रको पढ़ि जलती भई अग्निको हाथ में ले चिता की प्रदक्षिणाकर शव के शिर स्थान में लगाय देय नारदजी कहते हैं कि, हे मुनीश्वर! यह शवका संस्कार हमने चारोंवर्ण के लिये वर्णन किया इसभांति शवको भस्मकर सहित वस्त्रों के स्नानकर तिलसहित जल मृतकनाम को उच्चारणकर अञ्जली दे भूमि में पिण्डदानकरे उस समय से अशौच होता है उस अशौचवाला मनुष्य देवकर्म करने का अधिकारी नहीं रहता इसलिये अशौचवाले को देवकर्म न करना चाहिये॥

एकसौतिरासी का अध्याय॥

इसभांति धरणी श्रीवाराहभगवान् के मुखारविन्द की वाणी सुनि हर्षित होकर हाथजोड़ कहनेलगी कि, हे भगवन्! आप इस अशौच कर्म का विधानविस्तार करके वर्णनकरें यह धरणी की विनय वाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! इस भांति शव का संस्कार नदीमें वा तड़ाग में वा बावली में वा कहीं उत्तम पवित्रजल के समीप जाय गोत्र के सब एकत्र हो स्नानकर एक २ मनुष्य उस मरे पुरुष का नाम गोत्र उच्चारणकर तीन तीन तिलों सहित जल की अञ्जली देकर घर को जायँ व जिसने उस शव का दाहकर्म किया है वह नित्यप्रति पिण्डदान करे इसीभांति दश दिनतक बराबर तिलाञ्जली व पिण्डदान करता दशवेंदिन क्षौर कराय निज अङ्ग के वस्त्रों को जल से धोय पवित्रकर तिल व आंवले के चूर्ण देह में लेपनकर शुद्धस्नानकर निज घर में आय ग्यारहवें दिन एकोद्दिष्टविधान से पिण्डदान कर महाब्राह्मण का पूजनकर वृषोत्सर्ग शय्यादानपूर्वक भोजन कराय प्रेत को महाब्राह्मण में ध्यान कर बिदाकरे दक्षिणा देकर

फिर बारहवें दिन सपिण्डनकर निज पितरोंके साथ मिलाय तेरहवें दिन यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराय ब्राह्मणों के हाथ जोड़ यह मन्त्रपढ़े (मन्त्रः । ॐगतोऽसि दिव्यलोकेत्वंकृतान्तविहितेन च । मनसा वायुभूतस्त्वं प्रेतस्य हितकाम्यया ॥ प्रेतभोग शरीरे त्वं ब्राह्मणस्य च तिष्ठत इति) इसमन्त्रसे प्रार्थना कर ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर आप सकुटुम्ब भोजनकरे फिर मास २ में क्षयाहतिथि को पिण्डदान, अन्नदान, जलकुम्भदान आदि देवे और विशेषदिन में गजच्छायानाम योग में व्यतीपात में आश्विनमहीने के कृष्णपक्ष में विधानपूर्वक पिण्डदान दे परन्तु एकान्त में पिण्डदेना चाहिये जहां कुक्कुट, श्वान, शूकर, चाण्डाल आदि अधमजीवोंकी दृष्टि न पड़े तिसपृथिवी में मण्डल बना के अग्नि के प्राकार से उस मण्डल को वेष्टित करना चाहिये जो विना वेदी के भूमिमें पिण्डदान करने से देवता, असुर, गन्धर्व, पिशाच, सर्प, राक्षस, नाग और यक्ष ये सब निज २ भाग को ले लेते हैं जिसके लिये श्राद्ध होती है उसे नहीं प्राप्त होता और पितर नरकभागी होते हैं इसलिये सब कर्म विधान से कर वेदी के ऊपर कुश बिछाय दोपहर के समय दिन में संकल्प कर नामगोत्र को बोलि पिण्डदान देवे फिर ब्राह्मणों को भोजन व गोत्र को भोजन कराय दक्षिणा दे बिदाकरे और पीछे से अन्य गोत्र के जो आयेहों उनको संतुष्टकरे और जो कोई ब्राह्मण उस यज्ञ में आकस्मिक आवे उसका अर्घ्य पाद्य आदिकों से पूजन कर मन्त्र पढ़िके आसनपर बैठावे (मन्त्रः । ॐ इदं ते आसनं दत्तं विश्रामं क्रियतां द्विज । कुरुष्व मे प्रसादं च सुप्रसीद द्विजोत्तम) उस पर बैठाय छत्र का संकल्प करे (मन्त्रः । ॐ निवारणार्थमाकाशे भूतागमनचारिणः । देवगन्धर्वयक्षाश्च सिद्धासंघामहासुराः ॥ धारणार्थं तथाकाशे छत्रं तेजस्विना कृतम् । प्रेतस्य च हितार्थाय धारय त्वं द्विजोत्तम) इस मन्त्र को पढ़ि चित्त

में प्रसन्न होकर छत्र ब्राह्मण को देय और हे धरणि! यदि प्रेतभाग भोजनदेनेलगे तो छत्र को आकाश में छाया करले जिसमें उस प्रेतभाग के अन्नपर आकाशबासी देव, गन्धर्व, असुर, यक्ष और सिद्ध आदि किसीकी दृष्टि न पड़े हे धरणि! इन्होंकी दृष्टि पड़ने से प्रेत लज्जित होकर भोजन नहीं करता इसलिये प्रेतयज्ञ में छत्र अवश्य चाहिये और प्रेत के निमित्त ब्राह्मण को छत्र देने से अग्नि की वर्षा, शिला की वर्षा, तप्तजल की वर्षा, भस्म की वर्षा आदि अनेक घोर उपद्रवों से वह छत्र उस जीवकी रक्षा करता है छत्र देने के अनन्तर उपानत् अर्थात् जूता संकल्पकरे जिसके दान करनेसे प्रेत को यमलोक में अग्नि के समान जलती हुई धूलि का भय दूर होता है तप्त बालुका भूमि में वही उपानत् सहाय करता है इस उपानत् दान के पीछे ब्राह्मण को धूप दीप देना चाहिये (मन्त्रः। ॐ इहलोकं परित्यज्य गतोऽसि परमांगतिम्। गन्धं गृहाण मुद्युक्तो भक्त्या मे प्रतिपादितम्॥ सर्वगन्धं सर्वपुष्पं धूपं दीपं तथैवच। प्रतिगृह्णीष्व विप्रेन्द्र प्रेतमोक्षप्रदोभव) इस मन्त्र से ब्राह्मण का विधिपूर्वक पूजाकर वस्त्र भूषण दे फिर २ चार प्रकार का भोजन देय इस विधान से हे धरणि! प्रेत को निजभाग प्राप्त होता है इसीभांति तीन वर्ण को मृतक के लिये करना उचित है व शूद्र को भी इसीरीति से करना चाहिये परन्तु मन्त्रों के विना मन्त्रयज्ञ शूद्र को अयोग्य है इस भांति महाब्राह्मण को तृप्तिपूर्वक भोजन कराय पश्चात् जो जो भोजन तैयार होय सो सो इकट्ठे किसीपात्र में कर दक्षिणमुख होकर प्रेत का नाम गोत्र उच्चारणकर संकल्प करके बाहर कहीं एकान्तभूमि में रख देय पीछे ब्राह्मणों को भोजन करावे व प्रेत के निमित्त एकवर्ष नित्य जो उसप्रेत के लिये ब्राह्मणभोजन करे उसे बहुत प्रसन्नता से प्रीतिपूर्वक अनेक रस के भोजनों को करावे इस करनेके विना उस घरमें अग्नि वा देवता

कोई नहीं ग्रहण करते विना प्रेत के तृप्त होने से यह विचार के प्रेत के लिये हे धरणि ! अवश्य करना चाहिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चारों वर्ण में जो प्रेतकर्म नहीं करता उसका देवकर्म सब नष्ट होजाता है इसलिये प्रेत के निमित्त ब्राह्मण को भोजन कराय जल व दक्षिणा को देकर विसर्जनकरे पश्चात् जिस भूमि में उस कर्म को किया होय उस भूमि का पूजनकर इस मन्त्र से प्रार्थनाकरे (मन्त्रः । ॐ नमोनमो मेदिनि लोकमातःउर्व्यै महाशैलशिलाधरायै । नमोनमो धारिणि लोकधात्रि जगत्प्रतिष्ठे वसुधे नमोऽस्तुते) इस मन्त्र से प्रणाम कर घर में आय कुटुम्ब के साथ निवासकर वर्ष व्यतीत होने के दिन ब्राह्मण को बुलाय भक्ति से प्रणामकर शय्या, आसन, अञ्जन अनेकभांति के वस्त्र और भूषण दे थोड़ीदेर विश्रामकर उत्तम गौ सहित वच्छे को मँगाय सहित वत्स के पुच्छ को ताम्रपात्र में कर कुशा व जल के साथ तिल सहित संकल्प कर उसी ब्राह्मण को देय पीछे शर्करा व गोधूमचूर्ण घृत के साथ मिलायकर पिपीलिका का समूह जहां होय वहां देय इसके करनेसे प्रेत यमराज के लोक में सुख पाता है वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! नारदजी ने निमिऋषि से जब इस भांति प्रेतयज्ञ का विधान वर्णन किया तब तो निमि सावधान हो अपने को धन्य मानताभया और नारदजी ने यह भी कहा कि; हे पुत्र, निमे ! जो तुमने निज प्रेतपुत्र के निमित्त श्राद्ध किया है यह आज से चारोंवर्ण के मनुष्य सब करेंगे व तुमको इस करनेसे इच्छालोक प्राप्त होगा तुम शिवलोक, विष्णुलोक, ब्रह्मलोक आदिलोकों में जहां इच्छा करोगे इस कर्म के प्रताप से वहांही प्राप्त होगे और हे निमे ! प्रेत के लिये दान आदि सब कर्म तो नित्यकरना चाहिये जबतक वर्ष न पूरा होय यदि नित्य न बने तो तीसरे मास, सातवें मास और नवयें मास में तो अवश्य करना चाहिये व ग्यारहवें मास के व्यतीत होनेसे वार्षिक करना

चाहिये उस क्रिया में प्रेत का आवाहनकर पवित्र हो पक्वान्न संकल्पकर श्राद्धकरे इसभांति ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तो मन्त्र विधि से और शूद्र मन्त्रहीन श्राद्ध करे इस रीति से कर्म करने से एकवर्ष के अनन्तर वह जीव प्रेतभाव से मुक्तहोकर निजपिता, पितामह, वृद्धप्रपितामह की पंक्ति में मिल पितर होजाता है वाराहजी भगवान् कहते हैं हे धरणि! पिता, माता, पुत्र, पुत्र-वधू, स्त्री आदि जितने सम्बन्धी कुटुम्बहैं ये सब जगत् स्वप्न के तुल्यहैं देखो प्राणत्याग होनेसे थोड़ी देर रोदनकर पीछे सब संतोष करलेते हैं यह स्नेहरूप बन्धन में जो बँधिरहा है वह स्नेह क्षणमात्र में छुटि जाताहै देखो विचारकरने से कौन किस की माता, कौन पिता, कौन स्त्री, कौन पुत्र, किसका है केवल स्नेहही कारण है यह स्नेह युग२ से चला आया है इसलिये निज स्नेह समझ के मृत मनुष्यों का संस्कार करनाचाहिये हेधरणि! जो स्नेह न होय तो अनेकों जन्म इसजीव के होते हैं इसमें नित्य२ माता, पिता, पुत्र, स्त्री आदि अनेक कुटुम्ब का सम्बन्ध होताही है किस२ का स्नेह रखना इसलिये स्नेह मान-कर मृतपुरुष का प्रेतसंस्कार अवश्य करना चाहिये कि जिस संस्कार करने से प्रेतभाव से मुक्त होकर पितृगतिको प्राप्त होता है हे धरणि! महीने२ की अमावसको पितृतर्पण तिल के साथ करना चाहिये व पितरोंकी तृप्ति के लिये ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये जिस करनेसे पितरों की अनन्त तृप्ति होती है नारदजी कहते हैं हे अत्रिपुत्र, निमे! इसभांति चारों वर्णके कल्याण के लिये हमने वर्णन किया इतना सुनि निमिनाम ऋषीश्वर निस्संदेह हो अपने को धर्मनिष्ठ मानि नारदजीको प्रणामकर अन्तर्धान प्राप्त भया व नारदजी भी निमिको अन्तर्धान देखि आनन्दपूर्वक स्वर्ग को इन्द्रके समीप चलेगये वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इस भांति हमने श्राद्ध की उत्पत्ति वर्णन किया॥

एकसौचौरासी का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं हे शौनक! इसभांति श्रीवाराहजीके मुखार-विन्द की वाणी सुनि हाथ जोड़ नम्रहोकर धरणी कहने लगी कि हे भगवन्! आपने चारों वर्ण के ऊपर अनुग्रह करके श्राद्ध विधान और शौचाशौच वर्णन किया अब हे भगवन्! स्त्रीस्व-भाव से एक संदेह उत्पन्न भया है सो आप कृपाकरके निवृत्त करें संदेह यह है जो प्रेतअन्न अत्यन्त निन्द्य है उसके भोजन करने से ब्राह्मण पतित अवश्य होजाते हैं तो फिर किसभांति उनकी पवित्रता होतीहै यदि आपही पतित भये तो किसभांति देनेवाले का कल्याण करेंगे इसभांति धरणी की विनय वाणीको सुनि मेघगम्भीरवाणी से वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! बहुत उत्तम प्रश्न तुमने किया अब सावधान होकर श्रवण करो कि जिसभांति प्रेतान्नभोजन करके फिर ब्राह्मण पवित्र होकर दाता के शुभ करनेवाले होते हैं हे धरणि! जो ब्राह्मण प्रेतान्न भोजन करे वह निज शरीर के पवित्र होने के लिये भोजन करनेके दूसरे दिन आठ पहर व्रत करे प्रातःसंध्या कर्म से निवृत्त होकर तिल व घी का हवनकर समुद्रगामिनी नदी में जाय स्नानकर मधुपर्क के साथ पञ्चगव्य पानकर हाथ में ताम्रपात्र ले अघमर्षण मन्त्र पढ़ि नदी से जल ले निज घर में आय सबजगह पवित्रकर निज शाखा के गृह देवताओं को अग्नि में आवाहनकर तिल घृतका हवनकर भूति बलि दे ब्राह्मणों को उत्तम भोजन कराय दक्षिणा दे सब पापों की हरनेहारी उत्तम गौ का दान करे हे धरणि! इसभांति करने से वह प्रेत का अन्न भोजन करनेवाला ब्राह्मण पवित्र होकर सबकर्मों का अधिकारी होता है और यदि प्रेतान्न खायकर निज शुद्ध होनेको प्रायश्चित्त न करे व उसके प्राण छूटिजायँ तो एक कल्प वह नरक में बास पाता है और अन्त में

राक्षसयोनि में जन्म लेकर एकहज़ारवर्ष राक्षस हो पश्चात् शुद्ध होताहै इसलिये दाता व भोक्ता दोनों को सुख के लिये अवश्य प्रायश्चित्त करना चाहिये हे धरणि! जिस ब्राह्मण ने हाथी घोड़े रथ और गौ का दान लिया होय वह प्रायश्चित्त करनेसे पवित्र होताहै जो ब्राह्मण ज्ञानयुक्त होकर नित्य वेदपाठ करते हैं वे आप भी पवित्र हैं और दानदेनेवालेको भी पवित्र करते हैं इस लिये हे धरणि! देवकर्म और पितृकर्म में परीक्षा लेकर ब्राह्मण का मान सदा करना व अपमान कभी न करना चाहिये हे धरणि! देव व पितृकर्म में ब्राह्मण ऐसा चाहिये जो वेद को पढ़ा होय, षट्कर्म करता होय, सत्य, शील, दया, संतोष, क्षमा और पवित्रयुक्त होय जीवहिंसा से रहित होय, ऐसा ब्राह्मण देव व पितृकर्म के योग्य होताहै ऐसेही ब्राह्मण को दानदेना योग्य है व इन्हीं को देने से दाता अनन्तफल को प्राप्त होताहै व किया भया सबकर्म सफल होता है और कुण्ड अथवा गोल में जो दियादान है वह सब निष्फल होता है कुण्ड उसे कहते हैं कि जिसका पिता बनारहे औ अन्य के वीर्य से उत्पन्न होय पिता के मरनेबादि जो उत्पन्न होते हैं उनका नाम गोलहै इन दोनों को देखने से पितर निराश हो श्राद्ध को त्यागकर नरक में पड़ते हैं और देवकर्म भी इनके देखने से भ्रष्ट जाता है इसलिये कुण्ड गोल दोनों देव पितृकर्मों के अनधिकारी हैं इसलिये परीक्षाकर के दानदेना चाहिये जिसमें किया हुआ कर्म निष्फल न होय इस विषय में हम एक इतिहास वर्णन करते हैं हे धरणि! सो सावधान होकर श्रवणकरो कोई धर्मात्मा राजा मनुवंशका उत्पन्न मेधातिथि नामक अवन्तीपुरी में राज्य किया करता था उसराजा का पुरोहित आत्रेयगोत्र में उत्पन्न चन्द्रशर्मा नाम ब्राह्मण वेदवाद में निपुणहुआ सो राजा मेधातिथि नित्य २ ब्राह्मणों को सौ गो दान किया करता था इसभांति बहुत कालव्यतीत होनेसे उसने

वैशाखमहीने में पिता के क्षयाह दिन शाद्ध के लिये ब्राह्मणों को निमन्त्रण दे बुलाया जब ब्राह्मण सब आये तब राजा मेधातिथि ने बड़ी नम्रता से प्रणाम कर सबको बैठाय निजगुरु की आज्ञा से श्राद्ध का प्रारम्भ किया व विधिपूर्वक श्राद्ध में पिण्डदानकर श्राद्ध के संकल्प किये अन्नको ब्राह्मणोंको दिया व भोजन कराय दक्षिणा दे बिदाकिया वाराहजी कहते हैं हे धरणि! उसी श्राद्ध के दोष से राजा मेधातिथि के पितर स्वर्गभोग से भ्रष्टहो बड़े कांटे हैं जिस वनमें वहां जाय क्षुधा व तृषा करके पीड़ित हाय २ शब्द को उच्चारण करते क्लेश भोगने लगे इसभांति बहुत दिन बीतने से किसी समय राजा मेधातिथि उसी जङ्गल में आखेट के लिये बहुते सिपाहियों के साथ गया वहां जाय क्या देखताहै कि कांटे के वृक्षों में मनुष्य कई टँगे हुये हाय २ कर रोदनकरते झूलरहे हैं उनको देखि दया से पीड़ित हो राजा मेधातिथि कहने लगा कि, आप कौन हो व किसलिये इस निर्जन वन में कँटीले वृक्ष में टँगे झूल रहेहो किस कर्म के फल से यह दुःख आप सब को प्राप्त हुआहै व यह घोर दुःख किसने दियाहै सो आप कहि सुनावो यह दयायुक्तवाणी राजामेधातिथि की सुनि पितर कहने लगे कि, हम सब राजा मेधातिथिके पितर हैं किसी कर्मदोष से नरक को जाने में प्रवृत्त होरहे हैं इसभांति हे धरणि! निज पितरों की वज्रसमानवाणी सुनि निजपितरों को शान्तकरताहुआ कहनेलगा कि, हे पितरो! वह मेधातिथि हमी हैं जिसके आप पितर हो परन्तु यह हम आप सबके क्लेशका मूल नहीं जानते कि किसलिये आप सब यह दुःख भोगरहेहो व क्यों नरकजाया चाहते हो यदि हमारे श्रवणयोग्य होय तो कह सुनावो हमने तो निज विचार से अपने समझ में कोई ऐसा पातक भी नहीं किया कि जिससे आप को यह दुःख भोगना पड़ा देखो दैवकी गति बड़ी दुस्तरहै कि जो हम अच्छे २ विद्वानों के आज्ञानुसार

नित्यदान देवकर्म और पितरकर्म कभीलोप नहीं करते संक्रान्ति, व्यतीपात, गजच्छाया, क्षयाहतिथि, कन्यागत सूर्य में अपरपक्ष श्राद्ध, एकोद्दिष्टश्राद्ध, गयाश्राद्ध और तीर्थों में तीर्थश्राद्ध यथा शक्ति दान, ब्राह्मण भोजन आदि से कभी कर्म का लोप नहीं करते तथापि हमारे पितरों की यह दुर्दशा होरही है इसलिये दैवगति प्रबल है इसभांति हे धरणि! राजामेधातिथि पछिताय दुःखीहो निज साथ जो मन्त्री व पुरोहित थे उन्हों से हाथजोड़ कर पूछने लगा कि, आप सब मेरे कर्मों के साक्षी हो कोई कर्म विधिहीन मैंने नहीं किया धर्मशास्त्रानुसार जो आपलोगों ने जिसविधि से जिस समय आज्ञा दी सोई श्रद्धासे मैंने सब किया तथापि तुम्हारे सबके देखतेही पितर सब हाय २ कर नरक में गिरनेको तैयार होरहे हैं इसविषय में हमको क्या करना उचित है सो आप सब मुझे उपदेशकरें? जिसमें पितरों का दुःख दूर हो और मेरा चित्त सावधान हो वाराहजी कहते हैं, हे धरणि! इसभांति राजा मेधातिथि का वचन सुनि विस्मित होकर राज पुरोहित कहनेलगा कि, महाराज! मेरी बुद्धि में तो इस प्रश्न का उत्तर कुछ सूझता नहीं क्योंकि आपकी धर्मनिष्ठा व पितरों का संताप देखकर बुद्धि व्यामोह को प्राप्त होती है तथापि एक विचार यह उत्पन्न होताहै कि, आप निज पितरों से इस दुःख का मूल पूछिये जो ये आज्ञा दें सो किया जायगा यह पुरोहित की वाणी सुनि निश्चय कर हाथ जोड़ नम्र होकर पितरों से राजा मेधातिथि कहनेलगा कि, हे पितरो! मेरे को तो आपकी वाणी सुनि बड़ा त्रास हुआ इसलिये मैं तो इस घोर क्लेश को देखि दुःख समुद्र में डूबरहाहूं जब आपही मेरा हाथ पकड़कर इसक्लेश से बाहर करोगे तभी मेरा कल्याण होगा अब इस संशयसागर से पार करनेवाली आपही की वाणी रूप नौका होगी आप मेरे पितर हैं व मैं आपका संतानहूं यदि मेरेसे किसी कर्म में प्रमाद-

रूपी अनर्थ हुआ होय व जिसभांति अनर्थ की शान्ति होय सो मुझे मूढ़ जानि दयाकरके उपदेश करें वाराहजी कहते हैं हे धरणि! तब तो निज संतान मेधातिथि राजा का वचन सुनि प्रसन्न होकर पितर कहनेलगे कि, हे पुत्र! तुम्हारी धर्मनिष्ठा और सत् कर्म से हम सबोंने बहुत सुख से बहुतकाल स्वर्ग में वासकिया परन्तु पिछले वैशाखमास में जो तुमने एकोद्दिष्टश्राद्ध किया है उस में एक ब्राह्मण जो पितृब्राह्मणों में था उसके पूजन व भोजनदान आदि से यह हमारा अधःपात हुआ अर्थात् स्वर्ग से भ्रष्ट होकर नरक को जाते हैं तुम्हारा पहलाकिया हुआ सबकर्म विध्वंस होगया इस वचन को सुनि मेधातिथि कहनेलगा कि; हे पितर! उस ब्राह्मण में क्या दोष था कि जिसके एकबार भोजन से सब सारे जन्म का सुकृत नष्ट हुआ सो आप वर्णन करें यह राजाका वचन सुनि पितर कहनेलगे कि हे पुत्र, मेधातिथि! उस ब्राह्मण में और तो सब गुण उत्तम थे परन्तु निज पिता के वीर्य से न उत्पन्न होनेसे व पतिके जीवतेही उसकी माता पुंश्चलीने अन्य पुरुष सुन्दर वैश्यजाति का उससे कामातुर होकर गर्भ धारण किया था उसीगर्भ से यह उत्पन्नभया इसलिये उस वर्णसंकरके दान व भोजन से हम इसदुर्दशा को प्राप्त भये हे पुत्र! श्राद्ध में कुण्ड व गोल ये दोनों निन्द्य हैं जो इनदोनों में कोई अग्रपूजा को प्राप्त होय अर्थात् पितृब्राह्मण में वा मातृब्राह्मण में निमन्त्रित होय अथवा विश्वेदेव ब्राह्मण में होय तो जब उनके पैरका प्रक्षालन जल पृथिवी में पड़ा और उन्होंने नेत्र से श्राद्ध को देखा उसी समय सब पदार्थ उच्छिष्ट होजाताहै और पितर शाप देकर चले जाते हैं और यदि उसने पितृयज्ञ में भोजन किया तो पितर स्वर्ग से भ्रष्ट होकर नरकबास पाते हैं जैसे हम सब इतना कह पितर मौन होगये तब तो राजा मेधातिथि हाथ जोड़ व नम्र होकर कहने लगा कि, हे भगवन्! बड़ा अधर्म भया परन्तु अब

जिसभांति कल्याण होय व आप नरक से बचें सो मुझे आज्ञा देवें यह सुनि पितर कहनेलगे कि; हे राजन्! अब यहां से जाय हमारे लिये गयाश्राद्धकर अक्षय बट के नीचे पिण्डदानकर तो हम नरकवास से छुट उत्तमगति को प्राप्त होयँ इतना कहि पितर तो अन्तर्धान भये और राजा मेधातिथि ने विस्मित होकर निज घर में आय तैयारी कर जाय गया में पहुँचि श्राद्धकर निजपितरों को तृप्त किया तब तो हे धरणि! राजा के पितर प्रकट होकर बड़े आनन्द से उत्तम विमान में बैठकर आशीर्वाद देते हुये स्वर्ग को गये इसभांति हमने श्राद्ध का वृत्तान्त वर्णन किया हे धरणि! श्राद्ध में अवश्य पात्र अपात्र का विचार करना चाहिये॥

एकसौपचासी का अध्याय॥

इसभांति हे शौनकजी! वाराहजीके मुख का वचन सुनि संदेह में युक्त हो हाथजोड़ नम्रहोकर धरणी पूछने लगी कि; हे भगवन्! आपने कृपाकरके श्राद्ध का विधान वर्णन किया श्रीमहाराज! यज्ञ कितने भांति की है व ब्राह्मण पितृ यज्ञ के लिये किसभांति के चाहिये सो आप वर्णनकरें इसभांति धरणी की विनयवाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि, हे धरणि! तुमने बहुत उत्तम प्रश्न किया है अब हम वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो हे धरणि! जब पितृपक्ष होय अथवा अमावास्या को मघानक्षत्र होय तब बुद्धिमान् पितृयज्ञ अवश्य करते हैं और कोई उत्तम पुण्यकाल प्राप्त होनेपर ब्रह्मयज्ञ करते हैं कोई अग्निमुखमें देवयज्ञ करतेहैं और कोई भूतयज्ञ करते हैं कोई गृहस्थमें मनुष्ययज्ञ करते हैं इन यज्ञोंमें हे धरणि! दो यज्ञ प्रधान हैं प्रथम पितृयज्ञ दूसरा देवयज्ञ तिन दोनों यज्ञोंमें पितृयज्ञ वर्णन करतेहैं हे धरणि! अग्निमुख देवपितर दोनों हैं हव्य को स्वाहाकार से जो अग्निमुख में देताहै उसे देवता ग्रहण करते हैं व कव्य को स्वधाकार

से जो अग्निमुख में वेदमन्त्र से ब्राह्मण देते हैं उसे पितर ग्रहण करते हैं इसलिये हे धरणि! उत्तर अग्नि व दक्षिण अग्नि ये दोनों हमारेही नाम हैं व सर्वयज्ञों में आहवनीयनाम अग्नि हमी हैं और हे धरणि! पावक व पवमान ये हमारेही नाम हैं और सब देवयज्ञों में व पितृयज्ञों में ब्रह्मचारी ब्राह्मण को अधिकारी करना चाहिये अथवा वानप्रस्थ भी उत्तम है व दोनों नहीं तो यती को ग्रहण करना चाहिये अब जिन्हों को श्राद्ध में भोजन कराना चाहिये व जिन्हों को वर्जित करना चाहिये सो वर्णन करते हैं हे धरणि! उत्तम ब्राह्मण तो वही है जो गृहस्थी है सब भांति संतुष्ट है क्षमाशील है जिसकी इन्द्रियां वश्य हैं उदासीन है सत्यवादी है सत्यप्रतिज्ञ है वेदपाठी है अग्नि सेवन करता है वेदविद्यायुक्त है जिसको मीठा भोजन प्रिय है और रोगहीन है हे धरणि! ऐसे ब्राह्मण को श्राद्ध में भोजन कराना चाहिये प्रथम अग्नि में हवनकर पीछे ब्राह्मण को भोजन करावे व श्राद्ध को शूद्र, कुत्ता, सूकर और कुक्कुट न देखें इन्हों की दृष्टि पड़ने से श्राद्ध नष्टभ्रष्ट होजाता है और जो मनुष्य पापी है पंक्ति से बाहर है पतित है व यज्ञोपवीत नहीं हुआ ब्राह्मण होके सेवावृत्ति करता व जिसको भक्ष्याभक्ष्य का नियम नहीं है हे धरणि! इन्हों का श्राद्ध में दर्शन भी न करना चाहिये भोजन कराने की तो कौन सी वार्त्ता उक्त लक्षण के ब्राह्मण श्राद्ध को यदि देखलें तो वह श्राद्ध राक्षसों के लिये होती है हे धरणि! जिस समय में वामन रूपधार इन्द्र के उपकार करने के लिये बलिराजा से जाय तीन पदभूमि को मांग दान ले सारी पृथ्वी और स्वर्ग दो पैग से नापि इन्द्र को दिया और तीसरे पद में बलि का देह नापि लिया उससमय विनयपूर्वक बलि ने निजनिर्वाह के लिये प्रार्थना किया कि हे भगवन्! आपने सहित देह के सिगरा राज्य लेलिया अब मेरी प्राणरक्षा किस रीति से होगी? तब तो हे धरणि! हमने

यह वर दिया कि जो देवयज्ञ वा पितरयज्ञ विधि श्रद्धा ब्राह्मण और मन्त्र से हीन होय उसके स्वामी तुम हो इसलिये हे धरणि! परीक्षा के विना सबकर्म भ्रष्ट होजाता है और श्राद्ध में यह रीति है कि, ब्राह्मणों की भलीभांति परीक्षा ले गुप्तस्थान में जहां किसी अयोग्य की दृष्टि न पड़े वहां लेजाय प्रीति से ब्राह्मणको भोजन कराय उत्तम २ वस्त्र व भूषणों से भूषितकर दक्षिणा से तृप्तकर पश्चात् उसी तृप्त भये पूजित ब्राह्मण के समीप कुशा बिछाय वेदमन्त्रों से पिता, पितामह, प्रपितामह इनका क्रम से अपसव्य हो आवाहनकर सहित तिल व जल के पिण्ड दे भक्ति पूर्वक प्रणामकर गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और ताम्बूल आदि से पूजनकर हाथ जोड़ प्रणामकर विसर्जन कर भूमिको इन मन्त्रों से प्रणामकरो " ॐधरायै नमः। ॐवैष्णव्यै नमः। ॐकाशिप्यै नमः। ॐअजायै नमः " इसभांति प्रणामकर व पूजित ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर बिदाकरे पीछे आप सकुटुम्ब दीन अन्धे बहरे को भोजनकराय भोजन करे इसभांति करने से पितृयज्ञ सफल होती है हे धरणि! निर्गुण परमात्मा के शरीर में प्रकट होकर जीवनाम से प्रसिद्ध कहाता है उस जीव में राजस, तामस, सात्त्विक इनतीनों का अंशहै वे तीनों अंश हमारे स्वरूप हैं उसके तृप्त होनेके लिये परंपरा से पितृ देव मनुष्य यज्ञ होती है विधिसहित होनेसे हमारी तृप्ति होती है और उसी यज्ञ को विघ्न करने के लिये देवता, असुर, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, सर्प ये सब हमारी आज्ञा से वायुरूप हो देखते हैं यदि यज्ञ का सब अङ्ग पूर्णभया तो सब देवता प्रसन्न होकर आयुष्,विद्या,कीर्ति, बल, तेज, धन, पुत्र, पशु और स्त्री दे स्वर्ग को चलेजाते हैं यदि यज्ञ में विधिहीन भया तो सब विध्वंस करते हैं इसलिये विचारपूर्वक विवेकी जन सदा पितृयज्ञ कर सबसुख शरीर के भोगि अन्त में स्वर्ग जाते हैं और इसभांति श्राद्ध करने से प्रेत-

भाव से लेकर यावत् अधम योनि है उससे मुक्त होकर उत्तम गति को प्राप्त होते हैं इसहेतु नरकरूपी समुद्र से पार करनेके लिये यह श्राद्धरूपी नौका हमने बनाया है हे धरणि! सबकाल में गृहस्थ के घर में पितर और देवता आते हैं निज २ समय में पूजन पाने से प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं जिससे करने वालापुरुष उत्तमगति को प्राप्त होताहै हे धरणि! श्राद्ध करने वाले पुरुष सात्त्विकगतिको प्राप्त होते हैं व यहभी बात हम कहते हैं कि; जो ज्ञानहीन शठ कृतघ्न निजमूर्खता से श्राद्ध नहीं करता उसके पितर निराश हो शापदेकर नरकत्रास करते हैं जिस शाप से मनुष्य अल्पायुष् संतानहीन, अङ्गभङ्ग, रोगी आदि होते हैं और जो पितृयज्ञ करते हैं उनके पुत्र पौत्र कभी नहीं क्लेश पाते हे धरणि! और कहांतक वर्णन करें अमावास्या के दिन पुत्र के स्नान समय में पितर आते हैं यदि विधि से तर्पण भया तो आशीर्वाद दे स्वर्ग को जाते हैं यदि तर्पण न भया तो स्नानोच्छिष्ट वस्त्र के जल को पानकरके शाप दे नरक को जाते हैं इसलिये ताम्र के पात्र को हाथमें ले कुश तिल के साथ तर्पण करे तो अक्षय तृप्त होकर पितर आशीर्वाद देते हैं और पितृकर्म कराने वाले ब्राह्मण को जो दक्षिणा दीजाती है वो पितरों के तृप्तहोनेके लिये होती है और हे धरणि! नरकभय दूर करनेहारा नीलवृष जो देताहै व उस वृष की पूंछ के जल से तर्पण होताहै उस जल से पितर साठहजारवर्ष तृप्त होकर निजसंतान को आशीर्वाद देते हैं और हे धरणि! नीलवृष निजशृङ्गों से भूमि की जितनी मट्टी खोदता है उतनेही उसके पितर नरकबाधा से निवृत्त होकर चन्द्रलोक में प्राप्त होते हैं व क्षुधा तृषा के दुःख से मुक्त हो छासठिहजारवर्ष चन्द्रलोक में रहते हैं हे धरणि! पुत्र पौत्र करके युक्त जो गृहस्थ हैं उनके लिये यह धर्म हमने वर्णन किया व जितने भांति के सुबोध जीवहैं वे सब गृहस्थ के आश्रित हैं इस-

लिये सब धर्म का मूल गृहस्थ है और हे धरणि! महीने २ में प्रति अमावास्या को जो श्राद्ध करते हैं उन मनुष्यों को और यज्ञ करने से, बहुत वेद पढ़नेसे, व्रत करने से, तीर्थस्नान करने से, अग्निहोत्र करनेसे, दानदेनेसे क्या प्रयोजन है? करे तो उत्तम है न करे तो पापभागी भी नहीं होते हैं इसलिये सब भांति गृहस्थ धर्म में श्राद्धही प्रधान है और हे धरणि! पितरों की उत्पत्ति ब्रह्मा, विष्णु और शिव के शरीरसे है इसीभांति मातामह आदि देवतारूप हैं परन्तु हमारी माया करके मोहित पितर को देवता नहीं जानते इस निमित्त पितरों के लिये हे धरणि! अग्नि में न देना चाहिये केवल ब्राह्मण के मुखसेही प्रसन्न होते हैं प्रथम हे धरणि! जब श्रीब्रह्माजी ने श्राद्धभाग पितरों के लिये कल्पना किया था तब श्राद्ध से तृप्तहो पितर अजीर्णबाधा से पीड़ित हो सोमके समीप जाय पहुँचि अपना दुःख निवेदन किया उसे सुनि आदरपूर्वक सबका सत्कारकर सोम कहने लगे कि, हे देवताओ! किसक्लेश से तुम पीड़ित हो व किससे तुम्हारी उत्पत्ति है? सो कथन करो यह सुनि देवगण कहनेलगे कि, जो आप पूछतेहो सो सावधान होकर श्रवणकरो हम तीनों हे सोम! ब्रह्मा, विष्णु, महादेव से उत्पन्न हैं व श्राद्ध के अधिकारी हैं सो श्राद्ध के अन्न से तृप्त होकर अजीर्णदोष से क्लेशित होरहे हैं अब आप यह हमारा दुःख दूर करें यह सुनि सोम कहनेलगा कि, हे देवताओ! घबड़ाओ न तुम्हारे तीनों के साथ चौथे हम हैं जिस भांति तुम्हारा कल्याण होगा उसभांति करेंगे हमको तुम निज सखा करके जानो इतना कह देवताओंको साथ ले सोम ब्रह्मलोक में जाय सुमेरु के शिखर में प्राप्त भये और वहां ऋषिगण व देवगणों करके सेवित श्रीब्रह्माजी को देखि साष्टाङ्ग प्रणामकर सब दुःख कह सुनाया और यहभी कहा कि, हम सब आपकी शरण में आये हैं जिसभांति हमारा अजीर्णदोष दूर होय सो कीजिये

इस सोम की वाणी सुनि व देवताओं को दुःखी देखि दयायुक्त होकर ब्रह्माजी ईश्वर का ध्यान करनेलगे तब तो ध्यान करतेही प्रकट होकर ईश्वर ने दर्शन दिया ईश्वर को देखि नमस्कारकर देवताओं का दुःख कह सुनाया उसे सुनि ईश्वर ध्यानकर विस्मित होकर ब्रह्मा से कहनेलगे कि; हे ब्रह्मन् ! ये सब हमारे तुम्हारे व विष्णु के अंश से हैं व हमने श्राद्धका भाग इनके लिये दियाहै सो पितृयज्ञ में तृप्त होनेसे अजीर्ण होगया इसनिमित्त सहित सोम के तुम्हारी शरण में आये हैं इन्हों का अजीर्ण जब तक दूर न होगा तबतक इनको सुख नहीं होगा इसलिये हे ब्रह्मन् ! अब यह निश्चय करो कि शाण्डिल्यऋषि के पुत्र बड़े प्रतापी जिनका नाम अग्नि है उनका भाग पहले देने से इन देवताओं का अजीर्ण निवृत्त होगा व सुख पावेंगे इस निमित्त आज से श्राद्ध में प्रथम भोजन अग्नि का होना चाहिये यह ईश्वर की कृपायुक्त वाणी को सुनि ब्रह्माजी ने ज्यों अग्नि का ध्यान किया उसी समय अग्नि प्रकटरूप तेजोमय होकर वहां आय पहुँचे उन्हें देखि प्रसन्न होकर मधुर वचन से ब्रह्माजी यह कहनेलगे कि हे अग्ने ! आज से श्राद्ध में प्रथम तुम्हारा भाग होगा पश्चात् सोमआदि भाग को प्राप्त होंगे यह ब्रह्मा का वचन सुनि प्रसन्नता से अङ्गीकार कर सहित सोम के सब देवता बिदा हो प्रणामकर निज २ स्थान को गये वाराहजी कहते हैं हे धरणि ! उस दिन से श्राद्ध पिण्ड में प्रथम भाग अग्नि को दियाजाता है ब्राह्मण को भोजन कराय पृथ्वी में कुश बिछाकर दक्षिणदिशा को मुखकर मन्त्र से प्रथम पिण्ड ब्रह्मा का अंश देना चाहिये वह पिताको प्राप्त होता है दूसरा अंश रुद्र के नाम से देना चाहिये वह पितामह को प्राप्त होताहै और तीसरा पिण्ड विष्णुजी का अंश है जो वृद्ध प्रपितामह को तृप्त करता है हे धरणि ! विधान से मन्त्रोंके साथ जो मनुष्य श्राद्ध करते हैं

उनके पितर संतुष्ट होकर आशीर्वाद देते हैं अब हे धरणि! पंक्तिहीन ब्राह्मणों के लक्षण वर्णन करते हैं सो श्रवणकरो पहले नपुंसक, चित्रकार, पशुपाल, बकरी, भेड़ रखनेवाला, कुनखी, श्यामदन्तों का पुरुष, नेत्रसेकाना, भयंकरमूर्ति, नाचनेगानेवाला, नकलकरनेवाला, वेदविक्रयकरनेवाला, पुरोहितवृत्ति, वणिजवृत्ति, राजसेवक, वर्णसंकर, पतित, संस्कारहीन, शूद्र-सेवक, गणक, ग्रामयाचक, अस्त्रधारनेवाला, लोनआदि रसों का वेचनेवाला, वैश्यवृत्ति, चोरवृत्ति, लेखक, रङ्गों से वस्त्र रंगनेवाला, शिलावृत्ति, पाखण्डी और बहुत वृत्तिकरनेवाला ये सब ब्राह्मण श्राद्ध के अधिकारी नहीं हैं और जो रस्ते चलि के आये हों तेल गोरस जीविकावाले, मांसविक्रयवाले और जो निन्द्यकर्म करनेवाले हैं वे जीते हुये राक्षस हैं हे धरणि! इनका दर्शन श्राद्ध में न होना चाहिये इनपंक्तिहीन ब्राह्मणों के दर्शन से पितर छः महीने दुःखी रहते हैं यदि श्राद्ध में इन्होंका दर्शन होजाय तो सब सामग्री श्राद्ध की दूर कर सूर्य का दर्शनकर घृत से अष्टोत्तरशत आहुति दे दूसरीवार श्राद्धकरे फिर ब्राह्मण को भोजनकरावे और हे धरणि! जो प्रेतान्न खाया होय उसे श्राद्ध में कभी निमन्त्रण न करना चाहिये उसको यह प्रायश्चित्त है कि माघमास की द्वादशी को घी युक्त खीर ब्राह्मण को भोजन कराय सहित वछरा की कपिला गौ दान करने से प्रेतान्न खानेवाला पुरुष पवित्र होताहै और हे धरणि! श्राद्धका करनेवाला पुरुष श्राद्ध के दिन ब्रह्मचर्य करे व दन्तधावन न करे अमावास्या को भी दातून न करना चाहिये जो अज्ञान से दातून करे उसे पितर व देव के बधकरने का पातक होताहै अमावास्या के दिन प्रातःकाल क्षौर कराय स्नानकर पवित्र व शुक्लवस्त्र धारणकर एकान्त भूमिमें जाय विधानसे श्राद्धकरे ब्राह्मण का भोजनकरावे पीछे रक्षोघ्ननाम मन्त्र को पढ़ि कुशाबिछाय पिण्डदानकरे फिर

विधिपूर्वक पिण्ड को पूजि ब्राह्मण को दक्षिणा दे सफल वर ले प्रणाम कर पृथिवी को प्रणामकर पितरों का विसर्जनकर प्रथम पिण्ड आप भोजनकरे दूसरा पिण्ड निजस्त्रीको देय तीसरा पिण्ड जल में छोड़ दे इसभांति पितर प्रसन्न होकर दीर्घ आयुष्, धन, धान्य, पुत्र और पौत्रआदि सबदेते हैं मन्त्रहीन क्रियाहीन जो श्राद्ध करते हैं उस श्राद्ध का फल राजा बलि को होताहै हे धरणि! इसभांति श्राद्ध की उत्पत्ति, दान और विधान सब वर्णन किया अब क्या सुनने की इच्छा है सो हम वर्णनकरें॥

एकसौछियासी का अध्याय॥

श्रीसूतजी कहते हैं कि, हे शौनक! इसभांति अनेक प्रकार के धर्म को सुनके धरणी नम्र हो हाथजोड़कर विनयपूर्वक यह कहनेलगी कि हे भगवन्! आपके मुखारविन्द से अनेकभांति के धर्मों को सुनकर बहुत चित्त आनन्द भया परन्तु नईवार्त्ता सुनने से चित्त संतुष्ट नहीं होता इसलिये हमारे ऊपर कृपाकर गुप्त भी होय सो प्रकट कथन करो हे भगवन्! मधुपर्क कौन सा पदार्थ है और किसभांति उत्पन्न भया कौन २ इसका अधिकारी है यह विनय वाणी सुनि वाराहजी कहनेलगे कि; हे धरणि! जिसभांति मधुपर्क उत्पन्न भयाहै सो सब श्रवणकरो जिस समय प्रलय होगई तब हम व ब्रह्मा और रुद्र ये तीनों शेष रहे और उपाधि सब लयको प्राप्तभई उस समय हमारे दहिने अङ्ग से सुन्दररूप को धारण किये निजशोभा से दिशाओं को प्रकाश करता कीर्ति, लक्ष्मी और दया की मानो दूसरी मूर्तिही धारण किये एक पुरुष उत्पन्न भया उसे देखि ब्रह्माजी हम से पूछनेलगे कि; हे भगवन्! हम तीनों में यह चौथा पुरुष कौनहै सो आप कृपा करके स्फुट कथन करें इसभांति हे धरणि! ब्रह्माजी की वाणी सुनि हमने कहा कि; हे ब्रह्मन्! यह पुरुष सबकर्मों को

साङ्गपूर्ण करनेवाला मधुपर्कनाम भक्तों का मुक्तिदेनेहारा है और इसे हमने उत्पन्न किया है इस हमारे वचन को सुनि रुद्रजी कहने लगे कि हे विष्णो! आपने बहुत उत्तम किया जो इसे उत्पन्न किया इस रुद्र की वाणी सुनि ब्रह्माजी बोले कि, हे विष्णो! इस मधुपर्क से क्या प्रयोजन है? सो आप वर्णन करें यह सुनि हम बोले कि, हे ब्रह्मन्! मधुपर्क के उत्पन्न होने का कारण और इसके देनेसे जो फल होताहै सो व हमारे पूजन में मधुपर्क देनेसे जो फल होता है सो हम वर्णन करते हैं सावधान होकर श्रवण करो और जिसभांति मधुपर्क देनेसे उत्तम दिव्यगति प्राप्त होती है सो श्रवणकरो हे ब्रह्मन्! पूजन के समय सब पूजन सामग्री से अधिक प्यारा मधुपर्क है जिसके निवेदन करने से हम परमपद देतेहैं उसे इस रीति से निवेदन करना चाहिये कि उत्तमपात्र में मधुपर्क को रख यह मन्त्र उच्चारण करे (मन्त्रः। ॐएषोहिदेव भगवंस्तवगात्रसूतः संसारमोक्षणकरो मधुपर्कनामा। भक्त्या मयायंप्रतिपादितोऽथ गृहाणदेवेश नमोनमस्ते) इस मन्त्र से निवेदन करने से हम बहुत प्रसन्न होते हैं अब जिस पदार्थ को मधुपर्क कहते हैं सो श्रवण करो हे धरणि! गोघृत, दधि और मधु इन तीनों को समभाग ले इकट्ठेकर उत्तम पात्र में हमारे निवेदनकरे इसभांति हमने मधुपर्क की व्यवस्था वर्णन किया अब क्या सुना चाहती हो सो वर्णन करें?॥

एकसौसत्तासी का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं हे शौनक! इसभांति मधुपर्क की उत्पत्ति व फल सहित कारण के वाराहजी के मुखारविन्द से सुनि विस्मित होकर नारायण के चरणोंको स्पर्शकर धरणी कहने लगी कि, हे भगवन्! अब आप यह कथन करें कि आप के पूजन में सब पूजन के पश्चात् कौन पदार्थ देना चाहिये जो आपको बहुत

प्रिय होय सो वर्णन कीजिये यह सुनि वाराहजी कहनेलगे। हे धरणि! बहुत उत्तम प्रश्न तुमने किया है जिसके श्रवण करने से संसार का भय निवृत्त होताहै हे धरणि! हमारे पूजन करके अन्त में निज कुटुम्ब व राज्य की कुशल के लिये शान्ति मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिये सब पूजन के अन्त में हाथ जोड़कर दोनों जानु को पृथिवी में कर इसमन्त्र को पढ़े (मन्त्रः। ॐनमोनारायणाय। ॐनमोनमोवासुदेवत्वंगतिस्त्वंपरायणम्। शरणं त्वां गतो नाथ संसारार्णवतारक॥ आगस्त्वं च सुमुखे मम चित्तेन वै पुनः। दिशः पश्य अधः पश्य व्याधिभ्यो रक्ष नित्यशः॥ प्रसीदस्व सराष्ट्रस्य राज्ञःसर्वबलस्य च। गर्भिणीनां च वृद्धानां व्रीहीणां च गवां तथा॥ ब्राह्मणानां च सततं शान्तिंकुरु शुभं कुरु। अन्नं कुरु सुवृष्टिं च सुभिक्षमभयं तथा॥ राष्ट्रं प्रवर्धतु विभो शान्तिर्भवतुनित्यशः। देवानां ब्राह्मणानां च भक्तानां कन्यकासु च॥ पशूनां सर्वभूतानां शान्तिर्भवतु नित्यशः। एवं शान्तिं पठित्वा तु मम कर्मपरायणः) हे धरणि! इस भांति शान्ति मन्त्र पढ़ि फिर इस मन्त्र को पढ़े (मन्त्रः। ॐयोऽसौ भवान्सर्व जगत्प्रसूते यज्ञेषु देवेषु च कर्मसाक्षी। शान्तिंभवान् कुर्वतु वासुदेव संसारमोक्षं च कुरुष्व देव॥ एषसिद्धिश्च कीर्त्तिश्च ओजसां तु महौजसाम्। लाभानां परमो लाभो गतीनां परमागतिः) हे धरणि! हमारे पूजन के अन्त में इन शान्ति मन्त्रों को जो पढ़ताहै सो इस लोकमें सुखभोगि अन्त में हमारे शरीर में लय को प्राप्त होता है इसभांति शान्ति को पढ़ि पीछे मधुपर्क देकर यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐनमोनारायणाय। योऽसौभवान्देववर प्रसूतो योवै समर्च्योमधुपर्कनामा। आगच्छ संतिष्ठ इमे च पात्रे ममापि संसार विमोक्षणाय) इस मन्त्र को पढ़ि ताम्रपात्र में दधि घृत और मधु समभाग लेकर हमारे अर्पण करे यदि मधु न मिले तो गुड़ मिलाकर देय हे धरणि! हमारा अंश दधिहै

रुद्रका अंश सहत है और घृत ब्रह्माजी का अंश है इसलिये मधुपर्क सब देवताओं का प्यारा है यदि मधुपर्क में तीनों पदार्थ न मिलें तो केवल मन्त्र पढ़ि जलमात्रही से मधुपर्क देना चाहिये (मन्त्रः। ॐयोऽसौ भवान्नाभिमात्रप्रसूतोयज्ञैश्चमन्त्रैस्स रहस्यजप्यैः। सोयं मया ते परिकल्पितश्च गृहाण दिव्यो मधुपर्कनामा) हे धरणि! जो मनुष्य हमारे कहे विधान से मधुपर्क निवेदन करते हैं सो सब यज्ञों के सांगफल को प्राप्त होकर हमारे लोक में प्राप्त होते हैं और भी श्रवणकरो हे धरणि! जिस किसी के प्राणत्याग का समय होय उसे विधिपूर्वक मधुपर्क देने से सब पापों से छुटि वह हमारे लोक में प्राप्त होता है यदि प्राण निकलने का समय होय तब हाथ में मधुपर्क ले यह मन्त्र पढ़े (मन्त्रः। ॐयोऽसौभवांस्तिष्ठसि सर्वदेहे नारायणः सर्वजगत् प्रधानः। गृहाणचेमं सुरलोकनाथ भक्त्योपनीतं मधुपर्क संज्ञम्) इसमन्त्र को पढ़ि संसारसागर से पार होने के लिये मधुपर्क देय हे धरणि! इसभांति मधुपर्क की उत्पत्ति हमने वर्णन किया इस मधुपर्क माहात्म्य को कोई नहीं जानता जो पूजन के अन्त में देवताको मधुपर्क देते हैं उनका संसार में फिर जन्म नहीं होता व परमगति को प्राप्त होते हैं यह मधुपर्क पवित्र व विमल होकर सब पापों का हरनेहारा है इस विधान को उसके लिये देना चाहिये जो कि गुरुभक्त ज्ञानी और बुद्धिमान् होय और जो मूर्ख व विचारहीन होय उसको कभी इसको न देना हे धरणि! जो पुरुष मधुपर्कका माहात्म्य श्रद्धा से पढ़े व ब्राह्मण के मुख से श्रवणकरे उसके सब दुःख दूर होते हैं कल्याण व मङ्गल को प्राप्त होता है और इस माहात्म्य के पाठकरनेवाला पुरुष धन व पुत्रयुक्त होकर भांति २ के संसारसुख को भोगि अन्त में हमारेलोकको आता है॥

एकसौअट्ठासी का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि; हे शौनक! इसभांति वाराहजी के मुखारविन्द से मधुपर्कमाहात्म्य और शान्तिपाठमाहात्म्य सुनि हाथजोड़ नम्रहोकर पृथिवी कहनेलगी कि; हे भगवन्! अब आप कृपाकरके नरकों का वर्णन करें जिसके श्रवण से अनेक संदेह दूर होयँ यह सुनि वाराहजी कहने लगे कि; हे धरणि! जो प्रश्न तुम पूछती हो सोई राजा जनमेजय ने वैशम्पायन ऋषि से पूछा सो सुनो पाण्डुवंशीय परीक्षित राजाका पुत्र जनमेजय अश्वमेध यज्ञ में ब्राह्मण का बधकर ब्रह्महत्या छोड़ाने के लिये प्रायश्चित्त करनेके निमित्त हरिद्वार में जाय श्रीगङ्गाजीके निकट व्यासजी के शिष्य वैशम्पायन मुनि को देखि ब्रह्मबध चिन्ता से व्याकुल हो हाथजोड़ नम्रहोकर पूछने लगा कि, हे भगवन्! यह हमारे घोर चिन्ता होरही है कि, जो मनुष्य इस लोक में शुभ व अशुभ कर्म करताहै उसे भोगना पड़ता है इस लिये हे भगवन्! जहां अशुभकर्म मनुष्य भोगते हैं सो यमपुरी किस प्रकार की है? सो आप वर्णन करें कितनी दूर है उस का क्या स्वरूप है और किसभांति वहां मनुष्य प्राप्त होते हैं? हे भगवन्! हमतो किसीभांति यमपुर को नहीं जायँगे सूतजी कहते हैं हे शौनक! इसभांति राजाका प्रश्न सुनि वैशम्पायनजी कहने लगे कि; हे राजन्! प्रथम समय में जो वृत्तान्त भया है सो आप सावधान होकर श्रवण करें जिसके सुनने से धर्म व यश की वृद्धि होती है व अनेकभांति के पाप निवृत्त होते हैं हे राजन्! पहले समय में उद्दालकनाम बड़े धर्मात्मा ऋषि भये जिनका पुत्र योगीराज नचिकेता नामक विख्यात हुआ सो उद्दालक ने किसीकारण निजपुत्र नचिकेता को यह शाप दिया कि, रे दुष्ट! बहुतशीघ्र तू यमराज के समीप जा यमपुर को

देख तब तो हे राजन्! निज पिता की शापवाणी को सुनि बड़े आदर से अङ्गीकार कर बड़े तेजस्वी व धर्मात्मा नचिकेता ने योगमार्ग में होकर उसी समय यमपुर जानेका विचार किया व जब जानेलगा तब नम्रहो हाथ जोड़कर निज पिता से यह कहा कि आप सत्यवादी हैं जिसमें आपका वचन मिथ्या न होय इस लिये मैं धर्मराज के समीप जाता हूं व धर्मराज का दर्शन कर शीघ्रही लौटि आपके चरणों का दर्शन करूंगा इसभांति निजपुत्र के मुख का वचन सुनि उद्दालक मुनि मोहवशहोकर कहने लगे कि, हे पुत्र ! हमारे वचन को मानि यदि तुम यमपुर को जाते हो व शीघ्र आनेको कहते हो तो केवल हमारी वाणी को सत्य करनेके लिये सो हे पुत्र! सत्य के तुल्य और कुछ नहीं है सत्य से सूर्य प्रकाश करता है सत्यही से वायु बहते हैं और सत्य से अग्नि सब पदार्थ को भस्म करते हैं और सत्यही से पृथिवी स्थिर होरही है हे पुत्र ! सत्य से समुद्र निज मर्यादा को नहीं त्यागता और सत्य के वश होकर मन्त्र सबके कार्यों को करते हैं यज्ञ सत्य के आधार हैं वेद सत्य के आधार हैं हे पुत्र ! इसभांति सब व्यवहार सत्यही के आधीनहैं सत्यकी सहायता से मनुष्य स्वर्ग को प्राप्त होताहै देखो हे पुत्र ! देवदेव रुद्र भगवान् पूर्वसमयमें देवी को गर्भधारण कराया सो तेज देवीने त्याग दिया परन्तु सत्यबल से वह बालक कुमार नाम बड़ा तेजस्वी भया और वड़वा मुख में और्वऋषि ने अग्नि को छोड़ दिया और बिन्ध्य नाम पर्वत सत्यही से पृथिवी में शयन करता है हे पुत्र ! सब चराचर सत्यही के बल से स्थित हैं और गृहस्थ, वानप्रस्थ, ब्रह्मचर्य और संन्यस्त आदि आश्रम सत्यहीमें टिके हैं इसलिये हे पुत्र ! हज़ार अश्वमेधयज्ञ और सत्य इन दोनों को तुला में धर बराबर करने से सत्यही अधिक होताहै इसनिमित्त हे पुत्र ! निजआत्मा में विचारकर सत्य की रक्षाकरो इसभांति पिता की

वाणी सुनि नचिकेता योगयुक्त होकर यम महाराज के स्थान में जाकर प्राप्तभया ॥

एकसौनवासी का अध्याय ॥

तब तो हे शौनक! नचिकेताऋषि को देखि यमराज ने प्रसन्नहोकर उत्तमआसन दे पाद्य अर्घ से पूजनकर व प्रीति पूर्वक यह आज्ञा दिया कि, हे पुत्र! अब शीघ्र तुम निज पिता के समीप जावो यह यमराज की वाणीसुनि नचिकेता बड़े हर्ष में युक्तहोकर पिता के समीप आय प्रणामकर खड़ा हुआ तब तो उद्दालकऋषि निज पुत्र को देखि बड़े हर्ष से उठि हृदय से लगाय मस्तक को सूंघि बड़े हर्षसे ऊंचे स्वर से यह कहनेलगे कि; हे ऋषिलोगो! हमारे पुत्र के योगबल का महाप्रभाव देखो कि, यमपुर में जाकर शीघ्र आया आज हमारे तुल्य भाग्यशाली कोई नहीं है जो निजपुत्र को कुशलयुक्त यमपुर से लौटा देखते हैं इसभांति निज प्रशंसाकर उद्दालकमुनि पुत्र से पूछनेलगे कि, हे पुत्र! यम के स्थान में किसभांति गये व किसी ने तुमको कुछ दण्ड व बन्धनआदि तो नहीं दिया अथवा किसीभांति की घोर व्याधि ने तो तुमको नहीं दुःख दिया और वहां क्या अपूर्व तुमने देखा? सो वर्णन करो और प्रेतराज महाराजको तुमने किस भांति देखा व किस कृपादृष्टि से सो सब वृत्तान्त हमसे वर्णन करो और वहां के दण्डदेनेवाले राजसेवक किसभांति तुमको मिले और वहां से चल के मार्ग इसलोक का कैसे तुमको प्राप्त भया? सो सब वर्णनकरो इसभांति उद्दालक के वचनों को सुनि वहां के सब ऋषियों के गण और ब्राह्मणों के गण नचिकेता का यमपुर से लौट के मृत्युलोक में आना सुनकर बड़ाआश्चर्य मानि निज २ कृत्य को त्यागि नचिकेता के दर्शन को आय पहुँचे वहां कोई तो बैठे हैं और कोई खड़े हो रहे हैं इसभांति हे राजन्,

जनमेजय! नचिकेता को देखि सबऋषीश्वर पूछने लगे कि, हे सत्यव्रत, हे गुरुसेवानिरत, हे पिताके वचन पालन करनेवाले, नचिकेतः! तुम धन्य हो जो यमपुर में जाकर फिर कुशलपूर्वक निज पिता को आय मिले हे नचिकेतः! यमपुर में जो २ विशेष तुमने देखा होय सो २ सबवृत्तान्त हमारे सबके सुनने की इच्छाहै आप वर्णन करें और हे पुत्र! पूछनेसे जो गुप्तहोय सोभी कहना उचित है हे पुत्र! यमराज के पुर से ऐसा कौन है जो जाकर क्षेम से लौटआवे इसलिये वहां का भय सबी मानते हैं सो वहां यम किसभांति निजराज्य को पालन करते हैं व चित्रगुप्त क्या करते हैं? काल का क्या स्वरूप है; और व्याधि किसभांति की है, वहां कर्मफल जीवों को किसभांति भोगना पड़ता है; और वहां जाय के क्या करने से बाधा निवृत्त होती है? और यहभी सुनने में आता है कि, यमराज के दूत जीवों को क्रोध से बांधते हैं व तीक्ष्ण शस्त्र से काटते हैं इसभांति अनेक क्लेश देते हैं ऐसे स्थान में पापी की कौनगति होती है और पुण्यात्मा किसभांति वहां की बाधा से मुक्त होते हैं? सो सब वर्णन करो हे नचिकेतः! हमारे सबके पूछने से स्नेह जानि के सब सत्य २ वर्णन करो॥

एकसौनब्बे का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं, हे शौनक! इसभांति ऋषियों का वचन सुनि प्रसन्नहोकर नचिकेता धर्मराज को प्रणामकर सबऋषियों की तरफ़ देखि कहनेलगा कि; हे ऋषीश्वरो! जो वृत्तान्त आप सब पूछते हैं सो यथामति हम वर्णनकरते हैं सो सावधानहोकर श्रवणकरो हे ऋषीश्वरो! जो मनुष्य मिथ्याभाषण करते हैं बालक का बध करते हैं स्त्री बध करते हैं ब्राह्मण का बध करने वाले शठ कृतघ्न लोलुप परस्त्रीगामी व्रतनिन्दक वेदद्रोही शूद्र के यज्ञ करानेवाले मद्यपायी वीरबधकरनेवाले मातृगामी वृद्धपिता

माता के त्यागी पतिव्रता स्त्री के त्यागी गुरुद्रोही दूतकर्म में मिथ्या कथनकरनेवाले घर व क्षेत्रहरणकरनेवाले जलका सेतु तोड़नेवाले पुत्रहीन निर्दयी पाखण्डी सोमविक्रयी स्त्रीजित रस विक्रय करनेवाले झूंठी गवाहीदेनेवाले वेद बेंचनेवाले नक्षत्र जीवी चाण्डाल के पढ़ानेवाले सर्वस्त्रीगामी कूटतुलावाले पापियों के संगी संग्राम में जाय भागनेवाले परधन परस्त्री हरण करने वाले राजा के बध करनेवाले पापी के सहाय देनेवाले अग्नि से ग्रामादि भस्म करनेवाले देवचिह्नधारी देवता के पूजक तीर्थ के दान लेनेवाले मिथ्या नख रोम बढ़ानेवाले और वर्णाश्रमभ्रष्ट सब के दानदेनेवाले तीर्थलोप करनेवाले हे ऋषीश्वरो! इन्होंको आदि ले हज़ारों पुरुष और स्त्रियां यमलोक में जाय निज २ किये कर्मों के फलोंको भोगते हैं सो सब क्रम से वर्णन करते हैं हे ऋषीश्वरो! सावधान होकर श्रवणकरो वैशम्पायनजी कहते हैं, हे राजन्, जनमेजय! इसभांति नचिकेता की वाणी सुनि सब तपस्वी विस्मितहोकर कहनेलगे कि, हे पुत्र! जो २ जिसभांति तुमने देखा हो सो २ सब यथार्थ वर्णनकरो जिस स्वरूप से काल जीवों को लेजाता है और जिसभांति जीवों को दण्ड प्राप्त होता है सो सब कथन करो और वैतरणी क्या पदार्थ है व उसका क्या स्वरूप है व रौरव शाल्मली का क्या स्वरूप है? और जो अनेक कुम्भीपाक क्षारकर्दम आदि नानाविध नरक हैं उन सबका वर्णन करो कि मनुष्य थोड़े सुखके मोहवश होकर शास्त्र व वृद्ध का वाक्य त्यागि स्वतन्त्र होकर अनेकभांति के दुःख कर्म करने से यमपुर में जाय अनन्तक्लेश भोगतेहैं कि; जिसका कुछ पार नहीं है पुत्र! इन सब प्रश्नों का उत्तर जैसा तुमने देखा है सो सब कहि सुनावो॥

एकसौइक्यानवे का अध्याय॥

वैशम्पायनजी कहते हैं कि; हे राजन्, जनमेजय! इसभांति ऋषियों का वचन सुनि नचिकेता सबवृत्तान्त प्रारम्भ से वर्णन करनेलगे हे ब्राह्मणो! जो आप सब पूछते हो सो श्रवण करो श्रीमहाराज धर्मराज की राजधानी हज़ारों योजन की लम्बी चौड़ी है जिसमें जाम्बूनदनाम सुवर्ण के अनेकभांति उत्तम २ मन्दिर बने हैं व अनेकभांति के मणियों की अटारी जिन मन्दिरों में शोभा देरही हैं व सुवर्ण का प्राकार चारोंतरफ़ जिसके भीतर कैलासपर्वत के शिखरके समान उत्तम २ मकान बने हैं व निर्मल जलकरके पूर्ण नदी जहां चारोंदिशा में बह रही हैं व अनेकभांति की वापी कमलोंकरके सुशोभित व नानाभांति के तड़ाग जहां शोभित होरहे हैं और हे ऋषीश्वरो! जहां स्त्री और पुरुष सबभूषणोंकरके भूषित निज २ बाहनों पर पुरकी शोभा को देरहे हैं और अनेकभांति के वृक्षों में फल पुष्प आय रहे हैं जिन्होंके ऊपर पक्षियों के जोड़े कामकरके मत्त नानाभांति के शब्दोंको बोलरहे हैं और अनेकभांति के कमलोंकरके शोभित जलाशय के मध्य हंस, जलकुक्कुट, कारण्डव आदि अनेकभांति के पक्षियोंकरके शोभा को प्राप्त मत्स्य आदि नानाभांति के जल-जीव विहार कररहे हैं कोई नृत्य करते कोई सोते कोई भोजन करते कोई निज २ स्त्रियों के साथ इच्छापूर्वक विलास करते इस भांति हे ऋषीश्वरो! धर्मराज के पुर में अनेक शोभा होरही हैं निज २ कर्मोंके वशहो कोई जीव बड़े कोई छोटे हमने देखेहैं कि जिन्होंके स्मरण करनेसे हमारा मन व्याकुल होता है वह अपूर्व वृत्तान्त देखनेहीसे बनता है तथापि जैसा देखा और सुना है सो कथन करते हैं हे ऋषीश्वरो! धर्मराजके पुरमें सब नदियों में उत्तम पुष्पोदकानाम नदी है जिसके दोनों किनारे इतने वृक्ष

हैं कि कहीं वह दीखती है व कहीं नहीं दीखती जिस नदी के दोनों किनारे सुवर्णकी सीढ़ियों से शोभित होरहे हैं व जिसकी बालुका सुवर्ण के रङ्गकी है और जिसका जल शीतल व सुगन्ध करके युक्त जिसमें नानाभांति के कमलों में भ्रमर चारोंओर गुञ्जार कररहे हैं व जलपक्षियों करके युक्त उस नदी की शोभा दे रहे हैं हे ऋषीश्वरो! इसभांति सबपापों की हरनेवाली पुष्पवहानाम नदी जिसके दोनों किनारे हज़ारों देववृक्ष विराज रहे हैं जिनवृक्षों के कुञ्ज में युवावस्था के मद से माती देवाङ्गना निज २ प्रियपुरुषों के साथ रतिक्रीड़ा करती वारुणी पान कर आनन्दगान विलास हास आदि नाना विनोदयुक्त क्रीड़ा श्रम युक्त होकर जलक्रीड़ा करती हैं इसभांति हज़ारों स्त्रियों के समूह इच्छापूर्वक कभी जलक्रीड़ा कभी वनक्रीड़ा और कभी तीर क्रीड़ा करतीहुई अनेकभांति के मत्तपक्षियों के जोड़ाओं की शोभा देखती निजनिज प्रियपुरुषों को रमावती और पुष्पवहानदी को शोभा देती आनन्द कररही हैं इसभांति हे ऋषीश्वरो! धर्मराज के पुरकी नदी का वर्णन हमने किया कि, जो नदी निज निकट निवासियों को ऐसे पालन करती है जैसे माता निजपुत्र का पालन करे जिस नदी के मध्य व दोनों किनारे के वनमें हंसों के जोड़े हैं व चकीचका पक्षी विहार कररहे हैं जिस नदी की मनोहर शोभा देखने से देवताओं को स्वर्ग में नन्दनवन का सुख भूलगया व ऋषियों को तपकरना भूलगया जिसके किनारे विहारमानि कालव्यतीत कररहे हैं और हे ऋषीश्वरो! जिसके किनारे गन्धर्व, विद्याधर, किन्नर, नाग और यक्ष आदि सब निजनिज विमान में बैठेहुये निजनिज स्त्रियों के साथ विनोद कररहे हैं और उस नदी की शोभा थोड़े दिनों में ठीक २ वर्णन नहीं होसक्की॥

एकसौबानबे का अध्याय॥

नचिकेताजी कहते हैं कि, हे ऋषीश्वरो! दश योजन विस्तार व बीस योजन के व्यास में प्राकार अर्थात् शहरपनाह के भीतर हज़ारों महलों करके शोभित मानो निज उँचाई से आकाश को स्पर्शकररही है व निज शिखर की शोभा से पुरी प्रकाशित होरही है व जलयन्त्र अनेकभांति के जहां शोभा देरहे हैं इसभांति के पूर्वद्वार में हे ऋषीश्वरो! उन्हीं लोकों का प्रवेश है जो धर्मात्मा व सुकृती हैं और जो यमपुर में दक्षिणद्वार है सो लोहा से विचित्र बना है जिसके देखनेसे भय उत्पन्न होता है इस द्वारमें उन्हीं का प्रवेश होताहै जो पापात्मा क्रूर छली और हिंसारत हैं और वह दक्षिणद्वार नहीं है साक्षात् नरकपुरका फाटक है कि जिसमें प्रवेश करतेही रौरव कुम्भीपाकसे लेकर हज़ारों नरक भोग करने पड़ते हैं और हे ऋषीश्वरो! गोपुरनामक जो पश्चिमद्वार है सो अग्निमय भूमि होनेसे भय देनेवाला है धर्मराज ने पापियों के प्रायश्चित्त के लिये बनाया है उसी के समीप सब रत्नों करके शोभित बहुत रमणीय तीन योजन की विस्तृत अद्भुत सभा बनी है जिस सभा में बैठि धर्मराज मनुष्यों के पुण्य व पाप का निर्धार करते हैं इसीलिये उस सभा का नाम धर्मसभा है हे ऋषीश्वरो! जिसने जैसा शुभ व अशुभ कर्म कियाहै उसका फल लोक के हित के लिये विचार करके देते हैं और जिस सभा में धर्मराज की आज्ञानुसार मनु प्रजापति, व्यासजी, अत्रि, उद्दालक का पुत्र, आपस्तम्ब, बृहस्पति, शुक्र, गौतम, शंख, लिखित, अङ्गिरा, भृगु, पुलस्त्य, सब जीवों के पुलहआदि धर्मशास्त्र के आचार्यसहित धर्मराजके धर्म व अधर्म का निर्णय करते हैं और हे ऋषीश्वरो! जिस सभा में सब उत्तम भूषणों करके भूषित निज तेज से सभा को प्रकाश करता ब्रह्मदत्त विराजमान होरहा है एक तरफ़ सारी

सभा का तेज और एक तरफ़ केवल ब्रह्मदत्त निजधर्म के प्रताप से सारी सभा को शोभा देरहा है जिसके बांयें व दाहिनेभाग में निज निज प्रकाश से प्रकाश करनेवाले ब्रह्मऋषि सत्यवादी सब अङ्गों के साथ छहों शास्त्र व वेदके अर्थ के ज्ञाता सहित पितरों के धर्मराज को अनेकभांति की धर्म की कथा सुनारहे हैं और निज निज अधिकार में स्थित कोई अनेकभांति के राग कोई नृत्य व कोई भांतिभांति का हास्य कर रहे हैं नचिकेता कहते हैं हे ऋषीश्वरो ! उसी सभा में धर्मराज़ के समीप बड़ी दाढ़ी वाला कृष्णवर्ण का पुरुष जिसकी देह में ऊंचे २ रोम भयानक मुख में बड़े मोटे लम्बे दाढ़ोंसे विराजमान व बामभुजामें लोह का दण्ड लिये धर्मराज की आज्ञा में स्थितहै जो आज्ञा शुभा-शुभ होतीहै उसीको करके शीघ्र धर्मराज को प्रसन्न करताहै जिस का लोक में विदित काल ऐसा नाम है और कालही के मुवा-फ़िक़ स्वरूप धारण किये अनेकगणों करके युक्त यमराज करके पूजा व सन्मान को प्राप्त मृत्युनाम जिसका सो अनेकभांति के रूप धारण किये रोगों को साथ लिये धर्मराज की आज्ञा में स्थित है हे ऋषीश्वरो ! जिससे तपस्वी, ऋषि, मुनि, योगी, सुर और असुर सब डरतेहुये जिसे नित्य प्रणाम करतेहैं व नित्य जिसकी त्रास से दुःखी होरहेहैं सो मृत्यु नित्य युवावस्था को प्राप्त जरा-मरणवर्जित अतिबली व पुष्टगणोंको साथ लिये हुये यमराज की सेवा को कररहेहैं और हे ऋषीश्वरो ! ज्वर आदि नानाभांति के रोग स्त्री और पुरुष का स्वरूप धारण किये अनेकभूषणों करके भूषित जिसके आगे व पीछे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सरता भयानकरूप को धारण किये संसार के भक्षण करने में समर्थ होकर पृथिवी को मानो दो टुकड़ा किया चाहतेहैं ऐसे यमराज के आगे आज्ञा में हाथ जोड़े खड़े हैं जिसकी चारों दिशाओं में कूष्माण्ड यातुधान और राक्षस

मांस व रुधिरही है भोजन जिन्होंका सो विलक्षण रूप धारण किये यमराज महाराज की सेवा कररहे हैं जिन्हों में किसी के एक पैर किसी के दो पैर किसी के तीन पैर और किसी के चार पैर हैं इसी भांति एक भुजा, दो भुजा, तीन भुजा, अनेक भुजा व भुजाहीन व जिन्हों के ऊंचे २ कान, लम्बे कान, चिपटे कान व किसी के हाथी के तुल्य कान उनमें कोई मुकुट से ले पैर की अंगुली सब भूषणों करके और अनेक मनोहर २ वस्त्रों करके भूषित पुरुषरूप धारण किये और कोई स्त्रीरूप धारण किये मनोहर २ वस्त्र व भूषणों करके भूषित व कोई विकट वेषको धारण किये नग्न हाथों में त्रिशूल, मुसल, चक्र, शक्ति, तोमर, धनुष, बाण, खड्ग, गदा, मुद्गर और कुदाल इन अस्त्रोंको धारण किये हैं और हे ऋषीश्वरो! किसीके हाथ में दधि व किसीके हाथ में अनेकभांति का भोजन और कोई नानाविध भूषण व वस्त्र लिये यमराज की आज्ञा में खड़े हैं और कोई हाथीपर कोई घोड़े पर कोई हंसपर इस भांति ऋषभ, शरभ, सुदर्शन मोर, कुक्कुर, चक्रवाक पर व कोई गर्दभपर सवार होरहे हैं इसभांति यमराज के गण यमपुर में हमने देखे हैं हे ऋषीश्वरो! कोई उज्ज्वल वेष कोई मलिन व किसी का वस्त्र नवीन व किसी का वस्त्र मलिन जीर्ण है और कोई बोलते हैं कोई चुप हैं कोई दया करके युक्त व कोई दयाहीन किसी के हाथों में धर्म किसीके यश व किसी के हाथमें कीर्ति इसभांति के गण यमराज की आज्ञानुसार हाथ जोड़े खड़े हैं हे ऋषीश्वरो! यदि इन्हों का पूजन जो ब्राह्मण करते हैं उनकी हानि कभी नहीं होती इसलिये धर्मराज के इन गणों का पूजन व स्तुति प्रणाम नित्य करना चाहिये जिससे प्रसन्न होकर नित्य कल्याण व आरोग्य करते हैं॥

एकसौतिरानबे का अध्याय॥

नचिकेता कहताहै कि, हे ऋषीश्वरो! इसभांति के प्रेतपुर में जब हम पहुँचे तब बड़ी प्रीति से धर्मराज महाराजने हमको दर्शन दिया व बड़े आदर से उत्तम आसन पर बैठाय पाद्य अर्घ निवेदन कर हमारी बड़ाई करनेलगे उस समय प्रथम तो हमने उनका स्वरूप अतिक्रूर देखा फिर हमारे देखतेही सौम्यरूप होगये और प्रथम उनके नेत्र भी बड़े भयानक थे परन्तु ऐसे सौम्य व मनोहर होगये मानो साक्षात् कमलही हैं इसभांति के स्वरूप को देखि हे ऋषीश्वरो! हमारे चित्तको बड़ा आनन्द भया कि जिनके डरसे चराचर हाथ जोड़ नम्र होकर पूजन व स्तुति करताहै तिसने जो हमारा पूजन किया तो इससे अधिक कौनसा आनन्द होगा व उनके प्रसन्न होनेसे मैंने अपने को धन्य व कृतकृत्य माना व सावधान होकर हाथ जोड़कर मैं धर्मराज महाराज की स्तुति करनेलगा कि, हे भगवन्! आप पितरों के स्वामी हैं कृपा करके मेरी स्तुति को श्रवण करें इतना कह स्तुति का प्रारम्भ किया (अथ यमराजस्तुतिः। नचिकेतोवाच॥ त्वं च धाता विधाता च श्राद्धे चैव हि दृश्यसे। पितॄणां परमो देवश्चतुष्पाद नमोऽस्तुते १ कालज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवादी दृढव्रतः। प्रेतनाथ महाभाग धर्मराज नमोऽस्तुते २ कर्ता कारयिता चैव भूतभव्यभवत्प्रभो। पावको मोहनश्चैव संक्षेपो विस्तरस्तथा ३ दण्डपाणे विरूपाक्ष पाशहस्त नमोऽस्तुते। आदित्यसदृशाकार सर्वजीवहर प्रभो ४ कृष्णवर्ण दुराधर्ष तैलरूप नमोऽस्तुते। मार्तण्डसदृशः श्रीमान्मार्तण्डसमतेजसः ५ हव्यकव्यवहस्त्वं हि प्रभविष्णो नमोऽस्तुते। पाता हन्ता व्रती श्राद्धी नित्ययुक्तो महातपाः ६ एकदृग्बहुदृग्भूत्वा कालमृत्यो नमोऽस्तुते। त्वया विराजितो लोकः शासितो धर्महेतुना ७ प्रत्यक्षं

दृश्यते देव त्वद्विना नच सिद्धयति। देवानाम्परमोदेवस्तपसां परमन्तपः ८ जपानां परमं जाप्यन्त्वत्तश्चान्यो न दृश्यते। ऋषयो वा तथा क्रुद्धा हतबन्धुसुहृज्जनाः ९ पतिव्रताश्च या नार्यो दुःखितास्तपसि स्थिताः। न त्वां शक्तइहस्थानात्पातनाय कदाचन १० तस्मात्त्वं सर्वदेवेषु एको धर्मभृतां वरः। कृतज्ञस्सत्यवादी च सर्वभूतहिते रतः ११ इति) वैशम्पायन ऋषि कहते हैं हे राजन्, जनमेजय! इसभांति नचिकेताजीके मुखकी दिव्यस्तुति सुनि धर्मराज प्रसन्न होकर कहनेलगे कि, हे उद्दालकजी के पुत्र! इस तुम्हारी मधुरवाणी की स्तुति सुनि हम बहुत प्रसन्न हैं जो तुम्हारी वाञ्छा होय सो वर मांगो आरोग्य होना मांगो व दीर्घायुष्य इस धर्मराज के वचन को सुनि नचिकेता बोले कि, हे भगवन्! यदि आप सबके स्वामी प्रसन्न भये तो यही वर सर्वस्व लाभ भया इसलिये आपसे हम दूसरा वर नहीं चाहते केवल यह वाञ्छा तो अवश्य है कि, आपके पुर में जो जीव शुभ वा अशुभकर्म भोगते हैं उन्हों का क्रम से सबका दर्शन किया चाहते हैं यदि आप वर देते हैं तो यही वर दीजिये यह वाणी सुनि यमराज ने निज अधिकारी सेवक से आज्ञा दिया कि हे दूत! नचिकेताजी को चित्रगुप्त के समीप लेजाकर यह कहो कि इनको किसीभांति का क्लेश न होय व सारी हमारी पुरी का दर्शन करा देवें इस धर्मराज की आज्ञा को पाय नचिकेता को साथ लेजाय चित्रगुप्तके समीप राजआज्ञा सब निवेदन किया उसे सुनि बड़ी प्रीति से चित्रगुप्त ने निज अधिकारी दूत को साथकर सब यमपुर के देखने की आज्ञा दी तब तो हे ऋषीश्वरो! हाथ जोड़ आज्ञा को स्वीकारकर हमको साथ लेकर जब चलनेलगा तब तो चित्रगुप्त यह बोले कि, हे दूत! तुम हमारे चित्तके जाननेवाले बुद्धिमान् हो व भक्तिमान् हो हमारी आज्ञा से यह ब्राह्मण प्रेतों के समूह में जाता है इसकी सबभांति रक्षा करना जिससे इन

को शीत, गरमी, क्षुधा, तृषा, दुःख न देय व सब जगह देखायके फिर हमारे समीप ल्यावो हे ऋषीश्वरो! इसभांति चित्रगुप्त की आज्ञा लेकर दूत हमको संयमनीपुरी का दर्शन कराने ले चला और उस दूत के साथ जब हम चले तो क्या देखते हैं कि कोई कहता है पकड़ो पकड़ो यह भागने न पावे व इसे मारो इसे बांधिलो इसे फाड़के दोटुकड़े करदो यह शब्द चारों ओर होरहाहै और कोई बांधे जाते हैं कोई फाड़े जातेहैं कोई लोह के मुँगड़ेसे कूटे जातेहैं किसीके शिर टुकड़े २ होरहेहैं किसीके हाथ व किसी के पैर जगह २ टूटिरहे हैं इसभांति के लक्षों जीव जहां हाय २ कर चिल्लाय २ बड़े ऊंचे स्वरसे रोदन कररहे हैं हे ऋषीश्वरो! घोर अन्धकार से युक्त नरक इसभांति के जीवों से पूर्ण होरहा है व नानाभांति की दीनवाणी से भरपूर होरहाहै व कहीं अग्निसे खौलता हुआ तेलका कुण्ड भरा है, कि जिसमें अनेक जीव छुटेभये हाय २ करके चुररहे हैं व कहीं घी के कड़ाह में पकरहे हैं कहीं जीवतेही देह का चर्म निकाल के लोन और लालमिरच का कुण्ड भराहुआ है उसमें गेरे जातेहैं और कहीं तेल निकालने का जैसा यन्त्र जिसका नाम कोल्हू सो बना है उसमें छोड़के अङ्गअङ्गका रस निचोड़ते हैं तिलके मुवाफ़िक़ उस कोल्हू यन्त्र की पीड़ा से अङ्गअङ्गका रुधिर निकलजाता है व घोरपीड़ा को प्राप्त होतेहैं और हे ऋषीश्वरो! जिसका वैतरणी नाम है सब नरकों का प्राकाररूप है जिसका स्वरूप देखने से पापीको पापकर्म का पूरा दण्ड होताहै कि जिसमें कफ, रुधिर, सड़ामांस और मज्जा येही जल के स्थान में हैं व नख केश आदिकों से मूत्र व विष्ठा से पूर्ण है उस नदी में अनेक कोटि पापी जीव डूबते तरते निज कर्मका फल भोगरहे हैं और हे ऋषीश्वरो! शूलनाम नरक में जीवों को पैर से पकड़ चढ़ाय व खैंचि मूर्च्छित कर वैतरणी में फेंक देते हैं और कहीं बड़े २ फण धारण करने-

वाले सर्प चारों ओरसे लिपटि जीवों को डसते हैं कि जिसके विष स्पर्श होनेसे मूर्च्छा में प्राप्त होकर मृतक समान होजाता है और कूटशाल्मली नाम नरक में जिसमें लोह के बड़े २ तीक्ष्ण अग्र वाले कांटे हैं उसमें चढ़ायके खैंचि खारी कीच के कुण्ड में पटके जाते हैं और कोई तीक्ष्णधार के खड्ग से टुकड़े २ किये जाते हैं कोई शक्तिनामक अस्त्र से बारम्बार भेदन कियेजाते हैं हे ऋषीश्वरो! वहां यह भी हमने देखा है कि हजारों यातुधान के व कूष्माण्ड के गण बड़े २ भयंकररूप धारण किये खड़े हैं पापी जीव जब उनके समीप गये तब बड़े शीघ्र उठाकर निजदांतों से चर्वणकर उसी समय विष्ठा के रस्ते गिरा देते हैं और किसी को निजमुख में छोड़ चर्वणकर गन्नेके मुवाफ़िक़ रस को चूसके थूकदेतेहैं और कहीं रुधिर और मांस के खानेवाले घोर राक्षस देखतेही पापियों के मांस व रुधिर को खाय पीके उनके हाड़ों को अन्धेकूप में छोड़ देतेहैं और कहीं बड़े २ बन्दर के ऐसे रूप को धारण किये राक्षस जीवों को निज नखों से व दांतों से छिन्न भिन्न करदेते हैं हे ऋषीश्वरो! जिसभांति म्लेच्छ कुक्कुट पक्षी को कटकटा शब्द को करते भक्षण करता है उसी भांति उस भूमि में चारों ओर से कटकटा शब्द सुनाता है और जिसभांति आम्र के फल को मनुष्य स्वाद ले २ कर बड़ी प्रीति से खाता है उसी भांति यमपुर में मनुष्यों को राक्षस स्वाद ले २ कर खातेहैं व चूस २ कै दूर पर्वत के ऊपर फेंक देते हैं फिर दैवयोग से कर्मों के वश सजीव होतेही उसीभांति बड़े शीघ्र पकड़ आम्र फल के मुवाफ़िक़ मुखमें दे व चूसके फेंक देते हैं व उन पुरुषों के पापों को कह २ बारम्बार भक्षण करते हैं और किसी पापी के ऊपर बड़े २ पाषाण के टुकड़े छोड़ते हैं कि जिसमें वह उसके पड़तेही चूर्ण होजाय व यह कह २ के उन्हों के पापों का स्मरण कराते हैं कि हे दुष्टो! जो तुमने धर्म को त्याग व अधर्मरत होकर अमुक २

पाप किया है उसका फल अब भोग करो और किसी पापी के ऊपर इतनी धूलि की वर्षा करते हैं कि जिसम वो उस धूलिसे ढपजाय और किसी पापी को मतवाले हाथी के आगे छोड़देते हैं कि, देखतेही वो पैरों से उसे पीस देता है व किसी को दांतों के धक्केसे भूमि में घुसेड़ देता है किसी को चीर के दो टुकड़े कर देता है और हे ऋषीश्वरो! किसी पापी को पकड़ जलतेहुये अग्नि के कुण्ड में छोड़देते हैं और वो जीव अग्नि के ताप करके पीड़ा को प्राप्त ठंढे जल को पुकारते २ मूर्च्छित हो २ गिर पड़ते हैं यदि उनको पानी भी यमदूत देते हैं तो गलायाभया लोहा उनके मुख में छोड़ते हैं जिससे दुःखी हो शरण २ पुकारते हैं व उनका शरण कोई नहीं होता परस्पर लिपिटि २ दुःखी हो २ क्षुधा तृषा करके व्याकुल हाय २ करते मूर्च्छित हो २ गिर २ करके भस्म होतेहैं और हे ऋषीश्वरो! वह पापी जीव अन्नकी राशि उत्तम २ और ठंढा जल दूर से तो देखते हैं परन्तु उनको प्राप्त नहीं होता इसी भांति अनेक सुगन्ध के पदार्थ दही, दूध, खिचड़ी, खीर, शहद, मद्य, मैरेय, माध्वीक और शीधु आदि अनेकभांति के भोगपदार्थ वहां सब रक्खे हैं परन्तु पापात्माओं को दुर्लभ हैं व पुण्यात्मा तपस्वियों को सत्कारपूर्वक प्राप्त होते हैं किसी पदार्थ के लिये उनको दुःख नहीं होता और हे ऋषीश्वरो! उस भूमि में हमने ये भी देखा है कि, जो तपस्वी महात्मा पुण्य करनेवाले जाते हैं उनके लिये उत्तम व सुगन्धयुक्त पुष्पों की माला व सबभांति के वस्त्र व अनेक भांति के शृङ्गार भूषण छहोंरस के अनेक भोजन रमणीय भूमि व मनोहरा स्त्री मनोहर वेष को किये सब भांति से सेवा करने में तत्पर व छहोंऋतु के स्वादयुक्त फलआदि उपभोग की सब सामग्रियां प्राप्त रहती हैं इसलिये उन महात्माओं को वह भूमि धर्मपुर ही दिखाती है केवल पापियों को ही वह दुस्सह

दण्डप्राप्त होनेसे यमपुर है हे ऋषीश्वरो! वेही सामग्रियोंको ले वेही स्त्रियां पुण्यजीवों की सेवा करती हैं और पापियोंको हँस २ करके व कठोर २ वाणी के साथ मार २ के कहती हैं कि हे कृतघ्नो, हे धूर्त्तो, हे लोभियो, हे परस्त्रीगामियो, हे पापियो, हे दानहीनो, हे कृपणो, हे परनिन्दा करनेवालो, हे निर्लज्जो, हे पापके छिपानेवालो! यह सुख तुम्हारे लिये नहीं है तुम तो जो भोग रहे हो इसी को अधिक से अधिक भोगोगे और जो तुमने शास्त्र व वृद्धों का वचन त्यागि निजबल से अन्धे होकर क्षणमात्र सुख के लिये अधर्म किया है उसका फल यहां तो भोगतेही हो यदि कुछ शेष रहेगा तो मृत्युलोक में जन्म लेकर अङ्गहीन, धनहीन, गुणहीन, बन्धुहीन और भाग्यहीन होके फिर यहां से भी अधिक वहां भोगोगे यह भोग जो देखते हो सो तपस्वी दयावान् धर्मात्मा धीरपुरुषों के लिये हैं यहां इन सुखभोगों को भोगि कुछ पुण्य शेष रहने में मृत्युलोक में उत्तम व धनीकुल में जन्म पाय रूप व गुण से युक्त हो नानाभांति के इच्छाभोगों को भोगि व उत्तम पवित्र कर्मों को कर अन्त में परमगति को प्राप्त होगे॥

एकसौचौरानवे का अध्याय॥

वैशंपायनजी कहते हैं कि; हे राजन्, जनमेजय! नचिकेता इस वृत्तान्त को वर्णन कर कहनेलगा कि, हे ऋषीश्वरो! इस लोक में जो पुण्यात्मा हैं सो तो पवित्र व धनीकुल में जन्म ले कर सुन्दरस्वरूप व विद्या करके युक्त होतेहुये सत्कर्मी होते हैं व पापात्मा नीच व दरिद्र कुल में जन्म ले कुरूप गुणहीन धर्महीन होते हैं और इस लोक में जो धर्मात्मा हैं वे धर्मराज महाराजकी पुरी में जाकर निज सुकृत का फल नानाभांति के भोगों को भोगि उत्तम विमान में बैठि दिव्यदिव्य अप्सराओं के साथ आनन्द करते हैं और जो इसलोक में पापात्मा हैं जीवों के संताप देने-

वाले अधर्मी सो यमपुर में जाय यमदूतों के वश हो अग्नि से तपीहुई शिला के ऊपर बैठाय तप्त तैल से स्नान कराये जाते हैं जिस स्नान से सब अङ्ग भस्म होजाते हैं और उस क्लेश से बचानेवाला कोई नहीं होता हे ऋषीश्वरो! उन पापियों के मांस खाने के लिये बड़े २ दांतवाले भयानक कुत्ते आय २ चारोंतरफ़ से लिपिटि कोई पैर व कोई पीठि कोई शिरआदि अङ्गोंको नोच २ के खाते हैं व कोई विलक्षणरूप के ऐसे जीव हैं कि, जिन्हों के मुख सुई के मुवाफ़िक़ तीक्ष्ण हैं जिस मुख से उन अधर्मियों के अङ्गों को नोच २ खाते हैं और हे ऋषीश्वरो! किसी पापात्मा परस्त्रीगामी के समीप लोह की जलती हुई स्त्री आकर भोगदेने को तैयार होती है कि जिसके स्पर्श करतेही सब अङ्ग उसी क्षण में भस्म होजायँ और जिस स्त्री के समीप आतेही वह पुरुष भयभीत होकर इधर उधर भागता है व वह स्त्री उसके पीठ पीछे लगीहुई दौड़ती है व यह कहती है कि हे पापी! कहां भाग के जाता है हमको देख हम तेरी बहिन हैं तेरे पुत्र की स्त्री हैं तेरी मौसी हैं हे दुर्बुद्धि! तेरे मामा की स्त्री हैं तेरे पिता की बहिन हैं गुरु की स्त्री हैं भाई की स्त्री हैं मित्र की स्त्री हैं हम राजा की स्त्री हैं पुरोहित की स्त्री हैं अब क्यों नहीं पहिंचानता? हमारे धर्म को भ्रष्ट करके हमसे भजि के यहां से रसातल तक नहीं बचेगा हे मूर्ख! अब हम से क्यों भागता है? हे निर्लज्ज! जब हम तेरेसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करती रहीं कि, हमारे धर्म को न बिगाड़ो तब तो समझा नहीं अब कहां भागता है तब तो तैंने हमको घेरा अब हम तुमको घेरती हैं इसभांति जिस २ स्त्रीका भोग कियाहै वही रूप धार लोहमयी जलती हुई स्त्री पिछले कर्मों को कहि २ दौड़ती है और अनेक भांति के पाप निज २ रूप को धारण कर करनेवाले पुरुष को स्मरण कराय घेर २ के कहते हैं कि, प्रथम तो अनर्थ करने से

डरे नहीं अब क्यों भागते हो ? हम तुम्हारे किये अमुक २ पाप-कर्म हैं इसभांति निज नाम कहि २ लोह के मुद्गरों से मार २ के दुःख देते हैं जिसभांति पशुओं को गोप दण्ड देते हैं और हे ऋषीश्वरो ! व्याघ्र, सिंह, गर्दभ और शृगाल आदि रूपों को धारण कर कर्मरूपी राक्षस निज करनेवाले पुरुष को त्रास देते हैं कहीं तो पापीजनों को कोठरी में बैठाय ज़हर के धूम से व्याकुल करते हैं, कहीं अग्नि की ज्वाला में पटकते हैं, कहीं बड़े चोंचवाले गीधपक्षी से उनका मांस नोचाते हैं व कहीं तर-वार के तुल्य तीक्ष्ण पत्ते के तालवन में ले छोड़ देते हैं जहां छोड़तेही टुकड़े २ होकर गिरजाता है और हे ऋषीश्वरो ! असि-तालवन नरक के द्वार में बड़े २ भयानक यमदूत खड़े हैं जो पापियों के प्राप्त होतेही पकड़ २ लाल नेत्रों से क्रोधकर २ कहते हैं कि; हे पाप करनेवाले, दुष्टो ! जिस बल के भरोसे धर्म को भङ्गकर अधर्म किया है वह बल अब कहां है उसी की शरण में जावो अब हमारे वश हो यहां इच्छापूर्वक दण्ड दे शुद्ध कर मनुष्यलोक को भेजेंगे वहां नीचकुल में दरिद्रों के घर रोगिनी स्त्री में जन्म पावोगे व भोग दुर्लभ होगा सदा दुर्गतिरूपी अग्नि की ज्वाला में भस्म होगे इतना कहकर बड़ी २ चोंचवाले काक व गृध्र पक्षियों के आगे खड्ग से टुकड़े २ कर उनका मांस छोड़ते हैं और किसी को बड़े विषधर सर्प के आगे कर देते हैं कि जब सर्पने उसको स्पर्श किया उसी समय विषज्वाला से उनका देह भस्म होजाता है और हे ऋषीश्वरो ! किसी पापी की देह का चर्म उखेड़ के चींटियों के आगे रखदेते हैं कि, जिसके चारों ओर चींटी लिपट के मांस व रुधिर को काटि २ के खाती हैं व जिस यमपुर में कूप, तड़ाग और नदियां अनेक रुधिर, मांस, पूति, कफ, कृमि, नख और केशसे पूर्ण होरही हैं जिसमें पाप करनेवाले रात्रि दिन उसी में बहते डूबते उसी के भीतर क्लेश

सहते हैं व कहीं पापियों के ऊपर हाड़ की वर्षा कभी रुधिर की वर्षा कभी अग्नि से खौलते जल की वर्षा होती है जिस क्लेश से व्याकुल होकर सांस लेने की सावधानी नहीं रहती कहीं बांधे जाते हैं कहीं रोके जाते हैं कहीं काटे जाते हैं व कहीं मुसलों से कूटे जाते हैं इस भांति हाहाकार करते यमपुर में निज कर्मों को भोग करते हैं व निज २ कर्मों का स्मरण कर २ व्याकुल होते हैं ॥

एकसौपञ्चानबे का अध्याय ॥

नचिकेताजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! जो यमालय में तप्त, महातप्त, रौरव, महारौरव नाम नरक हैं और सप्तताल, कालसूत्र, अन्धकार, महान्धकार ये आठ बड़े २ घोर पाप करनेवालों के लिये नरक हैं इन्होंके क्लेशका यह वृत्तान्त है कि पहले से दूसरे में द्विगुण, तीसरे में त्रिगुण, चौथेमें चतुर्गुण, पांचवेंमें पञ्चगुण, छठेमें षष्ठगुण, सातवेंमें सप्तगुण और आठवें में अष्टगुण जीवों के लिये दण्ड दियाजाता है जब शरीरत्याग होता है तब यमदूत आकर पापीको यातनाशरीर में कर गले में फांसी डालि लोहके दण्डों से मारते हुये यमपुर को लेजाते हैं उससमय विना पुण्य के कोई उपाय क्लेश दूर करने का दूसरा नहींहै जिससे थोड़ा भी सुख होय व जिन विषयों से मनुष्य सुख को प्राप्त होता है उन्होंका सुख क्षणमात्रही में भङ्ग होता है जैसे शब्द का सुख कानों को, स्पर्श का सुख चर्म को, रूप विषय का सुख नेत्र को, रसका सुख जिह्वा को और गन्धका सुख नासिका को प्राप्त होताहै इन्हीं सुखों के लेश में बँधा जीव शरीर त्याग करनेसे जिस इन्द्रिय के वश होकर दुर्व्यसन में आयुष को बिताया है हे ऋषीश्वरो! उसी इन्द्रिय को यमपुर में दण्ड मिलताहै व क्षुधा तृषा करके व्याकुल क्षणमात्रभी चैन को नहीं प्राप्त होता देखनेमें उत्तम

निर्मल व ठंढे जल के बड़े २ सर कमलों करके शोभित व अनेक पक्षियों करके युक्त भरे हैं परन्तु पापियों के स्पर्श करतेही वेही सर अत्यन्त तपाये हुये होजाते हैं और क्षुधा के दुःख से यदि किसी भांति का भोजन भी मिला स्पर्श करतेही कृमियों करके युक्त जिसमें दुर्गन्ध आ रहीहै व सड़े मांस के तुल्य होकर उनको प्राप्त होता है और हे ऋषीश्वरो ! यमपुर में पापी लोग ऊपर सूर्य की ताप होनेसे व नीचे तप्तवालू होनेसे घबड़ाय व्याकुल होकर जब पुकार करते हैं कि हम जलते हैं दया करके हमें ठंढे जल में छोड़ो तब तो बड़े तीक्ष्ण अस्त्रों से उनकी देह का चर्म उखेड़ मांस के पिण्ड को खारी जल के कुण्ड में छोड़ देते हैं जहां गिरतेही मूर्च्छा प्राप्त होती है व बड़े २ विषम जलजीव उसे निगल के विष्ठा के रास्ते निकाल देते हैं व उनको उदर से निकलतेही फिर सजीव होकर ज्यों सावधान होना चाहा त्योंहीं फिर वही दण्ड होता है इसीभांति करीषगर्त व कुम्भीपाक नाम नरक में पापियों की दुर्दशा होती है और हे ऋषीश्वरो ! असिपत्रवन शृङ्गाटकवन और तप्तबालुक नाम नरक में अनेकभांति की दुर्दशा होती है कहीं टुकड़े २ काटिके कुत्ते व गीध को खिलाये जाते हैं कहीं कोल्हूयन्त्र में पेरने से जिसभांति तिल का तेल जुदा और खल जुदा होता है इसीभांति उन जीवों के मांस खल हो जाते हैं व रुधिर तेलके मुवाफ़िक़ न्यारा होजाता है और श्याम व शबल दो कुत्ते ऐसे दुःखके देनेवाले हैं कि जो उनके नेत्रों के आगे आया उसकी दुर्दशाकर नोच २ खाते हैं और उनके दांतों का स्पर्श होतेही मानों सर्प दृश्चिक के डसने सेभी अधिक पीड़ा प्राप्त होती है और वज्र के तुल्य कांटों करके युक्त शाल्मलीनाम वृक्ष में यमदूत पापियों को धरके खैंचते हैं उसी समय उनके अङ्ग सब जुदे जुदे होजाते हैं और हे ऋषीश्वरो ! यमपुर से जब पापी

को शीत पीड़ा देती है तो बरफ़ के कुण्ड में पटकते हैं व गरमी के दुःख में गरमजल के कुण्ड में लेके छोड़ते हैं और दैवयोग से जो २ अङ्ग पापियों के काटेजाते सो २ अङ्ग क्षणमात्र में फिर ज्योंके त्यों तैयार होजाते हैं और हे ऋषीश्वरो ! जो वैतरणी नाम नदी है कि, जिसमें सर्प चारों दिशा में विनोद कर रहे हैं और अग्नि की ज्वाला के तुल्य लहरी जिसमें उठरही हैं और शतयोजन तक तप्तबालुका जिसके दोनों किनारे है उसके मध्य जब पापीको लेकर छोड़देते हैं तो उसीसमय देखतेही मूर्च्छित होकर गिरपड़ता है और पचासयोजन की चौड़ी क्षारोदानाम नदी इसीभांति पापियों के दण्ड देने को वर्तमान है जो पांच योजन गहरी है जिसमें कीचड़ व दलदला इतनाहै कि जिसका कुछ प्रमाण नहीं और चर्म, हाड़, सड़ामांस इसीका कीच है तिसमें कोई डूबते हैं व कोई क्लेश पाकर तरते हैं यदि किसी भांति उस नदी से पार होकर किनारे गये तो वहां विषयुक्त वज्र के समान दन्तवाले मूसा अनेक चारों ओर से लिपट के मांस व चर्म खाकर हाड़मात्र छोड़देते हैं जब वायु लगी तो फिर मांस चर्म उत्पन्न होजाताहै इसीभांति कई कालतक नित्य रात्रि को मूषक खाते व दिनको फिर ज्योंके त्यों सब अङ्ग पूरे हो जाते हैं और हे ऋषीश्वरो ! उस स्थान से तीनयोजन दक्षिण संध्या समय के आकाशतुल्य स्वरूप धारण किये दशयोजन की छाया करके युक्त बटवृक्ष है जिसका नाम यमचुल्ली है जोकि तीनयोजन गहरी है जिसमें नित्य धूम से अन्धकार बना रहता है व अग्नि से प्रज्वलित रहती है जिसमें यम के दूत पापियों के करोड़ों गणों को ले २ छोड़देते हैं एकमास पर्यन्त उस चुल्ली में चारों ओर घूमि २ निजकर्म के फल को भोग करते भस्म होते हैं जिसके भीतर जीवों के पकजाने से बहि २ करके चरबी व मेद से शकुनिका नाम नदी उत्पन्न भई है उस चुल्ली के चारों

दिशा को घेरके भरपूर होरही है उस नदी से जो किसीभांति पापी पारभया तो सातगर्त अर्थात् कुण्ड ऐसे अगाध गहरे मल व मूत्र से पूर्ण हैं उनमें लेजाकर यमकिंकर पापी को पटकते हैं निजकिये पाप के फलरूप क्लेश को वहां पापी भोगता है और उन सातकुण्डों के आगे दश शूलकुण्ड हैं जिनमें पड़ते ही रोम २ शूल से बिध जाता है फिर तेरह कुण्ड कुम्भीपाक के हैं जिनमें यमदूत बड़े निर्दयी पापी जीव को शूल में छेदि २ सूखे कण्डों के अग्निकुण्ड में छोड़ के भूनते हैं एक २ कुण्ड में दश २ दिन अग्नि से बाहर निकलने नहीं देते इसीभांति तेरहों कुण्डों में भूनते हैं जब उन अग्निकुण्डों के क्लेश को भोगकर निवृत्तहुआ तो वहां से तीनयोजन दक्षिणदिशा में यमनदी है जिसमें तपता भया लाख का रस भरा है व पृथिवी वहांकी ताम्रकी है जिसके नीचे अग्नि जल रही है उसमें यम-दूत लेकर पापीको पटकते हैं वहां भस्म होनेपर बाहर निकाल देते हैं हे ऋषीश्वरो! जब कुछ विश्रामलिया तबतो अति शी-तल जल से पूर्ण हरे गहरे वनके भीतर वापी में छोड़ देते हैं वहां पापियों के लिये यमराज की बहिन उत्तम २ भोजन व मधुरजल देती है व वहां तीनरात्रि निवास होता है तिसके अ-नन्तर एक पाषाण के सौयोजन ऊंचे गलग्रह नाम पर्वत में ले-कर यमदूत पापी को बैठा देते हैं वहां अग्नि से तपेहुये जल की अखण्डधारा दिनरात्रि पापियों के ऊपर पड़ती है वहां भी यम की भगिनी दयायुक्त होकर भक्ष्य भोज्य देती है वहां भी तीनरात्रि निवासकर यमदूत भृङ्गारक नाम वन में लेजाते हैं वहां भ्रमर नाम कीट मच्छर व डंसे पापी के लिपट चारों ओर से काटते हैं और ऊपर से मांस व रुधिर की वर्षा होतीहै उस क्लेश को भोगि आगे पापी को यमदूत मायावन में लेजाते हैं वहां निज पुत्र, स्त्री, माता, पिता आदि प्रिय कुटुम्ब के मध्य

में लोह के मुँगरेसे व लोह के सोंटेसे भलीभांति कूटते व पीटते हैं हे ऋषीश्वरो ! यह कहते हैं कि; रे दुष्ट ! इन्हीं कुटुम्बों के लिये तैंने सारा जन्म धर्म को छोड़ अनेक अधर्म किया अब ये सब तेरी दुर्दशा देखते हैं व रक्षा क्यों नहीं करते इसभांति कहि कहि सब कुटुम्ब के देखतेही भलीभांति दण्ड देते हैं उस समय जब पापी के ऊपर कोड़े लट्ठी मुँगरे मुष्टिप्रहार और विषधरसर्पों से दंशन आदि नानाविध क्लेश देते हैं तो वह निज प्यारे कुटुम्ब के लोगों को पुकार २ रोता है व मूर्च्छा को प्राप्त होता है इसीभांति हे ऋषीश्वरो ! निज किये हुये पापकर्म के फल को क्रम २ से यमपुर में परवश होकर भोगता है और सब यातना भोगि अन्त में वृक्षयोनि में उत्पन्न होकर बहुत कालरहि अन्त में पशुयोनि में जन्म पाता है इस भांति हज़ारों वर्षों में सबभांति के उत्तम व अधम पशुओं के योनि दुःख को भोगि अन्त में प्रस्वेदके जीव वस्त्र में रहनेवाली योनि में बहुत काल रहता है फिर पक्षीयोनि में जन्म पाता है सब जाति के पक्षियों की योनि में दुःखभोगि गौ की योनि में जन्म ले बहुत काल दुःख भोगता है उसे भोगि मनुष्ययोनि में चाण्डाल के घर जन्म पाताहै उसे भोगि शूद्र होकर क्रम से वैश्य क्षत्रिय हो अन्त में ब्राह्मण कुल में जन्म लेता है और हे ऋषीश्वरो ! ब्राह्मण होनेपर भी पूर्व कर्म के अनुसार कोढ़ी, काना, बहरा, लूला, लँगड़ा, सर्वमांस खानेवाला, मद्यपीनेवाला, मुख दुर्गन्ध युक्त व कालेदांत काले व फटे नखवाला मनुष्य होता है सो हे ऋषीश्वरो ! जिसने पूर्वजन्म में राजबध, ब्राह्मणबध, गोबध, मातृबध और पितृबध आदि घोरपाप किया है उसके अङ्गोंमें कहेभये लक्षण जन्म लेतेहीसे दीखते हैं और सारा जन्म अन्न के व वस्त्र के दुःख से पूरा होता है नानारोग से शरीर सुख नहीं पाता और ऐसे अधर्मीपर जे दया करते हैं वे भी उसीके पापोंसे

थोड़े काल में क्लेशित होजाते हैं इसलिये पापी के सम्बन्ध से सदा अलग रहना चाहिये ॥

एकसौछानबे का अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं, हे शौनक! इसभांति यमपुर का वृत्तान्त कहि नचिकेता कहने लगे कि; हे ऋषीश्वरो! और भी यमपुर का एक अद्भुत वृत्तान्त वर्णन करते हैं सो श्रवण करो कि जिस समय हम यमपुर में गये उसी समय वहुते यमदूत पापियों के दण्ड देने से थकित हो ढीले से जाकर चित्रगुप्त के समीप हाथ जोड़ कहनेलगे कि; हे भगवन्! मृत्युलोक के पापियों को दण्ड देते २ हमको वड़ा श्रम हुआ अब इसलिये और दूतों को भेजना चाहिये व हमको दूसरे कार्य के लिये आज्ञा हो सो करें हे महाराज! जब तक हम सावधान न होयँ तबतक यह कार्य औरों से लीजिये यह दूतों का वचन सुनि बड़े क्रोध में युक्त होकर उसांस भर चारों दिशा में देखने लगे उस समय थोड़ी दूर में क्रूरस्वरूप धारण किये एक पुरुष बैठा था उसकी तरफ़ ज्यों देखा त्योंहीं चित्रगुप्त के मनका अभिप्राय समझ के बड़े क्रोध से हाथ जोड़कर निजगणों के साथ अस्त्र धारणकर उन दूतों के मारने में प्रवृत्त भया उस समय हे ऋषीश्वरो! यमदूतों के साथ उस मन्देहनाम राक्षस का घोरयुद्ध होनेलगा तब तो सब दूत इकट्ठे होके हाथ जोड़कर चित्रगुप्त से प्रार्थना करने लगे कि; हे महाराज! जो थके हों व भूंखे हों अथवा रोग से पीड़ित हों उनके लिये विचारवान् धर्मात्मा इसभांति क्रोध नहीं करते इसभांति दूत सब पुकार रहे थे कि मन्देह के गणों ने चारों दिशा से दूतों को घेरकर फेर मारना प्रारम्भ किया उस समय परस्पर निज २ अस्त्रों के प्रहारों से मुक्कों से दांतों से व नखों से नाम को पुकारि २ बड़ा युद्ध किया उस समय ईर्षावश

होकर परस्पर क्रोध से एक एक को छिन्न भिन्न करडाला तब तो हे ऋषीश्वरो ! यमदूत मन्देहनामक राक्षसों के गणों से हार के निज माया से अन्धकार को रचि अन्तर्धान हो ज्वर की शरण में जाय प्राप्त भये और हाथ जोड़ नम्र होकर यह कहने लगे कि; हे भगवन् ! चित्रगुप्त की आज्ञा से मन्देह राक्षस हमारे सब को मार २ के क्लेश देरहे हैं सो इन्हों की भय से पीड़ित हो आपकी शरण में आये हैं आप शरणागत जान के हमारी रक्षा करें यह यमदूतों की दीनवाणी सुनि दयायुक्त हो क्रोधकर बड़े प्रबल व भयंकर निजगणों को आज्ञा दी कि जाके मन्देह राक्षसोंको समझाके यमदूतों के साथ युद्ध का विश्राम करादो या उनको दण्ड दो यह निजस्वामी ज्वर का वचन सुनि बड़े वेग से जा राक्षसों के गणों को मार पीट समझाय युद्ध से निवृत्त किया तब दोनों सावधान होकर निज २ स्थान को गये व ज्वर भी इस वृत्तान्तको सुनि सावधान होकर यम महाराज के समीप गया उस दशा को देखि यमराज ज्वर से पूछनेलगे कि; आप के नेत्र क्यों ललोहे होरहे हैं व मुख में पसीने के विन्दु आये हैं क्या कहीं संग्राम तो किसी से नहीं भया और तुम्हारे साथ संग्राम में खड़े होने की किसको सामर्थ्य है क्योंकि तुम इकल्ले ही चराचर लोक को शिक्षा देसके हो हे ज्वर ! तुम्हारे सहाय होने से मृत्यु के साथ सब लोक का प्रलय हम करते हैं इसलिये निज वृत्तान्त को कह सुनावो इसभांति यमराज का वचन सुनि आदिही से ज्वर ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया उसे सुनि यम-राज ने कहा कि जो भया सो ठीक है अब यहां से जाय युद्ध का विश्राम करो जो राक्षसों के समूह साठ कोटि संग्राम में मारे गये हैं वे सब अजर व अमर होकर निजस्थान को जावें इतना कहि दूतों को बुलाय चित्रगुप्त के साथ मिलाय परस्पर मैत्री करायदिया तबतो यमदूत पहले के मुवाफ़िक़ हाथ जोड़कर

चित्रगुप्त से कहनेलगे कि, हम आपके आज्ञाकारी हैं जो आज्ञा दोगे सो सब वैसेही होगा यह कहकर दूत वहां से आय यमराज व मृत्यु की प्रार्थनाकर निज अपराधों की क्षमा कराने लगे ॥

एकसौसत्तानवे का अध्याय ॥

नचिकेता कहते हैं कि, हे ऋषीश्वरो! और भी एक वृत्तान्त अद्भुत वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो जिस समय यमदूतों ने यमराज व मृत्यु की प्रार्थना की उसीसमय यमराज की आज्ञा से चित्रगुप्त ने दूतों को बुलायके आज्ञा दी कि जिन पापियों को आजतक अनेक भांति के दण्ड दियेगये हैं उनके कर्मों का विचार करके अब फिर इसभांति दण्ड दो कि जो जिस दण्ड का अधिकारी हो जो श्यामदन्त हैं आचारभ्रष्ट पापात्मा निर्दयी घृणाहीन भक्ष्याभक्ष्य करनेवाले कुत्ता के बध करनेवाले पिता का बध माता का बध और गोबध करनेवाले पापियों को घोरशाल्मली नाम वृक्षके कांटों में धर खैंच अङ्ग २ को विदारण कर तपे भये तेल के कड़ाह में पकाय फिर शहद के कड़ाह में पकावो वहां से निकाल जलते पानी के कुण्ड में पटको फिर तपे ताम्र के खल्ल में छोड़के भलीभांति पीसो खल्ल से निकाल कर अग्निकुण्ड में छोड़ो हे दूतो! इसभांति इन पापियों को दण्ड दे शुद्धकर मनुष्य की योनि में डार ऋण से पीड़ितकर सन्तानहीन करो और हे दूतो! जिन्हों ने किसी की शय्या व वस्त्र का हरण कियाहै व अग्नि से घरों को जलाया है उनको शीघ्र वैतरणी में छोड़ दो और जिन्होंने तीर्थों की निन्दा वा अनादर किया है उनको व जिन्हों ने झूठी गवाही किसी बात की दी है जो मिथ्यादोष लगाकर चुगुली करते हैं अथवा किसी वार्ता में झूठी कहके सांचे मनुष्यों का कार्य बिगाड़ा है उन्होंके कानों में व नेत्रों में जलताहुआ लोहेका कील इसभांति

ठोंको जिससे दोनों कर्ण व नेत्र किसी प्रयोजन के लायक न रहें व जन्मान्तरमें अन्धे व बहिरे करो और जो ग्राम के पुरोहित हैं पाखण्डी हैं विना ज्ञान पितृदेवयज्ञ कराते हैं उन्हें दृढ़ बन्धन से बांध भूखे व प्यासे सदा रहनेदो व जन्मान्तर में दरिद्रीकर शूद्रों के सेवक बनावो हे दूतो ! जिसने मिथ्या साखी कही हो उस दुष्ट की जिह्वा बड़ी शीघ्रता से काटलो व अगले जन्म में गूंगा करदो जिससे बहुतकाल बोलने का सुख न पावे और हे दूतो ! जिसने गम्य अगम्य स्त्री का विचार नहीं किया कामवश होकर मैथुन किया है उसके लिङ्ग को काटके खारी के कुण्डमें छोड़के फिर अग्नि में छोड़ दो और जिसने लोभवश होकर निज हिस्सेदारों को मारके सबका भाग लेलिया है उसके अङ्गों को तिल २ काटके कुत्तों को खिला दो और जिसने सुवर्ण की चोरी किया है व कृतघ्न है उसको ब्रह्मघातियों के बराबर दण्ड दो उस के मांसको व चर्म को निकाल हड्डीको तोड़ खारी में मिलाय अग्नि के कुण्ड में छोड़दो व उस दुष्ट को व निन्दक को व्याघ्र सिंह आदि जीवोंके लिये भोजनको दो और जिन्होंने ऋण लेकर नहीं दिया उनके रोम रोम में बड़े तीक्ष्ण लोहके कांटे ठोंकदो व अग्नि में पचाय खारी जल के कुण्ड में लेकर पटको व जिसने पशुओं का पालन करके जल व चारा नहीं दिया उस पापी को और जिसने दान नहीं दिया व्रत नहीं किया व सदा वेदको बेंच २ धन इकट्ठा कियाहै और जिसने जल पीने के समय किसी जीव को विघ्न किया है व अन्नहरण भोजनसमय में किया है उसको भलीभांति लोहेके मुसल से कूटि कूटि क्षारकुण्ड में छोड़ो फिर कोड़ों से मार २ उनके चर्म को निकालकर लोह के जलते कड़ाह में पटको भोजन के लिये अन्न व जल नहीं दिया और जिसने विश्वास देकर किसी को मारा होय उसे शीघ्र अग्नि के कुण्ड में छोड़ो और ब्राह्मण का अंश जिसने

हरण किया होय उसको भी अग्नि में छोड़ के पकावो और कई हज़ार वर्ष अग्नि के बाहर न होनेपाये यदि वहां शुद्ध होजाय तो कीट व पक्षी की योनि में छोड़दो उस योनि भोग करने के अनन्तर हज़ारों वर्ष के बाद चाण्डाल व बधिक के कुल में जन्म दो और हे दूतो! जिन्होंने राजा का बध किया हो ब्राह्मणबध किया हो सुवर्ण की चोरी की हो मद्यपान किया हो उन पापियों को दण्ड से शुद्धकर क्षयरोग से युक्त करो और गोबध करनेवाले को कूटशाल्मली नरक में लेजाकर दण्ड दो फिर पूति के कुण्ड में क्लेश को दो यदि चतुर्थांश हत्या का प्रायश्चित्त भोगनारहे तब मृगयोनि में जन्म दो जिसमें जहां रहे वहां कभी सावधान न हो और जो पिता का बध करनेवाला है उसे शत वर्ष पर्यन्त हमारे बड़े २ कुत्ते नोच २ कर खायँ फिर तेल के कड़ाह में धीरे २ पकावो इसभांति पवित्र कर मनुष्यगर्भ में जन्म पाय व गर्भही में बारम्बार मृत्यु को प्राप्त हो इसभांति दशबार गर्भ में मरकर फिर जन्म ले उदररोग और क्षयरोग दोनों से पीड़ित मनुष्य आयुर्बल भोगे और हे दूतो! जिसने मित्रों से विश्वासघात किया हो उसे लोह के कोल्हू में छोड़के तिल के मुवाफ़िक़ पेरो फिर दोसौ वर्ष अग्नि के मध्य में राखो फिर कुत्ते की योनि में जन्म दो उस जन्म में भी रोग से कभी सावधान न होय और हे दूतो! जिसने ब्राह्मण का धन हर लिया होय व लोन की चोरी किया होय उसे पांचसौ वर्ष पर्यन्त विष्ठा का कृमि करदो फिर उसे बाज़नामक मांस खानेवाला पक्षी बनावो फिर जङ्गली हिंसक जानवर जिसे भेड़िया कहते हैं सो बनावो और जिसने किसीके घर को अग्नि से भस्म किया होय उसे अग्नि को प्रज्वलित करके उसमें छोड़दो उससे पवित्र होनेपर जङ्गल में मृगा बनादो फिर मनुष्ययोनि में ठगजाति कर अनेक जीवों के मारनेमें युक्त करो और जिसने किसीका धन हर लिया हो उसे

कुम्भीपाक नरक में गिरावो उसके अन्त में गर्दभ की योनि में जन्म दो फिर विष्ठा खानेवाला ग्रामशूकर बनावो इस भांति दश जन्मतक अनेकभांतिकी दुर्दशाको भोगकर मनुष्ययोनि में चौर-वृत्ति से व ठग डाकुओं की वृत्तिसे क्लेश भोगता उत्तम मनुष्यों में निन्दा को प्राप्त होय और हे दूतो ! जो पूर्वजन्म में ठगवृत्ति से मनुष्यों को निर्जनस्थान में विष देकर वा फांसी देकर मार डाले उसको अग्निकुण्डमें ले नीचे शिर ऊपर पैर कर लटकाय के अग्निज्वाला में भस्म करो इसभांति सौवर्ष तक क्लेश देकर अन्त में शूकरयोनि में जन्म दे सातजन्म उसी योनि में क्लेश दे मनुष्ययोनि में जन्म दो जो झूठी गवाही देनेसे मनुष्यों में निन्दित हो अनादर होने के दोषसे रात्रिदिन संताप पावे जिससे कहीं बैठने की जगह न मिले जिधर जाय वहांहीं धिक्कार से माराजाय और जो मिथ्या बोलनेवाला व क्षेत्र हरनेवाला पापी है उसको एक लक्षवर्ष जलते तेलके कड़ाहमें रख अन्त में पक्षी की योनि में जन्म दो जिससें शत वर्ष पक्षीयोनि का क्लेश भोगि अन्त में भिक्षावृत्तिवाले मनुष्य के घर में जन्म दो जो यावज्जीव अन्न व वस्त्र के दुःखमें व्यतीत होय इस भांति मनुष्ययोनि में जन्म ले २ कभी पंगुला कभी अन्धा कभी बहिरा कभी मूक कभी काणा और कभी क्षयरोग युक्त हो वारम्बार क्लेश को पावे हज़ारों जन्म तक सुख का लेश भी न प्राप्त होय भूमिका हरनेवाला और हे दूतो ! भूमि हरनेवाले मनुष्य को प्रथम तो एककोटि वर्ष यमयातना के भोग में रक्खो जिस २ भांति जितने दण्ड देने के स्थान हैं उनमें बारम्बार दण्डदो फिर बिलार की योनि में जन्म ले मनुष्य की योनि में जन्म पाय पक्षियों का मारनेवाला बधिक होय बारम्बार बधिकयोनि से निवृत्त न होने दो और बधिक को नरक में ले जाकर तीक्ष्णतुण्ड नाम गृध्रोंसे उसकी देह को विदीर्ण करावो फिर कुक्कुट के घर जन्म दो तिसके अन-

न्तर मशक का जन्म पावे फिर डंसे का जन्म दो इसभांति हज़ारों जन्म भोग करने के अनन्तर मनुष्य जन्म पावे और हे दूतो! जिसने शूकर का बध वा महिष का वध किया होय उसे नरक में लेजाय बड़े तीक्ष्णशृङ्गवाले महिषों से प्राण हरणकर महिष का जन्म दो उसके भोग करने के अनन्तर शूकर का जन्म पावे तिसके बाद कुक्कुट का जन्म फिर शशा का जन्म भोगि जम्बुक का जन्म पाय अनेक जीवोंका मांस भक्षणकर मनुष्योंमें व्याध के घर जन्म पावे हे दूतो! जिन्होंने निज उच्छिष्ट अर्थात् जूंठा अपने बड़े श्रेष्ठ को दिया है उस पापी को तीनसौ वर्षतक अग्नि के मध्य में रक्खो पाछे शूद्र के घर में जन्म पावे जिसमें सारा जन्म जूंठा खाते खाते व्यतीत होय और जो स्त्री उत्तम कुल की निजधर्म को व निजपति को त्यागि और पुरुष को जाय प्राप्त होती है उस दुष्टा व्यभिचारिणी को तपे भये लोह के सात पुरुषों से भोग करावो जिससे उसके अधर्म करने का फल उसे मालूम होय इसभांति सातों जलते भये लोह के पुरुष दिन रात्रि उस स्त्री के साथ बारबार मैथुन करें जिससे उसकी देह भस्म होय इसीभांति एकहज़ार वर्ष बीतने पर कुतिया का जन्म पावे जिसके पतियोंका ठिकाना न रहे बाद दश जन्म शूकरीका पावे अन्त में मनुष्यजन्म पाय भाग्यहीन वेश्या होकर बारम्बार क्लेश को भोगे और हे दूतो! जिसने अनेकसेवकों को वृद्ध होने पर भोजन व वस्त्र देनेके कारण त्यागदिया है उसे रौरवनाम घोर नरक में लेजाकर सब भांति क्लेश को दो इसभांति एक हज़ार वर्ष उस दुष्ट को क्लेश दे चोरकर्मवाले मनुष्य के घर में जन्म दो उसे भोग सर्पयोनि में जन्म पावे उसे भोगि नपुंसक का जन्म पाय अन्त में शूकर हो मेढ़ा का जन्म भोगि फिर हाथी का घोड़े का कुत्ते का गीदड़ का शूकर का और बगले का इस भांति हज़ारों वर्ष इन जीवों का जन्म दुःख भोगि मनुष्यगर्भ में

जाकर पांचबार गर्भही में मृतक हो फिर पांच बार जन्म लेकर पांचवर्ष की अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हो फिर तीनबार युवावस्था में अपमृत्युको प्राप्त होकर यशहीन लोकमें निन्दित होय॥

एकसौअट्ठानबे का अध्याय॥

नचिकेता कहतेहैं कि, हे ऋषीश्वरो! और पापियों के लिये जो चित्रगुप्त ने आज्ञा दी है सोभी श्रवण करो चित्रगुप्त कहते हैं कि, हे दूतो! जो मनुष्य शील व नियम करके हीन हैं संपूर्ण जन्म में पापही कर्म कियाहै व पापियों के संग में निज आयुर्बल को व्यतीत किया है और राजद्रोही गुरुद्रोही इन अधर्मियों को और जो विश्वास किसी का नहीं करते सबसे शङ्काही करतेहैं व जीवों की हिंसा में प्रसन्न रहतेहैं और खेती का अनर्थ करतेहैं और किसी जीव के अण्डकोष को दूरकर नपुंसक बनाते हैं और घरों को अग्नि से जलानेवाले और पाखण्डी इन अधर्मियों को असंख्य वर्ष घोरनरक में लेकर नानाभांति के क्लेश को दो जब निज पाप के फल को भोगलेवें तो मनुष्य के जन्म में अनेकभांतिके रोगों से पीड़ित करो जिससे अल्पायुष् होके शीघ्र मृत्युवश होवें किसीकी मृत्यु गर्भही में हो और किसीकी जन्म लेने बाद किसीकी रोग से किसीकी अस्त्र से किसीकी विष से किसीकी जल से व किसीकी व्याघ्र, सिंह आदि से मृत्यु हो और जन्म लेनेसे माता पिता और मित्रआदि किसीका सुख न प्राप्त होय इन पापियों को और जिसने विष देकर जीवों का प्राण हरण किया है नगरों को अग्नि देकर भस्म किया है गर्भपातन किया है और शूली देनेवाला चुगुल व मिथ्यादोष देनेवाले गौ, हाथी, गधा, ऊंट और महिषआदि इन जीवोंके मांस चर्म बेंचनेवाले पापियों को नरक में लेकर पूरा दण्ड दो जिससे फिर इसभांति का पाप न करें जब नरक भोगलेवें तो मनुष्य

जन्म में लूले लँगड़े अङ्गभङ्ग दरिद्री हो बारम्बार दुःखको प्राप्त हों यदि सबअङ्ग भी होयँ तौभी निज पाप के उदय होने से राजकोपसे नासिकाच्छेद कर्णच्छेद और हाथ व पगच्छेदन होने से अङ्गभङ्ग होकर जीवें और यावज्जीव उन पापियों को क्लेशही में बीते बारम्बार मानसी दुःख शरीर का दुःख कभी न दूर होय ऐसे पापी, नेत्रहीन, कर्णहीन, हस्तहीन, पगहीन और शिरकी पीड़ा, उदरपीड़ा, नखपीड़ा, नेत्रपीड़ा आदि घोर क्लेश में सदा युक्त रहें कोई कुबड़े, लँगड़े, जलोदर रोग करके पीड़ित कुष्ठ श्वेतकुष्ठ कामी क्रोधी नपुंसक प्रमेही पिलहीवाले नानाभांति के रोगों से पीड़ित सदा रक्खो जिन्होंने वचन से चारभांति के पाप किये हैं प्रथम हास्य में मिथ्या दूसरा चित्त में मिथ्या तीसरा गुप्त मिथ्या व चौथा प्रकट मिथ्या भाषण करनेवाले मनुष्यों के चित्त को पीड़ा के देनेवाले स्नेहियों के स्नेह भङ्ग करानेवाले मर्मभेदी वचन कहनेवाले और जिन्हों को किसीके गुण की प्रशंसा सुनने में दुःख होता होय इन दुष्टों को लेजाय सूचीमुख नरक में छोड़ो वहां बहुतकाल दण्ड दे शुद्धकर पक्षियों की जाति में जन्म दो यदि सबपक्षियों की जाति में जन्म ले क्लेश भोगलेवें तो जङ्गली मनुष्य के घर में जन्म दो जिस जन्म पानेसे योग्य अयोग्य का ज्ञान न रहे और लोक में आदर भी न पावें और हे दूतो ! जो पहले जन्म में सब मनुष्यों के साथ वैर किया है उन क्लेश देनेवालों को और राजा के नौकर होकर जो ज़बरदस्ती निजलोभ के लिये जीवों को निरपराध दण्ड देते हैं ग़रीबों को अनेकभांति के दुःख देकर उनके पशु व धन ले लेतेहैं और जो चांदी में सुवर्ण में दूसरी धातु मिलायकर खोटा करदेते हैं और किसीका धन रख के हर लेते हैं इन पापियों को घोरनरक में लेजाय नानाभांति के क्लेश से पीड़ितकर पापक्षीण होनेसे मनुष्यजन्म में गर्भ से लेकर जन्मभर क्लेशही में रक्खो

और हाथ पग से हीन नेत्र से हीन वातरोग करके पीड़ित करो और स्त्री का सुख किसी समय न प्राप्त होय यदि स्त्री भी प्राप्त होय तो कलह करनेवाली महादुष्टा तत्रापि संततिहीन सदा रक्खो और हे दूतो ! राजदूतोंको तो सबभांतिके दण्ड से पीड़ित कर गुणहीन बहुत से कुटुम्बवाले घर में जन्म दो जहां सब के बीच निरादर सब कुटुम्ब का उच्छिष्टभोजन प्राप्त होय और जिस राजसेवक ने गरीबों को पीड़ा निरपराध दिया होय उनको पशुओं के पालक बनादो जिसमें सारा जन्म पशुओं के साथ व्यतीत होवे और जिसने पूर्वजन्म में और किसी की स्त्री को घर में रखलिया होय और वर्णसंकर सृष्टि के करनेवाले कुलधर्म के नष्टकरनेवाले और शील संतोष पवित्रता आदि गुणों करके युक्त मनुष्यों का धर्म जो जबरदस्ती अधर्म का उपदेश करके छोड़ाय देते हैं इन पापियों को बहुतकाल नरक में उग्र दण्ड दो फिर मनुष्यों में चाण्डालयोनि में जन्म दे अनेकभांति के दुःख करके युक्त करो और हे दूतो ! जिन पुरुषों ने किसी जाति की स्त्रियों के मैथुन करने में विवेक नहीं किया हो सदा वेश्याही के संग में अवस्था व्यतीत किया हो जिसने मद्य बनानेवाले की स्त्री का भोग किया हो अथवा स्त्रियों के कमाये धन से शरीर का पालन किया हो रात्रिदिन स्त्री के विना दूसरे पदार्थ में जिसका चित्त न लगा होय उन पापियों को नरक में लेजाकर घोरदण्ड से शुद्ध कर कृमिभक्ष नाम नरक में छोड़ दो फिर अग्नि के कुण्ड में बारम्बार भस्मकर क्षारनदी में डुबाय दो इसभांति हमारी आज्ञानुसार सब पापियों को बराबर दण्ड दो ॥

एकसौनिन्नानबे का अध्याय ॥

नचिकेता कहते हैं कि, हे ऋषीश्वरो ! उसीसमय चित्रगुप्त की आज्ञा और भी हमने श्रवण किया है सो सावधान होकर

श्रवणकरो चित्रगुप्त पापियों को देखि २ के एक एक से यह कहते हैं कि इस पापी को क्यों लायेहो ? इसका पाप निवृत्त नहीं भया लेजाकर दण्ड दो क्योंरे अधर्म्मी! जाकर पाप का फल भोग अरे तू लज्जितसा नीचे क्यों देखता है ? अभी बहुतकाल नरक भोगना पड़ेगा व इसको जहाँसे लेआये हो वहांही को लेजाव और इस पापी को थोड़ासा दण्ड क्यों देतेहो ? बड़े दण्ड देने लायक़ है हे दुष्ट ! तू क्या कहता है कि हमारा इस स्त्री के साथ विवाह भया है अब उस झूठे कहने का फल भोग और क्योंरे अधर्मी ! तू मनुष्यों में ऊर्ध्वरेता ब्रह्मचारी कह २ के पतिव्रता स्त्रियों का धर्म लिया है सो नरक बासकर और हे अधर्मी ! तपस्वी का रूप धार स्त्रियोंको शिष्यकर कन्याशब्द कह २ उनके रक्षा करनेवालों को छल २ स्त्रियों का गुप्तमें धर्म नष्ट किया अब उसका फल कुम्भीपाक का भोगकरनापड़ेगा और क्यों रे पापी ! क्या कहता है कि यह स्त्री पतिव्रता है इसे मैं निजभगिनी के तुल्य जानता हूं क्या तू कहता है कि, मैं बालक हूं अभीतक संसार सुख का मुझे ज्ञान नहीं है अरे नीच ! क्या कहता है कि हम जलशयन करते हैं तपस्वी हैं फलाहार करते हैं व ऊर्ध्व-बाहु हैं हमको अधर्म न लगावो इस भांति कहि २ लोक में स्त्रियों का धर्म नष्टकिया है अरे ! तू शीघ्र सर्पकी योनि में जा अरे पापी ! तू व्याघ्र हो जन्मले अरे पापी ! तू बिच्छू हो तू जल में ग्राह जन्म ले तू कृमि हो अरे तू रोगी हो तेरे अतीसार होय तू भोजन के अन्त में छर्दिरोग युक्त हो तुझे कर्ण से किसीका शब्द न सुनपड़े तू दुष्ट है जा नामरोग से मृत्यु को प्राप्त हो दुष्ट तू सदा ज्वररोग से पीड़ा को प्राप्त हो अरे ! तू जल में मकर हो तेरे सबअङ्ग वातरोग से युक्त हों तू जन्म ले सदा पागल होकर व्यतीतकर व तेरे को सदा मिरगीरोग पीड़ा देवे तू पैरों से पंगुलारह तेरे जलोदरनाम रोग होय और यह पापी पेटभर

अन्न कभी न पावे जिससे सदा भूंखे मरे हे पापियो ! जाय नरक में निज २ किये कर्म का फल भोगो इसभांति चित्रगुप्त एक एक पापी को देखि २ धर्मराज की आज्ञा को सुनाय २ नरक के लेजाने की आज्ञा देते हैं और किसी को एकदिन किसीको दो दिन किसीको मास किसी को वर्ष और किसीको युग और किसी को कल्पभर नरक भोगने दो इसभांति निज २ पाप के अनुसार दण्ड दो कम ज़्यादा किसीको न हो और इन पापियोंके दण्ड देने में आलस्य व दया किसीके लिये न करना हे दूतो ! इन्हों की दीन वाणी को नहीं सुनना और ब्राह्मणों के समीप ऋषियोंके समीप और पतिव्रता स्त्री के समीप नहीं जाना इनको यातना घर में लाने को हमारी आज्ञा नहीं है हे ऋषीश्वरो ! इसभांति चित्रगुप्त की आज्ञा दूतों के लिये श्रवण कर फिर जब चलनेका विचार किया उससमय जो २ निजदूतोंसे चित्रगुप्तजी ने कहाथा सो श्रवण करो ॥

दोसौ का अध्याय ॥

नचिकेता ऋषि कहते हैं हे ऋषीश्वरो ! फिर चित्रगुप्त कहने लगे कि; हे दूतो ! इन पापियों में इसको भय दो व इसको स्वर्ग में लेजावो इसे कीट बनादो इसे रीछ बनावो इसे छोड़ दो इस को हाथी बना दो इसे परमगति को प्राप्तकरो इसे इसके पिता पितामह आदिके समीप भेज दो और यह जो क्लेश से रोदनकर रहा है इसे नरकमें लेजाकर पटको और इस पापी के अङ्गों को करोत नामक अस्त्र से दो टुकड़े कर रौरव में छोड़ो जिससे यह घोर जीवों के भोजन में प्राप्त होय और इनपापियों ने पाप भोग लिया इनको बहुत शीघ्र छोड़दो और ये जो आगे खड़ेहैं इन्हों ने धर्मको विपत्ति में व संपत्ति में भलीभांति रक्षा कियाहै इस लिये नरक के योग्य नहीं हैं इनको शीघ्र स्वर्ग को लेजाव और

इस जीवको धन सम्पन्न उत्तमकुल में लेजाकर जन्म दो जहां किसीभांति का क्लेश न मिले और इसने संग्राम में शत्रुओं के सन्मुख ब्राह्मण व गौकी रक्षा के लिये शरीर त्यागकिया है इस लिये इसे इन्द्रके समीप अमरावतीपुरी को शीघ्र लेजावो वहां विमान में बैठि सबभांति के सुख को भोगकरता अप्सराओं करके सेवा को प्राप्त एककल्प निवासकर पृथिवी में जन्म लेकर अखण्डराज्य भोगि दानधर्मयुक्तहो व अन्त में विष्णुभगवान् के स्मरण करनेसे मुक्तहोकर परमधामको जावे और हे दूतो! इसने इतना पुण्य किया है कि जिसका कुछ ठिकाना नहीं इस लिये बहुत शीघ्र इसे अनेकभांति के सुगन्धपदार्थों से व भूषणों से भूपितकर चामर व छत्र से पूजित बड़े सत्कार पूर्वक तुरही व नगाड़े बजाते उत्तम विमान में बैठाय इसे इन्द्र के ऊपर ले स्थापित करो जिसमें इसे अनन्तसुख प्राप्तहोय व इसके आगमन को हे दूतो! इन्द्र देखरहा है इसके पुण्य से तीनोंलोक प्रकाशित होरहे हैं इसलिये यहां का रहना ठीक नहीं है बहुत शीघ्र स्वर्ग में पहुँचावो जाय स्वर्ग में तब तक निवास करे जब तक इसके पुण्य का लेश मनुष्यलोक में रहे अन्तसमय मनुष्य लोक में सार्वभौम महाराज के घर उत्तम स्वरूप व गुणकरके युक्त उत्पन्न हो आरोग्य सबका प्यारा बहुतकाल राज्यकर व अनेकयज्ञकर स्वर्गवास को प्राप्त होय चित्रगुप्त कहते हैं हे दूतो! इसने पुण्यभूमि में रत्न का दान किया है इसलिये विमान में बैठाय दिव्यरूप धारण कराय अश्विनी कुमारके समीप लेजावो और इस पुण्यात्मा ने बहुत यज्ञ किया है और बड़ी भक्ति से ब्राह्मणों को दानदिया है व फल कुछ नहीं चाहा इस लिये इसे विष्णुलोकमें शीघ्र पहुँचावो और इस महात्मा ने बड़ी दूधवाली गौवें बछड़ाओं के साथ स्वर्णशृङ्गी रौप्यखुरी सुवर्णमाला व वस्त्र से भूषित उत्तम तपस्वी वेदविद ब्राह्मणों को अनेक

बार दिया है इस पुण्य से शीघ्र इसे उत्तमविमान में बैठाय रुद्र-लोक में लेजावो वहां कोटिकल्प निवासकर अन्त में ऋषियों के कुल में जन्म हो और विधिपूर्वक तपकर शिवलोक को प्राप्त होय जिसमें फिर मनुष्यलोक में जन्म न होय और हे दूतो! इस धर्मात्मा को पितृलोक में लेजावो वहां बहुतकाल सुखपूर्वक निजपितरों के समीप निवासकरे व इस महात्माने पृथिवी का दान उत्तम ब्राह्मणको दिया इसपुण्यसे इसेब्रह्मलोकमेंलेजावो॥

दोसौएक का अध्याय॥

नचिकेता जी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! और भी जो चित्रगुप्तजी के मुखसे सुना है सोभी सावधानहोकर श्रवण करो हे दूतो! इस पुण्यात्मा ने यावज्जीव अभ्यागतों का सेवनकिया है व दयायुक्त हो सबको एकभांति का अन्न बड़ीप्रीति से भोजन कराया है आप सबको भोजन कराके अन्त में सदा भोजन किया है इसे बहुत शीघ्र छोड़ो हम सहित काल व मृत्यु के इसकी पूजा कियाचाहते हैं इसवास्ते उत्तम सुवर्ण का सिंहासन ल्यावो व गन्धर्बों को आज्ञा दो कि इसके उत्तमयश का गानकरें और इस लोकमें जो कुछ उत्तमपदार्थ होय और इच्छाकरे सो सब हाज़िर करो और जितना धन व रत्न चाहे सो सब दो व जब तक स्वर्ग से विमान आवे तबतक हमारे समीप बराबर आसन पर सुख पूर्वक बैठे इसके समीप पापी न आनेपावे और इसके पुण्य से जितने इसके पितर हैं उत्तम व अधमगति को प्राप्त उनको और जिस पापी को यह चाहे उसे निज साथ लेकर स्वर्ग को जाय व स्वर्ग में जितने काल पृथिवी व समुद्र रहे उतनेदिन देवताओंके साथ स्वर्गबास करे अन्त में मनुष्यलोक में आकर उत्तम कुलमें जन्म ले सबभांति के सुखको प्राप्तहो धर्मनिष्ठ लोक में प्रतिष्ठा को प्राप्त हो और हे दूतो! जिसने उपानत् अर्थात् जूता छतुरी और

जलपात्र दिया हो उसको आदरपूर्वक हमारीसभा में लेआवो व चारमहापद्मनामकनिधिका स्वामी करदो बहुतकाल इस प्रतिष्ठा को भोगि अन्तमें अत्यन्त धनिकके कुलमें सुन्दररूप करके युक्त जन्म ले उत्तम मनोहरण करनेवाली स्त्री के सुख को और भांति २ के रसों का भोग करता आरोग्य यावज्जीव सुखपूर्वक दान पुण्य करता मृत्युलोक में आनन्दकर अन्त में स्वर्गको जावे अखण्डसुख भोगे और हे दूतो! इस धर्मात्मा के समीप गोरस से भरे हज़ार घटलावो इच्छापूर्वक जिसे चाहे उसे देवे व आपभी खाकर पीछे उत्तमलोक में जावे वहां उत्तमास्त्रियों करके सेवाको प्राप्त देवरूप धारणकर बहुतकाल गोलोक में निवासकरे यह कहकर चित्रगुप्त कहनेलगे कि; हे दूतो! लोक में गोरस के बराबर उत्तम व पवित्र दूसरा पदार्थ नहीं है जिसके दही से तो सब देवता तृप्त होते हैं और दुग्ध से शिवजी तृप्त होते हैं घी से अग्नि देव तृप्त होते हैं खीर से ब्रह्माजी तृप्तहोते हैं और एकत्रकर पञ्चगव्य बनाकर पानकरनेसे सबपापों से छुट अश्वमेधके फल को जिसके पान करनेवाला मनुष्य प्राप्तहोता है इसलिये विचार करनेसे लोक में सबपदार्थों से उत्तम व पवित्र गौके तुल्य दूसरा पदार्थ नहीं है कि जिसके दांतों में देवताओं के गण का निवास है जिह्वा में सरस्वती का निवास खुर के मध्य गन्धर्वों का निवास खुर के अग्रभाग में सर्पों का निवास नसों में साध्यनामक देवगण का निवास नेत्रों में चन्द्रमा व सूर्य का निवास ककुत्में अर्थात् कन्धा की पिण्डी में नक्षत्रों का निवास पुच्छ में धर्म का निवास गुदामें तीर्थों का निवास मूत्र में गङ्गा का निवास रोमों में नानाद्वीप करके युक्त पृथिवी का निवास चारो स्तनों में चारो समुद्र का निवास रोम के छिद्रों में ऋषियों का निवास व गोमय में साक्षात् लक्ष्मी का निवास चर्म में विद्याका निवास और धैर्य, धृति, शान्ति, पुष्टि, वृद्धि, स्मृति, मेधा, लज्जा, कीर्ति, विद्या,

क्षान्ति, मति, सन्नति और परमाशक्ति आदिगण गौके समीप चलते, फिरते, उठते, बैठते सदा समीप रहते हैं व जितने देवताओं के गण हैं सो सब गौके आगे पीछे व अङ्गों २ में आठो याम निवास करते हैं इसलिये जहां गौ रहती है वहांहीं धर्म के साथ लक्ष्मी निवास करती है हे दूतो! विचार करने से गौवों के तुल्य दूसरा पदार्थ नहीं है जितने तीनों लोकमें उत्तम व पवित्र पदार्थ हैं उन सबोंका इकट्ठा होकर गौकी मूर्ति जानना चाहिये इस भांति हे ऋषीश्वरो! चित्रगुप्त के मुख की धर्म-युक्त वाणी सुनि व सारे यमपुर का चरित्र देखि फिर यमराज के समीप आपहुँचे॥

दोसौदो का अध्याय॥

नचिकेता ऋषि कहते हैं कि; हे ऋषीश्वरो! और भी यम-पुरका एक वृत्तान्त वर्णनकरते हैं जो कलह के प्यारे नारदजी से चित्रभानु ने वर्णन किया है जिसभांति राजा जनकजी दिव्य-भोग को प्राप्त भये सो सब आदि से वर्णन करते हैं सावधान होकर श्रवणकरो हे ऋषीश्वरो! जिस समय हम सब यमपुर में घूमि फिर यमराज के समीप जा पहुँचे उसीसमय नारदमुनि भी आकर प्राप्तभये उनको देखकर यमराज बड़े हर्ष में युक्त हो उठिके स्वागतशब्द का उच्चारणकर व पाद्य अर्घ से पूजि उत्तम सुवर्ण के आसनपर बैठार हाथजोड़कर विनयपूर्वक यह कहने लगे कि, हे ऋषीश्वर! आज हमारे अहोभाग्य हैं कि जो सा-क्षात् तपोमूर्ति ब्रह्माजी के पुत्र का दर्शन भया हे मुनीश्वर! आप सर्वज्ञ व सर्वदर्शी हैं सब धर्म के जाननेवाले गन्धर्वविद्या के आचार्य व त्रिकालज्ञ हैं इसलिये आपके दर्शन से मैं पवित्र भया व आपकी चरणरज से यह पुरी पवित्र व धन्य भई हे मुनीश्वर! अब कृपा करके जिस प्रयोजन के लिये जिस विचार से आपने

इस भूमि को कृतार्थ किया है सो सब निस्संदेह कथनकरें कि जिसके करने से हम लोकसेवक कृतार्थ हो जन्म लेनेका फलपायें आपकी आज्ञासे मुझ सेवकको तीनोंलोकमें कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है जो न होसके इसभांति हे ऋषीश्वरो! धर्मराजकीवाणी सुनि नारदजी कहनेलगे कि हे धर्मराज! आप इस संसारकी रक्षा करनेवाले व दण्ड के दाता हैं सब के प्रभु हैं इसलिये इसप्रकार का वचन कहना उचितहींहै तथापि यह संशय आप हमारा दूर करें कि जीव कौनसे कर्म करनेसे अमर होता है कौनसा दान, धर्म,तप अथवा व्रतआदि किससत्कर्म करने से निर्भयहोकर इस लोक में अखण्ड लक्ष्मी का सुखभोगि उत्तम कीर्ति करके भूषित उत्तमगति को प्राप्त होता है और किसकर्म के करनेसे पापियों के समूह करकेसेवित नरक का भय दूर होता है? सो कृपा करके आप वर्णन करें यह नारदजी का प्रश्न सुनि बड़े हर्षसे युक्त हो यमराज कहनेलगे कि, हे मुनीश्वर! आप सर्वज्ञ हो कौनसा पदार्थ है जो आप नहीं जानते तथापि महात्माओं की आज्ञा को पालन करना सब धर्म का मूल है इस लिये सब प्रश्न यथायोग्य वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण कीजिये हे नारदजी! नित्य जे अग्निहोत्र करते हैं वे कन्यादान करनेवाले भूमि के दाता रण में सन्मुख प्राणत्याग करनेवाले शूरवीर दानी वेदपाठी पति-व्रता स्त्री सत्य वचन के कथनवाले स्वामी से जो छल नहीं करते जो जीवों की हिंसा नहीं करते ब्रह्मचारी ब्राह्मण के सेवक निजविवाहिता स्त्रीगामी परस्त्रीत्यागी सब जीवों पर दया करने वाले ज्ञानवान् व संसार से उदासीन हे ऋषीश्वर! हाय २ शब्द करके पूरित घोर नरक में ये सब नहीं आते और अन्न दान देनेवाले माता पिता के सेवक और तिल, स्वर्ण, गो, पृथिवी, छत्र, जूता, जलपात्र और अभय जो क्लेशित जीवों को देते हैं हे नारदजी! वे हमारे लोक को नहीं आते और जो चातुर्मास्य

नामक व्रत करते हैं अग्निहोत्र करते हैं गुरु की आज्ञा पालन करते हैं मौन रहते हैं ब्राह्मणों को विद्या पढ़ाते हैं और किसी का अनर्थ नहीं बिचारते ये सब हे नारदजी! हमारे लोक में नहीं आते और जो मनुष्य पर्व में स्त्रीसंग नहीं करते वेभी हमारे लोक को नहीं आते नचिकेता कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इस भांति यमराज के वचन को सुनि नारदजी फिर पूछने लगे कि हे धर्मराज! कौन से दान करने से स्वर्ग प्राप्त होता है सो आप वर्णन करें और किस दान वा शुभ कर्म करनेसे उत्तम कुल में जन्म सुन्दर मनोहर रूप व धन धान्य करके सब भांति का सुख प्राप्त होता है सो आप हमसे वर्णन करें यह नारदजी का वचन सुनि यमराज कहनेलगे कि, हे नारदजी! जो प्रश्न तुमने पूछा है सो विस्तारपूर्वक कहने से तो बहुत काल में भी नहीं कह सकते इसलिये कुछ संक्षेप से वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो हे नारदजी! तप करनेसे भोग यश व आयुर्बल प्राप्त होता है और तप करनेसे ज्ञान आरोग्य उत्तम स्वरूप सुख सम्पत्ति और स्वर्ग आदि जो २ वाञ्छा हो सो २ सब पदार्थ प्राप्त होता है मौन से आज्ञा सिद्ध होती है ब्रह्मचर्य करनेसे मनुष्य दीर्घ आयुर्बल पाता है और जीवहिंसा त्यागने से उत्तमरूप प्राप्त होता है दीक्षा से उत्तम कुल में जन्म होता है हे नारदजी! जे फल मूल खाकर तप करते हैं वे राजा होते हैं पत्ते भोजन करनेसे स्वर्गबास होता है दुग्ध पान करके तप करनेसे भी स्वर्ग होता है गुरुसेवा व पितरों का श्राद्ध करनेसे संतानसुख होता है और उत्तमकाल में दीक्षा लेने से गौकी वृद्धि होती है व जे तृण की शय्यापर नित्य शयन करते त्रिकाल स्नान करते फल से वा जलमात्र से शरीर का निर्वाह करते वे जिस लोक जाने की इच्छा करते वहां को प्राप्त होते हैं और रसों के त्याग करनेसे अर्थात् लोन खटाई मीठा कड़ुवा आदि जिह्वा के स्वाद देनेवाले

रसों के त्याग करनेसे सौभाग्य वृद्धि होती है और हे नारदजी! मांस के त्याग करनेसे संतान की आयुर्बल बढ़ती है व चन्दन पुष्प आदि सुगन्ध पदार्थों के त्याग करने से धनवान् होता है और अन्नदान देने से जन्मान्तर में बुद्धिमान् होता है और हे नारदजी! छतुरी देनेसे उत्तम व मनोहर पुष्ट घर प्राप्त होता है जूता देनेसे वाहन वस्त्र भूषण देनेसे सुन्दर स्वरूप व धन पुत्र करके भांति २ का सुख प्राप्त होता है और हे नारदजी! पानी के देनेसे मनुष्य जन्मान्तर में सदा तृप्त व प्रसन्न रहता है व मधुर अन्न के दान से इच्छा भोग युक्त होता है और हे नारदजी! जो मनुष्य सुगन्ध पुष्पवाले वृक्ष का वा उत्तम सुगन्ध युक्त मधुर फलवाले वृक्षों का दान देता है वो जन्मान्तर में स्त्री पुत्र आदि सब कुटुम्ब के साथ सब सुख करके सहित मनुष्यों का प्रिय होता है और वस्त्र देनेसे वस्त्र अन्न देनेसे अन्न रस के दान से रस सुगन्ध के दान से सुगन्ध गृह के दान देनेसे गृह गोदान देनेसे सब भांति के रस शय्यादान देने से शय्या आदि सब पदार्थ जन्म लेतेही बे परिश्रम प्राप्त होते हैं हाथी, घोड़ा, रथ, बैल, भैंस आदि जो पदार्थ ब्राह्मण के लिये देवे सो सब उसे दूसरे जन्म में आकस्मात् प्राप्त होता है और हे ऋषीश्वरो! घृतदान देने से तेजस्वी सुकुमार पुरुष होता है तैलदान से शरीर चिकना होता है दीपदान करनेसे प्रकाशमान सहत दान देनेसे सब रसों करके युक्त होता है और ब्राह्मणों को खीरभोजन देनेसे जन्मान्तर में मनुष्य पुष्ट शरीर होता है और फल दान करनेसे पुत्रवान् होता है पुष्पदान से सौभाग्य वृद्धि होती है व रथदान करने से विमान प्राप्त होता है पीनसदान से भी विमान मिलता है व हे ऋषीश्वर! अभय दान करनेसे सब संसार के मनोरथ सिद्ध होते हैं॥

दोसौतीन का अध्याय ॥

नचिकेताजी कहते हैं कि, हे ऋषीश्वरो ! इसी समय नारद के देखतेही आकाश में विमानों पर विराजमान सब भूषणों करके भूषित अनेक पुण्य जीव निज किये उत्तम कर्म के फलको भोग करते निज २ स्त्रियों के साथ चले जाते देख यमराज चुप हो उदासीन हो क्रोधयुक्त होगये इसभांति यमराज का स्वरूप देखि नारदजी कहने लगे कि हे धर्मराज ! इस समय में आप उदासीन क्यों होगये और किस लिये क्रोधयुक्त हो ऊंचे श्वास लेरहे हो किसकी ईर्ष्या से अथवा भय से युक्त होगये सो सत्य २ कथन करो इसभांति नारदजी के वचन को सुनि निज हृदय के वृत्तान्त को कहनेलगे कि हे ऋषीश्वर ! जिसलिये हम उदासीन होरहे हैं सो वृत्तान्त श्रवण करो जो जायावर औ उञ्छवृत्ति के ब्राह्मण हैं और जो विद्या के अभ्यास में रात्रिदिन युक्त रहते हैं किसी की निन्दा नहीं करते अतिथि की सेवा करते हैं और इन्द्रियजित् हैं ये सब हे नारदजी ! अभिमान से भरे उत्तम २ चन्दन आदि सुगन्ध पदार्थों करके युक्त व मनोहर भूषण वस्त्र से भूषित निज २ स्त्रियों के साथ विमान में बैठे हमारे शिरपर चले जाते हैं और हमारा भय व मृत्यु का भय दोनों उनका कुछ नहीं कर सकते इतना कहकर नारदजी से फिर मृत्युकी तरफ देखि यमराज कहने लगे कि, हे मृत्यो ! तुम क्यों चुपके होरहेहो किसने तुम्हारा पराक्रम छीनिलिया और हम यही जानते हैं कि केवल धर्महीन पापी जीवों के लिये तुम्हारा पुरुषार्थ है और तप के बल करके जो सिद्ध होरहे हैं उन्होंका तुम कुछ नहीं करसके और तो क्या करना परन्तु हमारे शिर के ऊपर निज निज विमानों में बैठे चलेजातेहैं इनके रोकने की भी सामर्थ्य तुमको नहीं है इसलिये हम बहुत क्लेशित होरहे हैं

नचिकेता कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इसभांति यमराज मृत्यु से कहरहे थे कि बड़ी धूमधाम से विमान में बैठी पतिव्रता स्त्री निजपति के अङ्क में कि जिसके आगे तुरही व नक़ारे बाजतेहैं सो यमराज की इस उदासीन दशा को देखि विमान के ऊपर से कहनेलगी कि, हे महाराज, धर्मराज! आप सब धर्म के जानने वाले महात्मा हो इसभांति ईर्ष्या तपस्वियों में व ब्राह्मणों में न करना चाहिये हे वीर! इन तपस्वियों का बल माहात्म्य और प्रताप अचिन्त्य है इस लिये ईर्ष्या त्यागि इन्होंकी प्रीतिपूर्वक पूजा करो ये ब्राह्मण वेद के पारगामी हैं व इन्होंने संसार के सुख को तुच्छ समझके सबको त्यागि बड़ा तप किया है इसलिये विवेकी होके आपको इनकी सत्कारपूर्वक पूजा करनी चाहिये क्योंकि तुम शुभ व अशुभ कर्मके ज्ञाता हो आकाशमार्ग में ये सब चलेजाते हैं इन के साथ क्रोध वा ईर्ष्या करना अनुचित है यह धर्मराज से कहकर पतिव्रता जब वहांसे आगे को चलने लगी तब तो बड़े हर्ष से ईर्ष्या त्यागि भक्तिपूर्वक उसका पूजन कर नमस्कार किया नचिकेता कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इस वृत्तान्त को देखि नारदजी यमराज से पूछने लगे कि हे राजन्! यह कौन है जिसका तुमने पूजन किया व तुमको उपदेश करके चलीगई इस के जानने को हमारा चित्त बहुत चाहता है इसलिये सब वृत्तान्त आप वर्णन करें इस वचन को सुनि यमराज कहनेलगे कि, हे नारदजी! जिसलिये हमने इसका पूजन कियाहै सो सब वृत्तान्त सावधान होकर श्रवण करो पहले सतयुग में बड़े तेजस्वी सत्यप्रतिज्ञावाले राजा निमि नामक हुये तिनके पुत्र मिथि नामक उत्पन्न भये जिनका दूसरा नाम लोक में प्रसिद्ध जनक भी हुआ तिन राजा जनक के रूप शील व गुण करके युक्त रूपवती नाम रानी थी सो रानी पति की भक्ति करनेवाली पतिव्रता सदा पति की आज्ञा में रहती

व राजा मिथि भी उस रूपवती रानी के साथ सब प्रजा को पुत्र के तुल्य पालन करता धर्म से बहुतकाल पृथिवी में राज्य करता रहा कि जिसके राज्य में प्रजा को किसीभांति की शरीर में अथवा मन में कुछ पीड़ा नहीं होती व अकाल में किसी की मृत्यु वा रोग कुछ नहीं होता इसभांति बहुत दिन बीतनेसे किसीसमय राजा मिथि की राज्य में वर्षा न होनेसे जलके विना पृथिवी पीड़ित होगई उस प्रजा की पीड़ा को देखि रानी रूपवती बड़ी दुःखित हो हाथ जोड़कर राजा से बड़ी मीठी वाणी से कहनेलगी कि, हे महाराज! आपकी राज्य में सब प्रजा सुखी होरही है आपके धर्मसहित पालन करनेसे रोग, शोक, भय, पीड़ा, अग्नि, चोर आदि दण्ड किसी को नहीं हैं वर्षा न होनेसे आप दया करके सब प्रजाओं के लिये जो कुछ घर में अन्न व धन था सो तो दे दिया अब आपके लिये भोजनमात्रका भी ठिकाना नहीं है और तो कौन कहे कि इतना धनहीन होरहीहूं कि शाक मात्र भी नहीं मँगासक्की और घर में वस्त्र, भूषण, गौ, भैंस आदि कुछ नहींहैं कि जिसे विक्रय करके निर्वाह करूं इस विषय में जो कुछ आप मेरे लायक़ आज्ञा देवें सो करूं इसभांति निज रानी की विनयवाणी सुनि राजा जनक कहनेलगे कि; हे प्रिये! इस समय चित्त को दुःखी न करो इस तुम्हारी दीनवाणी को सुनि हमको क्लेश होताहै इसलिये अब यह उपाय विचार में आता है कि कुदाल से खेत करना चाहिये यदि इस विषय में तुम्हारी सम्मति होय कि जिसके करने से यह दुर्भिक्ष की पीड़ा दूर होय व सुख से अन्न मिले यह सुनि रानी बोली कि, हे महाराज! आपकी आज्ञा में हज़ारों सेवक हैं उनको क्यों नहीं आज्ञा होती जो सब काम करलें यह सुनि राजा बोले कि हे प्रिये! है तो सब कुछ तथापि इस दुर्भिक्ष के क्लेश से सबपीड़ित होरहे हैं अब किसीको कुछ कहना उचित नहीं है सब क्षुधा से व्या-

कुल हैं अब यह विचार करना चाहिये कि थोड़ा लोहा होय तो उसका कुदाल बनवावें और खेत करने की भूमि देखना चाहिये जहां अन्न बीजनेसे बहुत उत्पन्न होय इसभांति राजा मिथि की वाणी सुनतेही रानी अत्यन्त प्रसन्न होकर खेत लायक़ भूमि राजा के साथ खोजनेलगी खोजते २ कोई भूमि खेत के योग्य कण्टकों से पूर्ण देखि राजा बोले कि, हे प्रिये ! यह भूमि क्षेत्र के योग्य है इसलिये यहां हम कुदाल से कांटों को काट व उनकी जड़ोंको खोदके बीज बीजने लायक़ बनाते हैं इतना कहकर राजा तो क्षेत्र को शुद्ध करनेलगा तब तो रानी बोली कि; हे महाराज ! आपतो परिश्रम निज हाथों से करते हो परन्तु हम परिश्रम के विनाहीं तृषा करके पीड़ित होरही हैं व समीप कहीं जल दीखता नहीं यदि हमारी तृषा दूर करनेको यहां जल नहींहै तो खेत में अन्न किसभांति उत्पन्न होगा इसभांति शोच विचार करतेही हे नारदजी ! मध्याह्न का समय होनेसे सूर्यभगवान् का तेज अति प्रचण्ड भया कि जिसके होनेसे निहायत पिपासा से पीड़ित रानी विकल हो पानी २ पुकारती राजा की तरफ़ देखती मूर्च्छित हो गिरपड़ी तबतो उसे देखि राजा असमर्थ कुछ न करसके यमराज कहते हैं हे ऋषीश्वर, नारदजी ! उस समय रानी रूपवती ने क्रोधयुक्त विकल हो ज्योंहीं सूर्यकी तरफ़ दृष्टि किया त्योंहीं आकाश को छोड़ि सूर्य भगवान् पृथ्वी में गिरपड़े तब तो हे नारदजी ! सूर्यभगवान् को पृथ्वी में देखि राजा मिथि हाथ जोड़ के कहने लगा कि, हे भगवन् ! आप निज मण्डल को त्याग कर यहां क्यों आये हो व सारे संसार का प्रकाश करनेवाला तेज आपका क्या भया इसभांति राजा के प्रश्न को सुनि सूर्य भगवान् कहनेलगे कि; हे राजन् ! इस तुम्हारी रानी पतिव्रताकी क्रोधदृष्टि से हम शक्तिहीन होके पृथ्वी में पतित भये हैं हे राजन् ! इस रूपवती रानी की बराबर तीनों लोक में दूसरी स्त्री नहीं है

कि जिसके क्रोध करनेसे हम भी शक्तिहीन होगये हे राजन्! इस रानीने सदा तुम्हारी सेवा करनेसे व तुम्हारी इच्छा के अनुसार हित करनेसे सब जीत लिया हे राजन्! तुम धन्य हो जिसके ऐसी पतिव्रता स्त्री है अब जिस उद्यम में आप लगरहे हो सो करो बहुत शीघ्र सफल होगा इतना कहकर सूर्यभगवान् ने निज तेज से जलपूर्णपात्र व छतुरी व पैरों की रक्षा के लिये जूता इन सब पदार्थों को उत्पन्नकर बड़ी प्रीति से राजाको दे यह बोले कि, हे राजन्! यह जल रानी को दो जिससे यह सावधान होय व छत्र की छाया करनेसे हमारे तेज की बाधा न होय व जूता पगों में पहिन लेनेसे कण्टक आदि कठोर पदार्थों से पीड़ा न होय यह सूर्य की वाणी सुनि राजा ने जलसे ज्यों छींटे दिये उसी समय जलके स्पर्श होतेही सावधान हो मूर्च्छा त्यागि रानी बोली कि, हे महाराज! यह ठंढे औ मीठे जल के साथ छतुरी व जूता किसने दिया है यह आप वर्णन करें इस भांति हे नारद जी! यह रानी रूपवती का वचन सुनि राजा मिथि कहनेलगा कि हे प्रिये! ये जो तुम्हारे समीप सूर्यभगवान् खड़े हैं सो तुम को क्लेशित देखि दया करके आकाश से आय ये सब पदार्थ तुम्हारे सुख के वास्ते दिये हैं इसभांति निजपति राजा जनक के मुख की वाणी सुनि बोली कि हे महाराज! इस समय सूर्य भगवान् की प्रीति के लिये क्या करना उचितहै सो आप इनके मन का वृत्तान्त जानके हम से कथनकरें इसभांति निज रानी रूपवती के मन का वृत्तान्त जानि राजा मिथि हाथ जोड़ नम्र होकर सूर्यभगवान् से निज रानी की प्रार्थना निवेदन किया उसे सुनि सूर्यनारायण यह बोले कि आज से स्त्रियों के लिये हम अभय नाम बरदेते हैं कि जो स्त्री इसभांति पतिव्रता होगी उसकी रक्षा हम सदा करेंगे यह सूर्यका वचन सुनि राजा मिथिने प्रसन्न होकर सब वृत्तान्त रानी रूपवती से निवेदन किया उसेसुनि प्रसन्न

हो रानी यह बोली कि, हे महाराज ! जो मनुष्य पृथ्वी में जल-पात्र छतुरी व जूता का दान करें वे यमपुर को न देखें उनको आप अभय देवें यह रानी की प्रार्थना सुनि "तथास्तु" कहि सूर्य भगवान् तो निजमण्डल को चले गये व रानी निजपतिकी सेवा में प्रवृत्त भई यमराज कहते हैं कि, हे नारदजी ! यह वृत्तान्त पतिव्रता स्त्री का हम स्मरण करके सदा पूजन व नमस्कार करते हैं ॥

दोसौचार का अध्याय ॥

नारदजी कहते हैं कि, हे धर्मराज ! किस तप के करने से स्त्रियों को उत्तमगति प्राप्त होती है केवल पतिव्रताही धर्म है कि और भी सो आप वर्णन करें इसभांति नारदजीका वचन सुनि यमराज कहने लगे कि, हे नारदजी ! जो तुमने पूछा है उसमें कुछ नियम, तप आदि नहीं हैं और न उपवास व्रत आदि कुछ हैं इस व्यवस्था में जो कुछ धर्म है सो आप श्रवण करें जो स्त्री पति के शयन करने के अनन्तर निद्रा करती है व पतिके प्रथम निद्राको त्यागकर उठखड़ी होती है व पति को भोजन करायकर आप भोजन करती है और पतिके मौन होनेसे मौन रहती है बैठनेसे बैठती है खड़े होनेसे खड़ी होती है निजपति की तरफ़ मन व बुद्धि को दिये आठों पहर उसके नेत्रों को देखा करती है कि कौनसी आज्ञा देते हैं इसभांति पति की आज्ञा की प्रत्याशा में रात्रि दिन लगी रहती है व पति के क्रोध करनेको डराकरती है यदि उसे पति दण्ड भी दे व दुर्वचन आदि गालीभी देवे तथापि उत्तर नहीं देती व सब बड़े हर्षसे सहकर आज्ञापालन करतीहै और हे नारदजी ! जो स्त्री पति के विना दूसरे किसी देवता को नहीं जानती जिसके चित्त में केवल निजपति ही का निवास व चिन्तन है व रात्रिदिन पति के हित को चाहती सुख में अथवा

दुःख में कभी कम ज़्यादा नहीं रहती एकभांति आज्ञा में रहती है व निज चित्त में यह विचार करती कि यह मेरा पति सब कुछ है इसके समान दूसरा संसार में माता, पिता, भाई, कुटुम्ब, ईश्वर और मनुष्य कोई नहीं है जो कुछ मेरा सर्वस्व है सो पति ही है इसकी कृपा से सबभांति हमारा कल्याण होगा इसके विना और कोई मेरी गति नहीं है यह विचारि सबकी तरफ से चित्त को खैंचि हाथ जोड़ नम्र होकर जो स्त्री निजपति का ध्यान करतीं व पति के शोच में काल व्यतीत करतीं संसार में सुख देने के पदार्थ नृत्य, गान, भूषण, वस्त्र, शृङ्गार, गन्ध, पुष्पमाला और छहों रसके नानापदार्थ भोजन आदि सबोंकी तरफ़से चित्तको खैंचि जो निजपतिही के चिन्तन में लगी रहती है हे नारदजी ! जो स्त्री सोते जागते उठते बैठते स्नान भोजन आदि सब संसारके व्यवहारों को करते केवल पतिही की चिन्ता स्मरण करती है उसका नाम पतिव्रता है उस स्त्री को हम सदा डरते हैं व हाथ जोड़ नम्र होकर उसे प्रणाम करते हैं वह स्त्री हमारे पुर को कभी नहीं आती व उसे मृत्यु का भय भी नहीं होता वह स्त्री सनातन ब्रह्मपदको अर्थात् मोक्षको प्राप्त होती है व उसने सबको जीत लिया उसे किसी का भय नहीं और हे नारदजी ! जो स्त्री सूर्य उदय होनेसे प्रथम उठके घरको झाड़के सफा करदेती है मलिन नहीं रखती उस स्त्री के घर को लक्ष्मी कभी नहीं त्याग करती इस भांति हे नारदजी ! पतिव्रता स्त्री का गुप्तलक्षण हमने वर्णन किया कि जिसके श्रवण करने से सब पातक दूर होते हैं और उत्तम गति होती है ॥

दोसौपांच का अध्याय ॥

नचिकेताजी कहते हैं कि, हे ऋषीश्वरो ! इसभांति नारदजी यमराज के मुखसे पतिव्रता स्त्री का माहात्म्य सुनि हर्ष में युक्त

होकर कहनेलगे कि; हे राजन्! आपने बड़ी उत्तम कथा वर्णन की कि जिससे निर्मल स्त्री की प्रशंसा सूर्य भगवान् के मुख से वर्णित हुई है अब आप यह वर्णन करें कि जो मनुष्य शरीर को क्लेश देकर अनेकभांति का तप करते हैं व मन से भली भांति पाप और पुण्य को जानते हैं पाप करने की स्वप्न में भी इच्छा नहीं रखते वेद व धर्मशास्त्र को भलीरीति से जानते हैं हे राजन्! ऐसे महात्माओं से भी कोई न कोई पाप बनजाता है कि जिसके होजाने से सब पुण्य एक तरफ़ रही पाप का फल नरक भोगना पड़ता है और लोक में महामूर्ख कर्महीन पापात्मा अविवेकी ऐसे अधर्मों से भी दैवगति ऐसी पुण्य बनजातीहै कि जिसके होने से सब पापभयसे छूटि उत्तमगतिको प्राप्त होते हैं इस संदेहमें हे राजन्! हमारा चित्त व्याकुल होरहा है सो निज वचन से हमको निस्संदेह कीजिये इस वचनको सुनि यमराज कहनेलगे कि, हे नारदजी, हे तपोधन! जिस संदेह को आप पूछते हो सो सावधान होकर श्रवण करो हे मुने! इस लोकमें हमारे विचार से कोई करनेवाला वा करानेवाला शुभ व अशुभ का नहीं है और जिसमें यह शुभ और अशुभ कर्म टिका है जो इस कर्म को करता है व जो कर्म का साक्षी है यह सब निर्णयपूर्वक जो हमने मुनियों की सभा में ब्रह्माजी के मुखारविन्द से सुना है सो वर्णन करते हैं हे नारदजी! जो मनुष्य शुभ वा अशुभ कर्म करताहै उसका फल वोही भोग करता है इसलिये क्लेशमें डूबेभये निज आत्मा के उद्धार करने को आपही समर्थ हैं और दूसरा कोई नहीं है कि जो आत्मा का कल्याण करसके इसलिये हे नारदजी! आत्मा का शत्रु व मित्र आत्मा ही है दूसरा नहीं है पूर्वकर्म के अनुसार सुख वा दुःख जो कुछ निश्चय होगया वोही भोगना पड़ता है चाहे सैकड़ों योनि में जन्म लेवे परन्तु विना किये कर्म के भोग से छुट्टी नहीं मिलती यह कथन जो

प्रसिद्ध है कि जगत् मिथ्याभ्रम में भूलिके भ्रम रहाहै सो केवल कथनमात्रही है इसमें यथार्थ यह है कि निज २ कर्म के वश हुआ २ मनुष्य उसके फलके भोगमें ऊंची नीची योनिमें प्राप्त होकर नानाविध क्लेश भोगता है उसी कर्म के अनुसार मनुष्य की बुद्धि ऊंचे नीचे कर्मों में प्रवृत्त होती है शुभकर्म से सुख व अशुभकर्म से दुःख भोगता है यदि शुभकर्म किया तो पाप के निवृत्त होनेकी बुद्धि उत्पन्न होती है इसीभांति अशुभ करने से सुख के विध्वंस करनेवाली बुद्धि उत्पन्न होती है इसी से अशुभकर्म का अन्तफल नरक प्राप्त होता व शुभकर्म का फल स्वर्ग प्राप्त होता दीखता है न तो कोई किसी को स्वर्ग देसके व न कोई किसी का स्वर्गवास छीनसके नचिकेताजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इस भांति यमराज के मुख का वचन सुनि नारदजी फिर पूछनेलगे कि, हे यमराज! जो आपने कहा सो तो ठीकही है परन्तु शुभ कर्म जो अशुभ को दूर करसक्ता है तो अशुभ के क्षय होने से यही बुद्धि उत्पन्न होनी चाहिये कि जिसभांति तप आदि सत्कर्म करने से फिर अशुभगति न होय सो आप वर्णन करें नारदजी के इस प्रश्न को सुनि यमराज कहने लगे कि; हे नारदजी! यह वृत्तान्त अत्यन्त पवित्र पापके दूर करनेहारा व शुभ का देनेहारा हम वर्णन करते हैं पाप व पुण्य के करनेहारे जीवों को प्रणाम करके और जिसने इस सृष्टि को पहले रचा है जिसका आदि मध्य और अन्त नहीं है और जिसको सुर असुर नहीं जानते जो सबजीवों के मध्य आत्मा होके विराजमान है व सर्वत्र एकतुल्य है जिसके जानने से मनुष्य वेदवेत्ता व ज्ञानी कहाते हैं और जो चराचर को यथार्थ जानता है जिसे ठीक २ कोई नहीं जानता जिसके जाननेसे भवसागर से पार होकर मनुष्य सनातन पद को प्राप्त होता है उस परमात्मा को प्रणामकर वह धर्म वर्णन करते हैं कि जिसके ज्ञान होनेसे मनुष्य सबभांति के

दुःखों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होता है हे नारद ! जो मनुष्य अपने देह के सुख व दुःख का अनुभवकर संसार में विचरता है सो पापसे मुक्त होजाता है व जो मनुष्य किसीकी हिंसा नहीं करता क्रोध व तृष्णाका त्याग करता है उसे क्लेश नहीं होता और जो सबकाल में सत्यभाषण करता है उसको पाप नहीं लगता और जो मनुष्य संसार के मनोहर पदार्थों में चित्त नहीं देता वह सदा निष्पाप रहता है और हे नारद ! जो मनुष्य श्रद्धावान् हैं परद्रव्य में लोभ नहीं करते व किसीकी निन्दा नहीं करते सो सबपापों से मुक्त होते हैं और जो मनुष्य निश्छल हो गुरुकी सेवा करते हैं जीव की हिंसा नहीं करते शीलवान् हैं विचारवान् हैं विवेकयुक्त हैं निन्द्यकर्मों से डरते हैं जो शुद्धचित्त होकर तीर्थयात्रा करते हैं सदा पापों से डरते रहते हैं व प्रातःकाल उठि निजगुरु व इष्ट का स्मरण कर ब्राह्मण व गौ का दर्शन करते हैं वे पापों में लिप्त नहीं होते नचिकेताजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इसभांति यमराज का वचन सुनि नारदजी कहने लगे कि; हे राजन् ! जो कुछ कृपा करके जीवों के लिये कल्याणमार्ग आपने वर्णन किया सो श्रवण करनेसे हमारा अनेकभांति का संशय दूर भया अब थोड़ासा संशय और है सोभी सुनाके कृपापूर्वक निज वाक्यों के उपदेश से दूर कीजिये अब आप सुगम रीति से यह कथन करें कि जिससे पाप दूर होयँ और जो आपने प्रथम योग साधन वर्णन किया कि, जिसके करने से पाप दूर हों सो थोड़ी बुद्धिके मनुष्योंको दुस्साध्य है इसलिये पापके दूर करनेका कोई सुख उपाय वर्णन कीजिये जिसमें आत्मा का कल्याण हो इस भांति नारदजीका प्रश्न सुनि प्रसन्न होकर धर्मराज कहनेलगे कि हे नारद ! जिसभांति धर्म का उपदेश ब्रह्माजीने हमको किया है सो ब्रह्माजी को प्रणाम करके हम वर्णन करते हैं जिसके करने से लोक का पातक दूर होय व कल्याण होय महात्माओं की

आज्ञा का कैवल्य नाम है क्योंकि जिसके करनेसे मुक्ति प्राप्त होती है हे नारदजी! शास्त्र और वृद्ध की आज्ञा को श्रद्धा व विश्वास करके माननेसे जीवों के सब कार्य सिद्ध होते हैं व अन्त में मुक्ति होती है जो मनुष्य शुद्धचित्त होकर शिशुमारचक्र को नित्य २ प्रणाम करता है उसके सब पाप निवृत्त होते हैं और शिशुमार चक्र के मध्य जो चन्द्रमा का दर्शन करता है वह पुरुष महापातकों से छूटि उत्तमगति को प्राप्त होता है इसीभांति शिशुमार चक्र में स्थित ललाटस्थान के नक्षत्र कण्ठस्थान के ग्रह नक्षत्र व हृदयस्थान के ग्रह नक्षत्र तारागणों का सावधान होकर विचारपूर्वक दर्शन करनेसे मनुष्य पाप से मुक्त होताहै और जो शिशुमारचक्र के उदर में स्थित नक्षत्रों का दर्शन करता है वह मन वचनकृत पाप से मुक्त होता है जो मनुष्य सूर्यनारायण को शिशुमारचक्र के पुच्छ में वा कण्ठ में टिका ध्यानकर दर्शन करता है वह सब पापों से मुक्त होताहै हे नारदजी! जो मनुष्य बृहस्पति, चन्द्रमा और शुक्रआदि ग्रहों को ध्यानकर प्रदक्षिणा करता है वह सब पापों से मुक्त होता है जो साथ चन्द्रमा के नवोग्रह का ध्यान व प्रदक्षिणा करता है वह शरद् ऋतु के चन्द्रमा के तुल्य निर्मल होताहै और हे नारदजी! चाहे कैसहू पापी होय शत प्राणायाम करनेसे पापसे मुक्त होताहै और वामन पुरुष के दर्शन करनेसे व शूकर को जलसे बाहर निकलने के समय देखनेसे मनुष्य निष्पाप होता है और नित्य २ प्राणायाम करनेसे सब पापों से छूटि उत्तमगति को प्राप्त होता है॥

दोसौछः का अध्याय॥

नचिकेताजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इसभांति धर्मयुक्त लोकहित धर्मराज का वचन सुनि बहुत प्रसन्न होकर नारदजी यह कहनेलगे कि, हे महाराज! आपने कृपा करके ब्राह्मण, क्षत्रिय,

वैश्य इन तीनों वर्णों के निष्पाप होने के लिये शिशुमारचक्र का दर्शन व प्राणायाम वर्णन किया अब चौथा वर्ण जो शूद्र है जिसे ब्राह्मणोंने वेदविमुख कर रक्खा है उसके कल्याण के लिये कोई उपाय आप कथन करें कि जिसके करनेसे वह पापों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होय इसभांति नारदजी का लोकहित वचन सुनि यमराज कहनेलगे कि, हे नारदजी! जो अत्यन्त हित व पवित्र पदार्थ व जिसके करने का चारोंवर्णों को योग्यहै सो वर्णन करते हैं जिससे शीघ्र पाप दूर होता है हे नारदजी! इस पृथिवी में सब पवित्रों का शिरोमणि व देवताओं की देवता गौ है जिसकी भक्तिपूर्वक सेवा करने से कैसहू पातकी होय सो उत्तमगति को प्राप्त होता है व जिस गौ की पञ्चगव्य पान करने से मनुष्य पञ्चमहापातकों से छूट जाता है हे नारदजी! जिस गौ के पुच्छ के जलको मस्तक में पड़ने से पृथिवी के सब तीर्थों का स्नानवत् फल होताहै जो मनुष्य रोहिणीनक्षत्र में गोपुच्छ जल से स्नान करता है सो सारे जन्म के पापों से मुक्त होता है और जो मनुष्य गौके स्तन सें निकलती दूध की धारा को निज शीश में धारण करता है सो सब पापों से मुक्त होकर उत्तमगति को प्राप्त होता है और प्रातःकाल उठि भक्ति से जो गौ को प्रणाम करता है सो पापों से छूट जाता है और गोदधि व अक्षत को लेकर सूर्यभगवान् का उदयकाल में जो पूजन करता है उसके तीन जन्म के पाप दूर होते हैं हे नारदजी! तिस पूजा करने वाले मनुष्य के ऊपर प्रसन्न होकर सूर्यभगवान् पाप को दूर कर शुभफल को देतेहैं और जो मनुष्य यव का चावल व गोदधि ताम्र के पात्र में रख पूर्णिमातिथि को ब्राह्मण को देता है सो इस दान के प्रभाव से सब जन्म के पापों से मुक्त होताहै हे नारदजी! जो अरुन्धती ध्रुव और सप्त ऋषियों का पूजनकर हाथ जोड़ प्रणामकर यव तन्दुल और दधि का दान ब्राह्मण को देता है

उसीक्षण उसके सब पाप दूर होते हैं और जो मनुष्य नित्य प्रातः-काल उठकर भक्तिपूर्वक हाथ जोड़ि ब्राह्मण को प्रणाम करते हैं वे उसीसमय निष्पाप होजाते हैं और जो मनुष्य विषुवत् नाम संक्रान्ति के दिन ब्राह्मण को गोदुग्ध देते हैं उनके सब जन्म का पाप उसीक्षण दूर होता है और पूर्वदिशा में अग्रकर कुशा बि-छाय उसके ऊपर उत्तम वृषभके दान करनेसे सब पाप दूर होते हैं व पूर्वदिशा की बहनेवाली नदी में जाय विधिपूर्वक जो अभि-षेक करते हैं वे पापों से मुक्त होते हैं हे नारदजी! दक्षिणावर्त्त शंख में तीर्थजल को लेकर निजशीश के ऊपर अघमर्षणमन्त्र पढ़ धारा लेनेसे मनुष्य सब पापों से मुक्त होता है और जो मनुष्य पश्चिमवाहिनी नदी में जाय नाभिमात्र जल में खड़ेहोकर काले तिलों के साथ सात अञ्जली जल देते हैं वे पापों से मुक्त होते हैं और तीन प्राणायाम करने से ब्रह्मचारी सारे जन्म के पापों से मुक्त होता है व व्यतीपात में जो मनुष्य कमल के पत्र से जल लेकर तीनिबार स्नान करता है सो पापों से मुक्त होता है अब हे नारदजी! अतिगुप्तपदार्थ पाप दूर करनेके लिये वर्णन करते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो कार्त्तिकमास की शुक्लएकादशी जिसका नाम प्रबोधिनी है वह साक्षात् विष्णुभगवान् की दूसरी मूर्ति है भुक्ति मुक्ति दोनों पदार्थों के देनेमें समर्थ है व मनुष्यलोक में जीवों के कल्याण के लिये जिसका अवतार है उस एकादशी के दिन जो मनुष्य विष्णुभक्ति करके युक्त व्रत करते हैं उन मनुष्यों का अनेकजन्म का किया पाप दूर होताहै हे नारदजी! इसी एकादशी के लिये वाराहनारायण से धरणी ने प्रश्न किया था कि, हे भगवन्! इस घोर कलियुग में घोरकर्म के करनेवाले मनुष्य ब्राह्मणों के धन हरनेवाले ब्राह्मण की हिंसा में निरत क्रूर गुरुद्रोही देवद्रोही मित्रद्रोही स्वामिद्रोही परस्त्रीगामी परधन-हरण में चतुर अभक्ष्य के भक्षण करनेवाले वेद व ब्राह्मण के

निन्दक पाखण्डी मर्यादाहीन नास्तिक अयोग्य दान ग्रहण करने वाले व अगम्या स्त्री के गमन करने में चतुर ऐसे मनुष्यों को हे भगवन्! किसभांति उत्तमगति प्राप्त होय और इनका पाप कैसे दूर होय यह कृपा करके आप वर्णन करें यह धरणी की विनयवाणी सुनि वाराह भगवान् कहनेलगे कि, हे धरणि! लोक के हित के लिये जो तुमने प्रश्न किया है सो बहुत उत्तम है अब इस प्रश्न का उत्तर अत्यन्त गुप्तबात कहते हैं सो सावधान होकर श्रवण करो हे धरणि! जिन २ पापियों का तुमने वर्णन किया है उनके उद्धार के लिये हमने एक पदार्थ ऐसा बनाया है कि, जिससे ये सब निष्पाप होकर उत्तमगति को प्राप्त हों सो यह पदार्थ है कि जिसका नाम बोधिनी एकादशी है जिसके व्रतमात्र करने से मनुष्य पाप व पुण्य दोनों से मुक्त होकर परमपद को प्राप्त होता है इसके बिना कोई दूसरा उपाय पाप दूर करने का व मुक्त होनेका नहीं है हे धरणि! शुक्लपक्ष की एकादशी भक्ति की देनेहारी है व कृष्णा मुक्तिदाता है इसलिये मास की दोनों एकादशियों का व्रत करना चाहिये हे धरणि! यदि विष्णु के लोक को मनुष्य जानेकी इच्छा करता होय व मन, वचन, कर्मसे किया हुआ पाप दूर कियाचाहे तो एकादशी का व्रत करे इस लिये सर्वथा एकादशी तिथि में भोजन न करना चाहिये हे धरणि! दोनों हाथ ऊंचे कर बड़े ऊंचे स्वर से पुकारते हैं कि यदि हे मनुष्यो! निज किये पापों से बच वैकुण्ठवास किया चाहते हो तो हरिवासर में भोजन नहीं करना और शंख से जल नहीं पानकरना मत्स्य व शूकर का वध नहीं करना व दोनों एकादशी को अन्न त्याग करना चाहिये हे धरणि! जो मनुष्य दोनों एकादशियों को अन्न नहीं त्याग करते उनको ब्राह्मणबध करनेवाले के तुल्य मद्यपान करने के तुल्य सुवर्ण की चोरी करने के तुल्य गुरुस्त्री के गमन करने के तुल्य पातक होता है हे धरणि! जिसने

एकादशी को अन्न भोजन किया उस पापी ने इससे अधिक क्या पाप करने को छोड़ा अर्थात् सब पाप करचुका और जो एकादशी व्रत करने में असमर्थ है सो दिनभर व्रत करके रात्रिको भोजन करे और कुछ यथासामर्थ्य ब्राह्मणों को दान देवे और जिसने दान व व्रत दोनों को नहीं किया सो तीन काल में भी उत्तमगति को नहीं प्राप्त होता और हे धरणि! जो मनुष्य सब महीने की एकादशीव्रत करनेमें असमर्थ हो सो प्रबोधिनी का व्रत कर बड़ीभक्ति से विधिपूर्वक विष्णु का पूजन करने से अनन्त फल को प्राप्त होताहै और यदि भाग्यवश प्रबोधिनी को पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र होय वा उत्तराभाद्रपद होय तो अत्यन्त दुर्लभ है इस योग में केशवभगवान् की पूजा करने से साधारण एकादशी से कोटिगुण अधिक पुण्य होता है और हे धरणि! जिस भांति प्रबोधिनी अनन्तफल को देती है उसीभांति हरिशयनी एकादशी भी पुण्य की देनेवाली है इन दोनों का एक तुल्य प्रभाव है शयनी आषाढ़मास की बोधिनी कार्त्तिकमास की और इसीभांति परिवर्तनी भाद्रमास की इन तीनों एकादशियों का जो व्रतकर विष्णुपूजन करते हैं वे मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर व निर्मल होकर उत्तमगति को जाते हैं इसलिये अवश्य इन तीनों का व्रत करना चाहिये यदि कोई उत्तमगति के जानेकी वाञ्छा करे हे धरणि! यदि भाग्यवश चन्द्रवार व उत्तराभाद्रपद नक्षत्र कार्त्तिक की शुक्ल एकादशी को होय वा भौमवार होय तो इस विधान से व्रत व विष्णुपूजन करना चाहिये कि व्रत के दिन प्रातःकाल स्नानकर वेदी बनाय जलपूर्ण कुम्भ स्थापितकर पञ्चरत्न व पञ्चपल्लव से पूर्णकर तिसके ऊपर घृतपूर्ण पात्र धर चार माशे सुवर्ण का मत्स्य बनवाय घी के मध्य रख प्राणप्रतिष्ठा कर पञ्चामृत से स्नान कराय केसर चन्दन से लिप्तकर पीताम्बर वस्त्र के जोड़े से आच्छादित कर सब भांति के भूषणों से भूषित

कर छतुरी व उपानत् भी अर्पणकर कमलों से दशबार इन नामों का उच्चारण करके पुष्पाञ्जलि देवे "ॐमत्स्याय नमः। ॐकूर्माय नमः। ॐवाराहाय नमः। ॐनारसिंहाय नमः। ॐवामनाय नमः। ॐरामचन्द्राय नमः। ॐपरशुरामाय नमः। ॐकृष्णाय नमः। ॐबुद्धाय नमः। ॐकल्किने नमः" इन दशों मन्त्रों से दश अवतार का पूजनकर पुष्प, धूप, दीप और भांति २ के नैवेद्य अर्पण कर वस्त्र, भूषण यथाशक्ति निवेदनकर रात्रि में विष्णु भगवान् को बोधन करावे और जागरणकर प्रातःकाल विमलजल से स्नानकर सन्ध्या व तर्पण से निवृत्त हो विधिपूर्वक विष्णुपूजन कर नैवेद्य दे अन्त में हाथ जोड़कर इस मन्त्र से प्रणाम करे॥ (मन्त्रः। ॐजगदादिर्जगद्रूपो जगदादिरनादिमान्। जगदादिर्जगद्योने प्रीयताम्मेजनार्दन) वाराहजी कहते हैं हे धरणि! इसभांति प्रार्थना कर हवन, गोदान, शय्यादान आदि यथाशक्ति कर ब्राह्मण को भोजन कराय आप सकुटुम्ब भोजन कर व्रत समाप्तकर सब सामग्रीसहित मूर्ति को वेदविद ब्राह्मण को देकर आशीर्वाद लेय इसरीति से जो मनुष्य एकादशी व्रत करते हैं उनके पुण्य का कथन कहांतक कहसक्ते हैं तथापि किञ्चिन्मात्र कहते हैं सो श्रवणकरो हे धरणि! व्रत करनेवाला मनुष्य हमारे तुल्य उत्तमरूप धारणकर दिव्यभूषण, वस्त्र करके शोभित चन्द्र व सूर्य के तुल्य प्रकाशमान सेवकों करके सेवा को प्राप्त उत्तम विमान में बैठि हमारे लोक में आता है व हजारकल्प हमारे लोक में निवासकर अन्त में बहुत आयुष् करके युक्त व आरोग्य सातोंद्वीप का राजा सात कल्पतक होता है और हे धरणि! इस पुण्य एकादशीमाहात्म्य के श्रवण करने से ब्रह्मवध, मद्यपान, स्वर्णस्तेय, गुरुस्त्रीभोग आदि महापातक दूर होते हैं और जो मनुष्य विधान से व्रत करता है उसके स्पर्श करनेसे बड़े २ पापी पवित्र होते हैं और

हे धरणि! इस एकादशीमाहात्म्य के पाठ करनेसे दुःस्वप्न का भय दूर होता है और जो मनुष्य नारायण वासुदेव अनन्त अच्युत इन नामों को भक्ति श्रद्धायुक्त प्रेम से उच्चारण करते हैं वे सब पापों से मुक्त होकर हमारे लोक में प्राप्त होते हैं हे धरणि! कई जन्मतक शिवजी के आराधन करनेसे जब मनुष्य निष्पाप होता है तब उसके हृदय में विष्णुभक्ति होती है जिसके होनेसे मनुष्य मुक्त होता है हे धरणि! ज्ञान की इच्छा करनेवाला मनुष्य निष्कपट हो शिवजी का आराधन करे जिस आराधन के प्रभाव से विष्णुभक्त होताहै जिसके दर्शन से चाण्डालभी उत्तम गति को प्राप्त होताहै यमराज कहते हैं हे नारद! यह जानकर विचारवान् वेद के मार्गसे वा आगम के मार्गसे विष्णुपूजनकर संसारसागर से पार होकर कैवल्य को प्राप्त होय हे नारदजी! इसभांति वाराह भगवान् के मुखारविन्द का वचन सुनि निश्चय कर धरणी श्रीविष्णुभगवान् की भक्तिकर विष्णुभगवान् में लय को प्राप्त भई इसलिये बुद्धिमान् किसीभांति निज चित्तको सावधानकर विष्णुभक्तियुक्त हो विष्णुलोक को प्राप्त होय हे नारदजी! जो मनुष्य विधान से एकादशी का व्रत करते हैं वे परमपद को प्राप्त होते हैं इसभांति हे नारदजी! जो तुमने प्रश्न किया सो यथा योग्य सब जैसा हमने वृद्धोंसे सुना और देखा सो वर्णन किया॥

दोसौसातका अध्याय॥

नचिकेताजी कहते हैं हे ऋषीश्वरो! इसभांति यमराज का धर्मयुक्त वचन सुनि नारदजी कहने लगे कि; हे धर्मराज! आपके मुखारविन्द से यह धर्मसंहिता श्रवणकर हम बहुत प्रसन्न भये व आपकी पूजा सत्कार करनेसे अत्यन्त आनन्द भया अब आप आनन्द से निश्चल राज्य कीजिये हम यहांसे इच्छापूर्वक यात्रा करते हैं सो जानिये इतना कहि तपके तेजसे आकाश को प्रका-

शित करते जहांको इच्छा भई वहांको चले गये हे ऋषीश्वरो! नारदजी की यात्रा करनेके अनन्तर धर्मराज हमारी तरफ़ देख कर मनोहर वाक्यसे आनन्द को देते यह कहनेलगे कि हे पुत्र! यहां का सब चरित्र देखचुके अब तुमको घर जाना चाहिये जिसमें तुम्हारे पिता आदि कुटुम्ब को आनन्द होय इतना कहि व यथाविधि हमारा पूजनकर प्रीति से बिदा किया तब तो वहांसे यमराज को प्रणाम कर बड़े आनन्द से हम यहां पहुँचे इसभांति हे ऋषीश्वरो! जिस भांति यमपुर को गये व जो २ देखा व सुना सो २ सब आदि से वर्णन किया वैशम्पायन ऋषि कहते हैं हे राजन्, जनमेजय! इसभांति नचिकेताका वचन सुनि सब तपस्वी बड़े हर्ष में युक्त हो बड़ी प्रीति से "एवमस्तु" कहि २ जो २ वहां आये थे उनमें कोई जायावर कोई वानप्रस्थ कोई शालीन कोई शिलोञ्छ कोई अपाकपाची कोई फलाहारी कोई मौन कोई जलशायी कोई ऊर्ध्वशायी कोई मृगचारी कोई पञ्चाग्नितपी कोई पत्राहारी कोई जलाहारी और कोई शाकाहारी ये सब ऋषि इस विचित्र कथाको सुन २ विस्मित होकर निश्चय मानि २ धर्म में बुद्धिको सावधानकर निज २ नियम में स्थित हो नचिकेता और उद्दालकमुनि से बिदा होकर निज २ हृदयमें परमेश्वरका चिन्तन करते निज २ आश्रम को गये वैशम्पायन ऋषि कहते हैं कि; हे राजन्, जनमेजय! यह धर्मकथा हमने आपसे वर्णन किया जिसके श्रवणसे विष्णुमें भक्ति होती है और जो इस कथाको सुने व सुनावे उसके सब मनोरथ पूरे होयँ व विष्णुका प्यारा होय॥

दोसौआठका अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि, हे शौनक! अब सावधान होकर शिवचरित्र वर्णन करते हैं सो श्रवण करो जिसके सुनने से अनेक जन्म के पातक दूर होते हैं पहले समय में तारकामय संग्राम में

जब देवताओं ने दानवों का संहार किया तब इन्द्र निज अधि-कार को सावधान हो करनेलगे और चराचर तीनोंलोक आनन्द को करनेलगे उस समय हे शौनक! सनत्कुमार ऋषि मणियों करके शोभित है शिखर जिसका ऐसे सुमेरुपर्वतमें जाकर ब्रह्माजी को निज कमल के ऊपर विराजमान देखि हाथ जोड़ साष्टाङ्ग प्रणामकर नम्र होकर विनयपूर्वक पूछने लगे कि, हे भगवन्! आप जगत् की उत्पत्ति करनेवाले हैं सर्वज्ञ हैं यह संदेह मेरा दूर करें कि शिवजी का नाम उत्तरगोकर्ण दक्षिणगोकर्ण और शृङ्गेश्वर किसभांति भया और जहां इन तीनों लिङ्गका निवास है उस क्षेत्र का कितना प्रमाण है और कौन २ से उस भूमि में तीर्थ हैं सो आप वर्णन कीजिये जिसमें संदेह दूर होय व कैसे उस भूमि में शिवजीने मृगा का रूप धारण किया व आपलोग उनको किसभांति प्राप्त भये सोभी वर्णन करें और शिवजी ने मृगा का स्वरूप किसलिये धारण किया सो सब वृत्तान्त यथा-योग्य आप वर्णन करें इसभांति सनत्कुमारजी के प्रश्न को सुन प्रसन्न होकर ब्रह्माजी कहनेलगे कि; हे पुत्र! जो यह प्रश्न तुमने किया है सो बहुत उत्तम और गुप्त है तथापि तुम्हारी प्रीति से हम वर्णन करते हैं हे पुत्र! पर्वतराज मन्दराचल के उत्तर कि-नारे मुञ्जवान् नाम एक पर्वत है जिसकी शोभा नन्दनवनसे भी अधिक है कि जिस पर्वतकी शिला हीरकनाम व स्फटिकनाम पाषाण है व जिसमें मूंग के रङ्गके छोटे २ कङ्कर हैं और जहां नीलमणि के गुहा विराजमान होरहे हैं जिन गुहाओं के मध्य से अमृतके तुल्य जलके झरने बाहर को निकलरहे हैं और चारों दिशा में चित्रविचित्र पुष्पों की लता वृक्षों में लिपट रही हैं और जिसके चारों ओर भांति२ के वृक्ष छहों ऋतुओंकेफल पुष्पों को धारण किये पर्वत को शोभा देरहे हैं जिन वृक्षों की शाखाओं पर भ्रमर, कोकिल, मयूर आदि मधुरशब्द बोलनेवाले पक्षियों के

जोड़े भांति २ के शब्द उच्चारण कररहे हैं जिसकी मनोहर शोभा को देखकर गन्धर्व व अप्सराओं के गण रात्रिदिन विहार करते हैं और जिस पर्वत में बड़े २ जलाशय सब भांति के कमलों करके युक्त व जलपक्षी जिसमें अनेकभांतिके जहां तहां क्रीड़ा करते हैं व जिस जल के मध्य अनेकभांति के जलचर विनोद कररहे हैं और कहीं वनके मध्य मृगों के गण कहीं वनगजों के यूथ शोभा देरहे हैं और कहीं पर्वत की गुहा में मुनियों के गण ध्यान, योग, समाधि, देवपूजा, हवन, तर्पण, पितृश्राद्ध और पुण्यकथा आदि निज २ स्थान में कररहे हैं और कहीं यक्ष, कहीं किंपुरुप, कहीं गन्धर्व, कहीं किन्नरों के गण बिचर रहे हैं ब्रह्माजी कहते हैं हे पुत्र! इसभांति की शोभा करके युक्त मुञ्जवान् पर्वत में सदा स्थाणुनाम शिवजी निवास करते हैं सो भक्तों के दया करनेवाले भगवान् शिव पार्वतीजी के साथ स्वामिकार्त्तिक व गणेश आदि गणों करके युक्त वहां विराजमान हो रहे थे कि देवदेव के दर्शन व सेवन करनेके लिये देवताओं के गण निज-२ स्थानसे चले हे पुत्र! उसीसमय शिलाद मुनि के पुत्र नन्दीनाम मुनि बहुतकाल से वहां उग्र तप करके युक्त शिवजी का आराधन कररहे थे ग्रीष्मऋतु में पञ्चाग्नि तापना शिशिर ऋतु में जलशयन और वर्षाऋतु में निराली भूमि में ऊर्ध्वबाहु आकाशदृष्टि होकर नानाभांति के व्रत करते विधिपूर्वक शिवजी का आराधन करते रहे इसभांति उग्रतप करते २ जब शरीर शुष्क होकर काष्ठ के तुल्य होगया और देह की सब नाड़ियां सूखगईं अत्यन्त दुर्बल होनेसे शरीर कृष्णवर्ण होगया इस भांति की व्यवस्था देखि शिवजी प्रसन्न होकर नन्दीजी के समीप आय प्रकट होकर कहनेलगे कि, हे पुत्र! तुमने यम व नियम से हमको प्रसन्न करलिया इसलिये हम तुम्हारे समीप आये हैं व तुमको दिव्यदृष्टि देते हैं जिस दृष्टि से मुनिलोक हम

को देखते हैं जिस रूप के देखने से जन्म व मृत्यु का भय छूट-
जाताहै इतना कहि निजरूप से दर्शन दिया जो रूप प्रातःकाल
के सूर्यमण्डल समान तेजोमय अर्धचन्द्र त्रिनेत्र और जटा-
मुकुट करके शोभित हज़ार मुख हज़ार भुजा हज़ार पद हज़ार
नेत्र और हज़ार शिर करके विराजमान सिंहचर्म नागहार नाग-
भूषण नागयज्ञोपवीत अक्षमाला और कमण्डलु को धारण
किये इसभांति का अद्भुतस्वरूप शिवजी का देखि नन्दीमुनि
रोमाञ्चयुक्त हो हर्ष व विस्मय करके युक्त हाथ जोड़ नम्र
होकर स्तुति करनेलगे (स्तुतिः। ॐ नमो धात्रे विधात्रे च
शंभवे वरदाय च। जगद्धोक्के त्रिनेत्राय शंकराय शिवाय च१
भवाय भवगोप्त्रे च मुनये कृत्तिवाससे। नीलकण्ठाय भीमाय
भूतभव्यभवाय च २ लम्बमानसुकेशाय हरिनेत्राय मीढुषे।
कपर्दिने विशालाय मुञ्जकेशाय धीमते ३ शूलिने पशुपायाथ
विभवे स्थाणवे तथा। गणानां पतये स्रष्ट्रे संक्षेप्त्रे भीषणाय च ४
सौम्याय सौम्यतपसे भीमाय त्र्यम्बकाय च। प्रेतवासनिवा-
साय रुद्राय वरदाय च ५ कपालमालिने तस्मै हरिश्मश्रुधराय
च। भक्तप्रियाय सततं नमोऽस्तु परमात्मने ६) ब्रह्माजी कहते
हैं हे पुत्र! सनत्कुमार इसभांति स्तुतिकर बारम्बार नन्दी शिर
से प्रणाम करनेलगा तबतो नन्दीनामक ब्राह्मण को देखि
शिवजी अत्यन्त प्रसन्न होकर यह बोले कि, हे नन्दिन्, हे महा-
मुने! तुम्हारे तप करने से व स्तुति करने से हम बहुत प्रसन्न
हैं जो २ इच्छा होय सो २ वर मांगो हे विप्रेन्द्र! हमारे प्रसन्न
होनेसे तीनों लोक में कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है जो पदार्थ देव-
ताओं को भी दुर्लभ है सो देंगे प्रभु होना व अमर होना व
इन्द्र होना व और लोकपाल होना व ब्रह्मा होना व मुक्ति अ-
थवा आठों अणिमादिक ऐश्वर्य व गणों का स्वामी होना जो
कुछ तुम्हारे मन की वाञ्छा होय सो सब इस समय तुमको

हमारी कृपा से सुलभ है अब शीघ्र जो कुछ मांगना है सो मांगो इसभांति कृपायुक्त शिवजी का वचन सुनि बहुत प्रसन्न होकर नन्दी हाथ जोड़ यह कहनेलगे कि, हे भगवन्! मैं तो न प्रभुत्व चाहता हूं न देव होना न इन्द्र होना न ब्रह्मा होना न और कोई लोकपाल होना और मुक्ति भी नहीं चाहता हे प्रभो! न गाणपत्य चाहता हूं और न अष्टऐश्वर्य हे शंकर! आपके प्रसन्न होने से यह मेरी वाञ्छा है कि जिसभांति का भक्त आप का आजतक कोई न हुआ होय सो भक्ति मुझ दास पर कृपा करके दो और ये भी अनुग्रह होनी चाहिये कि, मेरी भक्ति करने में किसी भांति का विघ्न न होय व कोटिरुद्र जप करने में हे शंकर! मेरी भक्ति कभी कुण्ठित न होय यही वर चाहताहूं ब्रह्माजी कहते हैं हे सनत्कुमारजी! इसभांति नन्दीमुनि की प्रार्थना सुनि शिवजी प्रसन्न हो हँस करके बड़ी मधुरता के साथ कहनेलगे कि, हे सुव्रत! इस तुम्हारे तप से हम प्रसन्न हैं उठो तुमने शुद्धचित्त होकर भक्ति से हमारा उत्तम आराधन किया हे तपोधन! अब यह तप तुम्हारा पूर्ण भया जो हमारे समीप तुमने पूर्ण हज़ार वर्ष में यम नियमयुक्त होके तीनकोटि रुद्र का जप किया इसभांति हे नन्दिन्! पहले समय में देवता, ऋषि, मुनि और असुर किसीने नहीं किया कि जिसके तप करने से तीनों लोक प्रकाशित होजायँ अब तुम्हारे देखने को इन्द्रादिक देवताओं को साथ लिये ब्रह्मा व विष्णु आते हैं सो शीघ्र वरदान लो व हम गुप्त हुआ चाहते हैं इतना कहकर शिवजी वर देने लगे कि; हे मुने! आजसे तुम्हारा स्वरूप हमारे तुल्य होय अक्षय अव्यय और अतर्क्य होय सुर व असुरों करके तुम्हारा दिव्यतेज व शरीर सदा बनारहे जिसभांति हमारा रूप जटाजूट करके शोभित त्रिनेत्र अर्धचन्द्रभूषित मस्तक डमरू व त्रिशूलधर इसीभांति सुर व असुरों करके पूजित इसी शरीर से जरामरण

वर्जित सब गणों में प्रधान व हमारे पार्षदों में श्रेष्ठ हो और आज से तुम्हारा नाम नन्दीश्वर करके विख्यात होगा हे तपोधन! सब ऐश्वर्य और योगसिद्धि करके युक्त होने से तुमको सब देवता व दैत्य हमारी दूसरी मूर्ति मानकर नमस्कार करेंगे और सब देवताओं के कार्य करनेवाले तुम होगे हमारे प्रसाद से हे मुनीश्वर! लोक की रक्षा करने में समर्थ होगे और जो फल किसी को हमारे आराधन करने से प्राप्त होता है सो सब फल मनुष्यों को तुम्हारे आराधन से प्राप्त होगा और आज से सर्वत्र हमारे तुल्य तुम्हारा पूजन होगा और जो तुम्हारा शत्रु होगा वह हमारा शत्रु होगा जो तुम्हारा मित्र होगा सो हमको प्रिय होगा हमारा व तुम्हारा हे नन्दिन्! कुछ भेद नहीं होगा जिसभांति वायु व आकाश का भेद नहीं है व हे गणोंके स्वामी! हमारे दक्षिणद्वार में सदा तुम्हारा निवास होय व तुम दक्षिण भाग में महाकाल वामभाग में हमारे सदा निवास करो और तुम हमारे शीश की रक्षा करो महाकाल हमारे गणोंकी रक्षाकरें और वज्र करके दण्ड करके चक्र करके अग्नि करके तीनों लोक में कोई तुमको किसी भांति की पीड़ा न दे सके और देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और सर्प आदि सब तुम्हारी आज्ञा में सदा रहें और सब हमारे भक्त तुम्हारी सेवा को करें और जिसके ऊपर तुम प्रसन्न उससे हम सदा प्रसन्न जिससे तुम रुष्ट होगे उसके ऊपर सदा हमारा कोप रहेगा हे नन्दिन्! तुम्हारे से प्रिय व अधिक अब हमको दूसरा नहीं है ब्रह्माजी कहते हैं हे सनत्कुमारजी! इसभांति अनेक वरदान देकर स्पष्ट ऊंचे स्वर से फिर शिवजी नन्दी से कहनेलगे कि; हे नन्दिन्! तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हो वरदान देना जानकर इससमय नारायण सहित सब देवता आते हैं व उनके पीछे यक्ष, विद्याधर, किन्नर, सर्प, मुनि, महात्मा और तपस्वी आदि सब इकट्ठे होकर वरदान के

लेने को आनेचाहते हैं सो अब इस मुञ्जवान् पर्वत से जबतक देवता यहां आवैं नहीं तबतक श्लेश्मातक नाम वनको हम जाते हैं परन्तु पूछने से भी किसी के स्नेहवश हो कहना नहीं और सबका यथायोग्य सत्कार करना हे सनत्कुमार! इसभांति शिवजी नन्दीश्वर से कहि व वरदान देकर वहांहीं अन्तर्धान होगये॥

दोसौनव का अध्याय॥

ब्रह्माजी कहते हैं हे सनत्कुमारजी! जब वहांसे शिवजी अन्तर्धान होगये उसीक्षण नन्दीश्वर ने तो चतुर्भुज त्रिनेत्र धारणकर दिव्यरूप धारण किया व हाथों में त्रिशूल परिघदण्ड और पिनाक करके युक्त मानों साक्षात् दूसरे शिव हैं इसभांति नन्दीश्वर के विलक्षण तेज को देखि संभ्रम को प्राप्त हो सब देवताओं ने आकर यह वृत्तान्त सब इन्द्र से वर्णन किया इस नन्दीश्वर के अभ्युदय वृत्तान्त को सुनि सब देवताओं के साथ इन्द्र बड़ी चिन्ता में युक्त होकर यह कहनेलगे कि यह जो कोई तपस्वी शिवजी से वर पाया है सो अवश्य तीनोंलोक निजवश में करेगा इसलिये जबतक हमलोगों को पीड़ा न देय तबतक चलके शिवजी से मिलके प्रसन्नकर इसकी शान्तिके लिये कोई उपाय पूछना चाहिये यह विचार ब्रह्माजी के समीप जाय उनको साथ लेकर विष्णुभगवान् कोभी साथ ले सब इकट्ठे हो जहां नन्दी विराजमान वरदान से प्रकाशमान होरहे थे वहां जाकर प्राप्त हुये तबतो हे सनत्कुमारजी! उससमय हम सबको इकट्ठे देखतेही बड़े हर्ष से युक्त हो उठि नन्दीश्वर हाथ जोड़ मानसी पाद्यार्घ देकर सुस्वागत शब्द का उच्चारणकर यह कहने लगा कि, हे परमेश्वरो! मेरा जन्म व तप सहित जीवन के आज सफल भया जो मैं आज त्रैलोक्यनाथ गुरु हरि भगवान् को देखा आज हमको जन्म लेनेका फल प्राप्तभया आज मैं

कृतकृत्य भया और जो त्रैलोक्यनाथ शिवजी प्रसन्न हो पार्षदों में मुख्य करके अनेकभांति का वर दिया उस अनुग्रह के फल से आज हम सब देवताओं को नेत्र से देखा इसभांति नन्दी की प्रेमवाणी को सुनि प्रसन्न हो सब देवता कहने लगे कि; हे नन्दिन्! तुम्हारे तपसे प्रसन्न होकर शिवजी प्रकट हो वरदान दे कहां को गये सो हमारे भी दर्शन करने की इच्छा है हम शिवजी को कहां देखेंगे सो कथन करो ब्रह्माजी कहते हैं हे सनत्कुमारजी! इसभांति देवताओं का वचन सुनि नन्दीश्वर बोलेकि, हे देव-गण! हमारे ऊपर अनुग्रह करके यहां से नहीं मालूम अन्त-र्धान होके कहां को गये सो विचार में जैसा आवे वहां उनका खोज करो सूतजी कहते हैं कि; इसभांति हे शौनकजी! ब्रह्मा का वचन सुनि संदेहयुक्त होकर सनत्कुमारजी कहनेलगे कि; हे पितः! शिवजी ने अन्तर्धान होते समय नन्दीश्वर को क्या आज्ञा दी कि जिससे सब देवताओं को नन्दीजी ने शिवजी का ठिकाना न कथन किया इस विषय में आपसे कुछ गुप्त नहीं है आप सब जानते हैं सो सब हमारे संदेह के दूर होनेके लिये कृपा करके वर्णन करें यह निजपुत्र सनत्कुमार का संदेहयुक्त वचन सुनि ब्रह्माजी प्रसन्न होकर कहनेलगे कि; हे पुत्र! जो शिवजी ने नन्दी से कहा कि, हमारा ठीक २ पता देवताओंसे न कहना इसका सब वृत्तान्त श्रवण करो जब नन्दी को वरदे व देवताओं का आगमन जानि अन्तर्धान होनेलगे तो यह बोले कि, हे नन्दिन्! एकभूमि पर्वत में सिद्धों करके सेवित हिमा-चल के पार ऐसी है कि जिस पुण्यभूमि में सिद्धों के समूह व तपस्वियों के गण सदा निवास करते हैं और उसी भूमि में श्लेष्मातक नाम नागराज बहुतकाल से उग्रतप कर हमारा आराधन कररहा है उस तपस्वी का मनोरथ हमको अवश्य पूरा करनाहै और वह महात्मा तप करते २ पापों से रहित होकर शुद्ध

होरहाहै उसके समीप कोई दूसरा मनुष्य नहीं है केवल जङ्गली जीवों के विना और हे नन्दिन्! बहुत दिन के तप करनेसे उसीके नाम से वह भूमि व पर्वत भी श्लेष्मातक वन नाम करके लोक में प्रसिद्ध है उसी भूमि में हमको ढूंढ़ते २ देवता मृगरूप देखेंगे व पकड़ने का यत्न भी करेंगे इसलिये यह वृत्तान्त तुम देवताओं से किसी प्रकार कथन नहीं करना हे सनत्कुमार! इतना नन्दीश्वर से कहकर शिवजी तो अन्तर्धान भये व उसी समय चारों दिशाओं को प्रकाश करते निज २ वाहनों पर व विमानों पर सब देवताओं के गण दिव्य २ भूषण व वस्त्र करके शोभा को देते आ प्राप्त भये प्रथम तो चन्द्रमा निजगणों के साथ व सूर्यग्रह, नक्षत्र, एकादशरुद्र, बारहो सूर्य, अश्विनीकुमार, मुञ्जवान् पर्वत, विश्वेदेव और साध्य इन सब देवगणों को साथ लिये हुये ऐरावत हाथी पर विराजमान इन्द्रजी आय प्राप्त भये और नारद, तुम्बुरु, विश्वावसु, परावसु और हाहा हूहू आदि अनेक गन्धर्वों को संग लिये निज विमान में चित्ररथनाम गन्धर्व आया और अनिल, निल, धर्म, सत्य, ध्रुव, देव, ऋषि, सिद्ध, यक्ष, विद्याधर, गुह्यक इन सबोंके गण निज २ विमानों में बैठे आय नन्दीश्वर के समीप प्राप्त भये और गन्धकाली, घृताची, मुग्धा, गौरी, तिलोत्तमा, उर्वशी, मेनका, रम्भा और पञ्चस्था आदि स्त्रियों का गण आय प्राप्तभया और पुलस्त्य, अत्रि, मरीचि, वशिष्ठ, भृगु, कश्यप, पुलह, विश्वामित्र, गौतम, भरद्वाज, अग्निवेश्य, वृद्धपराशर, मार्कण्डेय, अङ्गिरा, गर्ग, सम्बर्त्त, क्रतु, ऋचीक, जमदग्नि, भार्गव और च्यवन आदि सब ऋषीश्वर हमारी और विष्णु की आज्ञा से नन्दी के समीप हे सनत्कुमारजी! आय पहुँचे और सिन्धु पुरुष, सरयू, महानदी ताम्रा, अरुणा, चन्द्रभागा, वितस्ता, कौशिकी, पुण्या, सरस्वती, कोका, नर्म्मदा, बहुदा, शतद्रू, विपाशा, गण्डकी, गोदावरी, वेणी, तापी, कर-

तोया, शीता, वीरवती, नन्दा, परनन्दा, चर्म्मण्वती, पर्णाशा, देविका, प्रभास, सोम, लोहित, त्रपु और गङ्गासागर आदि नद नदी सब सागर मिलि एकत्र होकर नन्दीश्वर के समीप आय पहुँचे ब्रह्माजी कहते हैं हे सनत्कुमार! इसीभांति जो २ पृथिवी में पवित्र स्थान क्षेत्र नद नदी सब निज २ रूप को धारणकर आय प्राप्त भये और पर्वतों में सुमेरु, कैलास, गन्धमादन, हेमकूट, निषध, विन्ध्य, महेन्द्र, सह्य, मलय, दर्दुर, माल्यवान्, द्रोण, श्रीपर्वत, अम्बष्ठ और पारियात्र आदि सब पर्वत निज २ वनों के साथ रूप धारणकर नन्दीश्वर के समीप आय प्राप्त भये और हे सनत्कुमारजी! सब विद्या निज २ अङ्गों के साथ और साङ्ग यज्ञ, धर्म, सत्य, दम और स्वर्ग कपिलजी आदि सिद्धेश्वर, नन्दीश्वर के समीप आय प्राप्तभये और अमृत के पान करने वाले शेष नारायण हज़ार फण करके शोभित धृतराष्ट्र, किर्मीर, अङ्गद, अम्भोधर, अर्बुद, न्यर्बुद, चक्षुश्रवा, विद्युन्मेघ, शङ्खवर्चा आदि नाना फणोंमें मणि शोभा करके विराजमान नन्दीश्वर के समीप आय प्राप्तभये और विनत, कम्बल, अश्वतर, एलापत्र, कर्कोटक और धनंजय आदि महाबल करके युक्त नागराज आय प्राप्तभये और हे सनत्कुमारजी! उसी स्थान में निज२ रूप धारण कर दिन, रात्रि, मास, पक्ष, तिथि, संवत्सर, पृथिवी, दिशा, विदिशा आय प्राप्त भये इस समाज को देखि शिव करके प्रेरित वृक्ष उस समय इन सब देवतागणों के ऊपर वायु के वेगसे पुष्पों की वर्षा करनेलगे और गन्धर्वों ने अप्सराओं को साथ ले नृत्य गानका प्रारम्भ किया और उस मुञ्जवान् पर्वत के सब पक्षी अनेक प्रकारके मधुरस्वर करने लगे और वायु मन्द, सुगन्ध, शीतल बहनेलगा इसी समय हे सनत्कुमारजी! विष्णु के साथ हम नन्दीजी के समीप पहुँचे तब तो शिवजी के वरदान करके अद्भुत तेज से विराजमान विष्णुआदि सब

देवताओं को एकत्र देखि बहुत प्रसन्न होकर हाथ जोड़ मानसपूजा कर सबको यथायोग्य प्रणामकर स्वागतबोलि पाद्य अर्घ आसन से सत्कारकर नम्र होकर क्रम से नन्दी ने सबका पूजन किया और नन्दीश्वरजी को देखि आदित्य, वसु, रुद्र, अश्विनी, साध्य, विश्वेदेव, गन्धर्व, गुह्यक, विश्वावसु, परावसु, हाहा, हूहू, नारद और तुम्बुरु आदि सब वासुकी आदि नागों के साथ बड़ी प्रीति व हर्ष से युक्त हो भांति २ की सामग्री ले नन्दीश्वरजी की पूजाकर भक्ति से शिवजी के तुल्य प्रणाम किया व इस पूजा को देखि सिद्धों के गण अति हर्षित हो जयशब्द का उच्चारण करनेलगे व अनेकभांति के आशीर्वाद को देकर प्रसन्न हो देवताओं के साथ नन्दीश्वर से यह कहने लगे कि, हे मुने! शिवजी तुम्हारे से बहुत प्रसन्न भये व तुमको अनेक भांति का वरदान दिया इसलिये हमारा सबका भी यह वर है कि तुम्हारी गति कहीं क्षीण न होय और सर्वदा सब दुःखों करके रहित शिवजी की कृपा से सर्वत्र विहार करो यह प्रीतियुक्त वचन देवताओं का सुनि नन्दी नम्र होकर बोले कि, यों आप सबने कृपा करके आशीर्वाद किया सो सुफल होय अब यह अनुग्रह आप सब की चाहतेहैं कि कुछ हम पर आज्ञा होय सो हम करें इसभांति नन्दी का वचन सुनि इन्द्रजी बोले कि, हे नन्दिन्! अब शिवजी कहां हैं सो हमसे वर्णन करो अब देवदेव श्रीमहादेवजी के दर्शन करनेकी हम सबको वाञ्छा होरही है यह इन्द्रजी का वचन सुनि नन्दीश्वर शिवजी की वाणी का स्मरण कर कहने लगे कि, हे देवेन्द्र! जो आप पूछते हैं सो श्रवण करो कि, इस मुञ्जवान् पर्वत में हमने बहुतकाल शिवजी का आराधन किया सो करुणामय प्रसन्न हो हमको दिव्य वर दे अनुग्रह कर यहां से कुछ आज्ञा दे चलेगये उसका स्मरणकर उनकी आज्ञा में टिके भयभीत होरहे हैं सो आपके साथ हम चल के

ढूंढ़ते हैं हे इन्द्र ! अब यहां से शिवजी के खोज करने को चलो हमभी तुम्हारे साथ चलेंगे॥

दोसौदश का अध्याय॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि, हे सनत्कुमार ! इसभांति नन्दीजी का वचन सुनि सब देवता इन्द्र को साथ लेकर शिवजी के खोज करने को मुञ्जवान् पर्वतसे चलि नन्दिकेश्वरजी के साथ स्वर्गलोक ब्रह्मलोक को भलीभांति ढूंढ़कर नागलोक में जाय देखा वहां न मिलने से उदासीन हो थकिके पृथिवी में आय सब जगह वन, पर्वत, नदी और तीर्थों में भलीभांति ढूंढ़ि पर्वतों के शिखर और गुफाओं को खोजि २ हैरान हो शिवजी के न मिलनेसे भयभीत हो सब देवता इकट्ठे हो एकाग्रचित्त से विचार करनेलगे कि, देखो तीनोंलोक भलीभांति खोज किया परन्तु शिवजी न मिले सो अब मन वचन व कर्म से शिवजी की चरण शरण मानि नम्र हो श्लेष्मातक वन में चल ढूंढ़ो वहां अवश्य मिलेंगे यह शोचि विचारि सबदेवता श्लेष्मातक वन में जाय पहुँचे और वहां पहुँचि उस वन की अद्भुतशोभा देखि खोज करना प्रारम्भ किया तब तो ढूंढ़ते २ क्या देखते हैं कि मृगों के समूह में एक मृग विलक्षण और विचित्ररूप धारण किये तृण को चररहा है हे पुत्र, सनत्कुमार ! जिस वन में वह मृग हम सबोंने देखा उस वनकी शोभा कहांतक वर्णन करें कि; जिसमें उत्तम २ व मनोहर पवित्र ऋषियों के ध्यानयोग्य अनेक कन्दरा विराजमान होरही हैं और कहीं जल के प्रवाह सुन्दर मीठे स्वाद करके युक्त निर्मल बहरहे हैं और जिस जल के किनारे हरे २ तृण के लोभ से गोपुच्छ महिष आदि जीव जहां तहां विहार कररहेहैं और कहीं कदलीवन के मध्य मृगों के समूह निर्भय किन्नरों का मधुर आलाप सुनिके आनन्दको प्राप्त होरहे हैं और पर्वतके

नदियों के तट पुलिन में हंस कारण्डव जलकुक्कुट आदि जीव उस भूमि को शोभा देते विहार कररहे हैं इसभांति श्लेष्मातक वन के मध्य दूसरे देवताओं ने मृगों के मध्य मृगरूप शिवजी की क्या विलक्षणता देखी कि, सुवर्ण के तुल्य शोभा करके विराजमान एक शृङ्ग एक पादयुक्त व जिस मृगके शरीर में शुक्लवर्ण के बिन्दु जहां तहां शोभित होरहे हैं व देखने से मन हरनेवाला नेत्र, खुर, मुख, दन्त और शुक्लवर्ण के उदर करके विराजमान व रक्तवर्ण मूंगे के तुल्य मुख जिसका सुन्दर व पुष्ट अङ्ग २ की शोभा से सब मृगों के गण को शोभित करते मृगको देखि और उस मृग के थोड़ी दूर अत्यन्त सुन्दरी देखने से मन के हरलेनेवाली अनेकभांति के वस्त्र व भूषण करके भूषित एक कन्या गेंद को खेलती इकल्ली उस वन में विहार कर रही है इस चरित्र को देखि हे सनत्कुमारजी! सब देवताओं ने एक मुहूर्त मौन हो विचारकर यह निश्चय किया कि यह अद्भुतकन्या इकल्ली वन में शिवजी की अर्धाङ्गी पर्वतराज की पुत्री मृगरूप शिवजी के समीप विहर रही है इसभांति विलक्षण मृग का स्वरूप शिवजी हैं यह निश्चय मन में कर सब देवता उस मृग के पकड़ने को चारों ओर से दौड़े तो इन्द्र ने उस मृग के शृङ्ग का अग्रभाग जाकर पकड़ा और हे सनत्कुमार! उस शृङ्ग का बिचला भाग हमने पकड़लिया व शृङ्ग का मूल विष्णुजी के हाथ में आया तबतो हमारे तीनों के पकड़तेही तीन टुकड़े होके तीनों के हाथ में टूटके वह शृङ्ग रहगया और मृग अन्तर्धान होगया उसे न देखनेसे हम तीनों इधर उधर देखने लगे तो आकाश के मध्य से यह वाणी भई कि; हे देवताओ! तुम सब हमको नहीं पायसके अब शृङ्गमात्र के लाभ होनेसे संतुष्ट होजाव यदि हमको सहित शरीर के ग्रहण करलेते तो पृथिवी में चारोंचरण से धर्म निवास लेता अब हे देवताओ! यह शृङ्ग हमारा श्लेष्मातक वन में

बहुतकाल रहि लोक का कल्याण करेगा व यहां अनेकभांति का यज्ञ होगा व हमारे प्रभाव से यह पुण्यक्षेत्र होगा और आसमुद्र पृथिवी में जितने तीर्थ व क्षेत्र हैं उन सबोंका यहां निवास होगा और हम हिमवान् पर्वत के तट में नैपालनामक देश में पृथिवी को भेदनकर चारमुख धारणकर सब अङ्गों करके शोभित उत्पन्न होंगे तब हमारा नाम शरीरेश होगा तहां घोर नागह्रदनाम कुण्ड के जल में निवास करेंगे सब जीवों पर दया करते दर्शन देते तीसहज़ार वर्ष निवास होगा और जब वृष्णि-कुल में उत्पन्न होकर श्रीकृष्णजी इन्द्रकी सम्मति से दैत्यों के बधनिमित्त निज चक्रसे पर्वत को तोड़के दानवों का संहार करेंगे तब वह देश म्लेच्छों करके सेवित होगा अर्थात् दानवों के मा-रने के अनन्तर वहां म्लेच्छ निवास करेंगे तिसके कुछ काल बीतने पर सूर्यवंश के क्षत्रिय आय उन म्लेच्छों का संहारकर उत्तम २ कुलके ब्राह्मणोंको बसावेंगे व चारों वर्ण का स्थापनकर धर्मयुक्त होकर हमारे लिङ्ग की प्रतिष्ठा करेंगे उस लिङ्गको पूजि सब भांति के सुख को चारोंवर्ण प्राप्त होंगे शिवजी कहते हैं कि; उस मूर्तिका जो मनुष्य दर्शन व पूजन करेंगे सो सब पापों से मुक्त होकर हमारे समीप बास पावेंगे और गङ्गाजी के उत्तर और अश्विनीमुख नाम क्षेत्र के दक्षिण चौदह योजन भूमि में जितना जल है उसमें स्नान करनेसे भागीरथी के स्नानसे सौगुणा पुण्य होगा वहां स्नान करनेवाले विष्णुलोक को प्राप्त होंगे और शिव जी कहते हैं हे देवताओ ! यदि इस भूमि में कैसहू पापी निवास करेंगे तो अन्त में इन्द्र के समीप नन्दनवन में बास पावेंगे यह तपोधनों के लिये तप करने का सिद्धक्षेत्र है यह क्षेत्र हे देवताओ ! प्रभासक्षेत्र से प्रयाग से नैमिषारण्य से पुष्कर से व कुरुक्षेत्र से भी शतगुण अधिक पवित्र है और जहां हमारे श्वशुर हिमवान् का निवास है जिससे गङ्गा आदि सब पुण्य-

नदियां उत्पन्न भई हैं इसलिये इस भूमि में जो २ नदियां, सर, झरने औ पर्वत हैं वो सब सिद्धों के सेवायोग्य हैं कि जिस भूमि के मध्य शैलेश्वर होकर हम निवास करते हैं और हे देवताओ! सब नदियों में श्रेष्ठ भागीरथी व वेत्रवती है कि जिसके नाम लेनेसे व दर्शन करनेसे पापी पवित्र होते हैं और जो इनमें स्नान करता है वो तो सातकुलों के साथ पवित्र होकर विष्णु-लोक में निवास करता है और जो नित्य स्नान करके हमारा पूजन करेंगे तिनके ऊपर प्रसन्न होकर हम उनको संसारसागर से पार करेंगे और जो हमारे स्नान के लिये एक घट जल इन दोनों नदियों से लेंगे उनको विधिसहित अग्निहोत्र यज्ञ करने का फल प्राप्त होगा और इस भूमि में जो हमने निज शृङ्ग से भूमि को खोद के जल निकाला है उसका नाम शृङ्गोदक तीर्थ है इस शृङ्गोदक तीर्थ में जो स्नान करेंगे उनके यावज्जीव का किया पाप दूर होगा और यहां पञ्चनदनामक जो तीर्थ है ब्रह्म-ऋषियों करके सेवित उसमें स्नानमात्र करने से अग्निष्टोम नाम यज्ञ के फल को मनुष्य प्राप्त होगा और उस पञ्चनद के साठ हज़ार धन्वापर वाञ्जतीनाम तीर्थहै जिसका दर्शन कृतघ्न पुरुष को नहीं होता जो मनुष्य पवित्र व सत्यभाषी हैं वेही वाञ्जती को प्राप्त होते हैं जिससे उनकी उत्तमगति होती है हे देवताओ! चाहे कैसहू पापी होय वाञ्जती के स्नान करने से हमारे समीप आता है और जो वाञ्जती के स्नान करनेवाले हैं उनको राज-सूय व अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होना दुर्लभ नहीं है और जहां हमारा निवास है उसकी चारों दिशाओं में एक २ यो-जन रुद्रक्षेत्रनामक भूमि है तहां ईशानदिशा में हज़ारों नाग-गणों के साथ वासुकी नाम नागराज सदा निवास करते हैं सो नागराज इस क्षेत्र के निवास करनेवालों का विघ्न करते हैं इसलिये जो इस क्षेत्र का दर्शन व निवास किया चाहे सो

प्रथम वासुकी का प्रणाम व पूजनकर पश्चात् हमारा दर्शन व पूजन करे इसभांति करनेसे निर्विघ्न यात्रा सफल होगी और हे देवताओ! जो इस क्षेत्र में आय भक्ति से हमारा प्रणाम करेगा वो पृथिवी का राजा होगा और जो हमारी मूर्ति को चन्दन, पुष्पमाला, धूप, दीप और नैवेद्य आदि से पूजा करेंगे सो तुषितनाम देवगणों में जन्म पावेंगे और जो हमारे समीप दीपदान करेंगे सो सूर्यलोक में जाकर निवास करेंगे और जो मनुष्य हमारी मूर्ति को पञ्चामृत से स्नान कराय भलीभांति चन्दन, अक्षत, पुष्प व मालाआदि से पूजि नृत्य व गान व स्तुति आदि करेंगे सो मृत्युमुख संसार से पार होकर कैलास में आय हमारे गण होंगे जो ब्राह्मण श्रद्धापूर्वक व्रत उपवास नियम से हमारा पूजन करेंगे सो सब पापों से छूटि साठहज़ारवर्ष देवलोक में निवासकर मनुष्यलोक में उत्तमकुल में जन्म पाय विद्या स्वरूप और धन करके युक्त व बहुतकाल आरोग्य होकर सुख भोगेंगे और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आदि चारो वर्ण में कोई हो शैलेश्वर का भक्तिपूर्वक जो उपासना करेगा सो देवलोक में जाय वहां का सुख भोगकर अन्त में हमारा पार्षद होगा इसलिये हे देवताओ! शैलेश्वर के तुल्य संसार में दूसरा पदार्थ नहीं है जो पुरुष ब्राह्मण का बध करनेवाला है और गुरु का बध व गोबध आदि पातक करके युक्त है सो हमारे क्षेत्र के दर्शनमात्र करनेसे पवित्र होकर उत्तमगति को प्राप्त होगा और इस क्षेत्र के तीर्थ व देवताओं की संख्या नहीं है इनमें किसी तीर्थ में स्नान करे व किसी देवताका पूजन करे सो सब पापों से मुक्त होकर उत्तमगति को जाताहै क्रोशनामक तीर्थमें हे देवताओ! जो स्नान व पितरों का तर्पण करताहै सो सब पापों से छूट जाता है और शैलेश्वर की दक्षिण दिशा में अनाशकनाम तीर्थ का जो दर्शन करते हैं सो निष्पाप होकर परम गतिको प्राप्त होते हैं

और जो काम वा क्रोध आदि दुर्गुणों से मुक्त होकर भृगुपात करता है सो उसीसमय उत्तम विमान में बैठि अप्सराओं करके सेवा को प्राप्त देवलोक को जाता है शिवजी कहते हैं हे देवताओ! ब्रह्माजी का बनाया भृगुमूल में ब्रह्मोद्भेदनामक तीर्थ है जिसमें इन्द्रियों को जीतके एकवर्ष स्नान करनेसे निर्मल हो जाय ब्रह्मलोक में निवास करता है और गोपद के चिह्न करके युक्त गोरक्षकनाम तीर्थ है जिसके दर्शनमात्र से मनुष्य एकसहस्र गोदान देनेके फल को प्राप्त होताहै और गौरीशिर नाम सिद्धगणों करके सेवित जो पर्वत है जहां आठोंयाम गौरीजी का निवास है उसके दर्शन करनेसे सालोक्य नाम मुक्ति होतीहै और जो मनुष्य वाग्मती के तट में निजप्राणों का त्याग करते हैं वे अग्नि के तुल्य प्रकाशमान स्वरूप को धारणकर उत्तम विमान में बैठि उमालोक में जाय निवास करते हैं और जो पञ्चनदनाम तीर्थ में स्नान करतेहैं सो स्नानमात्रही से अग्निष्टोमनाम यज्ञ के फल को प्राप्त होतेहैं और पञ्चनद की उत्तरदिशा में थोड़ी दूर गुह्यकों करके रक्षा को प्राप्त प्रान्तकपानीय नामक क्षेत्र है जिसमें एक वर्ष स्नान करनेसे गुह्यकनाम शिव का गण होता है और गौरीशिर के ईशानदिशा में ब्रह्मोदयनाम तीर्थ है जिसके दर्शन व स्पर्शन करने से मनुष्य फिर मर्त्यलोक में जन्म नहीं पाता व उसी समीप सुन्दरिका नाम तीर्थ है जिसके स्नानमात्र से मनुष्य गन्धर्वलोक में प्राप्त होता है और त्रिसन्ध्यानाम क्षेत्र में जो ब्राह्मण सन्ध्या करता है सो सब पापों से मुक्त होता है और वाग्मती मणिमती इन दोनों नदियों का जहां संगम है उस भूमि में जो रुद्र जप करता एकदिन व रात्रि निवास करता है सो निज अनेक पुरुषों का उद्धारकर देवलोक को जाताहै और उस संगम में स्नानकर जो निज पितरों को तिलाञ्जलि देता है उसके पितर तृप्त हो विमान में बैठि देवलोक को जाते हैं और

जो पुण्य गङ्गाद्वार के स्नान में होती है उससे दशगुणी पुण्य इस संगम के स्नान में होती है इसलिये हे देवताओ ! इस वाङ्मती और मणिमती के संगम का देव, यक्ष, गन्धर्व और किन्नर सदा सेवन करते हैं इसलिये उस भूमि में जप, पूजा, दान आदि कुछ थोड़ासा भी बनपड़े तो अनन्त फल होता है इस वास्ते यत्न करके करना उचित है हे देवताओ ! जहां २ हमने मृगरूप को धारणकर तृण को चरते २ भ्रमण किया है वहां २ सब पुण्यक्षेत्र जानो और यह जो हमारा शृङ्ग तीन टुकड़े होगया सो तीनों खण्ड का गोकर्णेश्वरनाम पृथिवी में प्रसिद्ध होगा ब्रह्माजी कहते हैं हे पुत्र, सनत्कुमार ! इस भांति देवताओं से कहके शिवदेवता के देखतेही उत्तरदिशा को चलेगये ॥

दोसौग्यारह का अध्याय ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि; हे सनत्कुमारजी ! उस स्थान से मृगरूपधारी शिवजी जब चलेगये तब परस्पर मिलिके सहित हमारे सब देवता संमति कर उस मृगशृङ्ग के तीनों टुकड़ों को ले ले इन्द्र ने निजखण्ड को स्वर्ग में विधिपूर्वक स्थापित किया और हे पुत्र ! हमने उसी भूमि में जो हमारे पास खण्ड था उसे स्थापित किया इन दोनों खण्डों का गोकर्णनाम लोक में प्रसिद्ध भया तिसके अनन्तर विष्णुजी ने भी निजखण्ड को देवर्षि ब्रह्मर्षियों के साथ मिलिके लोक के हितके लिये स्थापित किया जिसका नाम लोक में शृङ्गेश्वर भया इसभांति हे पुत्र ! जहां २ शृङ्ग का खण्ड स्थापित भया वहां २ शिवजी निजअंश कला करके स्थित भये तबतो सुर व असुर के गुरु शिवजी को उग्रतप करके देव, दानव, गन्धर्व, सिद्ध, यक्ष और उरग आय श्लेष्मातक वन में प्रसन्नकर निज २ वाञ्छा के अनुसार वरदान ले २ निज २ मनोरथ सफल किये इसीभांति हे पुत्र ! जिस २

ने श्लेष्मातक वन में तप किया उस २ ने निज २ नाम से लिङ्ग स्थापन व तीर्थ बनाया इस वृत्तान्त के बहुतकाल व्यतीत होने के अनन्तर पुलस्त्यमुनि का पौत्र रावण निज भाई कुम्भकर्ण व विभीषण को साथ ले उग्र तपस्या में युक्त होकर शिवजी की सेवाकर प्रसन्न किया तबतो गोकर्णेश्वर शिव प्रसन्न हो वरदान देने को प्रकट भये उसे देखि रावण ने तीनलोक को निज भुज-बल से पराजित करता व निज विजय वर मांगा उस वर को शिवजी देकर अन्तर्धान भये तब तो हे सनत्कुमार! निज वांछित वर पायके त्रैलोक्यविजय करनेके लिये उसीसमय प्रारम्भ किया पृथ्वी को शीघ्रही जीति निज पुत्र मेघनाद के साथ स्वर्ग जीतने को गया वहां जाय बड़े शीघ्र इन्द्रादिक देवताओं को जीति स्वर्ग में निज राज्य स्थिरकर जब वहां से चलनेलगा तो हे पुत्र! जो मृगशृङ्ग के खण्ड को गोकर्णेश्वर नाम से अमरावती पुरी में इन्द्रने स्थापित किया था उस लिङ्ग को उखाड़ के लङ्कामें स्थापित करने को ले चला कुछ दूर जायकर भूमि में रख सन्ध्या काल देखि सन्ध्योपासन करनेलगा और निज आवश्यक कृत्यसे निवृत्त होकर चलने के समय में जब शिवलिङ्ग को उठानेलगा तबतो वज्र के तुल्य वह शिवलिङ्ग किञ्चिन्मात्र जगह से हिला भी नहीं उसीभांति वहांहीं छोड़ रावण लङ्काको चलागया हे पुत्र! उस लिङ्गका दक्षिणगोकर्ण यह नाम प्रसिद्ध हुआ उनकी किसीने प्रतिष्ठा नहीं की खुद अपने आप शिवजी उस भूमि में लोक की रक्षा करनेको स्थिर होगये हे सनत्कुमार! यह सब कथा विस्तार से हमने वर्णन की उत्तर और दक्षिण दोनों गोकर्णेश्वर इसभांति प्रसिद्ध भये और शृङ्गेश्वर शैलेश्वर की भी कथा यथार्थ हमने वर्णन की और क्षेत्रकी महिमा तीर्थों की उत्पत्ति यह सब क्रम से कह सुनाया हे पुत्र, सनत्कुमार! अब क्या सुना चाहते हो॥

दोसौबारह का अध्याय ॥

इसभांति ब्रह्माजी की वाणी सुनि सनत्कुमार प्रसन्न हो हाथ जोड़कर कहनेलगे कि; हे भगवन् ! जो २ हमने प्रश्न किया उन सब प्रश्नों का उत्तर देकर आपने मेरा संदेह दूर किया जो भगवान् विश्वरूप शिवजीने वनमें मृगरूप धारणकर क्रीड़ा की कि जिसके शृङ्ग से अत्यन्त पुण्यक्षेत्र गोकर्ण, शैलेश्वर और शृङ्गेश्वर नाम प्रसिद्ध भये अब हे प्रजापते ! और इसीभांति उत्तम पवित्र व विलक्षण चरित्र वर्णन करो जिसके श्रवण करने से अनेकभांति का भ्रम दूर होय इसभांति सनत्कुमार के मुख का वचन सुनि ब्रह्माजी बोले कि; हे पुत्र ! अब और सब तीर्थों की उत्पत्ति और महिमा पुलस्त्यजी राजा युधिष्ठिरसे वर्णन करेंगे उस स्थान में जाय श्रवण कर सब निश्चय करलेना हे पुत्र ! किसी भांति का संदेह नहीं करना पुलस्त्य मुनि भी वेद और वेदों के अङ्गतत्त्व जाननेवाले हमारेही तुल्य हैं उनके मुख से धर्मयुक्त पवित्र कथा सुननेसे सब पापों से मुक्त होगे यह सुनि सनत्कुमारजी ब्रह्मा को प्रणाम कर आज्ञा ले शिवजी के दर्शन करनेको कैलास को चलेगये सूतजी कहते हैं कि हे शौनक ! इस भांति पाप के दूर करनेहारी पुण्यकथा श्रीभगवान् वाराहजी का व धरणी का संवाद वाराहनाम पुराण हमने वर्णन किया जिस के श्रवण करनेसे मनुष्य धन्य होता है यश की वृद्धि होती है कीर्ति बढ़ती है और इसलोक में व परलोक में सब कामनायें सिद्ध होती हैं यह चरित्र सब मङ्गलों में उत्तम मङ्गलरूप है कल्याण का देनेवाला है लक्ष्मी के निवास का कारण है व शत्रुओं के मध्य विजय का दाता है इस लिये हे शौनक ! यह पुराण धन्य, यश का बढ़ानेवाला, कल्याण का रूप, सब पापों का दूर करनेहारा व सबभांति के विघ्नोंका शान्ति करनेवाला है इसलिये इस

वाराहपुराणके श्रवण करनेसे व पठन करनेसे मनुष्य सब पापोंसे छूटि इस लोकमें अनेकभांतिके सुखको भोगि अन्तमें उत्तम गति को प्राप्त होताहै सूतजी कहते हैं हे शौनक! इस वाराह व धरणी का संवादरूप वाराहपुराण को भक्तिपूर्वक जो सुनते हैं व सुनाते हैं वे सब पापों से मुक्त व परमपदको प्राप्त होकर विष्णु भगवान् के प्यारे होते हैं और हे शौनक! जो पुण्य प्रभासक्षेत्र के स्नान में नैमिषारण्य के निवास में हरिद्वार के स्नान करने में पुष्कर के स्नान में प्रयाग त्रिवेणीस्नान में ब्रह्मतीर्थसेवन में और अमरकण्टक के दर्शन में होता है उसका कोटिगुण फल वाराह- पुराण के श्रवण में प्राप्त होताहै और कपिला गोदान उत्तम वेदवेत्ता ब्राह्मण को देनेसे जो पुण्य होताहै सो पुण्य वाराह- पुराण के एक अध्याय श्रवण से होताहै हे शौनक! इस वा- राहपुराण की दश अध्याय कथा जो पवित्र होके श्रवण करते हैं उनको अग्निष्टोम व अतिरात्रनामक यज्ञ का फल प्राप्त होना कुछ दुर्लभ नहीं है और जो बुद्धिमान् इस पुराण को पवित्र होकर नियम से नित्य श्रवण करते हैं उनको सब यज्ञों के करनेका फल, सबभांति के दान देने का फल और सब तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त होता है हे शौनक! श्रीवाराह भगवान् का यह वचन है कि हे धरणि! जो मनुष्य इस हमारे माहात्म्य- रूप पुराण को भक्ति व श्रद्धा करके श्रवण करेंगे तो पुत्रहीन को पुत्र प्राप्त होगा और पुत्रवाले को पौत्र प्राप्त होगा रोगी जो श्रद्धा करके सुने तो वह रोगबाधा से मुक्त हो शीघ्र आरोग्य होगा और हे शौनक! जिसके घर में वाराहपुराण उत्तम अक्षरों में लिखाभया सदा पूजा को प्राप्त होता है उसके सब कार्य को नारायण सदा सिद्ध करते हैं इसलिये हे शौनक! इस वाराह- पुराण का पूजन विष्णुपूजन के तुल्य है यह जानि वाराहपु- राण की पुस्तक को उत्तमसिंहासन में बैठाय चन्दन, पुष्पमाला,

धूप, दीप और नैवेद्य से हमेशा पूजन करना चाहिये और विष्णु-प्रीत्यर्थ पुण्यदिन में ब्राह्मणों को यथाशक्ति भोजन और दक्षिणा देना चाहिये हे शौनक! जिसके करनेसे उस पूजक के स्थानको लक्ष्मीसहित नारायण कभी नहीं त्यागें अर्थात् उस स्थान में सदा विष्णुभगवान् लक्ष्मी के साथ निवासकरें जिनके निवास करनेसे लाभ जय और सिद्धि सदा निवास लेती है॥

दोसौतेरह का अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि, हे शौनक! इस वाराहपुराण संहिता में प्रथम सम्बन्ध वर्णन किया फिर आदिकर्म वर्णन, आदि-सृष्टिवर्णन, दुर्जयचरित्र, द्वीपविभाग, श्राद्धकल्प, अश्विनीकुमार की उत्पत्ति, गौरीजी की उत्पत्ति, गणेशजी की उत्पत्ति, नागों की उत्पत्ति, स्वामिकार्त्तिक की उत्पत्ति, सूर्य की उत्पत्ति, कामोत्पत्ति, देवीकी उत्पत्ति, कुबेरकी उत्पत्ति, धर्म की उत्पत्ति, रुद्रोत्पत्ति, सोमोत्पत्ति, स्थितिवर्णन, व्याधकथा, सत्यतपा की कथा, मत्स्यद्वादशी, कूर्मद्वादशी, वाराहद्वादशी, नृसिंहद्वादशी, वामनद्वादशी, परशुरामद्वादशी, श्रीरामद्वादशी, कृष्णद्वादशी, बुद्धद्वादशी, कल्किद्वादशी, पद्मनाभद्वादशी, धरणीव्रत, अगस्त्यव्रत, पशुपाल की कथा, भर्तृप्राप्ति व्रत, शुभव्रत, धन्यव्रत, कीर्त्तिव्रत, सौभाग्यव्रत, अविघ्नव्रत, शान्तिव्रत, कामव्रत, आरोग्यव्रत, पुत्रप्राप्तिव्रत, शौर्यव्रत, सार्वभौमिकव्रत, पुरास्तुति, शिवविष्णुसंवाद, रुद्रगीता, प्रकृतिनिर्णय, भुवनकोष, जम्बूद्वीपमर्यादा, भरतखण्डसृष्टिविभाग, महिषनारदसंवाद, शक्तिमाहात्म्य, महिषासुरवध, रुद्रमाहात्म्य, शर्कराधेनुदान, मधुधेनु, श्वेतोपाख्यान, तिलधेनु, जलधेनु, रसधेनु, गुड़धेनु, दधिधेनु, लवणधेनु, कर्पासधेनु, धान्यधेनु, भगवच्छास्त्रलक्षण, विष्णुस्तोत्र, विष्णुप्रति धरणी के अनेक प्रश्न भागवतलक्षण, देव-

ताओं के कोप का लक्षण, विष्णुपूजन में वत्तीस अपराध, नाना मन्त्र देवोपाकरण विधि, भक्ष्य अभक्ष्य निर्णय, सन्ध्योपासन, वियोगी के गर्भ का मोक्ष, कोकामुखप्रशंसा, भगवच्छास्त्रप्रशंसा, गन्धपुष्प का माहात्म्य, रूप कारण, मायाचक्र, कुब्जाम्रक-माहात्म्य, वर्णदीक्षा, कंकतअञ्जन व दर्पण का मन्त्र, राजअन्न भक्षण का प्रायश्चित्त, दातुनि न करने में प्रायश्चित्त, शवस्पर्शप्रायश्चित्त, मन्त्रत्यागप्रायश्चित्त, नीलवस्त्र धारण करने का प्रायश्चित्त, क्रोधयुक्तपूजनकरने में प्रायश्चित्त, रक्तवस्त्रधारण प्रायश्चित्त, अन्धकार के पूजन में प्रायश्चित्त, कृष्णवस्त्रधारण प्रायश्चित्त, अशुद्धवस्त्रधार पूजाकरनेमें प्रायश्चित्त, शूकरमांस-भक्षणप्रायश्चित्त, दीपका तेल स्पर्श करने में प्रायश्चित्त, श्मशान जाकर पूजन करनेमें प्रायश्चित्त, खलखाने का प्रायश्चित्त, जूता धारण किये देवपूजन करने का प्रायश्चित्त, भगवच्छास्त्र के आज्ञा उलङ्घन करनेका प्रायश्चित्त, शूकरक्षेत्रमाहात्म्य, शृगाल व गृध्र का वृत्तान्त, खञ्जनपक्षी का वृत्तान्त, कोकामुखमाहात्म्य, बदरीमाहात्म्य, गुप्त धर्मवर्णन, शालग्राममहिमा, सोमेश्वरवर्णन, मुक्तिक्षेत्रमहिमा, त्रिवेणीमाहात्म्य, गण्डकीमाहात्म्य, चक्रतीर्थमाहात्म्य, हरिक्षेत्रमाहात्म्य, देवहृदमाहात्म्य, रुद्रक्षेत्रमाहात्म्य, गोनिष्क्रमण का माहात्म्य, द्वारकामाहात्म्य, अक्रूर आदिपञ्चतीर्थमाहात्म्य, लोहार्गलमाहात्म्य, मथुराउत्पत्तिवर्णन, यमुनातीर्थमाहात्म्य, देवारण्यमाहात्म्य, चक्रतीर्थमाहात्म्य, कपिलमहिमा, गोवर्द्धनमहिमा, विश्रान्तितीर्थमहिमा, गोकर्णमाहात्म्य, सरस्वतीमाहात्म्य, यमुनोद्भेदमहिमा, कालञ्जरकी उत्पत्ति, गङ्गोद्भेदमहिमा, साम्बचरित्र, मधूकप्रतिमास्थापन, शैलप्रतिमा, मृत्तिकाप्रतिमा, ताम्रप्रतिमा, कांस्यप्रतिमा, रौप्यप्रतिमा, सुवर्णप्रतिमा इन प्रतिमाओं का स्थापन श्राद्धकी उत्पत्ति, पिण्ड का संकल्प, पिण्ड की उत्पत्ति, पितृयज्ञनिर्णय, मधुपर्क-

दानफल, संसारचक्रवर्णन, पाप का फल दुःख व पुण्य का फल सुख वर्णन, यमदूतचरित्र, नरकवर्णन, पापियों का नानाविध चरित्र, कर्मों का फल वर्णन, पापसमूह कथन, दूत का भेजना, पापियों के लेआने को शुभ व अशुभ वर्णन, शुभकर्म के फल का उदयकथन, पतिव्रताचरित्र, राजा निमिका चरित्र, प्रबोधिनी, हरिशयनी और परिवर्तिनी तीनों एकादशी का माहात्म्य गोकर्णशिव की उत्पत्ति वर्णन, नन्दीश्वर को श्रीशिवजी का वरदान होना, शैलेश्वर शृङ्गेश्वरका वर्णन आदि नानाभांति की मनोहर कथा हे शौनक! इस पुराण में वर्णन कीगई हैं कि जिसके श्रवण करनेसे कैसहू अधर्मी व पापी होय सो सब पापों से मुक्त होकर श्रीनारायण के चरणकमल में लीन होता है हे शौनकादि ऋषीश्वरो! जो २ आपने प्रश्न किये सो २ क्रमपूर्वक हमने वर्णन किये अब क्या सुननेकी इच्छा है? इसभांति सूतजी का वचन सुनि शौनकादिक ऋषीश्वर भगवद्भक्ति में युक्त हो आनन्द से परिपूर्ण प्रशंसापूर्वक सूतजी का भलीभांति पूजनकर कथा का विश्राम करते भये॥

इति श्रीमद्वाराहपुराणसंहिताभाषा समाप्ता॥

दोहा॥ विघ्नविनाशन व्यासहरि, बाणी चरण मनाय॥
मति अनुमित वाराहकी, भाषा बिशद बनाय १
इच्छा नवलकिशोर की, पूरण करिबे हेतु॥
माधवद्विज साकेतपुर, बासी रची सहेतु २
धर्मप्रकाशक संहिता, सुनि पढ़ि सज्जनलोग॥
गहैं सनातन धर्ममग, तजिमन भवभयशोग ३
हरिधरणी संवाद यह, बिलसै धरणी माहिं॥
जबलौं सूरज चन्द्रमा, धर्म सनातन आहिं ४
नववारिधि निधिभूबरस, चैत्रकृष्ण बिधुवार॥
यह पुराण पूरण भयो, सुकृत सनातन सार ५

विक्रयार्थ पुराणों का सूचीपत्र ॥

नाम पुस्तक	मूल्य
श्रीमद्भागवत टीका अंगदशास्त्री कृत	७)
तथा छापा पत्थर कागज़ बादामी	४)
मार्कण्डेयपुराण मूल	।≡)॥
तथा सटीक	१॥=)
देवीभागवत भाषा रस्मी	३)
तथा गुन्दा	३।)
लिंगपुराण भाषा	॥।≡)
बृहन्नारदीयपुराण क़दीम	।≡)
तथा जदीद	।=)
गणेशपुराण भाषा	२॥)
वामनपुराण भाषा	॥।≡)
शिवपुराण भाषा	१॥)
तथा दोहा चौपाई	॥)
गरुड़पुराण मथुरा	≡)।
तथा सटीक दिल्ली	।-)
विष्णुपुराण भाषा	॥।)
जैमिनिपुराण भाषा	॥।)
भविष्यपुराण	१=)

मिलने का पता:—

रायबहादुर मुंशी प्रयागनारायण भार्गव,

मालिक नवलकिशोर प्रेस-लखनऊ.